सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६८

(१५ अक्टूबर, १९३८ से २८ फरवरी, १९३९)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमे १५ अक्टूबर, १९३८ से २८ फरवरी, १९३९ तककी सामग्रीका समावेश है। जिन दिनोंकी सामग्रीसे खण्डकी शुरुआत होती है, उन दिनो गांधीजी उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तमे थे। वहाँ गांधीजी ६ अक्टूबरको गये थे और अब्दुल गफ्फार खाँके अतिथिके रूपमे ९ नवम्बर तक रहे। यह प्रवास गाधीजीको सुखद प्रतीत हुआ, क्योकि उस जगहकी आबहवा बहुत अच्छी थी और वर्णनातीत शान्तिका वातावरण था (पृ० २४)। उस प्रान्तमें वे बहुत ज्यादा घूमे-फिरे और इस दौरान खुदाई खिदमतगारों तथा स्थानीय लोगोसे मिले-जुले तथा उनके साथ बातचीत की। सीमा पारसे वजीरी कबायलियो द्वारा हिन्दुओपर नित हमले किये जा रहे थे, इसलिए गाधीजी ने यह स्वीकार किया कि हिन्दुओको आत्मरक्षाका पूरा अधिकार है। उन्होंने कहा: "आपको अपने बीच सहयोगकी भावना पैदा करनी चाहिए। कायरता का आचरण तो आप किसी भी हालतमे न करे। . . . मै भारतमे एक भी कायर आदमी नही देखना चाहता।" लेकिन उन्होंने अहिंसाके मार्ग — अर्थात् एकपक्षीय प्यारके सक्रिय व्यवहार — के रूपमें आत्मरक्षाका एक बेहतर विकल्प सुझाया। "आप व्यापारी जातिके लोग है। अपने व्यापारमें से आप ससारकी सर्वोच्च और सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु — अर्थात् प्रेम — को अलग न करे। आप कबायली लोगों पर जितना प्रेम बरसा सके, बरसाये। फिर आप देखिएगा कि बदलेमे आपको भी वैसा ही प्रेम मिल रहा है" (पृ० ६३)। यद्यपि डॉ० खान साहबके नेतृत्वमें बने काग्रेसी मन्त्रिमण्डलका पुलिसपर कोई प्रभावकारी नियन्त्रण नही था, सेनापर तो बिलकुल ही नही था, फिर भी उन्हे आशा थी कि वे एक ऐसी योजना तैयार कर देंगे जिसके अन्तर्गत खुदाई खिदमतगार अपनी अहिंसाकी "खुशबू" से कबायलियो तकको प्रभावित कर लेगे और शायद उसीमें से सरहदके सवालका कोई स्थायी हल निकल आयेगा।

खुदाई खिदमतगारोके साथ बातचीतमे उन्होंने अहिंसा और सेवापर बल दिया। "सकल्प-शक्तिके धनी और अपने उद्देश्यकी सचाईमे अपरिमित श्रद्धा रखनेवाले उत्साही लोगोका एक छोटा-सा दल भी इतिहासकी धाराको बदल सकता है। ऐसा पहले भी हो चुका है और यदि खुदाई खिदमतगारोकी अहिंसा केवल बाहरी चमक-दमकवाली चीज नही, बल्कि कुन्दनके समान शुद्ध और सच्ची है तो ऐसा फिर हो सकता है" (पृ० ९०)। ईश्वरके सच्चे सेवक बननेके लिए खुदाई खिदमतगारोंको अहिंसामे जीवन्त आस्था रखनी होगी, क्योकि "हम जिस हद तक अहिंसाको अपना लेगे उस हद तक हम ईश्वर जैसे होगे। . अहिंसाका असर रेडियम-जैसा है। . . . सच्ची अहिंसाका छोटा-सा अश भी चुपचाप, सूक्ष्म और अदृश्य रूपसे

अपना काम करके समूचे समाजका रूपान्तर कर देता है" (पृ० ३२)। खुदाई खिदमतगार ईश्वरकी सेवा किस भाँति कर सकते है? गाधीजीने कहा कि ईश्वरकी सेवा ईश्वरके बन्दोकी सेवाके जरिये ही हो सकती है। "बेरोजगार लोगोको रोजगार मुहैया करना, रोगियोकी सेवा-शुश्रूषा करना, लोगोकी गन्दगीकी आदतोको छुड़वाकर सफाई-स्वच्छतासे रहनेकी शिक्षा देना खुदाई खिदमतगारका काम होना चाहिए" (पृ० ४६)। "कारण, ईश्वरको तो व्यक्तिगत सेवाकी न कोई जरूरत है और न वह किसीसे ऐसी सेवा लेता है। वह अपनी सृष्टिके प्राणियोकी सेवा तो करता है, लेकिन बदलेमे उनसे अपने लिए कोई सेवा नही लेता। . इसलिए जो खुदाका खिदमतगार है वह उसकी सृष्टिके प्राणियोकी सेवा करके ही अपनेको उसका खिदमतगार साबित कर सकता है" (पृ० १३०)।

लेकिन जहाँ गाधीजीने खुदाई खिदमतगारो और आम लोगोको अहिंसासे प्राप्य शक्तिको अपनेमे विकसित करने तथा उसीके सहारे हमलोके खतरेका मुकाबला करनेकी प्रेरणा दी, वहाँ लगातार हो रहे हमलोके लिए उन्होने ब्रिटिश शासन द्वारा अपनाई गई नीतिको पूरी तरह जिम्मेदार ठहराया। उन्होने कहा "ये हमले होते रहते है, यह बात मेरी दृष्टिमे भारतके इस हिस्सेमें ब्रिटिश शासनकी विफलताकी द्योतक है। उसकी सीमा-नीतिके कारण देशके हजारो लोगोको प्राण गँवाने पडे है और भारतको करोडो रुपयेका नुकसान हुआ है . . प्रान्तके अधिकाश हिस्सोमें जान-माल सुरक्षित नही है" (पृ० ६१-२)।

इस खण्डमें यह भी देखनेको मिलता है कि उत्तरदायी सरकारकी स्थापनाके लिए देशी राज्योकी जनता द्वारा किया जा रहा सघर्ष किस कदर जोर पकड रहा था। गाधीजीकी रायमें इस जागृतिको लानेमे सबसे बडा हाथ समयकी माँगका था न कि काग्रेसके प्रभावका, इसलिए उन्होने राजा-महाराजाओ तथा उनके सलाहकारोसे कहा कि वे जनताकी माँगको उचित मान ले। उन्होने आगे कहा "दो ही रास्ते है। या तो रियासतोके अस्तित्वका ही अन्त हो जाये और या फिर राजा-महाराजा जनताको ही शासन व्यवस्थाकी जिम्मेदारी सौप दे और स्वय जनताकी ओरसे न्यासी बनकर शासन चलाये और इसके लिए मुनासिब मेहनताना कमाये और यदि राजा-महाराजा यह विश्वास रखें कि जनताके कल्याणमे उनका अपना कल्याण भी है, तो वे कृतज्ञभावसे काग्रेसकी सहायता माँगेगे और स्वीकारेगे" (पृ० १६८-७०)। उन्होने राजाओको यह भी स्मरण दिलाया कि "अगर वे सच्चे है और उनकी प्रजा वस्तुत उनके साथ है, तो उन्हे रेजिडेंटोसे डरनेकी कोई जरूरत नही है। निस्सन्देह उन्हे यह महसूस करना चाहिए कि सर्वोच्च सत्ता न तो शिमलामें है, न व्हाइट हॉलमे, उसका निवास तो उनकी प्रजामे ही है" (पृ० ३०३)।

त्रावणकोर, राजकोट, जयपुर, हैदराबाद तथा उडीसाकी कुछ रियासतोमें जन-जागृतिकी यह लहर विशेष रूपसे सक्रिय थी। अपनी प्रजामे व्याप्त जागृतिका स्वागत करने तथा राज्यके शासनमे उसे हाथ बँटानेके लिए कहनेके बजाय, राजाओने हर जगह उसे कुचलनेका प्रयास किया। और तो और, सर्वोपरि सरकारकी ओरसे उन्हे

ऐसा करनेका बढ़ावा भी दिया गया। इसलिए अंग्रेज पोलिटिकल एजेंटकी हत्याके बाद गांधीजीने अनुभव किया कि उड़ीसाकी एक छोटी-सी रियासत, रणपुरमे "भयानक वीरानी" छा गई है। उन्होंने आगे बताया: "निर्दोष और दोषी सभी भाग-भागकर इधर-उधर छिप रहे हैं। दमनसे बचनेके लिए वे घर-बार छोड-छोडकर गाँवोको वीरान करते जा रहे हैं। . . . किसी-न-किसी रूपमे वहाँ आतंक फैलाया जा रहा है, और सारे हिन्दुस्तानको लाचार होकर यह सब देखना पड रहा है" (पृ० ३३४)।

लीम्बड़ी, राजकोट, ढेकनाल एकके बाद दूसरे राज्यमे "सर्वोपरि सरकार द्वारा भेजी गई पुलिसकी छत्रच्छायामे" राज्यके लठैतों द्वारा अमानवीय क्रूरताके बरतावकी कहानी दुहराई गई (पृ० १६९)। यहाँ तक कि एक अवसर पर पुलिसने गोली भी चलाई जिसमे अनेक लोग मारे गये। तलचरकी कुल ७५,००० की आबादीमे से कमसे-कम २६,००० लोगोंको तलचर छोड़ना पड़ा और ब्रिटिश उडीसामे शरण लेनी पडी।

राजकोटमे उत्तरदायी सरकारके लिए चल रहे आन्दोलनका मार्गदर्शन वल्लभभाई पटेल कर रहे थे। वहाँ पर ठाकुर साहबके साथ एक समझौता हुआ था जिसे ठाकुर साहबने भग कर दिया। लोगोको कैद करना, जेलमे कैदियोका सताया जाना तथा रीजेन्सी पुलिसकी "सुसगठित गुण्डागर्दी" (पृ० ४०५) यह सब राजकोटमे चलता रहा। कस्तूरबाको यह व्यक्तिगत आह्वान-सा लगा और वह सत्याग्रहमे शरीक हो गई। गाधीजीने लिखा कि जिस सत्याग्रहमे इतने तमाम विश्वसनीय साथी कार्यकर्ताओं ने भाग लिया हो, उससे कस्तूरबा कोई ताल्लुक न रखे, यह कैसे हो सकता था? "सत्याग्रहकी लड़ाई एक ऐसी लडाई है, जिसमे अगर दिल मजबूत हो तो, वृद्ध-से-वृद्ध और कमजोरसे-कमजोर शरीरवाला भी हिस्सा ले सकता है" (पृ० ४२८)। दमन-चक्र पूर्ववत् चलता रहा, अतएव "शान्तिके सदेशवाहकके रूपमे" राजकोट जाना स्वय गाधीजीको आवश्यक लगा। गाधीजी यह उम्मीद कर रहे थे कि "कोई सम्मानजनक समझौता हो जायेगा" (पृ० ५१८)। परन्तु शीघ्र ही उनकी यह आशा दुराशा मात्र ही साबित हुई। यही पर इस खण्डकी समाप्ति होती है।

त्रावणकोरमे व्यवस्थित रूपसे तथा बेरहमीके साथ दमन हुआ। वहाँपर बड़े पैमानेपर गिरफ्तारियाँ हुई, अन्धाधुन्ध गोलियाँ चली, लोगोकी सम्पत्ति जब्त की गई तथा समाचारपत्रो पर प्रतिबन्ध लगाया गया। गाधीजीने राज्यके काग्रेसी नेताओको सलाह दी कि वे उत्तरदायी सरकारकी माँग पर ही अपना सारा ध्यान लगाये। इस पर वहाँके ईसाइयोंने उनपर यह आरोप लगाया कि वे हिन्दू दीवानके साथ पक्षपात कर रहे हैं। गाधीजीने कहा· "मेरा अन्त करण बिलकुल साफ है। . . . उत्तरदायी सरकारके लिए चल रहे सघर्षको दीवानके खिलाफ आरोपोसे जोडा जाये, मै इस बातके विरुद्ध रहा हूँ। . यदि उनका जोर उत्तरदायी सरकार पर है, तो इन आरोपोको लेकर कोई कार्रवाई करनेका कोई अर्थ नही है। इससे देशका ध्यान बँटेगा . . ." (पृ० ३१८)। इस खण्डकी पूर्वोक्त अवधि तक गांधीजीके सुझावपर इस राज्यमे

सत्याग्रह बन्द रहा। जयपुरमें प्रजामण्डल पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। गांधीजी ने वाइसरायको लिखा · "क्या कोई रियासत भाषण, सभाओ और इसी तरहकी अन्य स्वतन्त्रताओका दमन कर सकती है, और इसके बावजूद वह सर्वोपरि सरकारसे यह अपेक्षा रख सकती है कि यदि उसकी प्रजा अपनी स्वाभाविक स्वतन्त्रताके लिए, जिसका कि किसी भी अच्छे समाजमे हर मानवप्राणीको अधिकार होता है, अहिंसात्मक संघर्ष करे तो उसके दमनमे वह उसकी सहायता करेगी ?" (पृ० ३६६)।

जहाँ आम तौरपर सभी रियासतोमे जनआन्दोलन दबाया जा रहा था, वहाँ कुछ प्रबुद्ध नरेश ऐसे भी थे जो प्रजाकी न्यायसंगत आकाक्षाओंको माननेसे पीछे नही हटे। रामदुर्ग, जामखंडी, मीरज तथा औधके लोगोको अपने-अपने नरेशोसे अनेक सुविधाएँ प्राप्त हुईं। इन रियासतोमे गाधीजीने प्रजाके सगठनोसे अपनी मांगें रखते समय संयमसे काम लेनेको कहा। मताधिकारके लिए औंधके सविधानमे प्रस्तावित अक्षरज्ञानकी योग्यता पर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने कहा कि मत एक खास अधिकार माना जाना चाहिए और इस कारण उसके लिए कुछ योग्यता भी आवश्यक समझी जानी चाहिए और मताधिकारकी इस शर्तसे अक्षर ज्ञानके प्रसारमे मदद भी मिलेगी (पृ० ३२३)। जब यह खबर लगी कि रामदुर्ग प्रजा सघकी ओरसे "राजा को आतंकित करके और ज्यादा छूट देनेके लिए विवश" (पृ० ५०६) करनेका प्रयास किया जा रहा है तो गाधीजीने इसका समर्थन नही किया। उन्होने कहा: "यह हो सकता है कि उसकी माँग अपने-आपमें ठीक हो। परन्तु वे अपनी माँगको हुल्लडबाजीसे और डरा-धमकाकर नही लाद सकते। कर्नाटकके प्रतिनिधि काग्रेसजनो को चाहिए कि रामदुर्गके राजाका साथ दें और उनका प्रयत्न होना चाहिए कि वहाँ के लोग समझौतेका पालन करे, भले ही इस कोशिशमे लोगोके साथ उनका सघर्ष हो और उसमें उनकी जान ही क्यों न चली जाये" (पृ० ५०६)।

इस अवधिमें कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्रोमें सघर्ष और अधिक तीव्र हो गया था। हडताल, तालाबन्दी, किसानोका कूच और प्रदर्शन, यह सब आम बात हो गई थी। बात यहाँ तक बढ गई थी कि इन आन्दोलनोका नेतृत्व भी प्राय काग्रेसजन ही कर रहे थे। हिंसाका वातावरण तैयार हो गया था। गाधीजीने लिखा " बिहारके मन्त्रियोको किसानोके विद्रोह तथा प्रदर्शनका सदा भय बना रहता है। अभी दो दिन पहलेकी बात है जब खानदेशसे एक सुप्रसिद्ध काग्रेसी कार्यकर्ताके नेतृत्वमें कलेक्टरके बगलेपर किसानोके प्रस्तावित कूचकी तार द्वारा खबर मिली थी" (पृ० ३५६)। इसमे गाधीजीको आन्तरिक ह्रास होता दीख पडा और उन्होने चेतावनी दी: "इस समय काग्रेसकी जो हालत है उसमें मुझे देशके अन्दर अराजकता और सर्वनाश फैलनेके सिवा और कुछ होता नजर नही आता। क्या त्रिपुरीमे हम इस कठोर सत्यका सामना करेंगे ?" (पृ० ३५७)

लेकिन गाधीजी जैसा चाहते थे, बिलकुल वैसा हुआ नही, और सुभाष बोसके अध्यक्ष चुने जानेके बाद काग्रेसका नेतृत्व ऐसे लोगोके हाथमे आ गया जो पूरी तरह से "उन सिद्धान्तो और उस नीतिको स्वीकार" नही करते थे जिनका कि गाधीजी

प्रतिपादन करते थे। गांधीजी इस हारसे "खुश" थे और उन्होंने "अल्पसंख्यक" वर्गको कांग्रेसके वास्तविक कार्यमें लग जानेको कहा। वह कार्य था रचनात्मक कार्य-क्रम जिसके मूलमे थी खादी। जवाहरलाल नेहरूने खादीको हमारी "आजादीकी वर्दी" कहा था और गांधीजीने कहा "मेरे लिए तो खादी पहनना आजादीका बाना धारण करना है। . . स्वतन्त्रता किसी भी कीमतपर महँगी नही है। वह तो जीवन का प्राण है। अपनी जिन्दगीके लिए कोई कौन-सा खर्च करनेको तैयार न होगा?" खादी उन लाखों आदमियोको "सम्मानपूर्ण धन्धा" भी देती है जो सालके लगभग चार महीने बेकार रहते है। " लाखों आदमी अगर मजबूरन बेकार रहे तो आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक दृष्टिसे वे जरूर मुर्दा बन जायेंगे" (पृ० १९२-३)। पुन· उन्होने कहा "जो भूखे और बेकार है उन्हे भगवान केवल एक ही विभूतिके रूपमे दर्शन देनेकी हिम्मत कर सकते है, यह विभुति है काम और अन्न के रूपमे वेतनका आश्वासन" (पृ० ४९६)। रचनात्मक कार्यक्रम एक स्थायी मूल्यका साधन था, जबकि सविनय अवज्ञाकी अपनी मर्यादाएँ थी और ". अवसरकी माँग पर उसे स्थगित करनेकी जरूरत" (पृ० २२२) पड़ सकती थी। रचनात्मक कार्य स्वराज्य आन्दोलनका "स्थायी पहलू" था, सविनय अवज्ञा प्रतिकारात्मक पहलू था और इसीलिए स्वभावत अस्थायी था। सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित किये जानेसे रचनात्मक कार्यका महत्व दुगुना हो गया (पृ० २६९)।

ईसाई मिशनरियोंको आश्वस्त करते हुए उन्होने राय व्यक्त की कि अहिंसा किसी भी रूपमे निष्क्रिय नही है, वह तो वास्तवमे "विश्वकी सबसे सक्रिय शक्ति है" (पृ० २२३)। पुन उन्होने लॉर्ड लोथियनसे कहा· "जब तक अहिंसाको खाली नीतिके बजाय एक जीवित शक्ति, एक अलघ्य सिद्धान्तके रूपमे स्वीकार नही किया जायेगा . . . वैधानिक या लोकतन्त्रीय शासन एक दूरका स्वप्न ही रहेगा" (पृ० ४३१-२)।

चीनमे जापान द्वारा की जा रही लूटखसोट और जर्मनीमे यहूदियोपर किये जा रहे अत्याचारपर भी गाधीजी चिन्ता व्यक्त करते रहे। लेकिन, यहूदियोके प्रति प्रशसाका भाव तथा सहानुभूति रखते हुए भी, गांधीजी न्यायके तकाजेकी ओरसे अपनी "आँखे बन्द" नही कर सके। उन्होने कहा "यहूदियोके लिए एक अलग देशकी माँग मुझे कोई खास नही जँचती। . . ससारकी अन्य अनेक जातियोकी तरह वे भी उसी देशको अपना देश और अपना घर क्यों नही बना लेते जहाँ उनका जन्म हुआ और जहाँ वे जीविकोपार्जन करते है? . . . फिलिस्तीन अरबोका है— ठीक उसी तरह जिस तरह इग्लैड अग्रेजोका और फ्रास फ्रासीसियोका है। यहूदियोको अरबोके सिर थोपना गलत और अमानवीय कार्य है। . . . यहूदियोंके वतनके रूपमे फिलिस्तीन उन्हे पूर्णत. या अशत वापस मिल जाये, इसके लिए स्वाभिमानी अरबोको तबाह करना निश्चय ही मानवताके विरुद्ध अपराध होगा" (पृ० १५३)

नाजी अत्याचारका मुकाबला करनेके लिए उन्होने यहूदियोको अहिंसाका सहारा लेनेकी सलाह दी। उन्होने कहा. "मेरा निश्चित विश्वास है कि यदि उनमे से कोई

साहसी और सही दृष्टिवाला आदमी उन्हे अहिंसक संघर्षमें नेतृत्व प्रदान करनेके लिए आगे आ जाये तो उनकी निराशाके शिशिरको क्षण-भरमें आशाके वसन्तमे परिवर्तित किया जा सकता है" (पृ० १५६)। अहिंसक लोग भय नही जानते और तानाशाहके आगे न तो झुकेंगे, न उसके सामने नाक रगडेंगे और न ही उसके प्रति अपने मनमे कोई दुर्भाव रखेंगे, उनको तो उसपर दया आयेगी (पृ० २७८)। जो आलोचक यह दलील दे रहे थे कि ऐसी अहिंसा सिर्फ थोडे-से अत्यन्त विकसित व्यक्तियोके लिए ही साध्य है, उनको गाधीजीने जवाब देते हुए कहा "उपयुक्त प्रशिक्षण और नेतृत्व मिलनेपर सर्वसाधारण भी अहिंसाका पालन कर सकते है" (पृ० २१२)। इसी तरह उन्होने चीनवासियोको सुझाव दिया कि यद्यपि उन्हे जापानियोंके आक्रमणका सामना करना चाहिए, तथापि आक्रमणकारियोसे घृणा करनेकी बजाय प्यार करना चाहिए। उन्होने कहा "इतना ही काफी नही है कि उनके गुणोका स्मरण करके उन्हें प्यार किया जाये" (पृ० २९७)। गाधीजीको विश्वास हो गया था कि विश्वकी समस्याओका समाधान सिर्फ प्रेम और अहिंसाके द्वारा ही हो सकता है। यह "हमारे व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवनका नियम है" (पृ० ४३१)। गाधीजीने समझ लिया कि अभी तो हिंसा का ही सर्वत्र बोलबाला है। लेकिन इससे वे हतोत्साह नही थे, क्योकि "अन्धकार जितना ही अभेद्य होता है", उनका विश्वास उतना ही प्रखर होता है (पृ० ४३२)।

गाधीजीको यकीन था कि अहिंसाकी राह विश्व केवल तभी अपनायेगा जब भारत इस गुणका ठीक विकास कर लेगा, लेकिन उन्होने बडी विनम्रतासे यह समझा कि उनकी इस आशाकी पूर्तिके मार्गमे शायद खुद उनकी अपनी अशुद्धि ही मुख्य बाधा है। उन्होने एक पत्रमे लिखा "जैसा कि मुझे लगता है, मेरे शब्द अपनी शक्ति खो बैठे है । फिर भी मै श्रद्धापूर्वक आगे बढनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अपने विचार, शब्द और कर्मके परिणामोके प्रति मुझे अनासक्ति प्राप्त करनी है। सतत प्रयत्नके बावजूद मै अपनी अशुद्धिसे छुटकारा नही पा रहा हूँ। परन्तु, इसी कारण, मै कैसा हूँ, इसके बारेमे मै अन्तिम रूपसे कोई निर्णय करने नही जा रहा हूँ और न अपनी प्रवृत्तियोका त्याग ही करने जा रहा हूँ" (पृ० ५४-५)। "शुकदेवजीकी-सी स्थितिपर पहुँचनेकी" उनमे बडी ललक थी (पृ० २७६)। अशुद्धिसे छुटकारा पानेका उनका मार्ग, मौन और प्रार्थनाका मार्ग था। इसका वे अधिक-से-अधिक सहारा लेने लगे। उन्होने एक ईसाई मिशनरीको बताया "आजकल शामको प्रतिदिन प्रार्थनाके समय मै मौन धारण कर लेता हूँ और दो बजे मिलने आनेवालोके लिए उसे तोडता हूँ। . यह अब मेरे लिए शारीरिक और आत्मिक दोनो कारणो से आवश्यक हो गया है" (पृ० १९१)।

मशीन द्वारा बड़े पैमानेपर उत्पादनके सम्बन्धमें उनकी जो राय थी, वह भी उन्होने स्पष्ट की। यह पूछे जानेपर कि क्या वे बडे पैमानेके उत्पादनके खिलाफ हैं, उन्होने कहा "मैने ऐसा कभी नही कहा। यह विश्वास तो उन गलतफहमियो

पर ही आधारित है जो उनके बारेमे फैली हुई है। . . मै तो उन चीजोंके बडे पैमाने पर उत्पादनके खिलाफ हूँ जिन्हे गाँववाले बिना किसी कठिनाईके पैदा कर सकते है" (पृ० २८४)। इसी तरह "शहरोका काम तो यह है कि गाँवोमे जो-कुछ पैदा हो, उसका वे उपयुक्त रूपमे वितरण करे" (पृ० २८५)।

प्रार्थनाके बारेमे उन्होने कहा "प्रार्थना स्रष्टाके साथ सम्पर्क स्थापित करनेकी तीव्र आकाक्षा है। यह प्रयत्न बुद्धिके धरातलपर नही, हृदयके धरातलपर किया जाता है" (पृ० १११)। आध्यात्मिक क्षेत्रमे अपनी उपलब्धिके बारेमे गाधीजीकी धारणा बहुत ही विनम्र थी (पृ० ४४)। अपने एक प्रशसकको एक पत्रमे उन्होने लिखा: "मै साधक हूँ, वे (रमण महर्षि और श्री अरविन्द) सिद्ध माने जाते है। शायद है भी।" वस्तुत उन्होने दावा किया कि जिसका ईश्वर मार्गदर्शन करता है उसे न तो कुछ सोचना चाहिए और न उसके लिए सोचना जरूरी ही है। वास्तवमे तो वह कुछ सोच ही नही सकता (पृ० ५१३)। इस विचार-शून्य स्थितिपर टिप्पणी करते हुए (पृ० ५४३) रमण महर्षि अन्तमे कहते है· "गांधीजीका सत्य केवल अह है।" ईश्वर न तो हमारे विचारमे प्रकट होता है, न वाणीमे, वह हमारे सामने न तो सशरीर प्रकट होता है और न वह दिव्य-दर्शन ही देता है। वह तो, हम जो कार्य करते है, उसीमें प्रकट होता है। गाधीजीके इस विश्वासकी स्पष्ट अभिव्यक्ति जॉन मॉटके साथ हुई उनकी बातचीतके दौरान हुई (पृ० १९०)। मैरित्सबर्ग रेलवे-स्टेशन पर हुए अपने रचनात्मक अनुभवकी चर्चा करते हुए गाधीजीने बताया· "मैने यह अनुभव किया है और मै विश्वास करता हूँ कि ईश्वर आपके आगे सशरीर कभी प्रकट नही होता। वह तो उस कार्यमे प्रकट होता है जो गहनतम अन्धकारमे भी आपकी मुक्तिका कारण हो सकता है।"

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी है :

संस्थाएँ : गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, अहमदाबाद और आन्ध्र प्रदेश सरकार।

व्यक्ति : श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्रीमती एफ० मेरी बार, कोट्टागिरी; श्री एम० आर० मसानी, बम्बई; श्री कान्तिलाल गाधी, बम्बई; श्री गुलाम रसूल कुरेशी, अहमदाबाद, श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता, श्री जयरामदास दौलतराम, नई दिल्ली, श्री डाह्याभाई म० पटेल, अहमदाबाद; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री पुरुषोत्तम के० जेराजाणी, बम्बई; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड़; श्रीमती मनुबहन सु० मशरूवाला, बम्बई; श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती विजयाबहन एम० पंचोली, सणोसरा; श्री शान्तिकुमार न० मोरारजी, बम्बई; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत; श्री सतीश द० कालेलकर, अहमदाबाद; सरदार पृथ्वीसिंह, लालरू, पजाब और श्री सुरेशसिंह।

पुस्तकें : 'इसिडेन्ट्स ऑफ गांधीजीज लाइफ', 'ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस', 'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'टॉक्स विद श्री रमण महर्षि', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना बाने पत्रो', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामे मेरी जीवनके सोलह वर्ष' १९३२–१९४८, (द) ब्रदरहुड ऑफ रिलिजन्स', 'मध्यप्रदेश और गांधीजी', और 'महात्मा · लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड ६।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'इडियन नेशनल काग्रेस' (फरवरी, १९३८ से जनवरी, १९३९), 'टाइम्स ऑफ इडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'सर्वोदय', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान तथा सन्दर्भ विभाग, राष्ट्रीय अभिलेखागार और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र है। प्रलेखोकी फोटो-नकल तैयार करनेमे मदद देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी है।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजीके स्वाक्षरोमे मिली है, उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और सशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अश सम्पादकीय है। गाधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापा गया है। लेकिन यदि ऐसा कोई अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेट की रिपोर्टोंके उन अशोमे जो गाधीजीके नही है, कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दाये कोनेमे ऊपर दे दी गई है; जहाँ वह उपलब्ध नही है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोमे दी गई है और आवश्यक होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गाधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिट द्वारा तैयार कराई गई रीलोंका; 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीके फोटोस्टेटोंका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (क्लेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. पुर्जा : महादेव देसाईको

[१५ अक्टूबर, १९३८ के पूर्व]

अंग्रेजी 'हरिजन' के लिए इसका[1] अनुवाद कर डालो। इस गाँवमे अच्छा काम हो रहा है और वह इस योग्य है कि उसका उल्लेख किया जाये।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६१) से।

२. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ – १

[१५ अक्टूबर, १९३८ या उसके पूर्व][2]

गांधीजी ने उनसे कहा कि हालाँकि आपकी इस बातमें मुझे कुछ दुस्साहसकी गंध लगती है, तो भी अपनी आदतके मुताबिक मैं, आप जो-कुछ कह रहे हैं, उसपर विश्वास किये लेता हूँ।[3] उन्होंने अहिंसाके स्वरूप और मर्मके बारेमें अपनी अवधारणा उन्हें सविस्तार समझाते हुए कहा कि जहाँ विरोधी ज्यादा ताकतवर और हथियारोंसे लैस हो वहाँ निष्क्रिय अहिंसा बरतना अपेक्षाकृत सुगम है। लेकिन जब आपको रोकनेको कोई बाहरी ताकत नहीं रहेगी तब क्या आप आपसी व्यवहारमें और अपने देशवासियोंके साथ भी अहिंसासे काम लेंगे? और फिर आपकी अहिंसा बलवानोंकी अहिंसा है अथवा कमजोरोंकी? अगर आपकी अहिंसा बलवानोंकी अहिंसा है तो तलवारको छोड़ देनेके फलस्वरूप आपको और ज्यादा ताकत महसूस करनी चाहिए। लेकिन अगर ऐसी बात न हो तो आपको चाहिए कि आप अपने उन शस्त्रोंको फिरसे उठा लें जिन्हें आपने अपनी ही इच्छासे एक तरफ रख दिया है, क्योंकि निहत्थे रहकर पुंसत्वहीन बन जानेसे बेहतर यही है कि आप हथियार उठाकर बहादुर सिपाही बनें। उन्होंने आगे कहा:

१. एक कार्यकर्ता द्वारा पीपोदरासे महादेव देसाईके नाम लिखे गये इस पत्रमें २१-९-१९३८ से २-१०-१९३८ तक उस गाँवमें मनाये गये गांधी-जयन्ती समारोह का विवरण दिया गया था। उक्त सप्ताह के दौरान अन्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त अखण्ड चरखा-यज्ञका भी आयोजन किया गया था। गांधीजी की टिप्पणियों के लिए देखिए "पत्र: महादेव देसाईको", १५-१०-१९३८।

२. गांधीजी ने पेशावरके खुदाई खिदमतगारोंके आखिरी जत्थेसे १५ अक्टूबरको मुलाकातकी थी।

३. खुदाई खिदमतगारोंने कहा था कि चाहे अब्दुल गफ्फार खाँ अहिंसाको छोड़ दें, लेकिन हम नहीं छोड़नेवाले हैं।

मुझपर और खान साहबपर यह आरोप लगाया गया है कि हम बहादुर और लड़ाकू सरहदी लोगोको अहिंसाका सन्देश देकर हिन्दुस्तान और इस्लामका अहित कर रहे हैं। कहा जाता है कि मै आपकी शक्तिको क्षीण करने आया हूँ। वे कहते है कि सीमाप्रान्त भारतमें इस्लामका गढ है, और पठान लोग तलवार तथा बन्दूक चलानेमें अपनी सानी नही रखते, और मै उनसे शस्त्र-त्याग करवाकर उन्हे नपुसक बनानेकी कोशिश कर रहा हूँ तथा इस प्रकार इस्लामके गढको, उसकी सुरक्षाको कमजोर करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। मै इस आरोपको बिलकुल अस्वीकार करता हूँ। मेरा तो विश्वास है कि अहिंसाके सिद्धान्तको उसके समग्र रूपमे अपनाकर आप हिन्दुस्तानकी, और उस इस्लामकी भी स्थायी सेवा करेगे जो आज मुझे खतरेमे पड़ गया दीख रहा है। अगर आप अहिंसाकी ताकतको समझ गये है तो हथियार छोड़ देनेके कारण आपको अपने अन्दर और ज्यादा ताकत महसूस करनी चाहिए। इससे आपको वह रूहानी ताकत हासिल होगी जिसकी मददसे आप न केवल इस्लामकी, बल्कि अन्य धर्मोकी भी रक्षा कर सकेगे। किन्तु यदि आपने इस ताकतके रहस्यको नही समझा है, यदि शस्त्र-त्यागके फलस्वरूप आप अपने-आपको पहलेके मुकाबले ज्यादा शक्तिशाली नही बल्कि कमजोर महसूस करें, तब आपको अहिंसाकी बात छोड देनी चाहिए। मै अपने प्रभावके कारण किसी भी पठानको कमजोर या कायर बनते नही देख सकता। बल्कि वैसी हालतमें तो मै चाहूँगा कि आप दूने जोर-शोरसे हथियार उठा ले।

आज सिख लोग कहते है कि यदि वे कृपाण छोड दें तो सभी कुछ छूट गया समझो। लगता है उन्होने कृपाणको अपने धर्मका अग बना लिया है। वे सोचते है कि उसे त्यागकर वे कमजोर और कायर बन जायेगे। मै उनसे कहता हूँ कि उनका यह भय निराधार है, और आज वही बात आपसे कहनेके लिए मै यहाँ आपके बीच आया हूँ। मैने 'कुरान' को भी उतने ही ध्यान और श्रद्धाके साथ पढा है जितने ध्यान और श्रद्धाके साथ 'गीता' को पढ़ा है। मैने इस्लामके बारेमे अन्य महत्वपूर्ण पुस्तके भी पढी है। मेरा दावा है कि मेरे मनमे जितना आदर अपने धर्मके प्रति है उतना ही इस्लाम तथा अन्य धर्मोके प्रति भी है, और मै दावेसे कह सकता हूँ कि इस्लामके इतिहासमें यद्यपि तलवारका इस्तेमाल किया गया है, और सो भी धर्मके नामपर किया गया है, तथापि इस्लामकी स्थापना तलवारके जोरसे नही हुई थी और न उसका प्रसार ही तलवारके जोरसे हुआ। इसी प्रकार ईसाई धर्ममें भी तलवारका खुलकर प्रयोग किया गया, लेकिन उसका प्रसार तलवारके जोरसे नही हुआ। इसके विपरीत, तलवारके प्रयोगसे उसके उज्ज्वल यशको धब्बा ही लगा है। यूरोपमे करोडो लोग ईसाई होनेका दावा करते है, लेकिन ईसा मसीहकी शिक्षाओके विपरीत वे भाई-भाईके बीच रक्तपात और हत्याका नगा ताडव रचा रहे है जोकि सच्चे ईसाई धर्मका खण्डन है। मै आपको जो-कुछ बताता रहा हूँ, यदि आप उसे आत्मसात् कर सके तो आपका प्रभाव आपकी भौगोलिक सीमाको पार करके दूर-दूर तक फैल जायेगा और इस प्रकार यूरोपको भी रास्ता दिखायेगा।

आज १७,००० अंग्रेज सैनिक हमारे ऊपर शासन कर पा रहे हैं, क्योंकि उनके पीछे ब्रिटिश सरकारकी ताकत है। शस्त्र-त्याग करनेके फलस्वरूप खुदाई खिदमतगारो को यदि अपने अन्दर आत्म-बल उमडता हुआ लगे तब तो भारतको अपनी आजादी पानेके लिए १७,००० लोगोकी जरूरत भी नही पडेगी, क्योकि उनके पीछे ईश्वरकी शक्ति होगी। इसके विपरीत, यदि आप दस लाख लोग भी अहिंसाको माननेका दावा तो करें पर आपके मनमे हिंसा छिपी हो, तो ऐसे दस लाख लोगोका भी कोई महत्व नही है। आप शस्त्रका त्याग करें तो इस कारण करें कि आपने समझ लिया है कि वह आपकी शक्तिका प्रतीक नही बल्कि आपकी कमजोरीका प्रतीक है, क्योकि शस्त्रोसे सच्ची बहादुरी नही आती। किन्तु यदि बाहरी तौरपर तो शस्त्र-त्याग कर दे, लेकिन आपके मनमे हिंसा मौजूद हो, तो ऐसा मानिए कि आपने शुरुआत गलत की है और आपके इस त्यागमे कोई श्रेयकी बात नही होगी। बल्कि वैसी हालतमे वह खतरनाक भी साबित हो सकता है।

हृदयसे हिंसाको जड़-मूलसे उखाड़ फेकनेका क्या अर्थ है?

यह प्रश्न करके गांधीजी ने समझाया कि इसका मतलब अपने गुस्सेपर काबू रख सकना ही नहीं है, बल्कि गुस्सेको बिलकुल खत्म कर देना है।

यदि कोई डाकू मेरे दिलमे क्रोध या भय पैदा कर दे, तो इसके मतलब है कि मैंने अभी तक हिंसासे मुक्ति नही पाई है। अहिंसाको समझनेका अर्थ है अपने अन्दर उसकी ताकतको महसूस करना, वह ताकत जिसे आत्म-बल कहते है। सक्षेपमे कहें तो इसके अर्थ है परमात्माको जानना। जिस मनुष्यने ईश्वरको जान लिया है, वह क्रोध या भयका कितना ही प्रबल अवसर आनेपर भी अपने अन्दर क्रोध या भयका अनुभव नही करेगा।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ५७-९

३. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ – २

[१५ अक्टूबर, १९३८ या उसके पूर्व][1]

गांधीजी ने एक स्थानपर खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत करते हुए उन्हें बताया कि खुदाई खिदमतगारको सबसे पहले खुदाका बन्दा होना चाहिए, अर्थात् मानव-जातिका सेवक। इसके लिए उसमें कर्म, वचन और मनकी शुचिता और अनवरत सच्ची उद्यमशीलता होनी चाहिए, क्योंकि मनकी शुचिता और आलस्यका परस्पर कोई मेल नहीं। अतः उनको कोई दस्तकारी सीखनी चाहिए जिसे वे घर बैठे कर सकें। यह धन्धा ओटाई, कताई और बुनाई ही होना चाहिए, क्योंकि यही धन्धा है

१. गांधीजी ने पेशावरके खुदाई खिदमतगारोंके आखिरी जत्थेसे १५ अक्टूबरको मुलाकात की थी।

जिसमें लाखों लोगोंको काम मिल सकता है और इसे वे अपने घर बैठे ही कर सकते हैं।

तलवारके सिद्धान्तको त्याग देनेवाला आदमी एक मिनटके लिए भी बेकार नहीं बैठ सकता। कहावत है न कि खाली दिमाग शैतानका घर होता है। आलस्य, आत्मा और बुद्धि दोनोंका ह्रास करता है। हिंसा त्याग देनेवाला आदमी हर साँसके साथ खुदाका नाम लेता रहेगा और चौबीसो घंटे अपना काम करेगा। वहाँ निरर्थक विचारके लिए कोई स्थान नही होगा।

इसके अलावा हरएक खुदाई खिदमतगारके पास अपने जीविकोपार्जनका एक स्वतन्त्र साधन होना ही चाहिए। आज आपमें से बहुतोंके पास अपनी जमीन है किन्तु वह आपसे छीनी जा सकती है, परन्तु आपकी दस्तकारी या आपका हुनर तो कोई छीन नही सकता। यह सच है कि खुदा अपने सेवकको रोजकी रोटी जरूर देता है, किन्तु केवल तभी जबकि वह उतनेके लिए भी मेहनत करे। कुदरतका नियम है कि यदि कोई काम न करे तो वह खा भी नही सकता और यही आपका भी नियम होना चाहिए। आपने लाल कमीजको अपनी वर्दी बनाया है। मैंने आशा की थी कि आप खादीको भी अपनायेंगे जोकि आजादी की वर्दी है। किन्तु देखता हूँ कि आपमे से बहुत कम लोग खादी पहने हुए हैं। इसका कारण शायद यह है कि आपको खुद अपनी वर्दी बनवानी पडती है और खादी कुछ महँगी बैठती है। लेकिन यदि आप खुद कातें तो ऐसा नही रहेगा।

गांधीजी ने उनसे कहा कि आपको हिन्दुस्तानी सीखनी चाहिए, क्योंकि उसके सहारे आप अपनी बुद्धिका परिष्कार और विकास कर सकेंगे और बाहरी बड़ी दुनियाके सम्पर्कमें आयेंगे। आपको सफाई और प्राथमिक चिकित्साका बुनियादी ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। अन्तमें मैं कहना चाहूँगा कि यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि आपको सब धर्मोके प्रति समान आदर और श्रद्धाका भाव अपनाना सीखना चाहिए।

आप लाल कमीज पहनकर ही या कतारोंमे खड़े होकर ही खुदाई खिदमतगार नही बन जाते, आप तो वह तब बनेंगे जब आप अपने मनमे खुदाई ताकत महसूस करें जो हथियारोंकी ताकतसे ठीक उलटी है। आप अभी अहिंसाके द्वार तक ही पहुँचे हैं। अभी तो आपको बहुत-कुछ करना है। सोचिए कि उस पवित्र भवनमे प्रवेश कर जायें तो आपको और कितनी भारी उपलब्धि हो जायेगी! जैसाकि मैं कह चुका हूँ, उसके लिए पहलेसे तैयारी और प्रशिक्षणकी जरूरत है। इस वक्त आपमें दोनोंका अभाव है।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ६०-१

४. बातचीत : अब्दुल गफ्फार खाँ के साथ

[१५ अक्टूबर, १९३८ या उसके पूर्व][1]

अब्दुल गफ्फार खाँ : यहाँ गाँवोमें कुछ पठान है जो खुदाई खिदमतगारोंको असह्य रूपसे सताते हैं। उन्हें पीटते हैं, उनकी जमीनें छीन लेते है इत्यादि। हमें उनके खिलाफ क्या करना चाहिए?

गाधीजी : हमे धैर्य और दृढताके साथ उनकी जोर-जबर्दस्तीका सामना करना है। उनके अत्याचारोंका हमे उसी प्रकार सामना करना है जिस प्रकार हम अंग्रेजोके अत्याचारोका करते थे, अर्थात् हिंसाका जवाब हिंसासे नही, गालियोंका जवाब गालीसे नहीं देना है और न ही अपने मनमे रोष रखना है। अगर हम ऐसा करेंगे तो निश्चय ही उनका हृदय पिघल जायेगा। यदि यह तरीका सफल न हो तो हम असहयोग करे। अगर वे हमारी जमीने छीन ले तो हम उनकी मजदूरी न करें, चाहे हमे भूखों ही क्यों न रहना पड़े। हम उनके कोपका सामना करेंगे, परन्तु उनके सम्मुख झुकेंगे नहीं और अपनी अन्तरात्माके विरुद्ध भी काम नही करेंगे।

अब्दुल गफ्फार खाँ : क्या हमारे लिए उचित है कि हम पुलिसमें उनके खिलाफ शिकायत दर्ज कराकर उन्हें सजा दिलवायें?

गांधीजी : कोई भी सच्चा खुदाई खिदमतगार अदालतकी शरण नही लेगा। अदालतमे लडना तो हाथ-पैरसे लड़ने जैसा ही है, फर्क सिर्फ इतना ही है कि आप खुद बल-प्रयोग न करके दूसरेके जरिये बल-प्रयोग करवाते है। आततायीको पुलिससे दण्ड दिलवाना एक प्रकारका बदला ही है जिसे खुदाई खिदमतगारोको त्याग देना है। एक व्यक्तिगत दृष्टान्त देकर मैं अपना तात्पर्य समझाता हूँ। सेवाग्राममे मेरे पास कुछ हरिजन आये और मुझसे बोले कि यदि मैं मध्यप्रान्तके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलमे किसी भी हरिजनको शामिल नही करवाता तो वे भूख-हडतालके रूपमे सत्याग्रह करेंगे।[2] मैं जानता था कि सब एक शैतान आदमीकी कारस्तानी है। पुलिस-अधीक्षक कुछ सिपाहियोको तैनात करना चाहते थे, क्योंकि उन्हें डर था कि गुण्डे कुछ शैतानी न कर बैठे। मैंने उन्हें मना कर दिया और हरिजनोसे कहा कि वे लोग बाहर धूपमे न बैठे बल्कि आश्रमका जो भी कमरा उन्हे पसन्द हो उसमे चाहें तो बैठ जाये। मैंने उनसे कहा कि यदि वे चाहे तो मैं उन्हे भोजन भी कराऊँगा। उन्होने मेरी पत्नीके स्नानागारमे बैठना चाहा तो मैंने उन्हे वही बैठने दिया।

१. यह बातचीत गाधीजी के १५ अक्टूबरको मरदान और नौशेराके दौरे के लिए रवाना होनेसे पहले उटमंजई में हुई थी। गफ्फार खाँके उटमंजई स्थित मकानपर गांधीजी कुछ दिन के लिए ठहरे थे।

२. देखिए खण्ड ६७, पृ० ३२३-४ और ३२७।

हमने उनकी सब जरूरतोंकी देखभाल की और उनमें से जब एक बीमार पड़ गया तो उसकी शुश्रूषा की। परिणाम यह हुआ कि वे हमारे मित्र बन गये।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ६१-२

५. पत्र : महादेव देसाईको

उटमंजई
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

इस पत्रका[1] अनुवाद देखनेसे तो लगता है कि इसमें बहुत-से तथ्य छूट गये हैं जिससे रिपोर्ट अच्छी नहीं लगती। क्या उसमें बालकोंके अतिरिक्त १८ व्यक्तियोंने भाग लिया था? इस प्रकार क्या कुल मिलाकर २२+१८ लोग थे? इनमें मुसलमान कितने थे? क्या एक ही चरखा अखण्ड चल रहा था? सूत कितने अंकका था? सोमाभाई स्वयं शिक्षक हैं या कार्यकर्ता? यदि शालामें मुसलमान बालक हैं तो कितने हैं? पीपोदराकी आबादी कितनी है? अधिकतम गति कितनी थी? सूतका अधिकतम अंक कितना था? औसत मजबूती क्या है? यदि तुम यही पत्र भेजना चाहो तो भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आजसे दौरा शुरू हो रहा है, इसलिए जो परम शान्ति मिल रही थी वह भंग हो रही है। फिर भी आशा है कि मेरा स्वास्थ्य इसी प्रकार उत्तम बना रहेगा। पहले दौरेका कार्यक्रम इसके साथ है। इसके बादका कार्यक्रम भी तैयार हो चुका है। ८ नवम्बर तक तो हम यहीं हैं।

खान साहबका तो एक ही काम है : मुझे कैसे आराम पहुँचाया जा सकता है और अन्य लोगोंको कैसे खिलाया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

राजकुमारीसे कहना कि आज मैं उसे नहीं लिख रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६२) से।

१. देखिए "पुर्जा : महादेव देसाईको", पृ० १।

६. पत्र : मीराबहनको

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्र मिल गये है। डॉ० बेनिस तो लगभग निर्वासित[1] ही हो चुके है, तो भी तुम्हारा पत्र अगर अबतक उनके पास नही पहुँचा हो तो यथासमय पहुँच जरूर जायेगा। अगर उनमे सही भावना जग गई है तो इस निर्वासनसे कोई अन्तर नही पडनेवाला है।

यहाँ तो मौसम बडा ही अच्छा है। तुम्हारे यहाँ असाधारण वर्षा हो रही है। बम्बईमे भी यही हुआ। मेरा खयाल है, फसले बर्बाद हो गई है।

अफसोस है कि ९ नवम्बरसे पहले मै इस प्रान्तको नही छोड़ सकता। कार्यक्रम अखबारमे देख लेना। दौरेमे स्वास्थ्य कैसा रहता है यह तो आगे मालूम होगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४०९) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००० से भी।

७. पत्र : महादेव देसाईको

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

जीवराज लिखते है कि तुम्हें चढाई नही चढनी चाहिए। तुम भी लिखते हो कि तुम्हारे ऊपर इसका असर अच्छा नहीं होता। वहाँ रिक्शे तो है ही। बीमारीकी हालतमे उनका उपयोग अनुचित नही है। जहाँ भी चढाई हो वहाँ रिक्शेमे बैठकर जाओ। इस तरह, घूमनेके लिए रोज कोई नई जगह चुनी जा सकती है। इसमें मै कोई दोष नहीं देखता। शिमलाके प्रवासका पूरा लाभ इसी तरह लिया जा सकेगा।

१. नाजी जर्मनी द्वारा सुडेटनलैंडपर कब्जा कर लेनेके बाद ५ फरवरीको एडुअर्ड बेनिसको राष्ट्रपतिके पदसे त्यागपत्र देने और देश छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया गया था। देखिए खण्ड ६७, पृ० ४५२ भी।

दुर्गाके विषयमे शम्मी इससे कुछ उलटा ही कहता मालूम होता है। ऐसा हो तो मेरी सलाह बेकार मानी जाये। हाँ, यदि मै वहाँ होता तो इस बात पर शम्मीके साथ बहस जरूर करता।

यह तो तुम जानते हो कि मेरे पत्रके साथ यदि [दूसरोको लिखे गये] कोई अन्य पत्र होते है तो उन्हे मै पढता नही हूँ। यह मेरा स्वभाव है। लेकिन एक पत्रके उत्तरमे सुशीलाके नाम तुम्हारे दो पत्र थे। उन्हे मैने पढ़ लिया। इसके लिए मैं अपनी जिज्ञासाके सिवा कोई दूसरा कारण नही दे सकता। पिछले पत्रमें तो मुझे केवल चन्द्रमाका चित्र याद रह गया है, बाकी सब भूल गया हूँ। लेकिन कलका पत्र मै महत्वपूर्ण मानता हूँ। मै नही जानता कि सुशीलाने विकारोके सम्बन्धमे क्या लिखा था। किन्तु मेरे लिए तो यह प्रश्न सत्यासत्यका प्रश्न बन गया है। तुमने उसे ऐसा लिखा है कि मेरे अन्तिम वक्तव्यके[1] बाद अब वे सब निश्चिन्त रह सकते हैं। यह बात मुझे खटकी। कोई भी क्यो न हो, यदि उसे विकारका अनुभव होता है तो उसके विषयमें हम निश्चिन्त नही हो सकते। किन्तु अपने विषयमे तो मुझे यह कहना चाहिए कि जो अनुभव मुझे अभी हो रहे है वे यदि इस अन्तिम वक्तव्यके समय हो रहे होते तो मै ऐसा वक्तव्य प्रकाशित ही नही करता। मै यह भी नही कह सकता कि मैने उस हालतमे अपना प्रयोग बन्द किया होता या नही। इसलिए मेरे विषयमे तुम लोग या कोई भी निश्चिन्त नही रह सकता। इस अन्तिम वक्तव्य को वापस लेनेकी या उसकी जगह सशोधित वक्तव्य प्रकाशित करनेकी अभी तो मै कोई जरूरत नही देखता। अलबत्ता, इसका अर्थ यह नही है कि तुम लोगोमे से कोई चिन्ता करने लगे। अभी तो मै इससे ज्यादा नही कहना चाहता। सत्यकी खातिर इतना कहना जरूरी मालूम हुआ, अत उसके लिए समय निकाला। तुम्हे और ज्यादा जाननेकी इच्छा तो होगी पर उसे रोकना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

विकारोके विषयमे यहाँ मैने जो-कुछ कहा उसकी जानकारी राजकुमारीको देना ताकि मुझे न लिखना पड़े।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६३) से।

१. देखिए खण्ड ६७, पृष्ठ ४०३।

८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

बा,

इस बार तूने मुझे अच्छी चिन्तामे डाल दिया है। मुझे तेरा विचार भी करना है और अपने कर्तव्यका भी, सो मेरा मन इन्ही दोके बीच झूलता रहता है। मन कहता है कि मैं तेरे पास दौड़ा चला जाऊँ। कर्तव्य कहता है कि जहाँ हो वहाँका काम पूरा करो। अब यदि तू जल्दी अच्छी हो जाये तो मेरी चिन्ता दूर हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० २९

९. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० अमृतलाल,

तुम्हारे दो पत्र एक साथ मिले।

सोप्टेकरको २५ रुपये चुका देना। वत्सलाको पढानेके बारेमे तो मैं तुम्हे लिख चुका हूँ। चक्रैयाने पुस्तकके बारेमे मुझे लिखा था। मैंने उसे उत्तरमे लिख दिया है कि वह तुम्हे बता दे। तुम्हे जैसा उचित जान पड़े सो करना। जो नये भाई[1] आये है उनका कैसा चल रहा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७७६) से।

१. राजभूषण।

१०. पत्र: विजया एन० पटेलको[1]

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० विजया,

तू कैसी लड़की है! तेरा कोई पत्र ही नही मिला? अमृतलालके पत्रसे देखता हूँ कि तेरी तबीयत सँभली नही है। मैने तुझे लिखा था कि तू मरोली चली जा। जब मैं सेगाँव पहुँचूँगा तब तो तुझे वहाँ आना ही है। तेरी तबीयत चाहे जैसी क्यो न हो, किन्तु उसे अपने हाथो बिगाड़ मत। मैंने जो लिखा है उसे मान। यदि मरोली जानेमें किसी तरहकी दिक्कत हो तो मुझे लिख। मुझे नियमित रूपसे समाचार अवश्य मिलने चाहिए। पेशावरके पतेपर लिखना। बा दिल्लीमें बीमार पड़ी हुई है।

बापूके आशीर्वाद

श्री विजयाबहन
मार्फत श्री रामभाई हीराभाई पटेल
सौराष्ट्र सोसाइटी
एलिस ब्रिज, अहमदाबाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१००) से। सी० डब्ल्यू० ४५९२ से भी; सौजन्य: विजयाबहन एम० पचोली

११. पत्र: शारदा चि० शाहको

पेशावर
१५ अक्टूबर, १९३८

चि० बबुडी,

तेरा पत्र मिला। एक महीनेसे अधिक तो लग ही जायेगा। यहाँ रहनेका कार्यक्रम ९ तारीख तकका है। तेरी चिन्ताको मैं समझता हूँ। मेरा मन तो वहाँ है, किन्तु यहाँका काम इतना महत्वपूर्ण है कि मुझे उतावली नही करनी चाहिए। तू धीरज रखना, भविष्य चाहे जैसा क्यो न हो। तुझे सेविका बनना है, भले तू

१ अहमदाबादके पतेपर भेजा गया यह पत्र सौराष्ट्र स्थित दक्षिणामूर्ति ग्रामको अनुप्रेषित कर दिया गया था।

विवाह करे या न करे। और उसके लिए तुझे अपनी योग्यता बढानी है। मैं यह जानता हूँ कि तू मेरे प्रहार भी सहन कर सकेगी, क्योंकि वे प्रेमके प्रहार ही होगे। मैं तुझे क्षण-भरके लिए अपनी नजरोसे दूर नही करना चाहता, किन्तु मैं लाचार हो जाता हूँ।

मुन्नालालके बारेमे तू जो कहती है, ठीक वैसा ही है। वह चला जायेगा। लगता है उसके जानेमे ही उसका श्रेय है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००२२) से, सौजन्य . शारदाबहन गो० चोखावाला

१२. पत्र : एच० पी० रंगनाथ अय्यंगारको

पेशावर
१६ अक्टूबर, १९३८

प्रिय मित्र,

आपके दोनो पत्र मीराबाईने मेरे पास भेज दिये है। मुझे दु:खके साथ कहना पड़ता है कि मैं आपकी सहायता नही ले सकूँगा; फिर भी, आपने सहायता देनेकी उत्सुकता बताई, इसके लिए आपको धन्यवाद।

मेरे खयालसे, आप जहाँ है वही रहे और जब जैसी सेवाका अवसर आये वैसी सेवा करते रहे। श्री महादेव देसाईकी हालत बेहतर है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री एच० पी० रंगनाथ अय्यंगार
बी० ए०, एल-एल० बी०
९३०, नायडू स्ट्रीट
डाकखाना चिकनागलूर
मैसूर राज्य

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३३५) से।

१३. पत्र : अमृत कौरको

पेशावर
१६ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

हमारे पेशावर लौटनेपर तुम्हारे दो पत्र पडे मिले। दाहिने हाथको कुछ आराम देना जरूरी है। जितना काम यह सुगमतासे कर सकता है, उससे ज्यादा काम इसे करना पड़ रहा है।

मेरा स्वास्थ्य अब भी बिलकुल ठीक है। दौरेमे इसकी क्या हालत होगी, यह नही मालूम। मौन सहायक रहेगा।

जोशीका पत्र ठेठ उसीके ढंगका है।

महादेवसे कहना कि कल मुझे एक तार मिला है, जिसमे सूचित किया गया है कि शुक्ल[1] नही रहे। वे मेरे पुराने मित्रोमे से थे — जब मै इग्लैडमे पढता था, उन्ही दिनोके। वे राजकोटमे वकालत कर रहे थे।

सेगाँवमे अभी भी वर्षा हो रही है। यहाँ मौसम बिलकुल सूखा है।

साथमे महादेवके लिए कान्तिके पत्र भेज रहा हूँ। ये बडे दिलचस्प है। महादेवसे कहना कि उसे जो-कुछ कहना है, थोड़ेमे तुम्हे बता दे।

सप्रेम,

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४०) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन ६४४९ से भी।

१४. भाषण: नौशेरामें[2]

१६ अक्टूबर, १९३८

आपने यह आश्वासन दिया है कि अहिंसाके सिद्धान्तको आप लोगोने भली-भाँति समझ लिया है और आप लोग सदा इसपर दृढ रहेगे। आपका यह आश्वासन मै पूरा-पूरा स्वीकार कर लेता हूँ। इसके लिए मै आप लोगोको बधाई देता हूँ और

१. तात्पर्य शायद दलपतराम शुक्लसे है; देखिए खण्ड ३९, पृ० ३९ और ४१।

२. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-२" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। वहाँके खुदाई खिदमतगारोंने गाधीजीको एक मानपत्र भेंट किया था और उन्हें भरोसा दिलाया था कि अहिंसामें उनकी पूरी और अडिग श्रद्धा है तथा वे इससे कभी पीछे नहीं हटेंगे।

यह भी कहता हूँ कि अगर आप अहिंसाके सिद्धान्तको पूरी तरह अमलमे ला सके तो यह समझिए कि आप एक नये इतिहासका निर्माण करेंगे। आपका कहना है कि आपके रजिस्टरमे एक लाख खुदाई खिदमतगारोके नाम दर्ज है। यह तादाद काग्रेसके स्वयंसेवकोकी आजकी तादादसे कही ज्यादा है। आप सभी लोगोने नि स्वार्थ सेवाकी प्रतिज्ञा की है। किसी तरहका आर्थिक भत्ता भी आप नही ले रहे हैं। यहाँ तक कि अपनी पोशाक भी आपको खुद ही जुटानी पड़ती है। आपका दल एक सूत्रमे बँधा हुआ है और अनुशासित है। खानसाहबकी बातको आप कानून समझते है। आपने बदला लेनेके लिए कोई हरकत किये विना चोट सहनेकी अपनी क्षमता प्रमाणित कर दी है। लेकिन यह तो अपनी योग्यता सिद्ध करनेके आपके प्रयत्नका अन्तिम नही, बल्कि पहला चरण है। भारतकी आजादी हासिल करनेके लिए कष्ट-सहनकी क्षमताके साथ-साथ अविरत परिश्रम करनेकी भी योग्यता होनी चाहिए। आजादीके सेनानीको सबके हितके लिए निरन्तर कार्य करते रहना चाहिए। सामान्य सैनिकोके साथ आपकी इतनी ही समानता है कि आप भी एक खास ढंगकी पोशाक पहनते है और शायद आपने उनके कुछ नाम भी अपना लिये है। लेकिन उनकी प्रवृत्तिका मूल जहाँ हिंसा है, आपकी प्रवृत्ति अहिंसाके आधार पर खडी है। इसलिए आपका प्रशिक्षण, आपके पेशे, आपके कार्यके तौर-तरीके, यहाँ तक कि आपके विचार और आपकी आकाक्षाएँ सब उनसे भिन्न ही होने चाहिए। हथियारबन्द सैनिक हत्याके काममे प्रशिक्षित होता है। यहाँ तक कि वह स्वप्नमे भी हत्याकी ही बात सोचता है। वह युद्ध-क्षेत्रमे अपने बाहुबलसे लडने, आगे बढ़ने और यश कमानेका स्वप्न देखता है। उसने हत्याकार्यको एक कलाका रूप दे दिया है। इसके विपरीत कोई सत्याग्रही, कोई खुदाई खिदमतगार सदा मौन सेवाके अवसरकी ताकमे रहता है। वह अपना सारा समय प्रेममय सेवामे लगाता है। अगर वह स्वप्न भी देखेगा तो दूसरोकी हत्याका नही, बल्कि दूसरोकी सेवामे अपनेको मिटा देनेका। उसने किसीका कोई अपकार किये बिना अपने मानव भाइयोके लिए मर मिटनेको एक कलाका रूप दिया है।

इसके बाद गांधीजी ने यह प्रश्न उठाया कि "आपको इस कामके लायक बनानेके लिए प्रशिक्षण कैसा मिलना चाहिए"; और इसका उत्तर स्वयं देते हुए उन्होंने कहा कि निस्सन्देह विभिन्न प्रकारके रचनात्मक कार्योका प्रशिक्षण ही उन्हें इस योग्य बनायेगा।

आगे उन्होंने उनसे कहा कि रचनात्मक अहिंसा-शास्त्रमें पारंगत एक लाख खुदाई खिदमतगारोंको सीमा-पारसे होनेवाले हमलोंकी सारी सम्भावना मिटा सकनी चाहिए।

आपके इलाकेमे यदि एक भी चोरी-डकैती हो, तो इसे आपको अपने लिए शर्मकी बात समझनी चाहिए। चोर तथा सीमा-पारके हमलावर भी तो आखिर मनुष्य ही है। अपराध वे इसलिए नही करते कि उन्हे उससे कोई प्रेम है, बल्कि इसलिए करते है कि अधिकाशत. उनकी जरूरते उन्हे उसके लिए मजबूर करती है। अपनी जरूरते

पूरी करनेका कोई और उपाय वे जानते ही नही। उनके साथ अभी तक केवल शक्तिसे ही काम लिया गया है। उनके साथ न रहमदिलीसे काम लिया गया और न वे ही किसीपर रहम करते हैं। डॉ० खानसाहब इनके सामने लाचार हैं, क्योकि सरकारके पास उनसे निपटनेके लिए कोई और रास्ता ही नही। लेकिन आप इस समस्याको सुलझानेके लिए कोई अहिंसक रास्ता अपना सकते हैं और मुझे पूरा विश्वास है कि जहाँ सरकार असफल रही है वहाँ आपको सफलता मिलेगी। कुटीर-उद्योग-जैसे कामोमे उन्हे लगाकर आप उनसे वैसी ही ईमानदारीकी जिन्दगी बसर करनेको कह सकते है जैसी जिन्दगी आप बिताते हैं। आप उनके बीच जाकर उनके घरोमे उनकी सेवा कर सकते हैं और उन्हे स्नेह और सहानुभूतिके साथ अपनी बात समझा सकते हैं। ऐसा करनेपर आप खुद देखेंगे कि प्रेमसे समझाने-बुझानेका असर उनपर न हो, ऐसी कोई बात नही है। आज आपके सामन दो रास्ते हैं। एक तो पशुबलका रास्ता है, जिसे आजमाकर देख लिया गया है तथा जो निष्फल साबित हुआ है, और दूसरा रास्ता है शान्तिका। आपको जो रास्ता चुनना था, लगता है उसे आपने अन्तिम रूपसे चुन लिया है। ईश्वर आपको इस मार्गपर दृढ रहनेकी शक्ति दे और इसके योग्य बनाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१०-१९३८

१५. भाषण: होती मरदानमें[1]

१६ अक्टूबर, १९३८

गांधीजी ने उन लोगोंको समझाया कि अहिंसा कोई अंशोंमें स्वीकारने या नकारने की चीज नहीं है। इसका महत्व तो तभी है जब इसका पूर्ण आचरण किया जाये।

सूर्य उगता है तो उसकी गरमी सारी दुनियाको मिलती है। उसका अनुभव अन्धे भी करते है। इसी प्रकार जब एक लाख खुदाई खिदमतगार अहिंसाकी सच्ची भावनासे ओतप्रोत हो जायेंगे तो ससारके सामने अहिंसाकी महिमा स्वय ही प्रकट हो जायेगी और इसके प्राणदायी वायुका अनुभव हर आदमी करने लगेगा।

मैं जानता हूँ कि यह बात कठिन है, किसी अपमानको सिर झुकाकर स्वीकार कर लेना पठानोके लिए कोई आसान काम नही है। पठानोको मैं अपने दक्षिण आफ्रिकाके प्रवास-कालसे ही जानता हूँ। मुझे उनके निकट और अन्तरग सम्पर्कमें आनेका सुअवसर मिला था। उनमे से कुछ मेरे मुवक्किल थे। वे मुझे अपना मित्र, विवेकशील बन्धु और मार्ग-दर्शक मानकर बिलकुल मुक्त भावसे अपनी राजकी बाते

१. प्यारेलाल नैयर के "ऐट मरदान" शीर्षक विवरण से उद्धृत। गांधीजी खुदाई खिदमतगारोंसे आमतौर पर यह सवाल पूछा करते थे कि क्या वे हर परिस्थिति में अहिंसापर दृढ रहेंगे। यहाँ भी उन्होंने उनसे यही सवाल पूछा। इसपर एक ने उत्तर दिया कि हम और सब-कुछ तो सह लेंगे, लेकिन अपने नेताओंका अपमान हमसे बर्दाश्त नहीं होगा।

भी बता दिया करते थे। यहाँ तक कि वे मेरे पास आकर अपने छिपे हुए अपराध भी कबूल कर लिया करते थे। वे बड़े ही उद्धत स्वभावके और कटने-मरनेको तैयार रहनेवाले लोग थे। वे लाठी चलानेमें लासानी थे, तनिक-सी बातपर भड़क उठते थे और दंगोंमें सबसे आगे बढ़कर हिस्सा लेते थे। जिन्दगीका तो उनके लिए कोई मोल ही नहीं था। वे किसी आदमीकी हत्या ऐसे कर सकते थे जैसे वह आदमी नहीं, मेमना या मुर्गा हो। ऐसे लोग एक आदमीके कहनेपर अपने हथियार छोड़ दें और एक श्रेष्ठतर हथियारकी तरह अहिंसाको अपना ले, यह तो परियोंकी कथा-जैसी अविश्वसनीय बात लगती है। यदि एक लाख खुदाई खिदमतगार मन, वचन और कर्मसे सच्चे अहिंसावादी बन जायें और हिंसाको इस तरह छोड़ दें जैसे साँप अपना बेकारका केंचुल उतार फेंकता है तो यह चमत्कार ही होगा। इसीलिए अहिंसामें अपनी श्रद्धा होनेका आपने मुझे जो आश्वासन दिया है उसके बावजूद मेरे मनमें झिझक है और अपनी बातमें मैं "अगर ऐसा हो तो" जैसे मुहावरोंका प्रयोग कर रहा हूँ। मेरी झिझक केवल इस बातकी द्योतक है कि यह कार्य कितना कठिन है। लेकिन बहादुरोंके लिए कोई भी कार्य इतना कठिन नहीं होता कि वे उसे कर ही न सकें, और मैं जानता हूँ कि पठान लोग बहादुर हैं।

जिस कड़ी कसौटीपर मैं आपको परखूँगा वह यह है: क्या आपने अपने हलकेके एक-एक व्यक्तिको अपना मित्र बनाया है, क्या उनमें से प्रत्येकका विश्वास प्राप्त किया है? लोग आपको प्रेमकी निगाहसे देखते हैं या भयकी दृष्टिसे? जब तक एक भी आदमी आपसे भय खाता है, समझ लीजिए आप सच्चे खुदाई खिदमतगार नहीं बन पाये हैं। खुदाई खिदमतगारकी बोल-चाल, तौर-तरीकेमें नम्रता होगी, उसकी दृष्टिसे ऐसी स्निग्ध ज्योति फूटेगी कि किसी अजनबीको भी, किसी स्त्री या बच्चेको भी सहज ही लगने लगेगा कि यह रहा उसका वह सच्चा मित्र और हमदर्द, खुदाका वह बन्दा जिसपर वह भरोसा कर सकता है। खुदाई खिदमतगारसे समाजके सभी वर्गोंके लोग सहयोग करेंगे। लेकिन लोग उसकी आज्ञाका पालन करेंगे तो उस भावसे नहीं जिस भावसे वे अत्याचार और दमनकी असीम शक्तिके स्वामी किसी हिटलर या मुसोलिनीकी आज्ञाका पालन करते हैं, बल्कि ऐसे प्रसन्न और सहज भावसे करेंगे जैसे कोई किसीके प्रेमके वशीभूत होकर ही उसकी आज्ञाका पालन करता है। प्रेमकी यह शक्ति केवल सतत स्नेहमय सेवा और प्रभु-भक्तिसे ही प्राप्त हो सकती है। जब मैं देखूँगा कि आपके प्रभावके कारण लोग अपनी गन्दी और स्वास्थ्यके लिए हानिप्रद आदतें धीरे-धीरे छोड़ रहे हैं, शराबी शराबखोरीसे विमुख हो रहे हैं और अपराधी वृत्तिके लोग अपराधोंका त्याग कर रहे हैं तथा लोग खुदाई खिदमतगारोंका स्वागत सर्वत्र अपने सहज रक्षकों और सच्चे मित्रोंकी तरह कर रहे हैं तब मैं समझूँगा कि हमारे बीच अन्ततः ऐसे लोगोंका एक दल तैयार हो गया है जिन्होंने सचमुच अहिंसा-वृत्तिको आत्मसात कर लिया है और भारतकी मुक्तिकी घड़ी अब दूर नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

१६. पत्र : शामलालको

मरदान्
१७ अक्टूबर, १९३८

प्रिय लाला शामलाल,

आपका पत्र मिला। कह नही सकता कि इस सम्बन्धमें[1] मैं क्या कर सकूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

लाला शामलाल, विधान-सभा सदस्य
७, बेगम रोड
लाहौर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८५) से।

१७. पत्र : सिकन्दर हयात खाँको

पेशावरके पतेपर
१७ अक्टूबर, १९३८

प्रिय सर सिकन्दर,

मुझे अभी-अभी बन्दी इन्द्रपालकी पत्नीका करुण पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें उसने लिखा है कि उसका पति, जो कि ८ सालसे सजा भुगत रहा है, इस समय लकवेका शिकार है। क्या मैं उसकी रिहाईके लिए अनुरोध कर सकता हूँ?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

सर सिकन्दर हयात खाँ
मुख्य मन्त्री
लाहौर

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१. पंजाबके कैदियोंके बारेमें; देखिए खण्ड ६६, पृ० ४२४।

१८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

पेशावरके पतेपर
१७ अक्टूबर, १९३८

प्रिय भाई,

कल ही महादेवसे आपका पत्र मिला। जैसा आप चाहते हैं वैसा कर सकूं तो मुझे कितनी खुशी हो! क्या आपको मालूम है कि मैंने राजकुमारीको खास तौरसे बीच-बचाव करनेके लिए[1] ही भेजा था? लेकिन वह कुछ कर नही सकी। कोई बाहरी आदमी हस्तक्षेप करे, यह सर सी० पी० को मंजूर नही है। मैंने उनसे बड़ी विनती की कि सारे मामले[2] की जाँचके लिए वे आपको बुलाये। मगर कोई जवाब न मिला। अब फिर शर्म-हया छोड़कर मैंने उनको तार भेजा है कि वे मुझे अपना कोई प्रतिनिधि भेजनेकी इजाजत दें। बल्कि अगर उन्हे गवारा हो तो मैं खुद भी वहाँ जानेको तैयार हूँ। लेकिन वे तो, चाहे जितनी युक्तिसंगत बात कहिए, कुछ सुननेको तैयार ही नही हैं। ऐसा कहनेके लिए माफ कीजिएगा। इस मामलेमें उनका जो रवैया रहा है उसे देखते हुए मुझे तो ऐसा ही लगता है। ऐसी कोई बात सामने नही आई है जिससे मेरी इस दृढ मान्यतामें कोई अन्तर पड सके कि यह आन्दोलन बहुत ठीक है और जहाँ तक नेताओंका सम्बन्ध है, वे हर तरहसे अहिंसापर आरूढ़ हैं। अब आप ही बताइए कि मैं क्या करूँ। आशा है, आप स्वस्थ-प्रसन्न होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८८२०) से।

१. त्रावणकोर राज्यके अधिकारियोंके साथ; देखिए खण्ड ६७, "पत्र: सी० पी० रामस्वामी अय्यरको", पृ० २८३।

२. देखिए खण्ड ६७, पृ० २४७-८।

१९. पत्र : नारणदास गांधीको

मरदान
१७ अक्टूबर, १९३८

चि० नारणदास,

क्या कमलाको किसी मामलेमे तुम्हारा पथ-प्रदर्शन रुचा नही? पालीताणा या पोरवन्दरके पैसेमें से खादी या राष्ट्रीय शालाको कैसे हिस्सा दिया जा सकता है, यह मुझे समझाना।

वहाँ जो आन्दोलन चल रहा है उसके वारेमें लिखना।

पुरुषोत्तमने[1] आखिर क्या निर्णय किया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२०. पत्र : लीलावती आसरको

१७ अक्टूबर, १९३८

चि० लीला,

तेरा पत्र मिल गया है। मैं चाहता हूँ कि तू उतावलीमें सेगाँव मत जा। वहाँ रहकर अपना वजन बढ़ा ले। मेरे पहुँचनेपर वहाँ आ जाना।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। फिलहाल इससे अधिककी आशा मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३७६) से। सी० डब्ल्यू० ६६५१ से भी; सौजन्य: लीलावती आसर।

१. नारणदास गांधीके पुत्र।

२१. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

पेशावर[१]
१७ अक्टूबर, १९३८

चि० कान्ति,

तेरे तीनो पत्र मिले। तेरे तर्कोमे मैं कोई दोष नही देख सका। वे ठीक तरतीबसे रखे भी गये है। तूने यह तो नही माना है न कि यदि लडाई हो ही तो हम किसी भी रूपमे अग्रेजोसे कोई समझौता न करे। इसके अतिरिक्त, यदि हम किसी भी शर्तपर लडाईमे भाग न ले तो यह चीज अपने-आपमे उनके लिए परेशानीका कारण होगी। यदि काग्रेस मेरी बात माने तो इस मामलेमे हम और कुछ कर भी नही सकते।

किन्तु फिलहाल मुझे यही उचित जान पडता है कि तू अपनी पढ़ाई-लिखाईको भूलकर इस ओर ध्यान न दे। तेरी विचारधारा तो चलती ही रहेगी और तेरे विचार परिपक्व होंगे, किन्तु मैं यही उचित मानता हूँ कि उन्हे किसीको समझानेमे तू अपना समय न गँवाये।

तेरे स्वास्थ्यके कारण मुझे चिन्ता बनी रहती है। यह निश्चित मानना कि स्वास्थ्य सुधारनेके कारण यदि एक वर्ष अधिक लग जाये तो उसमे कोई नुकसान नही है। खोया हुआ स्वास्थ्य फिर नही लौट सकता। तू कसरती है, तेरा शरीर भी सुगठित है। तेरी काठी तो मजबूत है ही। उसे टूटने मत देना। सेगाँव आ जाना और वहाँ कुछ दिन रहकर ढंगसे खा-पीकर और आराम लेकर यदि स्वास्थ्य सुधारा जा सके तो सुधार लेना। इस मामलेमे मेरी बात मान लेना और आलस्य मत करना। यह अभिमान मत रखना कि तू बादमे किसी तरह अपना स्वास्थ्य सुधार लेगा।

सरस्वतीके दादाको मैंने पत्र[२] लिखा है। प्रभाको तो लिखा ही है। यदि वह आ जायेगी तो मैं उसकी देख-भाल करूँगा। नर्सिंगका लोभ मत रख। यदि वह प्रशिक्षित हो जाये तो शेष सब-कुछ हो जायेगा। मुझे आशा है कि यदि वह मेरे पास रहेगी तो उसकी बुद्धि खुलेगी और विकसित होगी। तू यह तो स्वीकार करेगा ही कि आश्रममे रहनेवालोकी बुद्धि खुली है और विकसित हुई है। यह ठीक है कि उनके दिमागमे तथ्योकी जानकारी बहुत ज्यादा नही ठूँसी जाती, क्योकि पाठ्यक्रम वैसा नही होता। किन्तु वहाँ रहनेवाले बालक-बालिकाओकी बुद्धि उनके द्वारा चुने गये विषयोमे अच्छी चल सकी है।

१. साधन-सूत्रके अनुसार; हालाँकि गांधीजी इस तारीखको पेशावरमें नहीं थे।
२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

यदि यह बात तुझे न जँचती हो तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

हम यहाँ ९ नवम्बर तक तो हैं ही।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५०) से; सौजन्य . कान्तिलाल गाधी

२२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

मरदान
१७ अक्टूबर, १९३८

मेरे पास दो शिक्षको और साथ ही कुछ आम लोगो के भी पत्र आये हैं, जिनमें त्रावणकोरके विद्यार्थियोकी उपद्रवी प्रवृत्तियोके खिलाफ शिकायत की गई है। कोट्टायमके सी० एम० एस० कालेजके प्रधानाचार्यने लिखा है कि विद्यार्थियोने कक्षामे जानेवालोका रास्ता रोक लिया। जो छात्राएँ इनकी बात सुनने को तैयार नही थी उन्हे इन्होंने दो बार वापस लौटनेपर मजबूर किया। कक्षाओमे घुसकर वे शोर-गुल करने लगे, जिससे कक्षा चलाना असम्भव हो गया।

जो लडाई त्रावणकोरमे चल रही है, उसके प्रणेता तो यह दावा करते हैं कि वह सर्वथा शान्तिमय सघर्ष है। इसलिए उसमें इस हिंसात्मक ढंगसे भाग लेनेसे सघर्षकी प्रगति असम्भव नही तो कठिन तो अवश्य हो जाती है। जहाँ तक मै जानता हूँ, इस आन्दोलनके नेतागण यह नही चाहते कि विद्यार्थी अगर इसमे भाग लेनेपर आमादा ही हो तो वे अहिंसाका मार्ग छोड़कर चले। रास्ता रोकना, उपद्रव करना आदि साफ हिंसा है। लोगोका खयाल है कि विद्यार्थियोपर मेरा प्रभाव-है। अगर उनपर सचमुच मेरा कोई प्रभाव है तो मै उनसे मन, कर्म और वचनसे अहिंसक बने रहने को कहूँगा। लेकिन जो लोग इस आन्दोलनका सूत्र-सचालन कर रहे है वे यदि हिंसात्मक तत्वोपर काबू नही पा सकते हो तो उन्हे इस बातपर विचार करना चाहिए कि क्या सविनय अवज्ञाको स्थगित कर देना ही इस आन्दोलनके हकमें बेहतर नही होगा।

इतनी दूर रहकर वहाँके आन्दोलनके सम्बन्धमें कोई नियम निर्धारित करनेका दम मुझे नही भरना चाहिए। लेकिन जो प्रमाण मेरे सामने है, उनको देखते हुए मुझे यह तो जरूर लगता है कि यदि नेतालोग विद्यार्थियोको इस भ्रममे रहने देते है कि उनकी हिंसात्मक प्रवृत्तियोसे आन्दोलनको कोई लाभ पहुँचनेवाला है अथवा वे मन-ही-मन प्रवृत्तियोको पसन्द करते हैं तो वे एक बहुत बड़ा खतरा मोल लेगे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २२-१०-१९३८

२३. पत्र : अमृत कौरको

स्वाबी
१७ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

यह तुम्हे सिर्फ प्यार भेजनेके लिए लिख रहा हूँ। इस यात्राके दौरान मुझे अपना समय और शक्ति बचाते हुए काम करना है न।

यूरोपकी स्थितिके सम्बन्धमे मेरा दूसरा लेख[1] तुम्हे कैसा लगा, लिखना।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४१) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४५० से भी।

२४. पत्र : महादेव देसाईको

स्वाबी
१७ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

मै यह स्वाबीमे रातको लिख रहा हूँ। कल रात हम मरदानमे सोये थे। फिलहाल तो मै खुदाई खिदमतगारोके अधिकारियोके साथ लम्बी बातचीत कर रहा हूँ। शेष पूरे समय मौन रखता हूँ। 'हरिजन' मे लिखनेका लोभ तो छोड ही देना। किन्तु उसके बारेमे अपनी आलोचना मेरी जानकारीके लिए भेजना। यदि प्रूफकी भूले रह जाती हो तो चन्द्रशकरको सूचित करना। मैने शास्त्रीको[2] जो पत्र लिखा था उसकी नकल प्यारेलाल भेजेगा। साथका पत्र राजकुमारीको पढवा देना।

लीला सेगाँव जानेको अधीर हो उठी है। उसे रोकना। मेरे वहाँ पहुँचनेके बाद वह आये। राजकोटमे रहकर अपना स्वास्थ्य सुधार ले।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६४) से।

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४५९-६२।
२. देखिए पृ० १७।

२५. भाषण: स्वाबीमें[1]

[१७ अक्टूबर, १९३८][2]

यहाँ गांधीजी ने जो भाषण दिया वह खुदाई खिदमतगारोंसे आत्मनिरीक्षण करनेका एक उत्कट अनुरोध था। उन्होंने कहा, आपने सैकड़ों-हजारोंकी संख्यामें जेल जाकर अपने पौरुषका परिचय दिया है। लेकिन यह काफी नहीं है। जेलोंको भर देनेमात्रसे ही भारतको आजादी मिलनेवाली नहीं है।

जेल तो चोर-उचक्के भी जाते है, लेकिन उनके जेल जानेकी कोई महत्ता नही है। असर तो पुण्यात्मा और निर्दोष लोगोंका कष्ट-सहन ही दिखाता है। जब अधिकारियोको अधिकसे-अधिक पवित्रात्मा और निर्दोष लोगोको जेल भेजना पडता है, तभी उनका हृदय-परिवर्तन सम्भव होता है। सत्याग्रही जेल जाता है तो कोई अधिकारियोको परेशानीमे डालनेके लिए नही, बल्कि उन्हे अपने निर्दोष होनेका पूरा विश्वास दिलाकर उनका हृदय-परिवर्तन करनेके लिए जाता है। आपको यह बात समझ लेनी चाहिए कि यदि आपने जेल जानेके लिए सत्याग्रहके सिद्धान्तमे अपेक्षित नैतिक योग्यताका विकास अपने अन्दर नही कर लिया है तो आपका जेल जाना बेकार होगा और उससे आपको अन्तमे केवल निराशा ही मिलेगी। अहिंसाके भक्तमे जेल-जीवनका अपमान और उसकी कठिनाइयाँ सहनेकी क्षमता होनी चाहिए, और इन कष्टोको सहनेमे वह बदलेकी कोई कार्रवाई न करे या उसके मनमे क्रोध न आये, इतना ही काफी नही है, उसमे तो उसपर मुसीबते ढानेवालो और उसका अपमान करनेवालोके प्रति दयाका भाव होना चाहिए। इसलिए आज आप सबसे मेरा यही निवेदन है कि आप मेरी इन बातोको ध्यानमे रखते हुए अपने मनको टटोलकर देखिए, और अगर आपको लगे कि आप इस राहपर इतनी दूर तक नही जा सकते या नही जा रहे है तो अपना अहिंसाका बिल्ला उतार फेंकिए और खानसाहबसे कहिए कि वे आपको आपकी प्रतिज्ञासे मुक्त कर दें। वह एक किस्मकी बहादुरी होगी। लेकिन मैंने अहिंसाके सिद्धान्तकी जो व्याख्या की है उसके अनुसार यदि आपकी उस सिद्धान्तमे पूरी श्रद्धा है तो आप सच मानिए कि परीक्षाकी घडीमे खुदा आपको आवश्यक शक्ति देगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

१. प्यारेलाल नैयरके "ऐट मरदान" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।
२. गांधीजी इस तारीखको स्वाबीमें थे।

२६. पत्र : रायकुमार सिंहको

१८ अक्टूबर, १९३८

प्रिय मित्र,

आपने जो प्रश्न उठाये है, उन सबपर तो मै अपने लेखोमे लिख ही चुका हूँ। निस्सन्देह, यदि इंग्लैंड और फ्रांसमे इस बातकी हिम्मत हो तो मै चाहूँगा कि वे अपने शस्त्रास्त्र त्याग दें। और निस्सन्देह मेरा दावा है कि निम्नतर पशु-जगतमे व्याप्त नियम मनुष्य जातिके लिए नियम नही हो सकता। देखा गया है कि पशु-स्वभाव भी प्रेमके वशीभूत हो जाता है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत रायकुमार सिंह
जमीदार
डाकखाना नाथनगर
जि० भागलपुर

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल

२७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१८ अक्टूबर, १९३८

बा,

रामदास और देवदासके पत्रोसे लगता है कि अब तेरी हालत खतरेसे बाहर मानी जायेगी। जब सुशीलाको तेरे बारेमे मेरी चिन्ताका ज्ञान हुआ तो उसने मुझसे कहा, मुझे भेजो। मैंने उससे कहा कि "मै तुझे भेजकर क्या करूँगा? बा की सेवा तो बहुत लोग कर रहे हैं। मै तो अपनी मनकी शान्तिके विचारसे बा की खटियाके पास उपस्थित रहना चाहता हूँ और बा भी यही चाहती है। इसके बावजूद मुझे अपना हृदय कठोर बनाकर यहाँ रहनेके अपने कर्तव्यका पालन करना है।" किन्तु लगता है ईश्वरने कृपा की है। आशा है, लक्ष्मी और बच्चे आनन्दपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३०

२८. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

उटमंजई
१८ अक्टूबर, १९३८

चि० काका,

यह तुम्हारी जानकारीके लिए है। इसका क्या मतलब हो सकता है? इसका मुझपर असर नही पड़ा। प्रेमाको लिखे पत्रमे ऐसा क्या है?

आशा है तुम आनन्दपूर्वक होगे। तुम्हारी तबीयत बिलकुल ठीक हो गई होगी। बाल तुम्हारे ही पास है न? उसका पोस्टकार्ड मिला था।

यहाँकी आबहवा बहुत अच्छी है। शान्तिकी कोई सीमा नही है। इतनी शान्ति कही नही मिल सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७६८३) से।

२९. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

दौरेपर
१८ अक्टूबर, १९३८

भाई मूलचन्दजी,

तुमारे खतका उत्तर आज ही दे सकता हू। मैं तो पुस्तक न पढ़ सका लेकिन नाणावटीजीको कार्य सिपुर्द किया। उसे मैं पढ गया।[1] उसमे जो प्रमाण दिये हैं उसका मैं स्वीकार करता हूँ। नाणावटीजीकी टीकाकी भाषाका समर्थन करनेकी आवश्यकता नही है क्योकि प्रस्तूत केवल स्वामीजीकी लेखनी है। हिंदु धर्मको संकुचित कर दिया है और ग्रंथ निराशाजनक है यह दो वस्तु स्वामीजीके शब्दोसे ही नाणावटीजीने सिद्ध कर दी है। अब मेरी सलाह है कि इस चर्चाको बढाना नही। ग्रन्थ कैसा भी हो स्वामीजीके महत्वको हानि नही पहोचती है क्योकि उन्होने जो कार्य किया उसे कौन भूल सकता है? स्वामीजीकी कीर्ति ग्रन्थसे परे हैं। उक्त दो कथनसे मैंने आर्यसमाजकी सेवा की है ऐसा मेरा विश्वास है। लेकिन इतना कहने पर भी

१. सम्भवत: नानावटी द्वारा तैयार की गई टिप्पणी।

आप कुछ शंका निवारण चाहें तो अवश्य लिखें। अच्छा होगा नाणावटीजीको लिखें। जो-कुछ वह लिखेंगे मुझे बतायेंगे। उनपर मेरा विश्वास है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२८) से।

३०. हिन्दुस्तानी, हिन्दी और उर्दू

बड़े दुःखकी बात है कि हिन्दी-उर्दूके सवालको लेकर एक विवाद उठ खड़ा हुआ है और वह अब भी चल रहा है। जहाँ तक कांग्रेसका सम्बन्ध है, उसने हिन्दुस्तानीको ऐसी भाषाके रूपमें विधिवत् मान्य किया है जिसे अन्तर्प्रान्तीय सम्पर्कके लिए अखिल भारतीय भाषा बनना है। मंशा यह नही है कि वह प्रान्तीय भाषाओके स्थानपर स्वय आसीन हो जाये, बल्कि यह है कि उन्हे और भी समृद्ध करे। कार्य-समितिके हालके प्रस्तावसे इस सम्बन्धमे सारी शकाएँ शान्त हो जानी चाहिए। जिन काग्रेसियोको अखिल भारतीय स्तरपर काम करना है वे यदि हिन्दुस्तानीको दोनो लिपियोमे सीखने-भरकी तकलीफ उठाये तो उसका मतलब होगा कि हम अपने राष्ट्रभाषा-विषयक लक्ष्यकी दिशामे कई कदम आगे बढ चुके है। असली स्पर्धा हिन्दी और उर्दूके बीच नही, बल्कि हिन्दु- स्तानी और अग्रेजीके बीच है। यह बड़ी कठिन लड़ाई है। इसकी ओर मैं बड़ी चिन्तातुर दृष्टिसे देख रहा हूँ।

हिन्दी-उर्दू विवादका कोई सच्चा आधार नही है। काग्रेसकी कल्पनाकी हिन्दु-स्तानीको अपना स्पष्ट स्वरूप ग्रहण करना अभी शेष है। जब तक काग्रेसकी सारी कार्यवाहियाँ निरपवाद रूपसे हिन्दुस्तानीमे ही नही होने लगती, तब तक वह अपना निश्चित स्वरूप ग्रहण करनेवाली भी नही है। काग्रेसको काग्रेसियोके प्रयोगके लिए कुछ शब्दकोष निर्धारित करने पड़ेंगे और उसके एक विभागको इन कोषोसे बाहरके जरूरी शब्द जुटानेका काम करना पडेगा। यह काम बडा है, लेकिन यदि हम एक सजीव और विकासशील अखिल भारतीय भाषा चाहते है तो यह काम किये बिना निस्तार नही है। उस विभागको यह तय करना होगा कि वर्तमान साहित्यमें से — उर्दू या देवनागरी लिपिकी पुस्तको, पत्र-पत्रिकाओ आदिमे से — क्या कुछ हिन्दुस्तानी माने जाने लायक है। यह कार्य बहुत गम्भीर ढंगका है और इसे सफल बनानेके लिए इसपर बहुत अधिक परिश्रम करनेकी जरूरत है।

हिन्दुस्तानी अपना सही स्वरूप निखार सके, इसके लिए हिन्दी और उर्दू दोनो स्रोतोसे इसके भण्डारको समृद्ध किया जाये। इसलिए काग्रेसियोको तो दोनो भाषाओके हितकी कामना करनी चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो, दोनोसे सम्पर्क रखना चाहिए।

इस हिन्दुस्तानीके एक-एक शब्दके अनेक पर्याय होने चाहिए, ताकि यह भिन्न प्रान्तीय भाषाओसे समृद्ध एक विकासोन्मुख राष्ट्रकी विविध आवश्यकताओकी पूर्ति कर सके। बंगालियो या दक्षिण भारतके लोगोके सामने बोली जानेवाली हिन्दुस्तानीमे

स्वभावत संस्कृतसे लिये गये शब्दोंका अधिक प्रयोग होगा। वही भाषण जब पजाबमे दिया जायेगा तो उसमे अरबी और फारसीके शब्दोकी बहुलता होगी। यही बात उस श्रोता वर्गके सन्दर्भमे भी लागू होगी जिसमे मुसलमानोकी प्रमुखता हो, क्योकि वे सस्कृत-से लिये हुए बहुत-से शब्द नही समझ सकते। इसलिए अखिल भारतीय स्तरके वक्ताओको हिन्दुस्तानीकी शब्दावली पर ऐसा अधिकार प्राप्त करना होगा जिससे उन्हे भारत के सभी हिस्सोके श्रोता समुदायके समक्ष बोलनेमे भी कोई अडचन या अटपटापन महसूस न हो। इस सिलसिलेमे पण्डित मालवीयजीका नाम सबसे पहले याद आता है। उन्हे मैंने हिन्दीभाषी श्रोताओके सामने भी और उर्दूभाषी श्रोताओके समक्ष भी समान सरलतासे बोलते देखा है। उन्हे ठीक शब्दके लिए रुकते-अटकते तो मैंने कभी देखा ही नही है। यही बात बाबू भगवानदास पर भी लागू होती है। वे एक ही भाषणमे पर्यायवाची शब्दोका प्रयोग करते जाते हैं और साथ ही भाषणके सौष्ठव-मे भी कोई कमी नही आने देते। मुसलमानोके बीच तो मुझे अभी मौलाना मुहम्मद अलीका ही नाम याद आ रहा है। उनके शब्दभण्डारमे इतनी विविधता है कि वे दोनो तरहके श्रोताओके सामने मजेमे बोल लेते हैं। बडौदा राज्यकी नौकरीमे रहकर उन्होने गुजरातीका जो ज्ञान प्राप्त किया वह उनके ठीक काम आया।

और काग्रेसकी नीतिसे स्वतन्त्र रहकर हिन्दी और उर्दू दोनो फूलती-फलती रहेगी। हिन्दी मुख्यत हिन्दुओके बीच सीमित रहेगी और उर्दू मुसलमानोके बीच। सच तो यह है कि अगर तुलनात्मक दृष्टिसे देखे तो ऐसे मुसलमान बहुत कम है जिन्हे हिन्दीके विद्वान माने जानेकी हद तक इस भाषाका ज्ञान है, यद्यपि मैं मानता हूँ कि हिन्दी-भाषी क्षेत्रोमे जन्मे मुसलमानोकी मातृभाषा सम्भवत हिन्दी ही होगी। हजारों हिन्दुओकी मातृभाषा उर्दू है और सैकडो हिन्दुओको बखूबी उर्दूका विद्वान कहा जा सकता है। ऐसे ही एक व्यक्ति थे पण्डित मोतीलाल नेहरू। दूसरे है डा० तेज बहादुर सप्रू। ऐसे बहुत-से उदाहरण आसानीसे दिये जा सकते हैं। इसलिए इन दोनो बहनोमे झगडे या हानिप्रद स्पर्धाका कोई कारण नही है। हाँ, लाभप्रद स्पर्धा तो होनी ही चाहिए।

मुझे जितना-कुछ जानने-सुननेको मिला उससे तो यही लगता है कि मौलवी साहब अब्दुल हकके सुयोग्य मार्ग-दर्शनमें उस्मानिया विश्वविद्यालय उर्दूकी बडी अच्छी सेवा कर रहा है। विश्वविद्यालयने उर्दूका एक बृहत् शब्दकोष तैयार किया है। विज्ञान-की पुस्तके उर्दूमे तैयार कराई गई है और कराई जा रही है। और चूँकि यहाँ शिक्षा-के माध्यमके रूपमे ईमानदारीके साथ उर्दूका प्रयोग किया जा रहा है, इसलिए इस भाषाका विकास होना अवश्यम्भावी है। और यदि निरर्थक पूर्वग्रहके वशीभूत होकर आज सभी हिन्दीभाषी हिन्दू वहाँ तैयार हो रहे साहित्यका लाभ नही उठा रहे है तो इसमे गलती उन्हीकी है। लेकिन पूर्वग्रहको मिटना है। कारण, आज दोनो समुदायोमे जो विभेद है वह सभी रोगोकी तरह अस्थायी ही है। अब चाहे यह सौभाग्य हो या दुर्भाग्य, लेकिन सचाई तो यही है कि भारतसे दोनो समुदायोका अविच्छेद्य सम्बन्ध है, दोनो एक-दूसरेके पड़ोसी है, दोनो इस मिट्टीकी सन्तान है।

उनका जन्म यहाँ हुआ और उन्हे मरना भी यही है। अगर दोनो समुदाय स्वेच्छासे एक सूत्रमे नही बँधते तो प्रकृति उन्हे शान्तिपूर्वक साथ-साथ रहनेको मजबूर करेगी।

और जो बात हिन्दुओपर लागू होती है वही मुसलमानोपर भी। यदि वे हिन्दी साहित्य सम्मेलन और नागरी प्रचारिणी सभाके परिश्रमके फलका लाभ नही उठाते तो इससे नुकसान उन्हीको है। सम्मेलनने उत्तर भारतमे हिन्दुओ और मुसलमानो, दोनो द्वारा बोली जानेवाली और उर्दू तथा देवनागरी लिपिमे लिखी जानेवाली भाषाके रूपमे हिन्दीकी परिभाषा करके एक बडा कदम (सम्मेलनकी दृष्टिसे देखे तो) उठाया है। यदि इस तथ्यको मुसलमानोने गर्व और प्रसन्नताके साथ लक्षित नही किया है तो यह बडे दुखका विषय है। जहाँ तक उक्त परिभाषाका सम्बन्ध है यह हिन्दुस्तानीकी काग्रेसवाली परिभाषासे मेल खाती है।

मै जानता हूँ कि कुछ लोग यह सपना देख रहे है कि केवल उर्दू ही रहेगी, या यह कि केवल हिन्दी ही रहेगी। मेरा विचार है कि यह सपना सदा सपना ही बना रहेगा और यह एक अपवित्र सपना है। इस्लामकी अपनी एक विशिष्ट संस्कृति है, उसी तरह हिन्दुत्वकी भी। भावी भारत दोनोका सम्यक् और सुखद मिश्रण होगा। जब वह शुभ दिन आयेगा, उनकी सामान्य भाषा हिन्दुस्तानी ही होगी। लेकिन अरबी और फारसी शब्दोकी बहुलतासे युक्त उर्दू तब भी फूलती-फलती रहेगी और सस्कृत शब्दोकी प्रचुरताके साथ हिन्दी भी विकास करती रहेगी। जिस प्रकार शिबलीकी रचनाओकी भाषा कभी मर नही सकती उसी प्रकार तुलसीदास और सूरदास-जैसे सन्तोकी भाषा भी अमर है। लेकिन दोनो भाषाओके अच्छेसे-अच्छे जानकार हिन्दुस्तानी बहुत अच्छी तरह जानते होगे।

उटमजई, १९ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-१०-१९३८

३१. प्रस्तावना : 'दादाभाई नौरोजी' की

उटमंजई

१९ अक्टूबर, १९३८

बात ४ सितम्बर, १८८८ की है, मैने बम्बईसे जहाजमे बैठकर [इंग्लैंडके लिए] प्रस्थान किया था। साथमे तीन परिचय-पत्र थे, जिनमे सबसे मूल्यवान था भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीके नाम लिखा पत्र। वह पत्र मुझे एक महाराष्ट्री डॉक्टरने दिया था, जो हमारे परिवारके मित्र थे। आदरणीय डॉक्टर साहबने मुझसे कहा, दादाभाई मुझे व्यक्तिगत रूपसे नही जानते, बल्कि मैंने तो कभी उनके दर्शन भी नही किये है, "लेकिन इससे क्या? उन्हे तो सब जानते है और भारतके एक महान सपूत और उसके हितोके प्रबल पक्षधरके रूपमे सब उनमें श्रद्धा रखते है। हमारे लिए ही उन्होने प्रवास स्वीकार किया है। मै तो उन्हे, उन्होने भारतकी जो सेवा की

है, उससे जाननेका दावा करता हूँ। तुम देखना कि यह पत्र तुम्हारे लिए उतने ही कामका साबित होगा जितना तब होता जबकि मैं उन्हे व्यक्तिगत रूपसे जानता होता। सच तो यह है कि उनके पास तुम्हें कोई परिचय-पत्र लेकर जानेकी जरूरत ही नही है। तुम्हारा भारतीय होना ही उनके लिए तुम्हारा पर्याप्त परिचय है। लेकिन तुम कच्ची उम्रके हो, तुमने देश-दुनिया देखी नही है और स्वभावसे सकोची हो। इस पत्रसे तुम्हे भारतके उस पितामहके पास जानेकी हिम्मत बँधेगी, और तुम उनके पास पहुँचे नही कि सारी दुविधा-कठिनाई दूर हुई।" और सचमुच हुआ भी ऐसा ही। लन्दन पहुँचकर मुझे यह देखते देर नही लगी कि भारतीय विद्यार्थियोके लिए दादाभाईका दरवाजा हमेशा खुला रहता था। दरअसल वे हर भारतीय विद्यार्थीके लिए, चाहे वह किसी प्रान्त या किसी धर्मका हो, पिता-तुल्य थे, उनकी कठिनाइयोमे उन्हे परामर्श देने, उनको राह दिखाने के लिए वे हमेशा तैयार रहते थे। मैं सदासे महापुरुषोका पुजारी रहा हूँ। दादाभाई तो मेरे सचमुच दादा बन गये। जब मैं दक्षिण आफ्रिकामे था, हमारे सम्बन्धोकी जडे अधिकसे-अधिक पुख्ता हो गईं। कारण, मेरे वहाँके काममे वे सदा मुझे सलाह और प्रेरणा देते रहे। ऐसा कोई सप्ताह नही गुजरता था जब मैं दक्षिण आफ्रिकामे रहनेवाले भारतीयोकी अवस्थाका विवरण देते हुए उन्हे पत्र नही लिखता था। और मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मुझे उनके उत्तरकी प्रतीक्षा रहती थी तब उनका उत्तर न आये, ऐसा कभी नही हुआ। वह उत्तर भी हमेशा उनकी अपनी लिखावटमे होता था और ऐसी सरल शैलीमें जिसके धनी वे अकेले थे। उनसे कोई टाइप किया हुआ पत्र मुझे कभी नही मिला। और दक्षिण आफ्रिकासे मैं जब भी इग्लैंड गया, उनके कार्यालयके नामपर उनके पास मैंने बस ८'×६' का एक दरबा-भर देखा। कोई दूसरी कुर्सी उसमे मुश्किलसे ही आ सकती होगी। उनकी मेज, कुर्सी और फाइलो, इतनेसे ही पूरा कमरा भरा होता था। मैंने देखा कि अपने पत्र वे 'कापीग इक' स्याहीसे लिखते थे और उनकी प्रतियाँ भी एक विशेष मशीनपर वे खुद ही तैयार करते थे।

श्री मसानीका लिखा यह जीवन-चरित मैंने पढा नही है। लेकिन यदि उन्होने पुस्तकमें इतने महान तथा उदात्त और फिर भी ऐसे सरल व्यक्ति के साथ न्याय किया है तो उनकी कृतिको मेरे या किसीके भी लिखे परिचयकी आवश्यकता नही है। मेरी यह कामना है कि जिस प्रकार दादाभाई जी मेरे प्रेरणा-स्रोत रहे उसी प्रकार यह पुस्तक भी पाठको के लिए प्रेरणा-स्रोत बने।

मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८७५) से।

३२. पत्र: रुस्तम मसानीको

उटमंजई
१९ अक्टूबर, १९३८

प्रिय मित्र,

जो प्रस्तावना[1] लिखनेका वादा किया था, साथमें भेज रहा हूँ। आशा है, इसे भेजनेमें मुझसे देर नहीं हुई है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

आपने अपनी 'द रिलीजन ऑफ द गुड लाइफ' की एक प्रति भेजी थी। अभी कुछ समय मिला है तो उसे पढ़ रहा हूँ।

आपने मेरी फोटो माँगी है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैं अपनी कोई फोटो अपने पास रखता ही नहीं।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंसिडेंट्स ऑफ गांधीजीज लाइफ, पृ० १७०

३३. बातचीत: अब्दुल गफ्फार खाँके साथ

[१९/२० अक्टूबर, १९३८][2]

पेशावर और मरदान जिलोंके खुदाई खिदमतगारोंसे मिलनेके लिए वहाँका दौरा करनेके बाद गांधीजी उटमंजई पहुँचे जहाँ अपनी शान्त और एकान्त विश्राम-स्थलीपर उन्होंने बादशाह खानके साथ विचार-विमर्श करनेमें, और दोनोंने अपने-अपने निष्कर्षोंकी तुलना करनेमें दो दिन बिताये। उनकी सीमाप्रान्तकी महत्वपूर्ण यात्राका यह एक महत्वपूर्ण चरण था। गांधीजीने बादशाह खानसे पूछा:

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. हरिजन, १२-११-१९३८ में प्रकाशित प्यारेलालके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-४" शीर्षक विवरणके आधारपर।

आपका क्या खयाल बना है? अहिंसाके बारेमें खुदाई खिदमतगारोंका क्या रुख है?

[बादशाह खान:] महात्माजी, मेरा खयाल है कि जैसाकि उन लोगोंने उस दिन खुद ही हमारे सामने कबूल किया था, वे लोग इसमें बिलकुल नौसिखिये हैं और अभी वे अहिंसाके मानदण्डसे बहुत नीचे हैं। वे अपने दिलसे हिंसाको पूरी तरह निकाल नहीं पाये हैं और वह अब भी उनके दिलमें है। उनमें क्रोधी स्वभावके दोष हैं, किन्तु उनके दिलकी सच्चाई सन्देहसे परे है। यदि उन्हें मौका दिया जाये तो प्रशिक्षणसे उनका सही गठन हो सकता है और मेरे विचारमें यह प्रयास सार्थक होगा। . . . आपने हमें जिस तरह अहिंसाका सिद्धान्त समझाया है यदि उस समूचे सिद्धान्तको हम पचा ले और उसपर अमल कर सकें तो हम कितने ताकतवर हो जायेंगे और हमारा कितना भला होगा। . . .

गांधीजी ने बादशाह खानसे कहा कि अगर अहिंसाके साथ न्याय करते हुए उसे आजमाना है तो खुदाई खिदमतगारोंके वास्ते मैं रचनात्मक अहिंसाका जो एक कड़ा कार्यक्रम सोच रहा हूँ, उन्हें उसका पालन करनेके लिए तैयार रहना होगा।

[बा० खा०:] महात्माजी, मेरा विचार उटमंजईको एक आदर्श गाँव बना देनेका है। कताई-बुनाई केन्द्र स्वयं एक स्थायी प्रदर्शनी-जैसा होगा जिससे गाँववाले कुछ सीख सकें। खुदाई खिदमतगारोंके आश्रममें हम आत्मनिर्भरताका आदर्श लेकर चलेंगे। हम अपने हाथोंसे बने कपड़े ही पहनेंगे, सिर्फ वही फल-सब्जियाँ खायेंगे जिन्हें हमने स्वयं उगाया हो और दूधके लिए एक छोटी-सी गोशाला बनायेंगे। जो चीजें हम खुद तैयार नहीं कर सकते, हम उनका उपयोग नहीं करेंगे।

[गा०.] ठीक है। मैं एक और सुझाव दूं? खुदाई खिदमतगारोके रहनेके लिए जो झोपडियाँ बनानी है उनके निर्माणमे भी वे उचित योगदान दे।

[बा० खा०:] हाँ, हमारा यही विचार है।

गांधीजी ने सुझाव दिया कि कार्यकर्ताओंके पहले जत्थेके प्रशिक्षणके लिए बादशाह खान कुछ खुदाई खिदमतगारोंको चुनें और उन्हे वर्धा भेजा जाये जहाँ वे खादी-शास्त्रमें ही पारंगत नहीं बनेंगे, बल्कि उन्हें प्राथमिक चिकित्सा, स्वास्थ्य-सफाई, ग्राम-सुधार कार्य और हिन्दुस्तानीकी भी प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त होगी। वहाँ उन्हें वर्धा शिक्षा योजनाकी भी दीक्षा मिलेगी ताकि वे लौटनेपर जनसामान्यकी शिक्षाका काम सँभाल लें। गांधीजी ने कहा:

किन्तु जब तक आप अगुआई करके इन सब विषयोमे खुद पारगत नही बन जाते तब तक आपका काम आगे नही बढेगा।

और अन्तमे यह कहूँगा कि अपने आश्रममे समयकी पाबन्दीका नियम लागू किये बिना आपका सब काम व्यर्थ हो जायेगा। एक पक्का दैनिक कार्यक्रम तय होना चाहिए जिसमे जागने, सोने, भोजन करने, काम और आराम करनेका समय, सभी

सुनिश्चित हो और इस कार्यक्रमका कडाईसे पालन करवाया जाये। समयकी पाबन्दी-को मैं बहुत महत्व देता हूँ, क्योकि यह अहिंसाका एक उपप्रमेय है।

तत्पश्चात् गांधीजी और बादशाह खानने इस बातपर विचार किया कि अपनी अहिंसापर पक्का भरोसा हो जानेके बाद खुदाई खिदमतगारोंको सरहदी हमलोंसे निपटनेके अपने उद्देश्यको पूरा करने के लिए कैसी कार्यप्रणाली अपनानी चाहिए। बादशाह खानका मत था कि पुलिस और सेनाकी मौजूदगीसे यह काम बहुत ही कठिन हो जाता है, क्योंकि पुलिस और सेना पूरी तरह जनताके अधीन नहीं है और उनकी उपस्थितिसे दोहरे शासनके सभी कुपरिणाम सामने आते हैं। "या तो सरकार पूरे दिलसे हमारे साथ सहयोग करे या फिर शुरुआतके तौरपर केवल एक जिलेसे पुलिस और सेनाको हटा ले, तो फिर हम अपने खुदाई खिदमतगारोके जरिये उस जिलेमें शान्ति बनाये रखनेका जिम्मा लेंगे।" किन्तु गांधीजीका मत और ही था। वे बोले:

मुझे स्पष्ट स्वीकार करना पडेगा कि मुझे अधिकारियोसे यह आशा नही है कि वे हमारे साथ खुले दिलसे पूरा-पूरा सहयोग करेंगे। वे हमारे इरादेपर बेशक अविश्वास न करें किन्तु हमारी सामर्थ्यपर विश्वास नही करेंगे। केवल हमारे भरोसे पुलिस हटा ली जाये, ऐसी आशा रखना उनसे बहुत बडी अपेक्षा रखना होगा। अहिंसा एक सार्वभौमिक सिद्धान्त है और विरोधी वातावरणसे उसकी कार्यशीलता घट नही जाती। सच तो यह है कि उसकी उपयोगिताकी परख तभी होती है जबकि वह विरोधके बीच और उसके बावजूद काम करती है। यदि अहिंसाकी सफलता अधिकारियोके सौहार्दपर ही अवलम्बित हो तो हमारी अहिंसा खोखली होगी और उसकी कोई कीमत नही। अगर जनसामान्यपर हमारा पूरा वश कायम हो जाये तो पुलिस और सेनाकी उपस्थितिसे हमें कोई हर्ज नही।

और गांधीजी ने बादशाह खानसे ब्रिटिश युवराज [प्रिंस ऑफ वेल्स] के आगमनके मौकेपर हुए बम्बईके दंगोंका वर्णन किया जब पुलिस और सेनाके लिए कोई काम ही नहीं रहा था, क्योंकि कांग्रेसने फौरन स्थितिपर काबू पा लिया और शान्तिकी स्थापना हो गई।

[बा० खा०:] किन्तु दिक्कत यह है कि ये हमलावर अधिकतर ब्रिटिश भारतसे भागे हुए बदमाश ही हैं। हम उनसे सम्पर्क स्थापित नहीं कर सकते, क्योंकि सरकारी अफसर हमें या हमारे कार्यकर्ताओंको कबाइली इलाकोंमें जानेकी इजाजत नहीं देते।

[गा०.] उनको इजाजत देनी ही होगी और मैं कहता हूँ कि जब हम पूरी तरह तैयार हो जायेंगे तो वे अवश्य इजाजत देंगे। किन्तु उसके लिए हमे ऐसे खुदाई खिदमतगारोंका दल चाहिए जो वास्तवमे खुदाके सच्चे सेवक है और जिनके लिए अहिंसा एक जीवन्त आस्था बन चुकी है। अहिंसा एक उच्चतम कोटिका क्रियाशील सिद्धान्त है। यह आत्मिक बल या हमारे भीतर स्थित ईश्वरत्वकी शक्ति है। अपूर्ण मनुष्य उस समूचे सारतत्वको समझनेमे असमर्थ है—वह तो उसकी पूरी-पूरी ज्वालाको सह भी नही सकता—किन्तु जब उसका एक अत्यन्त सूक्ष्म अंश भी हमारे भीतर सक्रिय

हो उठता है तो अद्भुत परिणाम दिखाता है। आकाशवासी सूर्य समूचे विश्वको अपनी जीवनदायिनी ऊष्मासे भर देता है, किन्तु अगर कोई उसके बहुत निकट पहुँच जाये तो उसे जलाकर भस्म कर देगा। ठीक यही बात ईश्वरत्वकी है। हम जिस हद तक अहिंसाको अपना लेंगे उस हद तक हम ईश्वर-जैसे होंगे, किन्तु हम पूरी तरह भगवान तो बन ही नही सकते। अहिंसाका असर रेडियम-जैसा है। शरीरके किसी घातक रूपसे अभिवृद्ध अंगमें यदि रेडियमका अत्यन्त सूक्ष्म टुकड़ा डाल दिया जाये तो वह लगातार चुपचाप और अनवरत रूपसे तब तक अपना असर करता रहता है जब तक मासके समूची रोगग्रस्त कोषोंकी परत स्वस्थ नही बन जाती। इसी प्रकार सच्ची अहिंसाका छोटा-सा अंग भी चुपचाप, सूक्ष्म और अदृश्य रूपसे अपना काम करके समूचे समाजको प्रभावित कर देता है।

अहिंसा अपने-आप काम करती है। मृत्युके बाद भी आत्मा रह जाती है और उसका अस्तित्व भौतिक देहपर आश्रित नही। इसी प्रकार अहिंसा या आत्मिक बलकी भी परिवृद्धि और उसके प्रभावके लिए भौतिक साधनोंकी आवश्यकता नही है।

अत. यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि एक स्थानपर अहिंसा सफल रूपसे स्थापित हो जाये तो उसका प्रभाव सर्वत्र फैलेगा। उटमंजईमे यदि एक भी डाका पड़े तो मैं कहूँगा कि हमारी अहिंसा सच्ची अहिंसा नही है।

अहिंसा-पालनका मूलाधार यही सिद्धान्त है कि जो बात हमपर लागू होती है वही समस्त विश्वके लिए भी उतनी ही लागू होती है। मूलभूत रूपमें सभी मनुष्य एक समान है। अत. जो मेरे लिए, वही सबके लिए सम्भव है। इसी तर्कधाराके सहारे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि यदि मैं किसी एक गाँवमें उठनेवाली अनेक समस्याओका अहिंसात्मक समाधान निकाल लूँ तो उससे पाठ सीखकर मैं पूरे भारतकी वैसी ही समस्याओंका अहिंसात्मक समाधान निकालनेमे समर्थ हो जाऊँगा।

अत. मैंने सेवाग्राममे बस जानेका निश्चय किया। सेवाग्राममें रहना मेरे लिए बड़ा शिक्षाप्रद सिद्ध हुआ है। हरिजनोके साथके अपने अनुभवोंके फलस्वरूप मुझे अपने विचारमे हिन्दू-मुस्लिम समस्याका एक ऐसा आदर्श समाधान प्राप्त हो गया है जिससे समझौतोंकी कोई जरूरत ही नहीं रह जाती। अगर आप उटमंजईमें सब-कुछ ठीक-ठाक कर पायें तो आपकी पूरी समस्या सुलझ जायेगी। अंग्रेजोंने हमारी रक्षाके प्रकट ध्येयको लेकर पुलिस और सेना रखी है, किन्तु यदि हम उनके सामने सिद्ध कर दें कि उनके इस रक्षणकी सचमुच कोई जरूरत नही तो अंग्रेजोंके साथ हमारे सम्बन्ध भी परिवर्तित और शुद्ध हो जायेंगे।

किन्तु बादशाह खानको एक शंका थी। हर गाँवमें कुछ-एक निपट स्वार्थी और नाजायज फायदा उठानेवाले लोग होते हैं जो अपनी स्वार्थपूर्तिके लिए कुछ भी करनेको तैयार रहते हैं। बादशाह खानने पूछा कि क्या ऐसे लोगोंकी पूरी-पूरी उपेक्षा करना ही बेहतर नहीं होगा, या कि उनसे भी सम्बन्ध बनानेकी कोशिश की जाये।

[गा० :] अन्तत. तो हमें उनमे से कुछ लोगोको त्यागना ही पड़ेगा, किन्तु हमें किसीको भी बिलकुल गया-बीता नही मानना चाहिए। हमे दुष्टकी मन स्थिति समझने-

की कोशिश करनी चाहिए। अकसर वह अपनी परिस्थितियोका शिकार होता है। धैर्य और सहानुभूतिके सहारे हम उनमें से कम-से-कम कुछ लोगोको तो न्यायके पक्षमें खीचनेमे समर्थ हो जायेगे। इसके अलावा हमे यह भी याद रखना चाहिए कि बुराई भी तभी पनप पाती है जब उसे भले लोगोका सहयोग मिलता रहे, चाहे वह खुशीसे या जबरन दिया गया हो। केवल सत्य ही आत्म-पोषित है। दुष्टोकी शैतानी करनेकी ताकतपर रोक-थाम करनेका अन्तिम उपाय यह है कि उनको जरा भी सहयोग न दिया जाये और उन्हे पूरी तरह सबसे अलग कर दिया जाये।

सार रूपमे यही अहिंसात्मक असहयोगका सिद्धान्त है। अत. इसका निष्कर्ष यह निकला कि इसके मूलमे प्रेम होना चाहिए। विपक्षीको दड देना या उसको हानि पहुँचाना अहिंसकका ध्येय नही होना चाहिए। विपक्षीके साथ असहयोग करते हुए भी हमे उसे यही भान कराना है कि हम उसके मित्र है और जब भी सम्भव हो उसका उपकार करके हम उसके दिल तक पहुँचनेकी कोशिश करे। वास्तवमे अहिंसाकी कसौटी तो यही है कि अहिंसामय सघर्षके बाद मनमे कोई कड़वाहट बाकी न रहे और अन्तत. शत्रु भी मित्र बन जाये। दक्षिण आफ्रिकामे जनरल स्मट्सके साथ मेरा ऐसा ही अनुभव रहा। शुरूमे वह मेरे कट्टर विरोधी और आलोचक थे और आज वह मेरे अत्यन्त हार्दिक मित्र है। आठ साल तक हम परस्पर विपक्षोके रूपमे डटे रहे। किन्तु दूसरे गोलमेज सम्मेलनमे वही थे जो मेरे पक्षमे डटे रहे और उन्होने सार्वजनिक और निजी रूपसे भी मुझे अपना पूरा समर्थन दिया। कितने ही दृष्टान्त है जिनमे से इस एक मिसालका मै हवाला दे रहा हूँ।

युग बदलता है और व्यवस्थाएँ जर्जर हो जाती है। किन्तु मेरा विश्वास है कि अन्तत केवल अहिंसा और अहिंसापर आधारित वस्तुएँ ही चिरस्थायी होगी। उन्नीस सौ वर्ष हुए जब ईसाई धर्मका जन्म हुआ था। ईसाका प्रभुत्व तो केवल तीन वर्षों तक रहा। उनके अपने ही समयमे भी उनकी शिक्षाओको समझनेमे गलतफहमियाँ हुई और आजका ईसाई धर्म तो उनकी इस मूल शिक्षा, कि 'अपने शत्रुसे प्रेम करो', को ही नकारता है। किन्तु मानवकी शिक्षाके किसी केन्द्रीय सिद्धान्तके प्रसारमे उन्नीस सौ वर्ष भला होते ही क्या है?

छ. शताब्दियाँ और बीत गई और इस्लामका उदय हुआ। बहुत-से मुसलमान मुझे इतना कहनेकी इजाजत तक नही देगे कि इस्लामका शब्दार्थ ही है विशुद्ध शान्ति। 'कुरान' के अध्ययनसे मै कायल हो चुका हूँ कि इस्लामका मूलाधार हिंसा नही है। किन्तु इस सम्बन्धमे भी तेरह सौ वर्ष कालसिन्धुमे एक बिन्दु मात्र है। मुझे पूरा विश्वास है कि ये दोनो महान धर्म उस हद तक ही जीवित रहेगे जिस हद तक उनके मतावलम्बी अहिंसा-रूपी मूल शिक्षाको आत्मसात् कर लेगे। यह कोई सिर्फ मस्तिष्कके ग्रहण करनेकी वस्तु नही है। इसे तो हमारे हृदयमे बस जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ७१-८

३४. टिप्पणी

मिस्टर और एस्क्वायर बनाम श्री, मौलवी, मौलाना, जनाब वगैरह

बम्बई जाकर जिन्ना साहबसे मुलाकात करनेसे पहले मैंने एक वक्तव्य जारी किया था, जिसमे उनके नामसे पूर्व मैंने 'मिस्टर' के बदले 'श्री' शब्दका प्रयोग किया था। उसपर कुछ मित्रोने कहा था कि यह चीज निश्चय ही जिन्ना साहबको बुरी लगी होगी। मैंने आपत्ति करते हुए कहा कि अगर उन्हें यह चीज बुरी लगी होती तो उन्होने इसका हलका-सा इशारा तो किया होता और अगर उन्होने ऐसा किया होता तो मैं उनसे माफी माँग लेता और उसी विशेषणका प्रयोग करता जो उन्हे सबसे अच्छा लगता। पाठकोको याद होगा कि जिन दिनो असहयोग आन्दोलन अपने पूरे जोरपर था, कांग्रेसियो और राष्ट्रवादी अखबारोने 'मिस्टर' और 'एस्क्वायर' शब्दोका प्रयोग छोड दिया था और इनके बदले सबके लिए — चाहे कोई किसी धर्मका हो — प्राय. 'श्री' का ही प्रयोग किया जाने लगा था। यद्यपि इसका प्रयोग अब बहुत हद तक बन्द हो गया है, लेकिन मैंने इसे कभी नही छोडा है। यदि हममे ऐसी बुरी आदत न होती — बल्कि मैं तो कहने जा रहा था कि अगर हममे गुलामीकी मनोवृत्ति नही होती — तो हम भारतीय नामोके आगे या पीछे 'मिस्टर' और 'एस्क्वायर' शब्दका प्रयोग कभी न करते। एक अंग्रेज यूरोपमे किसी विदेशी व्यक्तिको 'मिस्टर' या 'एस्क्वायर' कहकर सम्बोधित नही करता है, बल्कि जो विशेषण जिस देशमे प्रचलित होता है, वहाँके निवासीके लिए उसी विशेषणका प्रयोग करता है। हिटलरके साथ कभी 'मिस्टर' शब्द नही जोडा जाता है, बल्कि उन्हे 'हर' हिटलर ही कहा जाता है। इसी प्रकार मुसोलिनीको 'मिस्टर' या 'हर' मुसोलिनी नही, बल्कि 'सिनोर' मुसोलिनी कहकर सम्बोधित करते है। फिर हमने क्यो अपने यहाँके नामोके साथ जोडे जानेवाले आदरसूचक शब्दोका प्रयोग छोड दिया, यह बात मेरी समझमे नही आती। लेकिन अगर हम क्षण-भरको अपनी मौजूदा आदतके प्रति तटस्थ होकर सोचें, तो पायेंगे कि भारतीय नामोके साथ 'मिस्टर' या 'एस्क्वायर' शब्द जोड़ना बड़ा हास्यास्पद लगता है।

लेकिन मुझे यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि इस पारस्परिक शंका-सन्देहके वातावरणमे मुसलमानोके नामोसे पहले 'श्री' शब्द जोडा जाना मुसलमान मित्रोको शायद अच्छा न लगे। कुछ मुसलमान मित्रोके साथ मैंने इस विषयकी चर्चा की है। उन्होने बताया कि आम तौरपर उनके नामोके साथ 'मौलवी' विशेषणका प्रयोग होता है। दक्षिण भारतमे मुझे 'जनाब' शब्द अकसर सुननेको मिला है। खैर, जो भी हो, मैं इतना कह सकता हूँ कि भारतीय मुसलमानोके नामोके साथ 'श्री' शब्दके प्रयोगमे मेरे मनमे परम मित्रताके अतिरिक्त और कोई भाव नही रहा है।

मुझे तो कोई 'मिस्टर' कहकर सम्बोधित करता है तो मेरे कानोको बहुत बुरा लगता है। हिन्दुओमें प्रचलित सबसे अच्छा रिवाज तो नामके अन्तमें 'जी' जोड देना है। 'साहब' 'जी' का ही पर्याय है। मुझे याद है, स्वर्गीय हकीम अजमलखाँ को मैं हमेशा हकीमजी कहकर सम्बोधित करता था। कुछ मुसलमान मित्रोंने मुझसे कहा कि आप 'हकीम साहब' कहे, तो मुसलमानोको ज्यादा अच्छा लगेगा। यह बात मुझे पहले मालूम नही थी। लेकिन जबसे मेरी भूलकी ओर मेरा ध्यान दिलाया गया, मैं उस दिवंगत देशभक्तको हमेशा हकीम साहब कहकर ही सम्बोधित करता रहा। हाँ, अनजानेमें कभी ऐसा न कर पाया होऊँ, तो बात और है। कोई मेरी नंगी पीठपर नमकमें भीगे पाँच बेत जड़ देता तब भी मैं उनको 'मिस्टर' अजमलखाँ कहकर नही पुकारता। लगता है, अंग्रेजी शिक्षा पानेके बाद हम 'मिस्टर' और 'एस्क्वायर' बन जाते हैं। लोकरूढियोकी विद्यामे निष्णात पाठक क्या इस सम्बन्धमे भारतमे प्रचलित शुद्ध स्वदेशी रूढ़ियोंकी जानकारी देकर मेरी और मुझ-जैसे अन्य लोगोंकी मदद करेंगे?

उटमंजई, २० अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१०-१९३८

३५. पत्र : अमृत कौरको

२० अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

मेरी डाक भटक गई है। इसलिए पिछले चार दिनोंसे तुम्हारा कोई समाचार नही मिला है। मैं जानता हूँ कि महादेव ठीक ही होगा, फिर भी आदमी पत्र तो चाहता ही है। इस बार बा के स्वास्थ्यको लेकर मुझे चिन्ता जरूर हुई है, लेकिन अब वह खतरेसे बाहर है। शायद महादेवको भी अलगसे समाचार मिल जाता है।

यहाँ तो सब ठीक ही है। खुदाई खिदमतगारोसे मेरी बातचीत अच्छी चल रही है। बल्कि ज्यादा ठीक तो यह कहना होगा कि मैं उन्हे प्रवचन देता हूँ, जिसका अनुवाद खानसाहब करते जाते हैं। वे अनुवादमे अपनी पूरी आत्मा उँड़ेल देते हैं। मौन तो मेरा स्वभाव-सा हो गया है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

हम कल उटमंजईसे चल रहे है और अब इस दौरेमे फिर वापस यहाँ नही आयेंगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४२) से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४५१ से भी।

३६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२० अक्टूबर, १९३८

चि० ब्रजकृष्ण,

वात करनेका समय रहता ही नही।[1] आजकी मेरी सूचना तुमारे लिये, मेरे लिये देशके लिये हितकर है। जो स्वतंत्रता तुम्हें चाहीये वह मिलती तुमारी पुजी न चादी है, न सोना, न उग्र वुध्धि, तुमारी पुजी है तुमारा अभाग प्रेम उसका सौदा यहाँ पेट-भरके हो सकता है। तुमारे लिये इससे बहतर कोई सेवा मैं ढूढ नही सकुगा। दिल लगे तो कवूल कर लो।

स०[2] के खतसे मैंने माना फ०[3] को भूल गई है। अगर फ० के साथ शादी करना चाहती है तो तुमारे उसको अच्छी तरह सावधान करना है। फ० को भी कहना चाहिये उसके लिये थोडे ही अच्छा होगा कि एक विवाहित ओरतके साथ शादी करे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४६०) से।

३७. पत्र : हीरालाल शर्माको

पेशावर
२० अक्टूबर, १९३८

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला है। कलकत्ताके अनुभव लिखो। सतीशबाबु दुर्बल हो गये है। उनका कुछ हो सके तो करो। के नैसर्गिक बात सब खो बैठे? यह मजाक है। मेरा यहा रहना ९ नवेम्बर तक होगा। बाद सेगाव।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २७२ के सामने प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. ब्रजकृष्ण चाँदीवाला गांधीजी के साथ उत्मंजई में थे।
२ और ३. नाम छोड दिये गये हैं।

३८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कोहाट
२१ अक्टूबर, १९३८

भाई वल्लभभाई,

मैंने तुम्हारे तारका उत्तर दे दिया है। यदि तुम महज एक नागरिककी हैसियत से भी त्रावणकोर जाओ तो भी जीतकर आओगे। जेलमे कैदियोसे मिलना। वहुत झूठ फैला हुआ है। काग्रेसकी[1] तरफसे मुझे ढेर सारे तार मिले है जिनमे काग्रेसकी ओरसे हिंसासे साफ इनकार किया गया है। अन्य तार भी मिले है, जिनमे निश्चित रूपसे यह कहा गया है कि हिंसा हुई है। इसका पता तो तभी चल सकता है जव कोई वहाँ जाये। मैंने जो रुख अपनाया है वह तो तुम जानते ही हो। सी० पी० के विरुद्ध लगाये गये आरोप या तो वापस ले लिये जाये या उन्हीको मुख्य मुद्दा वनाया जाये। यदि इसीको मुख्य मुद्दा बनाया जाये तो उसके विरुद्ध सत्याग्रह नही किया जा सकता। इन दो मे से क्या करना है, इसका चुनाव स्थानीय लोगोको करना होगा। यदि सी० पी० वाहरसे जज वुलाकर मुकदमा चलाये तो लोगोंको चुनौती स्वीकार कर लेनी चाहिए। यदि वे ऐसा न करें तो लड़ाईके लिए ठीक आधार नही रहता। तुमने मेरी आखिरी सलाह देखी होगी। किसी भी कारणसे यदि हिंसा हो रही हो तो किसी भी तरह सुलह-समझौता किये बिना सविनय अवज्ञा स्थगित कर दी जाये। जो लोग जेलोमे पडे हुए है वे भले ही जेलोमे रहे। कानून-भगके सिवा शेष पूरा कार्यक्रम चलता रहे। किन्तु वहाँ जानेके वाद तुम्हे जो उचित जान पड़े सो करो। तुम पहले तो रामचन्द्रनसे और फिर कैदियोसे मिलना।

इसके साथका कानपुरके वालकृष्णका[2] तार देखना। मैंने तारसे उत्तर दे दिया है कि इस मामलेमे मै कुछ नही जानता। पार्लियामेंटरी बोर्डने तो मन्त्रीकी सलाहपर हस्तक्षेप करना स्वीकार किया होगा। यदि ऐसा न हो तो भी प्रान्तीय समिति जो-कुछ करना चाहे सो कर सकती है। मै माने लेता हूँ कि यह सव तुम्हारे ध्यानसे वाहर नही होगा।

आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मै अच्छा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

१. त्रावणकोर राज्य कांग्रेस।
२. वालकृष्ण शर्मा, कानपुरके अग्रगण्य कांग्रेसी नेता।

[पुनश्च :]

तुम गाधी सेवा सघसे त्यागपत्र क्यो देते हो? फिलहाल जमनालालजी की हालत बीमारो-जैसी है। त्यागपत्र देनेके बावजूद वे काम तो करेगे ही न? तुम्हारे त्यागपत्र देनेसे कोई सुधार नही होगा।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २२६-७

३९. पत्र : बलवन्तसिहको

२१ अक्टूबर, १९३८

चि० बलवंतसिह,

रात्रीके १२-४५ बज रहे है। मेरे पास कलम नही है। अब मौका अच्छा है इसलिये सीसापेनसे मीलके कागद पर लिखता हू। तुमको उत्तर देनेमे विलंब हुआ है। मै लाचार हु। डाक्तर थोडे मुझको रात्रिको काम करनेकी इजाजत देते है। आज तो कुछ कारणवशात् नीद नही आती। इसलिये मै तुमको लिख रहा हू। आशा करता हू कि मेरे अक्षर पढनेमे मुश्केली नही होगी। देखता हू सभव है तो कनुसे शाहीसे लिखवा दुगा।

मुझे इस दौरा खतम होने तक समय दो। यह मौसम जाय तो जाने दो। गरीब लोग क्या करते है? तुमारे लिखनेमे कुछ भी अनुचित नही है? मुझे इस पर क्रोध तो है ही नही लेकिन मै हसता भी नही। तुमारी भाषाके लिये मेरे मनमे आदर है क्योकि जैसा तुमारे दिलमे आता है ऐसा ही कहते-लिखते हो। बिलकुल सभव है कि मै अधेरेमे हूँ। बल्की ज्यादा सभव वही है क्योकि इन चीजोमें मुझे तो कुछ भी ज्ञान नही है। मैने एक बात पकड ली है तुम दोनो गोसेवक है तुमारेमे महेनत अधिक, गोप्रेम अधिक पारनेरकरमे शास्त्रीयज्ञान अधिक। ऐसी हालतमे मैने सोचा मै वही चीज करूं जिसमे दोनो सम्मत हो। ऐसा करते-करते मुझे पता चल जायगा कौन सही कहते है दरम्यान नुकसान जायगा तो सहन कर लुगा।

लेकिन तुमारी बात मुझे मान्य है। मै इस झनझटमे न पडु लेकिन एक पंच नियत किया जाय जो दोनोकी बात सुनकर फैसला देवे उसे कबूल किया जाय। चिमनलाल, नाणावटी और मीराबहन ये कैसे? मुझे तो किशोरलालको भी तकलीफ देनेका दिल हो जाता है लेकिन उनको कष्ट क्यो दू? राधाकिसनको कष्ट देनेमे मुझे कोई आपत्ति नही है। अगर पारनेरकर इन नामोको पसंद करे तो शीघ्र फैसला हो सकता है। मेरे आनेकी राह न देखी जाय। पारनेरकरको यह बता सकते हो। अब तो मुझे लगता है मैने सब बातोका उत्तर दिया है। धीरज रखना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९११) से।

४०. जब्त की गई जमीनें

सविनय अवज्ञा आन्दोलनके दौरान जब्त की गई जमीनोको उनके पहलेके मालिकोको लौटा देनेकी व्यवस्था करते हुए बम्बई विधानमण्डलने जो विधेयक पास किया है और जिसे गलतीसे अधिग्रहण कानून कहा जाता है, उसके बारेमे अगर मैं लोगोको यह कहने दूँ कि मेरा बस चलता तो यह विधेयक पास न हो पाता तो यह मेरे लिए अनुचित होगा। मुझे यह स्वीकार करना पडेगा कि मन्त्रियो द्वारा यह विधेयक पेश किये जानेमे मेरा भी कुछ हाथ था। वस्तुतः मुझे ऐसा लगा कि और कोई रास्ता उचित नही होगा। जिन लोगोने जब्तीके बाद ये जमीने खरीदी थी उनके साथ कोई बातचीत चलानेका मतलब या तो यह होता कि सरकारकी ओरसे जबरदस्ती की जाती या फिर उन जमीनोके तथाकथित मालिक मनमानी कीमतकी माँग करके परिस्थितिसे नाजायज फायदा उठानेकी कोशिश करते। अगर जमीने असली मालिकोको लौटाना उचित था तो वह काम कानूनी रूपसे ही होना था। और अगर भारत सरकार अधिनियमके अन्तर्गत यहाँकी सरकारको ऐसा निर्दोष और आवश्यक राहत कानून बनानेका भी अधिकार नही है तो यह अधिनियम, जितना इसके आलोचकोने बताया है, उससे भी खराब है। मैं तो मानता हूँ कि बम्बई सरकारका यह विधेयक न्यायोचित होनेसे भी कुछ बढ़कर ही है। जिस धारामे इसके तथाकथित स्वामियोको उनकी लागतोके साथ-साथ ब्याजके रूपमे भी मुआवजा दिये जानेकी व्यवस्था की गई है, वह धारा इसे सचमुच न्यायोचित से भी अधिक सुष्ठु और सुन्दर बना देती है। इन जमीनोके सम्बन्धमे हकीकत यह है — और यह हकीकत साबित की जा सकती है — कि ये जमीने अधिकारियोकी मिलीभगतसे खरीदी गईं। सच तो यह है कि इनके खरीदार ढूँढ पाना अधिकारियोके लिए मुश्किल पड़ रहा था। ये जमीने लोगोमे आतक फैलानेके लिए बेची गई। यह दमन नीतिका एक हिस्सा था और कई स्थानोपर तो जमीने कौडीके मोल बेच दी गई। ऐसी आतंककी नीतिसे काम लेनेवाली सरकारका स्थान जब उन लोगोने लिया जो उसके सताये हुए थे, तब उन्होने अधिकारियोकी मिलीभगतसे और जबरदस्त जन-विरोधके बावजूद खरीदी गई जमीनोको सीधे उनके तथाकथित मालिकोसे छीन लेनेके बजाय उन्हे मुआवजा देनेकी तत्परता बताई। इसे उदारता नही तो और क्या कहा जायेगा?

यदि सरकार और जनताके बीचकी लड़ाई अहिंसात्मक होनेके बजाय हिंसात्मक होती, तो विजेतापक्ष सत्ता प्राप्त करनेपर निश्चय ही सारी जमीन-जायदाद, जो असली हकदारोसे छीन ली गई थी, फिरसे उन्ही वैध स्वामियोको वापस लौटा देता और जिन तथाकथित स्वामियोसे जमीने छीनता, उन्हे मुआवजेके तौरपर एक पैसा भी नही देता। लेकिन यह स्थिति बदली नही जा सकती थी। क्योकि, पहली

चीज तो यह कि संघर्ष अहिंसात्मक ढगसे किया गया था और दूसरे यह कि भू-स्वामित्वका हस्तान्तरण जाहिरा तौरपर तो कानूनके मुताबिक ही किया गया था। जनताको यह मालूम होना चाहिए कि ये जमीनें तत्कालीन सरकारने पहले जब्त की और जब उसे लगा कि जब्तीसे लोगोका उत्साह तो ठंडा पड नही रहा है तब उसने उन जमीनोको बेच देनेका अशोभन रास्ता अपनाया। लेकिन सरकार शायद अपने भीषण अन्यायसे आप ही डर गई और उसने आगे जमीन बेचना बन्द कर दिया। इस दुःखद अतीतकी अधिक चर्चा न करना ही अच्छा होगा। उसकी जो चर्चा मैंने यहाँ कर दी है, वह सिर्फ इसलिए कि पाठक जान जाये कि बम्बई सरकारने कोई अन्याय नही किया है।

कोहाट, २२ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१०-१९३८

४१. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

कोहाट
२२ अक्टूबर, १९३८

बिडला
रॉयल एक्सचेंज
कलकत्ता

सोमवार तक कोहाटमें हैं। कार्यक्रम डाकसे भेज रहा हूँ। नौ नवम्बर तक [दौरा] सम्पन्न।

बापू

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७७९९) से; सौजन्य. घनश्यामदास बिडला।

४२. पत्र : अमृत कौरको

कोहाट
२२ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

पेशावरमे कल चार घटे रुका। वही तुम्हारे पाँचो पत्र मिले।

जालिम अगर अन्यायके अलावा कुछ और करने लगे तो फिर वे जालिम काहेके? मगर ईश्वरका धन्यवाद है कि इस जालिमको तो तुम जागरूक न्यायवृत्ति का श्रेय देती हो। महादेवने लिखा है कि अभी पिछले दिनो तुम्हे मूर्च्छा-सी आती जान पड़ी। क्या कारण था? और मूर्च्छित हो जानेपर भी तुम काम करनेका दुराग्रह क्यों रखती हो? या फिर क्या तुम यह चाहती हो कि तुम्हारी मृत्यु (ईश्वर करे, वह वर्षों बाद आये) के बाद लोग कहे कि तुम तो इतनी कर्तव्यनिष्ठ थी कि मूर्च्छित होने तक तुम काम करती रहती थी। मेरी भाषामे इसे भूल कहा जायेगा। तुम्हे मूर्च्छित नही होना चाहिए। शम्मीके लिए तो प्रेम, अधिकाधिक प्रेम, अनन्त प्रेमके अलावा और कोई उपचार नही है। निर्धारित कार्यक्रमका समय हो रहा है, इसलिए अब ज्यादा तो नही लिख सकता। तुम्हारा कोहाटके पतेपर लिखा पत्र आ गया है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४३) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४५२ से भी।

४३. पत्र : महादेव देसाईको

२२ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

कल हम ८-३० पर पेशावर पहुँचे और वहाँसे चार बजे फिर निकल पड़े। वहाँ पाँच दिनसे इकट्ठी डाकका ढेर लगा हुआ था। तुम्हारे सभी पत्र मुझे कल ही मिले।

तुम्हारे मनमे यह शंका कैसे उठी कि तुम्हारे पत्र मुझे बोझ लगेंगे? ऐसी कोई बात नहीं है। बात यह है कि जब तुम्हारा पत्र नही मिलता तो मै व्याकुल हो उठता हूँ। और यदि पत्र संक्षिप्त होता है तो क्रुद्ध हो जाता हूँ तथा सोचने लगता हूँ कि महादेवपर ऐसा क्या काम आ पड़ा जो उसे दो पक्तियोमे ही पत्र निबटा देना पड़ा।

बावलाके बारेमे राजकुमारी लिखती हैं कि उसे अपनी बुद्धिके विकासका पूरा अवसर मिलना चाहिए। मैं भी यह मानता हूँ कि या तो प्रचलित पद्धतिके अनुसार अर्थात् हाईस्कूल आदिके द्वारा या फिर घरकी पढ़ाईके द्वारा उसे ऐसा अवसर मिलना चाहिए। घरमें पढ़ानेसे उसका विकास एक दिशामे होगा और कॉलेज आदिमें पढ़ानेसे दूसरी दिशामें। तुम इस बारेमे राजकुमारीके साथ विचार-विमर्श करके देखना। जैसाकि इस समय चल रहा है यदि उसके बदले तुम्हे और कुछ सूझे तो फिर हम वैसा करेगे। इस बारेमे बावला भी सुझाव दे सकता है।

मैंने लीलावतीको लिखा ही है। तुमसे लिखवानेका कारण यही है कि उसे सभी ओरसे एक ही सलाह मिले। उसने मुझे तो ऐसा नोटिस नही दिया है कि अब वह तुम्हारे पास नही रहेगी। मैंने ऐसा माना भी नही था। फिर भी हम उसे जबरदस्ती तो वहाँ नही रखेगे। किन्तु फिलहाल तो तुम्हारा कुछ निश्चित नही है अत हम इस मामलेमे सोच-विचार क्यो करें?

पोथन मुझे त्रावणकोरके बारेमे लिखता रहता है। सामान्यत मृत्युके बाद ही किसी व्यक्तिके बारेमे भला-बुरा लिखा जाता है। तुम्हारे मामलेमें मृत्युके पहले ही लिखा गया है। अत मृत्युके बाद क्या लिखा जायेगा, इस बारेमे क्या सोचना? बादमे तुम्हारी जीवनीका नया संशोधित संस्करण निकलेगा। यदि पोथन नही तो उसका कोई भाई नई संशोधित टिप्पणी लिखेगा।

आज और अधिक नही लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६५) से।

४४. पत्र : प्रभावतीको

कोहाट
२२ अक्टूबर, १९३८

चि० प्रभा,

मैंने तुझे दो पत्र तो लिखे हैं। एकमें श्यामजी भाईके नाम ३०० रुपयेका पुर्जा भेजा था।[1] आशा है वह तुझे मिल गया होगा। जयप्रकाश जैसा कहे तुझे वही करना चाहिए। यदि उसके साथ जाना पड़े तो चली जाना। लेकिन ऐसी स्थितिमें भी सरस्वतीको अपने साथ लाना। उसे किसी पासके स्टेशनपर उतार देना। वहाँसे

१. श्यामजी सुन्दरदासको लिखे पत्रमें वास्तवमें २०० रुपये का जिक्र है; देखिए खण्ड ६७, पृ० ४७७।

मै किसीके साथ उसे यहाँ बुलवा लूँगा। तुझे त्रिवेन्द्रम तो जाना पड़ेगा। अधिक लिखनेका समय नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२३) से।

४५. भाषण: कोहाटकी सार्वजनिक सभामें[1]

२२ अक्टूबर, १९३८

आपके कष्टो और कठिनाइयोकी जानकारी पानेमे मैंने आज घटे-भरसे अधिक समय दिया है। लेकिन मै आपके सामने स्वीकार करता हूँ कि इन वातोके सम्बन्धमे कुछ करने लायक अव मै नही रह गया हूँ। एक ओर तो बुढापा मुझपर हावी होता जा रहा है और दूसरी ओर मेरी जिम्मेदारियोमे भी विविधता आती जा रही है, और ऐसा खतरा है कि यदि मै सभी कामोमे हाथ डालूँ तो मेरी जो जिम्मेदारियाँ ज्यादा महत्वकी है, शायद उन्हे भी न निभा पाऊँ। इनमे से एक बडे महत्वकी जिम्मेदारी है खुदाई खिदमतगारोके बारेमे स्वीकार की गई जिम्मेदारी। यदि खान साहबके सहयोगसे मै इसे अपने लिए सन्तोषजनक ढगसे निभा पाऊँ तो मानूँगा कि मेरे जीवनके आखिरी वर्ष बेकार नही गये।

लोग मुझपर और मेरे इस विचारपर हँसते है कि खुदाई खिदमतगार स्वराज्यके पूर्ण अहिंसक सेनानी बन सकते है। लेकिन उनके उपहासका मुझपर कोई असर नही होता। अहिंसा शरीरका नही, आत्माका गुण है। एक बार जब इसका मर्म हृदय-तलमे उतर जाता है तो बाकी सब अपने-आप होता चला जाता है। मानव-स्वभावकी दृष्टिसे खुदाई खिदमतगार मुझसे भिन्न नही है। और मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मै किसी हद तक अहिंसाका आचरण कर सकता हूँ तो वे — और वही क्यो, दूसरे लोग — भी वैसा कर सकते है। इसलिए आप सब मेरे साथ मिलकर प्रभुसे प्रार्थना करे कि खुदाई खिदमतगारोके बारेमे मेरा जो सपना है, उसे वह सच बनाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-३" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। सभामें कोहाटके नागरिकोंकी ओरसे जिला कांग्रेस कमेटीने गांधीजी को कुछ मानपत्र भेंट किये थे। सभामें लगभग ५,००० लोग उपस्थित थे।

४६. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

कोहाट
[२२/२३ अक्टूबर, १९३८][1]

चि० व्रजकृष्ण,

तुमारा खत पढने पर मुझे ऐसा लगता है कि इस वखतके लिये तो तुमारे दिल्हीमे ही रहना होगा। जितने काम वताये है वे सव कर्त्तव्य है।

मीरठवालोंको मैं लिखुगा।

स० के वारेमें तो जो उचित लगे सो किया जाय। फ० को मैं लिखुं?

मेरे साथ रहनेके वारेमे तो मैंने इजाजत दी ही है। लेकिन इस इच्छाको भी मोह समजो। रमण महर्षि और अरविंदो एकागी है और मैं सर्वांगी इतना ही कहना पर्याप्त नही है। एकागी जो अपना कार्य समजता है और अमल करता है वह सच्चा। जो सर्वागी होनेका दावा करता है लेकिन सर्वमे प्रयोग ही कर रहा है वह फूटी वदामसे भी वदतर हो सकता है। मैं कहा हूं सो तो भगवान ही जाणता है। मैं साधक हू, वे सिध्ध माने जाते है। शायद है भी। उनके अनुयायी तो सिध्ध ही मानते है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५९) से।

४७. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ

कोहाट
[२२/२३ अक्टूबर, १९३८][2]

खुदाई खिदमतगार संगठनके अधिकारियोंसे कोहाटमें वातचीत करते हुए गांधीजी ने उन्हे बताया कि आपने जो कदम उठाया है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम है। मैं पहले कई वार कह चुका हूँ कि पठान लोग, जोकिं शस्त्रास्त्रोंके प्रयोगमें अपनी दक्षता के लिए सारी दुनियामें प्रसिद्ध है, यदि शस्त्र-त्याग करके सचमुच अहिंसाका वरण कर ले तो वह दिन भारत और विश्वके इतिहासका एक चिरस्मरणीय दिवस होगा।

१. इन दिनों गांधीजी कोहाटमें थे।

२. गांधीजी इन दो दिनों कोहाट में थे, किन्तु साधन-सूत्र से पता चलता है कि यह बातचीत खुदाई खिदमतगारोंके साथ २३ तारीखको हुई बातचीत (देखिए पृ० ४८-५१) से पहले हुई थी।

अच्छा-बुरा तो मैं नहीं जानता, लेकिन यह बात सच है कि आज भारतके एक सामान्य आदमीके लिए पठान एक हौआ बन गया है। गुजरात और काठियावाड़मे तो पठानका नाम सुनकर बच्चे डरसे पीले पड़ जाते है। साबरमती आश्रममे हम बच्चोके अन्दर निडरताकी भावना पैदा करनेका प्रयत्न करते है। लेकिन मैं शर्मके साथ यह स्वीकार करता हूँ कि सारी कोशिशोके बावजूद हम उनके दिलसे पठानका डर नही निकाल पाये है। मै अपने आश्रमकी लड़कियोके मनमे अभी यह बात नही बैठा पाया हूँ कि उन्हें पठानसे डरने की जरूरत नही है। वे बहादुर होनेका दिखावा करनेकी कोशिश करती है, लेकिन वह तो ऊपरी दिखावा-भर है। साम्प्रदायिक दंगेके अवसरपर अगर खबर मिले कि एक पठान कही आसपास है तो वे अपने घरोसे निकलनेका साहस नही करती। वे डरती है कि उनका अपहरण कर लिया जायेगा।

मैं उन्हे समझाता हूँ कि उनका अपहरण हो जाये तो भी उन्हे डरना नही चाहिए। उन्हे अपहरणकर्तासे कहना चाहिए कि वह उनके साथ वैसा ही व्यवहार करे जैसेकि वे उसकी बहन हो। अगर उनके अनुनय-विनयके बावजूद वह अपनी नीयतसे बाज न आये, तो (चूंकि एक दिन सभीको मरना है) वे अपनी जीभ काटकर मर जायें, लेकिन समर्पण न करे। वे जवाब देती है, 'आप जो कहते है वह ठीक है। लेकिन हमारे लिए यह सब नया है। हमे भरोसा नही है कि समय आनेपर हम जैसा आप कहते है वैसा कर सकेगी।' यदि आश्रमकी लड़कियोका यह हाल है तो औरोका क्या हाल होगा? इसीलिए जब मैं सुनता हूँ कि पठानोके बीच खिदमतगारोंका एक दल संगठित हुआ है जिसने हिंसाका पूर्ण त्याग कर दिया है तो मैं तय नही कर पाता कि इसपर विश्वास करूँ या न करूँ।

हिंसाका त्याग करनेके फलितार्थ क्या है और हिंसाका त्याग करनेवाले व्यक्तिकी पहचान क्या है?

इस प्रश्नको उठाते हुए गांधीजी ने कहा कि खुदाई खिदमतगार नाम ग्रहण करने से ही कोई खुदाई खिदमतगार नही हो जाता, और न खुदाई खिदमतगारकी वर्दी पहननेसे ही हो जाता है। इसके लिए अहिंसाके सतत प्रशिक्षणकी आवश्यकता होती है। यूरोपमें, जहाँ हत्याको एक सम्मानजनक पेशा बना दिया गया है, विनाशके विज्ञानको पूर्ण बनानेपर करोड़ों रुपये खर्च किये जाते है। यूरोपके सर्वोत्तम वैज्ञानिक इस काममें लगाये गये है। यहाँ तक कि वहाँकी शिक्षा-प्रणाली भी इसीके गिर्द रची गई है। वे ऐयाशी और सुख-सुविधाके साधनोंपर विराट धनराशियाँ खर्च करते है। विलास और आराम उनके आदर्शका अंग बन गये है। इसके विपरीत, एक खुदाई खिदमतगारकी विशेषता होनी चाहिए पवित्रता, अध्यवसाय और ईश्वरकी सृष्टिकी सेवामें अनवरत कठोर परिश्रम।

अन्य प्राणियोकी सेवा करते हुए आपको इस बातका कुछ अनुमान होगा कि आपने अहिंसाकी दिशामे कितनी प्रगति की है और अहिंसाकी शक्तिका भी आपको अनुभव होगा। इस शक्तिसे सम्पन्न एक व्यक्ति अकेला समस्त संसारके विरुद्ध खड़ा हो सकता है। लेकिन तलवारकी ताकतके बूते ऐसा नही किया जा सकता।

अभी तक सविनय अवज्ञा करना और सविनय अवज्ञाके लिए मिलनेवाले दण्डको अहिंसक भावसे स्वीकार करनेको ही अहिंसा माना जाता रहा है। लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूँ कि यद्यपि अहिंसाके कार्यक्रममें सविनय अवज्ञा शामिल है, लेकिन जैसाकि मैंने स्वाबीमें बताया था,[1] इसका सार-तत्व वह नैतिक अधिकार अथवा योग्यता है जिसका होना एक सविनय प्रतिरोधीमें आवश्यक है, और यह अधिकार या योग्यता उसी व्यक्तिको प्राप्त होता है जिसने अहिंसाके आचरणका अभ्यास डाल लिया है। सत्याग्रहकी लड़ाईमें 'सविनय अवज्ञा आरम्भिक नहीं, अन्तिम चरण है।' लोगोको सरकारसे बहुत डर लगा करता था। इसको दूर करनेके लिए मैंने सत्याग्रह या सविनय अवज्ञाका तरीका सुझाया। यह एक तीखी दवा है।

शक्तिशाली औषधि देनेवाले हकीमको अगर ठीक-ठीक यह न मालूम हो कि कब दवा रोक देनी चाहिए, तो उसका मरीज मर जायेगा। इसीलिए जब स्थितिकी वैसी माँग हुई, मैंने तुरन्त सविनय अवज्ञा [आन्दोलन] बन्द कर दिया, और केवल अपने तक ही उसे सीमित कर दिया।[2] यह बिलकुल ठीक वक्तपर हुआ। इसलिए मैं चाहूँगा कि फिलहाल आप सविनय अवज्ञाकी बात भूल जायें।

इसके बाद गांधीजी ने समझाया कि ईश्वरकी सेवा ईश्वरके बन्दोंकी सेवाके जरिये ही हो सकती है। अन्ध-विश्वासी समझे जानेका खतरा उठाकर भी मैंने हर चीजमें भगवानका हाथ देखनेकी कोशिश करनेकी आदत डाल ली है। इसीलिए बादशाह खानने आप लोगोके लिए जो नाम चुना है, उसमें भी मैं ईश्वरका ही हाथ देखता हूँ। बादशाह खानने आप लोगोको सत्याग्रही न कहकर खुदाई खिदमतगार कहा है।

चूँकि ईश्वर अशरीरी है, और उसे किसी प्रकारकी निजी सेवाकी आवश्यकता नही है, तो फिर उसकी सेवा कैसे की जाये? उर्दूका एक शेर है जिसका अर्थ है, "इंसान खुदा नही है, लेकिन तत्वत वह खुदासे फर्क नही है।" हम अपने गाँवको अपनी दुनिया बनायें। तब हम अपने गाँवकी सेवा करते हुए खुदाकी सेवा करेंगे। बेरोजगार लोगोको रोजगार मुहैया करना, रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषा करना, लोगोंकी गन्दगीकी आदतोंको छुड़वा कर सफाई-स्वच्छतासे रहनेकी शिक्षा देना खुदाई खिदमतगारका काम होना चाहिए। और चूँकि वह जो-कुछ भी करेगा, वह खुदाकी सेवाके रूपमे करेगा, इसलिए वह अपना काम किसी भी वेतनभोगी कार्यकर्ताकी अपेक्षा ज्यादा लगन और मेहनतसे करेगा।

अपने भाषणका अन्त गांधीजी ने यह बताते हुए किया कि अहिंसक शक्तिका विकास किस प्रकार करना चाहिए।

खुदाई खिदमतगार समयको खुदाकी अमानत मानते हुए उसके एक-एक मिनटका हिसाब रखेगा। अपने वक्तका एक मिनट भी आलस या फिजूलके कामोमे नष्ट करना

१. देखिए "भाषण: स्वाबीमें", पृ० २२।

२. अप्रैल १९३४में गांधीजीने सारे कांग्रेसियोंको यह सलाह दी थी कि खास-खास शिकायतोंको छोड़कर सामान्य रूपसे स्वराज्य-प्राप्तिके निमित्त सविनय अवज्ञा स्थगित रखें; देखिए खण्ड ५७, पृ० ३७८-८१।

खुदाकी निगाहमें गुनाह है। यह चोरी करने-जैसा है। अगर उसके पास जमीनका कोई छोटा-सा टुकड़ा भी हो तो उसपर वह निराश्रित और जरूरतमन्द लोगोंके लिए कोई चीज उगायेगा। अगर उसके माता-पिताके पास इतना पैसा है कि वह बाजारसे खाने-पीनेकी वस्तुएँ और सब्जियाँ खरीद सकता है, और इसी कारण उसे हाथपर हाथ धरकर बैठने और कुछ न करनेकी इच्छा हो, तो वह अपने मनमें सोचेगा कि बाजारकी वस्तुओंको इस प्रकार इस्तेमाल करके वह गरीबोंको उन चीजोंसे वंचित करता है और इस प्रकार वह ईश्वरकी वस्तुकी चोरी करता है। कोई चीज खरीदने या इस्तेमाल करनेसे पहले खुदाई खिदमतगार अपने-आपसे पूछेगा कि क्या कोई दूसरा व्यक्ति तो नहीं है जिसकी जरूरतें उसकी जरूरतोंसे ज्यादा हों। मान लें कि कोई व्यक्ति उसके सामने भरी हुई थाली रखे और उसी समय एक भूखा आदमी वहाँ आ जाये, तो खुदाई खिदमतगार पहले उस भूखेकी जरूरतका विचार करेगा, उसे भोजन करायेगा, और इसके बाद ही उस थालीमें से खायेगा।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ८३-६

४८. पत्र : महादेव देसाईको

२३ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

सुशीलाकी कलमकी स्याही खत्म हो गई है, इसलिए समय बचानेके लिए पेंसिलसे काम चला रहा हूँ। यह मुझे ब्रजकृष्णने दी है। साथका पत्र मैं तुम्हारे देखनेके लिए ही भेज रहा हूँ। मैंने अगाथाको सीधे यहाँ आनेको लिखा है। मुझे लौटनेमें विलम्ब होगा और वह जहाँ-तहाँ घूमती रहे यह मुझे अच्छा नहीं लगता। यहाँ कुछ स्थानोंपर ऐसे रमणीक दृश्य देखनेको मिलते हैं कि तुम्हारी याद आ जाती है। आबहवा तो अच्छी है ही। राजकुमारीको मैं आज नहीं लिख रहा हूँ।

पत्रोंका ढेर लगा हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६७) से।

४९. बातचीत: खुदाई खिदमतगारोंके साथ

हुंगू
[२३ अक्टूबर, १९३८][1]

गांधीजी ने मार्गमें नसरत खेलमें खुदाई खिदमतगारोंके कार्यालयके शिलान्यास समारोहके अवसरपर दिये गये मानपत्रका जिक्र किया और कहा कि उसमें "हमारे अन्तिम संघर्ष" की चर्चा थी। उन्होंने कहा:

मैं आपसे कहूँगा कि सविनय अवज्ञा तो आती-जाती रहेगी परन्तु स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए हमारा अहिंसक संघर्ष जारी रहेगा और तब तक चलेगा जब तक स्वतन्त्रता हासिल नही हो जाती। केवल इसका स्वरूप ही बदला है।

मै जानता हूँ कि ९० प्रतिशत भारतीयोके लिए अहिंसाका अर्थ इसके अलावा और दूसरा कुछ नही है।[2] यहाँ तक तो ठीक है। इसमे बहादुरी है। परन्तु आपको, और विशेषतया खुदाई खिदमतगार संगठनके पदाधिकारियोको यह अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिए कि अहिंसाकी यही इतिश्री नही है। यदि आपने वास्तवमे ही अहिंसाका अर्थ समझ लिया है तो यह बात आपको स्पष्ट हो जानी चाहिए कि अहिंसा ऐसा कोई सिद्धान्त अथवा सद्‌गुण नही है जिसका प्रयोग किसी विशिष्ट अवसरपर अथवा किसी दल या समुदाय विशेषसे निपटते वक्त ही किया जाये। इसे तो हमारे जीवनका एक अग बन जाना चाहिए। हमारे दिलसे क्रोधका नामोनिशान मिट जाना चाहिए अन्यथा हममे और दमनकारियोमें फर्क ही क्या है? कोई व्यक्ति क्रोधके वशीभूत होकर गोली चलानेका आदेश दे सकता है, दूसरा व्यक्ति अपशब्दोका प्रयोग कर सकता है और तीसरा लाठी चला सकता है। तीनोके कुकृत्यका मूल तो एक ही है। जब आप क्रोधका अनुभव न करें अथवा अपने हृदयमें क्रोधको जगह न दें केवल तभी आप यह दावा कर सकते है कि आपने हिंसाको निकाल फेंका है, अथवा यह आशा कर सकते है कि आप आखिरी क्षण तक अहिंसक बने रह सकेंगे।

इसके बाद उन्होंने सविनय अवज्ञा और सत्याग्रहके बीच जो अन्तर है, उसे समझाया। उन्होंने कहा:

हमारी सविनय अवज्ञा अथवा असहयोग स्वभावत. कुछ ऐसी चीज कि है इसका प्रयोग हमेशा-हमेशाके लिए नहीं किया जा सकता। परन्तु अपनी रचनात्मक अहिंसाके

१. हरिजन, ५-११-१९३८ में प्रकाशित प्यारेलालकी रिपोर्ट "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-३" के अनुसार गांधीजी २३ अक्टूबर, १९३८ को हुंगू गये थे।

२. मानपत्रमें यह भी कहा गया था कि खुदाई खिदमतगार दमनचक्रके आगे न झुके हैं और न कभी झुकेंगे।

माध्यमसे जो संघर्ष आज हम कर रहे हैं उसका औचित्य हमेशा कायम रहेगा। यह एक वास्तविक चीज है। मान लिया जाये कि सरकार सविनय अवज्ञाकारियोंको गिरफ्तार करना बन्द कर देती है तो इससे हमारा जेल जाना रुक जायेगा, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि हमारा संघर्ष समाप्त हो गया। कोई सविनय अवज्ञाकारी इसलिए जेल नहीं जाता कि वह जेलके नियमोंका उल्लंघन करके जेल-अधिकारियोंको परेशान करे। हाँ, जेलमें भी सविनय अवज्ञा की जा सकती है। परन्तु इसके लिए कुछ सुनिश्चित नियम हैं। असल बात तो यह है कि सविनय अवज्ञाकारीका संघर्ष उसके जेल चले जाने मात्रसे ही समाप्त नहीं हो जाता। हमारे जेलके अन्दर जाते ही जहाँ तक बाह्य संसारका सम्बन्ध है, हम सविनय अवज्ञाकारीके रूपमें मृतक बन जाते हैं, परन्तु इसके साथ ही जेलके भीतर सरकारके दासों अर्थात् जेलके अधिकारियोंके हृदय-परिवर्तनके लिए हमारा संघर्ष शुरू होता है। इससे हमें उन्हें यह दिखानेका अवसर मिलता है कि हम चोर या डकैतोंके समान नहीं हैं; हम उनका बुरा नहीं चाहते और न ही हम अपने विरोधियोंको बरबाद करना चाहते हैं। इसके विपरीत, हम तो उन्हें यह दिखाकर कि हममें कोई बुराई नहीं है, हम हृदयसे उनकी भलाई चाहते हैं और दिलमें भगवानसे उनके कल्याणकी कामना करते हैं, उन्हें अपना मित्र बनाना चाहते हैं। उनके सही या गलत आदेशोंका गर्दन झुकाकर पालन करके उन्हें हम अपना मित्र बनानेकी इच्छा नहीं रखते, क्योंकि सच्ची मित्रता जीतनेका यह तरीका नहीं है। जब मैं जेलके सीखचोंमें बन्द था तब भी मेरा संघर्ष चलता रहा। अनेक बार मैं जेल गया हूँ और हर बार अपने पीछे वहाँ जेल-अधिकारियों तथा अन्य दूसरे लोगोंको, जिनके सम्पर्कमें मैं आया, अपने मित्रके रूपमें छोड़कर बाहर निकला।

अहिंसाकी यह एक विशेषता है कि इसका असर कभी समाप्त नहीं होता। यही बात तलवार या गोलीके बारेमें नहीं कही जा सकती। गोलीसे दुश्मन नष्ट हो सकता है; अहिंसा दुश्मनको मित्रके रूपमें बदल देती है और इस प्रकार सविनय अवज्ञाकारीको इस काबिल बना देती है कि वह अपने दुश्मनकी शक्ति भी अपनेमें समाहित कर ले।

उन्होंने आगे कहा कि अपने सविनय अवज्ञा आन्दोलनके जरिये हमने दुनियाको अपना यह दृढ़ संकल्प जता दिया है कि अब हम अंग्रेजोंकी गुलामी और स्वीकार नहीं कर सकते। लेकिन अब हमें एक इससे भी उच्च कोटिकी बहादुरीका प्रमाण देना है। खिलाफतके दिनोंमें कद्दावर और हट्टे-कट्टे पठान सैनिक अली-बन्धुओं तथा मुझसे गुप्त रूपसे मिलने आया करते थे। वे यह सोचकर काँपते रहते थे कि उनका इस तरह आना कहीं उनके अफसरोंको पता न चल जाये और उन्हें नौकरीसे निकाल न दिया जाये। अपने लम्बे कद और शारीरिक शक्तिके बावजूद भी जब उनका सामना अपनेसे अधिक ताकतवर व्यक्तिसे हो जाता था तो वे डर जाते थे और दासवत् व्यवहार करने लगते थे।

मैं अपने अन्दर ऐसी शक्ति चाहता हूँ जिससे मैं अपने एकमात्र स्वामी भगवानके सिवा किसी दूसरेके सामने न झुकूँ। जब मैं ऐसा कर सकूँ केवल तभी मैं अहिंसा हासिल कर लेनेका दावा कर सकता हूँ।

इसके बाद उन्होंने अहिंसाकी एक अन्य विशेषताको विस्तारपूर्वक समझाते हुए कहा कि अहिंसाको किस तरह प्रयोगमें लाया जाये, यह सीखनेके लिए किसीको किसी विद्यालयमें अथवा किसी पीर या गुरुके पास जानेकी आवश्यकता नहीं है। इसकी सरलता ही इसकी खूबी है। यदि लोग यह समझ जायें कि यह एक ऐसा अत्यन्त क्रियाशील सिद्धान्त है जो बिना रुके या धीमा पड़े चौबीसों घंटे कार्य करता रहता है तो वे ऐसे मौकोंकी तलाशमें रहेंगे जब वे इसका प्रयोग घरोंमें, गलियोंमें और मित्रों ही नहीं बल्कि दुश्मनोंके साथ भी कर सकें। आप अपने घरोंमें आजसे ही इसपर आचरण करना शुरू कर सकते हैं। मैंने अपने ऊपर इतना संयम प्राप्त कर लिया है है कि अपने दुश्मनके ऊपर मैं कभी क्रोध नहीं करता, हालाँकि कभी-कभार मित्रोंके ऊपर क्रोध कर बैठता हूँ। अहिंसाका जितना कुछ अभ्यास मुझे है, उसे मैंने अपनी पत्नीसे सीखा है। इसके साथ ही गांधीजी ने अपने पारिवारिक जीवनके एक मर्मस्पर्शी पहलूके बारेमें विस्तारसे बताते हुए कहा कि पहले मैं घरमें बिलकुल तानाशाह बना रहता था। मेरा अत्याचार प्रेमका अत्याचार था।

मैं उसपर [अपनी पत्नीपर] अपना सारा क्रोध उतार देता था। वह उसे बिना किसी शिकायतके चुपचाप सह लिया करती थी। मैं समझता था कि चूँकि मैं उसका स्वामी हूँ इसलिए मेरी आज्ञा मानना उसका कर्तव्य है। परन्तु उसकी विनम्रताने मेरी आँखें खोल दी और मैं यह महसूस करने लगा कि उसके ऊपर मेरा कोई शाश्वत अधिकार नहीं है। यदि मैं चाहता हूँ कि वह मेरी आज्ञाका पालन करे तो पहले मुझे उसे शान्तिपूर्वक समझाना-बुझाना होगा। और इस प्रकार वह मुझे अहिंसा सिखानेवाली शिक्षिका बन गई। मैं यह मानता हूँ कि मेरी जिन्दगीमे उससे बढकर निष्ठावान और विश्वासी मित्र मुझे दूसरा कोई नही मिला है। मैं उसके लिए जिन्दगी नरक बनाता रहता था। मैं जब-तब अपना घर बदला करता था और उसे निर्देश देता था कि वह कौन-सा कपडा पहने। उसका पालन-पोषण एक कट्टरपथी परिवारमें हुआ था जहाँ छुआछूतका विचार किया जाता था। हमारे घर मुसलमान और अछूत प्राय. आया करते थे। मैं उसकी स्वाभाविक अनिच्छाकी परवाह किये बिना उससे उनकी आव-भगत कराया करता था। लेकिन उसने कभी 'ना' नही की। वह शिक्षाके प्रचलित अर्थमे शिक्षित नही थी और सीधी-सादी थी। उसकी निश्छल सरलताने मुझे पूरी तरहसे जीत लिया।

आप सबके घरोमे माँ, बहने और पत्नियाँ है। आप उनसे अहिंसाका सबक सीख सकते है। इसके साथ-साथ आप सत्यकी शपथ ले। आप अपनेसे ही पूछें कि आप सत्यको कितना मूल्यवान समझते है और इसे आप किस हद तक मनसा,

वाचा, कर्मणा अपनाते हैं। जो व्यक्ति सत्यवादी नहीं है वह अहिंसासे बहुत दूर है। असत्यता स्वयमेव हिंसा है।

रमजानका महीना जो अभी-अभी शुरू हुआ था, उसकी चर्चा करते हुए उन्होंने उन लोगोंको बताया कि किस प्रकार इसका उपयोग अहिंसाका अभ्यास प्रारम्भ करनेमें किया जा सकता है।

ऐसा लगता है कि हम यह मान बैठे हैं कि भूखे-प्यासे रहना ही रमज़ान मनाना है। रमज़ानके पवित्र महीनेमें छोटी-छोटी बातोंपर गुस्सा करने, अथवा दुराचार करनेके बारेमें हम तनिक भी नहीं सोचते। उपवास तोड़ते समय भोजन परोसनेमें थोड़ी-सी भी देर होनेपर बेचारी पत्नीकी बुरी तरह लानत-मलामत की जाती है। मैं इसे रमजान मनाना नहीं कहता, यह तो इसका मजाक उड़ाना है। यदि आप अहिंसा अपनाना चाहते हैं तो आपको प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि चाहे जो हो, आप गुस्सा नहीं करेंगे अथवा परिवारके सदस्योंपर हुकूमत नहीं जतायेंगे या उनपर हुक्म नहीं चलायेंगे। इस प्रकार दैनिक जीवनमें जो भी छोटे-छोटे अवसर मिलें उनका उपयोग आप स्वयं अपने जीवनमें अहिंसाको अपनाने तथा इसे अपने बच्चोंको सिखानेमें कर सकते हैं।

एक दूसरा दृष्टान्त देते हुए गांधीजी ने कहा कि मान लीजिए किसीने आपके बच्चेको पत्थर मार दिया है। आम तौरपर एक पठान अपने बच्चेसे यह कहता है कि वह मार खाकर रोते हुए घर न आये बल्कि ईंटका जवाब पत्थरसे दे, किन्तु अहिंसाका पुजारी अपने बच्चेसे यह कहेगा कि पत्थरका जवाब पत्थरसे देनेके बजाय वह पत्थर मारनेवाले बच्चेको गले लगाये और उसे अपना दोस्त बना ले।

यही नुस्खा, अर्थात् दिलसे पूरी तरहसे क्रोध निकाल देना तथा प्रत्येक व्यक्तिको मित्र बनाना, वास्तवमें भारतको स्वतन्त्रता दिलानेके लिए काफी है। भारतके निर्धन जनसमुदायको स्वतन्त्रता दिलानेका यह सबसे विश्वसनीय और शीघ्र फलदायक रास्ता है, और मेरा दावा है कि यही एकमात्र रास्ता भी है।

[अंग्रेजीसे]

ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ८७-९१

५०. राष्ट्रीय झण्डा

एक भाई लिखते हैं :

आजकल धार्मिक उत्सवों और अनुष्ठानोंके अवसरोंपर राष्ट्रीय झण्डेको कुछ इस तरह फहरानेकी प्रवृत्ति देखी जाती है जिससे धर्म-सम्बन्धी ध्वज-पताकाओं तथा अन्य प्रतीकोंसे उसकी स्पर्धाका और उनके मुकाबले उसे श्रेष्ठ दिखाने की कोशिशका आभास मिलता है। यह प्रवृत्ति इतनी बढ़ गई है कि इस ओर आपका ध्यान देना आवश्यक है। यह तो हम सब चाहते हैं कि राष्ट्रीय झण्डा एकता और सभी दिशाओंमें निर्बाध रूपसे आगे बढ़नेके हमारे संकल्पका प्रतीक बने, लेकिन राष्ट्रीय झण्डे तथा जिन्हें धार्मिक अनुष्ठानोंके अवसरोंपर प्रमुखता मिलनी चाहिए, ऐसे धार्मिक ध्वज-पताकाओं और अन्य प्रतीकोंके बीच स्पर्धा खड़ी करके तो हम उस उद्देश्यको ही विफल कर देंगे जिसको ध्यानमें रखकर हमने राष्ट्रीय झण्डा अपनाया है। इस मामलेमें उत्साहके अतिरेकमें हमारे कुछ कार्यकर्ता गलती कर बैठते हैं, बल्कि सच तो यह है कि उनके व्यवहारके कारण कहीं-कहीं राष्ट्रीय झण्डेका विरोध भी उभरने लगा है, जो अब तक देखनेमें नहीं आता था।

इसके अलावा, जहाँ-तहाँ कुछ लोग या गुट राष्ट्रीय झण्डेके प्रति जनताकी भावनाको उभारकर अपनी स्वार्थ-सिद्धि करते हैं। झगड़ा भले ही किसी और बातको लेकर शुरू हुआ हो, लेकिन वे बीचमें झण्डेका सवाल खड़ा करके बातोंको इस तरह उलझा देते हैं कि कोई समझ ही नहीं पाता है कि असलमें झगड़ा किस सवालपर है।

आपने जो इतने सारे आन्दोलन शुरू किये उनके सम्बन्धमें अगर आप अपना मन्तव्य और दृष्टिकोण बार-बार स्पष्ट करनेको तैयार न हों तो मुझे तो लोगों द्वारा उनके गलत अर्थ लगाये जाने और अवांछनीय दिशामें मोड़ दिये जानेका खतरा बराबर मौजूद जान पड़ता है। जिन कार्रवाइयोंसे हिन्दुओं, मुसलमानों या अन्य धर्मावलम्बियोंके धार्मिक-प्रतीकोंके साथ राष्ट्रीय झण्डेकी स्पर्धा खड़ी हो सकती है, उनके परिणामोंके बारेमें सोचकर मुझे खास तौरसे डर लगता है। मन्दिरोंके रथों और शिखरोंपर राष्ट्रीय झण्डेको फहरानेकी प्रवृत्ति धर्मकी सर्वव्यापकता-विषयक मेरी भावनाको चोट पहुँचाती है और ईश्वरको राष्ट्रीय रूप दे देनेका यह प्रयास मुझे बहुत भोंड़ा लगता है।

राष्ट्रीय झण्डेकी मूल कल्पना और सारतः उसकी वर्तमान रचनाके जनकके नाते मुझे यह देखकर बहुत दुःख होता रहा है कि अकसर उसका कैसा दुरुपयोग किया जाता है और किस प्रकार लोग अपनी हिंसात्मक प्रवृत्तिपर परदा डालनेके लिए उसका उपयोग करते है। राष्ट्रीय झण्डेकी कल्पना सच्ची साम्प्रदायिक एकताके रूपमे अभिव्यक्ति पानेवाली अहिंसा और उस अहिंसामय श्रमके प्रतीकके रूपमे की गई है जिसे छोटे-बड़े सब आसानीसे कर सके और जिससे राष्ट्रीय सम्पत्तिकी अप्रकट रूपसे ही सही किन्तु ठोस वृद्धि करनेकी निश्चित सम्भावना है। लेकिन यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि उस दृष्टिसे आज यह तिरगे कपडेका एक टुकड़ा-भर है—और जरूरी नही कि वह टुकडा भी बराबर खादी ही हो। आज ऐसा नही कहा जा सकता कि इस झण्डेको ज्वलन्त साम्प्रदायिक एकता और सबको समान धरातलपर ला खडा करनेवाले तथा जिसमे छोटे-बडे सभी शरीक हो सके उस श्रमका प्रतीक होनेका गौरव प्राप्त है।[1] चरखोकी गुनगुनाहट गाँवोकी हजारो झोपड़ियोमे जरूर सुनी जा सकती है। लेकिन जैसा परिणाम अपेक्षित है उसकी तुलनामे यह कुछ भी नही है।

इसके अलावा अगर राष्ट्रीय झण्डा अहिंसाका प्रतीक है तो उसके साथ विनम्रता भी जुडी होनी चाहिए। अगर मेरा बस चले तो एक भी व्यक्तिके आपत्ति करनेपर मै ऐसी किसी सभामे राष्ट्रीय झण्डा न फहराने दूं जो विशुद्ध रूपसे कांग्रेसकी सभा न हो। किसी गैर-कांग्रेसी सभामे किसी आपत्तिको—चाहे वह सिर्फ एक व्यक्तिकी ओरसे ही क्यो न की गई हो—स्वीकार करके राष्ट्रीय झण्डेको न फहरानेसे उसकी गरिमामे कोई कमी नही आ सकती। उसकी गरिमामे कमी तब आयेगी जब हम उस सत्ताके भयसे इसे झुका दे जिसको हम समाप्त करना चाहते है। किन्तु यदि साम्प्रदायिक एकता तथा समस्त निहित अर्थो सहित चरखेमे हमारा जीवन्त विश्वास न हो और फिर भी हम सभाओ या कांग्रेस-कार्यालयोपर इसे फहराये तो उससे इसकी गरिमामे ज्यादा कमी आयेगी। राष्ट्रीय झण्डा कोई धार्मिक प्रतीक नही है। और यह सभी धर्मोका प्रतिनिधित्व करता है तथा सभीके पारस्परिक मेलजोलकी प्रेरणा देता है, इसलिए धार्मिक शोभा-यात्राओ या मन्दिरो या धार्मिक सभाओमे इसके लिए कोई स्थान नही है। अपनी जगहपर रहनेमे ही किसी चीजका महत्व है। अपने उचित स्थानसे अलग रहनेपर किसी चीजका कोई महत्व नही है। सहारा रेगिस्तानमे सोनेकी ईंट या नोटोका भला क्या महत्व? सच तो यह है कि आजकी तनावपूर्ण स्थितिमे जब तक सिर्फ बहुत बडे बहुमतकी ही नही, बल्कि एक-एक व्यक्तिकी सहमति न हो तब तक मै इसे सरकारी इमारतो या नगरपालिकाओके कार्यालयोपर भी नही फहराना चाहूँगा। मुझे तो यहाँ तक कहनेमे भी कोई झिझक नही है कि अगर

१. मूल अंग्रेजीमें इस वाक्यमें छपाईकी कुछ भूल रह गई है। इसलिए इसका अर्थ देते हुए *हरिजनबन्धु* में उपलब्ध गुजराती अनुवादका सहारा लिया गया है, क्योंकि अनुवाद न्यूनाधिक प्रामाणिक है।

राष्ट्रीय झण्डा अहिंसा और विनम्रताका प्रतीक है तो इसके विपक्षमें पड़नेवाले एक मतको भी — चाहे वह शरारतसे ही क्यों न डाला गया हो — पूरा महत्व दिया जाना चाहिए।

जाहिर है कि अपनी कलमकी ताकतपर जितना भरोसा मुझे है पत्र-लेखक भाईको उसपर उससे अधिक है। मैं लिख रहा हूँ तो कोई ऐसा मानकर नहीं कि जिन हलकों तक मैं इसका असर पहुँचाना चाहता हूँ उन तक असर पहुँचेगा ही। लेकिन पत्र-लेखक भाईके अनुरोधको अस्वीकार करना मेरे लिए उचित नहीं होगा। उनकी दलील और उनके पेश किये तथ्योंको मैं स्वीकार करता हूँ। अब इसका असर अपेक्षित हलकोंपर न हो, इस भयसे मैं लिखूँ ही नहीं, यह ठीक नहीं होगा। खैर, राष्ट्रीय झण्डेके जिन निहित अर्थोंका मैंने यहाँ उल्लेख किया है, उन तमाम अर्थोंके साथ उसमें अपनी श्रद्धाका इजहार करनेका मुझे जो यह एक मौका मिला है उसे तो मैं अपने लिए एक लाभ ही मानता हूँ।

बन्नू, २४ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

५१. पत्र : अमृत कौरको

बन्नू
२४ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

अभी तो तुम्हें मिलके बने कागजपर पेंसिलसे लिखे पत्रोंसे ही सन्तोष करना होगा। हाथके बने चमकीले कागजपर पेंसिल ठीकसे चलती ही नहीं।

हम बन्नू पहुँचे, तो पाया कि तुम्हारे दो पत्र यहाँ पहले ही आ चुके थे। 'ए वूमन्स लेटर'[१] का उपयोग शायद मैं 'हरिजन' के लिए करूँ। तुम्हारा काठियावाड़के विषयमें लिखा लेख[२] इस सप्ताह प्रकाशित होगा। हाँ, आखिरी अनुच्छेद या शायद दो अनुच्छेद निकाल दिये जायेंगे।

यूरोपकी स्थितिके सम्बन्धमें लिखे मेरे लेखोंका तत्काल कोई परिणाम निकलनेकी सम्भावना नहीं है। लेकिन अगर भारतने अहिंसाका ठीक विकास कर लिया तो उनका असर जरूर होगा। और भारतके ऐसा कर सकनेके बारेमें बहुत सन्देह है। शायद खुद मेरी अशुद्धि इसमें मुख्य बाधा है। जैसाकि मुझे लगता है, मेरे शब्द अपनी शक्ति खो बैठे हैं, और शुद्धिके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं, उनके अनुसार होना

१. देखिए "स्त्रियोंका विशेष कार्यक्रम", पृ० ५७-९।
२. देखिए "काठियावाड़-यात्राकी छाप", ४-११-१९३८।

भी यही चाहिए। फिर भी मैं श्रद्धापूर्वक आगे बढ़नेकी कोशिश कर रहा हूँ। अपने विचार, शब्द और कर्मके परिणामोके प्रति मुझे अनासक्ति प्राप्त करनी है। सतत प्रयत्नके बावजूद मैं अपनी अशुद्धिसे छुटकारा नही पा रहा हूँ, इसीके आधारपर, मैं कैसा हूँ, इसके बारेमे मै अन्तिम रूपसे कोई निर्णय नही करने जा रहा हूँ और न अपनी प्रवृत्तियोका त्याग ही करने जा रहा हूँ। अब शायद स्त्रियोके हृदय तक पहुँच पानेकी अपनी शक्तिके प्रति मेरे विश्वासको तुम समझ जाओगी। लेकिन यह तो बडी लम्बी गाथा है। जितना कहा गया है सहज ही कहा गया है। तुम चिन्ता न करना, क्योकि मैं खद भी कोई चिन्ता नही करता। अपनी अशुद्धिके बारेमे मैं बैठा-बैठा सोचता रहता होऊँ, ऐसी कोई बात नही है। देख रहा हूँ, वह साँप मेरे सामने है। उसके दाँत करैतसे भी ज्यादा विषाक्त है। इसलिए मै सावधान हूँ। मै चिन्ता नही करता, इसका सबसे बडा प्रमाण तो यही है कि मेरा रक्तचाप बराबर स्थिर है।

यह पत्र महादेवको भी दिखा दो तो अच्छा। लिखना शुरू किया था तो नही मालूम था कि यह इस तरह गम्भीर बन जायेगा। लेकिन एक तरहसे अच्छा ही हुआ। बस तुम्हारे प्रति अपने प्रेमके ही कारण ऐसी कुछ पंक्तियाँ लिख गया हूँ।

सप्रेम,

जालिम
याकि सबसे ताजा विरुदावलीके
अनुसार योद्धा

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४४) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४५३ से भी।

५२. पत्र : महादेव देसाईको

बन्नू
२४ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

इस समय मेरे पास कलम नही है इसलिए पेंसिलसे काम चला रहा हूँ। कुछ न लिखनेकी अपेक्षा पेंसिलसे मिलके बने कागजपर लिखना भी अच्छा है न?

आज यहाँ पहुँचनेपर तुम्हारे दोनो पत्र मिले। कान्तिके पत्रके बारेमे तुम जो लिखते हो, वह ठीक है। यदि सम्भव हुआ तो मै इसका उपयोग करूँगा। मैं देखूंगा। राजकुमारीको तो यही अश दिखाना था, अर्थात् सार, जिससे वह यह जानकर प्रसन्न हो कि कान्तिके विचार अच्छी तरह परिष्कृत होते जा रहे हैं।

उसके — राजकुमारीके — गुणोके बारेमे तुम जो कहते हो सो ठीक है। ऐसे सम्पर्क हमे विनम्र बनाते है और हमारी सेवावृत्तिको बढाते है। इस दृष्टिसे अनायास ही ऐसे अवसर प्राप्त होनेपर हमे उनका स्वागत करना चाहिए। अपना दौरा पूरा

करनेके बाद हम इस बारेमें विचार कर लेंगे कि तुम्हें क्या करना चाहिए। यहाँसे हम लोग ज्यादासे-ज्यादा १० नवम्बरको रवाना होंगे। इससे पहले भी चल सकते हैं। लीलावती तो इसे भी लम्बा खिंचना कहेगी। इसलिए मैं निश्चय ही यह सोचता हूँ कि यदि वह जगह तुम्हें अच्छी लगती हो और राजकुमारी वहाँ रहने तथा तुम्हें जतनसे रखनेको तैयार हो तो तुम वही रहो। सचमुच देखा जाये तो नवम्बर-दिसम्बरमें ही शिमला [का मौसम] सबसे अच्छा होता है। मैं यह सम्भव नही मानता कि तुम १० नवम्बर तक अपना काम सँभाल सकोगे। यह आराम बेकार नही जायेगा। तुम बहुत पुराना चढा हुआ कर्ज चुका रहे हो। इसलिए यदि शिमला नही तो कही अन्यत्र तुम्हें आराम लेनेके लिए अवश्य जाना चाहिए। जालन्धरके बारेमें तुम राजकुमारीसे सलाह-मशविरा करके देखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६८) से।

५३. पत्र : शारदा चि० शाहको

बन्नू
२४ अक्टूबर, १९३८

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिल गया है। किन्तु आज इतना समय नही है कि उसका विस्तृत उत्तर दे सकूँ। तू जो दिन गिनती रही है अब तो वे कम होते जा रहे है न?

मुझे वहाँ पहुँचकर तेरी खुराकमें कुछ रद्दोबदल करनी पडेगी। यहाँ बैठे हुए मैं ऐसा नही कर सकता। मणसालीभाईकी कुछ चाकरी बजाना क्या तेरे हिस्सेमे भी आता है? क्या घूमनेके लिए रोज अकेली ही जाती है? शकरीबहन[1] बाहर निकलती है या नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००१) से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. शारदा चि० शाहकी माता।

५४. स्त्रियोंका विशेष कार्यक्रम

सम्पादक, 'हरिजन'

महोदय,

हालके यूरोपीय संकटके सम्बन्धमें आपके लेख मैंने रसपूर्वक पढ़े हैं। इस अवसरपर आप यूरोपवासियोंको लक्षित करके दो शब्द कहें, यह स्वाभाविक ही था। जब मानवता विनाशके कगारपर खड़ी हो तो आप भला चुप कैसे रह सकते थे?

दुनिया क्या आपकी बात सुनेगी? यही सवाल है।

इंग्लैंडमें रहनेवाले मित्रोंके पत्रोंसे देखें तो इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि उस भयानक सप्ताहमें वहाँके लोगोंने घोर व्यथा भोगी। मुझे पूरा विश्वास है कि यही हाल सारी दुनियाका हुआ। शैतानियतकी सारी विचक्षणतासे युक्त आधुनिक युद्धशास्त्र और तज्जनित नरसंहार तथा पाशविकताकी सम्भावनाने निश्चय ही लोगोंको, जिस ढंगसे उन्होंने आज तक कभी नहीं सोचा, उस ढंगसे सोचनेको मजबूर कर दिया। एक अंग्रेज मित्रने लिखा है, "युद्ध टल जानेका समाचार मिलनेपर लोगोंने राहतकी जैसी साँस ली और प्रत्येक हृदयसे ईश्वरके प्रति जैसा कृतज्ञता-भाव छलक पड़ा उसे मैं यावज्जीवन नहीं भूल सकता।" लेकिन इस सबके बावजूद सवाल यह उठता है कि क्या केवल वर्णनातीत कष्टोंके भय, अपने सगे-सम्बन्धियोंको खो बैठनेके डर, अपने देशको अपमानित देखनेकी आशंकाके कारण ही लोग युद्धसे घृणा करते हैं? क्या किसी अन्य राष्ट्रके अपमानित होनेके भी मूल्यपर युद्ध टल जानेसे हम प्रसन्न हैं? यदि अपने सम्मानके ऐसे बलिदानकी माँग हमसे की गई होती तो क्या हमारी भावना अन्यथा होती? क्या हम युद्धसे घृणा इसलिए करते हैं कि यह विवादों को निबटानेका गलत तरीका है या केवल इसलिए कि हम इससे डरते हैं? यदि युद्धको सचमुच धरतीपर से सदाके लिए समाप्त हो जाना है तो ये कुछ सवाल हैं, जिनके उत्तर देना आवश्यक है।

संकटका समय गुजर जानेपर अब हम क्या देख रहे हैं? शस्त्रीकरणके लिए और भी जबरदस्त होड़, युद्धकी सम्भावनाको ध्यानमें रखकर नर-नारी, पैसे और प्रतिभा, युक्ति और कौशलके रूपमें उपलब्ध सारी युद्ध-सामग्रीका पहलेसे अधिक व्यापक और गहन संयोजन — यही न! "युद्ध कदापि नहीं होगा", निष्ठापूर्वक की गई ऐसी कोई घोषणा तो किसी क्षेत्रसे सुननेको

नहीं मिल रही! क्या इस सबका मतलब यह नहीं है कि युद्ध आज भले ही टल गया हो, लेकिन वह हमारे सिरपर कच्चे धागेसे बँधी नंगी तलवारकी तरह लटक रहा है?

एक नारीके नाते मुझे यह बात बराबर कचोटती है कि नारी-जातिने विश्व-शान्तिमें वैसा योगदान नहीं किया है, जैसाकि उसकी सहजवृत्ति और इस क्षेत्रमें उसके विशेषाधिकारकी दृष्टिसे अपेक्षित है। जब कभी मैं स्त्रियोंके सहायक सैन्य-दल खड़े किये जाने, लड़ाईके मैदानमें और पिछली पंक्तियोंमें स्त्रियाँ पूरा योगदान कर सकें, इस दृष्टिसे उनके सेनामें भरती किये जाने या उनके द्वारा स्वेच्छासे अपनी सेवाएँ अर्पित किये जानेका समाचार सुनती या पढ़ती हूँ तो मुझे बहुत दुःख होता है। लेकिन सचाई यह है कि जब युद्ध छिड़ जाता है तब स्त्रियोंके ही हृदय व्यथासे रुदन करते हैं, उन्हींकी आत्मा क्षत-विक्षत होती है। इस व्यथाका वर्णन शब्दोंमें नहीं किया जा सकता। क्या कारण है कि हम स्त्रियाँ इतने युग बीत जानेपर भी उस वस्तुको ग्रहण नहीं कर पाई हैं जो अधिक श्रेष्ठ है, अधिक उदात्त है? क्यों हमने घृणित और नृशंस पशुबलके सामने चुपचाप अपने घुटने टेक दिये? यह सब हमारे आध्यात्मिक विकासकी दयनीय स्थितिका द्योतक है। हम अपने उच्च कर्तव्यको समझ पानेमें असफल रहे हैं। मेरा निश्चित विश्वास है कि यदि स्त्रियोंको अहिंसाकी शक्ति और महिमाकी हार्दिक अनुभूति हो जाये तो इतनेसे ही संसार स्वर्ग बन जाये।

आप हम भारतीय स्त्रियोंको प्रेरित और संगठित क्यों नहीं करते हैं? क्यों नहीं आप हमें अपनी 'शक्ति-भुजा' बनानेका प्रयत्न करते? मेरी कैसी उत्कट लालसा रही है कि आप इसी उद्देश्यसे एक बार सम्पूर्ण भारतका दौरा करें। मुझे विश्वास है कि आपको हमारी ओरसे अद्भुत उत्साहका परिचय मिलेगा, क्योंकि भारतीय स्त्रियोंका हृदय शुद्ध और खरा है और विश्वके किसी भी हिस्सेके नारी-समाजके पास त्याग और आत्म-बलिदानकी हमसे श्रेष्ठ परम्परा नहीं है। यदि आप हमें किसी लायक बनानेका दायित्व अपने सिर ले लें तो इस त्रस्त और आतंकित विश्वको हम कदाचित् शान्तिका मार्ग दिखानेके लिए — चाहे जितना कम हो, किन्तु — कुछ कर सकें। कौन जाने?

२२-१०-१९३८ एक स्त्री

यह पत्र मैं किंचित् संकोचके साथ ही प्रकाशित कर रहा हूँ। भारतकी नारी-जातिके अन्तःकरणको जाग्रत करनेकी मेरी क्षमताके प्रति पत्र-लेखिकाने जो श्रद्धा व्यक्त की है, वह मुझे अच्छी तो जरूर लगी, लेकिन मुझमें इतना विनय अवश्य है कि मैं अपनी मर्यादाओंको पहचान सकूँ। मुझे लगता है कि मेरे यात्रा करनेके दिन अब बीत चुके हैं। लिखकर जितना-कुछ मैं कर सकता हूँ, उतना जरूर करता रहूँगा। लेकिन

मूक प्रार्थनाकी प्रभावकारितामे मेरी श्रद्धा दिन-दिन बढती जा रही है। यह अपने-आपमे एक कला है—कदाचित् सबसे ऊँची कला, जो अत्यन्त सूक्ष्म और अनवरत अभ्यासकी अपेक्षा रखती है। यह तो मै मानता हूँ कि अपने आचरण द्वारा अहिंसा को उसके उच्चतम और श्रेष्ठतम रूपमे अभिव्यक्ति देना नारी-जातिका विशेष कर्तव्य है। लेकिन स्त्रियोके अन्त करणको जाग्रत करनेके लिए किसी पुरुषकी जरूरत क्यो हो? यदि यह अनुरोध मुझसे पुरुषके नाते नही, बल्कि जिसका आचरण सामूहिक रूपसे किया जा सके, ऐसी अहिंसाके (जैसाकि खयाल है) सबसे अच्छे प्रतिपादकके रूपमे किया गया हो तो मै कहूँगा कि अभी मै भारतकी स्त्रियोको इस सिद्धान्तकी शिक्षा देते फिरनेकी किसी अन्तर्प्रेरणाका अनुभव नही करता। पत्र-लेखिकाको मै आश्वस्त करता हूँ कि उनके अनुरोधका उत्तर देनेकी मुझमे इच्छा न हो, ऐसी कोई बात नहीं है। मेरी धारणा कुछ ऐसी है कि अगर काग्रेस-सगठनके पुरुष सदस्य अहिंसामे अपनी श्रद्धा अक्षुण्ण रखते है और अहिंसात्मक कार्यक्रमको ईमानदारीके साथ पूरा-पूरा लागू करते है तो स्त्रियाँ अपने-आप उस रास्तेको अपना लेगी। और तब हो सकता है कि उनमे से कोई ऐसी निकल आये जो, जितनी दूर तक मै खुद जा पानेकी आशा कर सकता हूँ, उससे बहुत आगे तक जा सके, सो इसलिए कि अहिंसाके क्षेत्रमे खोज करने और साहसपूर्ण कदम उठानेकी दृष्टिसे स्त्रियाँ पुरुषोसे अधिक सक्षम है। कारण, जैसाकि मै मानता हूँ, जिस तरह पशुबलका परिचय देने के लिए अपेक्षित साहस पुरुषोमे स्त्रियोकी अपेक्षा अधिक है, उसी तरह आत्म-बलिदानके लिए जरूरी हिम्मतकी दृष्टिसे स्त्रियाँ पुरुषोसे कही श्रेष्ठ है।

बन्नू, २५ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजी]
हरिजन, ५-११-१९३८

५५. पत्र : मोतीलाल रायको

बन्नू
२५ अक्टूबर, १९३८

प्रिय मोती बाबू,

आपका प्रेमपूर्ण तार मिला। किन्तु यह पत्र मैं आपको धन्यवाद देनेके लिए नही लिख रहा हूँ—वह तो मै समाचारपत्रोके माध्यमसे दे ही चुका हूँ—बल्कि आपको यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि प्रवर्तक सघपर अखिल भारतीय चरखा संघका जो कर्ज निकलता है वह मेरे सिरपर कितना भारी बोझा है। उस सौदेके लिए मै ही मुख्यतया जिम्मेदार हूँ। आप समझ सकते है कि मुझे आपकी खरी सौदेदारी और आपकी ईमानदारीपर कितना भरोसा था। हम दोनो सार्वजनिक संस्थाएँ-जैसे है और इसी कारण मै आपसे कहूँगा कि हमारा आपसी व्यवहार

सामान्य व्यापारियोके बीच होनेवाले व्यवहारसे कही अधिक सच्चा होना चाहिए। कृपया देखिएगा कि ऋणकी अदायगी हो जाये।

सप्रेम,

आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

पत्रोत्तर वर्धाके पतेपर दें।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०५०) से।

५६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

बन्नू
२५ अक्टूबर, १९३८

बा,

अब तू अच्छी हो गई है इसलिए मैं तुझे लिखनेमें आलस्य करता हूँ। इन दिनो हमारा दौरा चल रहा है इसलिए पोस्टकार्ड लिखनेका समय भी मुश्किलसे मिल पाता है। किन्तु तुझे तो पत्र लिखवाना चाहिए। यहाँ सब-कुछ ठीक चल रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२१५) से।

५७. पत्र : विद्या आ० हिंगोरानीको

बन्नू
२५ अक्टूबर, १९३८

चि० विद्या,

काफी अर्सेके बाद तेरा खत मिला। मै राजी हुआ। जमनालालजीकी इजाजत लेकर महिला आश्रम दिल चाहे तब आ सकती है। अब कुछ कानून बदले है। मै नवेंबरकी १२ तारीखको शायद वर्धा पहोचुगा। आनदका खत महादेवपर मैंने देखा था। जहा तक हो सके मै खत लिखनेसे बचता रहता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी।

५८. भाषण : बन्नूमें[1]

२५ अक्टूबर, १९३८

शायद आपको मालूम होगा कि दो महीनेसे भी अधिक समयसे मैं पूरा मौन रखता आ रहा हूँ। उससे मुझे लाभ हुआ है और मेरा तो खयाल है कि देशको भी हुआ है। मूलत तो मैंने यह मौन एक तीव्र मानसिक व्यथाके शमनके उद्देश्यसे लिया था, लेकिन बादमे जब इसका लाभ दिखाई पडा तो मैंने इसे अनिश्चित काल तक जारी रखनेका निश्चय किया। इस मौनने मेरे लिए रक्षा-प्राचीरका काम किया है और इसीका प्रताप है कि इधर मैं अपने काम भी पहलेकी अपेक्षा अधिक अच्छे ढगसे निबटाता रहा हूँ। जब मैं इस प्रान्तमे आया था, तब मैंने यह तय कर रखा था कि मौन तोडूँगा तो सिर्फ खुदाई खिदमतगारोसे बातचीत करनेके लिए ही, लेकिन खानसाहबके आग्रहके सामने मुझे झुकना पडा।

आपके मानपत्रोमे मेरी बड़ी प्रशस्ति की गई है और यहाँ आनेपर मेरे प्रति कृतज्ञता व्यक्त की गई है। मैं नहीं समझता कि मैं प्रशसा या आभारका पात्र हूँ। मैं जानता हूँ कि आपकी अपेक्षाएँ पूरी करनेके लिए मैं कुछ खास नही कर सकता। मैं सीमाप्रान्त केवल खुदाई खिदमतगारोसे मिलने और व्यक्तिगत रूपसे उनकी अहिंसा वृत्तिको समझनेके लिए आया हूँ। आपके कस्बेमे मैं प्रसगवश ही आ गया हूँ।

मैंने आपके शिष्टमण्डलोसे मिलने और मुझे जो कागज दिये गये, उनको पढने मे आज कई घंटे लगाये। बन्नूपर हुए हालके हमलो और उन हमलोके दौरान आप पर जो-कुछ बीता उसके बारेमे जानकर मैं बहुत व्यथित हुआ। इस प्रान्तकी हालत कुछ अजीब है। दूसरे प्रान्तोसे इसकी स्थिति भिन्न है, क्योकि यह एक ओरसे ऐसे सीमावर्ती कबीलोसे घिरा हुआ है जिनका धन्धा ही लूट-मार करना है। जहाँ तक मुझे मालूम हो पाया है, वे किसी प्रकारकी साम्प्रदायिक भावनासे प्रेरित नही है। हमलोके पीछे उनका मंशा अपनी बुनियादी जरूरते पूरी करनेका ही जान पडता है। उनसे ज्यादातर हिन्दू ही तबाह होते है, इसका कारण शायद यह है कि उनके पास अधिक पैसा है। लोगोके अपहरणके पीछे भी यही मशा दीखता है।

ये हमले होते रहते है, यह बात मेरी दृष्टिमे भारतके इस हिस्सेमे ब्रिटिश शासनकी विफलताकी द्योतक है। उसकी सीमा-नीतिके कारण देशके हजारो लोगोको प्राण गँवाने पडे है और भारतको करोडो रुपयेका नुकसान हुआ है। बहादुर कबायली

१. इस सभामें लोग काफी बडी तादादमें उपस्थित थे। गांधीजी को बन्नू जिला कांग्रेस कमेटी और सेवा समिति, चाँदनी चौककी ओर से मानपत्र भेंट किये गये थे। यहाँ उन्होंने जो भाषण दिया उसकी रिपोर्ट **हिन्दुस्तान टाइम्स**, और **बॉम्बे क्रॉनिकल** में भी प्रकाशित हुई थी।

लोग अब भी अजेय बने हुए हैं। आज मैंने जो-कुछ सुना है वह सब अगर सारत सच हो—और मैं मानता हूँ कि सच ही है—तो कहना होगा कि इस प्रान्तके अधिकांश हिस्सोमे जान-माल सुरक्षित नही है।

आज मुझसे ऐसे बहुत-से लोग मिले जिनके सगे-सम्बन्धी और प्रियजन हमलावरो के द्वारा या तो मार दिये गये है या रकम ऐठनेके लिए अपहृत कर लिये गये हैं। उनकी करुण कथाएँ सुनकर मेरा अन्तर रो उठा और मेरा मन उनके प्रति सहानुभूतिसे भर गया। लेकिन मुझे आपके सामने स्वीकार करना चाहिए कि उनका दुःख दूर करनेकी मुझमे चाहे जितनी तीव्र इच्छा हो, किन्तु मेरे पास ऐसी कोई जादुई ताकत नही है जिसके बलपर मै अपहृत लोगोंको अपने-अपने परिवारोमे वापस ला सकूं। इसी तरह सरकार या काग्रेसी मन्त्रिमण्डलसे भी आपको कोई खास आशा नही रखनी चाहिए। जब-जब किसीका अपहरण किया जाये, तब-तब अपना लाव-लश्कर लेकर प्रतिकारके लिए सामने आ जाना किसी भी सरकारके लिए सम्भव नही है और ब्रिटिश सरकारकी तो ऐसा-कुछ करनेकी इच्छा भी नही दिखाई देती। हाँ, अगर अपहृत व्यक्ति शासक जातिका हो तो वह कुछ भी कर सकती है।

सब-कुछ देखने-जाननेके बाद मुझे ऐसा लगा है कि यहाँ काग्रेसी शासनकी स्थापनाके बाद सीमा पारके हमलोकी दृष्टिसे स्थिति और भी खराब हो गई है। काग्रेसी मन्त्रियोका पुलिसपर कोई प्रभावकारी नियन्त्रण नही है, सेनापर तो बिलकुल ही नही। इस प्रान्तके काग्रेसी मन्त्रिमण्डलका अधिकार तो अन्य प्रान्तोकी अपेक्षा भी कम ही हैं। इसलिए मुझे लगता है कि अगर डॉ० खानसाहब इन हमलोकी समस्याका सफलतापूर्वक सामना नही कर सकते तो उनके लिए त्यागपत्र दे देना ही शायद बेहतर होगा। यदि हमले बढते ही गये तो इस प्रान्तमे काग्रेसके अपनी सारी प्रतिष्ठा खो बैठनेका खतरा है। लेकिन मेरी चाहे जो राय हो, इस बातका फैसला तो आपको खुद ही करना है कि मैंने जो कठिनाइयाँ बताई है उनके बावजूद आप काग्रेसी मन्त्रिमण्डल ही कायम रखना चाहेगे या कोई और शासन चाहेगे। आखिर मुख्यमन्त्री आपके सेवक ही तो हैं। वे मतदाताओ, प्रान्तीय काग्रेस कमेटी और कार्य-समिति इन तीनोकी मर्जीसे ही तो पदारूढ हैं।

आज मुझसे मिलनेवाले कुछ लोगोने पूछा कि अपनी सुरक्षाके लिए सीमाप्रान्त छोडकर किसी अन्य हिस्सेमें बसना क्या उनके लिए उचित होगा। मैंने उनसे कहा है कि अगर सम्मान और सुरक्षाके साथ रहनेका कोई और रास्ता न हो तो कही और जा बसना बिलकुल मुनासिब उपाय है।[1] फिर, मुझसे यह शिकायत भी की गई है कि पहले तो जहाँ हमले होते थे वहाँके मुसलमान बाशिन्दे हमलावरोकी मदद करते थे, लेकिन सीमाप्रान्त अपराध विनियमन अधिनियमके रद किये जानेके बादसे उन्होने मदद करना छोड दिया है, जिससे हमलावरोको बढावा मिला है। यह बात सच हो सकती है, लेकिन मैं आपको आगाह कर दूं कि अगर आप अपनी सुरक्षाके लिए दूसरोकी सशस्त्र शक्तिपर निर्भर रहते है तो आपको देर-सवेर अपने उन संरक्षकोकी सत्ताके अधीन हो जानेको तैयार रहना चाहिए। बेशक आपको हथियारबन्द

होकर अपनी रक्षा करनेकी कला सीखनेका पूरा अधिकार है। आपको अपने बीच सहयोगकी भावना पैदा करनी चाहिए। कायरताका आचरण तो आप किसी भी हालतमे न करे। आत्मरक्षा हर आदमीका जन्मसिद्ध अधिकार है। मै भारतमे एक भी कायर आदमी नही देखना चाहता।

चौथा विकल्प है अहिंसाका मार्ग और मै आपको यही राह सुझाना चाहता हूँ। यह आत्मरक्षाका सबसे अचूक रास्ता है। इस रास्तेपर चलकर आप कभी विफल हो ही नही सकते। अगर मेरा बस चले तो मै कबायलियोके बीच जाकर रहूँ और उन्हे समझाऊँ-बुझाऊँ, और मुझे पूरा विश्वास है कि प्रेम और बुद्धिपूर्वक समझाई गई बातका उनपर असर न पड़े, ऐसा नही हो सकता। लेकिन मै जानता हूँ कि आज मेरे लिए वहाँ जानेका द्वार बन्द है। सरकार मुझे कबायली क्षेत्रमे जानेकी इजाजत नही देगी।

कबायली लोगोको जैसे खूँखार रूपमे पेश किया जाता है, वैसे खूँखार वे हो नही सकते। वे भी मेरी और आपकी तरह मनुष्य है और अगर उनके साथ मानवीय सवेदनापूर्वक पेश आया जाये तो उनपर उसका असर जरूर होगा, लेकिन आज तक तो उनके साथ हम इस तरह कभी पेश आये ही नही। आज दोपहर कई वजीरी मुझसे मिल गये है। मुझे तो ऐसा नही लगा कि उनका स्वभाव अन्यत्र रहनेवाले आदमीके स्वभावसे कोई खास अलग था।

मनुष्य स्वभावसे बुरा नही होता। पशु-स्वभावको भी प्रेमके प्रभावके वशीभूत होते देखा गया है। इसलिए हमे मानव-स्वभावके सम्बन्धमे कभी हताश नही होना चाहिए। आप सब व्यापारी-जातिके लोग है। अपने व्यापारमे से आप ससारकी उस सर्वोच्च और सर्वाधिक मूल्यवान वस्तुको — अर्थात् प्रेमको — अलग न रखे। आप कबायली लोगोपर जितना प्रेम बरसा सके, बरसाये। फिर आप देखिएगा कि बदलेमे आपको भी वैसा ही प्रेम मिल रहा है।

धमकीमे आकर या अपने अपहृत लोगोको छुडानेके लिए हमलावरोको धन देकर सुरक्षा खरीदनेकी कोशिश करनेका मतलब तो उन्हे और भी हमले करनेका सीधा निमन्त्रण देना होगा। इससे आपका भी नैतिक पतन होगा और कबायलियोका भी। उनको इस तरह पैसा देनेसे अधिक समझदारीका रास्ता तो यह होगा कि आप उन्हे उद्योग-धन्धा सिखाकर उनकी दरिद्रता दूर करे, और इस तरह उनको लूट-मारकी राह ले जानेवाले मुख्य कारणको ही मिटा दे।

इस विषयमे खुदाई खिदमतगारोसे मेरी बातचीत चल रही है और खानसाहबके सहयोगसे इसके लिए मै एक योजना तैयार कर रहा हूँ। यदि यह योजना फलीभूत होती है और खुदाई खिदमतगार सच्चे खुदाई खिदमतगार बन जाते है तो उनके प्रेम और त्यागके उदाहरणका असर गुलाबकी खुशबूकी तरह कबीलो तक पहुँचेगा, और हो सकता है, शायद उसीमे से सरहदके सवालका कोई स्थायी हल निकल आये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-११-१९३८

५९. बातचीत: खुदाई खिदमतगारोंके साथ

बन्नू
[२६ अक्टूबर, १९३८ या उसके पूर्व][1]

गांधीजी ने बलवानकी अहिंसा तथा निर्बलकी अहिंसाके बीचका अन्तर समझाया। उन्होंने परोपकारार्थ या राजनीतिक हित-साधनके लिए किये जानेवाले रचनात्मक-कार्य और अहिंसासे जुड़े हुए रचनात्मक-कार्यका अन्तर भी समझाया और कहा कि अहिंसा से जुड़ा हुआ रचनात्मक-कार्य असीम सम्भावनाओंसे युक्त एक उद्धारकारी शक्ति बन जाता है। उन्होंने बताया कि भारतमें अहिंसाका आन्दोलन किस प्रकार आरम्भ किया गया था। करोड़ों लोग उस समय ऐसा सोचते थे कि वे ब्रिटिश सरकारका मुकाबला तलवारके बलपर नहीं कर सकते, क्योंकि ब्रिटिश सरकारके पास ज्यादा बेहतर शस्त्रास्त्र थे। मैंने उन्हें बताया कि अगर आप तलवार हाथमें लेकर लड़ने जाते हैं तो भी आपको मौतका सामना करनेको तैयार रहना होगा। अगर हाथकी तलवार टूट गई तब तो मृत्यु निश्चित होगी। तब वे बिना दूसरेको मारे खुद मरनेकी कला क्यों न सीख लें और शत्रुके विरुद्ध अपनी आत्माकी शक्तिका प्रयोग क्यों न करें? सरकार उन्हें कैद कर सकती है या उनकी सम्पत्ति जब्त कर सकती है या उन्हें मार भी डाल सकती है। इससे क्या फर्क पड़ता है। मेरी यह बात उनको जँच गई है। लेकिन दिल-ही-दिलमें उनमें से बहुतोंको ऐसा लगता रहा कि अगर उनके पास पर्याप्त मात्रामें शस्त्रास्त्र होते तो वे युद्ध करते। उन्होंने अहिंसाको इसलिए स्वीकार किया, क्योंकि इसके सिवा और कुछ था नहीं। दूसरे शब्दों में कहें तो उनके दिलमें हिंसा थी। बस, उन्होंने कार्यरूपमें उसका त्याग किया था। यह अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा थी, वीरोंकी नहीं। लेकिन तिसपर भी इस अहिंसाने उन्हें ज्यादा शक्तिशाली बनाया। मैं आज आपसे यह कहने आया हूँ कि अहिंसाको कमजोरोंका हथियार समझना या उस रूपमें अंगीकार करना बहुत बड़ी गलती होगी। यदि खुदाई खिदमतगारोंने यह गलती की तो यह बड़े दुःखकी बात होगी।

अगर आप बादशाह खानके कहनेसे शस्त्र-त्याग कर दें लेकिन उसे अपने दिलसे न निकालें, तो आपकी अहिंसा क्षणजीवी सिद्ध होगी — यह चार दिनका चमत्कार भी नहीं होगी। कुछ वर्षों बाद आप फिर हथियार हाथमें उठाना चाहेंगे, लेकिन तब आप पायेंगे कि आपका अभ्यास छूट गया है, और उस हालतमें आप हिंसा और अहिंसा, इन दोनों ही आदर्शोंसे वंचित हो जायेंगे। वैसी स्थितिमें आपके पास पछतानेके सिवा कुछ न बचेगा। मैं आपसे एक अनोखी चीज माँगता हूँ, और वह यह है

१. गांधीजी बन्नूसे २६ अक्टूबरको रवाना हुए थे।

कि सामर्थ्य होते हुए भी आप तलवारका प्रयोग नही करेगे, और तब विजय सुनिश्चित है। दुश्मनकी तलवार टूट भी क्यो न गई हो, आप उसकी टूटी तलवारके आगे अपनी गर्दन कर देगे। ऐसा आप क्रोधमे और दिलमे बदलेकी भावना रखते हुए नही, बल्कि प्रेम रखते हुए करेगे। यदि आपने अहिंसाको सचमुच इस अर्थमे समझ लिया है तो तलवारका इस्तेमाल आप कभी करना ही नही चाहेगे, क्योकि आपको उसके बदले एक कही ज्यादा बेहतर चीज मिल गई होगी।

आप पूछेगे, 'इन सब चीजोका ब्रिटिश सरकारपर किस तरह असर पड़ेगा ?' मेरा जवाब है कि अपनी निःस्वार्थ सेवाके जरिये भारतके सभी लोगोको प्रेमके समान सूत्रमे पिरो लेनेके बाद हम देशका वातावरण इस तरह बदल सकते है कि अंग्रेज लोग उसका विरोध कर ही नही सकेगे। आप कहेगे कि अग्रेजपर प्रेमका असर होता ही नही। लेकिन मेरा लगातार तीस वर्षका अनुभव इससे भी भिन्न है। आज १७,००० अंग्रेज ३० करोड भारतीयोपर इसलिए राज्य कर पाते है क्योकि हमारे अन्दर भय व्याप्त है। अगर हम एक-दूसरेसे प्रेम करना सीख ले, यदि हिन्दू और मुसलमान, सवर्ण और अछूत, अमीर और गरीबके बीचकी खाई पट जाये तो मुट्ठी-भर अग्रेज हमारे ऊपर अपना शासन कायम रखनेकी हिम्मत ही नही करेगे।

जिस प्रकार सशस्त्र युद्धके कुछ नियम होते है उसी तरह अहिंसक युद्धके भी कुछ नियम है। इन नियमोका पूरी तरह पता नही चलाया गया है। हिंसामे आप बुरे काम करनेवालेको दंडित करते है, अहिंसामे आप उसपर तरस खाते है, और उसे एक रोगी मानते है जिसका उपचार आप अपने प्रेमसे करते है।

अग्रेजोको अहिंसात्मक उपायसे निकाल बाहर करनेके लिए आपको करना क्या होगा ? अगर आप हिंसात्मक उपायसे काम लेना चाहते है तो आपको कवायद सीखनी होगी और शस्त्रास्त्रोके प्रयोगमे दक्षता प्राप्त करनी होगी। यूरोप और अमेरिकामे बच्चो और स्त्रियों तकको इसकी शिक्षा दी जाती है। इसी प्रकार जिन लोगोने हिंसाके हथियारको अपनाया है, उन्हे अहिंसाके अनुशासनका कडा अभ्यास करना होगा।

इसके बाद गांधीजी ने रचनात्मक-कार्यक्रम, और अहिंसाकी योजनामें एक गतिशील शक्तिके रूपमें उसके स्थानके बारेमें बताया। उन्होंने कहा कि मैंने अहिंसाका कार्यक्रम १९२० में देशके सामने रखा था। यह कार्यक्रम दो भागोंमें विभाजित था। एक था असहयोग, दूसरा था रचनात्मक-कार्यक्रम। रचनात्मक-कार्यक्रममें साम्प्रदायिक एकता, अस्पृश्यताका उन्मूलन, मद्य-निषेध, शराब और नशीली वस्तुओंके प्रयोगकी बुराईका समूल नाश, खादीका प्रचार, हाथ-कताई, हाथ-बुनाई और अन्य कुटीर-उद्योग शामिल थे। लेकिन इन सब चीजोंको राजनीतिक जरूरतके रूपमें नहीं, बल्कि अहिंसाके कार्यक्रमके एक अभिन्न अंगके रूपमें कार्यान्वित करना था। यह अन्तिम चीज ही सबसे ज्यादा महत्वकी थी। उदाहरणके लिए, जरूरतके तौरपर हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित करना एक बात थी और अहिंसाके अभिन्न अंगके रूपमें उसे स्वीकार करना दूसरी बात थी।

जरूरतके दबावमें आकर स्थापित की गई एकता ज्यादा दिन नहीं चलती। जिस राजनीतिक आवश्यकताके अधीन एकता स्थापित की गई थी, उस आवश्यकताके समाप्त होते ही उसका त्याग कर दिया जायेगा। यह एक चाल या चकमा भी हो सकता है। किन्तु जब उसे अहिंसाके कार्यक्रमके अभिन्न अंगके रूपमें अपनाया जायेगा तब उसकी जड़में प्रेमके सिवा कुछ भी नहीं होगा, और इस एकतापर दिलके खूनसे मुहर लगी होगी।

इसी प्रकार चरखेका सम्बन्ध भी अहिंसासे जोड़ना होगा।

आज भारतमें करोड़ों बरोजगार बेसहारा लोग हैं। उनसे निपटनेका एक तरीका तो यह है कि उन्हें अपनी मौत मर जाने दिया जाये ताकि दक्षिण आफ्रिकाकी ही तरह यहाँ भी बचनेवाले लोगोंके लिए प्रति व्यक्ति ज्यादा रकबा जमीन बचेगी। यह तरीका हिंसाका तरीका होगा। दूसरा तरीका, अहिंसाका तरीका आखिर तक बराबर-बराबर बाँटकर खानेका है। इसमें हमसे अपेक्षा की जाती है कि ईश्वरके रचे हुए तुच्छ-से-तुच्छ जीवका भी हम पूरा आदर करें। इस सिद्धान्तको माननेवाला व्यक्ति जो चीज तुच्छ-से-तुच्छ जीवके साथ बाँटकर नहीं खा सकता, उसे वह स्वयं भी नहीं लेगा। यह बात उन लोगोंपर भी लागू होती है जो अपने हाथोंसे मेहनत करते हैं — श्रमिक-वर्गके अपेक्षाकृत ज्यादा अच्छी स्थितिवाले लोगोंको उन लोगोंके साथ मिल-जुलकर रहना चाहिए जो उन-जैसे भाग्यशाली नहीं हैं।

इसी तरहसे सोचते हुए, गांधीजी बोले, मेरे मनमें आखिर चरखेकी बात आई।

लोगोंसे चरखेको अपनानेके लिए जब मैंने पहली बार कहा, उस समय तक मैंने चरखा देखा तक नहीं था। सच तो यह है कि 'हिन्द स्वराज्य' में मैंने उसे हथकरघा कहा है, क्योंकि मुझे चरखे और हथकरघेका फर्क ही नहीं पता था। मेरे मनकी आँखोंके सामने गरीब, भूमिहीन मजदूरकी तस्वीर थी जिसके पास कोई रोजगार या जीवनयापनका कोई साधन नहीं था और जो गरीबीके भारके नीचे पिसा जा रहा था। मैं उसे कैसे बचा सकता हूँ, यह थी मेरी समस्या। आज भी जब मैं आप लोगोंके साथ आरामके वातावरणमें बैठा हूँ, मेरा मन अपनी टूटी-फूटी झोपड़ियोंमें रहनेवाले गरीब और दलित लोगोंके साथ ही है। मैं उनके बीचमें ज्यादा अच्छा महसूस करूँगा। यदि मैं सुख-सुविधाके मोहमें फँस जाऊँ तो अहिंसाके एक उपासकके रूपमें मेरा पतन हो जायेगा। मेरे और गरीबोंके बीच एक जीवन्त कड़ी का काम दे सके, वह चीज क्या है? इसका उत्तर है चरखा। जीवनमें किसीका धन्धा या दर्जा कुछ भी क्यों न हो, यदि वह चरखेको उसके पूरे फलितार्थोंके साथ स्वीकार करता है तो चरखा उसे और गरीबोंको जोड़नेवाला स्वर्ण-सेतु सिद्ध होगा। उदाहरणके लिए, अगर मैं एक डॉक्टर हूँ तो यज्ञका सूत कातते समय मैं सोचूँगा कि किस प्रकार मैं बेसहारा लोगोंके दुखोंको कम कर सकता हूँ। उस समय मैं महलोंमें रहनेवालोंके बारेमें नहीं सोचूँगा जिनसे मुझे मोटी फीस मिल सकती है। चरखा कोई मेरी ईजाद नहीं है। यह पहले भी था। मेरी खोज तो इसमें है कि मैंने इसको अहिंसा और आजादीके कार्यक्रमके साथ जोड़ दिया।

ईश्वरने मेरे कानमे कहा. 'यदि तुम अहिंसाके जरिये काम करना चाहते हो तो तुम्हे छोटी-छोटी चीजोको लेकर चलना चाहिए, बड़ी-बडी चीजोको नही।' मैंने जैसी कल्पना की थी, यदि उसी रूपमे हमने चार-सूत्री रचनात्मक-कार्यक्रमको उसके समग्र रूपमे कार्यान्वित किया होता तो आज हम अपने मालिक आप होते। कोई विदेशी ताकत अपनी बुरी निगाह हमारी ओर डालनेकी हिम्मत नही कर सकती थी। अगर हमारे बीचमे ही दुश्मन न होते तो किसी बाहरी शत्रुकी हिम्मत नही थी कि आकर हमारा नुकसान करे। अगर कोई आता भी तो हमने उसे अपने अन्दर आत्मसात कर लिया होता और वह हमारा शोषण न कर पाता।

इस प्रकारकी अहिंसा है जो मै चाहता हूँ कि आप अपने अन्दर पैदा करे। मै चाहता हूँ कि आप खरा सोना हो, इसके सिवा कुछ नही। बेशक, आप मुझे धोखा दे सकते है। अगर वैसा करेगे तो मै खुद अपनेको ही दोष दूंगा। लेकिन यदि आप सच्चे है तो आपको अपने कार्योसे यह सिद्ध करना है कि किसीको लाल-कुर्तीवालेसे डरनेकी जरूरत नही है और न ही एक भी लालकुर्तीवालेके जिन्दा रहते उसे भय करनेकी कोई जरूरत है।

[अंग्रेजीसे]
ए पिल्ग्रिमेज फॉर पीस, पृ० ९७-१०१

६०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

२६ अक्टूबर, १९३८

महाराजा साहबके जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमे त्रावणकोरके सत्याग्रही कैदियोको आम माफी देनेपर मै महाराजा साहब, महारानी साहिबा तथा दीवान साहबको बधाई देता हूँ। अब यह आशा करना स्वाभाविक ही होगा कि इस माफीको फलप्रद बनाने और शान्तिको स्थायित्व प्रदान करनेके लिए अब अलग-अलग दो समितियोकी भी नियुक्ति कर दी जायेगी, जिनमे से एकका काम विगत घटनाओकी जाँच करना होगा और दूसरीका महाराजा साहबके तत्वावधानमे स्थापित किये जाने-वाले उत्तरदायी शासनका स्वरूप निर्धारित करना होगा।

दीवान साहबके विरुद्ध लगाये गये आरोप अभी जहाँ-के-तहाँ है। मै एक बार फिर इन्हे वापस ले लेनेका अनुरोध करूँगा। उनके वापस ले लिये जानेका मतलब यह नही होगा कि अधिकारी उनकी सचाईके बारेमे अविश्वास करे। उन्हे ये आरोप उच्चतर हितोको ध्यानमे रखकर वापस लेने चाहिए। उत्तरदायी शासनके प्रश्नको इन आरोपोके साथ जोडकर उलझन नही पैदा की जानी चाहिए। और जनताके हाथोमे सत्ता सौपनेके प्रश्नके सामने इन आरोपोका महत्व भी क्या हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१०-१९३८

६१. भाषण : लक्कीमें[1]

२६ अक्टूबर, १९३८

अहिंसाके अपने पचास वर्षोंके अनुभवके आधारपर मैं आपसे कहता हूँ कि पशुवलकी तुलनामें इसकी शक्ति अनन्त गुनी अधिक है। किसी सशस्त्र सिपाहीको अपने हथियारो — अपनी वन्दूक या तलवार — पर निर्भर करना होता है और आम तौर पर वह अन्तमें असहाय हो जाता है। लेकिन जिस व्यक्तिने अहिंसाके सिद्धान्तको हृदयगम कर लिया है उसके पास ईश्वर-प्रदत्त शक्ति-रूपी शस्त्र होता है और उस शस्त्रके मुकावलेका कोई दूसरा हथियार दुनिया आज तक नही ढूँढ पाई है। गफलतमें मनुष्य भले ही कुछ देरके लिए ईश्वरको भूल जाये, लेकिन ईश्वर उसपर वरावर ध्यान रखता है और हमेशा उसकी रक्षा करता है। यदि खुदाई खिदमतगारोंने इस रहस्यको समझ लिया है, अगर उन्होंने यह जान लिया है कि अहिंसा ससारकी सबसे वडी शक्ति है तब तो कोई वात ही नही। अगर वात ऐसी न हो तो वेहतर यही होगा कि खानसाहब उन्हे वे हथियार वापस कर दें जो उन्होंने उनके आदेशपर छोड दिये हैं। इससे वे पशुबलकी पूजा करनेवाली आजकी दुनियाकी तरह तो वहादुर वने रह सकेंगे। लेकिन अगर वे एक ओर अपने पुराने हथियार छोड़ देते हैं और दूसरी ओर अहिंसाकी शक्तिसे भी नाता नही जोड़ते तो यह एक ऐसी बुरी वात होगी जो कम-से-कम मुझे, और जहाँ तक मैं जानता हूँ, खानसाहवको भी किसी तरह मजूर नही होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

६२. खण्डन

मेरी "सात सवाल"[2] शीर्षक टिप्पणीके सम्बन्धमे श्री वृजलाल वियाणी लिखते हैं :

> 'हरिजन' के १५ अक्टूबरवाले अंकमें प्रकाशित आपके "सात सवाल" शीर्षक लेखमें कुछ बातोंका सम्बन्ध मुझसे भी है। शिकायत यह है कि मेरे सम्मानमें जुलूस निकाला गया और वह जुमेकी नमाजके समय मसजिदके पाससे होकर गुजरा।

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-५" शीर्षक विवरण से उद्धृत।
२. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४५६-८।

यह शिकायत सीधे मुझसे भी की गई, और उत्तरमें १२ अक्टूबरको मैंने एक वक्तव्य जारी किया, जिसकी एक नकल साथमें भेज रहा हूँ।

जुलूस मसजिदके पाससे तब गुजरा जबकि नमाज समाप्त हो चुकी थी। काजी साहब सैयद मुहम्मद अली उस नमाजकी इमामत कर रहे थे और वे यह बात स्वीकार करते हैं कि जब जुलूस वहाँसे गुजरा, नमाज समाप्त हो चुकी थी और वे खुद उस समय किसी दुकानपर थे।

समाचारपत्रोंको दिये गये उनके वक्तव्यमें निम्नलिखित बात भी कही गई है, जो इस सन्दर्भमें बहुत महत्वपूर्ण है :

मैं तो सभी धर्मोंके प्रति सहिष्णुता और आदरका भाव रखनेकी आवश्यकतामें निष्ठापूर्वक विश्वास करनेवालोंमें से हूँ और स्वराज्य-प्राप्तिके लिए हिन्दू-मुस्लिम एकताके हामियोंमें से हूँ।

लक्की, मरवात, २७ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

६३. पत्र : अमृत कौरको

लक्की, मरवात
२७ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

आज एक पत्र भेज चुका हूँ — इस हिसाबसे कि वह आजकी ही डाकसे चला जाये। यह कलके लिए है और जूनागढसे भेजूंगा। यह पत्र पढकर इसे नारणदासको दे देना और दीवान साहब[1] को गुजरातीमें एक प्यारा-सा पत्र भिजवा देना। तुम तो लिखना ही।

यह पत्र मैं खुदाई खिदमतगारोंके बीच बैठा लिख रहा हूँ। अभी तुरन्त उनसे चर्चा शुरू करूँगा। वे अन्दर आ रहे हैं।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

नारणदासको चेक भेज रहा हूँ।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८८६) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ७०४२ से भी।

१. जूनागढ़के दीवान; देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", पृ० ७४।

६४. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ[1]

लक्की

[२७ अक्टूबर, १९३८][2]

जिन सिद्धान्तोके आधारपर किसी अहिंसक सगठनकी रचना होती है वे हिंसात्मक सगठनकी रचनाके आधार-रूप सिद्धान्तोसे भिन्न, बल्कि उसके विपरीत होते है। उदाहरणके लिए, पारम्परिक सेनामें सैनिक अधिकारी और सामान्य सिपाहीमे स्पष्ट भेद बरता जाता है। सिपाही अधिकारीके सामने छोटा और उसके अधीन माना जाता है। अहिंसक सेनामे सेनापति मात्र मुख्य सेवक होता है—समान लोगोमे सिर्फ प्रथम। वह सामान्य सैनिकोमे किसी उच्चताका दावा नही करता, वह ऐसा नही मानता कि उनके मुकाबले उसे कोई विशेष अधिकार और सुविधा है। आपने प्रेमसे खानसाहबको 'बादशाह खान' का खिताब दिया है। लेकिन अगर उनके हृदयके किसी कोनेमे भी ऐसा खयाल आ जाये कि वे सामान्य सेनापतिकी तरह आचरण कर सकते है तो तत्काल उनका पतन हो जायेगा और वे अपनी सारी शक्ति और प्रभाव खो बैठेंगे। वे बादशाह केवल इस अर्थमे है कि वे सबसे सच्चे और सबसे अग्रणी खुदाई खिदमतगार है और अपनी सेवाके गुण और परिमाण दोनो दृष्टिसे अन्य खुदाई खिदमतगारोसे बढ़-चढकर हैं।

सैनिक सगठन और अहिंसक सगठनमे दूसरा भेद यह है कि सैनिक सगठनमे अपने सेनापति और अन्य अधिकारियोके चुनावमे सामान्य सैनिकोका कोई हाथ नही होता। ये तो उनपर थोप दिये जाते हैं और उनपर इनकी निरकुश सत्ता होती है। अहिंसक सेनामे सेनापति तथा अन्य अधिकारी निर्वाचित या निर्वाचित-जैसे ही होते हैं। उनकी सत्ता नैतिक होती है और उसका आधार सामान्य सैनिकोकी स्वेच्छा-प्रेरित आज्ञाकारिता ही होती है।

यह तो हुआ अहिंसक सेनाके सेनापति और सामान्य सैनिकोके आपसी सम्बन्धके बारेमे। अब बाहरी दुनियासे उनके सम्बन्धोकी बात ले। यहाँ भी दोनो प्रकारके सगठनोके बीच वैसे ही अन्तर देखनेको मिलते है। अभी-अभी एक बडी भीडसे हमारा साबका पड़ा था, जो इस कमरेके बाहर जमा हो गई थी। आपने लोगोको प्रेमसे समझा-बुझाकर हटानेकी कोशिश की, ताकतसे तो काम नही लिया न! अन्तमे जब हमें कामयाबी नहीं मिली तो हम वहाँसे हट गये और छुटकारेके लिए बन्द कमरेमे आ बैठे। सैनिक ससारमे ऐसे नैतिक दबावके लिए कोई स्थान नही है।

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-५" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

अब एक कदम और आगे बढकर विचार करें। यहाँ बाहर जो लोग एकत्र है वे खुदाई खिदमतगार तो नही है, लेकिन सबके-सब हमारे मित्र जरूर है। हमे उनसे क्या कहना है, यह सुननेको वे आकुल है। उनकी अनुशासनहीनता भी उनके प्रेमकी ही अभिव्यक्ति है। लेकिन इनके अलावा अन्यत्र ऐसे लोग भी हो सकते है जिनका हमारे प्रति इस तरहका कोई सौहार्द न हो, बल्कि इसके विपरीत शायद उनके मनमे विरोधका ही भाव हो। सशस्त्र सगठनमे ऐसे लोगोसे निवटनेका एकमात्र जाना-माना तरीका यह है कि उन्हे मार भगाया जाये। लेकिन यहाँ हमारे लिए तो किसी विरोधीको — बल्कि कहिए, किसी भी व्यक्तिको — विचारसे भी अपना शत्रु मानना, अहिंसा या प्रेमकी शब्दावलीके अनुसार, पाप है। उनसे बदला लेनेकी बात सोचना तो दूर रहा, अहिंसाका पुजारी उल्टे प्रभुसे यह प्रार्थना करेगा कि वह उसके विरोधीका हृदय-परिवर्तन करे, और अगर उसका हृदय-परिवर्तन नही होता तो अपने विरोधी द्वारा पहुँचाये गये किसी भी नुकसानको सहनेको वह तैयार रहेगा — वह भी कोई डरकर या लाचार होकर नही, बल्कि बहादुरीके साथ मुस्कराते हुए। "सच्चा और सम्पूर्ण प्रेम पत्थरको भी पिघला देता है", इस प्राचीन लोकोक्तिमें मेरा अखण्ड विश्वास है।

अपनी बात समझानेके लिए गांधीजी ने मीर आलम खाँका उदाहरण देते हुए बताया कि किस प्रकार उस पठानने दक्षिण आफ्रिकामें उनपर हमला किया और किस तरह अन्तमें पश्चात्ताप करते हुए वह उनका मित्र बन गया।[1]

यदि मैंने बदलेकी कार्रवाई की होती तो ऐसा नही हो पाता। मेरे उस व्यवहारको विरोधीका हृदय-परिवर्तन करनेकी क्रियाकी संज्ञा बखूबी दी जा सकती है। यदि आपने अपने विरोधीके हृदयको इस तरह प्रेमके बलपर बदल देनेकी अन्त.-प्रेरणाका अनुभव न किया हो तो बेहतर यही होगा कि इस रास्तेपर से आप अब भी लौट जाये। उस हालतमे कहना होगा कि यह अहिंसाका व्यापार आपके बसकी बात नहीं है।

अब आप पूछ सकते है. लेकिन हम चोरो, डाकुओ और बलात्कारियोके साथ कैसा व्यवहार करे? क्या उनके सम्बन्धमे भी खुदाई खिदमतगारको अहिंसापर दृढ रहना ही चाहिए? मेरा उत्तर निस्सन्देह यही होगा: "हाँ, बिलकुल दृढ रहना चाहिए।" सजा देना ईश्वरके अधिकारकी बात है, क्योकि जिससे कभी गलती नहीं हो, ऐसा निर्णायक तो केवल वही है। यह मनुष्यका काम नही है, क्योकि उसकी "निर्णय-बुद्धि तो दोषयुक्त है"। हिंसाके त्यागका मतलब अन्यायके समक्ष लाचारी महसूस करना या उदासीनताका भाव अपनाना कदापि नही होना चाहिए। यदि हमारी अहिंसा सच्ची है और इसकी जड़ प्रेमकी मिट्टीमे जमी हुई है तो चाहिए तो यही कि वह अन्यायका पशुबलसे भी अधिक प्रभावकारी उपचार प्रस्तुत करे। बेशक आपसे मेरी यह अपेक्षा है कि आप डाकुओका पता लगाकर उनसे मिले,

१. देखिए खण्ड २९, पृ० १५५।

उन्हे उनके आचरणका दोष प्रेमपूर्वक समझाये और ऐसा करते हुए यदि मृत्युका भी वरण करना पड़े तो खुशी-खुशी उसका वरण करे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

६५. पत्र : मीराबहनको

दौरेपर
२७ अक्टूबर, १९३८

चि० मीरा,

मेरा खयाल है, मुझे तुम्हारे सारे पत्र मिल गये है। सुशीलाने टाइफाइडसे बचनेके बारेमे तुम्हारे सुझावकी मुझसे चर्चा की है। उसका कहना है नायकम्के कुँए और हमारे कुँए दोनोमे कोई अन्तर नही है। वह तो कहती है, बचावका एक ही तरीका है कि हम उबले पानीका उपयोग करे — केवल पीनेके लिए ही नही, बल्कि जिन बर्तनोमे हम खाते-पीते है उनको और जिन फलोको हम पकाकर नही खाते, उनको धोनेके लिए भी। वह मानती है कि हमें हर तरहसे शुद्ध और उबला पानी ठीक मात्रामें मुहैया कर सकना चाहिए। लेकिन हम मिलनेपर तुम्हारे दिये सभी सुझावोपर चर्चा करेगे। विलियम्सने तो सभी योजनाएँ भेजी। लेकिन मै इस नतीजेपर पहुँचा कि यह सब तो हमारे बूतेसे बाहर है। मेरे विचारसे तो हमे फिर मेरी मूल योजनापर ही आ जाना चाहिए। हमे बाल्टीका प्रयोग करना चाहिए और मलको कही दूर ले जाकर खादमे बदल देना चाहिए। लेकिन ऐसा करनेपर भी, जहाँ पानी सतह तक आ गया हो, वहाँ पूरी सुरक्षा तो नही ही है। यह पत्र मै एक सभामे बैठा लिख रहा हूँ। इस कारण और नही लिखता।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१०) से, सौजन्य . मीराबहन। जी० एन० १०००५ से भी।

६६. पत्र : महादेव देसाईको

२७ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

कल बन्नूसे रवाना होते समय तुम्हारा पत्र मिला। यह क्यो मानते हो कि तुम मुझसे दूर हो? और कही ज्यादा नजदीक आते जा रहे हो तो? होटलमे रहनेवाले दो व्यक्तियोके बीच केवल दीवारका व्यवधान होता है। यह कौन कह सकता है कि तुम उस दीवारकी नौ या बारह इच मोटाई जितनी ही दूर होगे या योजनो दूर? और क्या ऐसा नही होता कि कोई व्यक्ति योजनो दूर होते हुए भी समीप ही हो? इतना तो निश्चित ही है कि आराम लेकर तुम इस तरह तैयार हो जाओगे जिससे अधिक काम करनेकी शक्ति प्राप्त कर सकोगे। इससे एक विशेष लाभ तो यह होगा कि सभी मामलोमे तुम्हारा जीवन नियमित होगा। खाने-पीने और उठने-बैठनेके समय का पालन तुम्हे वैसी ही धार्मिक निष्ठासे करना चाहिए जैसी निष्ठासे तुम प्रार्थना करते हो। भोजन भी यज्ञार्थ ही किया जाता है न? या ऐसा होना अवश्य चाहिए। यदि तुम एक यज्ञ भूल गये तो समझो कि सभी यज्ञ भूल गये। जब तक तुम्हे वहाँ रहना अच्छा लगे तब तक अवश्य रहो। मेरे वर्धा लौटनेसे फिलहाल तुम्हारा कोई सम्बन्ध नही है। जिस एकान्त, सत्संग और जिन सुविधाओका तुम वहाँ उपभोग कर रहे हो वे और कही नही मिलेगी। इसलिए या तो वहाँ रहना या फिर जालन्धरमे। यदि राजकुमारी तुमसे ऊब जाये या उसे कही जाना पड़े और तुम वहाँ न रहना चाहो तो यह अलग बात है। कल शामको मेरा रक्तचाप १३६/८४ था। तो तुम्हारा अच्छा है या मेरा?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

हम लोग आज जहाँ है उस जगहका नाम गठरी या ऐसा ही कुछ है। एक बजे हम डेरा इस्माइल खाँके लिए रवाना हो रहे हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६६९) से।

६७. पत्र : नारणदास गांधीको

दौरेपर
२७ अक्टूबर, १९३८

चि० नारणदास,

साथका ७५० रुपयेका चेक दरबार जूनागढ़से मिला है। यह जयन्तीके अवसर पर मिला था। अतः जैसाकि हमने निश्चय किया था तदनुसार तुम इसका उपयोग कर सकते हो। स्थानीय हरिजन कमेटीके लिए वे ७५० रुपये और देंगे। इस सम्बन्धमें मैंने राजकुमारीको एक पत्र[1] भेजा है। वह तुम्हें चेक भेजेंगी। तुम्हें इसकी प्राप्ति-स्वीकृति भेजनेकी जरूरत नहीं है। किन्तु मुझे तो लिखोगे ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५३ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

६८. पत्र : छगनलाल जोशीको

डेरा इस्माइल खाँ
२७ अक्टूबर, १९३८

चि० छगनलाल,

गुंदा गाँवमें हुए खून आदिके बारेमें तुम्हारी टिप्पणी मैं पढ़ गया। उसका मुझपर कोई असर नहीं हुआ। इतना कहना काफी नहीं है कि यह आपसी बैर नहीं था। क्या सबजीने राजनीतिमें भाग लिया था? क्या उसपर किसीकी नजर पड़ी थी? क्या इस तरह भीतरी मार लगवानेकी प्रथा राजकोटमें थी? तुम्हें इस तरहका कोई प्रमाण जुटाना चाहिए — और ऐसा प्रमाण होना चाहिए — कि इस खून आदिके मामलेसे रियासतके अधिकारियोंका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है। केवल सन्देहके आधारपर तुम्हें कोई निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए। लोग तो कुछ भी मान लेंगे, किन्तु हमें ऐसा प्रमाण खोजना चाहिए जिसे माननेको विरोधी भी बाध्य हों। केवल अनुमानके आधारपर काम नहीं चल सकता। यह कहना भी ठीक नहीं है कि जो लोग मारपीटके लिए गये थे उनमें से किसीका पता नहीं चलता। इसके बावजूद इस

१. देखिए पृ० ६९।

मामलेसे रियासतके अधिकारियोका सम्बन्ध नही बैठाया जा सकता। यदि खून करनेवालेका पता ही न लग सके तो मामलेकी जाँच करके उसका परिणाम लोगोके सामने रखना चाहिए। तुम्हारी शुरुआत ऐसी है जिससे पाठक लगभग रोमांचित हो जाता है। आगे बढनेपर उसे लगता है कि यह भी वैसा ही कोई किस्सा है जैसे कि दुनियामे होते रहते है। किन्तु यह तो तुम्हारे समझने-भरके लिए ही है। शेष तो सब चलता ही रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५४६) से।

६९. पत्र : एम० आर० मसानीको

डेरा इस्माइल खाँ
२७ अक्टूबर, १९३८

भाई मसानी,

अपने लेखका आपके द्वारा दिया गया उत्तर पढकर मुझे दुःख हुआ। लगता है आप यह कहना चाहते है कि समाजवादी खादी, मद्य-निषेध, अहिंसामे विश्वास रखते है और कमेटीके पास हिंसाको भडकानेवाले भाषणोका कोई प्रमाण नहीं है। मेरी एक नही बल्कि अनेक समाजवादियोसे बातचीत हुई है। मैंने उनके लेख और भाषण पढे है। उन्हे अहिंसामे . .[1] नही, उन्होने खादीका मजाक उड़ाया है और यह कहा है कि मद्य-निषेधके द्वारा सिर्फ पैसे गँवाये है। जोर-जबरदस्तीके प्रमाण तो मेरे पास लगभग रोज ही आते है। ऐसी स्थितिमे मैं अपनी राय कैसे बदलूं?

मैंने 'दादाभाई नौरोजी' की प्रस्तावना[2] पिताजीको भेज दी है।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३०) से। सी० डब्ल्यू० ४८८८ से भी, सौजन्य: एम० आर० मसानी।

१. साधन-सूत्रमें स्पष्ट नहीं है।
२. देखिए पृ० २७-८।

७०. सच हो तो भयावह

एक सज्जन लिखते हैं :

> यहाँ नासिकमें एक पुलिस प्रशिक्षण स्कूल है। इसमें पुलिस-अधिकारियोंको प्रशिक्षण देकर तैयार किया जाता है। उन सबसे सामूहिक रसोईघरमें खाना खानेकी अपेक्षा की जाती है। और उनके लिए मांस-भक्षण तथा मदिरा-पान जरूरी है। मांस-भक्षणकी बात तो जाने दीजिए, पुलिस-अधिकारियोंको मद्य-पान सिखाना सरकारकी मद्य-निषेधकी नीतिसे कहाँ तक संगत है? इन अधिकारियोंको कभी मद्य-निषेधके काममें भी तो लगाया जा सकता है। फिर क्या स्थिति होगी? शायद आपको यह मालूम भी न हो कि इस स्कूलमें मद्य-पान और मांस-भक्षण अनिवार्य है।

मुझे स्वीकार करना चाहिए कि ऐसी किसी अनिवार्यता की कोई जानकारी मुझे नही है। पत्र-लेखकने जिस विश्वासके साथ यह पत्र लिखा है, उसीके कारण मैं इसे प्रकाशित कर रहा हूँ। अगर यह सच हो, अगर मांस-भक्षण और मद्य-पान पुलिस-अधिकारियोके प्रशिक्षणका आवश्यक हिस्सा माना जाता हो तो यह बात सचमुच बहुत भयावह है। इस नियमके अनुसार तो मांस और मदिरासे परहेज रखनेवाले लोगोके लिए पुलिस-अधिकारियोका प्रशिक्षण पानेकी कोई गुंजाइश ही नही रहती। जिस देशके लाखो लोग धर्मत निरामिषाहारी हो उस देशमे ऐसा नियम रखना घोर अन्याय है। मैं तो यही आशा करूँगा कि यह जानकारी गलत साबित हो और अगर यह सच्ची ही हो तो इस भारी बुराईका तुरन्त निराकरण किया जायेगा।

डेरा इस्माइल खाँ, २८ अक्टूबर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-११-१९३८

७१. पत्र : अमृत कौरको

डेरा
२८ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

पत्र बस यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि आजका दिन मेरे लिए एक तरहसे तो निठल्लेपनका है, लेकिन दूसरी तरहसे बहुत व्यस्तताका।

क्या तुम्हे मेरा वह पत्र मिला था जिसमें मैंने तुमसे कुछ खादी-कागज भेजनेको कहा था? चाहे मिला हो और तुम भेजना भूल गई हो या मिला ही न हो, लेकिन अब मत भेजना, क्योंकि चन्द्रशकरने चार दस्ते भेज दिये हैं। जब तक बाहर हूँ तब तकके लिए इतना काफी है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४५४ से भी।

७२. पत्र : मीराबहनको

२८ अक्टूबर, १९३८

चि० मीरा,

कलका पत्र एक गाँवसे लिखा था। यह डेरासे लिख रहा हूँ। यहाँ हम पूरे तीन दिन रुक रहे हैं। ई०[1] को लिखे तुम्हारे पत्रका मसविदा मुझे यहाँ मिला। यह अच्छा है मगर आखिरी पैरेको छोड़कर। आखिरी पैरेमें मानसिक थकावट झलकती है। ध्यानसे देखनेपर पाओगी कि पत्रके शेष अशसे उसका सम्बन्ध नहीं जुड़ता और वह बिलकुल अनावश्यक है। एक छोटे देशके शस्त्र त्याग देनेपर इग्लैण्ड, जो खुद भली-भाँति शस्त्र-सज्जित है, उसका सम्मान करे, यह तो इग्लैण्डके लिए अपमानजनक बात होगी। अगर चेक लोग यह काम कर पाये तो जर्मनी-सहित दुनियाके अन्य राष्ट्र भी उसे देखकर चकित रह जायेंगे।

१. तात्पर्य शायद एमिल हाशासे है जो कि ५ अक्टूबरको डॉ० बेनिसके चेकोस्लोवाकियाके राष्ट्रपति-पदसे द्वारा त्यागपत्र देकर अपने देशसे बाहर चले जानेके बाद ३० नवम्बरको उनके उत्तराधिकारी चुने गये थे।

तुम्हे अपनी आँखोकी ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। तुम्हें कृष्णचन्द्र-जैसा सहायक तो मिला हुआ ही है।

नलकूपके बारेमे मैंने इजाजत दी हो, ऐसा मुझे याद तो नहीं आ रहा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४११) से, सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० १०००६ से भी।

७३. पत्र: महादेव देसाईको

डेरा

२८ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

सायका पत्र तुम पढ़ना चाहोगे इसलिए भेज रहा हूँ। उसे पढकर चिन्ता मत करना। नासिक स्कूलके[1] बारेमे सक्षिप्त टिप्पणी भेजी है। आज और कलका दिन मुझे 'हरिजन' के लिए दिया गया है। यहाँ खानसाहबका राज्य है इसलिए कोई मुझे परेशान करने आ ही नही सकता। और तिसपर मेरा मौन। इसलिए जिस प्रकार तुम वहाँ आदर्श स्थानपर हो उसी प्रकार मैं यहाँ आदर्श स्थितिमे हूँ। हम लोग लारीमे दौरा करते है। उसमें मेरे लिए एक बिस्तर होता है। उसमें खान साहब बहुत लोगोको भरते ही नही। इसमे से जितना राजकुमारीको बताने लायक हो सो बता देना।

बावला झूठमूठ बहानेको तो कभी मुझे लिखे। वह अपने बारेमे क्या सोचता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७०) से।

१. देखिए "सच हो तो भयावह", पृ० ७६।

७४. पत्र : मणिबहन पटेलको

डेरा इस्माइल खाँ
२८ अक्टूबर, १९३८

चि० मणि,

तुझे कई वर्ष बाद मुझे पत्र लिखना पड़ा है। पत्र काफी खबरोंसे भरा हुआ है। इसी तरह लिखती रहना। नासिकके पुलिस-स्कूलसे सम्बन्धित खबरको सच मानकर मैंने टिप्पणी लिखी है। यदि तू खेर[1] या मुन्शी[2] से मिले तो उनसे भी बात करना।

यदि वहाँका अधिकारी-वर्ग मद्य-निषेधका काम मनसे न करे तो मन्त्रियोंको गवर्नरसे सख्तीसे कहना चाहिए। किन्तु उन्हें इस बातका विश्वास होना चाहिए कि इस काममें अधिकारियोंका मन नहीं है।

जमीनोंके बारेमें तो वल्लभभाईका पत्र मिलनेके पहले ही मैं लिख चुका था। इस सम्बन्धमें विधानसभामें हुई चर्चाकी रिपोर्ट मुझे भेजना।

मैंने यह नहीं कहा कि अश्लील साहित्यके बारेमें कोई कदम उठाया ही नहीं जा सकता। मैंने अपनी राय अवश्य दी है। मुझे इस बातका अन्देशा जरूर है कि लोगोंको गन्दा साहित्य अच्छा लगने लगा है, इसलिए उसे एकाएक रोका नहीं जा सकता। जब विद्वानोंको ही इससे नफरत हो जायेगी तभी इसे रोका जा सकता है। मैं यह मानता हूँ कि अश्लील लेख आदिके प्रकाशनको यदि कानूनके द्वारा बन्द किया जा सकता हो तो करना चाहिए। परन्तु इतना याद रखें कि विद्यार्थियोंको ऐसी चीजें पढ़नेको मजबूर करने और अखबारोंमें गन्दे लेख छापनेमें बहुत अन्तर है।

राजकोटका मामला तो अद्भुत है। वहाँ जो-कुछ हो रहा है, यदि वह टिका रहा तो इसमें सन्देह नहीं कि लोग अपनी माँग पूरी करा सकेंगे। त्रावणकोरके मामलेमें पिताजीने ठीक किया है। रामचन्द्रनको बुलाकर अच्छा किया, हालाँकि पिताजीका पत्र मिलनेके पहले ही मैं अपना बयान[3] जारी कर चुका था। मुझे लगता है कि बयान जारी करना आवश्यक था। अब तुरन्त त्रावणकोर जानेकी आवश्यकता नहीं है।

यह बिलकुल अच्छा नहीं कि नाकसे गलेमें पानी टपकता रहे। इसे अवश्य दूर करना चाहिए।

मैं बड़ौदाके बारेमें समझ गया। भादरणमें जो-कुछ हो सो मुझे सूचित करना।

१. बी० जी० खेर, बम्बईके मुख्य मन्त्री।
२. क० मा० मुन्शी, बम्बईके गृह मन्त्री।
३. देखिए पृ० ६७।

१५ तारीखके लगभग मैं वर्धा पहुँच जानेकी आशा करता हूँ। यहाँका काम ९ तारीखको पूरा होगा। सुभाष बाबूके बारेमें जो-कुछ हो रहा है वह मेरे ध्यानमें है। इसलिए मैंने कार्य-समितिमें उसकी कुछ चर्चा की थी। किन्तु पिताजीकी यह राय थी कि जवाहरलालके आने तक हम प्रतीक्षा करें। इसलिए मैं चुप रहा। इस बार राष्ट्रपतिके चुनावमें कठिनाई अवश्य होगी। मैंने 'हरिजन' में जो सुझाव[1] दिया है उसपर पिताजी विचार करें। मेरी राय है कि जो हो रहा है उसे चलते रहने देनेसे हानि होगी।

अब तेरे दोनों पत्रोंका उत्तर इसमें आ गया। पिताजीको फुरसतके वक्त इसे पढ़वा देना।

मेरा स्वास्थ्य सचमुच बहुत अच्छा रहता है। मौलानाको साथ लेकर पिताजीको इस प्रान्तकी यात्रा करनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृ० ११९-२१

७५. पत्र: विजया एन० पटेलको

२८ अक्टूबर, १९३८

चि० विजया,

तेरे तीन पत्र एक साथ मिले — एक दिल्लीके पतेपर लिखा, दूसरा सेगाँवके पतेपर लिखा और तीसरा सीधे।

तू वहाँ पहुँच गई[2] यह तो बहुत अच्छा हुआ। तेरा स्वास्थ्य सुधर गया इसके लिए बधाई। मैं समझता हूँ कि अब तू सामान्य स्थितिमें आ गई है। अतः मैं चिन्ता क्यों करूँ?

मेरा तो ठीक ही चल रहा है। यहाँकी आबहवा मेरे अनुकूल है। ठण्ड उतनी पड़ रही है जितनी मैं सहन कर सकता हूँ। महादेव शिमलामें मौज कर रहे हैं।

१. देखिए खण्ड ६७, "वह दुर्गन्धपूर्ण दलदल", पृ० ४४६-७।
२. विजया पटेल उन दिनों ग्रामीण शिक्षा केन्द्र दक्षिणामूर्तिमें थी, जो सौराष्ट्रके भावनगर जिलेमें स्थित आम्बला नामक गाँवके समीप था।

सेगाँवकी बीमारियोंकी खबरें तो तुझे मिलती ही होंगी। नानाभाई कैसे हैं? वहाँ तेरा कैसा चल रहा है, क्या-क्या कर रही है?

हम लोग १५ के लगभग सेगाँव पहुँचेंगे।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०१) से। सी० डब्ल्यू० ४५९३ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली ।

७६. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२८ अक्टूबर, १९३८

चि० कृष्णचन्द्र,

तुमने मीराबहनको मदद देना शुरू किया है सो बहुत अच्छा किया। उसमें दूषण तो हैं लेकिन वह बड़ी साध्वी है। उसकी जो सेवा करोगे वह सब तुमको फलेगी। उसके पाससे ब्रह्मचर्यका शुद्ध अनुभव ज्ञान पाओगे।

बाकी तो तुमको मैंने लिखा ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३०७) से।

७७. भाषण : डेरा इस्माइल खाँ की सार्वजनिक सभामें[1]

२८ अक्टूबर, १९३८

आपने जो थैली मुझे भेंट की है, उसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन आपको मालूम होना चाहिए कि मैं दरिद्रनारायणका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करता हूँ और दरिद्रनारायण इतनी आसानीसे सन्तुष्ट नहीं होते। मेरा यह व्यापार तो उन करोड़ों अधभूखे और अभावग्रस्त लोगोंके लिए है जिन्हें सहायताकी अत्याधिक आवश्यकता है। कपाससे बनी चीजोंके आयातके कारण हर वर्ष बहुत बड़ी मात्रामें भारतके धनके विदेश चले जानेकी समस्याको हमें खादीके बलपर हल करना है। खादीके माध्यमसे

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-५" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। इस अवसरपर गांधीजीको ५,७५३ रुपयेकी एक थैली भेंट की गई थी। इसपर गांधीजीने उपस्थित लोगोंको काफी फटकारा, क्योंकि इस राशिमें से ५,००० रुपये एक ही आदमीके दिये हुए थे।

अ० भा० च० सं० जरूरतमन्दो और गरीबोंको — हिन्दुओ और मुसलमानो, कतयो और बुनकरो, सबको — अब तक मजदूरीके रूपमे चार करोड़से अधिक रुपये दे चुका है। फिर है हरिजनोद्धारकी समस्या। यह भी उतनी ही कठिन है। आपका दान, जिस कार्यके निमित्त वह दिया जाये, उसके अनुपातमे होना चाहिए। आपका शहर कोई गरीब नही है। दाताओमे से अधिकाश अच्छे व्यापारी है। निश्चय ही आप चाहते तो इससे अधिक दे सकते थे।

इसके बाद खुदाई खिदमतगारोंका और उनके तथा स्थानीय स्वयंसेवकोंके बीच गांधीजी को जो तनाव देखनेको मिलता था उसका, उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा:

ये मतभेद बहुत दुखद है। लेकिन अगर खुदाई खिदमतगार, उन्होने अब अपने धर्मको जिस रूपमे समझ लिया है उस रूपमे, उसपर दृढ रहते हो तो ये मतभेद और झगड़े शीघ्र ही मिट जायेंगे। वे कसौटीपर चढे हुए है। यदि वे इसपर से खरे साबित होकर उतरते है तो वे साम्प्रदायिक एकताकी स्थापना और स्वराज्य प्राप्तिके निमित्त बनेंगे। मै जानता हूँ कि हृदयसे क्रोधको बिलकुल निकाल फेकना कठिन कार्य है। यह काम खुदाकी रहमतसे ही हो सकता है। आप सब मेरे साथ मिलकर प्रभुसे यह प्रार्थना करे कि वह खुदाई खिदमतगारोको, उनके अन्दर अगर अब भी क्रोध और हिंसाकी कोई भावना छिपी रह गई हो तो, उसे निकाल बाहर करनेकी शक्ति दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

७८. जन-शिक्षा आन्दोलन

पिछले दिनो डॉ० हेगची ताओ मुझसे मिलने आये थे। मैंने उनसे चीनमे चल रहे सराहनीय जनशिक्षा आन्दोलनके विषयमे कुछ लिखनेका अनुरोध किया है। अब उन्होने निम्नलिखित ज्ञानप्रद लेख[1] लिख भेजा है। यह लेख हम भारतीयोके लिए बहुत ही उपयोगी हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-१०-१९३८

१. यहाँ नहीं दिया गया है।

७९. पत्र : अमृत कौरको

डेरा
२९ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

कहते तो तुम दोनो यही हो कि तुम लोग मुझसे रोज पत्र लिखनेकी अपेक्षा नही रखते, लेकिन मेरा समाचार रोज जरूर जानना चाहते हो।

मैं अपने बारेमें कुछ इसलिए नहीं लिखता कि इन दिनो जैसा हूँ, उससे अच्छा तो कभी रहा ही नही। मौसम, आहार और वातावरणकी शान्ति, तीनोका यह मिला-जुला सुपरिणाम है। यहाँ सिवाय अमतुस्सलामके कोई झगडनेको भी नही है। लेकिन मेरा मौन उसपर भी एक कारगर रोक है।

ऊपरकी पक्तियाँ लिखनेके बाद बीचमें कुछ बाधा पड गई थी। और जब मैं बायें हाथसे लिखता हूँ, तो सबकुछ आहिस्ता ही चलता है — दिमाग भी। वैसे यह बात तो अच्छी है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४६) से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४५५ से भी।

८०. पत्र : महादेव देसाईको

डेरा
२९ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

दाहिने हाथको जरा आरामकी जरूरत है। इसके साथका तुम्हारे देखनेके लिए है। यदि तुम डॉरोथीको दो पक्तियाँ लिखना चाहो तो लिख देना।

क्या तुमने सुना है कि सेगाँवमें भणसाली और राजेन्द्रको टाइफाइड हो गया था? क्या तुम्हे सेगाँवसे कोई सीधे लिखता है? भणसाली अब बिलकुल अच्छा है। राजेन्द्रको अभी भी बुखार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७२) से।

८१. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२९ अक्टूबर, १९३८

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। नव-वर्ष और पूरे वर्षके मेरे आशीर्वाद तो तुझे है ही।

जब मैंने तेरे सेवाका मार्ग छोडनेकी बात सुनी तो मुझे दु:ख तो हुआ था। किन्तु मैंने यह सोचकर अपने मनको समझा लिया कि तू बिना सोचे-विचारे कुछ नही करेगा। मै तेरा क्या पथ-प्रदर्शन करूँ? किसी तरहकी झूठी शर्म या किसीके दबावमें आकर कुछ मत करना। तुझमे जितना हृदय-बल हो उतना ही करना। सेवा-मार्गको छोड़कर अथ-मार्ग अपनानेमें कोई पाप तो है ही नहीं। सभी लोग सेवा-मार्गको पचा नही सकते। यदि हम इतना खा ले जिससे अपच हो जाये तो उससे रोग ही होगा। इसकी अपेक्षा उतना ही खाना चाहिए जितना पच सके।

फिलहाल तू जिस तरह रह रहा है वह अच्छा है। धीरे-धीरे हो सकता है तुझे अपनी आर्थिक स्थितिसे परेशानी न हो। यह समझ लेना कि तंगीमे रहना अच्छा है। तंगीमे आदमीका चरित्र निखरता है। इसके अतिरिक्त दुनिया तो तंगीमे ही रहती है। सम्पन्नताका उपभोग करनेवाले तो थोड़े ही नजर आते हैं। ऐसे लोगोके प्रति मुझे कभी द्वेष नही हुआ। कभी-कभी उनपर दया आती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

८२. पत्र : अमृत कौरको

डेरा
३० अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

रातके आठ बजनेवाले है — मेरे बाहर घूमने जानेका वक्त हो रहा है।

तीन शिष्टमण्डलोमें से यह आखिरी तो अभी-अभी मिलकर गया है।

दुर्गाके लिए एस० के नुसखेके बारेमे मैंने क्या कहा था?

तुम्हारा कहना ठीक है। अगर मै सेगाँव बिलकुल ही छोड देता हूँ तो यह आर्यनायकमके साथ अन्याय होगा। लेकिन मै सेगाँव छोड नही रहा हूँ। अगर सबकुछ ठीक-ठीक चला तो वर्षका एक हिस्सा सेगाँवमे जरूर बिताऊँगा। देखे, क्या होता है। प्रभुसे मार्ग-दर्शनकी प्रार्थना है।

मैं स्वस्थ-प्रसन्न हूँ।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

तुम्हें कुछ याद है कि मैंने तुम्हें कु० की जो पुस्तक सुधारनेके लिए दी थी वह तुम कहाँ छोड़ गईं?

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८८७) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०४३ से भी।

८३. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

डेरा

३० अक्टूबर, १९३८

प्रिय कु०,

तुम्हारी शिकायत वाजिब है। मैंने अपने सिर बहुत ज्यादा बोझ ले लिया है, बल्कि यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि मैं इस बोझसे दब गया हूँ। इसलिए स्वाभाविक क्रममें जो कार्य समय मिलनेपर बादमें हाथमें लिये जा सकते थे उनकी पूरी उपेक्षा ही हो गई है। अब तुम्हें अपना मसविदा[1] भेज रहा हूँ। आशा है, इसे पढनेमें तुम्हें कठिनाई नहीं होगी। इसको अन्तिम रूप देनेसे पहले शंकरलाल और जाजूजीको दिख लेना। तुम्हारी पुस्तक तो जब मुझसे कुछ करते न बना, मैंने रा० कु० को दे दी।[2] उसे पत्र लिखा है।

तुम सबका कैसा चल रहा है?

पेशावरसे १० तारीखको चलनेकी उम्मीद करता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३६) से।

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

८४. सदस्योंकी प्रतिज्ञाकी व्याख्या

[३० अक्टूबर, १९३८][1]

यह प्रतिज्ञा सामान्य ढंगकी है और इसे जान-बूझकर ऐसा तैयार किया गया। यह एक सज्जनकी प्रतिज्ञा है और इसमे "भारतके गाँवोके चतुर्दिक कल्याणके उद्देश्य-की प्राप्तिके निमित्त अपनी शक्ति और प्रतिभाके अधिकतम अशका", इन शब्दोकी व्याख्या प्रत्येक सदस्यके ईमानपर छोड दी गई है।

सदस्यगण न केवल इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए काम करनेको प्रतिज्ञावद्ध है, वल्कि "इन आदर्शोको अपने जीवनमे उतारनेका प्रयत्न करने" और "अन्य वस्तुओके मुकावले ग्रामोद्योगोसे बनाई वस्तुओके उपयोगको प्राथमिकता देने" के लिए भी प्रतिश्रुत है।

इसलिए वोर्डके जिन सदस्योपर सदस्यताके लिए नामोकी सिफारिश करनेकी जिम्मेदारी होगी उन्हे इस वातका ध्यान रखना होगा कि वे ऐसे लोगोकी ही उम्मीदवारी पेश करें जिनके प्रत्येक कार्य-व्यापारके पीछे ग्रामवासियोके कल्याणकी हार्दिक कामना हो। स्वभावत ऐसा व्यक्ति प्रतिदिन थोड़ा-सा भी समय ग्राम-कार्यके लिए देगा। जरूरी नही कि वह कार्य गाँवमे ही करे; अलवत्ता वह कार्य गाँवके लिए अवश्य हो। उदाहरणके लिए, किसी नगरमे रहनेवाला सदस्य यदि किसी दिन ग्रामोद्योगोसे तैयार की गई चीज किसीके हाथ वेचता है या किसीको ऐसी चीज खरीदने पर राजी करता है तो माना जायेगा कि उस दिन उसने कुछ ग्राम-कार्य किया।

सिफारिश करनेवाले सदस्यको इस वातका भी ध्यान रखना होगा कि उम्मीद-वार जहाँ भी सम्भव हो वहाँ ग्रामोद्योगो द्वारा तैयार की गई वस्तुओका ही उपयोग करनेवाला हो। अर्थात् वह मिलके वने कपडेकी जगह खादीका, चीनी मिट्टीके वने वर्तनोकी जगह गाँवोंके कुम्हारो द्वारा वनाये मिट्टीके वर्तनका, लोहेके निववाली कलमकी जगह सरकण्डेकी कलमका, साधारण कागजके वदले हाथके वने कागजका, सफाईकी दृष्टिसे त्याज्य और दाँतोको नुकसान पहुँचानेवाले व्रशके स्थानपर आरोग्य-मय ववूल अथवा नीमकी या अन्य किसी पेड-पौधेकी टहनीकी दातौनका, कारखानोमें कमाये गये चमडेके वदले गाँवोमे मरे हुए पशुओसे उतारी गई खालसे वने चमडेके सामानका, कारखानोमे बनी चीनीकी जगह गाँवोमे वने गुडका और मिलोंके पालिशदार चावलके स्थान पर हाथ-कुटे चावलका उपयोग करता हो।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

कु० के लिए

बोर्ड एजेंटों, कार्यकर्ताओ और आम लोगोको व्यापार और ग्रामोद्योगके लिए उपयोगी वस्तुके रूपमे मरे हुए पशुओके चमड़ेका महत्व समझायेगा। कार्यकर्ता इस बातकी जानकारी प्राप्त करे कि उनके अपने-अपने इलाकेमे मरे हुए पशुओको हटाने, उनकी खाल उतारने आदिका क्या तरीका है और खाल उतारनेसे लेकर चमडा कमाने तककी विधि किस प्रकार सम्पन्न की जाती है। ऐसी सब जानकारी प्राप्त करके वे पूरा विवरण बोर्डके सामने पेश करे। आम लोगोसे अनुरोध है कि वे चमड़े की ऐसी ही चीजे इस्तेमाल करे जो गाँवोमे बनाई गई हो।

स्मरणीय बातें

दिल्ली-निवासी हरध्यानसिहकी एजेटके रूपमे नियुक्ति। बोर्डके सदस्यो और एजेटोके कार्य-क्षेत्रोंका यथातथ्य वर्णन।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३७ और १०१३८) से।

८५. पत्र : महादेव देसाईको

डेरा
३० अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

मैं समझता हूँ तुम साथका पत्र देखना चाहोगे।

आज १२ बजे दौरा शुरू हुआ और हम ४ बजे लौटे। हम कुलाची नामक गाँव गये थे। कल हमे टाँक जाना है।

हवामे अभी ठण्डका तो नाम भी नही है। हम बाहर सोते है।

हम १० तारीखको सेगाँव रवाना होगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या तुम्हे ब्रजकृष्णके पत्र नियमित रूपसे मिलते है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७३) से।

८६. पत्र : अमृत कौरको

३१ अक्टूबर, १९३८

प्रिय पगली,

अभी हम लोग यहाँसे चलनेको बिलकुल तयार बैठे हैं।

रेडियोकी खबरो और अखबारी खबरो, दोनोमे फर्क क्या है? दोनो समान रूपसे अविश्वसनीय होती हैं। मेरे स्वास्थ्यमे कोई खराबी नही आई है। अभी मै जैसा हूँ उसको देखते हुए तो सोचता हूँ कि शायद सर्दीके मौसमके मध्यमे भी मै इसी तरह स्वस्थ रह सकता हूँ। लेकिन हो सकता है, मै उत्साहके अतिरेकमे ऐसा सोच रहा होऊँ। शेष महादेवको लिखे पत्रसे जान लेना।

सप्रेम,

योद्धा
उर्फ जालिम
उर्फ डाकू
और क्या?

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४७) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४५६ से भी।

८७. पत्र : महादेव देसाईको

३१ अक्टूबर, १९३८

चि० महादेव,

मैंने व्रजकृष्णसे तुम्हे रोज लिखनेको कहा है। वह जो लिखता है उसमे कितना प्रेम और रस उँडेलता है यह तो केवल वही जाने।

यहाँसे हमारे रवाना होनेकी बिलकुल सही तारीख मैं नही दे सकता। कोशिश हम यह कर रहे हैं कि ९ तारीखको कैम्बलपुर या रावलपिंडी या तक्षशिलासे रवाना हो जायें। तुम तो ज्यादासे-ज्यादा १० तारीख तक दिल्ली पहुँच जाना। यदि ९ को पहुँचो तो ज्यादा अच्छा हो।

मैं तुम्हे अभी हालमे वर्धामे नही रहने दूँगा। समुद्र-यात्राकी बात मुझे पसन्द है। दुर्गा और बाबला भी साथ रहे। यदि दुर्गा पसन्द करे और वह बलसाड़में रहना चाहे तो बात अलग है। मैं चाहूँगा कि तुम सिंगापुर तक हो आओ। तुम

थोड़े दिन सिंगापुरमे रहो तो भी अच्छा है। तुम जल्दीसे-जल्दी २० जनवरीसे अपना काम सँभालना। इस बीच यदि तुम कुछ लिखना चाहो तो लिख भेजना। मुझे इस बातका डर नही है कि कही भी तुम्हारा समय बेकार नष्ट होगा। और तुम अधिक कुशलता प्राप्त करके अपना काम सँभाल सकोगे।

तुम्हारी टिप्पणियाँ मै ज्यो-की-त्यो जाने दे रहा हूँ। मैसिघमसे सम्बन्धित लेख वापस माँग लेना। उक्त लेख बहुत अच्छा है, कवित्वपूर्ण है किन्तु 'हरिजन' के लायक नहीं है। हालाँकि उसमे कविता है किन्तु हमारे दृष्टिकोणसे उसमे सीखने लायक कुछ नही है। वहाँके और हमारे यहाँके गाँवोमे समानता कहाँ है? जब वहाँके गाँव आबाद हुए उस समय भी ये लोग सशस्त्र समुद्री डाकू और लुटेरे थे। गाँव इस बातके सूचक थे। हमारे गाँव घूरे है। उन गाँवोसे राजाओका पैसे लूटने-भरका सम्बन्ध था। वैश्योने धन बटोरा। शूद्रो और अतिशूद्रोने गुलामी की। अत तुम्हारा लेख हमे कोई प्रेरणा नही दे सकता। सतही तौरपर सोच-विचार करनेवाला कोई व्यक्ति यदि कविताकी खोजमे हमारे गाँवोमे जा बैठे तो यह अज्ञान ही माना जायेगा न? और वेदोसे उद्धरण निकालकर यदि तुम उन्हे आधुनिक अग्रेजीके उद्धरणोके साथ रखो तो यह हमारे लिए शर्मकी बात होगी। मेरी इस आलोचनाको और विस्तत करके तुम मेरा मुद्दा समझ लेना। यदि मेरे समझनेमे कोई दोष हो तो मुझे सूचित करना। उक्त लेख मैने आज सुबह तीन बजे पढा। किन्तु यदि तुम इसे 'मॉडर्न रिव्यू' या 'हिन्दुस्तान टाइम्स' मे भेजना चाहो तो भेज देना।

हमे फौरन कूच करना है। मै खाते-खाते यह लिख रहा हूँ। फल मै काँटे (फोर्क) से खाता जा रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७४) से।

८८. भाषण : टाँककी सार्वजनिक सभामें[1]

३१ अक्टूबर, १९३८

उनका[2] खयाल है कि मुसलमानोकी प्रधानतावाले इस क्षेत्रमे मुट्ठी-भर हिन्दुओका अस्तित्व तभी सम्भव हो सकता है जब मुसलमान उनके सच्चे हमसाये हो। उन्होने मुझसे खुदाई खिदमतगारोसे यह अनुरोध करनेको कहा है कि उनके सम्बन्धमे वे अपनी स्वाभाविक भूमिका निभाये। उनकी इस भावना और अनुरोधसे मै पूरी तरह सहमत हूँ और मेरा निश्चित विश्वास है कि मेरे अन्दर आपने जो आशाएँ जगा दी है, यदि आप केवल उन्हीको पूरा कर दिखाये तो इन हिन्दुओको बिलकुल

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-५" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।
२. तात्पर्य उन हिन्दुओंसे है जिन्होंने गांधीजी से मिलकर शिकायत की थी कि वे कैसी असुरक्षित स्थितिमें जी रहे हैं।

निश्चिन्त कर देना आपके लिए कोई मुश्किल बात नही है। जैसाकि मैंने एक-अन्य अवसरपर कहा था, इस प्रान्तमे रहनेवाले हिन्दू, मुसलमान और अंग्रेज तीनो तुला पर चढ़े हुए है। अंग्रेजोके कृत्योके बारेमे तो इतिहास अपना निर्णय सुनायेगा; लेकिन अपने पारस्परिक व्यवहारमें ठीक रवैया अपनाकर हिन्दू और मुसलमान अपना एक अलग इतिहास गढ सकते है। जहाँ तक खुदाई खिदमतगारोकी बात है, उनका कर्तव्य-पथ तो निश्चित हो चुका है। उन्हे अपने पडोसियोकी रक्षाके लिए एक जीती-जागती दीवार बनकर खड़ा होना है।

सकल्प-शक्तिके धनी और अपने उद्देश्यको सचाईमें अपरिमित श्रद्धा रखनेवाले उत्साही लोगोका एक छोटा-सा दल भी इतिहासकी धाराको बदल सकता है। ऐसा पहले भी हो चुका है और यदि खुदाई खिदमतगारोकी अहिसा केवल बाहरी चमक-दमकवाली चीज नही, बल्कि कुन्दनके समान शुद्ध और सच्ची है तो ऐसा फिर हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

८९. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ[1]

टाँक
३१ अक्टूबर, १९३८

अगर इन भाई[2] का कहना सच हो और आप अपने हृदयके किसी कोनेमें ऐसा कोई विचार पाल रहे हो कि अहिसा आपके लिए सिर्फ मुखौटा अथवा और अधिक हिंसा करनेका एक आधार है तो — मैं तो कहूँगा कि यदि आप अहिंसाको इसकी तर्कसगत परिणति तक ले जाकर प्रभुसे किसी शिशु-हत्या और बाल-हत्याके अपराधीको भी क्षमा कर देनेकी प्रार्थना करनेको तैयार न हो तो भी — आपको खुदाई खिदमतगारोकी अहिसाकी प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करनेका कोई अधिकार नही है। मनमे कोई और विचार रखकर इस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करनेसे आपकी और आपकी संस्थाकी भारी बदनामी होगी और जिसे आप गर्वके साथ फख्र-ए-अफगान कहते हैं, उसके हृदयको भीषण आघात पहुँचेगा।

अब आप पूछ सकते हैं : "लेकिन अगर हमारी कोई माँ या बहन किसी नर-पशुके पजेमे फँस गई हो और उसके शील-भंगका खतरा उपस्थित हो गया हो तो हम क्या करें? क्या उस नरपशुको अपने मनकी करने दें? क्या ऐसी स्थितिमें भी हिंसाका सहारा लेना उचित नही होगा?" मेरा उत्तर होगा "नहीं"। उस हालतमें आपको

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–५" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।

२. तात्पर्य एक पठान द्वारा पूछे गये उस प्रश्नसे है जिसे गांधीजी ने "खुदाई खिदमतगार और बादशाह खान" शीर्षक अपने लेखमें उद्धृत किया है; देखिए पृ० १२७-३२।

उस नरपशुसे अनुनय-विनय करना होगा। सम्भावना यही है कि अपनी उस विकार-ग्रस्त अवस्थामें वह आपकी बात नही सुनेगा। लेकिन तब आपको उसके और उस माँ या बहनके बीच दीवार बनकर खडा हो जाना पडेगा। बहुत सम्भव है कि इस प्रयत्नमे आपको अपने प्राण गँवाने पडे, लेकिन उसका यह अर्थ तो होगा ही कि आपने अपने कर्तव्यका पालन किया। थोडी-सी सम्भावना इस बातकी भी है कि आपके निहत्थे होनेसे और कोई प्रतिरोध किये बिना बलिदान हो जानेसे आपको मारने-वालेके मनका विकार एकाएक मिट जाये और वह उस माँ या बहनका शील-भंग किये बिना उसे छोड दे। लेकिन लोगोका कहना है कि आततायी, हम जैसा चाहते है और जैसी आशा करते है, वैसा व्यवहार तो करता नही। आपके प्रतिरोध न करनेपर, सम्भव है, वह आपको किसी खम्भेसे लगाकर रस्सीसे बाँध दे और अपने दुष्कृत्यका मूक दर्शक बनाकर छोड दे। लेकिन यदि आपमे संकल्प-बल होगा तो आप इतना प्रबल प्रयत्न करेगे कि उसके फलस्वरूप या तो आपका बन्धन टूट जायेगा या आप स्वय अपनेको ही समाप्त कर देगे। दोनो हालतोमे आप उस आत-तायीकी आँखे खोल देगे। आपके सशस्त्र प्रतिरोधसे भी इससे कुछ अधिक नही हो पायेगा, लेकिन उस प्रयत्नमे अगर आप पराजित हो गये तो स्थितिके उससे भी बदतर हो जानेकी सम्भावना है जैसीकि वह तब होगी जब आप अपने शरीर-बलसे प्रतिरोध किये बिना मर मिटे। इसके अलावा आपके आत्मबलसे प्रतिरोध करनेमे यह सम्भावना भी है कि विपत्तिमे पडी वह माँ या बहन आपके अडिग साहसका अनुकरण करते हुए अपना शील-भग होने देनेके बजाय अपनी जीवन-लीला ही समाप्त कर ले।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

९०. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ[1]

३१ अक्टूबर, १९३८

रमजानका महीना होनेके कारण आप लोग तो रोजा रख रहे है और गाँवके एक भी मुसलमानके घर अगीठी नही सुलगती, लेकिन यही आपको हमारे लिए खाना बनाना पडा, ऐसी बातसे मेरा हृदय अभिभूत हो गया है और मुझमे नम्रता आई है। दक्षिण आफ्रिकामे अपनी देखरेखमे रहनेवाले मुसलमान लड़कोको रमजानके दौरान रोजा रखनेकी शिक्षा देनेके लिए उस महीनेमे मै खुद भी उपवास रखता था। आज मेरी वह अवस्था नही रह गई है। इसके अलावा मुझे खानसाहबकी भावनाका भी खयाल रखना था। उन्हे दिन-रात मेरे स्वास्थ्यको ठीक रखनेकी चिन्ता लगी रहती

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–६" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। गांधीजी ने ये बातें डेरा इस्माइल खाँके पास एक छोटे-से गाँवमें कही थी।

है। सो अगर मैं भी उपवास रखता तो खानसाहबको परेशानी होती इसलिए मैं तो आपसे माफी ही माँग सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-११-१९३८

९१. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१ नवम्बर, १९३८

प्रिय अगाथा,

आशा है, तुम्हारी समुद्र-यात्रा आरामसे बीती होगी।

बादमें सोचने पर तय किया कि तुम्हें यहाँ आनेसे मना कर दूँ। दौरेके अन्तिम दिनोंमें मैं तो तुम्हें एक क्षण भी नहीं दे सकता, और खानसाहबको भी उस दौरान तुम्हारे लिए समय नहीं मिलेगा। और उधर इन चन्द दिनोंमें तुम बम्बईमें जो-कुछ भी देखना चाह सकती हो, देख लोगी।

शेष मिलनेपर।

सप्रेम,

बापू

मेरा पता पेशावर, जहाँ हम आज शाम पहुँच रहे हैं।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०५) से।

९२. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ[1]

पनियाला

[१ नवम्बर, १९३८][2]

आपके बारेमें जो आश्वासन मुझे खानसाहबने दिया था, वह अब स्वयं आपके मुँहसे मिल गया है। आपने अहिंसाको किसी अस्थायी कार्य-साधक साधनकी तरह नहीं, बल्कि अपने स्थायी धर्मकी तरह स्वीकार किया है। इसलिए अगर आपके हृदयमें अब भी तलवारके लिए स्थान है तो उसे केवल बाहरी तौरपर त्यागनेसे कुछ होनेवाला नहीं है। तलवारके त्यागसे यदि आपके हृदयमें वह शक्ति — तलवारकी शक्तिसे उलटी और उससे श्रेष्ठतर शक्ति — नहीं पैदा होती तो आपके तलवार-त्यागको सच्चा नहीं माना जायेगा। अबतक आपके बीच बदलेको एक पवित्र कर्तव्य

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–६" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।
२. गांधी — १९१५-१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनॉलॉजी के अनुसार गांधीजी इस तारीखको पनियालामें थे।

माना जाता रहा है। अगर आपका किसीके साथ झगड़ा होता है तो उसे आप हमेशाके लिए अपना दुश्मन मान लेते है और बापके बाद बेटेको यह झगड़ा विरासतमें मिलता है। लेकिन जब आप अहिंसा-धर्मको स्वीकार कर लेते है तब यदि आपको कोई दुश्मन माने भी तो आपके लिए उसे दुश्मन माननेकी छूट नही है —बदलेका तो कोई सवाल ही नही उठता। स्वर्गीय जनरल डायरसे ज्यादा क्रूर और रक्त-पिपासु कौन हो सकता है? फिर भी जलियाँवाला बाग कांग्रेस जाँच-समितिने मेरी सलाहपर उनके खिलाफ कोई मुकदमा चलानेकी माँग करनेसे इनकार कर दिया था। उनके प्रति मेरे हृदयमे कोई दुर्भावना नही थी। मुझे उनसे व्यक्तिगत रूपसे मिलकर उनके हृदयको बदलनेका अवसर प्राप्त होता तो बडी खुशी होती, लेकिन मेरी इस आकांक्षाको मात्र आकाक्षा बनकर ही रह जाना था, सो वही हुआ।

जब गांधीजी अपनी बात कह चुके तो एक खुदाई खिदमतगारने, जो उनकी बातें बड़े ध्यानसे सुन रहा था, उनके सामने एक शंका रखी: "एक ओर तो आप हमसे हिन्दुओंकी [सरहद-पारके] हमलावरोंसे रक्षा करनेकी उम्मीद करते है और दूसरी ओर कहते है कि चोर-डाकुओंके खिलाफ भी हमें हथियार नहीं उठाना चाहिए। ये दोनों बातें साथ-साथ कैसे चल सकती है?" उत्तरमें गांधीजी ने कहा:

दोनो बातोमे परस्पर जो असंगति दिखाई देती है वह सतही है। अगर आपने अहिंसाकी भावनाको सचमुच हृदयंगम कर लिया है तो आप हमलावरोके यहाँ आकर तबाही मचानेका रास्ता नही देखते रहेगे, बल्कि उनके अपने ही क्षेत्रमे जाकर उनकी तलाश करेगे और उनसे मिलकर उन्हे हमला करनेसे रोकेंगे। लेकिन अगर इतने पर भी हमला हो ही जाये तो आप हमलावरोके सामने खडे होकर उनसे कहेगे कि तुम भले ही हमारी सारी सम्पत्ति ले लो, लेकिन हमारे हिन्दू भाइयोकी सम्पत्तिको तो हमारी लाशोपर से ही हाथ लगा सकते हो। और अगर अपने हिन्दू हमसायोकी रक्षा करनेके लिए सैकडो खुदाई खिदमतगार अपनी जान कुर्बान कर देनेको तैयार रहेगे तो हमलावर अहिंसक रीतिसे अपना विरोध कर रहे ऐसे निर्दोष-निरीह खुदाई खिदमतगारोकी नृशंस हत्या करनेके बजाय विचारमे पड जायेगे। आप सन्त अब्दुल कादिर जिलानीकी कहानी तो जानते ही होगे। उनकी माँ ने सोनेकी चालीस मोहरे देकर उन्हे एक कारवाँके साथ बगदाद भेजा। रास्तेमे डाकुओने कारवाँको घेर लिया और अब्दुल कादिरके साथियोका माल-असबाब छीनने वे आगे बढे। इसपर अब्दुल कादिरने, जिन्हे डाकुओने अब तक हाथ भी नही लगाया था चीखकर उन्हें अपने पास बुलाया और उनकी माँ ने उनके अँगरखेमे जो चालीस मुहरें सी दी थी, वह सब दिखाकर उनसे ले लेनेको कहा। कहते है, बालकके इस सरल और निष्कपट व्यवहारका डाकुओंपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होने न केवल अब्दुल कादिरका कुछ नही बिगाडा, बल्कि उनके साथियोंका भी सारा माल-असबाब लौटा दिया।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-११-१९३८

९३. पत्र : मीराबहनको

२ नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

सबकुछ ठीक रहा तो हम ११ तारीखको वहाँ[1] पहुँच रहे हैं। साथमें महादेव होगा। इन बीमारियोंके कारण मैं तुम्हारे पास पहुँचनेको अधीर हो गया हूँ।

डॉ० बे०[2]को लिखा हुआ तुम्हारा दूसरा पत्र बहुत अच्छा था।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६१२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १०००७ से भी।

९४. पत्र : महादेव देसाईको

अहमदबाँध

२ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। दूसरी डाक तो पेशावरमें पड़ी ही होगी। हम वहाँ ५ बजे पहुँचेंगे। वहाँसे हम ६ को नही बल्कि ५ को रवाना होंगे और यहाँ वापस लौटने के बजाय रास्तेमें ही ९ तारीखको गाडी पकडेंगे। अत. १० तारीखको हमारा दिल्ली पहुँचना निश्चित है। हम दिल्लीमें रुकेंगे नही इसलिए ११ तारीखको वर्धा पहुँच जायेंगे। सेगाँवमें होनेवाली बीमारियोंने मुझे सोचनेको मजबूर कर दिया है। मैं समझता हूँ कि जब तक वहाँका पानी न सुधर जाये, तब तकके लिए हमें उस स्थानको खाली कर देना चाहिए और जितने लोगोंका वहाँ रहना आवश्यक हो, उन्हें छोड़कर बाकी लोगोंको मुक्ति दे देनी चाहिए। किन्तु इस समय मैं तुम्हें इस चिन्तामें क्यों डालूँ?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बाँधका मतलब छोटा-सा गाँव।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७५) से।

1. सेगाँव।
2. डॉ० बेनिस।

९५. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२ नवम्बर, १९३८

बा,

अब तो ९ ही दिन बाकी है और यदि ईश्वरकी इच्छा होगी तो हम मिलेंगे। हम लोग उसी दिन सेगाँव रवाना हो जायेंगे। तेरे पत्रमें एक वाक्य था जिसका उत्तर देना रह गया था। तूने लिखा था कि चलते-चलते मैंने तेरे सिरपर हाथ भी नहीं रखा। जब मोटर चल पड़ी तो मुझे भी ऐसा लगा था, किन्तु तू दूर थी। क्या तुझे बाहरी निशानी चाहिए? तू यह क्यों मान बैठी है कि मैं अपने प्रेमका प्रदर्शन नहीं करता इसलिए मेरा प्रेम सूख गया है? मैं तो तुझसे कहता हूँ कि मेरा प्रेम बढ़ा है और बढ़ता जाता है। ऐसी बात नहीं कि मेरा प्रेम पहले कम था बल्कि जितना था वह दिन-प्रतिदिन निर्मल होता जा रहा है। मैं तुझे निरी मिट्टीकी पुतली नहीं मानता। इससे अधिक मैं और क्या लिखूं? जिस तरह . . .[1] आदि बाहरी चिह्न माँगते हैं, उस तरह यदि तू भी माँगे तो मैं दे दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३०

९६. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

२ नवम्बर, १९३८

चि० अमृतलाल,

तुम बीमारोंकी देखभाल करनेमें कुशल हो इसलिए वैसा अवसर तुम्हें अनायास ही मिल गया है। अभी तो तुम्हारे हाथमें यश है। ऐसा ही सदा बना रहे।

यदि राजभूषण घर चला जाये तो अच्छा हो। अपना स्वास्थ्य बिगाड़कर सेगाँवमें रहना उचित नहीं। किन्तु अब तो मैं जल्दी ही वहाँ पहुँच जाऊँगा। मैं दिन गिन रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७७७) से।

१. मूलमें यह अंश छूटा हुआ है।

९७. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

२ नवम्बर, १९३८

चि० चिमनलाल,

बीमारियोने मुझे परेशानीमे डाल दिया है। मुझे लगता है कि तुम्हे, शकरी-बहन, पारनेरकर आदिको फिलहाल तो सेगाँव छोड देना चाहिए। स्वास्थ्यको खतरेमें डालना उचित नही है। किन्तु मैं वहाँ ११ तारीखको पहुँचनेकी आशा करता हूँ। इस बीच सोच-विचार कर लेना। यदि मैं सेगाँवको स्वास्थ्यप्रद बना सका तो तुम सबको वापस बुला लूँगा। मेरे सामने यह एक नया प्रश्न उठ खड़ा हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

बबुड़ीको मैं आज नही लिख रहा हूँ। समय ही नही है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५९४) से।

९८. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२ नवम्बर, १९३८

बापा,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम्हे यहाँसे जो पैसे भेजे है यदि उनका उपयोग इसी प्रदेशमे हो तो अच्छा है। मुझसे तो बारीकीसे जाँच-पडताल हो नही सकती। तुम्हे इस प्रदेशका दौरा कर लेना चाहिए। यदि तुम ठंड बरदाश्त कर सको तो इसी महीनेमें आना, अन्यथा आगामी वर्ष मार्चमे। दिसम्बर, जनवरी और फरवरीमे तो बेहद ठंड पड़ती है। कहा जाता है कि इस प्रान्तमे आठ लाख हरिजन है। अम्बेडकरको दिया गया तुम्हारा चुटीला जवाब मैंने देखा, किन्तु जागते हुए सोनेका बहाना करनेवालेको कौन जगा सकता है?

तुम्हे बूढ़ा किसने कहा? जब तुम गुजरोगे तो भरी जवानीमे ही गुजरोगे। बूढा तो वह है जिसका मन बूढ़ा है। जैसे रामदास भरी जवानीमें जरा-जर्जरित हो गया है। उसमे उत्साह तो नामको भी नही है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११७९) से।

९९. सन्देश : पेशावर खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटन-समारोहके निमित्त[1]

[३ नवम्बर, १९३८ या उसके पूर्व][2]

नामोसे गुमराह न हों। कोई जापानी कपडा महज इसीलिए स्वदेशी नहीं बन जा सकता कि उसपर 'स्वदेशी' का छापा लगा हुआ है। स्वदेशी तो उसी चीजको कहा जा सकता है जो भारतके करोड़ो ग्रामवासियोके हाथोसे और भारतमे ही पैदा किये गये कच्चे मालसे बनी हुई हो।

आप देख सकते है कि यह शर्त केवल खादी ही पूरी करती है, बाकी सब कपडे तो स्वदेशीकी नकल-भर है। जिस प्रकार सूर्योदयके बिना सुबह नही हो सकती उसी प्रकार खादीके बिना शुद्ध स्वदेशी असम्भव है।

इस दृष्टिसे देखे तो मानना पड़ेगा कि स्वदेशीकी दौडमे पेशावर बहुत पीछे है। यहाँ केवल एक खादी-भण्डार है और वह भी घाटेमे चल रहा है। मुझे उम्मीद है कि इस प्रदर्शनीका एक परिणाम यह तो होगा ही कि इस खादी-भण्डारकी अवस्था अच्छी हो जायेगी और इसके बन्द कर दिये जानेकी सम्भावना मिट जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१००. भाषण : पेशावर खादी-प्रदर्शनीके उद्घाटन-समारोहमें[3]

३ नवम्बर, १९३८

मन्त्रीगण खादी-कार्यमे जो सहायता दे रहे है, उसके लिए डॉ० गोपीचन्दने उन्हे धन्यवाद दिया है। लेकिन मैं तो देखता हूँ कि न तो यहाँके सभी मन्त्री और न विधान-सभाके सभी सदस्य ही निरपवाद रूपसे खादीका प्रयोग करते है। कुछ लोग केवल विधान-सभामे खादीकी पोशाक पहनते है। कुछ तो इतना भी नही करते।

१. प्यारेलालके "पेशावर खादी-प्रदर्शनी" शीर्षक लेखसे उद्धृत।

२. खादी-प्रदर्शनीका उद्घाटन ३ नवम्बरको हुआ था, लेकिन सन्देश पहले ही छपवाकर आगन्तुकोंके बीच बाँट दिया गया था

३. प्यारेलाल नैयरके "पेशावर खादी-प्रदर्शनी" शीर्षक लेखसे उद्धृत। उस अवसरपर उपस्थित प्रमुख लोगोंमें अब्दुल गफ्फार खाँ, डॉ० खान साहब और विधान-सभाके कई कांग्रेसी सदस्य भी शामिल थे।

यह कांग्रेसके संविधानके शब्दो और उसकी भावना दोनोके विरुद्ध आचरण है। यहाँ तक कि लाल कुर्तीवाले भी अब तक खादीको नही अपना पाये हैं। . . . यदि ये सबके-सब खादी अपना ले तो निस्सन्देह ये एक लाख लोग आनन-फानन पूरे प्रान्तको खादीधारी बना दे सकते है। खादी तैयार करनेके लिए जरूरी उपादानो की दृष्टिसे यह प्रान्त बडा समृद्ध है, लेकिन जितना खादी-कार्य वास्तवमे हो चुका है उसकी दृष्टिसे यह सभी प्रान्तोसे पीछे है।

मैं चाहूँगा कि आप सब जिज्ञासु और अध्येताकी भावनासे इस प्रदर्शनीको देखे। खादी-उत्पादनके कार्यका सयोजन करनेके लिए मिल-कपडा उद्योगकी तरह लाखोकी पूंजी और विशेष तकनीकी कुशलताकी जरूरत नही है। कोई साधारण आदमी भी यह काम कर सकता है। मैं उम्मीद करता हूँ कि सीमाप्रान्तकी इस प्रथम खादी-प्रदर्शनीके बाद निकट भविष्यमे यहाँ और भी बहुत-सी प्रदर्शनियाँ आयोजित की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१०१. काठियावाड़-यात्राकी छाप

हरिजन-सेवा और खादी-कार्यके सिलसिलेमे श्री राजकुमारी अमृत कौरने हालमें ही काठियावाडका दौरा किया। दौरेकी समाप्ति पर उन्होंने, उनके मनपर जो छाप पडी, उसे मेरे लिए लिपिबद्ध कर दिया। उनका वह लेख नीचे दे रहा हूँ।[1] यह लेख केवल काठियावाडके कार्यकर्ताओके लिए ही उपयोगी नही है। बल्कि इसमे जो विचार व्यक्त किये गये है वे अखिल भारतीय महत्वके है। मुझे आशा है कि अपने जो अनुभव राजकुमारीने यहाँ लिपिबद्ध किये है उनसे कार्यकर्ता लोग लाभ उठायेंगे। उन्होंने देशी राजाओके बारेमे जो-कुछ कहा है वह अगर सच हो — और मैं तो मानता हूँ कि सच है — तो उनके एक सुझावपर तो तुरन्त अमल किया जा सकता है। उन्होने राजाओको इस बातका श्रेय दिया है कि वे अस्पृश्यतामें विश्वास नही करते और अगर उनकी प्रजा चाहे तो वे सारे मन्दिरोके द्वार हरिजनोके लिए खोल देंगे। इसलिए उनका सुझाव है कि इन राज्योकी प्रजा इस प्रश्नपर अपनी राय जाहिर करे, तब तक राजाओको रुके रहनेकी जरूरत नही है; इसके बजाय उन्हे ऐसे मन्दिर बनवाने चाहिए जिनके द्वार सबके लिए खुले हो और पुराने मन्दिरो के द्वार भी सबके लिए खुलवाने चाहिए। राजा लोग ऐसा आग्रह रख सकते है कि

१. यहाँ नही दिया गया है। लेखिकाने राजकोट, वाकानेर, मोरवी, जामनगर, पोरबन्दर, द्वारका, जूनागढ, बोलखा, थानी, अमरेली, लाठी, भावनगर, पालीताणा, बढवाण आदि कई देशी राज्योंका दौरा करके अपने लेखमें बताया था कि वहाँके हरिजन कैसी बाधाओं और कठिनाइयोंके बीच जी रहे हैं। लेखमें यह भी बताया गया था कि दौरेमे १,००० रुपयेकी खादी बेची गई।

वे जायेंगे तो केवल ऐसे ही मन्दिरोमे, और जिनके द्वार हरिजनोके लिए बन्द है उनमे कभी नही जायेंगे। और अगर ऐसे मन्दिर ठीक जगहोपर आकर्षक ढगसे बनवाये जाये और उनकी व्यवस्था अच्छी हो तो वे अस्पृश्यताके दुर्गको ढाहनेमे बड़े सहायक हो सकते हैं। यही नियम उन अन्य संस्थाओपर भी लागू किया जा सकता है जो कट्टरपथियोके डरसे अपने द्वार हरिजनोके लिए खोलनेको तैयार नही हैं। यह ऐसा उपाय है जिससे काम लेनेपर कमसे-कम विरोधकी सम्भावना है। यदि राजा लोग राजकुमारी द्वारा सुझाया यह बहुत ही सतर्कतापूर्ण कदम नही उठा सकते या नही उठाना चाहते तो फिर उनका अस्पृश्यतामे विश्वास न करनेका कोरा इजहार बेमानी ही है।

पेशावर, ४ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-११-१९३८

१०२. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

४ नवम्बर, १९३८

चि० अमृतलाल,

लगता है तुम बालकृष्णकी परिचर्यामे अच्छी तरह जुट गये हो। महोदयने कुछ उपेक्षा दिखाई लगती है।

ग्राम-सफाईका काम भी ठीक चल रहा जान पड़ता है। विजयाको लिख देना कि मैं बहुत व्यस्त हूँ, इसलिए मेरा पत्र न मिलनेकी शिकायत न करे। आशा है तुम्हारा काम ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७७८) से।

१०३. टिप्पणियाँ

औंध-राज्यमें सुधार

औंध-राज्यमे उत्तरदायी शासनकी स्थापनापर मैं राजासाहब और उनकी प्रजा, दोनोको बधाई देता हूँ। यह छोटा-सा राज्य सदासे प्रगतिशील रहा है। उत्तर-दायी शासन स्थापित करके औंध-नरेशने मात्र वही किया है जिसकी इच्छा उनकी प्रजाके मनमे थी; लेकिन सामाजिक क्षेत्रमे तो वे अपनी प्रजासे भी आगे रहे हैं। पूर्ण उत्तरदायी शासनकी घोषणा उनके आज तक के कार्योंका स्वाभाविक परिणाम थी। मुझे उम्मीद है कि इस घोषणापत्रमे जो अधिकार मजूर किये गये है, उन्हे सविधान बनाते समय किसी तरह कम नही किया जायेगा। मेरा सुझाव तो यह है कि निजी खर्चके लिए किसी भी हालतमे छत्तीस हजार रुपयेसे अधिककी राशि नही रखी जानी चाहिए। कानूनकी नजरमे सबकी समानता, अस्पृश्यता-उन्मूलन और वाणीकी स्वतन्त्रता, ये मौलिक अधिकार स्पष्ट कर दिये जाने चाहिए। घोषणापत्रका अन्तिम अनुच्छेद हृदयस्पर्शी है। इसमे कही गई यह बात बिलकुल सही है कि "स्वशासनका मतलब है आत्म-सयम और त्याग।" आगे कहा गया है. "जो नया युग औंधमे — और हम तो आशा करते है कि पूरे देशमे — आ रहा है, उसमे सबल निर्बलकी सेवा करेगा, धनी निर्धनकी, और शिक्षित अशिक्षितकी।"

हमे आशा करनी चाहिए कि औंधके इस सुन्दर उदाहरणका अनुकरण अन्य देशी राज्य भी करेगे और यहाँकी प्रजा अपने आचरण द्वारा यह सिद्ध कर दिखायेगी कि उसपर जो उत्तरदायित्व आनेवाला है, वह हर तरहसे उसके योग्य है। मुझे जितना कुछ सुननेको मिला है उससे जान पड़ता है कि औंधकी गद्दीके उत्तराधिकारीके रूपमे प्रजाको एक सच्चा जन-सेवक प्राप्त है। यह बात उत्तरदायी शासनके शुभारम्भमे बडी सहायक होनी चाहिए। युवराजने पश्चिमी शिक्षा प्राप्त की है, लेकिन वह शिक्षा उनको बिगाड़ नही पाई है। कहते है, वे सत्य और अहिंसाके पुजारी है। वे ग्रामोद्धार-कार्यमे व्यक्तिगत रूपसे हाथ बँटाते है, अन्य स्वयसेवकोके साथ मिलकर खुद भी सड़क साफ करते है और उनकी-जैसी ही सहजतासे फावडा और टोकरी सँभालते है। वे कलमके भी धनी है। वे भगीका काम — मैला उठाने तकका काम — बडे गर्वके साथ करते है।

आर्य समाज और गन्दा साहित्य

"साहित्यमे गन्दगी"[1] शीर्षक अपने लेखमे मैने कन्या गुरुकुल, देहरादूनमे शिक्षा प्राप्त कर रही अपनी पुत्र-वधूका उल्लेख किया था और कहा था कि उसकी परीक्षाके

[1] [illegible] देखिए [illegible] ६७, पृ० ४५३-४।

लिए निर्धारित कुछ पाठ्य-पुस्तकोमे उसे जो गन्दगी दिखाई दी है, उसके बारेमे उसने मुझे पत्र लिखा है। कन्या गुरुकुलसे श्री धर्मदेव शास्त्री और फिर गुरुकुल काँगडीसे आचार्य देवशर्मा अभयने मुझे इस आशयके पत्र लिखे है कि मेरे उस उल्लेखका अर्थ कुछ क्षेत्रोमे यह लगाया गया है कि आर्य समाजके पदाधिकारी ऐसे गन्दे साहित्यको प्रश्रय देते है। इन दोनो मित्रोने इस बातका जोरदार खण्डन किया है। आचार्य देवशर्मा अभयका कहना है कि गुरुकुलके कर्ता-धर्ता तो इस विषयमे इतने सावधान है कि वे कालिदास-जैसे काल-प्रतिष्ठित कवियोकी कृतियोके सम्बन्धमे भी कोई छूट देनेको तैयार नही थे और 'शाकुन्तल'-जैसी प्रसिद्ध रचनाके बारेमे भी उनका आग्रह रहा है कि जब तक उसके आपत्तिजनक अशोको छाँटकर उसका नया संस्करण नही छापा जाता, तब तक वे विद्यार्थियोको यह कृति नही पढने देगे। खैर, हुआ यह है कि हालमे उन्होने विद्यार्थियोको साहित्य सम्मेलनकी परीक्षाओकी तैयारी करनेकी इजाजत दे दी है और साहित्य सम्मेलन ऐसी पुस्तकोपर आपत्ति नही करता जिनमे अश्लील रचनाएँ होती है। मुझे मालूम हुआ है कि गुरुकुलके पदाधिकारियोने साहित्य सम्मेलनके व्यवस्थापकोका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित किया है और उनसे ऐसी पाठ्य-पुस्तकें हटा लेनेको कहा है जिनमे ऐसी गन्दी बाते है। मुझे उम्मीद है कि जब तक विद्यार्थियोकी पाठ्य-पुस्तकोमे अश्लील साहित्यके समावेशके खिलाफ छेडी गई इस मुहिममे आर्य समाजके पदाधिकारी सफलता प्राप्त नही कर लेते, तब तक वे चैनसे नही बैठेगे।

पत्र-लेखकोंसे

मेरे लाख चेतावनी देनेपर भी मेरा पत्र-व्यवहार दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है। अगर मै काम करते-करते किसी दिन लाचार होकर खाट पकड लेनेका खतरा उठानेको भी तैयार हो जाऊँ तो भी इन सारे पत्रोके उत्तर देना मेरे लिए अशक्य ही है। और न यह प्यारेलालके ही किये हो सकता है, यद्यपि वे अकसर आधी-आधी रात जागकर काम किया करते है। महादेव देसाईके स्वास्थ्यमे यद्यपि निश्चित रूपसे सुधार हो रहा है और उन्हे जितना-कुछ लिखना अनिवार्य लगे और जितना वे आसानीसे लिख सके उतना लिखनेकी इजाजत भी मिल गई है, फिर भी उन्हे मेरे पत्रोके उत्तर देनेका काम नही सौपा जा सकता। अब फिर मै उनके स्वास्थ्य को खतरेमे डालूँ, यह मुझसे नही हो सकता। उनका जीवन अत्यन्त नियमित है, लेकिन ऐसे नियमित जीवनकी भी कुछ मर्यादाएँ होती है, जिनकी ओरसे आँख बन्द नही की जानी चाहिए। इसलिए सवाल यह है कि भविष्यमे क्या कभी ऐसे पत्र-व्यवहारका भार उनपर डालना मुनासिब होगा जिसका सम्बन्ध खास तौरसे 'हरिजन' से न हो। पाठकगण मेरी कठिनाई समझनेकी कोशिश करे। मेरे सामने ऐसे-ऐसे कागज-पत्रोका अम्बार लगा हुआ है जिन्हे मै पढ नही पाया हूँ। कुछको पढ पाया हूँ तो उनके बारेमे जरूरी कार्रवाई नही कर सका हूँ। उदाहरणके लिए बिहारके मन्त्रियोके खिलाफ लम्बे-लम्बे शिकायतनामे आये है। इनसे भी लम्बे शिकायतनामे राजगोपालाचारीके विरुद्ध मलाबारसे आये है। मै इनपर सरसरी निगाह डाल गया हूँ। इनके

सम्बन्धमे आवश्यक कार्रवाई करनेमे मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। और जब तक मैं इनपर, जितना जरूरी है, उतना समय देनेको तैयार नही हूँ, तब तक इन्हे उन मन्त्रियोके पास भेजना भी मुनासिब नही होगा, जिनके खिलाफ ये शिकायते की गई है। तो मेरे पास न समय है और न ऐसा-कुछ करनेकी मेरी इच्छा है। ऐसे मामलोके निवटारेके लिए तो सही अदालत कार्य-समिति ही है। अगर मैं ऐसी शिकायतोको हाथ लगाने लगूं तो उसका मतलब सम्बन्धित मन्त्रियोके काममे और कार्य-समितिके कार्य-व्यापारमे भी हस्तक्षेप करना होगा।

लेकिन हस्तक्षेप न करनेके इस ठोस कारणका इस निवेदनसे कोई सम्बन्ध नही है। निर्णायक कारण तो मेरी पूर्ण असमर्थता है। इसलिए इन और ऐसे ही अन्य पत्र-लेखकोको मैं व्यक्तिगत रूपसे उनके पत्रोकी प्राप्ति भी सूचित नही कर रहा हूँ, जिसके लिए मैं उनसे माफी चाहता हूँ। फिर कुछ पत्रोमे विभिन्न प्रान्तोकी कांग्रेस कमेटियोके काल्पनिक या वास्तविक दुष्कृत्योकी शिकायत की गई है। इन पत्र-लेखकोने मुझे ऐसी शक्ति और प्रभावका श्रेय दिया है जो मुझमे बिलकुल नही है। लेकिन इनके सम्बन्धमे भी मेरी चुप्पीका सबसे प्रबल कारण मेरी शारीरिक अक्षमता ही है। और इनके अतिरिक्त है वे पत्र जिन्हे मैं पढ़ ही नही पाया हूँ। ईश्वर जाने, इनमे क्या है। फिर कुछ व्यक्तिगत पत्र भी है, जिनके उत्तर मैं दे सकूं तो सहर्ष दूं। मैं जानता हूँ कि यदि मैं इन पत्रोके सम्बन्धमे अपेक्षित कार्रवाई कर सकूं तो उससे उन्हे कुछ सहायता और सन्तोष मिल सकता है। मैं वैसी कार्रवाई करना भी चाहूँगा, लेकिन अभी जो परिस्थिति है उसमे तो मैं उनके सामने अपनी लाचारीका ही इजहार कर सकता हूँ। मुझमे जो-कुछ शक्ति शेष है, उसे उन कार्योंमें लगानेके लिए सुरक्षित रखना है जो सबके हितके लिए है और जिनको सफल बनानेमें, मैं समझता हूँ, अब भी मैं ठीक योगदान कर सकता हूँ। इसलिए जो पत्र-लेखक अपने-अपने पत्रोके उत्तरकी राह देख रहे है उन्हे अगर कभी कोई उत्तर मिले ही नही तो उनसे अनुरोध है कि वे मुझे क्षमा करेंगे। जो लोग मुझे पत्र लिखनेके अभ्यस्त है वे अगर केवल ऐसे ही प्रश्नोके सम्बन्धमे लिखें जिनकी चर्चा 'हरिजन' मे की जा सकती है या जिनके बारेमे इस पत्रके माध्यमसे सलाह दी जा सकती है तो इस तरह वे मेरी बहुत बडी सहायता करेंगे। दूसरे शब्दोमें, जो लोग अपनी रुचिके और साथ ही आम जनताके लिए भी महत्व रखनेवाले विषयोपर मेरा दृष्टिकोण जानना चाहे उनके लिए यथासम्भव 'हरिजन' ही मेरा एकमात्र पत्र या सन्देश होना चाहिए।

पेशावर, ५ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-११-१९३८

१०४. बड़ी शक्तियाँ क्यों नहीं ?

चेकोस्लोवाकियाकी दुरावस्थापर लिखे मेरे हालके लेखो[1] की जो आलोचनाएँ हुई है उनमे मुझे एक चीज ऐसी देखनेको मिली है जिसका जवाब देना जरूरी है।

कुछ आलोचकोका कहना है कि यदि मेरा सुझाया अहिंसक उपाय इंग्लैंड, फ्रांस या अमेरिका-जैसे शक्तिशाली राष्ट्रोके लिए नही, बल्कि केवल चेकोस्लोवाकिया-जैसे छोटे और इसलिए अपेक्षाकृत कमजोर राष्ट्रोके लिए ही है तो इसका कोई खास महत्व नही है।

यदि ये आलोचक मेरे लेखोको दोबारा ध्यानसे पढे तो पायेगे कि मैंने जो इन शक्तिशाली राष्ट्रोको यह उपाय नही सुझाया, उसका कारण उनका शक्तिशाली होना, या दूसरे शब्दोमे, उनके सामने खुद मेरे मनकी झिझक थी। लेकिन उनको लक्षित करके अपनी बात न कहनेका इससे एक बडा कारण भी था। वे किसी सकटमे नही थे और इसलिए उन्हें इससे उबरनेके उपायकी भी कोई जरूरत नही थी। यदि चिकित्साशास्त्रकी शब्दावलीमे कहूँ तो वे चेकोस्लोवाकियाकी तरह रुग्ण नही थे। चेकोस्लोवाकियाकी तरह उनके अस्तित्वको कोई खतरा नही था। इसलिए इन शक्तिशाली राष्ट्रोसे मेरा कोई अनुरोध करना थोथे और अनचाहे उपदेशके समान होता।

अनुभवसे मैंने यह भी जाना है कि केवल नेकीकी खातिर मनुष्य नेक कदाचित् ही बनता है। उसे नेक बनाती है उसकी अपनी जरूरत। और परिस्थितिवश ही अगर मनुष्य नेक बन जाये तो इसमे बुरा क्या है? हाँ, यदि वह सिर्फ नेकीकी खातिर नेक बन जाये तो यह स्थिति बेहतर तो होगी ही।

चेक लोगोके सामने दो ही रास्ते थे — या तो जर्मनीकी शक्तिके आगे शान्तिपूर्वक घुटने टेक दे या अकेले लडकर लगभग निश्चित विनाशका खतरा उठाये। यही वह अवसर था जब मुझ-जैसे आदमीके लिए उन्हे एक ऐसा उपाय सुझाना आवश्यक हो गया जिसकी प्रभावकारिता बहुत-कुछ ऐसी ही परिस्थितियोमे अन्यत्र सिद्ध हो चुकी थी। मेरी रायमे तो चेक लोगोसे वैसा अनुरोध करना उतना ही संगत था जितना कि बडी शक्तियोसे करना असंगत होता।

इसपर मेरे आलोचक बखूबी पूछ सकते है कि जब आप भारतमे ही अहिंसाको शत-प्रतिशत सफल बनाकर नही दिखा सके और खासकर अब, जबकि काग्रेसी अपने अहिंसा-धर्म या अहिंसा-नीतिका सचमुच आचरण कर रहे है या नही, इस सम्बन्धमे खुद आपके ही मनमे गम्भीर शका पैदा हो गई है तब आप अपने ऊपर खुद ही लगाई मर्यादाको तोडकर एक पाश्चात्य राष्ट्रको उपदेश क्यो देने लगे। सच तो यह

१. देखिए खण्ड ६७, "यदि मैं चेक होता", पृ० ४४९-५२ और "तर्कसम्मत निष्कर्ष", पृ० ४५९-६२।

है कि मेरे मनमें इस मर्यादाका खयाल था और कांग्रेसकी स्थितिके सम्बन्धमें आज जो अनिश्चितता चल रही है उसका भी मुझे ध्यान था। लेकिन वह लेख लिखते समय अहिंसात्मक उपायमें मेरी श्रद्धा सदाकी भाँति दीप्त और दृढ़ थी। और मुझे लगा कि चेक लोगोंकी परीक्षाकी इस सबसे कठिन घड़ीमें यदि मैं अहिंसात्मक उपाय स्वीकारार्थ उनके सामने प्रस्तुत न करूँ तो यह मेरी कायरता होगी। जो लोग अनुशासनहीन हों और जिन्हें सामूहिक रूपसे कष्ट-सहन करनेका अभ्यास पड़ने भी लगा हो तो अभी कुछ ही दिनोंसे, ऐसे लोगोंके राष्ट्रके लिए जो चीज स्वीकार करना अन्ततः असम्भव साबित हो सकता है, उसी चीजको स्वीकार करना किसी छोटे, ऐक्यबद्ध, अनुशासित और सामूहिक कष्ट-सहनके अभ्यस्त राष्ट्रके लिए सम्भव भी हो सकता है। भारतके अतिरिक्त कोई अन्य राष्ट्र तो अहिंसामय संघर्ष करनेके योग्य है ही नहीं, अपने मनमें ऐसा कोई दम्भमय विश्वास पालनेका अधिकार मुझे नहीं था। वैसे मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं मानता था और आज भी मानता हूँ कि अहिंसात्मक संघर्षके बलपर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी दृष्टिसे भारत सबसे उपयुक्त राष्ट्र था। यद्यपि आज कुछ प्रतिकूल लक्षण दिखाई दे रहे हैं, फिर भी मैं मानता हूँ कि यदि भारतकी सम्पूर्ण जनता, जो निश्चय ही कांग्रेससे बहुत बड़ी है, किसी प्रवृत्तिके प्रति ठीक उत्साह दिखा सकती है तो वह अहिंसात्मक प्रवृत्ति ही है। ऐसी प्रवृत्तिके लिए जितनी तैयार वह है उतनी अन्य किसी राष्ट्रकी जनता नहीं। लेकिन जब सामने एक ऐसा प्रसंग आ गया जिसमें इस उपायका प्रयोग तत्काल होना था तो मैं इसे चेक लोगोंके स्वीकारार्थ पेश करनेका लोभ संवरण नहीं कर पाया।

लेकिन अगर बड़ी शक्तियाँ इसे अपनाना चाहें तो किसी भी दिन इसे अपनाकर परम यशकी भागी और भावी पीढ़ियोंकी स्थायी कृतज्ञताका पात्र बन सकती हैं। यदि वे या उनमें से कोई भी अपने विनाशका भय छोड़ दे और सारे शस्त्रास्त्र उठाकर फेंक दे तो उससे स्वभावतः अन्य राष्ट्र भी विवेकसे काम लेनेको प्रेरित होंगे। लेकिन तब इन महाशक्तियोंको अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओं और दुनियाके तथाकथित असभ्य या अर्ध-सभ्य राष्ट्रोंके शोषणका त्याग करना होगा और अपनी जीवन-पद्धति बदलनी होगी। इसका मतलब है पूर्ण क्रान्ति, आमूल परिवर्तन। महाशक्तियोंसे सामान्य परिस्थितियोंमें तो ऐसी कोई आशा करना मुश्किल ही है कि वे आज तक जिस दिशामें चलती रही हैं और जिस दिशामें चलकर उन्होंने — उनकी दृष्टिसे देखें तो — विजय-पर-विजय प्राप्त की है, उस दिशाको छोड़कर वे उससे उलटी दिशामें चलने लग जायें। लेकिन चमत्कार पहले भी हुए हैं और आजकी इस नीरस दुनियामें भी होते हैं। ईश्वरकी अन्यायके निराकरणकी शक्तिकी सीमा कौन जानता है? एक बात निश्चित है। अगर शस्त्रीकरणकी यह पागलपन-भरी होड़ कायम रहती है तो एक-न-एक दिन ऐसा भीषण नरसंहार अवश्य होगा, जैसा आज तक नहीं हुआ। यदि उसमें से कोई विजयी होकर निकल भी पायेगा तो वह विजय उस विजेता राष्ट्रके लिए जीते-जी

मृत्युके समान होगी। अहिंसाके समस्त गूढार्थोके साथ उसे बहादुरीसे बिना किसी शर्तके अपना लेनेके सिवा उस महाविनाशसे बचनेका और कोई उपाय नही है। लोकतन्त्र और हिंसा, दोनो साथ-साथ नही चल सकते। जो राज्य आज कहनेको लोकतान्त्रिक हैं उन्हे या तो खुल्लमखुल्ला सर्वसत्तात्मक राज्य बन जाना होगा या यदि उन्हे सचमुच लोकतान्त्रिक राज्य बनना है तो साहसके साथ अहिंसाको अपनाना होगा। अहिंसाका आचरण केवल व्यक्ति ही कर सकता है और राष्ट्र, जो आखिर व्यक्तियोसे ही बना हुआ है, उसका आचरण कभी नही कर सकता, ऐसा कहना तो सत्यका अपलाप है।

पेशावर, ५ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १२-११-१९३८

१०५. पत्र : मीराबहनको

पेशावर
५ नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

जाहिर है कि तुम्हारे अन्तरसे तुम्हें यह आदेश, जब मैंने सोचा था, शायद लगभग उसी समय मिला। जहाँ तक मुझे याद है, मैंने तुम्हे यह भी लिखा था कि अगर तुम्हे जरूरत महसूस हो तो मै तुम्हे जाने दूँगा। हाँ, यह खयाल मेरे मनमे नहीं, राजकुमारीके मनमे उपजा था। इसपर मैंने उसे लिखा कि वह सीधे तुम्हीको लिखे। लेकिन तुम्हारे इस पत्रको देखते हुए तो ये सब बीती बाते बन चुकी है। वहाँ आनेपर — और उम्मीद करता हूँ शायद ११ तारीख तक आऊँगा — हम, इसका तरीका क्या हो, इस विषयपर विचार करेंगे। आशा है कि आऊँगा तो अगाथा वहीं होगी। अगर जानेका निर्णय अन्तिम रूपसे कर लिया हो तो मुझे लगता है कि जितनी जल्दी चली जाओ उतना ही अच्छा, बशर्ते कि यूरोपकी सर्दी बर्दाश्त कर सको। मै नही चाहता कि तुम अपने स्वास्थ्यको खतरेमे डालो। अगर तुम अपने मनको निर्जीव अण्डे लेनेपर तैयार कर सको तो हो सकता है, तुम वहाँकी सर्दी बर्दाश्त कर लो। लेकिन आखिर फैसला तो तुम्हीको करना है।

इस प्रश्नके आर्थिक पहलूके सम्बन्धमे मैंने कार्रवाई शुरू कर दी है। मौनके नियममे कुछ दिनोके लिए ढील दे दी है। इसलिए दाख चबाते हुए यह पत्र बोलकर लिखा पाया हूँ।

सस्नेह,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१३) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १०००८ से भी।

१०६. पत्र: महादेव देसाईको

पेशावर
५ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

तुमने टिकनेका निर्णय करके अच्छा किया। मुझे भी यह ठीक लगता है। और समुद्र-यात्राकी बात तो मुझे पसन्द थी ही। कैलेनबैकका सुझाव तो खूब पसन्द आया है। मेरी रणभूमि तुम देख आओ। यह तो मुझे बहुत अच्छा लगेगा कि तुम फीनिक्स, टॉल्स्टॉय फार्म, डरबनमे जहाँ मैं रहता था वह मकान, जोहानिसबर्गका कार्यालय आदि देखो। मणिलाल तो खुशी से नाच उठेगा किन्तु दुर्गा और बाबलाको वहाँ तक ले जाना मुश्किल होगा। मैं चाहूँगा कि बाबला तो मेरे साथ रहे। इसके अतिरिक्त दक्षिण आफ्रिका जानेका मतलब है कमसे-कम चार महीने लगना। दक्षिण आफ्रिका हिन्दुस्तानसे कोई छोटा देश नही है। वहाँ जाकर चारो उपनिवेश देखो। विक्टोरिया प्रपात तो अवश्य देखना चाहिए। जब तुम इतनी दूर जाओगे तो झटपट वापस नही लौट सकोगे। केवल कुमारी श्लेसिनसे मिलनेके लिए भी वहाँ जाना उचित होगा। तुम्हारे जानेसे शायद कैलेनबैकके जीवनकी एक बडी इच्छा पूरी हो जायेगी। और वहाँकी आबहवाका तो कहना ही क्या? इसपर विचार कर देखना। यदि तुम्हारी जानेकी इच्छा हो तो मैं तुम्हे भेजनेको बिलकुल तैयार हूँ।

यदि मीराबहन जाना चाहे तो मैं उसे भी भेजनेको तैयार हूँ। उसके जानेसे कोई नुकसान तो होगा नही। मेरे साथ रहते हुए उसे अपने-आपको दबाकर रखना पड़ता है जबकि वह पश्चिममे स्वतन्त्रतापूर्वक काम कर सकती है। उसके साहसकी तो कोई सीमा ही नही है।

म्योरहेडके सम्बन्धमे लिखनेकी बात तो मैं बिलकुल भूल गया था। किन्तु यदि कुछ बात हुई होती तो मैं तुम्हे लिखे बिना न रहता। लेकिन मुझे लगता है कि मुझसे बाते करनेकी उसकी हिम्मत ही नही हुई। या फिर उसका उद्देश्य सिर्फ मुझसे मिलना ही रहा हो। मैंने तो उसे तनिक भी प्रोत्साहन नही दिया। मेरी इच्छा भी नही थी। बात करनेको थी भी क्या? यदि कांग्रेस भ्रष्टाचारसे मुक्त हो जाये तो किसीसे बाते किये बिना आज ही स्वराज्य लिया जा सकता है। यदि उक्त भ्रष्टाचार नही मिटता तो स्वराज्य आकाश-कुसुम है। अब मैं अपनी कलमको रोकता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७६) से।

१०७. भाषण: पेशावरके वकील मण्डलके समक्ष[1]

[५ नवम्बर, १९३८][2]

अपने छोटे किन्तु विनोदपूर्ण भाषणमें गांधीजी ने कहा कि आप लोगोंने मुझे जो मान दिया है उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ, लेकिन मैं इस सम्मानके योग्य नहीं हूँ, क्योंकि एक तो, जैसाकि आप सब जानते हैं, जिस संस्थाने मुझे बैरिस्टरकी उपाधि दी थी उसीने मेरी वकालतकी सनद छीन ली और दूसरे, मैं कानून वगैरह भूल चुका हूँ। और इधर कुछ वर्षोंसे तो मैं देशकी अदालतोंमें कानूनोंकी व्याख्या-विवेचन करनेके बजाय उन्हें भंग करनेमें ही लगा रहा हूँ। इसका एक और भी कारण — और मेरी दृष्टिमें शायद सबसे प्रबल कारण है — वकीलों और डॉक्टरोंके सम्बन्धमें मेरे वे विचित्र विचार, जिन्हें मैंने 'हिन्द स्वराज्य'[3] नामकी अपनी पुस्तिकामें प्रस्तुत किया है। सच्चा वकील तो वह है जो पहले सत्य और सेवाकी फिक्र करता है और अपने धन्धेसे होनेवाली आयको गौण महत्व ही देता है। मुझे नहीं मालूम कि आप सबने इस आदर्शको अपनाया है या नहीं, लेकिन अगर आप अपनी कानूनी प्रतिभाका उपयोग परमार्थकी भावनासे जन-सेवाके निमित्त करनेकी प्रतिज्ञा ले लें तो मैं ही सबसे आगे बढ़कर आपकी वंदना करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-११-१९३८

१०८. पत्र: महादेव देसाईको

६ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

लगभग पूरे दिन मोटर-लारीमे यात्रा करते हुए हम साँझको हरिपुर पहुँचे।

मैंसिघमके बारेमे तुम जो लिखते हो सो तो ठीक है किन्तु जिस ढगसे तुम उसे भारतकी स्थितिपर लागू करते हो वह मुझे ठीक नही लगा। यह लेख ही ऐसा है कि वह 'हरिजन' मे नही फबेगा। यदि छोटी-सी कोठरीमे आँखोको चौंधिया देनेवाली रोशनी रखी जाये तो वह रोशनी अच्छी नही लगती। वही बात तुम अपने

१. प्यारेलालके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-६" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।
२. गांधी — १९१५-१९४८ के अनुसार।
३. देखिए खण्ड १०।

लेखके बारेमें समझो। मैंसिघमने तो काल्पनिक काव्य लिखा किन्तु हम तो ठोस काम कर रहे हैं। ऐसी जगह तो जिस चीजपर अमल हो रहा है उसीकी चर्चा शोभा देती है। किन्तु इस सम्बन्धमें अधिक तर्क-वितर्क क्यों किया जाये? जब कभी हम मिलेंगे उस समय यदि फुरसत हुई और जरूरत जान पड़ी तो इस बारेमें चर्चा कर लेंगे। कभी-कभी ही ऐसा होता है कि तुम जो कहते हो वह मेरे गले नहीं उतरता या मैं जो कहता हूँ वह तुम्हारे गले नहीं उतरता। इसलिए मैं इस मतभेदको अवश्य टालना चाहूँगा। मैंने सोचा था कि उक्त लेख तुम्हें दिल्लीमें दे दूंगा। अब मैं वह तुम्हें डाक से भेज दूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७७) से।

१०९. बातचीत: विभूतिमें[1]

६ नवम्बर, १९३८

खुदाई खिदमतगार संगठनका सदर मुकाम उटमजईमें है। उस संगठनके प्रतिज्ञा-पत्रपर हस्ताक्षर करनेवाला और पश्तो बोलनेवाला हर आदमी खुदाई खिदमतगार बन सकता है। शर्त केवल यह है कि वह खुदाई खिदमतगार होनेके साथ-साथ किसी और संस्थाका सदस्य नहीं हो सकता। इसलिए अगर आपकी इच्छा हो तो आपको खुदाई खिदमतगार बननेकी पूरी छूट है और इसके लिए किसीकी अनुमतिकी जरूरत नहीं है।

खुदाई खिदमतगारोंने अपनी संगठन-क्षमता असंदिग्ध रूपसे सिद्ध कर दिखाई है। जिस सभामें भी चुनिन्दा खुदाई खिदमतगारोंका एक दल उपस्थित रहता है उसमें व्यवस्था-ही-व्यवस्था रहती है। अहिंसा-धर्मकी अपेक्षा यह है कि इसके पुजारी अपनी प्रेम-शक्तिके बलपर लोगोंसे वह सब करवा ले जो पुलिस अपनी लाठियों और गोलियोंके जोरसे करवाती है। जब हमारे हृदयोंमें प्रेमका बीज अंकुरित होगा तो हमारे सारे छोटे-मोटे झगड़े और आपसी वैमनस्य अपने-आप मिट जायेंगे। अब आजकी ही घटनाका उदाहरण लें। एक बछड़ा कुसंयोगसे हमारी बससे कुचल गया।[2] उस चालकके हृदयमें प्रेम होता तो वह तत्काल गाड़ीको रोक देता, ताकि

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–६" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। विभूतिके पश्तो-भाषी लोगोंने गांधीजी से अनुरोध किया था कि उन्हें खुदाई खिदमतगार आन्दोलनमें शामिल होनेकी इजाजत दी जाये, यद्यपि राजनीतिक तथा भौगोलिक दृष्टिसे वे पंजाब प्रान्तके थे।

२. जब गांधीजी मोटरमें बैठकर विभूति जा रहे थे तभी रास्तेमें उनकी गाड़ीसे एक बछड़ेको धक्का लग गया था और उसके शरीरका एक हिस्सा कुचल भी गया था। स्थानीय कांग्रेसियोंने इसके लिए विरोधियों या सरकारको दोषी बताया था।

घायल बछड़ेकी देखभाल और इलाजकी ठीक व्यवस्था की जा सकती। हमारे साथियोंमें से एक भाई तो बिना सोचे-विचारे कुछ तथाकथित विरोधियोंका नाम लेकर कहने लगे कि यह दुर्घटना जान-बूझकर उन्होंने ही करवाई। मुझे यह बात अशोभन जल्दबाजी जान पड़ी। यदि हमने अहिंसाको अपना लिया है तो हमें अपने विरोधीपर जल्दीमें किसी बदनीयतीका आरोप नहीं लगा बैठना चाहिए और न उसपर शंका ही करनी चाहिए। कुछ भी कहने या करनेसे पहले हमें निश्चित प्रमाण प्राप्त करना चाहिए। जब खुदाई खिदमतगारोंके हृदयोंमें प्रेमकी धारा हिलोरें मारने लगेगी तो हमें स्वराज्य भी मिल जायेगा। लेकिन जब तक हमारे छोटेसे-छोटे कामसे भी प्रेमकी आभा नहीं छिटकने लगेगी, तब तक हमें स्वराज्य नहीं मिल सकता।

हमें किसीको दुर्घटनास्थल पर भेजना चाहिए कि वह पशुके मालिकसे मुआवजे की बात करे और बछड़ेको इलाजके लिए पशु-चिकित्सकके पास ले जाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-११-१९३८

११०. भाषण : हरिपुरकी सार्वजनिक सभामें[1]

६ नवम्बर, १९३८

वैज्ञानिकोंका कहना है कि हम बन्दरोंकी सन्तान हैं। भले ही उनकी बात सच हो, लेकिन मनुष्यका भवितव्य पशु बनकर जीना और पशुकी ही तरह मर जाना नहीं है। जिस अनुपातमें वह अहिंसाको अपने आचरणमें उतारता है और स्वेच्छासे अनुशासनके अधीन होता है उसी अनुपातमें वह पशुवृत्तिसे दूर हटता चला जाता है और अपने भवितव्यकी ओर बढ़ता जाता है। अहिंसा हमपर जो कर्तव्य आरोपित करती है उनमें से एक यह भी है कि हम निर्बलसे-निर्बल आदमीके — यहाँ तक कि एक बच्चेके भी — अधिकारोंका सम्मान करें।[2]

. . . गालियोंका जवाब हमें सहिष्णुतासे देना चाहिए।[3] मानव-स्वभाव ऐसा है कि यदि हम किसीके क्रोध या गालियोंकी ओर ध्यान न दें तो वह आदमी जल्दी ही हार-थककर अपनी ऐसी हरकत छोड़ देता है। जिन लोगोंने यहाँ उपद्रव खड़ा करनेकी कोशिश की उनके प्रति हमारे मनमें कोई क्षोभ नहीं होना चाहिए। उन्होंने

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–६" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।

२. तात्पर्य स्थानीय स्कूलके प्रधानाध्यापककी इस सौम्य शिकायतसे था कि वहाँके कांग्रेसियोंने स्कूलमें सभा करनेसे पूर्व उसकी इजाजत नहीं ली थी।

३. तात्पर्य "सोशलिस्ट" प्रतिनिधिमण्डल द्वारा अशोभन नारे लगाते हुए सभा छोड़कर चले जानेसे था। वे गांधीजीको मानपत्र भेंट करना चाहते थे, लेकिन सभाकी कार्यवाही पहले ही शुरू हो चुकी थी, इसलिए उन्हें यह सुविधा नहीं दी गई।

तो अनजाने ही हमे सहिष्णुता और क्षमाशीलताका एक महत्वपूर्ण पाठ सीखनेका अवसर दिया। सत्याग्रही अपने 'शत्रु' को सदा ऐसा आदमी मानता है जिसमे उसका मित्र बननेकी सम्भावना भरी हुई है। अहिंसाके अपने आधी सदीके अनुभवके दौरान मेरे सामने इस बातका एक भी उदाहरण नही आया है कि सम्पूर्ण अहिंसाके समक्ष किसीकी शत्रुता अन्त तक कायम रही हो।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २६-११-१९३८

१११. पत्र : अमृत कौरको

हरिपुर
७ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

बर्मामे जो फिरसे दगे भडक उठे थे[1] उसकी ओर तुम्हारा ध्यान गया था क्या? यह बडे दु:ख का विषय है। दंगोमे भिक्षु लोग आगे बढ़कर हिस्सा ले, इसका रहस्य तो हम शायद कभी नही समझ पायेंगे।

हम लोगोने हसन अब्दालका प्रसिद्ध गुरुद्वारा देखा। तुमने न देखा हो तो मौका मिलनेपर देख लेना चाहिए। इमारत तो बड़ी शानदार है, लेकिन नानककी आत्माके दर्शन वहाँ नही होते।

कल तुम्हारा कोई पत्र नही मिला। आशा कर रहा हूँ कि मुझे ऐबटाबादमे तुम्हारा पत्र मिलेगा।

९ तारीखको हम तक्षशिलासे ट्रेन पकड़कर प्रस्थान करेंगे।

सप्रेम,

योद्धा

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४८) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४५७ से भी।

१. देखिए खण्ड ६७, "बर्माके हालके दंगे", पृ० २९७-३००।

११२. पत्र : देव प्रकाश भाटियाको

७ नवम्बर, १९३८

प्रिय मित्र,

आप तो अपने वादेके बडे पक्के निकले।

प्रार्थना स्रष्टाके साथ सम्पर्क स्थापित करनेकी तीव्र आकाक्षा है। यह प्रयत्न बुद्धिके धरातलपर नही, हृदयके धरातलपर किया जाता है। यह सम्पर्क जल्दी भी स्थापित हो सकता है और इसमे कई वर्ष या युग भी लग सकते हैं। प्रयत्न सच्चे मनसे और हृदयसे किया जाये, इतना ही काफी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री देव प्रकाश भाटिया, बी० ए०, एल० एल० बी०
पेशावर छावनी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३८) से।

११३. पत्र : मीराबहनको

ऐबटाबाद
७ नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

इस प्रान्तसे तुम्हें यही आखिरी पत्र लिख सकता हूँ। जगह बड़ी सुन्दर है; सिर्फ इसके साथ जुडी स्मृतियाँ खटकती हैं। मुन्नालालसे कहना कि उससे मिलनेपर उसके पत्रके बारेमे चर्चा करूँगा। आज इतना ही।

सप्रेम,

बापू

श्री मीराबहन
सेगाँव आश्रम
सेगाँव, वर्धा, म० प्रा०

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १०००९ से भी।

११४. पत्र : महादेव देसाईको

७ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

यह पत्र बहुत . . .[१] है। यदि तुम दिल्ली पहुँच गये होगे तो यह तुम्हारे पीछे-पीछे आयेगा। इसके साथ मणिका पत्र है। प्यारेलालका पत्र विचित्र लगता है। किन्तु जो हो सो ठीक है।

एकाएक वर्धामे पडे रहनेका निर्णय मत कर बैठना। यदि और कही नही तो बम्बई या बलसाडमे अवश्य रहना चाहिए। यदि तुममे दक्षिण आफ्रिका जानेकी हिम्मत हो तो यह सबसे अच्छा होगा। किन्तु मै किसी बातका आग्रह नही करूँगा। जो तुम्हारा मन कहे सो करो। यदि वर्धाके सिवा तुम्हे और कही चैन न मिले तो मै उसका भी विरोध नही करूँगा। हमे खतरा नही उठाना चाहिए। तुम्हे भी वही हुआ है जैसाकि मुझे निपाणी[२]मे हुआ था और छ महीने खटिया-पर पडे रहना पड़ा था। तुम्हारी उम्रको देखते हुए यह हो सकता है कि तुम्हे उतने दिन आराम न लेना पडे।

इसके साथ राधाकृष्णका पत्र भी तुम्हारे पढने और पढकर फाड देनेके लिए भेज रहा हूँ। तुम्हारा लेख सुरक्षित रखा हुआ है। तुम्हारी इच्छा जाननेके बाद उसे तुम्हे भेज दूँगा या मै स्वय तुम्हे सौप दूँगा। क्या वह लेख खो देने लायक है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७८) से।

११५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

ऐबटाबाद

८ नवम्बर, १९३८

चि० कान्ति,

तेरा तार मिला। पैसोके बारेमे तो मैंने निर्णय कर ही लिया है कि इसका बोझ रामचन्द्रन पर कदापि नही डाला जा सकता। मुझे कुछ ऐसा ध्यान है कि जाते समय भी उसे मैंने ही पैसे दिये थे। किन्तु यदि ऐसा नही होगा तो उसके आनेपर हम देख लेगे। लेकिन जैसाकि मैंने सुझाव दिया था तदनुसार रामचन्द्रनसे बात

१. साधन-सूत्रमें यह अंश अस्पष्ट है।

२. देखिए खण्ड ३३, पृ० २०९-१०।

करना तेरा कर्तव्य है। उनमे न कहना उनके प्रति विश्वासघात करना है और इसमे पापरम्माका अहित है।

तू इन दिनों तर्क-वितर्कके मोहमे नही पडता, यह तेरी बुद्धिमत्ता ही है। यदि तेरे मनमे सन्तोषजनक तर्क उठते है और अनुभव उनका समर्थन करें तो जब तेरा समय आयेगा तब तेरे तर्कोंमे अत्यधिक बल होगा। फिलहाल तो इतना ही काफी है कि तुझे मेरा मार्ग सही जान पडता है और तू अपने जीवनमे उसका अनुसरण भी करना चाहता है। यदि तू इसपर दृढ़ रह सके तो यह बहुत काफी होगा।

तू अपने स्वास्थ्यको बिलकुल मत बिगडने देना। इस भ्रममे मत रहना कि तू उसे बादमें सुधार लेगा। मामूली या सख्त कैसी भी बीमारी हो, उसके उभरते ही उससे मुक्ति पा लेनी चाहिए।

मनुष्यके स्वभावको समझनेके लिहाजसे सीमाप्रान्त देखने लायक है। वहाँ प्राकृतिक सौन्दर्यके कुछ स्थल तो सुन्दर है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५१) से; सौजन्य . कान्तिलाल गाधी।

११६. बातचीत : खुदाई खिदमतगारोंके साथ[1]

मानसेहरा

[८ नवम्बर, १९३८][2]

इन दिनों ऐसा कहनेका एक फैशन-सा हो गया है कि समाजको अहिंसाके आधारपर सगठित या संचालित नही किया जा सकता। मै इस बातसे सहमत नही हूँ। किसी परिवारमे जब पिता अपने बिगडे लडकेको तमाचा लगाता है तो लड़केके मनमे बदला लेनेका खयाल तो नही आता। वह पिताकी आज्ञाका पालन प्रताडनाके भयसे नही, बल्कि प्रताड़नाके पीछे उस प्रेमके कारण करता है जिसको उसने अपने आचरणसे चोट पहुँचाई है। मेरी रायमे, यह उस तरीकेका एक दृष्टान्त है जिससे समाजका सचालन होता है या होना चाहिए। जो बात परिवारपर लागू होती है, वही समाजपर भी लागू होगी, क्योकि समाज भी तो आखिर एक बड़ा परिवार ही है। यह तो मनुष्यकी कल्पना है जिसने संसारको परस्पर झगड़ रहे मित्र-शत्रुके खेमोमे बाँट दिया है। अन्तत' देखे तो इन झगड़ा-फसादोके बीच भी अगर कोई शक्ति सक्रिय रह पाती है तो वह प्रेमकी ही शक्ति है और उसीपर दुनिया टिकी हुई है।

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–७" शीर्षक विवरणसे उद्धृत।

२. गांधी — १९१५-१९४८ के अनुसार।

मुझसे कहा गया है कि यहाँके लाल कुर्तीवाले नाम मात्रको ही लाल कुर्तीवाले हैं। मैं तो यही उम्मीद करता हूँ कि यह आरोप निराधार होगा। मुझे मालूम है है कि खुदाई खिदमतगार आन्दोलनमे अवाछनीय और स्वार्थी तत्वोके घुस आनेसे खानसाहब बहुत चिन्तित है। मै उनके इस विचारसे सहमत हूँ कि खुदाई खिदमतगारोकी सख्या बढानेवाले लोग जिस धर्मको माननेका दावा करते है, यदि वे उसके सच्चे प्रतिनिधि नही है तो सिर्फ सख्या-वृद्धिसे इस आन्दोलनकी जड़ें मजबूत होनेके बजाय कमजोर ही होगी।

लालकुर्ती-आन्दोलनकी ओर आज पूरे भारतका, बल्कि बाहरी देशोका भी, ध्यान आकृष्ट है। लेकिन अब तक इसने जितना-कुछ कर दिखाया है वह, इसे जितना कुछ करना है, उसकी तुलनामे बहुत ही कम है। मै खुदाई खिदमतगारोके इस आश्वासनको पूरे भरोसेसे स्वीकार करता हूँ कि वे अहिंसाको समझने और उसका पूरा-पूरा पालन करनेके लिए बडे उत्सुक है। अभी तो उन्हे न जाने कितनी कठिन ऊँचाईपर चढना है। उनके सामने मैने रचनात्मक अहिंसाका जो कार्यक्रम रखा है, वह जब एक बार शुरू कर दिया जाता है तो फिर अपने-आप अपना मार्ग बनाता और अपना प्रभाव दिखाता चला जाता है। इस कार्यक्रमपर अमल किया जाना खुदाई खिदमतगारोकी उत्कटता और ईमानदारीकी भी एक अचूक कसौटी होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१२-१९३८

११७. भाषण : मानसेहराकी सार्वजनिक सभामें[1]

८ नवम्बर, १९३८

गांधीजी ने उत्तर देते हुए कहा कि आपने अहिंसाके क्षेत्रमें अब तक जितना-कुछ प्राप्त किया है उसको देखते हुए मुझे आपसे बड़ी-बड़ी आशाएँ बँधती हैं। लेकिन मैं तो इस पुरानी कहावतमें विश्वास रखनेवाला आदमी हूँ कि जो जितना देता है उससे उतनी ही ज्यादा आशा की जाती है। सो मैं आपको बता देता हूँ कि मैं आप लोगों से तब तक सन्तुष्ट होनेवाला नहीं हूँ जब तक कि आप अहिंसाके द्वारा न केवल अपनी, बल्कि भारतकी भी मुक्ति प्राप्त नहीं कर दिखाते। आपके प्रान्तमें मैं यह दूसरी बार आपको और निकटसे जानने तथा यह समझने आया हूँ कि अहिंसा आपके बीच कैसे काम कर रही है; और ऐसा इरादा रखता हूँ कि आपके पास तीसरी बार भी

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–७" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। मानसेहराके नागरिकोंने अपने मानपत्रमें गांधीजी को आश्वस्त किया था कि पठान लोग कुछ ही दिनोंमें "भारतके अहिंसक स्वातन्त्र्य-संग्राममें अपना अग्रिम स्थान" बना लेंगे।

आऊँ और तब विभिन्न समस्याओंको आज जिस बिन्दुपर छोड़कर जा रहा हूँ, उस बिन्दुसे उनके हल करनेके प्रयत्नमें फिरसे लग जाऊँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१२-१९३८

११८. बातचीत: अल्पसंख्यकोंके शिष्टमण्डलके साथ[1]

ऐबटाबाद

[८ नवम्बर, १९३८][2]

उत्तरमें गांधीजी ने कहा कि अर्जी देनेपर बन्दूक वगैरह रखनेके परवानेके बेरोकटोक जारी किये जानेकी आपकी माँगका समर्थन मैं तो कर सकता हूँ, लेकिन सरकारसे ऐसी आशा करना उचित नहीं होगा कि वह पूरी सीमावर्ती आबादीके बीच बन्दूकें आदि मुफ्त बाँटे। अगर आप चाहें तो ऐसे हथियार मुफ्त बाँटे जानेके निमित्त कोष एकत्र कर सकते है, लेकिन बन्दूक आदि मुफ्त बाँटे जाने और लोगोंके उनको चलानेके लिए प्रशिक्षित कर दिये जानेसे सरहद-पारसे होनेवाले हमले बन्द हो जायेंगे, इस बातमें तो मुझे सन्देह है। यदि बन्नूमें हुए हालके हमलेके अनुभवसे देखें तो मानना होगा कि ऐसी कोई कार्रवाई बहुत ही खर्चीली और बेकार होगी। मुझे मालूम हुआ है कि बन्नूमें बन्दूकों वगैरहकी कोई कमी नहीं थी, लेकिन इस हमलेके दौरान केवल एक बन्दूकका प्रयोग हुआ और उसके प्रयोगसे भी हमलावरोंकी अपेक्षा आम लोग ही ज्यादा हताहत हुए। लेकिन आपने बहुसंख्यक समुदायके कर्तव्योंके बारेमें जो-कुछ कहा है, उससे मैं सहमत हूँ। खानसाहब खुदाई खिदमतगारोंको हमलावरोंसे नागरिकोंकी रक्षा करनेका अपना कर्तव्य निभानेके लिए तैयार कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१२-१९३८

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स-७" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। शिष्टमण्डलने अन्य बातोंके अलावा गांधीजी के सामने यह सुझाव भी रखा था कि बढ़ते खतरेको देखते हुए सीमावर्ती क्षेत्रोंके अल्पसंख्यकोंको बन्दूकें वगैरह मुफ्त दी जायें और उन्हें बन्दूकें आदि चलानेका प्रशिक्षण भी दिया जाये, ताकि वे अपनी रक्षा कर सकें।

२. गांधी — १९१५-१९४८ के अनुसार।

११९. भाषण: ऐबटाबादकी सार्वजनिक सभामें[1]

[८ नवम्बर, १९३८][2]

आपने मुझे जो मानपत्र भेंट किया है, उसके लिए मैं आप सबका आभारी हूँ। अपने मानपत्रमें आपने अपने यहाँ "विश्वके महानतम व्यक्ति" के पदार्पणपर अपनी प्रसन्नता प्रकट की है। आपका मानपत्र सुनते समय मेरे मनमें यह सवाल घूमता रहा कि आखिर वे सज्जन हैं कौन। निस्सन्देह, मैं तो नहीं हो सकता। मुझे अपने दोष भली-भाँति मालूम हैं। एथेंसके महान दार्शनिक सोलनके विषयमें एक कथा प्रचलित है। विश्वके सबसे धनाढ्य व्यक्तिके रूपमें विख्यात क्रीससने उनसे पूछा, संसारका सबसे सुखी व्यक्ति कौन है। क्रीससने सोच रखा था कि सोलन कहेंगे, आप ही वह सुखी व्यक्ति हैं। मगर सोलनने कहा कि मैं कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि किसीके अन्तकालसे पहले यह कैसे कहा जा सकता है कि वह सुखी है। अगर सोलनको किसी व्यक्तिके जीते-जी उसके सुखी होने या न होनेके सम्बन्धमें निर्णय देना कठिन लगा तो जरा सोचिए कि किसी व्यक्तिकी महानताके बारेमें कोई फतवा देना कितना कठिन है। सच्ची महानता ऊँचाईपर स्थापित कोई ऐसी प्रतिमा नहीं है, जिसे लोग आसानीसे देख लें। मेरा सत्तर वर्षोंका अनुभव तो मुझे यह बताता है कि अकसर वास्तवमें महान लोग तो वे होते हैं जिनके बारेमें और जिनकी महानताके सम्बन्धमें संसार उनके जीवन-कालमें कुछ नहीं जानता। सच्ची महानताका पारखी तो केवल ईश्वर है, क्योंकि वह मनुष्यके हृदयको पहचानता है। . . .

ऐबटाबादके निवासी ही नहीं, यहाँका सूर्य, चन्द्र और यहाँके तारे भी मेरी एक झलक पानेको लालायित थे। भाइयो, तो क्या मैं यह मानूँ कि आपके नगरके लिए कोई खास सूर्य और चन्द्रमा तथा तारे हैं, जो वर्धा या सेगाँवमें नहीं चमकते? हमारे यहाँ काठियावाड़में भाट नामकी एक जाति है। इस जातिके लोग पेशेवर चारण हैं, जिनका धन्धा पैसा पानेके लिए अपने-अपने सरदारोंकी प्रशस्ति करना है। खैर, मैं आपको भाट तो नहीं कहूँगा। अगर किसीका उपहास करना चाहें तब तो बात अलग है, लेकिन वैसे मैं चाहूँगा कि आप अपने नेताओंकी अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसा करनेकी गलतीको जरा समझें। इससे न उन्हें कोई लाभ होता है और न उनके काममें ही कोई सहायता मिलती है। इसलिए इस तरह बढ़ा-चढ़ाकर यशोगान करने-

१. प्यारेलाल नैयरके "इन द फ्रंटियर प्रॉविन्स–८" शीर्षक विवरणसे उद्धृत। सभामें कई मानपत्र भेंट किये गये और पूरे जिलेकी ओरसे ११२५ रुपयेकी एक थैली भी भेंट की गई।

२. ९-११-१९३८ के हिन्दुस्तान टाइम्स और इसी तारीखके हिन्दू के अनुसार।

वाले मानपत्र भेट करनेकी आदत आप हमेशाके लिए छोड दे, यही मै चाहूँगा। अब इस सत्तर सालकी उम्रमें कमसे-कम मै तो नही चाहूँगा कि ईश्वरने मुझे जो थोडा-बहुत समय और दिया हो उसे इस तरहके निरर्थक आडम्बरोमें बर्बाद कर दिया जाये। अगर मानपत्र दिया ही जाना हो तो मै चाहूँगा कि उसमे सम्मानित व्यक्तिके दोषो और त्रुटियोका वर्णन किया जाये, ताकि वह अपने अन्तरमे झाँककर देखने और उन दोषो और त्रुटियोको निकाल बाहर करनेको प्रेरित हो सके।

जबसे इस प्रान्तमे आया हूँ तभीसे मै खुदाई खिदमतगारोको अहिंसाका सिद्धान्त — सम्पूर्ण और शुद्ध अहिंसा-सिद्धान्त — समझानेकी कोशिश करता रहा हूँ। मै अहिंसाके मर्मको पूर्ण रूपसे समझनेका दावा नही करता। जितना-कुछ मै समझ पाया हूँ वह तो उस सम्पूर्णका, उस महान वस्तुका एक अशमात्र है। अहिंसाके सम्पूर्ण मर्मको समझना या उसका पूरा-पूरा आचरण करना मनुष्यके बसकी बात नही है, क्योकि वह तो स्वय ही अपूर्ण है। यह तो केवल ईश्वरका ही गुण है, उस परम शास्ताका जिससे बडा सृष्टिमे कोई नही है। लेकिन मै आधी सदीसे अधिक समयसे इसे समझने और इसे अपने जीवनमे उतारनेका सतत प्रयास करता रहा हूँ। इसमे सन्देह नही कि खुदाई खिदमतगारोने अहिंसाको जिस हद तक समझा है, उस हद तक उसका आचरण करनेका ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसने उन्हे सबकी प्रशसाका पात्र बनाया है। लेकिन अब उन्हे एक कदम और आगे जाना है। अपनी अहिंसाकी अवधारणाको उन्हे अधिक व्यापक बनाना है और अगर उन्हे अन्तिम अग्नि-परीक्षामे से सफल होकर निकलना है तो अहिंसाके आचरणमे — विशेषकर उसके विध्यात्मक पहलुओके आचरणमे — और अधिक पूर्णता और गहराई लानी है। अहिंसाका मतलब केवल शस्त्र-त्याग नही है। यह कोई कमजोरो और पुसत्वहीन लोगोका भी हथियार नही है। लाठी उठानेमे असमर्थ कोई बच्चा तो अहिंसाका आचरण नही करता। सारे शस्त्रास्त्रोसे अधिक सशक्त और सक्षम अहिंसा ससारमे एक अद्भुत शक्तिके रूपमे अवतरित हुई है। जिसने यह अनुभव करना नही सीखा है कि यह पशुबलकी अपेक्षा लाख गुनी अधिक सक्षम शक्ति है, उसने इसके सच्चे स्वरूपको नही पहचाना है। इस अहिंसाकी शक्तिको शब्दोमे व्यक्त नही किया जा सकता। इसकी ज्योति तो हमारे हृदयमे ही जल सकती है और वह ज्योति जलेगी तब जब हमारी उत्कट प्रार्थनाके परिणामस्वरूप हमे भगवत्कृपा प्राप्त होगी। कहते है, आज एक लाख खुदाई खिदमतगार ऐसे है जिन्होने अहिंसाको अपने धर्म-रूपमे स्वीकार किया है। लेकिन इनसे बहुत पहले, १९२० मे ही खानसाहबने अहिंसाको ससारके सबसे अधिक कारगर हथियारके रूपमे जान लिया था और तभी उन्होने इसे अपना भी लिया था। अहिंसा के अठारह वर्षोके आचरणसे इसमे उनकी श्रद्धा और भी सुदृढ ही हुई है। उन्होने खुद देखा है कि इसने उनके लोगोको किस प्रकार निर्भीक और सबल बना दिया है। अपनी छोटी-मोटी नौकरियाँ खो बैठनेकी आशंकासे ही पहले वे घबरा जाते थे। लेकिन आज वे कुछ और ही महसूस करते है। सत्तर सालकी इस अवस्थामे अहिंसामे स्वय मेरी श्रद्धा आज इतनी प्रबल है जितनी पहले कभी नही थी। लोग मुझसे कहते

है· "आपका अहिंसाका कार्यक्रम तो देशके सामने लगभग दो दशकोसे पडा हुआ है, लेकिन आपने जो स्वराज्य दिलानेका वादा किया था, वह कहाँ है?" मेरा उत्तर यह है कि यद्यपि कहनेको तो अहिंसाको करोडो लोगोने अपना लिया, लेकिन उसका आचरण बहुत कम लोगोने किया और जिन्होने किया उन्होने भी उसे एक नीति मानकर ही किया। लेकिन इस सबके बावजूद जो परिणाम सामने आया है, वह मुझे खुदाई खिदमतगारोके बीच अपना प्रयोग जारी रखनेके लिए प्रोत्साहित करनेकी दृष्टिसे काफी अच्छा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१२०. पत्र: सरस्वती गांधीको

[९ नवम्बर, १९३८के पूर्व][1]

चि० सरस्वती,

तुझे मेरे खत मिले होगे। दादाको मेरा खत दिया होगा। तेरे खतकी प्रतीक्षा करता हूँ। तेरी तबीयत अच्छी होगी और तू शात होगी। मेरे अक्षर पढ लेती है ना? यहाँ ९ नवेबर तक रहना होगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

बा बीमार पड गई थी, दिल्लीमे है। अब कुछ ठीक है। उनको खत लिखो। ठिकाना हरिजन कोलोनी, किग्सवे।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३४२७) से। सौजन्य. कान्तिलाल गांधी। जी० एन० ६१५४ से भी।

१. गांधीजी सीमाप्रान्तसे ९ नवम्बर, १९३८को रवाना हुए थे।

१२१. पत्र : सुशीला गांधीको

९ नवम्बर, १९३८

चि० सुशीला,

मैं यह जानता हूँ कि तुझे अकोलामें रहना अच्छा लगता है। नानाभाई[1] की सेवा करना तेरा अनिवार्य कर्तव्य है। इस बातका निर्णय तो तू ही कर सकती है कि उस सेवाके लिए तुझे वहाँ कब तक ठहरना चाहिए। यदि उसके लिए वहाँ तेरी तत्काल जरूरत न हो तो नेटाल जाना तेरा कर्तव्य है। तू वहाँ जितनी जल्दी पहुँच सके उतना अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

आशा है, नानाभाई अच्छे होंगे। मुझे सेगाँवके पतेपर लिखना। मैं यह चलती गाड़ीमें लिख रहा हूँ।

श्री सुशीलाबहन गांधी
मार्फत श्री नानाभाई मशरूवाला
अकोला, बरार

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८८८) से।

१२२. पत्र : मणिलाल गांधीको

९ नवम्बर, १९३८

चि० मणिलाल,

मैं तेरा गुनहगार हूँ। यात्राके दौरान तू छूट ही जाता है। काम अधिक है और अनुपातमें मेरी शक्ति कम है, इसलिए मैं कमसे-कम पत्रोंसे काम चलाता हूँ। फिर भी, मैं यह भली-भाँति समझता हूँ कि तुझे अवश्य लिखना चाहिए। जो हो, मैं तुझे नियमित रूपसे पत्र लिखने या लिखवानेका प्रयत्न करूँगा। मुझे ऐसा लगा करता है कि मैं तेरे प्रति अपने कर्तव्यका पालन पूरी तरहसे नहीं करता। भले ही मैं पालनीय किसी कर्तव्यका निर्वाह न कर सकूँ फिर भी तुझे पत्र लिखनेकी भी अपनी कीमत है ही।

१. नानाभाई मशरूवाला, सुशीला गांधीके पिता।

सुशीलाको तो मैंने कबका लिख दिया है कि उसका कर्तव्य तेरे पास रहना है। उसने यहाँ एक-आध महीना बितानेका निर्णय किया है। मैंने तो आज फिर लिखा है कि यदि नानाभाईकी सेवाके लिए वहाँ रहनेकी जरूरत न हो तो वह तुरन्त लौट जाये।[1] उसे वापस भेजनेमें मुझसे जितनी बन पड़ेगी उतनी तेरी सहायता मैं अवश्य करूँगा।

यदि फीनिक्सका कोई हिस्सा बेचना आवश्यक हो और न्यासी इसके लिए सहमत हो जायें तो बेच देना। क्लेसिन जो कहती है, वह विचार करने लायक तो है ही।

मैं तेरा पत्र छगनलालको भेज तो रहा हूँ किन्तु मुझे नहीं लगता कि वह आनेकी बात सोचेगा। वहाँ जाकर रहनेवालोंमें तो रामदास था, किन्तु उसका मन नहीं मानता। अच्छा तो यही है कि तुझसे और सुशीलासे जो हो सके सो करके सन्तोष मानो। यदि क्लेसिन पूरी सहायता दे तो यह अच्छा ही है। यदि प्रागजी यह भार ले तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। किन्तु इसमें तो तेरा अनुभव ही काम आयेगा। अपने अनुभवके विपरीत तू कुछ मत करना।

बा अब बिलकुल अच्छी है। महादेव भी अच्छे हैं। आज मैं वर्धा जानेवाली गाडीमें हूँ। बा दिल्लीमें मिलेगी और वहाँसे मेरे साथ हो लेगी।

डॉ० सुशीला, प्यारेलाल और अमतुस्सलाम मेरे साथ हैं। कन्हैया तो है ही। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८८७) से।

१२३. पत्र : एम० आर० मसानीको

९ नवम्बर, १९३८

भाई मसानी,

आपने देखा होगा कि डॉ० खानसाहबने बहुत-से लोगोंको तो छोड़ दिया है। बाकी लोगोंको भी वे छोड़ देना चाहते हैं किन्तु उसमें कुछ कठिनाई है। इस सम्बन्धमें मैंने स्थानीय सचिवको पत्र लिखा है। उसकी नकल मैंने आपको भेजनेके लिए लिखा है। आशा है कि वह आपको मिल गई होगी।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२९) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

१२४. पत्र : विजया एन० पटेलको

९ नवम्बर, १९३८

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। मुझे यह अच्छा लगेगा कि जब तक तुझसे रहा जाये तब तक तू वहाँ रहे। मैं यह गाडीमें लिख रहा हूँ। मैं ११ को सेगाँव पहुँचूँगा। दिल्लीसे बा मेरे साथ हो लेगी।

तूने अच्छा समाचार दिया है।

यह तो अच्छा ही हुआ कि मनुभाई वहीं रहेंगे।

तुम दोनों को,

बापूके आशीर्वाद

श्री विजयाबहन
ग्रामदक्षिणामूर्ति
आम्बला, बरास्ता सोनगढ़
काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०२) से। सी० डब्ल्यू० ४५९४ से भी, सौजन्य: विजयाबहन एम० पचोली।

१२५. सन्देश : कमाल अतातुर्कके देहावसानपर[1]

१० नवम्बर, १९३८

अतातुर्कका देहावसान तुर्कीकी एक भारी क्षति है। प्रभुसे यही प्रार्थना है कि तुर्कीवासी इस विपत्तिसे सुरक्षित उबर आयें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ११-११-१९३८

१. तुर्की गणतन्त्रके राज्याध्यक्ष कमाल अतातुर्कका देहावसान १० नवम्बर, १९३८ को हुआ था।

१२६. पत्र : अमृत कौरको

दिल्ली
१० नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

यह सतीश बाबूकी तैयार कराई सबसे ताजा चीज है।[1] इस दिशामे वे दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति कर रहे है।

तुम्हारे दो पत्र कल आये। पहलेके साथ म०[2] की ओरसे कुछ नही था।

तुम्हारे करुणा-भरे अनुरोधके सम्बन्धमे मै अपने हृदयकी सच्ची भावनाको ही तो अभिव्यक्ति दे सकता था। अगर मेरे अन्दर कोई ऐसा आह्वान हुआ तो ससारकी कोई भी शक्ति मुझे रोक नही सकती। मै शायद तुम्हे बता चुका हूँ कि मुझमे स्त्रीके हृदयमे प्रवेश करनेके लिए अपेक्षित शुद्धि नही है। जब तक मेरे अन्दर वह विकार-व्याल बैठा हुआ है तब तक मेरे और उसके बीच एक दूरी बनी ही रहेगी। तुम वाछित फलके लिए प्रभुसे प्रार्थना करनेके सिवा और कर ही क्या सकती हो। लेकिन प्रयत्न तो मुझे ही करना है। इसलिए यदि मै तुम्हारी अपेक्षाएँ पूरी करनेमे असमर्थ होऊँ तो नाराज या दु खी मत होना।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६४९) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४५८ से भी।

१२७. पत्र : महादेव देसाईको

१० नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारा पत्र तक्षशिलामे मिला था। यहाँ भी एक पत्र मिला। राजकुमारीका पहलेका एक पत्र आज मिला, जिसमे तुम्हारी लिखावट नजर नही आई। मै दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें समझ गया। अब जब तुम आओगे तब हम दूसरे विकल्पके बारेमे विचार कर लेगे। तुम्हारी नीद कम हो गई इसकी कोई चिन्ता नही। इससे यह शिक्षा तो मिल ही गई कि अभी भी काफी सावधानीकी जरूरत है। गिल्डर जो

१. तात्पर्य शायद उस कागजसे है जिसपर गाधीजी यह पत्र लिख रहे थे।
२. महादेव देसाई।

कहते है वह सर्वथा सत्य है। यदि १९ के बाद भी रुकना आवश्यक हो तो रुके रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६७९) से।

१२८. बातचीत : साम्यवादियोंके साथ[1]

[११ नवम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

साम्यवादी : हम यह स्वीकार करते है कि आपकी भूमिका ठीक-ठीक क्या है, यह बात हमारी समझमें नहीं आती। हम जो आपका विरोध करते है, वह हमेशा इसीलिए नहीं कि हम आपसे सहमत नहीं होते, बल्कि अकसर इसलिए कि आपके मनमें क्या है, यह हम समझ नहीं पाते, जिससे आपके कार्योंको हम एक अस्पष्ट-से भय और अविश्वासकी दृष्टिसे देखते है। अगर आपको हम समझ जायें तो आपके प्रति आस्था रखना शायद हमारे लिए आसान हो जाये। इसलिए हम आपके पास आये है। हो सकता है, विचार-विनिमयके बाद शायद आपको भी यह लगे कि यदि आप हमें समझे होते तो हमारे सम्बन्धमें आपके जो विचार थे, उनमें से कुछको बदलने की जरूरत थी।

उदाहरणके तौरपर उन्होंने नागरिक स्वतन्त्रता-सम्बन्धी उस प्रस्ताव[3] का उल्लेख किया जिसे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीने अपनी दिल्लीकी बैठकमें स्वीकार किया था और जिसके परिणामस्वरूप कुछ सदस्योंने सभा-त्यागकी वह बहुचर्चित कार्रवाई की थी।[4] उनका कहना था, हमारी समझमें नहीं आता कि वैसे तीव्र विरोधके बावजूद कांग्रेस "हाई कमान" उस प्रस्तावको जैसे भी हो, पास करवानेको उतनी आतुर क्यों थी।

१. प्यारेलाल नैयरके "ए स्पोर्टिंग ऑफर" ("एक उदारतापूर्ण निमन्त्रण") शीर्षक विवरणसे उद्धृत। प्यारेलालके अनुसार गाधीजी ने अपना आशय स्पष्ट करनेके लिए विवरणमें कई जगह परिवर्धन किये थे।

२. इस बातचीतको पढ़नेसे प्रकट होता है कि इस समय गाधीजी सेगाँवमें नहीं थे। वह दिल्लीसे सेगाँवके लिए ११ नवम्बरको रवाना हुए थे।

३. देखिए खण्ड ६७, "अ० भा० का०के प्रस्तावका मसविदा", पृ० ४१०।

४. देखिए खण्ड ६७, "वह दुर्भाग्यपूर्ण सभा-त्याग", पृ० ४४६-७।

गांधीजी : मुझे स्वीकार करना चाहिए कि सभा-त्यागकी वह कार्रवाई मुझे अच्छी नही लगी। क्या उसका मतलब यह था कि आप चाहते थे, कांग्रेस हिंसा भडकानेवाली कार्रवाइयोको बर्दाश्त कर ले?

सा० : नहीं, ऐसी बात नहीं है। हमने तो बार-बार स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि हिंसा या हिंसा भड़कानेवाली कार्रवाईको बर्दाश्त किया जाये, यह हम बिलकुल नहीं चाहते। जब कांग्रेसने सत्ता सँभाली उस समय तो नागरिक-स्वतन्त्रताका विस्तार किया गया, लेकिन हरिपुर कांग्रेसके बादसे कांग्रेस-शासित प्रान्तोंमें वास्तवमें स्वतन्त्रतामें कमी ही की जाती रही है। हमें तो न चाहते हुए भी यही महसूस होता है कि नागरिक-स्वतन्त्रताके दुरुपयोगकी यह आवाज सिर्फ मन्त्रियोके बचावके निमित्त एक सुविधाजनक बहाना ढूँढ़नेके लिए उठाई जा रही है, जबकि इन मन्त्रियोंमें से कुछ एक तो बिलकुल पुराने नौकरशाहोंकी तरह व्यवहार कर रहे हैं।

गा० . आपके यहाँ आनेकी मुझे सचमुच बड़ी खुशी है, क्योकि आप असली गुनहगारके पास आये है। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि उस प्रस्तावका एक मात्र जनक मैं ही हूँ। वह मेरे पास मौजूद ऐसे प्रमाणोपर आधारित है जिनकी सचाईसे इनकार किया ही नही जा सकता। लेकिन, मेरे लेखोसे आपको यह तो समझ जाना चाहिए था कि उन लोगोका उद्देश्य ऐसी स्थिति उत्पन्न करना था जिसमे मन्त्रियोके लिए यह लाजिम नही रहे कि वे हिंसा भडकानेवालो या सचमुच हिंसा करनेवालोके खिलाफ कार्रवाई करे ही। मन्त्री उनके खिलाफ कार्रवाई करे, इसके बजाय मैं हिंसोत्तेजक भाषणो, लेखो या कार्योके विरुद्ध लोकमत तैयार करना चाहता था। वह प्रस्ताव कानूनी कार्रवाईका एक विकल्प था। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि नागरिक-स्वतन्त्रतापर हाथ डालनेवाले या कांग्रेसके प्रस्तावोके विरुद्ध आचरण करनेवाले किसी भी मन्त्रीको मैं आड नही दूँगा। अगर आपका मतलब राजाजीसे हो तो मैं उनके सम्बन्धमे आपके सारे सन्देहोका निवारण करनेको, और वैसा न कर पाऊँ तो उनसे त्यागपत्र देनेको कहनेको तैयार हूँ।

सा० : हम तो कुछ समझ ही नहीं पा रहे हैं। आपने कहा है कि हिंसा भड़कानेवाली कार्रवाइयोको रोकनेके लिए सख्त कदम उठाये जाने चाहिए। क्या कांग्रेसियोंकी हिंसा भड़कानेवाली कथित कार्रवाईको रोकनेके लिए सरकार द्वारा हिंसाका सहारा लिया जाना उचित है?

गा० : सवाल आपने गलत ढंगसे पूछा है। मगर इसका जवाब तो मैं दे ही चुका हूँ। सरकारकी ओरसे कोई हिंसा नही होनी चाहिए। लेकिन अगर कोई आदमी किसी बच्चेको मारकर उसके आभूषण छीन लेता है और अगर मैं इस आदमीको ऐसे कुकृत्यकी पुनरावृत्तिकी सुविधासे वंचित कर देता हूँ तो मैं अपनी इस कार्रवाईको हिंसा तो नही कहूँगा। अगर मेरी कार्रवाईके पीछे उसे सजा देनेका मंशा हो तो उसे हिंसा जरूर कहा जायेगा।

अपनी बात मैं जरा और स्पष्ट करके कहूँ। थैली भी न खोलिए और दुबले भी न होइए, ऐसा तो नही हो सकता। मान लीजिए कि वाणीकी हिंसा हुई है तो उस स्थितिमे या तो काग्रेसको उसके सम्बन्धमे कार्रवाई करनी है या काग्रेसी मन्त्रियोको। मैंने काग्रेसको कार्रवाई करनेका सुझाव दिया है। वह प्रस्ताव उसी सुझावके अनुसार लाया गया था। बेशक, आप चाहे तो कार्य-समितिको प्राप्त प्रमाणोकी सत्यता या पर्याप्ततापर शंका कर सकते है। अगर आपने यही रास्ता अपनाया होता तो आप वे प्रमाण देखनेकी माँग कर सकते थे और इस शर्तके साथ प्रस्तावको स्वीकार कर सकते थे कि कार्य-समिति वे प्रमाण आपके सामने प्रस्तुत करेगी। अगर आप यह स्वीकार करते है कि हिंसामय भाषणो या लेखोको नागरिक-स्वतन्त्रताके नामपर बर्दाश्त नही किया जा सकता तो आपको सभाका त्याग नही करना चाहिए था। यह बात तो दिनके उजालेके समान स्पष्ट है कि काग्रेस-शासित प्रान्तोमे बोलने और लिखनेकी इतनी अधिक स्वतन्त्रता दी जा रही है, जितनी स्वतन्त्रताका उपभोग वहाँके लोगोने कभी नही किया था।

सा० : लेकिन जो भी हो, कांग्रेस हाईकमान हमारे खिलाफ हमेशा जैसा रुख जाहिर करता रहा है, उसे हम बर्दाश्त नहीं कर सकते। हमने कांग्रेसका अनुशासन स्वीकार किया है। हम कांग्रेसमें इसलिए शामिल हुए है कि यही एक संस्था है जो कोई जन-आन्दोलन खड़ा कर सकती है। अगर हम गलत व्यवहार करते है तो हमें कांग्रेसमें से निकाला जा सकता है और कांग्रेसमें से निकाले जानेका मतलब होगा जनता के बीच अपनी साख गँवा बैठना। हमारा दल जनताका दल है और इसलिए हमें या तो जनताके साथ होकर चलना है या फिर इसमें से निकल जाना है। इसके विपरीत, ये मन्त्री तो इस प्रयत्नमें लगे हुए हैं कि ये जनताके ऊपर अपना आसन जमा लें और इनपर लोकतान्त्रिक प्रवृत्तियोंका कोई असर ही नहीं हो पाये। हम किसी कट्टर विचारधारासे बँधे हुए नहीं है। आप ही बतायें कि आज हम सामूहिक रूपसे क्या कर सकते है। हमारे हेतु भले ही अलग-अलग हों, लेकिन महत्व तो हम व्यवहारतः जो-कुछ करेंगे, उसीका होगा।

गा० : आपको यह भी स्वीकार करना चाहिए कि न तो उस प्रस्ताव[1] मे और, मै समझता हूँ, न मेरे लेखो[2] मे ही समाजवादियो या साम्यवादियोका कोई उल्लेख है। हिंसापर किसी दल-विशेषकी इजारेदारी नही है। मै ऐसे काग्रेसियोको भी जानता हूँ जो न तो समाजवादी है और न साम्यवादी, और फिर भी खुले आम स्वीकार करते है कि वे हिंसा-भक्त है। इसके विपरीत, मै ऐसे समाजवादियो और साम्यवादियोको भी जानता हूँ जो उत्पादन के साधनोके सामूहिक स्वामित्व मे तो विश्वास रखते है, लेकिन जो किसी को तनिक-सी भी चोट पहुँचाने को

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४१०।
२. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४४६-७।

तैयार नही हैं। मैं अपनेको उन्ही लोगोमे गिनता हूँ। लेकिन यहाँ मेरा तात्पर्य खुद मुझसे नही बल्कि ऐसे दूसरे लोगोसे है जिन्हे जाननेका सौभाग्य मुझे प्राप्त है।

लेकिन आप लोगोने मुझसे जो-कुछ कहा है, उससे मेरे सामने यह बात स्पष्ट हो गई है कि साधनको आप वैसा महत्व नही देते जैसा मैं देता हूँ। लेकिन आपको दलील मैं समझता हूँ। मेरा और आप लोगोका मन परस्पर विरुद्ध दिशाओमे काम कर रहे हैं। मैं तो अगर सम्भव हो तो आपके हृदयमे एक छोटा-सा स्थान पाना चाहता हूँ। लेकिन आपमे से कुछ लोगोने कहा है कि यह तो असम्भव है, क्योकि उनका दृष्टिकोण तो मुझसे बिलकुल भिन्न है। वे ज्यादासे-ज्यादा इतना ही कर सकते हैं कि मेरे साथ निभाते जायें, क्योकि उनके विचारसे मुझमे त्यागका कुछ माद्दा है और जनतापर प्रभाव भी है। अब मैं आपको खुले दिलसे एक निमन्त्रण देता हूँ। जब मैं सेगाँव लौट जाऊँ तो आपमे से कोई या चाहे तो सब वहाँ आयें और वहाँ रहकर मुझे निकटसे परखे, मेरा सारा कागज-पत्र देखें, मेरा पत्र-व्यवहार देखे, शंका हो तो मुझसे सवाल पूछे और अपने इस निकट अवलोकनके बाद तय करे कि आप मेरे साथ किस प्रकारका व्यवहार रखेंगे। मेरे साथ कोई छिपाव-दुराव की बात नही है। मेरा तो जीवन-कार्य यही है कि मुक्तिके साधनके प्रति अपने विचार मैं एक-एक भारतवासीके सामने रखूँ और उन विचारोके प्रति उसके मनमे आस्था जगाऊँ। अगर इतना हो जाये तब तो समझ लीजिए कि पूर्णस्वराज्य हमारे माँगने-भरसे मिल जायेगा।

इसके बाद उन्होने गांधीजी से साम्यवादी दलके वैध घोषित किये जानेकी सम्भावनाके बारेमें पूछा। उन्होंने कहा: "हम हिंसा नहीं चाहते। यह सच है कि हमने अहिंसाको अपना धर्म नहीं बनाया है। हम चाहे जितनी बड़ी कुर्बानी देकर भविष्यमें भी सदा अहिंसाका पालन करते रहनेको प्रतिज्ञाबद्ध नहीं हैं। लेकिन फिलहाल और निकट भविष्यमें हमें हिंसाकी कोई आवश्यकता दिखाई नहीं देती। इसलिए अभी तो हमारा तरीका वही है जो कांग्रेसका है। हमें फिलहाल छिपकर इसलिए काम करना पड़ता है कि हमारी संस्थापर कानूनी रोक लगा रखी है। अगर यह रोक हटा ली जायेगी तो छिपकर काम करनेकी जरूरत नहीं रह जायेगी और बाकी तो हम इतना आश्वासन ही दे सकते हैं कि भविष्यमें जब भी हमें अहिंसाका त्याग करनेकी जरूरत महसूस होगी, हम वैसी खुली और स्पष्ट घोषणा कर देंगे।

गा० : अगर आपका मतलब यह है कि आप एक दलकी तरह हिंसामे विश्वास नही करते तो आपको साफ-साफ वैसा कहना चाहिए। मैंने आपका जितना भी साहित्य पढा है, उसमे स्पष्ट कहा गया है कि शरीर-बलका सहारा लिए बिना स्वतन्त्रता नही मिल सकती। मैं जानता हूँ कि साम्यवादियोका एक ऐसा गुट है जो धीरे-धीरे अहिंसाके निकट आता जा रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर दे और उसमे शका-सन्देह की कोई गुजाइश न रहने दे। वैसे साम्यवादी साहित्यके नामसे मुझे कुछ ऐसी चीजे भी पढनेको मिली हैं जिनसे पता चलता है कि साम्यवादी उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए गोपनीयता, छलावरण आदिसे काम लिया जाना जरूरी ठहराया गया है — विशेषकर इसलिए कि साम्य-

वादको समस्त हिंसात्मक शक्तियोको हथियाये बैठे अपेक्षाकृत प्रबलतर पूँजीवादी दुश्मनोसे लोहा लेना है। इसलिए मै चाहूँगा कि अगर आपसे बने तो आप यह स्पष्ट कर दे कि आप इन बातोमे विश्वास नहीं करते।

साम्यवादी मित्रोने गांधीजी से वादा किया कि वे अपने दलकी स्थिति स्पष्ट करते हुए उन्हें एक अधिकृत वक्तव्य भेजेंगे।

गा० : आप मेरी बातोपर विचार कीजिएगा। मुझसे सम्पर्क बनाये रखिएगा। और जहाँ लगे कि मै बहक रहा हूँ वहाँ मेरी गलती सुधार दीजिएगा और मुझे समझने की कोशिश कीजिएगा। मुझमे अविश्वास न कीजिए। जब भी आपके मनमे कोई शंका उठे, मुझे निस्सकोच बताये और आजकी चर्चा तो हम यही छोडे। लेकिन अगर मुझे ऐसा माननेकी इजाजत दे कि हम अलग हो रहे है तो मनमे यह सकल्प लेकर कि हम एक-दूसरेको समझनेकी कोशिश करेगे और इसी तरह हम फिर मिलेंगे तो मुझे बड़ी खुशी होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१२९. खुदाई खिदमतगार और बादशाह खान

खुदाई खिदमतगार चाहे जैसे हो और अन्तत. जैसे साबित हों, लेकिन उनके नेताके बारेमें, जिन्हे वे उल्लाससे बादशाह खान कहते है, किसी प्रकारके सन्देहकी गुंजाइश नही है। वे निस्सन्देह खुदाके बन्दे है। वे सर्वत्र उसकी जीवन्त उपस्थितिमे विश्वास रखते है और जानते है कि उनका आन्दोलन उसकी कृपासे ही प्रगति करेगा। अपने काममे उन्होने अपनी सम्पूर्ण आत्मा उँडेल दी है। परिणाम क्या होगा, इसकी इन्हे कोई चिन्ता नहीं है। इतना उन्होने समझ लिया है कि अहिंसाको पूर्ण रूपसे स्वीकार किये बिना पठानोकी मुक्ति नही है और इतना समझ लेना ही उनके लिए काफी है। पठान बड़े अच्छे योद्धा है, इस बातका उन्हे कोई गर्व नही है। वे उनकी बहादुरीकी कद्र करते है, लेकिन मानते है कि उनकी अत्यधिक प्रशंसा करके लोगो ने उन्हे बिगाड दिया है। उनके पठान भाई समाजके गुण्डे माने जाये, यह वे नही चाहते। उनके विचारसे पठानोको गलत राहपर लगाकर लोगोने उनसे अपनी स्वार्थसिद्धि की है और उन्हे अज्ञानके अन्धकारमें रखा है। वे चाहते है कि पठान जितने बहादुर है उससे अधिक बहादुर बने और अपनी बहादुरीमें ज्ञानका समावेश करे। उनका विचार है कि यह काम केवल अहिंसाके सहारे ही किया जा सकता है।

और चूँकि खानसाहब मेरी कल्पनाकी अहिंसाको स्वीकार करते है, इसलिए वे चाहते थे कि मै यथासम्भव अधिकसे-अधिक समय तक खुदाई खिदमतगारोके बीच रहूँ। और जहाँ तक मेरी बात है, उनके बीच जानेके लिए मुझे किसी विशेष प्रलोभन

की जरूरत नही थी। मै खुद ही उनका परिचय पानेको उत्सुक था। मै उनके हृदयमे प्रवेश करना चाहता था। पता नही, इसमे सफल हो पाया हूँ या नही। खैर, मैंने प्रयत्न तो किया ही।

लेकिन मैंने अपना काम किस प्रकार शुरू किया और क्या-कुछ किया, यह बतानेसे पहले मुझे अपने मेजबान खानसाहबके विषयमे दो शब्द जरूर कहने चाहिए। मेरी पूरी यात्राके दौरान उन्हे बराबर इस बातकी चिन्ता लगी रही कि अपने मेहमान को वे किस तरह, वहाँकी परिस्थितियोमे जहाँतक सम्भव था वहाँ तक, अधिकसे-अधिक सुख-सुविधामे रखे। मुझे किसी चीजका अभाव नही हो, कोई असुविधा नही हो, इसके लिए उन्होने कुछ भी उठा नही रखा। मेरी जरूरतोका अनुमान पहले ही लगाकर वे उन्हे पूरा कर देते थे। और उन्होने जो-कुछ किया, उसमे हलचल-जैसी कोई चीज कभी नजर नही आई। वह सब उनके लिए स्वाभाविक था। उन्होने सब-कुछ हृदयसे किया। उनमे पाखण्ड नामको तो कोई चीज ही नही है — दिखावटीपनसे कोसो दूर। इसलिए वे किसीकी जितनी भी खातिरदारी करते है, उससे उसे कोई अटपटापन महसूस नही होता और न कभी ऐसा लगता है कि उसकी अमुक खातिरदारी ख्वामख्वाह की जा रही है। अत जब तक्षशिलामे हमने उनसे विदा ली तो हमारी आँखे नम थी। विदाई बडी कठिन गुजरी। खैर, हमने इस आशा के साथ उनसे विदा ली कि अब आगामी मार्च महीनेमें हम फिर मिलेगे। सीमाप्रान्त तो मेरे लिए एक ऐसा तीर्थ स्थान रहेगा ही जहाँकी यात्रा मै बार-बार करूँगा। कारण, शेष भारत भले ही सच्ची अहिंसाका परिचय देनेमे विफल हो जाये, लेकिन ऐसा माननेका पूरा कारण दिखाई देता है कि सीमाप्रान्त उस अग्नि-परीक्षामे से सफल होकर निकलेगा। कारण सीधा-सादा है। बादेशाह खानके अनुयायी, जिनकी सख्या लगभग एक लाख बताई जाती है, उनकी आज्ञाका पालन खुशी-खुशी करनेको तैयार रहते है। खानसाहब का अपना होठ हिला देना उनके लिए काफी है। कोई आदेश उनके मुँहसे निकला नही कि उन्होने उसका पालन किया। गरज यह कि खानसाहबके प्रति खुदाई खिदमतगारोके मनमें श्रद्धा तो अगाध है, लेकिन रचनात्मक अहिंसाकी कसौटीपर वे खरे उतरते है या नही, यह देखना अभी शेष है।

वैसे तो प्यारेलाल सीमाप्रान्त के दौरेका अत्यन्त यथातथ्य विवरण देते रहे है, किन्तु जो-कुछ किया-गया है उसका एक संक्षिप्त विवरण मुझे भी अपने ढगसे देना ही है, भले ही इसमे कहीं-कही पुनरावृत्ति-दोष ही क्यो न आ जाये।

आरम्भमे ही खानसाहब और मै, दोनो इस निष्कर्षपर पहुँच गये थे कि विभिन्न केन्द्रोमे जाकर सभी खुदाई खिदमतगारोसे अपनी बात कहने के बजाय मुझे उनके अगुओ से ही बात करनी चाहिए। इससे मेरी शक्तिकी बचत होगी और उसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग होगा। अनुभवसे सिद्ध भी यही हुआ। पाँच हफ्तोके दौरान हम सभी केन्द्रोमे गये और प्रत्येकमे हमारी चर्चा घटे-भर या इससे कुछ अधिक समय तक चली। खानसाहब तो मुझे बहुत ही समर्थ दुभाषिया लगे। और

चूंकि मै जो-कुछ कहता था, उस सबमे उनका भी विश्वास है, इसलिए अनुवादमे वे अपनी सामर्थ्य-भर पूरा ओज भर देते थे। वे तो जन्मजात वक्ता है और वे बहुत ही गरिमाके साथ और प्रभावकारी ढंगसे बोलते है।

हर सभामे मैंने अपनी यह चेतावनी दोहराई कि यदि उन्हे ऐसा नही लगता हो कि अहिंसाका वरण करके उन्होने, उनके पास अब तक जो शक्ति थी और जिसके प्रयोगमे वे परम निपुण थे, उससे लाख गुनी अधिक श्रेष्ठ शक्ति प्राप्त कर ली है तो उन्हे अहिंसासे कोई सरोकार नहीं रखना चाहिए और जिन हथियारो को उन्होने त्याग दिया है उन्हे फिरसे अपना लेना चाहिए। यह स्थिति कभी नही आने देनी चाहिए कि खुदाई खिदमतगारोके बारेमे कोई कहे कि खानसाहबके प्रभावमे वे कायर बन गये या बना दिये गये। उनकी बहादुरी उनकी अचूक निशानेबाजीमे नही, बल्कि मृत्युको चुनौती देने और गोलियों के सामने सीना तानकर खडे होनेमे है। यह बहादुरी उन्हे कायम रखनी है और जब कभी अवसर आये, इसका परिचय देने को तैयार रहना है। और सच्चे बहादुरोके लिए ऐसे अवसर अकसर अनायास ही आते रहते है।

मैंने उन्हे समझाया कि यह अहिंसा कोई निष्क्रिय गुण नही है। ईश्वरने मनुष्यको जितनी तरहकी शक्तियाँ दी है, उनमे यह सबसे प्रबल है। सच तो यह है कि मनुष्यकी अहिंसा ही मनुष्यको पशुसे भिन्न दिखाती है। यह गुण हर मनुष्यमे होता है, लेकिन अधिकाशमे सुप्तावस्थामे पडा रहता है। [अग्रेजी का] 'नॉन-वॉयलेस' शब्द शायद 'अहिंसा' शब्दके सम्पूर्ण अर्थका बोध नही कराता, और वैसे तो 'अहिंसा' मे जितने अर्थ समाये हुए है उन सबका बोध करानेकी दृष्टिसे यह शब्द भी अपर्याप्त ही है। इसके बजाय प्रेम या-सद्भाव शब्दका प्रयोग शायद बेहतर रहेगा। तो उन्हे हिंसाका उत्तर सद्भावसे देना है। और सद्भावको काम करनेका अवसर तभी मिलता है जब उसका सामना दुर्भावसे होता है। भलेके साथ भला व्यवहार करना तो बराबरका सौदा है। रुपयेके मुकाबले रुपयेका क्या महत्व है। अगर आनेके मुकाबले रुपया हो तब उसका महत्व जरूर होता है। इसी तरह सद्भाववाले आदमीकी असली पहचान तो तब होती है जब उसका मुकाबला दुर्भाववाले आदमी से होता है।

मैंने उनसे कहा कि हमे ऐसी अहिंसा या सद्भावका बरताव केवल अंग्रेजोके साथ ही नही करना है, बल्कि आपसी व्यवहारमे भी हमे इसी वृत्ति से काम लेना है। अग्रेजोके साथ बरती जानेवाली अहिंसा तो मजबूरीमे अपनाया गया गुण भी हो सकती है और यह कायरता या कमजोरी को छिपानेवाले आवरणका रूप भी सहज ही ले सकती है। वह एक कार्य-साधक नीति भी हो सकती है और अकसर इस रूपमे इसका प्रयोग होते देखा भी गया है। लेकिन जहाँ हिंसा और अहिंसामे से किसी एकको चुननेकी हमारे सामने समान सुविधा है, वहाँ यदि हम अहिंसाको चुनते है तो उसे कार्य-साधक नीति नही माना जा सकता। ऐसे प्रसंग हमारे कौटुम्बिक सम्बन्धोमे सामने आते है, आपसके सामाजिक और राजनीतिक व्यवहारमे

प्रकट होते है और न केवल एक ही धर्मके दो सम्प्रदायोके, आपसी सम्बन्धमे, बल्कि दो अलग-अलग धर्मोके आपसी व्यवहारमे भी देखने को मिलते है। यदि हम अपने पडोसियो और समकक्षी लोगोके प्रति सहिष्णु नही है तो अग्रेजोके प्रति भी सच्चे अर्थमे सहिष्णु नही हो सकते। इसलिए यदि हममे सद्भाव है तो उसकी परखके प्रसग तो लगभग रोज-रोज आते रहेगे। और यदि हम आपसी व्यवहारमे उसका सक्रिय प्रयोग करेगे तो हम व्यापकतर क्षेत्रोमे भी उसके प्रयोगके अभ्यस्त हो जायेगे और अन्तमे वह हमारे स्वभावका अभिन्न अंग बन जायेगा।

मैने उन्हे बताया कि खान साहब द्वारा उनके लिए चुना गया नाम ही इस बातका द्योतक है कि उन्हे मानवताका कोई अहित नहीं, बल्कि केवल कल्याण ही करना है। कारण, ईश्वरको तो व्यक्तिगत सेवाकी न कोई जरूरत है और न वह किसीसे ऐसी सेवा लेता है। वह अपनी सृष्टिके प्राणियोकी सेवा तो करता है, लेकिन बदलेमे उनसे अपने लिए कोई सेवा नही लेता। वह अन्य बातोकी ही तरह इस बातमे भी सबसे अलग है। इसलिए जो खुदाका खिदमतगार है वह तो उसकी सृष्टिके प्राणियोको सेवा करके ही अपनेको उसका खिदमतगार साबित कर सकता है।

इसलिए खुदाई खिदमतगारोंकी अहिंसा तो उनके रोज-रोजके कार्य-व्यवहारसे प्रकट होनी चाहिए। और अपनी अहिसाको वे इस तरह तभी प्रकट कर सकते है जब वे मन, वचन और कर्म, तीनो तरहसे अहिसक हो।

और जिस प्रकार अपने रोजके व्यवहारमे पशुबल पर निर्भर रहनेवाले आदमीके लिए सैनिक प्रशिक्षण लेना जरूरी है, उसी प्रकार खुदा के खिदमतगार को भी एक निश्चित प्रशिक्षण लेना होगा। इसकी व्यवस्था १९२० की विशेष काग्रेसके आधारभूत प्रस्तावमे ही कर दी गई है। आगे चलकर समय-समयपर उसका विस्तार भी किया जाता रहा है। जहाँ तक मै जानता हूँ, उसमे नरमी तो कभी नही लाई गई है। साम्प्रदायिक एकता, हिन्दुओ द्वारा अस्पृश्यताका त्याग, अपने घरमें हाथसे खादी तैयार करना और उसका इस्तेमाल करना — जो करोडो आम लोगोके साथ तादात्म्य की अनुभूतिका निश्चित प्रतीक है — और शराब तथा अन्य मादक पदार्थोंका निषेध, ये चार चीजे इस बातकी कसौटी होगी कि कोई सक्रिय सद्भावका आचरण कहाँ तक करता है। इस चतुर्विध कार्यक्रमको आत्मशुद्धि की प्रक्रिया कहते है और यह देशको सजीव स्वराज्य दिलाने का अचूक साधन है। काग्रेसी तथा देशके अन्य लोग इस कार्यक्रम पर आधे मनसे ही अमल करते रहे है, जिससे प्रकट होता है कि अहिसामे या उसके दैनिक आचरणके लिए निश्चित किये गये तरीके मे अथवा दोनो में उनकी जीवन्त श्रद्धा नही है। लेकिन खुदाई खिदमतगारोसे अहिसामे जीवन्त श्रद्धा रखने की अपेक्षा की जाती है और माना जाता है कि उनमे ऐसी श्रद्धा है भी। इसलिए उनसे काग्रेसके आत्मशुद्धिके सम्पूर्ण रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल करनेकी अपेक्षा की जायेगी। इस कार्यक्रममे मैने अपनी ओर से गाँवोकी सफाई, आरोग्यके नियमोका पालन और गाँववालोंको चिकित्सा-सम्बन्धी छोटी-मोटी सहायता देना जोड़ दिया है।

खुदाई खिदमतगारकी पहचान उसके कामोसे होगी। वह किसी गाँवमे रहे और उसको पहलेसे अधिक साफ-सुथरा न बनाये तथा ग्रामवासियोकी छोटी-मोटी बीमारियो मे उनका उपचार न करे, यह नही हो सकता। अस्पताल आदि तो अमीरी के खिलौने है और वे केवल शहरी लोगो के लाभ के लिए है। इसमे सन्देह नही कि देश-भरमे औषधालय आदि खोलनेके प्रयत्न किये जा रहे है, लेकिन उनपर खर्च इतना बैठता है कि प्रगति बहुत कठिन है। इसके विपरीत, यदि खुदाई खिदमतगार थोडा-सा किन्तु अच्छा प्रशिक्षण प्राप्त कर ले तो गाँवोमे लोगोको जैसी बीमारियाँ होती है, उनमे से अधिकाश का इलाज वे आसानीसे कर सकते है।

मैने खुदाई खिदमतगारोके अगुओको समझाया कि सविनय अवज्ञा अहिंसाका आरम्भ नही, बल्कि उसकी चरम-परिणति है। फिर भी इस देशमे मैने अहिंसाका प्रयोग १९१८ मे उसी उलटे छोरसे आरम्भ किया। आवश्यकताओ ने मुझे मजबूर कर दिया था। देशका कोई नुकसान नही हुआ तो सिर्फ इसलिए कि सघर्षकी अहिंसक पद्धतिका विशेषज्ञ होनेका दावा करनेवाला मै यह जानता था कि अपने कदम कब वापस ले लेने चाहिए। पटनामे सविनय अवज्ञाका स्थगन उसी रण-पद्धतिका एक अंग था। १९२० के रचनात्मक कार्यक्रममे आज भी मेरा विश्वास उतना ही प्रबल है जितना, उस समय था। इस कार्यक्रमको ठीकसे पूरा किये बिना मै पूर्ण स्वराज्यके निमित्त सविनय अवज्ञा नही चला सकता। सविनय अवज्ञा करनेके अधिकारी तो केवल वही है जो चाहे दूसरो के बनाये या खुद अपने बनाये कानूनोंका खुशी-खुशी पालन करनेका अपना कर्तव्य पहचानते है और उसे पूरा भी करते है। कानूनका पालन करनेकी यह वृत्ति उसका भग करनेके परिणामके भयसे नही आनी चाहिए, बल्कि इस विचारसे आनी चाहिए कि केवल ऊपरी मनसे नहीं, बल्कि पूरे हृदयसे उसका पालन करना हमारा कर्तव्य है। यह प्रारम्भिक शर्त पूरी किये बिना यदि हम सविनय अवज्ञा करते है तो वह नाम-मात्रको ही सविनय होगी, और वैसी अवज्ञा सबल लोगों द्वारा नही, बल्कि निर्बल लोगो द्वारा की गई अवज्ञा होगी। उस अवज्ञामे सद्भाव, अर्थात्, अहिंसा नहीं होगी। सविनय अवज्ञाके दिनोंमे अन्य प्रान्तोके हजारो लोगोकी तरह खुदाई खिदमतगारोने भी कष्ट-सहन की क्षमताकी दृष्टिसे अपनी बहादुरीका स्पष्ट परिचय दिया था। लेकिन वह हृदयके सद्भावका निश्चित प्रमाण नही है। और कोई पठान केवल दिखावटी तौरपर अहिंसक बने, यह तो उसके पतनका ही सूचक माना जायेगा। कारण, उसे किसी भी हालतमें कमजोर होना ही नही चाहिए।

खुदाई खिदमतगारोने मेरी बाते बड़ी तल्लीनतासे सुनी। अहिंसामे उनकी श्रद्धा अभी तक खान साहबके आधारपर खड़ी है। उनकी श्रद्धाके स्रोत वही है। इसके बावजूद उनके हृदयपर राज्य करनेवाले अपने नेतापर जब तक उनकी अविचल श्रद्धा कायम है, तब तक अहिंसा मे उनकी आस्था भी जाज्वल्यमान ही है। और अहिंसामे खान साहबकी श्रद्धा कोई सतही चीज नहीं है। उनका सम्पूर्ण हृदय उससे ओतप्रोत है। कोई शंकालु व्यक्ति चाहे तो जिस तरह मै पाँच सप्ताह तक

उनके साथ रहा उसी तरह वह भी उनके साथ रहकर देख ले। फिर कोई कारण नहीं कि जिस तरह सूर्यकी किरणोके फैलनेके साथ कुहासा छँट जाता है उसी तरह उसके मनकी शंका भी न छँट जाये।

एक जाने-माने पठान सज्जन है, जो मेरे दौरेके आखिरी दिनोंमें मुझसे मिले थे। इस दौरेकी उनके मनपर क्या छाप पड़ी, वह उन्हीके शब्दोंमें देखिए:

> आप जो-कुछ कर रहे हैं, मुझे अच्छा-लगता है। आप बड़े चतुर हैं (पता नहीं, चतुरके बदले चालाक कहना ठीक रहेगा या नहीं)। हमारे लोग जितने बहादुर हैं, आप उन्हें उससे अधिक बहादुर बना रहे हैं। उन्हें आप शक्तिका संचय करना सिखा रहे हैं। एक हदतक अहिंसक होना तो बेशक अच्छा है। आपकी शिक्षासे वे वैसे बनेंगे भी। हिटलरने वास्तवमें हिंसाका प्रयोग किये बिना अपने हिंसामय हेतु सिद्ध करनेकी युक्तिको पूरी तरहसे साधा है। लेकिन आप तो हिटलरसे भी आगे निकल गये हैं। आप हमारे लोगोंको अहिंसाका, मारे बिना मरनेका प्रशिक्षण दे रहे हैं; सो अब अगर [पाशविक] शक्तिके प्रयोगका प्रसंग आयेगा तो वे उसका ऐसा जबरदस्त प्रयोग करेंगे जैसा पहले कभी नहीं किया था। मैं आपको बधाई देता हूँ।

मेरा मौन चल रहा था और उन सज्जनके मनके भ्रमको तोडनेवाला कोई उत्तर लिखकर देनेकी मुझमे हिम्मत नही थी। मैं मुस्कराकर विचारमें डूब गया। पठान मेरी शिक्षाके प्रभावसे और बहादुर बनेंगे, यह प्रशस्ति मुझे अच्छी लगती है। मुझे तो ऐसा एक भी दृष्टान्त याद नही है कि कोई मेरे प्रभावमें कभी कायर भी बना है। लेकिन उपर्युक्त सज्जनने जो निष्कर्ष निकाला, वह तो भयकर था। यदि अन्तिम अग्नि-परीक्षाके समय खुदाई खिदमतगार अपने-आपको उस धर्मके योग्य साबित नही करते जिसका अनुयायी होनेका वे दावा करते हैं तो माना जायेगा कि निश्चय ही उनके हृदयमे अहिंसा नही थी। उनकी परख जल्दी ही होगी। यदि वे रचनात्मक कार्यक्रमको पूरे उत्साह और निष्ठाके साथ क्रियान्वित करेंगे तो ऐसी कोई आशंका नहीं कि उक्त आलोचनाका पूर्वानुमान सही साबित होगा। इसके बजाय तब तो दुनिया देखेगी कि वे वास्तवमे ससारके सबसे बहादुर लोग है।

दिल्लीसे वर्धा जाते हुए रेलगाडीमें
११ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

१३०. पत्र : अमृत कौरको

रेलगाडीमें (भोपाल)
११ नवम्बर, १९३८

पगली,

हाँ, जो पंक्तियाँ तुमने मुझे अब भेजी हैं, उन्हें तुम पहले भी मेरे लिए नकल कर चुकी हो। बाबला आयेगा तो मैं उससे उनका पाठ कराऊँगा। उससे कह देना कि मुझे याद दिला दे।

आशा है, मेरा तक्षशिलासे लिखा पत्र[1] और फिर दिल्लीसे लिखा पत्र[2] भी तुम्हें मिल गया होगा। दिल्लीमें तो मैं बड़ा व्यस्त रहा। अन्तिम क्षणतक लोगोंसे मिलता रहा। लेकिन रक्तचाप बहुत ठीक रहा — १६६/१००।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८८८) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०४४ से भी।

१३१. पत्र : महादेव देसाईको

रेलगाडीमें
११ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

भोपाल निकल जानेके बाद मैं यह लिख रहा हूँ। शुएब आये थे। उन्होंने पूछा, महादेव कैसे हैं, और फिर बताया कि तुमने उनसे वादा किया है कि लौटतेमें दो-तीन दिन भोपाल रहोगे। मेरी राय है कि यदि तुम उन्हें दो-तीन दिन दोगे तो यह हर तरहसे अच्छा ही रहेगा। दुर्गा और बाबलाको वहाँ बहुत-कुछ देखनेको मिलेगा ही।

सुशीलाका "बैग" रह गया था इसलिए प्यारेलाल उतर गया। वह कल पहुँच जायेगा।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. देखिए "पत्र : अमृत कौरको", पृ० १२२।

इसके साथ मीराबहन द्वारा भेजी गई तुम्हारी डाक है, जिसे मैंने खोला था, साथ ही अपने नाम लिखा पत्र भी भेज रहा हूँ।

बा मेरे साथ है। तुम्हारे लौटने तक बा की इच्छा वहीं रहने की थी। किन्तु मैंने मना लिया। नीमू आकर मिल गई। अब वह कुछ दिनोंके लिए लखतर जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८०) से।

१३२. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

रेलगाडीमें
११ नवम्बर, १९३८

प्रिय भगिनी,

डीसेम्बरके अतमे देहरादूनमे कन्या गुरुकुल का वार्षिकोत्सव होता है। उस वखत किसीको भेजनेकी मगनी आचार्य रामदेव किया करते है। मेरी इच्छा तो राजकुमारीको भेजनेकी थी। वह तो विमेन्स कानफरन्समे होगी। आपको भी तो जाना है लेकिन एक दिन देहराको दे सकेगी तो अच्छा होगा। शायद कन्या गुरुकुल जानती होगी। सस्था अच्छी है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३०८१) से, सौजन्य. रामेश्वरी नेहरू। जी० एन० ७९८५ से भी।

१३३. तार : रा० स० रुइकरको[1]

११ नवम्बर, १९३८

मेरा उत्कट अनुरोध है कि आप उपवास तोड दे। वर्धा आनेपर मुझसे जो भी बन पडेगा सब करूँगा। तारसे उत्तर दे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-११-१९३८

१. राजनन्दगाँवमें मिल-मजदूरोंने हड़ताल कर रखी थी और २९ अक्टूबरसे ही श्री रा० स० रुइकर अनशन कर रहे थे। जब ट्रेड यूनियन कांग्रेसके महामन्त्री श्री आर० डब्ल्यू० फुले इस सम्बन्धमें नागपुर स्टेशन पर गांधीजी से मिले तो गांधीजी ने उनसे यह सन्देश तार द्वारा भेज देनेको कहा।

१३४. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेगाँव, वर्धा
[११ नवम्बर, १९३८ या उसके पश्चात्][1]

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपका ३१ अक्टूबरका विस्तृत कृपापत्र मुझे मीराबाईने भेज दिया था। उस समय मैं सीमाप्रान्तका दौरा कर रहा था। मुझे पता था कि उसकी प्राप्ति-सूचना उसने दे दी थी। लेकिन हिसारमें संकटकी स्थितिके बारेमें आपने जिस सहृदयताका परिचय देते हुए लिखा था, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहता था।[2] हाँ, मुझे मालूम है कि पंजाब सरकार जो-कुछ कर सकती है, कर रही है। रेलवे-प्रणालीकी कार्य-पद्धतिके बारेमें अनजान होनेके कारण मैंने सीधे सर्वोच्च अधिकारीको पत्र लिखा था।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

वाइसराय महोदय
दिल्ली

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल।

१३५. बिहारमें जन-शिक्षा अभियान

डॉ० सैयद महमूद[3]ने मुझे बिहारमें जन-शिक्षा अभियानकी प्रगतिके बारेमें एक लेख भेजा है। नीचे जानकारीसे भरे उस लेखके सभी आवश्यक अनुच्छेद दिये जा रहे हैं।[4] मन्त्री महोदयसे मैं चीनमें चलाये जा रहे ऐसे ही अभियानके सम्बन्धमें लिखा डॉ० ताओका लेख[5] पढ़नेका अनुरोध करूँगा। शायद उन्हें उसमें बहुत-कुछ अनुकरणीय मिल जाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-११-१९३८

१. गांधीजी सीमाप्रान्तकी अपनी यात्रा समाप्त करके ११ नवम्बर, १९३८को सेगाँव पहुँचे थे।
२. पंजाबमें उस समय अकालकी स्थिति मौजूद थी।
३. बिहारके विकास और नियोजन मन्त्री।
४. यहाँ नहीं दिये गये हैं।
५. यह हरिजनके २९-१०-१९३८, ५-११-१९३८ और १९-११-१९३८के अंकोंमें प्रकाशित हुआ था।

१३६. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
१२ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

अगाथा अभी मेरे सामने बैठी है।

शेष महादेवको लिखे पत्र[1] से जान लेना। इस डाकसे दो पंक्तियाँ तुम्हारे नाम भी चली जाये, इसलिए इतना लिख दिया है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८३९) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ७०४५ से भी।

१३७. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१२ नवम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

किसी दिन १७ तारीखसे पहले ही, जब मेरा मौन नही रहेगा, आकर ३० मिनटके लिए मुझसे मिल लो। न्यासियोकी नियुक्ति तो सयुक्त कार्रवाईका नतीजा है ही। है न?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१३९) से।

१. देखिए "पत्र महादेव देसाईको", पृ० १३७।

१३८. पत्र : महादेव देसाईको

१२ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

बेचारी लीलाने तुम्हारे लिए तैयारी कर रखी थी।

मीराबहनने अपना विचार बदल दिया है। उसने सीमाप्रान्त जानेका निश्चय किया है। मैंने भी इसे पसन्द किया है। खान साहब भी तो यही चाहते थे। अब मैंने उनकी इजाजत माँगी है। यहाँका मौसम अच्छा है। अगाथा मेरे सामने बैठी है। अभी मैंने अपना मौन नही तोड़ा है। दो बजे टूटेगा। इटारसीसे लिखा मेरा पत्र[1] मिला होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८१) से।

१३९. पत्र : महादेव देसाईको

१३ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा दूसरा लेख मेरे पास पडा है। यह निश्चय ही मुख्य लेखके रूपमे जायेगा। तुम्हारा पहला लेख तो पडा ही हुआ है। मै आज उसे नहीं निकालूँगा। अब उसे तो मैं तुम्हे यही लौटाऊँगा। मैं उसे रजिस्ट्री से नही भेजना चाहता और सामान्य डाकसे भेजते हुए मुझे डर लगता है। कोई जल्दी तो है नही। यह "सदाबहार" (एवरग्रीन) है।

वह राजेन्द्र संयुक्त प्रान्तका है। वह यहाँ चार-पाँच महीने पहले आया है। भला आदमी है। अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८२) से।

१. देखिए "पत्र महादेव देसाईको", पृ० १३३।

१४०. पुर्जा: कंचन मु० शाहको

रविवार, १३ नवम्बर, १९३८

तेरे पत्रका उत्तर तो मैं नहीं दे सका, किन्तु यदि मुन्नालाल[1] चला जाये और तुझे महिला आश्रममें न रहना हो तो तू यहाँ आ सकती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८५६४) से।

१४१. कांग्रेस और खादी

बम्बई, संयुक्त प्रान्त, बंगाल और सिन्धसे पत्र लिखकर कुछ लोगोंने मुझसे कड़ी शिकायत की है कि कांग्रेस-संविधानकी खादी-विषयक धाराका जितना पालन नहीं किया जाता है, उससे अधिक भंग ही किया जाता है। इन चार प्रान्तोंके नामोंके उल्लेखसे कोई यह अनुमान न लगाये कि अन्य प्रान्तोंमें स्थिति कुछ बेहतर है। इनका उल्लेख सिर्फ इसलिए किया है कि इन प्रान्तोंसे शिकायतें आई हैं। दूसरे प्रान्तोंके लोगोंने अपने यहाँ व्यापक रूपसे फैली इस बुराईकी ओर ध्यान खींचना शायद जरूरी नहीं समझा है। यह भी हो सकता है कि अन्य प्रान्तोंसे इस सम्बन्धमें लिखे पत्र अभी मेरे सामने नहीं रखे गये हैं।

पत्र-लेखकोंकी मुख्य शिकायत यह है कि नगरपालिकाओं तथा स्थानिक निकायोंके लिए उम्मीदवार नामजद करते समय कांग्रेसके पदाधिकारी इनपर खादी-विषयक धाराकी पाबन्दी लागू नहीं करते। एक पत्र-लेखकका कहना है कि खादी पहननेके कर्तव्यको इसलिए नजरअन्दाज कर दिया जाता है कि कांग्रेसके पदाधिकारियोंको खादीधारियोंमें योग्य उम्मीदवार नहीं मिलते। अगर उपयुक्त ढंगके खादीधारी लोगोंकी कमी साबित की जा सकती हो तो इन पत्र-लेखक भाईने जो बात कही है; वह इस धाराको बदलनेका कारण तो बन सकती है, लेकिन इसके आधारपर कांग्रेसके नियमोंको जान-बूझकर तोड़ा जाये, यह तो निश्चय ही नहीं हो सकता। एक पत्र-लेखकने इस धाराको नजरअन्दाज करनेवालेको यह दलील देकर सही साबित किया है कि स्वराज्य और खादीमें कोई सम्बन्ध नहीं है। यह बात भी संविधानमें परिवर्तन करनेका कारण तो हो सकती है, लेकिन उसकी धाराओंकी उपेक्षा करनेका आधार नहीं बन सकती। हर कांग्रेसी एक सम्भावित सत्याग्रही है। सविनय अवज्ञाके अधिकारी केवल वही लोग हैं जो अपने राज्यके कानूनोंका पालन

१. मुन्नालाल जी० शाह, कंचन शाहके पति।

खुशी-खुशी करनेका कर्तव्य निभाते है; और खासकर जब वे कानून उनके अपने ही बनाये हुए हो तब तो इस कर्तव्यका निर्वाह और भी जरूरी हो जाता है। इसलिए संविधान की धाराओको जान-बूझकर तोडकर काग्रेसी लोग भारी खतरा मोल ले रहे है।

फिर, क्या खादी और स्वराज्यमे परस्पर कोई सम्बन्ध नही है? काग्रेस-संविधानमे खादी-विषयक धारा दाखिल करनेवाले काग्रेसी क्या इतने मूढमति थे कि जिस भ्रांतिको कुछ आलोचक सहज ही समझ गये है, उसकी ओर उनका ध्यान ही नही गया? मैने निस्संकोच कहा है और यहाँ फिर बेझिझक कहता हूँ कि खादीके बिना करोडो भूखे, नगे और अशिक्षित स्त्री-पुरुषोको कभी भी स्वराज्य नही मिल सकता। यदि कोई बराबर खादीका ही उपयोग करता है तो यह इस बातका द्योतक है कि वह देशके गरीबसे-गरीब लोगोके साथ तादात्म्यका अनुभव करता है और उसमे इतनी देशभक्ति और त्यागकी वृत्ति है कि वह खादी पहने, भले ही खादी देखनेमे उतनी चिकनी और चमकदार न हो और न उतनी सस्ती ही हो जितना कि विदेशी कपडा होता है।

लेकिन आज जबकि काग्रेसियोके बीच अराजकता और मनमाने आचरणका बोलबाला है, मेरी दलीलका शायद उसमे से बहुत-से लोगोपर कोई असर न हो। मेरी फाइलोमे कुछ ऐसे पत्र भी पड़े हुए है जिनमे तथाकथित काग्रेसियोके भ्रष्टाचारके और भी प्रमाण दिये गये है। एक पत्र-लेखकका कहना है कि जाली सदस्योकी सख्या तो बहुत बडे पैमाने पर बढ रही है। उडीसासे यह आवाज उठाई गई है कि सदस्य बनानेके उद्देश्यसे काग्रेसी झूठके प्रचारमे भी नहीं झिझकते। कलकत्तासे एक भाईने लिखा है कि ऐसे मूल सदस्य भी है जिन्होने अपने चन्दे नही दिये है। पूछनेपर उनसे जवाब मिलता है कि हर साल चार आने देनेमे वे असमर्थ है। पत्र-लेखकने क्षुब्ध होकर लिखा है कि यही लोग न जाने कितने चार आने हर वर्ष सिनेमा देखनेमे बर्बाद कर देते है। मगर मै जो बात कहना चाहता हूँ वह यह नही है कि ये लोग दे तो सकते है लेकिन देते नही। मै तो यह कहना चाहता हूँ कि अगर उन्होने अपने चन्दे नही दिये है तो वे काग्रेसी नही है और सदस्योकी सूचीसे उनके नाम काट दिये जाने चाहिए। सयुक्त प्रान्तके एक भाईका कहना है कि घूसखोरी और भ्रष्टाचार तो काग्रेसका नाम डुबा रहे है। उनका कहना है कि अपने या अपने सगे-सम्बन्धियोके स्वार्थोकी सिद्धिके लिए काग्रेसी लोग कलक्टरों तथा अन्य अधिकारियो पर अपने प्रभावका उपयोग करके सब तरहके अन्याय कराते है। उन्होने यह भी कहा है कि सरकारी कर्मचारी उनके दबावमे न आये, इतनी शक्ति उनमे नही है। जब अंग्रेज अधिकारियोंके निर्देशपर सरकारी नौकर गलत काम किया करते थे और तब जैसी बुराई मौजूद थी, आजकी यह बढती हुई बुराई शायद उससे भी बदतर साबित हो। अगर सच हो तो यह आरोप सबसे बुरा है। सयुक्त प्रान्तकी सरकार और काग्रेसकी प्रान्तीय उच्च सत्ताको इस सम्बन्धमे बारीकीसे जाँच-पड़ताल करनी चाहिए। बल्कि सच तो यह है कि यहाँ मैने जितनी

भी अनियमितताओं और दोषोका जिक्र किया है, उनके सम्बन्धमे कार्य-समिति तथा प्रान्तीय काग्रेस कमेटियोको पूरी सावधानीके साथ तत्काल कारवाई करनी चाहिए। काग्रेसमे जो अनियमितता और दोष घुस आये है, उन्हे यदि दूर नही किया जाता तो इस सस्थाके पास आज जो शक्ति है, उससे यह वचित हो जायेगी और जब देशके सामने असली सघर्षको घडी आयेगी, उस समय यह उन अपेक्षाओको पूरा नही कर पायेगी जो इससे की जाती है।

सेगाँव, १४ नवम्बर, १९३८

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १९-११-१९३८

१४२. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव

१४ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। मै तो यही मानना चाहूँगा कि तुम्हारे कलके पत्रको मैने गलत समझा। मैने तो यही समझा कि तुमने एक गहरा घाव कर दिया है, लेकिन इससे तुम्हारे प्रति मेरे प्रेममे और गहराई ही आई। मेरा प्रेम ऐसे तूफानो और गलतफहमियोको झेलनेकी सामर्थ्य रखता है। मुझे दु ख था और है तो इसी बातका कि मेरी प्रतिक्रियासे तुम्हारे मनको चोट पहुँची। प्रेम-भाजन द्वारा किये गये घाव कभी स्थायी नही होते। ऐसे घाव तो लगते ही तुरन्त भर भी जाते है। यदि वे नही भरे तो इसका मतलब यह होगा कि मेरे प्रेममे पहले-जैसी क्षमता नही रही। इसलिए मै आशा करता हूँ कि अब तुम तो अपनी भूल और आस्थाकी कमीपर या तुम्हारे पत्रमे से, जो तुम्हारा कभी आशय नही था, ऐसा अर्थ निकालनेकी मेरी मूर्खतापर हँस कर बात खत्म करोगी। तो इस आई-गई हो जानेवाली बातपर तुम्हे अपने मनको दु खी नही रखना है।

यह तो समझ गया कि आर्यनायकम द्वारा बुलाई गई बैठकमे तुम नही आ सकती थी। लेकिन आशा करनी चाहिए कि अगले साल तुम्हारा कार्यक्रम ज्यादा व्यवस्थित रहेगा।

त्रावणकोर-शिष्टमण्डलके कार्योके बारेमे तो तुम्हे लिखूंगा ही।

सप्रेम,

योद्धा

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५०) से, सौजन्य . अमृत कौर। जी० एन० ६४५९ से भी।

१४३. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१४ नवम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

क्या तुम कल आ सकते हो? अपनी रचना लेते आना और खाना यही खाना, हालाँकि मेरे साथ नही। तुम मुझसे पहले या बादमे खाना, ताकि जो खाना मै साढे दस बजे या उसके आसपास खाता हूँ, वह खाना जब मेरा चल रहा होगा तब पूरे समय तक तुम मुझसे अपनी बात कहते रह सको। अपने कामके लिए तुम कोई एक शान्त-एकान्त कोना चुन सकते हो।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

त्रावणकोर-शिष्टमण्डलकी फिक्र मत करना।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४०) से।

१४४. पत्र : महादेव देसाईको

१४ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

वल्लभभाई आज आ गये। राजकोटका मामला काफी उलझ गया है।[1] किन्तु जब तक उनके ग्रह सीधे है तब तक बिगड़ते जान पडनेवाले काम भी बन जायेगे। मणि अपना जौहर दिखा रही है।[2] मैने ऐसी दूसरी लड़की नही देखी।

तुम्हारा दूसरा लेख आज आ रहा है। 'हरिजन' के लिए जिस लेखको रद कर दिया था वह मै तुम्हीको दूंगा। तुम्हारा जो लेख आज मिला है उसे मै देख जाऊँगा। चन्द्रशकर काफी बीमार है। मेरे मनमे डर बैठ गया है।

१. राजकोटके लोगोंने ठाकुर धर्मेन्द्रसिंह और उनके दीवान वीरावालाकी तानाशाहीके विरुद्ध एक आन्दोलन चलाया था। रियासतके नेतागण वल्लभभाई पटेलसे सलाह-मशविरा लेते रहते थे और दूसरी ओर पटेलका पथ-प्रदर्शन गांधीजी कर रहे थे।

२. मणिबहन पटेलने रियासतके गाँवोंका दौरा किया था और "किसानों द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलनमें उन्हें प्रोत्साहन दिया था"।

यह मानकर कि खान साहबकी अनुमति मिल जायेगी, मीराबहन सीमाप्रान्त जानेकी तैयारी कर रही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मीराबहनने मुझे दो चीजे दिखाई जो मै तुम्हे भेज रहा हूँ। तुम दोनोको समझ जाओगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८३) से।

१४५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव
१४ नवम्बर, १९३८

चि० कान्ति,

तेरे दोनो पत्र मिल गये है। यदि मैं तुझे अपने द्वारा की गई मेहनत [के प्रमाणमे] उसकी सभी नकले भेज दूँ तो तू मुझे प्रथम स्थान देगा। किन्तु तू इतना ही काफी मान कि जो-कुछ मुझसे हो सकता था, वह सब मैने किया। आखिरकार मुझे इसके साथ भेजा जा रहा उत्तर मिला। रामचन्द्रन कल आ रहे है और मै फिर प्रयत्न करूँगा। मै इसे छोडूँगा नही। किन्तु सबसे बडी बाधा तो यह है कि उनसे खुलकर बात नही हो सकती। इसे छिपाया ही नही जाना चाहिए। इस मामलेमे सरस्वती स्वतन्त्र है। सभी बालक स्वतन्त्र है। तूने जो पत्र माँगा था वह भी इसके साथ लौटा रहा हूँ। तू बेचैन मत हो। धीरज रख। मै अपनी तरफसे हर तरह प्रयत्न करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५२) से, सौजन्य : कान्तिलाल गांधी।

१४६. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१५ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

अतातुर्कके बारेमे तुम्हारी बाते बिलकुल सही है। उनके परदा-प्रथाको समाप्त करनेके प्रयत्नोके बारेमे तुम एक खुला पत्र क्यों नही लिखती?

अगाथा शायद ज०[1] के लौटने तक यही रहेगी। उसका बड़ा अच्छा चल रहा है। सभी बातोपर हम सुविधासे चर्चा कर रहे हैं।

तो म०[2] १९ तारीखको तुमसे विदा ले रहा है। तुमने जितने स्नेहसे उसकी देख-भाल की, उसपर तो वह आह्लादित है। त्रावणकोरका शिष्टमण्डल अब आने ही वाला है। इसलिए इसे समाप्त करता हूँ।

सप्रेम,

योद्धा

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५१) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४६० से भी।

१४७. पत्र : महादेव देसाईको

१५ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

न० से सम्बन्धित तुम्हारी टिप्पणी मैं पढ़ गया। यह तो कही भी भेजने लायक नही है। इसलिए नही कि उसमे दिया तर्क ठीक नही है बल्कि न० को उतना महत्व क्यो दिया जाये? हम उनके विचारोसे परिचित हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें उत्तर देनेका मतलब है फूसमे लुकाठी लगाना। न० का नाम प्रकाशित करनेमे क्या लाभ है? उनके तर्कोंकी विवेचना करके परोक्ष रूपसे उत्तर दिया जा सकता है जैसाकि मैं करता हूँ। यह काम मैं कर सकता हूँ किन्तु उनके तर्कोंमे उतना दम नही है। तुमने जो प्रमाण उद्धृत किये हैं उनका उपयोग किया जा सकता है। मैं देखूंगा क्या किया जा सकता है। इसलिए मैं उक्त लेख वापस नही भेज रहा हूँ। तुम्हे इसीको आखिरी पत्र मान लेना चाहिए। हालाँकि मैं कल भी लिखूंगा अवश्य, किन्तु यदि

१. जवाहरलाल नेहरू।
२. महादेव देसाई; देखिए "पत्र: अमृत कौरको", पृ० १४९।

तुम रवाना हो चुके होगे तो राजकुमारी इसे आगे भेज देगी। इसलिए मैं फिलहाल अन्य चीजें नहीं भेज रहा हूँ। मैं यह मान लेता हूँ कि यदि तुम वहाँसे १९ को रवाना होगे तो २१ की साँझको यहाँ पहुँच जाओगे।

मड़गाँवकर कल आ रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८४) से।

१४८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१५ नवम्बर, १९३८

चि० कान्ति,

रा० से मेरी बात हुई। वे तो सब जानते हैं। पहले-पहल यह बात उन्होंने अपने पितासे सुनी थी। रामने पूरी तरहसे जाँच-पड़ताल तो नहीं की किन्तु जितनी की है उसके आधारपर उन्हें लगता है कि इस बातमें कोई सचाई नहीं है। पा० ने इस बातसे साफ इन्कार किया है और उसका कहना है कि स्वयं उसे अपराधी माननेपर ही प० को अपराधी माना जा सकता है। उसका कहना है कि स० ने जो-कुछ देखा वह सब वहमसे भरा हुआ है। लेकिन उनका कहना है कि वे इसके बावजूद और भी जाँच-पड़ताल करेंगे और मुझे लिखेंगे। स० के बारेमें मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। ऐसी स्थितिमें मैं तो बिलकुल लाचार हो गया हूँ। यदि स० ने ऐसी भूल न की हो तो उसे साहसपूर्वक जो-कुछ हुआ हो उसका पूरा विवरण देना चाहिए, जैसाकि देवदासने मणिलालके बारेमें किया था। अब मैं तुझे यह सलाह दूँगा कि इस मामलेमें तुझे और नहीं पड़ना चाहिए। तू चिन्ता मत कर। रा० ने मुझे आश्वासन दिया है कि वे स० का बाल बाँका नहीं होने देंगे। अब वह अपने नाना-नानीके साथ रहेगी। मुझे लिखती रहेगी। और अन्तमें मैं जो निर्णय दूँगा, उसे स्वीकार करेगी।

तुझे मेरी यह भी सलाह है कि तू रा० को लिख। तू यदि मेरी मार्फत लिखे तो भी अच्छा है। यदि तू तटस्थ रहते हुए शान्तिपूर्वक काम लेगा तो सचाई सामने आ जायेगी और तू स० को भी बचा सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

फिलहाल तो बहुत-से शिष्टमण्डल हैं इसलिए मुझपर कामका काफी बोझ है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५३) से, सौजन्य : कान्तिलाल गांधी।

१४९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेगाँव
१५ नवम्बर, १९३८

चि० प्रेमा,

बहुत दिनो बाद तेरा पत्र देखनेको मिला। तू जहाँ जाती है वही तुझे यश मिलता है तो इसमें आश्चर्य क्या है?

पटवर्धन जब चाहे तब आ सकते हैं। कुटुम्बका जजाल कठिन समस्या है। बीमारियाँ और दुर्घटनाएँ होती ही रहती हैं। तुझे तो बीमार पड़ना ही नही चाहिए। इसका सुनहला उपाय सभी मामलोंमे मर्यादाका पालन करना है।

तू खुशीसे अपनी नई सहेलीको साथ ला सकती हैं।

किशोरलालने मुझसे भी बात की थी। मै स्वयं तो पुस्तक[1] नही पढ़ सका किन्तु जिस पत्रका[2] विरोध किया गया है वह मैने पढ लिया है। विरोधमे मुझे कोई सार नजर नहीं आया। इसके छपनेसे मुझे कोई हानि पहुँचना सम्भव नही है। हानि तो मुझे तब पहुँचेगी जब मै करने योग्य काम न करूँ और न करने योग्य करूँ। इसलिए [पुस्तक या उसका कोई अंश] वापस लेनेकी कोई बात नही उठती। उनमे एक ही पत्र ऐसा है जिसे प्रकाशित करनेकी शायद मै अनुमति न देता और सो भी आजके समाजके रंग-ढंगको देखते हुए।

हालाँकि मै यह मानता हूँ कि तूने छपवानेमे पूरी सावधानी बरती थी।

किशोरलालने जो-कुछ लिखा है वह शुद्ध भावनासे लिखा है।[3] तू उसका बुरा मत मानना। उन्हें विनम्रतापूर्वक अपना स्पष्टीकरण दे देना।

मै अच्छा हूँ।

खानसाहबने एक स्वयंसेविका की माँग की हैं। मेरी जबानपर तेरा नाम आ गया था, किन्तु मै तुझे अपने वर्तमान कामसे हटाना नही चाहता। इसलिए फिलहाल तो तुझे भेजनेका विचार छोड़ दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६८३६) से; सौजन्य- प्रेमाबहन कंटक। जी० एन १०३९७ से भी।

१. गाधीजी द्वारा प्रेमाबहनको लिखे गये ९० पत्रोंके संकलनका मराठी अनुवाद वात्सल्याची प्रसाद्दीक्षा के नामसे प्रकाशित हुआ था।

२. २१-५-१९३६ का पत्र; देखिए खण्ड ६२, पृ० ४६१-३।

३. पुस्तकको लेकर जो हंगामा उठ खड़ा हुआ था उससे किशोरलालको बहुत दुःख हुआ था और उससे परेशान होकर उन्होंने प्रेमाबहनको एक कड़ा पत्र लिखा था।

१५०. बातचीत: त्रावणकोर राज्य कांग्रेस शिष्टमण्डलके साथ[1]

१५ नवम्बर, १९३८

मुझे तो ऐसी खबरें मिली है कि त्रावणकोरमे बहुत बडे पैमानेपर हिंसात्मक घटनाएँ हुई है। दूसरी ओर राज्य-काग्रेसके अधिनायकोने मुझे तार देकर बताया है कि ऐसी कोई हिंसात्मक घटना नही हुई है जिसकी जिम्मेदारी उनपर हो और जो भी हिंसा हुई है वह सत्ताधारियोकी प्रेरणापर हुई है। ऐसी शिकायत भी की गई है कि राज्य-काग्रेसके सदस्योने छिपे तौरपर हिंसाकी ताईद की है, यद्यपि उनपर हिंसाकी कोई सीधी जिम्मेदारी नही है। मेरा कहना तो यह है कि यदि भीडने हिंसासे काम लिया है तो उसे भड़कानेमे चाहे जिसका हाथ हो, उससे इतना तो प्रकट होता ही है कि जनतापर राज्य-काग्रेसका पर्याप्त नियन्त्रण नही है। ऐसी हालतमे सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनी चाहिए, और मैने स्वयं भी ऐसा कई बार किया है। मै यह स्वीकार करता हूँ कि कथित हिंसात्मक घटनाओमे से अधिकाश उस समय घटित हुईं जब आप जेलके सीखचोमे बन्द थे। मै यह भी मानता हूँ कि आपको जनताको अनुशासनकी शिक्षा देनेका अवसर नही मिला। आपके इस विचारसे भी मै पूर्णत सहमत हूँ कि लड़ाई सिर्फ सत्ताधारियोसे कुछ रियायते प्राप्त करनेके लिए नही, बल्कि सच्ची जिम्मेदार सरकारकी स्थापनाके लिए होनी चाहिए। लेकिन, मेरी दृष्टिमे तो इस सबका मतलब यही है कि आपको जनसाधारणके बीच बहुत-सा प्रारम्भिक कार्य करनेकी जरूरत है। आपको अपना निर्माण-कार्य नीवसे ही तो शुरू करना है।

आपका कहना है कि आपके विचारसे दीवानके हट जानेमे आपके आन्दोलनको बडा लाभ होगा, क्योकि वही आपके रास्तेमे मुख्य बाधा है। अगर इन आरोपोपर आपका आग्रह बना रहता है तो आपको इन्हे सिद्ध करनेके लिए भी तैयार रहना चाहिए। लेकिन मेरी रायसे तो इससे होगा यह कि एक बिलकुल ही व्यक्तिगत मामला प्रमुखता प्राप्त कर लेगा और फलत जिम्मेदार सरकारका प्रश्न पृष्ठभूमिमे चला जायेगा। इसे तो मै दुश्मनके हाथमे खेलना मानता हूँ। और ऐसा करके आप जनताको नेतृत्व भी गलत ही देगे। यदि इन आरोपोकी सचाईमें आपका विश्वास है तो मै आपसे इन्हे कोई इसलिए वापस लेनेको नही कह रहा हूँ कि ये सच्चे नही है। उन्हे वापस लेनेको मै इसलिए कहता हूँ कि आपके सामने

१. प्यारेलाल नैयरके "व्हाय द विदड्रॉअल" शीर्षक लेखसे उद्धृत। शिष्टमण्डल गाधीजी से सेगाँवमें मिला था और जो-कुछ यहाँ दिया गया है, वह लेखकके अनुसार बातचीतका सार है।

इससे बहुत बड़ा सवाल पड़ा हुआ है। बड़ी बातमें छोटी बात तो अपने-आप आ ही जाती है। दीवानके हटा दिये जानेसे तो आपको उत्तरदायी शासन मिलनेवाला है नहीं। ऐसी हालतमें तो कोई चतुर दीवान यह भी कर सकता है कि कुछ समयके लिए अपनी इच्छासे हट जाये और तूफानके गुजर जाने तक खुद पृष्ठभूमिमें ही रहकर अपने एवजमें रखे गये किसी दीवानके माध्यमसे आन्दोलनको कुचल देनेका प्रयत्न करे। ऐसी बातें पहले भी हुई हैं और आगे भी होंगी। इसके विपरीत उत्तरदायी सरकारमें जनेच्छाके अनुसार दीवान वगैरहको हटानेकी सत्ता भी शामिल है। इसलिए आप अपने आरोपमें रंच-मात्र भी कमी किये बिना यह कह सकते हैं कि आप इनकी सत्यता सिद्ध करने आदिमें अपनी शक्ति नष्ट नहीं करना चाहते। आपके सामने दो रास्ते हैं और दोनों सर्वथा उचित हैं। अब इनमें से किसी एकको आपको चुनना है। अपने यहाँके लोगोंके मनकी वृत्तिको आप ही ज्यादा अच्छी तरह जानते होंगे। हो सकता है कि वह ऐसी हो कि दीवानके हटाये जानेका आन्दोलन चलाकर ही इस संघर्षको सबसे अच्छी तरह आगे बढाया जा सकता। लेकिन, जहाँ तक खुद मेरी बात है, स्थितिपर सब तरहसे विचार करनेपर मेरा मन तो यही कहनेको होता है कि यह कड़वा घूँट पीकर आपको अपनी पूरी शक्ति इस प्रयत्नमें लगानी चाहिए कि सत्ताकी बागडोर आपके हाथोंमें आ जाये।

लेकिन इन आरोपोंके बारेमें आप चाहे जो तय करें, मैं यह सलाह जरूर दूँगा कि अभी तो आप सविनय अवज्ञा फिरसे आरम्भ न कीजिए। पहले आपको अपना घर-द्वार ठीक-ठाक कर लेना चाहिए। अगर आपके मनमें विशुद्ध अहिंसाका विचार होगा तो आप ऐसा नहीं कहेंगे कि "हमें अवसरका लाभ उठाना चाहिए और आज जबकि जनशक्तिमें ऐसा उफान आया हुआ है, हमें अपनी उपलब्धियोंको स्थायी बना लेना चाहिए।" जो शक्ति पैदा हुई है उसे यदि आप विवेकशून्य होकर ऐसी ही बातोंमें नष्ट कर देंगे तो आप सत्ता प्राप्त नहीं कर पायेंगे। यह रास्ता खतरनाक है। यदि आप इस रास्तेपर चलेंगे तो वास्तवमें उन राजनीतिक षड्यंत्रकारियोंका ही मार्ग प्रशस्त करेंगे, जो हो सकता है स्थितिसे लाभ उठाकर अपना उल्लू सीधा करने लगें। इसलिए मेरी तो सलाह है कि आप धीरे-धीरे आगे बढ़ें और इस क्रममें सभी उलझे-बिखरे सूत्रोंको अपने हाथोंमें समेटते जायें। रचनात्मक कार्य और अहिंसाका प्रशिक्षण लेकर आप अपने-आपको एक सुसंगठित और अनुशासित समुदाय बनायें। अब त्रावणकोरके अन्दर और बाहर लोकमतको सही ढंगसे तैयार किये बिना एक भी कदम आगे बढ़नेकी कोशिश करना आपके लिए मुनासिब नहीं होगा।

हो सकता है, ऊपरसे देखनेमें रचनात्मक कार्य और अहिंसाके बीच कोई सम्बन्ध नजर न आये, लेकिन यदि रचनात्मक कार्य अहिंसात्मक कार्यक्रमके अंगके रूपमें हाथमें लिया जाता है तो ऐसा कोई आन्तरिक सूत्र जरूर है जो इन दोनोंको जोड़ता है। उदाहरणके लिए, राष्ट्रीय झण्डेकी परिकल्पना एकता, शुद्धता और अहिंसाके प्रतीकके रूपमें की गई। इसे जो एक विशेष महत्व और अर्थ प्राप्त है वह, हमने अपने अहिंसात्मक कार्यक्रममें इसे जो स्थान दिया है, उसकी बदौलत ही प्राप्त है। अपने-

आपमें तो इसमें कोई खूबी नही है। इसलिए अपने रचनात्मक कार्यक्रमको क्रियान्वित करते समय आपको अपने मनमे अहिंसाका खयाल बराबर बनाये रखना चाहिए।

फिर, मैं यह भी कहूँगा कि विद्यार्थी तो इस संघर्षके सविनय अवज्ञा वाले हिस्सेसे अलग ही रहें और उनके बीच कोई प्रचार नहीं किया जाना चाहिए। स्कूलके विद्यार्थियोसे ऐसा काम करनेको कहना उचित नही है। यह दुर्बलताकी निशानी है। यह तो अपने माता-पिताके लिए बच्चोसे कष्ट सहन करनेको कहने-जैसा है।

लेकिन विद्यार्थी चरखा चलाने और रचनात्मक कार्यक्रमके अन्तर्गत आनेवाले दूसरे कार्योमे निपुणता प्राप्त करके इस संघर्षमे भाग ले सकते है और उन्हे लेना भी चाहिए। ठीक यही काम आज चीनी विद्यार्थी कर रहे हैं, जबकि उनका देश जापानसे लोहा ले रहा है। चीनी विद्यार्थी अपने नव-शिक्षण कार्यक्रमके द्वारा चीनी संस्कृतिके मूल तत्वोकी रक्षा करनेमे सन्नद्ध है। वे एक ऐसी राष्ट्रीय भावना तैयार करनेमे मदद दे रहे हैं जो सदा अपराजेय रहेगी, चाहे लडाईके मैदानमें चीनियोको जय-पराजय जो भी मिले।

ब्रिटिश भारतके सत्याग्रह-सघर्षके दो पहलू थे — सरकारके साथ अहिंसात्मक असहयोग और लोगोमे पारस्परिक सहयोग। इन दोनो पहलुओको सदा ध्यानमें रखना चाहिए। जो रचनात्मक कार्यक्रम मैंने आपके सामने रखा है, उसके लिए यह जरूरी है कि सभी वर्गोंके लोगोमे आपसमे पूर्ण सहयोग हो। इसलिए आप पुलयो और परियोके बीच जाकर उनसे भाईचारा कायम करें और उन्हे देश-भाई और बराबरके लोग मानते हुए उनसे अनुरोध करें कि वे ब्राह्मण, इजवा, ईसाई तथा अन्य लोगोके कधेसे-कधा भिड़ाकर इस पवित्र संघर्षमे अपना यथेष्ट योग देनेके लिए आगे आयें। आप सबको एक होकर काम करना है। यदि आप एक भी वर्ग या समुदायको इस सघर्षसे बाहर छोड़ेंगे या उसको नाराज करेगे, तो निश्चय ही उससे आपका तेज नष्ट होगा और आपके सघर्षको हानि पहुँचेगी।

फिर आता है मद्य-निषेधका काम। अभी आप धरना तो नही दे, लेकिन शराबी लोगोके घरोमे जाकर उन्हें समझायें-बुझाये अवश्य। यदि इसका कोई स्पष्ट परिणाम तत्काल सामने न आये तो भी इससे आपके सघर्षको एक नैतिक आधार प्राप्त होगा और उससे अधिक शक्ति तथा गति आयेगी।

त्रावणकोरके स्त्री-पुरुष दोनोकी आदतें कितनी सादी है। वे सफेद कपडे पहनते है और वहाँ सर्दी-गर्मी इतनी नहीं पडती कि उससे बचावके लिए उन्हे ज्यादा कपडे की जरूरत हो। अपनी जरूरतकी पूरी खादी वे आसानीसे तैयार कर सकते हैं। त्रावणकोरको बाहरसे गज-भर भी कपड़ा मँगानेकी जरूरत नही है, बल्कि उसे तो खादी मँगानेकी भी जरूरत नही है। इसका मतलब यह हुआ कि एक-एक चरखा तो सभी घरोमे होना चाहिए।

और खादीका सम्बन्ध मुक्तिसे जोडना चाहिए। जब तक आप कातते रहे आप अपनी जरूरतोकी नही, बल्कि राष्ट्रीयकी जरूरतोकी ही सोचे। आप मनमें यह कहते रहें, 'मै तो अपने पूरे राष्ट्रको कपडा देना चाहता हूँ, क्योकि वह नगा

है और यह काम मुझे अहिंसक ढंगसे करना है।' हर तार निकालनेके साथ आप अपने मनमें यह खयाल करें कि हम तो स्वराज्यके तार निकाल रहे हैं। जरा अपने मनकी आँखोके सामने इसी भावसे इस कार्यमें एकसाथ लीन लाखो लोगोकी तसवीर लाकर तो देखिए। क्या आपकी कल्पनाकी आँखे नहीं देख रही है कि स्वराज्य आपके दरवाजेपर दस्तक दे रहा है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

१५१. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१६ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

तुम ऐसा क्यो कहती हो कि महादेवके तुम्हारे यहाँसे चले आनेके बाद तुम्हे मुझे पत्र नही लिखना होगा (मै समझता हूँ तुम्हारा मतलब इतने नियमित रूपसे लिखनेसे है)? अगर तुम्हारे पास समय हो तो मै तो बेशक यह चाहता हूँ कि तुम मुझे नियमित रूपसे लिखा करो। हो सकता है, मै तुम्हे इस प्रकार न लिख सकूँ। किन्तु यह छूट तो तुम मुझे बराबर देती रही हो।

मुझे उम्मीद है कि उसके चले आनेके बाद तुम्हे एक तरहसे थोड़ा आराम तो मिलेगा ही। उसका वहाँ रहना तुम्हारे लिए प्रसन्नताका विषय तो जरूर था, लेकिन इसमे भी कोई शक नही कि तुम्हें बराबर उसकी फिक्र करनी पड़ती थी और उसकी देख-भालमें काफी शक्ति भी खर्च करनी पड़ती थी।

त्रावणकोरके शिष्टमण्डलको तो आज निबटा दिया। वे मुझे अच्छे लोग जान पड़े। दीवानके खिलाफ अपने आरोप वापस लेनेमे उन्हे वास्तवमे कठिनाई है। लेकिन उन्होने मुझे अन्तिम रूपसे कोई उत्तर नही दिया है। वे सारा पक्षापक्ष अपनी कार्य-समितिके समक्ष रखेंगे और तब कोई अन्तिम निर्णय करेंगे। कितना अच्छा होता, अगर बातचीतके दौरान तुम भी उपस्थित रहती। मैंने उनको चार घंटे दिये। रामचन्द्रन अभी यही है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

यह पत्र पहुँचने तक अगर महादेव वही हो तो उससे कहना कि हो सके तो वह एक-दो दिन भोपालमे लगाये।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९०) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ७०४६ से भी।

१५२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव
१६ नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

आशा है, इस समुद्र-यात्रासे तुम्हे और इन्दुको भी लाभ हुआ होगा। मैं २० तारीखके आसपास तुम्हारे वर्धा आनेकी आशा कर रहा हूँ। लेकिन कहनेकी जरूरत नही कि उससे पहले भी तुम जितनी जल्दी चाहो, आ जाओ। यहाँ तुम्हे बड़ी कठिन समस्याओके समाधानमे लगना होगा।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३८, सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

१५३. राजकोटके-ठाकुर साहबके लिए वक्तव्यका मसविदा[1]

[१९ नवम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

१. यह देखते हुए कि पिछले कुछ महीनोंमे हमारे लोगोने, जिन्हे वे अपनी शिकायते मानते है, उनके निवारणके लिए शोचनीय कष्ट सहे है और उनके बारेमे लोक-भावना बढी है, तथा पूरी परिस्थितिपर परिषद् और श्री वल्लभभाई पटेलके साथ विचार-विमर्श करनेके बाद, हम यह समझ गये है कि वर्तमान सघर्ष और कष्ट तुरन्त खत्म होने चाहिए।

२ हमने दस सज्जनोकी, जो हमारी रियासतके नागरिक या सेवक होने चाहिए, एक समिति नियुक्त करनेका फैसला किया है। उनमे से तीन रियासतके अधिकारी और सात हमारी रियासतके नागरिक होगे, जिनके नाम बादमे घोषित किये जायेगे। इस समितिका अध्यक्ष ठाकुर साहब द्वारा नियुक्त व्यक्ति होगा।

१. वल्लभभाई पटेलके साथ बातचीत करनेके बाद राजकोटके ठाकुर साहब धर्मेन्द्रसिंहने २६ दिसम्बरको इस मसविदेपर हस्ताक्षर किये थे।

२. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", पृ० १५२, जिसमें गाधीजी ने बताया है कि वक्तव्यका मसविदा उन्होंने तैयार किया था।

३. यह समिति, समुचित अन्वेषणके बाद, जनवरीके अन्त तक एक रिपोर्ट तैयार करेगी, जिसमे हमसे सुधारोकी एक ऐसी योजनाकी सिफारिश की जायेगी जो, अधिराजके प्रति हमारे दायित्व और राजाके रूपमे हमारे परमाधिकारोसे संगति रखते हुए, हमारी प्रजाको यथासम्भव अधिकसे-अधिक व्यापक अधिकार देगी।

४. हमारी यह इच्छा है कि हमारी निजी राशि अबसे नरेन्द्र मंडलके परिपत्रमे निर्धारित ढगसे नियमित हो।

५ हम अपनी प्रजाको यह भी विश्वास दिलाना चाहते है कि पूर्वोक्त समिति हमारे आगे जो योजना रखेगी, हम उसपर विचार करने और उसे कार्यान्वित करनेका इरादा रखते है।

६. यह मान लिया गया है कि शान्ति और सद्‌भावनाकी पुनः स्थापनाके लिए, एक आवश्यक उपक्रमके रूपमे, सारा अवैधानिक आन्दोलन तुरन्त रुक जायेगा। इसलिए इसके द्वारा हम सभी राजनैतिक बन्दियोको पूरी माफी देते है और उन्हे फौरन रिहा करने, तमाम जुर्माने खत्म करने और सभी दमनकारी कार्रवाइयाँ वापस लेनेका आदेश देते है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-२-१९३९

१५४. सेलम जिलेमें मद्य-निषेध

अन्नामलाई विश्वविद्यालयके सिंडीकेटने श्री सी० जगन्नाथचारीको प्रोफेसर बी० वी० नारायणस्वामी नायडूके मार्ग-दर्शन और निर्देशनमे सेलम जिलेमें मद्य-निषेधकी समस्याका अध्ययन करनेका काम सौपा था। इस अध्ययनके आधारपर तैयार की गई रिपोर्टका सार मुझे भी भेजा गया है। नीचे उसके कुछ अंश दे रहा हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-११-१९३८

१. यहाँ नहीं दिये गये हैं।

१५५. तार: अमृत कौरको

वर्धा
१९ नवम्बर, १९३८

राजकुमारी अमृत कौर
मैनरविला
शिमला वेस्ट

आशा है, उदासी दूर हो गई होगी और प्रसन्नता लौट आई होगी। सप्रेम।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९१) से; सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ७०४७ से भी।

१५६. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
१९ नवम्बर, १९३८

भाई वल्लभभाई,

भाई अनन्तराय[1] और नानाभाईसे सलाह-मशविरा करके मैंने जो मसविदा[2] तैयार किया है उसे तुम देख लो। यदि यह तुम्हे उचित जान पड़े तो ठाकुर साहब इसके अनुसार चले और सत्याग्रह बन्द कर दिया जाये। कमेटीके लिए सदस्योके नाम भाई अनन्तरायके साथ बैठकर तय कर लो। उसमे जनताके प्रतिनिधियोका बहुमत होना चाहिए। यदि इतना हो जाये तो मुझे लगता है कि हमे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। हालाँकि इसमे उत्तरदायी सरकारका नाम नही है किन्तु यह तो स्पष्टत. मेरे मसविदेमे आ ही जाती है।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने, बम्बई—४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २२७-८

१. अनन्तराय पट्टणी, भावनगरके दीवान।
२. देखिए "राजकोटके ठाकुर साहबके लिए वक्तव्यका मसविदा", पृ० १५०-१।

१५७. यहूदी लोग

मुझे ऐसे बहुत-से पत्र प्राप्त हुए हैं जिनमे मुझसे फिलस्तीनकी अरब-यहूदी समस्या और जर्मनीमे यहूदियोंपर किये जा रहे अत्याचारके सम्बन्धमे अपने विचार प्रकाशित करनेको कहा गया है। सो अत्यन्त कठिन प्रश्नपर मै अपने विचार तो व्यक्त कर रहा हूँ, लेकिन झिझकते हुए ही।

यहूदियोंसे मुझे पूरी सहानुभूति है। अपने दक्षिण आफ्रिका प्रवासकालमे मैंने उन्हे निकटसे जाना है। उनमे से कुछ तो मेरे जीवन-भरके साथी बन गये हैं। इन मित्रोसे मुझे उनपर युगोसे होते आ रहे अत्याचारोके बारेमे काफी-कुछ मालूम हुआ है। वे ईसाई-समाजके अस्पृश्य माने जाते रहे हैं। उनके प्रति ईसाइयोके व्यवहार और अस्पृश्योंके प्रति हिन्दुओके व्यवहारमे बहुत समानता है। दोनो ही समुदायोके साथ किये जानेवाले अमानवीय व्यवहारका औचित्य सिद्ध करनेके लिए धर्मकी दुहाई दी गई है। इसलिए यहूदियोके साथ अपनी मैत्रीकी बातको अलग रखूँ तो भी उनके प्रति मेरे मनमे सहानुभूति होनेके व्यापकतर कारण मौजूद हैं।

लेकिन मेरी सहानुभूति इस बातकी ओरसे मेरी आँखे बन्द नही कर सकती कि न्यायके तकाजे क्या हैं। यहूदियोके लिए एक अलग देशकी माँग मुझे कोई खास नही जँचती। इस माँगका समर्थन 'बाइबिल' के हवालेसे और यहूदियोकी फिलस्तीन लौटने की सतत और तीव्र लालसाकी चर्चा करके किया जाता है। लेकिन ससारकी अन्य अनेक जातियोकी तरह वे भी उसी देशको अपना देश और अपना घर क्यो नही बना लेते जहाँ उनका जन्म हुआ और जहाँ वे जीविकोपार्जन करते है?

फिलस्तीन अरबोंका है — ठीक उसी तरह जिस तरह इग्लैंड अग्रेजोका और फ्रान्स फ्रान्सीसियोका है। यहूदियोको अरबोके सिर थोप देना गलत और अमानवीय कार्य है। आज फिलस्तीनमे जो-कुछ हो रहा है वह नैतिक आचरणके किसी भी नियमके अनुसार उचित नहीं साबित किया जा सकता। [राष्ट्र सघ द्वारा दिये गये] शासनाधिकारका पिछले युद्धके परिणामके अतिरिक्त और कोई आधार, कोई औचित्य नही है। यहूदियोके वतनके रूपमे फिलस्तीन उन्हे पूर्णत. या अंशतः वापस मिल जाये, इसके लिए स्वाभिमानी अरबोंको तबाह करना निश्चय ही मानवताके विरुद्ध अपराध होगा।

ज्यादा अच्छा रास्ता तो यह होगा कि यहूदी लोग जहाँ भी जन्म लें और पले-बढ़े वहाँ उनके साथ न्यायोचित व्यवहारपर आग्रह रखा जाये। जिस अर्थमे फ्रान्समे जन्मे ईसाई फ्रान्सीसी हैं, बिलकुल उसी अर्थमे वहाँ जन्मे यहूदी भी फ्रान्सीसी हैं। यदि यहूदियोका फिलस्तीनके अलावा अपना कोई वतन नही है तो क्या वे यह पसन्द करेगे कि वे दुनियाके जिस अन्य हिस्सोमे बसे हो वहाँसे उन्हे उखाड़कर फिलस्तीनमे

ही जा बसनेको मजबूर किया जाये? या कि वे दोहरा वतन चाहते हैं, ताकि अपनी इच्छानुसार वे चाहे जहाँ जाकर बस सकें? अलग वतनकी इसी माँगने जर्मनोको जर्मनीसे यहूदियोको निकाल बाहर करनेका एक बहाना दे दिया है।

लेकिन जर्मनीमे यहूदियोपर जो अत्याचार किया जा रहा है वह तो इतिहासमे बेमिसाल जान पडता है। आज हिटलर जैसे पागल बन गये जान पडते है, वैसा पागलपन तो प्राचीन कालके आततायियोने भी नही दिखाया था। और वे यह सब धार्मिक जनूनसे कर रहे हैं। कारण, वे एक नये धर्मका प्रतिपादन कर रहे है — वर्जनशील और उग्र राष्ट्रीयताके धर्मका, जिसके नामपर किया जानेवाला हर दानवी कृत्य ऐसा परम मानवीय कृत्य हो जाता है जिससे कर्ताके इहलोक और परलोक दोनोके सुधरनेका विश्वास दिलाया जाता है। एक सिरफिरे किन्तु दुस्साहसी नौजवानके अपराधके लिए अविश्वसनीय खूँखारपनके साथ उसकी पूरी जातिको दण्डित किया जा रहा है। यदि मानवताके नामपर और मानवताके निमित्त सचमुच कोई युद्ध औचित्यपूर्ण हो सकता है तो जर्मनीको एक सम्पूर्ण जातिको मनमाने ढगसे तबाह करनेसे रोकनेके लिए उसके खिलाफ युद्ध छेडना सर्वथा उचित होगा। लेकिन, मै युद्धमें विश्वास नही करता। इसलिए ऐसे किसी युद्धके पक्षापक्षपर विचार करना मेरे विचार-क्षितिजसे या मेरे क्षेत्रसे बाहरकी चीज है।

लेकिन यदि यहूदियोके खिलाफ किये जा रहे ऐसे घोर अपराधके कारण भी जर्मनीके विरुद्ध युद्ध छेडना उचित नही होगा तो उसके साथ कोई सन्धि-सम्बन्ध करना भी निश्चय ही किसी भी प्रकार उचित नही हो सकता। न्याय और लोकतन्त्रका रक्षक होनेका दावा करनेवाले राष्ट्र और न्याय तथा लोकतन्त्रके जगविदित शत्रुके बीच कोई सन्धि कैसे हो सकती है? या कि हम यह मानें कि इग्लैंड भी शस्त्र-सज्जित तानाशाही और तज्जनित समस्त बुराइयोको गले लगाने जा रहा है?

जर्मनी दुनियाको यह दिखा रहा है कि शुद्ध हिंसा — ऐसी हिंसा जो पाखण्ड या अपनी दुर्बलताको छिपानेके लिए मानवताकी झूठी दुहाई देनेकी प्रवृत्तिसे मुक्त हो — कैसे-कैसे कमाल कर सकती है। साथ ही वह हमे यह भी दिखा रहा है कि अपने नग्न रूपमे हिंसा कैसी घृणित, कितनी भयंकर और कैसी विकराल है।

क्या यहूदी लोग इस सगठित और निर्लज्जतापूर्ण अत्याचारका मुकाबला कर सकते हैं? क्या कोई ऐसा रास्ता है जिसे अपनाकर वे अपने आत्मसम्मानकी रक्षा कर सकें और असहाय, उपेक्षित और अकेला महसूस न करें। मेरा निवेदन है, हाँ, ऐसा रास्ता है। जिसकी ईश्वरमे आस्था है वह असहाय या अकेला क्यो महसूस करे? तत्वत देखा जाये तब तो ईश्वर एक ही है, वह अद्वितीय और वर्णनातीत है, किन्तु विभिन्न धर्मोंमे उसकी जो कल्पना की गई है उस दृष्टिसे यहूदियोका ईश्वर जेहोवा ईसाइयों, मुसलमानो या हिन्दुओके ईश्वरसे अधिक वैयक्तिक है। चूँकि यहूदी ईश्वरमे वैयक्तिकता का आरोप करते है और मानते है कि वह उनके प्रत्येक कर्मका नियामक है, इसलिए उन्हे असहाय तो नहीं महसूस करना चाहिए। यदि मै यहूदी होता और मेरा जन्म जर्मनीमे हुआ होता तथा वही जीविकोपार्जन कर रहा होता

तो जर्मनीको अपना वतन कहनेका जितना दावा जर्मन जातिका कोई बड़ेसे-बडा आदमी कर सकता है उतना ही दावा मैं भी करता और अत्याचारियोसे कहता कि ठीक है, तुम मुझे गोलीसे उडाना चाहो तो उडा दो, काल-कोठरीमे डालना चाहो तो डाल दो; मैं सब-कुछ बर्दाश्त कर लेता लेकिन जर्मनी छोडनेको या भेदभावपूर्ण व्यवहारको सिर झुकाकर स्वीकार करनेको तैयार न होता। और यह कदम उठानेके लिए मैं उस दिनकी प्रतीक्षा नही करता रहता जब शेष यहूदी भी मेरे साथ सत्याग्रह करनेको तैयार होगे, बल्कि इस विश्वासके साथ अपने मार्गपर आगे बढ चलता कि अन्तमे सभी मेरा अनुकरण करेंगे ही। यदि एक या बहुत-से यहूदी इस उपायको अपना ले तो इससे उस एक या उन बहुत-मे यहूदियोकी स्थिति कमसे-कम आजकी अपेक्षा अधिक बुरी तो नही हो जायेगी। और खुशी-खुशी कष्ट सहन करनेसे उन्हे एक ऐसी आन्तरिक शक्ति और आनन्द प्राप्त होगा जो उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए जर्मनीसे बाहरके देशो द्वारा पास किये गये सैकड़ो प्रस्ताव भी उन्हे नही दे सकते। सच तो यह है कि यदि ब्रिटेन, फ्रान्स और अमेरिका जर्मनीके खिलाफ युद्धका आह्वान करे तो उससे भी यहूदियोको उस आन्तरिक शक्ति और आन्तरिक आनन्दकी प्राप्ति नही हो सकती। दूसरी ओर युद्धके इस आह्वानकी पहली प्रति-क्रियाके रूपमे हिटलर अपनी योजनाबद्ध हिंसाको यहूदियोके कत्लेआमका रूप दे सकते है। लेकिन अगर यहूदियोके मानसको खुशी-खुशी कष्ट सहनेके लिए तैयार किया जा सके तो जिस कत्लेआमकी मैंने कल्पना की है उसे भी जेहोवा द्वारा यहूदी जातिके लिए, अत्याचारीको ही निमित्त बनाकर, खोला गया मुक्ति का द्वार मानकर भक्तवत्सल प्रभुकी महान कृपाके रूपमे उल्लासपूर्वक स्वीकार किया जा सकता है। ईश्वरसे डरनेवालेको मृत्युका भय नही होता। उसके लिए तो मृत्यु जागरणके बाद आनेवाली वह सुदीर्घ निद्रा है जो उसे और भी ताजगी और स्फूर्ति देगी।

यहाँ यह बतानेकी तो जरूरत ही नही है कि मेरे इस सुझावपर चलना चेकोकी अपेक्षा यहूदियोके लिए बहुत आसान है। और दक्षिण आफ्रिकामे भारतीयों द्वारा चलाये गये सत्याग्रह-आन्दोलनके रूपमे उनके सामने एक बिलकुल ठीक दृष्टान्त भी है। वहाँ भारतीयोकी स्थिति ठीक वही थी जो जर्मनीमे यहूदियोकी है। वहाँ उनपर जो अत्याचार किया जा रहा था उसपर भी धर्मका एक मुलम्मा चढ़ाया गया था। राष्ट्रपति क्रूगर कहा करते थे कि गोरे ईसाई ईश्वरके वरद पुत्र है और भारतीय उनके सामने तुच्छ लोग है, जिनका सर्जन गोरोकी सेवा करनेके लिए ही किया गया है। ट्रान्सवालके संविधानकी एक बुनियादी धारा यह थी कि गोरों और एशियाइयो सहित अश्वेत लोगोके बीच समानता नहीं बरती जानी चाहिए। भारतीयोको भी यहूदी बस्तियो (घेटो) के ढगकी अलग बस्तियोमे सीमित कर रखा गया था जिन्हे "लोकेशन" कहते थे। उनपर थोपी गई दूसरी निर्योग्यताएँ भी लगभग वैसी ही थी जैसीकि जर्मनीमे यहूदियोपर लगाई गई है। इन परि-स्थितियोमे उन मुट्ठी-भर भारतीयोने सत्याग्रहका सहारा लिया और अपने इस

संघर्षमे उन्हे बाहरी दुनिया या भारत सरकारका भी कोई समर्थन प्राप्त नही था। उलटे ब्रिटिश अधिकारियोने सत्याग्रहियोको वह कदम उठानेसे विमुख करनेकी कोशिश की।

लेकिन सच तो यह है कि जर्मनीके यहूदी दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोकी अपेक्षा बहुत अधिक शुभ सयोगोमे सत्याग्रह कर सकते है। जर्मनीके यहूदी एक सुसगठित और ऐक्यबद्ध समाजके रूपमे रह रहे है। वे दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोकी अपेक्षा बहुत अधिक प्रतिभाशाली है। इसके अलावा, विश्वका सगठित लोकमत उनके पीछे है। मेरा निश्चित विश्वास है कि यदि उन्हे अहिंसक संघर्षमे नेतृत्व प्रदान करनेके लिए उनमे से कोई साहसी और सही दृष्टिवाला आदमी आगे आये तो उनकी निराशाके शिशिरको क्षण-भरमे आशा के वसन्तमे परिवर्तित किया जा सकता है। और आज जिस चीजने कुत्सित मानव-आखेटका रूप धारण कर रखा है, उसीको जेहावो-प्रदत्त — ईश्वरकी दी हुई — कष्ट-सहनकी शक्तिसे युक्त निःशस्त्र स्त्री-पुरुषो द्वारा किये जानेवाले शान्त और सकल्पमय प्रतिरोधका रूप दिया जा सकता है। वह सच्चे अर्थोमे धार्मिक प्रतिरोध होगा — मानवीय गुणोसे वंचित नास्तिक लोगोके उन्मादका सच्चा धार्मिक प्रतिरोध। इस तरह जर्मन यहूदी जर्मन गैर-यहूदियोपर सच्ची विजय प्राप्त करेगे, और वह इस रूपमे कि वे उन्हे मनुष्यकी गरिमाको पहचानना सिखायेगे। इस प्रकार वे अपने जर्मन भाइयोकी भी सच्ची सेवा कर पायेगे और यह सिद्ध कर सकेगे कि आज जो लोग — चाहे अनजाने मे ही — जर्मन जातिके नामपर कलक लगा रहे है उनकी तुलनामे वे कही अधिक सच्चे जर्मन है।

और अब दो शब्द फिलस्तीनके यहूदियोके बारेमे। मुझे इस बातमे तनिक भी सन्देह नही है कि जो रास्ता उन्होने अपनाया है वह गलत है। 'बाइबिल'मे वर्णित फिलस्तीन कोई भौगोलिक क्षेत्र नही है। वह तो उनके हृदयमे है। लेकिन अगर उन्हे भौगोलिक फिलस्तीनको अपना देश मानना ही है, उसे स्वदेशके रूपमे देखना ही है तो ब्रिटेनकी संगीनोकी छायामे उसमे प्रवेश करना तो उनका बिलकुल गलत तरीका है। कोई धर्म-कार्य सगीनो और बमोके बलपर कैसे किया जा सकता है। वे फिलस्तीनमे अरबोकी सद्भावनाके सहारे ही बस सकते है। उन्हे अरबोका हृदय-परिवर्तन करनेकी कोशिश करनी चाहिए। जो ईश्वर यहूदियोके हृदयका नियामक है वही अरबोके हृदयका भी है। वे अरबोके सामने सत्याग्रह करते हुए उन्हे इस बातके लिए आमन्त्रित कर सकते है कि हम तो तुम्हारे खिलाफ अपनी उँगली भी नही उठायेगे, तुम चाहे जो करो — चाहो तो हमे गोलियोसे उड़ा दो या उठाकर यही मुर्दा सागरमे फेक दो। फिर वे देखेगे कि उनकी इस धार्मिक आकाक्षाको विश्व-जनमतका कैसा समर्थन मिल रहा है। अरबोको समझानेके हजार रास्ते है, बशर्ते कि यहूदी ब्रिटेनकी सगीनोका सहारा लेना छोड दे। लेकिन अभी तो वे उन लोगोको तबाह करनेमे ब्रिटेनके साझीदार बने हुए है जिन्होने उनका कुछ नही बिगाड़ा है।

कोई यह नही समझे कि मै अरबोके जोर-जुल्मको सही ठहरानेकी कोशिश कर रहा हूँ। कितना अच्छा होता, अगर उन्होने उस कार्रवाईका प्रतिरोध करनेके लिए, जिसे वे ठीक ही अपने देशपर बिना किसी कारण या औचित्यके किया गया हमला मानते है, अहिंसात्मक मार्ग अपनाया होता। लेकिन न्याय-अन्यायके सर्वमान्य नियमोके अनुसार अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियोसे जूझ रहे अरबोके इस प्रतिरोधके खिलाफ कुछ नही कहा जा सकता।

तो यहूदी लोग, जो अपनेको ईश्वरकी विशेष प्रिय जातिके लोग बताते है धरतीपर अपने स्वत्वकी प्रतिष्ठाके लिए अहिंसाका मार्ग अपनाकर अपना यह दावा सिद्ध करें। हर देश — फिलस्तीन भी — उनका घर है, लेकिन आक्रमण और जोर-जबरदस्तीके बलपर नही बल्कि प्रेमपूर्ण सेवाके आधारपर। एक यहूदी मित्रने मुझे सेसिल रॉथकी लिखी 'ज्यूइश कट्रीब्यूशन टु सिविलिजेशन' नामकी एक पुस्तक भेजी है। इसमे साहित्य, कला, सगीत, नाटक, विज्ञान, चिकित्साशास्त्र, कृषि आदिके क्षेत्रोमे यहूदियोके योगदानका विवरण दिया गया है। यदि यहूदि लोग यह सकल्प कर ले कि उन्हे पश्चिमी दुनियाके ऐसे समाज-बहिष्कृत अछूत बनकर नही रहना है जिनसे या तो घृणा की जा सकती है या जिनपर तरस ही खाया जा सकता है, तो कोई भी उनके साथ वैसा व्यवहार नही कर सकता। जो तेजीसे पशु बनते जा रहे है और जिनको ईश्वरने त्याग दिया है, ऐसे मनुष्य बननेके बजाय, यदि वे सच्चे अर्थोमे मनुष्य, ईश्वरके विशेष कृपापात्र मनुष्य बन जाये तो वे सबके स्नेह और सम्मानके भाजन हो सकते है। यदि वे चाहे तो विश्वको अपनी देनकी लम्बी सूचीमे अहिंसात्मक संघर्ष-रूपी यह सर्वोपरि देन भी जोड सकते है।

सेगाँव, २० नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-११-१९३८

१५८. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

२० नवम्बर, १९३८

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिल गया था। तुझे मेरा पत्र मिला होगा। तुझे लिखनेके बाद रामचन्द्रनसे मेरी बात हुई थी। मै उन्हे मना नही सका। उनका कहना है कि स० ने जो-कुछ देखा उसमे कोई गलती अवश्य हुई लगती है और यह कि पा० से तेरे सम्बन्धोके बारेमे भी ऐसा ही आरोप लगाया गया था। अन्तमे यह सिद्ध हुआ कि इसमे कुछ नही था। इसके बावजूद रा० का कहना है कि 'मै पूरी तरह जाँच करूँगा।' किन्तु उन्होने आगे कहा: "मान लो कि मेरी बहन का पतन हो तो क्या स० का कर्तव्य अपनी माँ को ठीक रास्तेपर लाना नही था? या उसे आपके पास दौड़े चले

आना चाहिए था? जिसने उसे पाला-पोसा है, जिसने उसे लाड-प्यार दिया है, जिससे बिछुडते ही जो रो पडती थी वह क्या अब हमारे लिए निकम्मी हो गई? किन्तु यदि आप आदेश देगे तो मै स० को इतना कहनेके लिए आपके सामने अवश्य हाजिर करूँगा।" ऐसी स्थितिमे मै अधिक आग्रह कैसे कर सकता था? अब तो स० को ही हिम्मत करनी होगी। उसे साहसपूर्वक पा० का दोष सिद्ध करना चाहिए। और फिर, वह स्वय पा० को सुधारनेमे असमर्थ है यह बताकर उसे मेरे पास आनेका प्रयत्न करना चाहिए। पा० गलत रास्तेपर पड सकती है किन्तु बाकी सब लोग तो बुरे नही हो सकते। पा० को छोड देना तेरे लिए उचित नही है। तेरे प्रति उसका प्रेम कम नही हुआ है। और यदि कम हो गया हो तो सगाईकी बात सबको मालूम हो जानेके बाद क्या तू इस सम्बन्धको तोड नही सकता? किन्तु यह बात तो वह सपने में भी नही सोचती। तुझे यह मानना चाहिए कि तू इस कुटुम्बका एक अग बन गया है और इस मामलेमे और अधिक जाँच-पडतालकी गुजाइश है। चाहे जो हो, किन्तु मै चाहता हूँ कि यह मामला तेरा समय न ले और इससे तुझे परेशानी न हो। पा० चाहे जैसी क्यो न हो, किन्तु स० तो बिगडनेवाली नही है। इतना ही काफी होगा कि वह अपने कर्तव्यका पालन करनेमे जुटी रहे। तू उसे लिख दे कि जितनी स्वच्छन्दतासे वह तुझे लिखती है उतनी ही स्वच्छन्दतासे मुझे लिखे। यदि उसे यह भय हो कि उसका पत्र कही कोई पढ न ले तो मै उन्हे पढते ही फाड दिया करूँगा, जैसाकि मै रा० कु० के पत्रोके बारेमे करता हूँ। उसके पत्र मुझे बिना खुले मिलते है और इसी प्रकार वे पत्र भी जिनपर 'निजी', 'व्यक्तिगत' या ऐसा ही कुछ लिखा रहता है। मै यही चाहता हूँ कि स० की चिन्ता तुझे नही बल्कि मुझे करनी चाहिए। तेरी सगाईकी बात प्रगट हो गई इसे तू बुरा मानता है, किन्तु यह उचित नही।

आशा है, तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जवाहरलाल कल आ रहे है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५४) से, सौजन्य : कान्तिलाल गाधी।

१५९. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२१ नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

मुझे पूरी उम्मीद है कि बम्बईमे तुम्हें मेरा पत्र[1] मिल गया होगा। मैं २ बजेसे पहले मौन नहीं ले सका। आशा है, तबतक तुम्हे थोड़ा चैन भी मिलेगा। बम्बईमे मेहनत भी तो खूब पडी होगी। आशा है, इन्दु स्वस्थ होगी।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३८; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

१६०. पत्र : अमृत कौरको

२१ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

कुछ ही मिनटमे जवाहरलाल यहाँ आनेवाले है। इस बीच ये चन्द पक्तियाँ लिख डालता हूँ। तुम्हारे पत्रोका स्वर अब भी उदासी-भरा होता है। तुम्हारे पत्र बडे हो या छोटे, उन्हे पाकर हमेशा खुशी होती है और कामका ज्यादा बोझ होनेके बावजूद मैं उन्हे पढ़ ही लेता हूँ।

कमाल पर लिखे तुम्हारे लेखके[2] कुछ अशोंमे मुझे संशोधन करना पड़ा। संशोधन तो देखोगी ही और आशा करता हूँ, तुम उनका बुरा नही मानोगी।

मीरा बुधवारको अपनी आँखोका इलाज करवाने बम्बई जायेगी और वहाँसे सीमाप्रान्त। मैं समझता हूँ, उसका पहले वही जाना बेहतर रहेगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५२) से, सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ६४६१ से भी।

१. देखिए "पत्र : जवाहरलाल नेहरूको", पृ० १५०।

२. यह २६-११-१९३८के हरिजन में "नोट्स" ("टिप्पणियाँ") शीर्षकके अन्तर्गत "द लेट कमाल अतातुर्क" ("स्वर्गीय कमाल अतातुर्क") उप-शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

१६१. पत्र : गिरधारीलालको

सेगाँव, वर्धा
२१ नवम्बर, १९३८

प्रिय लाला गिरधारीलाल,

अविश्वासका तो प्रश्न ही नहीं है।[1] हम सबोंका विचार है कि चूंकि आप अमृतसरसे लगातार बाहर रहते हैं इसलिए आप अपने पदके साथ न्याय नहीं कर सकते। कामका हर्ज होता है। लेकिन इससे पहले कि आपका त्यागपत्र बोर्डके सामने रखा जाये, आप आकर कैफियत दे सकते हैं। लेकिन वैसी हालतमें आपको आनेमें देर नहीं करनी चाहिए। जनवरीमें मैं सेगाँवमें नहीं होऊँगा। आप १५ दिसम्बरसे पहले आ सकें तो ज्यादा अच्छा होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य. प्यारेलाल।

१६२. प्रस्तावना : 'ब्रदरहुड ऑफ रिलिजन्स' की

सोफिया वाडियाके इन निबन्धोंपर सरसरी नजर डालनेसे ही पता चल जाता है कि जीवनके आधारभूत तत्त्वोंकी दृष्टिसे विश्वके सभी प्रमुख धर्मोंके बीच कितना साम्य है। हमारे सारे आपसी झगड़े तो निस्सार बातोंको लेकर ही हैं। यदि इस पुस्तकके विभिन्न धर्मावलम्बी पाठक दूसरोंके धर्मोंका अध्ययन उसी श्रद्धासे करें जिस श्रद्धाका परिचय इन निबन्धोंमें सोफिया वाडियाने दिया है तो माना जायेगा कि उनका परिश्रम कृतार्थ हुआ। विश्वके महान धर्मोंको समझने लायक उनका सामान्य ज्ञान प्राप्त करना और उनके प्रति मनमें आदर-भाव जगाना ईश्वर-ज्ञानकी आधार-शिला है।

मो० क० गांधी

सेगाँव, वर्धा, २३ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
ब्रदरहुड ऑफ रिलिजन्स

१. देखिए खण्ड ६७, "पत्र : गिरधारीलालको", पृ० ४४८।

१६३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव
२४ नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पुर्जा मिला। मैं जानता था कि एक बार जब तुम काम शुरू कर दोगे तो अपने समयपर तुम्हारा बस नही रह जायेगा। इसलिए मुझे जितना मिलेगा, उतनेमे ही मैं सन्तोष मानूँगा।

साथमे गुरुदेवका एक पत्र भेज रहा हूँ, जो उन्होंने एक सन्देशवाहककी मार्फत भिजवाया है। मैंने जवाबमे लिखा है कि मेरी अपनी राय तो यह है कि अगर आपको बंगालको भ्रष्टाचारसे मुक्त करना है तो आपको अध्यक्षकी जिम्मेदारीसे छुटकारा पा लेना चाहिए। मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि गुरुदेव या तो तुम्हे पत्र लिखेंगे या खुद तुमसे बातचीत करेंगे। तुम अपनी राय देना।

आशा है, यात्राका इन्दुपर कोई प्रतिकूल प्रभाव नही पड़ा होगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३८; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० २९८ से भी।

१६४. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
२५ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

दिनमे तुम्हे लिखनेकी सोची थी, लेकिन लिख नही सका। तुम्हें अपनी निद्रापर पूरा नियन्त्रण पाना है। तुम्हे रातमे अपने दिमागको सभी चिन्ताओसे मुक्त कर लेनेकी कला सीखनी है। शम्मीके बारेमे कही तुम्हारी बाते मैं समझता हूँ। प्रभुसे यही प्रार्थना है कि सबकुछ जैसा चाहिए वैसा ही हो।

मैंने तुम्हे बताया या नही कि जनवरी महीना बारडोलीमे बितानेका कार्यक्रम है? तुम्हे तो बारडोली आना ही है। पूरा दिसम्बर यही बिताना है।

जवाहरलालसे सभी तरहके मसलोपर अच्छी बातचीत हुई। लेकिन यहाँ उनका वर्णन नही कर सकता। मेरा अधिकाश समय मुलाकातियोसे मिलनेमें ही बीतता है।

महादेव कोई खास ठीक नही है। फिलहाल तो यही रहेगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९२) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०४८ से भी।

१६५. टिप्पणी : डॉ० एन० बी० खरेके नाम पत्रपर[1]

२५ नवम्बर, १९३८

इसकी पीठपर जो पत्र है उसके लेखकने स्पष्ट ही भूलसे इसे मेरे नाम भेज दिया और आपको मेरे लिए भेजा गया पत्र मिला होगा। बहरहाल इस गलतीके कारण ही मुझे पता चल सका कि आप बीमार थे। आशा है, यह पत्र मिलने तक आप पूरी तरह स्वस्थ हो गये होगे।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १-१२-१९३८

१६६. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

२५ नवम्बर, १९३८

चि० काका,

प्रेमाकी पुस्तककी[2] ११०० प्रतियोको वापस लेकर उसका नया सस्करण निकालनेकी मुझे कोई आवश्यकता नजर नही आती। जब नया सस्करण निकालनेका समय आयेगा तब हम उसमे से कुछ अश कम कर देनेके बारेमे सोच लेगे। प्रेमाका तर्क मुझे उचित जान पडता है। मै समझता हूँ कि इन ११०० प्रतियोका क्या असर होता है, हम यह देखे।

चन्दन[3] अब जब चाहे तब दिल्ली जा सकती है। वह जितनी जल्दी जाये उतना ही अच्छा है। बालका पत्र रसपूर्ण है। बाल न्यासीके रूपमे भले ही कब्जा

१. कानपुरसे एक छात्रने डॉ० एन० बी० खरेको एक पत्र लिखा था, लेकिन गलतीसे उसे गांधीजी के पास भेज दिया था।

२. वात्सल्याची प्रसाददीक्षा; देखिए "पत्र: प्रेमाबहन कंटकको", पृ० १४५।

३. चन्दन पारेख, जो बादमें काकासाहबके पुत्र सतीशकी पत्नी बनी।

किये रहे। न्यासीके रूपमे उसे कुछ विशेष अधिकार भी दिये जा सकते है। यह वाछनीय है कि वह उत्तराधिकारीके रूपमे कुछ न रखे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इसके साथका[1] पत्र बालको भेज देना बशर्ते कि वह तुम्हे उचित जान पड़े।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९७७) से।

१६७. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२६ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

जब तक मै तुमसे यह नही सुनता कि तुम्हे बिना किसी कठिनाईके अच्छी नीद आती है तब तक सन्तुष्ट होनेवाला नही हूँ।

तुम्हारे कहे मुताबिक इसे जालधरके पतेपर भेज रहा हूँ।

बार्नाबासको लिखा तुम्हारा पत्र अच्छा है, लेकिन जल्दीमें लिखा हुआ है। वे चाहे तो हजारोकी तादादमे काग्रेसमे शामिल हो सकते है, लेकिन जिन अनेक प्रश्नोका सम्बन्ध विशेष रूपसे उन्हीसे है उनपर विचार करने और उनका हल सोचनेके लिए वे अपना एक अलग सगठन ही क्यो नही बना ले। सामाजिक और धार्मिक उत्थानके लिए तो उन्हे एक संगठनकी जरूरत है ही। अगर वे ऐसा सगठन नही बनाते तो बहुत सम्भव है कि वे काग्रेससे ऊब जाये, क्योकि काग्रेस उनके चतुर्दिक उत्थानमें कोई विशेष योग नही दे पायेगी। इसलिए मै इस विषयपर 'हरिजन' मे नही लिख रहा हूँ। मुझसे मिलनेपर इसपर चर्चा करना।

सप्रेम,

ज़ालिम

[पुनश्च :]

काश, मुझे मालूम होता कि वह चोगा तुम्हारे लिए रखना है! खैर, उसे इन्दु पहन रही है, यह तो तुम्हे बुरा नही ही लगेगा।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९३) से; सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ७०४९ से भी।

१. उपलब्ध नही है।

१६८. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव
२६ नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

आशा है, तुम्हे मेरा कलवाला पत्र मिल गया होगा। यह तुम्हे केवल यह बतानेको लिख रहा हूँ कि अब जब तुम चली गई हो, तुम्हारी याद सबको आती रहती है। तुम्हारा कमरा तो बिलकुल मर ही गया है। महादेव कमसे-कम फिलहाल तो कही नही जा रहा है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

रक्तचाप १६०/९८

श्री मीराबहन
मार्फत सेठ मथुरादास त्रिकमजी
७४, वालकेश्वर रोड
बम्बई

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१५) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००१० से भी।

१६९. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२६ नवम्बर, १९३८

चि० कान्ति,

मैं अपने ढगसे स० को बुलानेका प्रयास कर रहा हूँ।

जब तेरा डॉक्टरी पढनेका समय आयेगा तब तेरे अधिक खर्चके बारेमे मैं कुछ कर लूंगा।

मै धर्मदेवजी का पत्र खोज रहा हूँ। यदि मिल गया तो मैं उत्तर दे दूंगा अन्यथा उसकी नकल मँगवा लूंगा।

अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। स्वास्थ्यको बनाये रखनेकी कला सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

महादेव यहाँ पहुँच गये हैं। काम हाथमें लेनेमे कुछ समय लगेगा। फिलहाल वे सेगाँवमें ही हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७३५५) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी।

१७०. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

२६ नवम्बर, १९३८

चि० आनन्द,

मैंने पिताजीको तुमारा खत भेजा है और अच्छा खत लिखा है। वह पिघलेंगे। विद्या ठीक होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य . राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी।

१७१. असहयोगी

कई उन कांग्रेसियोंके पत्र मेरे पास फाइलमें पड़े है जिन्होंने असहयोगके जमानेमें असहयोग किया था। उनमें से कुछ ऐसे भी थे जिन्होने अपनी सरकारी नौकरियोंको त्याग दिया था। उनमें से कुछ व्यक्ति अब नौकरियोंपर फिरसे बहाल किये जानेके लिए आन्दोलन कर रहे हैं। अपने समर्थनमे वे हवाला देते है कि मैंने असहयोगके लिए सरकारी नौकरों-सहित सारी जनताका आह्वान किया था। जहाँ तक मैं जानता हूँ, जिन सत्याग्रहियोंपर जुर्माने हुए थे, जिन रिश्तेदारोंने परिवारका पालनकर्ता खोया, जिन वकीलोंने वकालत त्यागी और दरिद्र बन गये, जिन छात्रोंने अपनी पढाई त्यागी और उसके फलस्वरूप अपना भविष्य बर्बाद किया, ऐसे सब पीड़ितोंने अपनी पुनर्स्थापनाके लिए कोई आन्दोलन नही किया है। उनके विचारमें स्वेच्छापूर्वक भोगा हुआ कष्ट अपना पुरस्कार स्वयं है और उससे अधिक क्षतिपूर्तिकी कोई आवश्यकता नहीं।

यदि ये सब लोग काग्रेसी मन्त्रियोसे क्षतिपूर्तिकी माँग करे तो मन्त्रियोंकी तो वास्तवमे दयनीय स्थिति हो जायेगी और इन दावोका हिसाब-किताब करनेके अलावा वे कोई काम ही नही कर सकेंगे। और इन दावोकी अदायगीके लिए उन्हें धनकी

व्यवस्था भी करनी होगी, और यह रकम अवश्य ही कई करोड तक जा पहुँचेगी। इसके अतिरिक्त बर्खास्त किये गये सरकारी नौकरोके लिए, चाहे उन्होने बाध्य होकर या स्वेच्छापूर्वक नौकरी छोडी हो, यह सिद्ध करना कठिन होगा कि दूसरे पीडित लोगोकी स्थिति उनकी अपेक्षा कम कष्टकर है।

मेरे मतमे ये भूतपूर्व सरकारी नौकर वर्गके रूपमे सबसे कम भुक्तभोगी है। और यदि वे इतने सालो तक बेकार रहे है तो वे अब कुशल सरकारी नौकर नही बन सकते। काग्रेसियोके लिए सरकारी नौकरी आर्थिक स्थिति सुधारनेका साधन नही है; वह तो सेवा करनेका ही साधन होना चाहिए। अतएव केवल वे ही कांग्रेसी सरकारी नौकरियोमे भर्ती हो जिन्हे बाहर अपेक्षाकृत अधिक पारिश्रमिक मिल सकता हो। जब उनकी सेवाओकी आवश्यकता हो तभी उन्हे नौकरी दी जाये। उनके प्रति काग्रेस सरकारके पक्षपात जैसी बात कभी न हो।

हिंसात्मक या अहिंसात्मक, किसी भी प्रकारके युद्धमें यदि पहलेसे ही सैनिकोकी हर प्रकारसे सुरक्षा निश्चित कर ली गई हो तो युद्धका उत्तेजनापूर्ण आनन्द और उसकी भव्यता दोनो ही नही रहते। सच्चे सत्याग्रहीको भविष्यमें कुछ भी क्षति-पूर्तिकी आशा रखे बिना सब-कुछ गँवानेको तैयार रहना है। ज्यादासे-ज्यादा त्याग करनेमें ही उसकी खूबी है। सचमुच बात तो यह है कि यदि लोग जीवनमें अपना भविष्य सँवारनेके इरादेसे कांग्रेसमें आयेंगे तो समूचा कांग्रेसतन्त्र ही छिन्नभिन्न हो जायेगा। और यदि काग्रेसी मन्त्रियोसे लोगोकी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाएँ पूरी करनेकी अपेक्षा की जाये तो वे खुद बदनाम हो जायेंगे और अन्ततः काग्रेसकी प्रतिष्ठाको भी हानि पहुँचायेंगे।

मै पाठकोसे आशा करता हूँ कि वे इस मामलेके और उन जमीनोकी वापसीके मामलेके अन्तरको स्पष्ट समझ जायेंगे जिन्हे पिछली सरकारने प्रतिशोधकी भावनासे कौडीके मोल बेच दिया था। वहाँ जमीने वापस करना सहज रूपसे सम्भव था और एक कर्तव्य था। वह तो विजेता द्वारा देशके एक छोटे-से विजित टुकडेके वापस किये जानेके समान था।

यदि फिरसे एक और सविनय अवज्ञा अभियानकी आवश्यकता उठ खड़ी हो तो सरकार लोगोकी भूमिको बेचनेसे पहले पचास बार सोच-विचार करेगी और देशभक्ति-विहीन लोग देशभक्तोकी मुसीबतका फायदा उठानेकी हिम्मत भी नही करेंगे।

सेगाँव, २७ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१२-१९३८

१७२. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
२७ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

यह तो तुम्हे सिर्फ यह बतानेके लिए है कि तुम्हारा पत्र मिला और यहाँ सब कुशल-मंगल है। महादेवकी तबीयतमें सुधार होता दीखता है। काश, तुम अपने बारेमें भी यही कह पाती!

लो, यह औधका दल आ रहा है। जयरामदास भी आ पहुँचे है। वह बहुत बेहतर दिखते है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९४) से; सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ७०५० से भी।

१७३. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव
२७[1] नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे सब निर्देशोंके बारेमे देख लूँगा। आशा करता हूँ कि बिलकुल सही चश्मा लग जायेगा और अगले कुछ सालो तक तुम्हे कोई परेशानी नही होगी।

गोविन्द[2] भटक जायेगा। काकाने उसे एक काम दिया था, किन्तु उसने अपनी शक्ल भी नही दिखाई है। यहाँ एक मिशनने अपना काम शुरू किया है और गोविन्दने उसको अपनी सेवाएँ अर्पित की है। सुनता हूँ कि अब वह अपने भावी मालिकोंको सन्तुष्ट करनेके लिए नागपुर गया है। वह अपने देशवासियोंका और सेगाँवका शत्रु सिद्ध हो सकता है। मै नही चाहता कि तुम उसे लेकर चिन्ता करो। मै उसे

१. साधन-सूत्रमें लगता है कि '२८' को '२७' बनाया गया है।
२. एक आश्रमवासी जो मीराबहनके साथ काम करता था।

समझाकर उधरसे खीचनेकी कोशिश करूँगा, किन्तु गरीबोके लिए पैसेका मोह बहुत बड़ा प्रलोभन है। और यहाँ सब-कुछ ठीक-ठाक चल रहा है। महादेव ठीक है। वेरियर और उसकी बहन आज यहाँ आये है। दोपहरका समय वे यही बितायेंगे।

आजकल मै शाम ७ बजेसे लेकर दूसरे दिन दोपहर २ बजे तक मौन रखता हूँ। अतः बातचीतका समय सिर्फ पाँच घंटे रहता है, किन्तु इन घटोमें बातचीत अनवरत चलती रहती है। किन्तु यदि मुझे पूरा लाभ उठाना है तो उसे भी छोड़ना पड़ेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१६) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००११ से भी।

१७४. देशी राज्य और प्रजा

कई देशी राज्योंमें लगभग एक ही समय होनेवाली जनजागृति राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्रामकी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है। यह सोचना बिलकुल गलत होगा कि ऐसी जागृति एक ही व्यक्ति या कुछ व्यक्तियोके दल या किसी सस्थाके भडकाने पर हो सकती है। यह तो सम्भव है कि काग्रेसके हरिपुरा-प्रस्तावने देशी राज्योकी जनताका उत्साह जगाया और उन्हे पहली बार यह भान हुआ कि उनका उद्धार उनके अपने उद्यमपर ही अवलम्बित है। किन्तु इस जागृतिको लानेमें सबसे बड़ा हाथ समयकी माँगका है। आशा की जाती है कि राजा लोग और उनके सलाहकार इसे पहचान लेगे और जनताकी उचित आकांक्षाओको पूरा करेगे। दो ही रास्ते है। या तो रियासतोके अस्तित्वका ही अन्त हो जाये, और या फिर राजा लोग जनताको ही शासन-व्यवस्थाकी जिम्मेदारी सौप दें और स्वयं जनताकी ओरसे न्यासी बनकर शासन चलायें और इसके लिए मुनासिब मेहनताना कमायें। इन दो स्थितियोके बीच कोई मध्यम मार्ग नही है।

अत मै आशा करता हूँ कि इस अफवाहमें कोई सचाई नही है कि हाल ही में अर्ल विंटरटनने राजाओकी अपनी जनताको उत्तरदायी सरकार सौपनेकी क्षमताके सम्बन्धमें जिस नीतिका निरूपण किया था उसमें ब्रिटिश सरकार, कुछ राजाओं या उनके दीवानोके कहनेपर, शायद कुछ परिवर्तनकी घोषणा करनेवाली है। यदि उनमें से कुछ लोगोने ब्रिटिश सरकारसे नीति पलटनेको कहा है तो निस्सन्देह उन्होंने स्वयको हानि पहुँचाई है। और यदि ब्रिटिश सरकार उनकी इस गलत इच्छाको स्वीकार कर लेगी तो वह शीघ्र ही एक ऐसी घोर सकटकी स्थिति पैदा कर देगी जिसकी भीषणताका पहलेसे अन्दाज लगाना कठिन है। मुझे इस बातपर विश्वास करनेसे इन्कार है कि ब्रिटिश सरकार ऐसी भयकर भूल कर सकती है। अर्ल विंटरटनकी

घोषणाने तो पुरानी पद्धतिका केवल अनुमोदन ही किया था। देशी राज्यो द्वारा अपनी जनताको अधिक अधिकार दिये जानेपर, चाहे वे अधिकार कितने ही व्यापक क्यो न हो, ब्रिटिश सरकारने आज तक कभी हस्तक्षेप नही किया।

मै एक कदम और आगे बढकर कहूँगा कि सर्वोपरि सत्ता होनेके नाते ब्रिटिश सरकार राजाओकी बाहरी या अन्दरूनी क्षतिसे रक्षा करनेको बाध्य तो अवश्य है, किन्तु वह उतनी ही या उससे भी स्पष्टतर रूपसे यह देखनेके लिए बाध्य है कि राजा लोग प्रजापर न्यायोचित शासन कर रहे है। इसी कारण जब भी वह किसी राज्यको पुलिस या सेनाकी मदद पहुँचाती है तब यह निश्चित कर लेना उसका परम कर्तव्य है कि वास्तवमे ही वहाँ ऐसी आपत्कालीन स्थिति है जिससे सहायताकी माँग उचित ठहरती है और यह देखना भी उसका कर्तव्य है कि सेना या पुलिसका उपयोग उचित मर्यादाके साथ ही होगा। ढेंकनालसे मेरे पास कई विवरण आये है जिनमें कहा गया है कि सर्वोपरि सरकार द्वारा भेजी गई पुलिसकी छत्रच्छायामे रहकर राज्यके लठैतोने अमानवीय क्रूरताका बर्ताव किया है। कुछ अकथनीय क्रूरताओंके विषयमे मैंने पुष्टिके लिए प्रमाण माँगे थे और उन विवरणोंका विश्वास करने योग्य काफी प्रमाण मेरे पास आ गये है।

वास्तवमे तो सवाल यह उठता है कि क्या प्रान्तोके उत्तरदायी मन्त्रियोंका अपने प्रान्तके अन्तर्गत आनेवाले देशी राज्योकी प्रजाके प्रति कोई नैतिक कर्तव्य नही है? संविधानके अनुसार मन्त्रियोका उनपर कोई अधिकार नही हैं। गवर्नर वाइसराय-का एजेंट है जोकि स्वय परम सत्ताका प्रतिनिधित्व करता है। किन्तु देशी राज्योमे क्या हो रहा है उसके प्रति अवश्य ही स्वायत्तशासी प्रान्तोके मन्त्रियोका कुछ नैतिक उत्तरदायित्व तो हैं ही। जब तक राज्य और वहाँकी प्रजा, दोनो सन्तुष्ट हैं तब तक मन्त्रियोको कोई चिन्ता नही होनी चाहिए। किन्तु मान लीजिए कि किसी देशी राज्यमें कोई भयंकर महामारी फैली हो और लापरवाही करने पर अमुक प्रान्तके बीच स्थित उस देशी राज्यकी महामारी प्रान्तमे भी आसानीसे फैल जानेकी सम्भावना हो, क्या तब भी उन्हे चिन्ता नही करनी चाहिए? और ढेकनालमे जो नैतिक महामारी फैली दिखती है, क्या उसके प्रति भी उन्हे कोई चिन्ता नही होनी चाहिए?

मुझे पता चला है कि अत्याचार पीडित लोग उड़ीसाके ब्रिटिश क्षेत्रमें आश्रय ले रहे है। क्या मन्त्रिगण उन्हे आश्रय देनेसे इन्कार कर सकते है? और वे लोग कितनोका जिम्मा उठा सकते है? इन राज्योमे जो-कुछ भी होता है उसका समूचे प्रान्तपर अच्छा या बुरा, कुछ-न-कुछ असर जरूर होता है। अत मेरा विश्वास है कि मन्त्रियोके कन्धोंपर भारी जिम्मेदारी होनेके कारण उनका नैतिक कर्तव्य हो जाता है कि प्रान्तकी आन्तरिक शान्ति और मर्यादाकी खातिर वे एक स्पष्ट सीमामें रहते हुए अपनी आवाज उठाये। जिस समय देशी राज्योकी, वे राज्य जो परम सत्ताकी अपनी मनमानी सृष्टि है, जनताको कुचलकर धूलमे मिलाया जा रहा हो, जैसीकि ढेकनालकी जनताकी दशा बताई जाती है, उस समय मन्त्रिगण उदासीन भावसे तमाशा तो नही देख सकते।

अखबारोमे पढते हैं कि ढेंकनालकी प्रजाको कुछ रियायते दी गई हैं। इस रिपोर्टकी सचाईके विषयमे मैं नही जानता, और यह भी नही जानता कि ढेंकनालकी प्रजा जिस उद्देश्यके लिए लड़ रही है और कष्ट भोग रही है, इन रियायतोसे उस उद्देश्यकी पूर्ति होती है या नही। खैर, जिस मुद्देको मैंने उठाया है उसके सम्बन्धमे यह बात अप्रासगिक है। मेरा विचार है कि प्रान्तोके मन्त्रियोका नैतिक कर्तव्य है कि वे अपने प्रान्तकी सीमामे स्थित देशी राज्योमे होनेवाले घोर कुशासनकी ओर ध्यान दे और परम सत्ताको परामर्श दें कि उनकी सम्मतिमे क्या किया जाना चाहिए। और परम सत्ता यदि प्रान्तीय मन्त्रियोके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहती है तो उसे उनकी सलाहको सहानुभूतिपूर्वक सुनना ही होगा।

एक और बात है जिसपर देशी राजाओ और उनके सलाहकारोको फौरन ध्यान देना पडेगा। वे काग्रेसके नामसे ही कतराते है। वे लोग काग्रेसियोको बाहरी आदमी, विदेशी और न जाने क्या-क्या समझते हैं। कानूनके अनुसार वे यह सब हो भी सकते हैं। किन्तु जब मनुष्यके बनाये कानून प्राकृतिक नियमके विपरीत हो, और जब प्राकृतिक नियमका बोलबाला चल रहा हो, उस समय मनुष्य-कृत कानून बिलकुल निष्प्राण और बेकार बन जाते हैं। राज्योकी जनता अपने हितके सभी मामलोमे कांग्रेसका मुँह देखती हैं। उसमे से बहुत-से लोग कांग्रेसके सदस्य भी है। श्री जमनालालजी जैसे कुछ लोग काग्रेस सस्थामे ऊँचे पदाधिकारी भी हैं। काग्रेसकी नजरोमें उसके देशी राज्योमे रहनेवाले सदस्यो और ब्रिटिश भारत कहे जानेवाले क्षेत्रके सदस्योमे कोई भेद नही। निश्चय ही काग्रेस या कांग्रेसजनोकी उपेक्षा करना देशी राज्योके हितोके लिए घातक है, खास तौरपर जब कांग्रेस या काग्रेसजन मैत्रीपूर्ण सहायता देनेको इच्छुक हो। उन्हे इस तथ्यको पहचान लेना चाहिए कि अनेक बार राज्योकी प्रजाको काग्रेसका मार्गदर्शन मिलता है। वे जानते हैं कि अब तक काग्रेसने अगर हस्तक्षेप न करनेकी नीतिका पालन किया है तो उसका जिम्मेदार मैं हूँ। किन्तु काग्रेसके बढ़ते हुए प्रभावको देखते हुए राज्योमें होनेवाले अन्यायके सम्मुख उसी नीतिका समर्थन करते जाना मेरे लिए अब असम्भव है। यदि काग्रेसको लगता है कि उसमे प्रभावकारी ढगसे हस्तक्षेप करनेकी शक्ति है तो वह पुकार उठनेपर वैसा अवश्य ही करेगी। और यदि राजा लोग यह विश्वास रखे कि उनकी जनताके कल्याणमे उनका अपना कल्याण भी है तो वे कृतज्ञभावसे काग्रेसकी सहायता माँगेगे और स्वीकारेगे। काग्रेस एक ऐसी सस्था है जिसके निकट भविष्यमें ही परम सत्ताका स्थान ले लेनेकी सम्भावना है, और मैं आशा करता हूँ कि यह सब सौहार्दपूर्ण समझौतेसे ही होगा। निश्चय ही राजाओका ऐसी सस्थाके साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाना उनके अपने हितमें ही है। क्या वे भविष्यके इस महत्वपूर्ण इगितको नही समझेगे ?

सेगाँव, २८ नवम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-१२-१९३८

१७५. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२८ नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

तुम्हारे रोक हटाते ही मैं एस०[1] को पत्र लिखूँगा। अगर जरा भी मुमकिन हो तो दुविधा खत्म होनी ही चाहिए। आज 'हरिजन' का दिन है। तुम्हारी अनुपस्थिति सबसे अधिक सोमवारको खलती है। हाँ, यदि तुम यहाँ रहो और स्वस्थ रह सको तो अवश्य ही बहुत-कुछ कर सकती हो।

मैं नारणदासके बारेमें समझ गया। मैं तुम्हारा मधुर पत्र उसे भेज रहा हूँ।

महादेव अच्छा है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९५) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०५१ से भी।

१७६. पत्र : मोतीलाल रायको

सेगाँव, वर्धा
२८ नवम्बर, १९३८

प्रिय मोतीबाबू,

मुझे आपसे सहानुभूति है किन्तु समभाव और न्यायकी भावना मुझे अखिल भारतीय चरखा संघका पक्ष लेनेको प्रेरित करते हैं। मैंने आपकी ईमानदारी और व्यापार-कुशलतापर भरोसा किया था। यदि आप कुछ छूट मनवाना चाहते हैं तो आप कृपया अदायगी शुरू कर दें और जितना अदा करनेका आपका विचार है उसकी अदायगीके उपरान्त उस रियायतको पानेका भरोसा करें। क्या यह सही और न्याययुक्त नहीं है? किन्तु मैं आपसे अब भी यही अनुरोध करूँगा कि आप अपने सहकर्मियोंसे कहें कि अपनी संस्थासे सम्बद्ध और केवल दरिद्रनारायणके हितार्थ चलनेवाली दूसरी संस्थाका ऋण चुकानेके लिए वे दुगना प्रयत्न करें।

१. शमशेर सिंह।

सप्रेम,

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०५२) से।

१७७. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ नवम्बर, १९३८

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिल गया था। उसके आधारपर मैंने दो पंक्तियाँ शिकायतके तौरपर नही बल्कि सूचना देनेके लिए लिखी थी। उसका उत्तर मै इसके साथ भेज रहा हूँ। पत्र पढ़कर फाड़ देना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

यदि आन्दोलनसे सम्बन्धित तुम्हे कोई ऐसी बात नजर आये जिसकी आलोचना की जा सकती हो तो मुझे उसकी सूचना देना अपना कर्तव्य समझना।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१७८. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२८ नवम्बर, १९३८

चि० मणि,

मुझे तेरा पत्र मिल गया है। मुझे यह आशा नही थी कि इतना काम होनेके बावजूद तू पत्र लिख सकेगी। मै दूर बैठा तेरा जौहर देख रहा हूँ। तू पुण्यशालिनी है। तेरे साहसके बारेमे तो मेरे मनमे कभी कोई सन्देह नही था। तू यथासम्भव जेल मत जाना। यह काम राजकोटवालोका है।

आशा है, तू अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखती होगी।

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
तारघरके पास, राजकोट

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृ० १२२

१७९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
२८ नवम्बर, १९३८

भाई वल्लभभाई,

इसके साथ भावनगरवाला पत्र भेज रहा हूँ। मैंने उन्हें तार दिया है कि और जत्थे भेजनेसे पहले पत्रकी प्रतीक्षा करें। इस प्रकार विद्यार्थियोंका भाग लेना मुझे तो सर्वथा अनुचित लगता है।

इसके अतिरिक्त मुझे यह भी ठीक नही लगता कि राजकोटसे बाहरके लोग विभिन्न स्थानोसे जत्थे भेजते है। यह हमारी नीतिके सर्वथा विरुद्ध है। इन जत्थोंको स्वराज्य नही चाहिए, और न वह उन्हे मिलेगा। इन जत्थोके जानेसे कड़वाहट बढ़ेगी और यदि राजकोटके लोगोमे कोई कमजोरी होगी तो वह छिप जायेगी। कमजोरीको छिपाकर हम क्या करेगे? राजकोटकी जनतामे जितना जौहर होगा उतनी ही वह चमकेगी। हमे उसके तेजको बढ़ाना चाहिए, किन्तु वह तो भीतरकी प्रगतिसे ही बढ़ सकता है। देखना, यदि तुम इसे उचित मानते हो तो बाहरसे जत्थे भेजना बन्द कर देना और सभी विद्यार्थियोको रोक देना। और तो बहुत-कुछ लिखा जा सकता है किन्तु समय कहाँ है? खैर, कोई बात नही।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २२९

१८०. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
२९ नवम्बर, १९३८

चि० प्रभा,

इसके साथ जयप्रकाशको लिखा पत्र है। आशा है, यह समयपर पहुँच जायेगा। मै यह पत्र सुबह ३-४५ बजे लिख रहा हूँ। जयप्रकाशके स्वास्थ्यका ध्यान रखना। तेरा स्वास्थ्य तो जैसा भी हो, ठीक है। मै देखता हूँ कि तुम दोनो कान्तिसे मिल सके हो। यह अच्छा हुआ। क्या मै तुझे यह बता चुका हूँ न कि हम पहली जनवरीको बारडोली चले जायेगे? वहाँ एक महीना लगेगा। तू वहाँ आ सकती है। जयप्रकाश भी आ सकता है। किन्तु वह ठहरा फकीर, ध्यानी, अपने सपनोमे

डूबा रहनेवाला। वह कुछ समय मेरे पास कैसे विता सकता है? मुझसे तो वह कुछ ले ही नही सकता और कुछ हद तक मेरा जीवन उसे पसन्द भी नही आयेगा। इसलिए क्या किया जा सकता है? मुझे इस बातसे सन्तोष मिलता है कि तू उसकी सेवामे जुटी रहती है। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२४) से।

१८१. पत्र: विजया एन० पटेलको

सेगाँव
२९ नवम्बर, १९३८

चि० विजया,

प्रातःकालकी प्रार्थनाके पहले मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। बा भी ठीक ही है। तू अच्छी हो गई, यह एक बड़ी बात हुई। अब तुझे तत्काल यहाँ आनेकी जरूरत नही है, क्योकि मै २ जनवरीको बारडोली पहुँचनेकी आशा करता हूँ। और वहाँ तो तू पहलेसे ही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०३) से। सी० डब्ल्यू० ४५९५ से भी; सौजन्य विजयाबहन एम० पचोली।

१८२. पत्र: शुएब कुरेशीको

२९ नवम्बर, १९३८

प्रिय शुएब,

जाकिरने बड़े भाईकी मृत्यु[1] का तार भेजा था। उन्हे क्या हुआ था? अभी कुछ ही समय पहले उनकी बेटीकी मृत्युपर मैंने उन्हे पत्र भेजा था। मैंने उनके निकट पहुँचनेकी कोशिश की किन्तु असफल रहा। अपने सबसे अच्छे क्षणोमे उन्होने जिस लक्ष्यके लिए यथाशक्य प्रयत्न किया था, क्या उनकी मृत्युका उसी दिशामे सदुपयोग नही किया जा सकता? यह मौत बड़ी दुःखद घटना है और यदि दोनो जातियोमें एकता लानेके लिए कोई कदम न उठाया गया तो यह दुगने दुःखकी

१. शौकत अलीकी २७ नवम्बर, १९३८को दिल्लीमें मृत्यु हो गई थी।

बात होगी। यह काम कैसे किया जाये, यह कहना मेरे बसकी बात नही। मै इस दिशामे अपने तरीकेसे काम कर रहा हूँ। पर उतना ही पर्याप्त नही है।

सप्रेम,

बापू

मध्यप्रदेश और गांधीजी, पृ० १२७ पर प्रकाशित अंग्रेजीकी प्रतिकृतिसे।

१८३. पत्र : महादेव देसाईको

२९ नवम्बर, १९३८

चि० महादेव,

कलवाली साँस घुटनेकी शिकायतका कारण पानीका ज्यादा गरम होना था। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। यदि धीरे-धीरे गरमी बढाई जाये तो कोई असुविधा नही होती। लगभग शरीरके तापमानसे शुरू करना अच्छा है। पासमे ही गरम पानीकी बाल्टी रखनी चाहिए। इसके बाद ठंडा पानी तो लेना ही है। यदि दोपहरको कटिस्नान लिया जाये तो सबसे अच्छा हो। इसमे समय तो लगेगा किन्तु उसकी तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८५) से।

१८४. पत्र : सुशीला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२९ नवम्बर, १९३८

चि० सुशीला,

साथका पत्र पढ़कर मणिलालको भेज देना। तू जनवरीकी तारीख बदलना मत। तू जब तक चाहे तब तक वहाँ रहना। जब तेरी यहाँ दौडे चले आनेकी इच्छा हो तब तो तुझे आनेका अधिकार है ही। मै तो केवल नानाभाई और विजयलक्ष्मी का विचार करके लिख रहा हूँ। क्योकि सहज ही तेरी इच्छा भी माता-पिताके साथ रहनेकी होगी।

अपनी वर्तमान स्थितिमे मै तो कुछ भी नही दे सकूँगा। बातचीतके लिए एक मिनट भी नही दे सकूँगा। मै तुझे रोज देख सकूँ और हँस सकूँ सिर्फ इतनी बातके लिए मै यह नही चाहूँगा कि तू यहाँ आये। बा तुझसे सेवा नही करायेगी। अब तो वह बीमार नही है। इस सबको सोचते हुए यहाँ आनेकी बात मै तुझपर

ही छोड़ता हूँ। जनवरीकी पहली तारीखको मैं यहाँसे वारडोली चला जाऊँगा। यदि तू वहाँ आना चाहे तो दो-चार दिनके लिए आ सकती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

किशोरलाल और गोमती आकर मिल गये। सीता मुझे क्यों नही लिखती? वह कैसी है? अरुण कैसा है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८८९) से।

१८५. पत्र: अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
३० नवम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

सुवह साढ़े तीन वजे मैं सवसे पहले तुम्हे पत्र लिख रहा हूँ।

मेरे पास तुम्हारा कार्यक्रम है। अतः यह पत्र दिल्ली भेजा जायेगा।

शिमलाकी तुलनामे यहाँ महादेवकी रातें अच्छी वीतती हैं जिससे प्रकट है कि उसकी दशामें सुधार जारी है। शायद शिमलाकी कड़ी सर्दी उसे अनुकूल नही पड़ी। पहले तो नही सोता था, किन्तु आजकल वह खुले आकाश तले सोता है। मौसम काफी सुहावना है। तीन-चार दिनसे मैं वरामदेमें सो रहा हूँ। एस० ने मुझे वाहर आनेकी अनुमति दे रखी है। किन्तु पता नही यह अनुमति कव तक चलेगी।

मीराके जानेके वादसे मैं शाम ७ वजेसे लेकर दूसरे दिन दोपहर २ वजे तक मौन रखता हूँ। अतः वातचीतके केवल पाँच घटे हैं।

यदि शम्मी आखिरकार यूरोप जाना तय कर ले तो अच्छा होगा। इस स्थान-परिवर्तनसे उन्हे लाभ होना सम्भव है और तुम भी निश्चित होकर मेरे पास रह सकती हो। किन्तु महादेव कहेगा कि कुत्तेका क्या होगा? वह वताता रहता है कि परिवारके उस लाड़ले सदस्यकी कितने ध्यानसे देखभाल की जाती है।

अभी तो मैं औंधके सविधानको माँजनेमे जुटा हुआ हूँ। वहाँके राजा साहवका पुत्र वड़ा ही अच्छा लड़का है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५३) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ६४६२ से भी।

१८६. पत्र : देवदास गांधीको

३० नवम्बर, १९३८

चि० देवदास,

भारतनकी वाइसरायसे हुई बातचीतकी नकल भेजकर तूने अच्छा किया। यह नही कहा जा सकता कि आखिरकार इस उल्कापातका क्या परिणाम निकलेगा। फिर भी मैंने रियासतोके बारेमे लिखा है,[1] उसे तू देखना और उसपर विचार करना। अनन्तराय बीचमें पड़े है इसलिए राजकोटका मामला शायद निबट जायेगा। किन्तु उससे क्या हुआ? सभी रियासते इसमें फँस जायेंगी। और होना भी यही चाहिए।

आशा है, लक्ष्मी और बच्चे अच्छे होगे। यह पत्र मै प्रात.कालकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूँ। आजकल मेरा स्वास्थ्य तो बहुत अच्छा है। मै इसका ठीक ध्यान रखता हूँ। बा अच्छी है, महादेव भी अच्छे है। इसलिए आजकल तो सेगाँवकी आबहवा अच्छी ही मानी जायेगी। घंटी बज रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २००७) से।

१८७. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
३० नवम्बर, १९३८

चि० मीरा,

तुमने पैसे खर्च कर दिये, इसकी मुझे परवाह नही है। मै नही चाहता कि शरीर स्वस्थ बनाये रखनेके लिए गरम कपडे या जो-कुछ भी चीजे आवश्यक हों उनके अभावमे तुम बीमार पड़ जाओ। सीमा-प्रान्तकी सर्दीसे तुम्हे कष्ट पहुँचेगा, ऐसी कोई आशका मुझे नही है। तुम वहाँ जो-कुछ भी करोगी उसे मै उत्सुकतासे देखता रहूँगा।

दोपहर दो बजे तक का मेरा मौन जारी है। इस कारण दिनमे मुझे बातचीतके लिए केवल पाँच घटे मिलते है और वह लगभग सारा समय मुलाकातियोसे बातचीत करनेमें लग जाता है।

१. देखिए "देशी राज्य और प्रजा", पृ० १६८-७०।

महादेवने कल तुम्हे लिखा था। उसकी दशामे बराबर सुधार हो रहा है।
सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१७) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१२ से भी।

१८८. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
३० नवम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

चीनी मित्र आये थे और उन्होने पाँच मिनटके बजाय मेरे पैंतीस मिनट लिये। आखिरकार जितनी मुलायमियतसे कह सकता था, उतनी मुलायमियतसे मुझे कहना ही पडा कि आप लोग अपने निर्धारित समयसे सात गुना समय ले चुके है।

वाइसरायके साथ हुई अपनी भेंटवार्ताके सम्बन्धमे अगाथाकी रिपोर्टकी एक प्रति तुम्हारे लिए भेज रहा हूँ। मेरा सन्देश तो मात्र यही था कि वे मुझे अग्रेजोका मित्र समझे, इत्यादि। उसमे राजनीतिसे सम्बन्धित कोई बात नही थी।

आशा करता हूँ कि तुम्हे मेरा पत्र[1] यथासमय मिला होगा जिसके साथ ही सुभाषके विषयमे गुरुदेवसे प्राप्त पत्र भी सलग्न था।

आशा है कि तुम अपनी सामर्थ्यसे ज्यादा काम नही कर रहे हो, और इन्दु अच्छी तरह है।

सरूप[2] पर जो कामका भारी बोझ है उससे उसे छुटकारा मिलना चाहिए। उसे पहले अपना बिगड़ा स्वास्थ्य सुधारना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे: गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३८, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय। ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० ३०३ से भी।

१. देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", पृ० १६१।
२. विजयलक्ष्मी पडित।

१८९. पत्र : शान्तिकुमार न० मोरारजीको

सेगाँव, वर्धा
३० नवम्बर, १९३८

चि० शान्तिकुमार,

महादेवने अभी-अभी तुम्हारा पत्र मेरे हाथमें दिया। यदि यों कहा जाये कि मैं तुम्हारे पिताजीको पहचानता था तो यह अधूरी बात कहना होगा। उनसे मेरा सम्बन्ध घरेलू था। इसलिए यदि मैं उनकी प्रतिमाका अनावरण करूँ तो इसमे आश्चर्यकी क्या बात है? किन्तु यदि मैं ऐसा न करूँ तो क्या उस सम्बन्धमें कोई खामी आ जायेगी? भाई भाईकी प्रतिमाका अनावरण थोड़े ही करता है? इन सब कामोसे मेरा मन ही उचट गया है। इसलिए तनिक भी बुरा न मानते हुए और मेरी बातको गहराईसे समझते हुए मुझे इससे मुक्त रखना। जिस दिन भवनका उद्घाटन हो उसी दिन सरदारके ही हाथो प्रतिमाका भी अनावरण करवा लेना। मुझे क्षमा कर दोगे न?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४७२८) से, सौजन्य: शान्तिकुमार न० मोरारजी।

१९०. एक पत्र[1]

सेगाँव, वर्धा
३० नवम्बर, १९३८

चि० लम्बूस,

लम्बोदरका मतलब है 'लम्बे उदरवाला'। यह गणेशका नाम है। मुझे तुझको 'लम्बूस' नाम देना चाहिए था। तूने बहुत दिनो बाद पत्र लिखा यह तो तेरी मेहरबानी ही मानी जायेगी न?

अमतुस्सलाम, लीलावती और शारदा यही हैं। सभी आनन्दपूर्वक हैं।

लगता है तुम सब बहनें ठीक काम कर रही हो।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७५२) से।

१. यह ज्ञात नहीं हो सका कि पत्र किसको लिखा गया था।

१९१. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

सेगाँव
३० नवम्बर, १९३८

चि० प्रेमी,

तेरी हिंदी अच्छी तो नही है लेकिन मुझे तेरी इंग्रेजीसे ज्यादा प्रिय है। प्रयत्नसे अच्छी लिखेगी। पिताजी यहाँ आ गये है। वे तुझसे ज्यादा अच्छी हिंदी लिखते है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९२५० से; सौजन्य जयरामदास दौलतराम।

१९२. तार : जलियाँवाला बाग स्मारक कोषके स्थानीय मंत्रीको[1]

[१ दिसम्बर, १९३८ के पश्चात्]

तेरह तारीखको तीसरे पहर तीन बजे बैठक रखिए।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे . प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल।

१९३. पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको[2]

[२ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][3]

आज कई सालो बाद मुझे आपकी लिखावट देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपने मुझे 'दण्डवत्' लिख भेजा है इस कारण मेरे लिए कठिन हो गया है कि आपको किस प्रकार सम्बोधित करूँ।

१. स्थानीय मंत्रीने १ दिसम्बरके अपने पत्रमें गांधीजीसे पूछा था कि वर्धामें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकके दौरान तथा वहाँ स्मारक कोष समितिकी बैठक की जाये।

२. मोरवी, पालनपुर और गोंडल रियासतोंके भूतपूर्व दीवान। मूल पत्र गुजरातीमें रहा होगा।

३. यह पत्र दिनांक २ दिसम्बरके अन्तर्गत छपी रिपोर्टमें है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप मेरी आशाओंको पूरा करनेके लिए सतत प्रयत्नशील हैं। मैंने कभी नही सोचा था कि राजकोटकी जनता अकेले ही सगठित मोर्चा लिये हुए है और अनुपम एकताका प्रदर्शन कर रही है। हमारी धारणाएँ भी कैसी थोथी होती है! ईश्वरने चाहा तो सफलता अवश्य मिलेगी। यदि ये प्रतिकूल परिस्थितियाँ अनुकूल बना दी जायें तो ईश्वर आपकी सेवाओको अप्रतिम सफलता प्रदान करेगा।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-१२-१९३८

१९४. चेतावनी

जो लोग राजकोट और हैदराबादके निवासी नहीं है उन्हें सरदार वल्लभभाई पटेल और श्री दामोदरदासने वहाँके सत्याग्रह-आन्दोलनोमें भाग न लेनेकी जो चेतावनी दी है, वह सामयिक है और उसपर पूरी तरहसे अमल होना चाहिए। सत्याग्रहका तो मर्म यह है कि जो पीड़ित हो केवल वे ही उसमें भाग ले। ऐसी परिस्थितियोंकी कल्पना की जा सकती है कि जिसे सहानुभूतिपूर्ण सत्याग्रह कहा जा सकता है, उसका अमल अनुचित न हो। लेकिन जहाँ तक मैं समझता हूँ, राजकोट या हैदराबाद के सत्याग्रहमे अभी बाहरवालोंके शामिल होनेकी कोई जरूरत नही है। हाँ, यह जरूर है कि उससे अधिकारी और चिढ सकते है। लेकिन जिस विचारपर सत्याग्रहकी बुनियाद है वह तो यह है कि अन्याय करनेवालेके अन्दर न्यायभावना जाग्रत की जाये और उसे यह भी महसूस कराया जाये कि जिनके साथ अन्याय होता है उनके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोगके बिना अन्याय करनेवाला उनपर अपना मनचाहा अन्याय नहीं कर सकता। अगर इन दो सूरतोमे से किसीमे भी लोग अपने कष्ट-निवारणके लिए कष्ट-सहनको तैयार न हो, तो सत्याग्रहके रूपमें कोई भी बाहरी मदद उन्हें सच्ची राहत नही दे सकती।

सेगाँव, ३ दिसम्बर, १९३८
[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१९५. तार: पट्टम ताणु पिल्लैको

वर्धागंज
३ दिसम्बर, १९३८

ताणु पिल्लै
राज्य कांग्रेस
त्रिवेन्द्रम

भेंटवार्ताके विषयमें त्रिवैंस्टियन और साथियों द्वारा दिये गये वक्तव्यको गलत मानता हूँ। क्या मैं सही विवरण जारी करूँ?[1]

गांधी

मूल अंग्रेजीसे: पट्टम ताणु पिल्लै पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

१९६. पत्र: दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

३ दिसम्बर, १९३८

चि० काका,

मुझे भी बजटकी बात करनी थी, लेकिन भूल गया। थोड़ी चर्चा करनी पड़ेगी। नकल इस पत्रके साथ है। मंगलवारको आ जाना। दो बजे थोड़ा तो समय निकालूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९७९) से।

१. गांधीजी द्वारा दिये गये विवरणके लिए देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", १०-१२-१९३८। और भेंटवार्ताके लिए देखिए "बातचीत: त्रावणकोर राज्य कांग्रेस शिष्टमण्डलके साथ", पृ० १४६-९।

१९७. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

३ दिसम्बर, १९३८

चि० प्रभुदयाल,

यह विवरण बहुत लम्बा है। उसमे पुरावा तो है हि नही।[1] जो बात तुमने लिखी है वह एक ही सफेपर आरामसे लिखी जा सकती है। विवरणको शृंगारकी अपेक्षा नही रहती है। इसे दुबारा लिखो। मै उसे यू० पी० भेजुगा। जो लिखो उस बारेमे क्या क्या सबूत दे सकते है वह बताओ। जिन लोगोने कहा उनका नाम दे दो। मेरे तरफसे आशा की जाती है व० बाते निकाल दो। सक्षेपमें कहने लिखनेकी कला हासिल करनी चाहीये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५१९) से।

१९८. बातचीत : जॉन आर० मॉटके साथ[2]

[४ दिसम्बर, १९३८ या उसके पूर्व][3]

डॉ० मॉट. . . सोचते थे कि क्या दुनिया, जिसमें मिशनरियोंकी दुनिया भी शामिल है, उनकी पिछली भेंटके बाद आगे नहीं बढ़ी है।[4] वे उसी महीने मद्रासमें हो रहे अन्तर्राष्ट्रीय मिशनरी परिषद् सम्मेलनकी अध्यक्षता करनेवाले थे। उस सम्मेलन की योजनाएँ वे गांधीजी को बताना चाहते थे तथा इस विषयमें गांधीजी की अन्तःप्रेरणा और राय जानना चाहते थे, ताकि सम्मेलनमें उसपर विचार-विमर्श हो सके।

उन्होंने कहा : “. . . यह एक अनोखा सम्मेलन है जिसमें ४०० से अधिक प्रतिनिधि एशिया, आफ्रिका और लैटिन अमेरिकाके नये गिरजोंकी १४ परिषदों और यूरोप, अमेरिका व आस्ट्रेलियाके पुराने गिरजोंकी १४ परिषदोंका प्रतिनिधित्व

१. प्रभुदयाल विद्यार्थीने काग्रेसके विरुद्ध शिकायत की थी।

२. महादेव देसाईके लेख “डॉ० मॉट्स सेकंड विज़िट” (डॉ० मॉटकी दूसरी मुलाकात) से उद्धृत। बातचीतके जॉन मॉट वाले अंश थोड़े संक्षिप्त कर दिये गये है।

३. महादेव देसाईने कोई तारीख नही दी है, परन्तु देखिए “पत्र : अमृत कौरको”, ५-१२-१९३८, जिसमें गाधीजी लिखते हैं, “महादेव कल पाँच घटे मॉटकी मुलाकातपर लिखता रहा।”

४. देखिए खण्ड ६४, पृ० ३९-४८।

करेंगे। हम चाहते हैं कि यह सम्मेलन भारतके लिए बाधा नहीं बल्कि सहायक सिद्ध हो। . . . मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या मेरा यह सोचना ठीक है कि आपने मुझे जो-कुछ बड़ी बातें समझाई थीं, उनके बारेमें हवा थोड़ी बदल गई है? . . . इन बुराइयोंके बारेमें क्या अब समझ पहलेसे साफ नहीं हो गई है? . . .

गांधीजी: मैंने जो चीज देखी है वह तो यह है कि जहाँ तक विचारका सम्बन्ध है, प्रवृत्तिकी दिशा सही है, लेकिन मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि कार्यमें कोई प्रगति नहीं हुई है। मैं पहले यह कहने जा रहा था कि "कोई अधिक प्रगति नहीं हुई है", पर सोच-विचार कर ही मैं यह कह रहा हूँ कि "कोई प्रगति नहीं हुई है।" आप छिटपुट कुछ लोगोंके उदाहरण दे सकते हैं, पर उनका कोई महत्त्व नहीं है। सही विश्वासको उपयोगी बनानेके लिए उसे कार्यमें परिणत करना जरूरी है।

जॉन मॉट: पहले सवाल, यानी साम्प्रदायिक निर्णयको ही लीजिए। क्या वहाँ कोई प्रगति नहीं हुई है?

गांधीजी: कतई कोई प्रगति नहीं हुई है।

जॉ० मॉ०: मैं इधर के० टी० पॉलकी जीवनीकी पाण्डुलिपि पढ़ता रहा हूँ, क्योंकि मुझसे उसका प्राक्कथन लिखनेको कहा गया है। आपके खयालसे क्या उनके समयसे कोई प्रगति नहीं हुई है? रोमन कैथोलिकोंका रुख द्वेषपूर्ण है, पर प्रोटेस्टेंट ईसाइयोंके बारेमें आप क्या कहते हैं?

गां०. यदि प्रोटेस्टेंट ईसाई इस प्रश्नपर एकमत हैं, तो, जहाँ तक उनका सम्बन्ध है, वे समझौतेमें परिवर्तन करवा सकते हैं। परन्तु इस मामलेमें कोई ठोस कार्यवाही नहीं हो रही है।

जॉ० मॉ०: मुझे यह मालूम नहीं था कि उनके लिए कोई अपवाद हो सकता है।

गां०: उनके लिए हो सकता है।

जॉ० मॉ०: अब अगला सवाल लीजिए। लोगोंकी असमर्थताका लाभ उठाना क्या अब रुक नहीं गया है? मैं आपको बताऊँ कि मैकगॅवरन[1]-काण्डको पढ़कर मुझे बहुत दुःख हुआ था, और यह जानकर कि वह गलतफहमी दूर हो गई है मुझे बड़ी राहत मिली।

गां०: इस प्रश्नपर भी मैं यह तो मानता हूँ कि कुछ मित्रोंमें उत्साह है, पर जहाँ तक कार्यका सवाल है कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

जॉ० मॉ०: आपका आशय यह है कि काफी कार्य नहीं हो रहा है?

गां०: नहीं, कतई कोई कार्य नहीं हो रहा है। मैं जो-कुछ कह रहा हूँ उसे सिद्ध करनेके लिए मेरे पास पर्याप्त प्रमाण हैं। मैं सभी पत्रोंको, जो मुझे

१. मैकगॅवरनने गांधीजी की बिशप पिकेट तथा बिशप अजारियाके साथ हुई बातचीतका एक काल्पनिक विवरण लिखकर वर्ल्ड डोमिनियनमें छपवाया था।

मिलते है, प्रकाशित नही करता हूँ। श्री ए० ए० पॉलने, जिन्हे आप जानते होगे, कुछ समय पहले एक सम्मेलन आयोजित किया था। उसमें जो विचार-विमर्श हुआ वह बहुत-कुछ जाहिर करता है। उनके प्रस्तावोमे कोई उत्साह नही था। जहाँ तक मुझे मालूम है, किसी भी सुनिश्चित कार्यवाहीके बारेमे वहाँ सर्वसम्मति नही थी।

जॉ० मॉ० : मुझे तो राष्ट्रीय ईसाई परिषद्‌के एक प्रस्तावसे, जिसमें शुद्ध उद्देश्यों और शुद्ध व्यवहारपर जोर दिया गया है, प्रोत्साहन मिला था।

गां० : प्रस्तावका आप उल्लेख कर सकते है, पर उसके अनुरूप आप कार्य नही दिखा सकेंगे।

जॉ० मॉ० : मै समझता हूँ। कार्यके बिना निश्चयका कोई मूल्य नहीं है। यह सीख मेरे मनमें छात्रावस्थामें तभी बैठ गई थी जब मैंने चरित्र-निर्माणपर फॉस्टरका उत्कृष्ट निबन्ध पढ़ा था। जितनी सहायता मेरी उसने की उतनी किसी और रचनाने नहीं की।

गां० : मै आपको यकीन दिलाता हूँ कि जो-कुछ मै कह रहा हूँ उसका प्रमाण आपको मिल जायेगा। मै तो यह कहना चाहूँगा कि लोगोंकी असमर्थताका अनुचित लाभ उठानेमे जो खतरा है, उसे अभी साफ तौरपर समझा तक नही गया है। वे जिसे सामूहिक धर्म-परिवर्तनका अधिकार कहते है, उसे कभी नही छोड़ेंगे।

जॉ० मॉ० : वे अब गुटों और परिवारोंके धर्म-परिवर्तनकी बात करते हैं। पर गुट शब्दका कुछ मामलोंमें क्या अर्थ है, यह चीज मेरे सामने बिलकुल साफ नहीं है।

गां० : मेरे सामने बिलकुल साफ हैं। यह सामूहिक धर्म-परिवर्तनका ही दूसरा नाम है।

जॉ० मॉ० : यह अजीब बात है। गुटों या परिवारोंका सामूहिक रूपसे धर्म-परिवर्तन कैसे हो सकता है? उदाहरणके लिए, मेरे परिवारमें धर्म-परिवर्तन पहले मेरे पिताने किया, फिर मेरी सबसे बड़ी बहनने, फिर सबसे छोटी बहनने, उसके बाद मैंने। यह एक व्यक्तिगत मामला है — पूर्णतया व्यक्ति और उसके ईश्वरके बीचका मामला है।

गां० : यही बात है। अस्पृश्यताके सवालके बारेमें मै आपको बताऊँ कि सालो तक मैं अपनी बात अपनी पत्नीके मनमें बैठा नही सका था। वह अनिच्छा-पूर्वक ही मेरा अनुकरण करती थी। लम्बे अनुभव और अमलके बाद ही बात कही उसके मनमे बैठी।

जॉ० मॉ० : जो चीजें अत्यन्त पवित्र हैं उनके लिए हमारे तरीके भी अत्यन्त पवित्र होने चाहिए। परन्तु क्षमा कीजिए मै यह बात फिर कहता हूँ कि मुझे आशा है कि हवाका रुख बदल गया है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, विवेकशील ईसाई नेता न केवल इन बातोंपर तीव्रतासे सोच रहे हैं, बल्कि सच्चाईके साथ सही आचरणको प्रोत्साहन देनेमें लगे हैं। धनके समझदारीसे उपयोगके तीसरे प्रश्नपर मुझे उत्साहवर्द्धक लक्षण दिखते है।

गा० पर वह तो मजबूरीसे पैदा हुआ गुण है। भारतीय ईसाई आत्म-निर्भरताकी बात प्रकट रूपसे सोच रहे हैं। वे अपनी जिम्मेदारियोकी बात कर रहे है और यह कह रहे है, "ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिए कि अमेरिकी धन अब आ नही सकता।"

इसके बाद देर तक धनके समझदारी और नासमझीसे उपयोगके अवान्तर विषयपर चर्चा होती रही। इस विषयने पिछली भेंटमें भी उनका ध्यान आकर्षित किया था और गांधीजी ने विषयको इन शब्दोके साथ बहुत ही प्रभावशाली ढंगसे रखा था :

"ईश्वर और धनासुर [मैमेन]को एकसाथ नही साधा जा सकता और मुझे तो ऐसी आशका है कि भारतकी सेवा करनेके लिए धनासुरको ही भेजा गया है, और ईश्वर पीछे रह गया। परिणामत वह एक-न-एक दिन इसका बदला अवश्य लेगा।

[उन्होंने यह बात भी स्पष्ट कर दी थी कि दिये गये धनमें और अर्जित धनमें जमीन और आसमानका अन्तर है।]

जॉ० मॉ० : परन्तु आपके अपने उदाहरणसे ही यह सिद्ध हो जाता है कि धनका समझदारीसे भी उपयोग होता है। आज सुबह जो संस्थाएँ मैंने देखी हैं, वे सब इसके सिवा और क्या प्रमाणित करती हैं?

गा० आपको मेरे सिद्धान्त और व्यवहारमे अन्तर्विरोध दिखाई देता है? पर आपको पृष्ठभूमि समझनी चाहिए। धन एकत्रित करनेके अपने समस्त अनुभव और सामर्थ्यके बाद भी मै इस मामलेमे बिलकुल उदासीन हूँ। मैंने हमेशा यह महसूस किया है कि किसी धार्मिक सगठनके पास जब अपनी आवश्यकतासे अधिक धन हो जाता है, तो उसके लिए ईश्वरमे आस्था मिटने और धनमे आस्था जमनेका खतरा पैदा हो जाता है। धनका 'समझदारीसे' या 'नासमझीसे' उपयोग-जैसी चीज कोई नही है। आपको केवल उसपर निर्भर रहना बद करना है। आप रोटीतक पर निर्भर मत रहिए और यह कहकर ईश्वरके साथ सौदेबाजी मत कीजिए कि जब तक ईश्वर आपको रोटी नही देगा, आप प्रार्थना नही करेगे।

जॉ० मॉ० : मैं इसपर कुछ विस्तारसे बहस कर रहा हूँ, क्योंकि मै आपकी बात समझना चाहता हूँ और यह चाहता हूँ कि आपके शब्दोंको गलत ढंगसे उद्धृत न करूँ।

गा० तब, मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसे दो प्रभावकारी उदाहरणोसे स्पष्ट करूँगा। दक्षिण आफ्रिकामे जब मैंने सत्याग्रह-अभियान शुरू किया, मेरी जेबमे एक फूटी कौड़ी भी नही थी, पर मै निश्चिन्त था। मुझे ३,००० लोगोके एक पूरे काफिलेकी व्यवस्था करनी थी। मैंने कहा, "घबराइए मत। यदि ईश्वर चाहेगा तो वह इसे आगे

ले जायेगा।" तब भारतसे धनकी वर्षा होने लगी। मुझे उसे रोकना पडा, क्योंकि जब धन आया तो उसके साथ मुसीबतें भी आई। पहले वे लोग रोटी और थोडी शक्कर से ही सतुष्ट थे, पर अब सभी तरहकी चीजोंकी माँग करने लगे।

अब नई तालीमके प्रयोगकी मिसाल लीजिए। मैंने कहा, यह प्रयोग किसीसे भी आर्थिक सहायताकी माँग किये बिना चलते रहना चाहिए। नही तो मेरी मृत्युके बाद सारा संगठन खण्ड-खण्ड हो जायेगा। सच्चाई यह है कि जैसे ही आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित होती है, आत्मिक दिवालियापन भी सुनिश्चित हो जाता है।

जॉ० मॉ० : परन्तु धनका आपने समझदारीसे उपयोग किया।

गां० : सोना-चाँदी नही, केवल रोटी चाहिए। ईश्वरकी इस व्यवस्थामें कुत्ता तक भूखा नही रहता है।

इसके बाद अस्पृश्यताका अंतिम प्रश्न आया। डॉ० मॉट सोचते थे कि क्या आज विवेक दुनिया-भरमें तेजीसे जाग नहीं रहा है। उन्होंने कहा, अमेरिकामें [इस सवाल-पर] विभिन्न गुटोंके बीच बड़ी लड़ाइयाँ हुई हैं। जिन होटलोंमें नीग्रो लोगोंका प्रवेश निषिद्ध है, उनका बहिष्कार करनेके निश्चय किये गये हैं। जर्मनीमें यहूदियोंके साथ होनेवाले अमानुषिक व्यवहारके विरोधमें ईसाई जेल गये हैं। कचरेमें से कंचन बाहर आ रहा है। भारतमें स्थिति क्या है?

गा० : मै फिर कहता हूँ कि कार्यमे कोई प्रगति नही हुई है। इसका एक अच्छा प्रमाण ब्रिटिश लोग हैं। उनमे जातीय भावना घटनेकी बजाय बढ रही है। दक्षिण आफ्रिकामे पक्षपातकी आँधी जोरोपर है। भूतपूर्व मंत्रियोंकी घोषणाओंकी अवज्ञा की जा रही है। इसी तरहकी कहानियाँ पूर्वी आफ्रिकासे भी सुनाई पड़ती हैं। पर मैं बराबर आशावादी हूँ। इसलिए नही कि सच्चाई फूलने-फलनेवाली है, इसका मै कोई प्रमाण दे सकता हूँ, बल्कि इसलिए कि मेरा यह अटल विश्वास है कि अंतमे सच्चाई ही फूले-फलेगी।

जॉ० मॉ० : दक्षिण आफ्रिकामें भी क्या हॉफमेअर और एडगर ब्रुक्स-जैसे लोग नहीं है? कुछ व्यक्तियोंका रुख निश्चय ही बदल गया है।

गा० : मुट्ठी-भर वैयक्तिक उदाहरणोसे निष्कर्ष निकालना गलत होगा। हमे प्रेरणा केवल अपनी इस आस्थासे ही मिल सकती है कि सच्चाईकी अतमे अवश्य विजय होगी। लेकिन इस मामलेमे, जैसाकि मै कह चुका हूँ, विचारकी दिशामें कुछ प्रगति हुई है, पर कार्यकी दिशामें नही हुई है।

अगले दिन डॉ० मॉटने बातचीतकी भूमिका अपनी इस टिप्पणीसे बाँधी : मैंने जो प्रश्न पूछे, उनपर अपने विचार आपने बड़े ही मौलिक ढंगसे रखे हैं। मेरे लिए उनका क्या मूल्य है मैं बता नहीं सकता। आपकी इस बातने मुझे प्रभावित किया है कि विचारकी दिशामें तो कुछ प्रगति हुई है, पर कार्यकी दिशामें कोई प्रगति नहीं हुई है। . . . मैं भी आपको यह दिखा सकता था कि वस्तुतः कुछ चीजें ठोस रूप ले रही हैं। पर आज मैं आपका ध्यान एक और विषयपर आकर्षित करना चाहता

हूँ। 'डाकू' राष्ट्रोंके बारेमें, यदि आप मुझे इस प्रचलित शब्दका प्रयोग करनेकी अनुमति दें तो, क्या किया जाये? अमरीकामें वैयक्तिक गुण्डागर्दी थी। उसे स्थानीय और राष्ट्रीय पैमानेपर पुलिसकी कड़ी कार्रवाइयोंसे दबा दिया गया है। इसी तरहकी कोई चीज क्या हम राष्ट्रोंके बीच चल रही गुण्डागर्दीके बारेमें नहीं कर सकते? मिसाल के तौरपर मंचूरियामें, जहाँ अफीमके जहरका धृष्टतापूर्वक प्रयोग हो रहा है, अबीसीनियामें, स्पेनमें, आस्ट्रियापर अचानक कब्जा कर लेनेके और चेकोस्लोवाकियाके मामलेमें क्या हम कुछ नहीं कर सकते? इस सिलसिलेमें मैं आपको बताऊँ कि आपने चेकोस्लोवाकियाके संकटपर[1] और यहूदी प्रश्नपर[2] जो-कुछ लिखा, उसका मुझपर गहरा असर हुआ था। क्या हम अंतर्राष्ट्रीय पुलिस-जैसी किसी चीजकी स्थापना नहीं कर सकते?

गा० . यह प्रश्न मेरे लिए कोई नया नही है।

जॉ० मॉ०: मैं भी ऐसा नहीं सोचता हूँ।

गां०: मुझे भारतीय परिस्थितियोमे इसी तरहके सवालोसे जूझना पडता है। हमे साम्प्रदायिक और मजदूर दगोको दबाना पडा। मन्त्रिमण्डलोने कुछ मामलोमे सैन्य शक्तिका और ज्यादातरमें पुलिसका प्रयोग किया। जहाँ मैं यह मानता हूँ कि मन्त्रियोके आगे और कोई चारा न था, वहाँ मैंने यह भी कहा था कि काग्रेसी मन्त्रि-मण्डल अपनी पूँजीमे, यानी अहिंसाके अपने जगजाहिर अस्त्रमें, दिवालिये सिद्ध हुए हैं। तो भी, जो सवाल आपने पूछा है उसके जवाबमें मैं कहूँगा कि यदि विश्वके सर्वोच्च मनीषियोने अहिंसाकी भावनाको आत्मसात् नही किया तो उन्हे गुण्डागर्दीका पुराने ढगसे ही सामना करना होगा। परन्तु उससे केवल यही सिद्ध होगा कि हम अभी जगलके कानूनसे आगे नही बढे है, हमें ईश्वरने जो विभूति दी है उसके मूल्य को हमने अभी नही पहचाना है, १९०० वर्ष पुराने ईसाई धर्म, उससे भी पुराने हिन्दू-धर्म और बौद्ध धर्म और (यदि मैंने उसे ठीकसे समझा है तो) इस्लाम धर्मकी शिक्षाओके बावजूद, हमने अभी मानव प्राणियोकी हैसियतसे कोई खास प्रगति नही की है। जिनमे अहिंसाकी भावना नही है वे यदि बल-प्रयोग करते है तो वह बात मेरी समझमे आ सकती है। पर जो अहिंसासे परिचित है उनसे मैं यही चाहूँगा कि वे अपनी पूरी शक्ति यह दिखानेमे लगा दे कि गुण्डागर्दीका भी अहिंसासे ही मकाबला करना है। क्योकि बल-प्रयोग चाहे कितने ही न्यायोचित रूपमे किया जाये, वह अतमें हमें उसी दलदलमें ले जायेगा जहाँकि हिटलर और मुसोलिनीकी शक्ति ले जाती है। उनमें केवल मात्राका ही अन्तर रहेगा। आपको और मुझे, जिनका अहिंसामें विश्वास है, इसे इस नाजुक घडीमे प्रयुक्त करना चाहिए। फिलहाल चाहे हमे ऐसा लगे कि हम किसी दीवारसे सिर फोड रहे है, फिर भी गुण्डो तकके दिलोको छूनेमें हमें निराश नही होना चाहिए।

१ देखिए खण्ड ६७, पृ० ४४९-५२।

२. देखिए "यहूदी लोग", पृ० १५३-७।

जॉ० मॉ० : मिशनरी और आम ईसाई ग्रामोद्योग आन्दोलन, नई तालीम आन्दोलन आदि रचनात्मक गतिविधियोंमें किस प्रकार सहायक हो सकते है ?

गां० : उन्हे इन आन्दोलनोका अध्ययन करना चाहिए और इन सगठनोके अधीन या इनके साथ मिलकर काम करना चाहिए। मुझे यह बताते हुए खुशी होती है कि मेरे कुछ अनमोल ईसाई सहयोगी है। परन्तु वे उँगलियोपर गिने जा सकते है। मुझे डर यह है कि ईसाइयोमे से ज्यादातरका इसमे विश्वास नही है। कुछने तो साफ-साफ कह दिया है कि आपने जिन सस्थाओंका नाम लिया है उनके द्वारा सचालित ग्राम-आन्दोलन या शिक्षा-आन्दोलनमे हमारा विश्वास नही है। जाहिर है कि वे औद्योगीकरण और पाश्चात्य ढगकी शिक्षामे विश्वास करते है। फिर मिशनरी सामूहिक रूपसे ऐसे आन्दोलनोमे भाग लेनेसे, जो पूर्णतया या मुख्यतया ईसाइयो द्वारा सचालित नही है, शायद झिझकते भी है।

यदि मुझे अपनी गतिविधियोमें भारतके ५००० प्रोटेस्टेण्ट मिशनरियोका हार्दिक और सक्रिय सहयोग मिल जाये, और यदि वे अहिंसाकी जीवन्त शक्तिमें सचमुच विश्वास करने लगे और उसे ही एकमात्र कारगर शक्ति मानने लगे, तो वे न केवल यहाँ सहायक हो सकते है, बल्कि शायद पश्चिमपर भी प्रभाव डाल सकते है।

जॉ० मॉ० : खुशीकी बात यह है कि उनमें काफी ऐसे है जो आपसे बिलकुल सहमत है।

गां० : मुझे मालूम है।

जॉ० मॉ० : आपके जीवनका सर्वाधिक रचनात्मक अनुभव क्या रहा है ? अपने अतीतपर दृष्टि डालते हुए आपको कौन-सा अनुभव ऐसा लगता है जब, सारी परिस्थितियाँ प्रतिकूल होते हुए भी, ईश्वरमें आपकी आस्था जाग उठी हो, जब, कहना चाहिए कि, सब-कुछ असम्भव लगते हुए भी जीवन धरतीमें से फूट पड़ा हो ?

गां० : इस तरहके अनुभव बहुत-से है। पर आपने जब यह प्रश्न मेरे सामने रखा तो मुझे खास तौरसे एक ऐसा अनुभव याद आया जिसने मेरे जीवनकी दिशा ही बदल दी। वह घटना मेरे साथ दक्षिण आफ्रिका पहुँचनेके सात दिन बाद ही घटी थी। मै वहाँ बिलकुल सासारिक और स्वार्थपूर्ण ध्येयसे गया था। मै तब महज एक छोकरा था, इग्लैडसे लौटा था और कुछ पैसा पैदा करना चाहता था। जो आसामी मुझे वहाँ ले गया था उसने अचानक मुझसे डर्बनसे प्रिटोरिया जानेको कहा। वह एक ऐसी यात्रा थी जो आसान नही थी। चार्ल्सटाउन तक रेलसे सफर करना था और फिर घोडागाड़ीसे जोहानिसबर्ग पहुँचना था। रेलमे मेरे पास पहले दर्जेका टिकट था, पर बिस्तरका टिकट नही था। मैरित्सबर्गमे, जहाँ बिस्तर दिये जाते थे, गार्ड आया और उसने मुझे बाहर निकाल दिया तथा वैन डिब्बेमे जानेको कहा। मै वहाँ जानेको राजी नही हुआ और रेल मुझे ठडमे काँपता छोड वहाँसे चल दी।[1] अब वह रचनात्मक अनुभव होता है। मुझे अपने प्राणोका भय था। मै अँधेरे वेटिंग

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० ८९-९०।

रूममे घुसा। एक गोरा उस कमरेमें मौजूद था। मुझे उससे डर लगा। तब मैंने अपने-आपसे पूछा, मेरा फर्ज अब क्या है? क्या मैं भारत वापस चला जाऊँ, या ईश्वरको अपना सहायक मानकर आगे बढ़ूँ और जो-कुछ भाग्यमें है, उसका सामना करूँ? मैंने वही रहने और कष्ट भोगनेका फैसला किया। मेरी सक्रिय अहिंसा उसी दिनसे शुरू हुई। और ईश्वरने उसी यात्रामे मेरी परीक्षा भी ली। गाड़ीवानने जो सीट मुझे दी थी, उसपर न बैठनेपर उसने मेरी बुरी तरह पिटाई की।

जॉ० मॉ०: आपको जो कष्ट, आघात-पर-आघात मिले, वे आपकी आत्मामें अंकित होते गये।

गां०. हाँ, वह मेरे जीवनका सबसे अमूल्य अनुभव था।

जॉ० मॉ०: अपना यह अनुभव आपने मुझे बताया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। कठिनाइयो, दुविधाओ और शंकाओंमें आपकी आत्माको सबसे अधिक संतोष किस चीजसे मिला?

गा०: ईश्वरमे जीवन्त आस्थासे।

जॉ० मॉ०: अपने जीवन और अनुभवोंमें ईश्वरकी असंदिग्ध अभिव्यक्ति आपको कब अनुभव हुई?

गां० मैंने यह अनुभव किया है और मैं विश्वास करता हूँ कि ईश्वर आपके आगे सशरीर कभी प्रकट नही होता। वह तो उस कार्यमें प्रकट होता है जो गहनतम अधकारमे भी आपकी मुक्तिका कारण हो सकता है।

जॉ० मॉ०: आपका आशय क्या यह है कि ऐसी चीजें होती हैं जो ईश्वरके बिना हो ही नहीं सकतीं?

गां० हाँ, वे अचानक और अनजाने ही होती हैं। एक अनुभव ऐसा है जो मेरी स्मृतिमे बहुत ही स्पष्ट है। वह अस्पृश्यता-निवारणके लिए किये गये २१ दिनके मेरे उपवाससे[१] जुड़ा है। मैं जब रातको सोनेके लिए लेटा था तो अगले दिन सुबह उपवासकी घोषणा करनेका रत्ती-भर भी विचार मेरे मनमें नही था। रातको कोई १२ बजे कोई चीज अचानक मुझे जगा देती है और कोई आवाज — वह भीतरसे आई या बाहरसे, मैं कह नही सकता — धीरेसे मुझसे कहती है, 'तुम्हें उपवास करना चाहिए।' 'कितने दिन', मैं पूछता हूँ। वह आवाज फिर कहती है, 'इक्कीस दिन'। 'वह कब शुरू हो', मैं पूछता हूँ। वह कहती है, 'तुम कल शुरू कर दो।' यह निर्णय कर चुकनेके बाद मैं शांतिसे सो गया। प्रात.कालकी प्रार्थना तक अपने साथियोको मैंने कोई बात नही बताई। प्रार्थनाके बाद मैंने उनके हाथमें कागजका एक पुर्जा थमा दिया, जिसमें मेरे निश्चयकी घोषणा थी और उनसे यह कहा गया था कि वे मुझसे (इस विषयमें) बहस न करें, क्योंकि यह निश्चय बदला नही जा सकता।

१. देखिए खण्ड ५५; उपवास ८ मई, १९३३ से आरम्भ हुआ था।

डाक्टरोकी यह राय थी कि उस उपवाससे मै जीवित नही रहूँगा। परन्तु मेरे भीतर कोई चीज कह रही थी कि मैं जीवित रहूँगा और मुझे अवश्य आगे वढना चाहिए। उस तरहका अनुभव मेरे जीवनमे उससे पहले या उसके वाद फिर कभी नही हुआ।

जॉ० मॉ० : इस तरहकी चीजकी उत्पत्ति, निश्चय ही, आप किसी दुष्ट स्रोतसे तो मान नहीं सकते ?

गां ० कदापि नही। मैंने इसे कभी भी गलती नही समझा। मेरे जीवनमें यदि कभी कोई आध्यात्मिक उपवास रहा है तो वह यही था। शारीरिक वासनाओके दमनमे कुछ गुण अवश्य है। शरीरका बलिदान किये बिना ईश्वरसे साक्षात्कार असम्भव है। शरीरको भगवानका मन्दिर मानते हुए उसकी आवश्यकताएँ पूरी करना एक वात है, और उसे हाड़-मासकी काया मानते हुए उसकी वासनाओका दमन करना दूसरी बात है।

डॉ० मॉटने १९३६ में अपनी भेंटके अंतमें मौनपर एक प्रश्न किया था। १९२८ में जब वे थोड़ी देरके लिए अहमदाबाद आये थे, तब भी उन्होंने यही किया था। इस भेंटमें भी उन्होंने गांधीजी से पूछा कि क्या यह आपको अपनी आध्यात्मिक खोजमें अभी भी आवश्यक लगता है।

गा० मैं यह कह सकता हूँ कि मै अब सदा मौन रहनेवाला व्यक्ति हूँ। कुछ समय पहले ही मैंने कोई दो महीने तक पूर्ण मौन रखा था और उस मोनका जादू अभी तक टूटा नही है। आज आपके आनेपर मैंने मौन तोडा था। आजकल शामको प्रतिदिन प्रार्थनाके समय मै मौन धारण कर लेता हूँ और दो बजे मिलने आनेवालोंके लिए उसे तोड़ता हूँ। आज जब आप आये तभी मैंने मौन तोडा था। यह अब मेरे लिए शारीरिक और आत्मिक दोनो कारणोसे आवश्यक हो गया है। आरम्भमें यह मानसिक दबावको कम करनेके लिए किया जाता था। फिर मुझे लिखनेके लिए भी समय चाहिए था। परन्तु कुछ समय तक अभ्यास करनेके बाद मुझे इसका आध्यात्मिक महत्व पता चला। मेरे दिमागमे अचानक यह चीज कौंधी कि ईश्वरके साथ सर्वाधिक सम्पर्क मैं इसी समयमे रख सकता हूँ। और अब तो मुझे ऐसा लगता है मानो मेरी प्रकृति मौनके लिए ही बनी हो। वैसे मै आपको बताऊँ कि मै बचपनसे ही चुप रहनेवाला माना जाता रहा हूँ। स्कूलमे मैं चुप रहता था और लदनके अपने दिनोमे मुझे मेरे मित्र मूक भँवरा कहा करते थे।

जॉ० मॉ० : इस सिलसिलेमें मुझे 'बाइबिल' के दो उद्धरण याद आ रहे हैं :

"ओ री मेरी आत्मा, तू ईश्वरके समक्ष मूक हो जा।"

"बोलो प्रभु, तुम्हारा सेवक सुन रहा है।"

मैंने प्राय: अत्यन्त कोलाहलपूर्ण समयमें भी ईश्वरके साथ सम्पर्कके लिए मौन साधा है।

मुझे खेद है कि मैंने आपका निर्धारितसे कहीं अधिक समय ले लिया है। आपके पास होने पर मुझे समयका कुछ होश ही नहीं रहता। मैं आपका कितना आभारी हूँ, बता नहीं सकता।

सेगाँव, ५ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१९९. खादीको लोकप्रिय कैसे बनायें?

एक आदरणीय खादी-कार्यकर्ताने मुझे हिन्दीमें एक पत्र लिखा है, जिसका सारांश यह है :

> मिलोंके कपड़ेके मुकाबलेमें, कीमतके लिहाजसे, खादी महँगी पड़ती है। मिलके कपड़ेसे तो इसका मुकाबला तभी हो सकता है जबकि हाथसे ओटने, धुनने और कातनेकी मजदूरीको उसमें से निकाल दिया जाये। इसलिए जो लोग खुद सूत कातते हैं, उनके लिए भी यह कोई मुनाफेकी बात नहीं है। इसमें शक नहीं कि आपने खादीका नया अर्थशास्त्र निकाला है। लेकिन जब तक बहुसंख्यक लोग उसकी कद्र न करें, खादी सब लोगोंमें प्रसार पा नहीं सकती। और तो और, हमारे कांग्रेसी मन्त्री भी आपके नये अर्थशास्त्रको समझते या उसकी कद्र करते हों, ऐसा मालूम नहीं पड़ता। ऐसी हालतमें क्या आप खादी-कार्यकर्ताओं, बल्कि मन्त्रियों और कांग्रेसजनोंका भी मार्ग-प्रदर्शन नहीं करेंगे? आपका विश्वास तो इतना जबरदस्त मालूम पड़ता है कि अगर हम, यानी आपके साथी कार्यकर्ता, आपको ऐसा करने दें तो आप ईमानदारी और कुशलताके साथ किये जानेवाले आठ घंटेके कामके लिए कातनेवालोंको आठ आना रोज भी फौरन दे देंगे। लेकिन, सच बात यह है कि हमारे अन्दर आपकी-जैसी श्रद्धा नहीं है।

निस्सन्देह, खादी मिलके कपड़ेसे मुकाबला नहीं कर सकती, न ऐसा कभी सोचा ही गया था। जिस नियमसे खादीका नियन्त्रण होता है, उसे अगर लोग न समझें और उसकी कद्र न करें तो खादी सर्वसाधारणमें कभी भी स्थान नहीं पा सकती। उस हालतमें यह लाजिमी तौरपर मालदारों और उन्हीं लोगोंके शौककी चीज रहेगी, जिन्हें कि इसकी धुन है। और अगर इसे खाली यही बनना हो, तो अखिल भारतीय चरखा संघ-जैसी महान संस्थाके सारे प्रयत्नोंको बुरा न भी कहें, मगर बिलकुल व्यर्थ तो कहना ही पड़ेगा।

लेकिन खादीका एक बड़ा मिशन है। खादी उन लाखों आदमियोंको सम्मान-पूर्ण धन्धा देती है जो सालके लगभग चार महीने बेकार रहते हैं। इस कामसे जहाँ

उन्हे पारिश्रमिक मिलता है, वहाँ यो भी यह अपना पुरस्कार आप है। क्योकि लाखों आदमी अगर मजबूरन बेकार रहे तो आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक दृष्टिसे वे जरूर मुर्दा बन जायेंगे। फिर चरखेसे लाखों गरीब औरतोकी स्थिति अपने-आप सुधरती है। इसलिए मिलका कपडा चाहे लोगोको मुफ्त ही क्यो न दिया जाये, तो भी उनकी सच्ची भलाई इसीमें है कि वे खादीके मुकाबलेमें, जोकि उन्हीके परिश्रमका फल है, उसे लेनेसे इनकार कर दे।

जिन्दगी रुपयेसे ज्यादा कीमती है। यो तो यह बड़ा सस्ता नुस्खा है कि हमारे बूढे माँ-बाप जो काम करनेमें असमर्थ हो जाये और हमारी ही कमाईपर निर्भर हो, उन्हे हम मार डालें। इसी तरह, जिन बच्चोंकी हमे अपनी भौतिक सुख-सुविधाके लिए जरूरत नही है और जिनकी हमे बदलेमें कुछ भी पाये बिना परवरिश करनी होती है, उन्हे मार डालना भी सस्ता ही तरीका है। लेकिन न तो हम अपने बूढ़े माँ-बापकी हत्या करते है, न अपने बच्चोंकी, बल्कि चाहे जितना खर्च पडनेपर भी उनकी परवरिश करना अपना सौभाग्य समझते है। इसी तरह खादीको भी हमे और सब कपडेको छोडकर कायम रखना चाहिए। यह महज आदतकी बात है कि हम खादीके बारेमे कीमतकी बात सोचते हैं। इसके लिए यह जरूरी है कि हम खादीके अर्थशास्त्रके बारेमें अपनी धारणा बदल दे। राष्ट्रके हितकी दृष्टिसे जब हम इस बात का अध्ययन करेंगे, तो हमे पता लगेगा कि खादी हरगिज महँगी नही है। संक्रमण-कालमे घरेलू अर्थशास्त्रमें रद्दोबदलका खतरा तो उठाना ही होगा। इस समय हमारे सामने एक बडी रुकावट है। लंकाशायरको, और आप चाहे तो यह भी कह सकते है कि हिन्दुस्तानी मिलोको भी, लाभ पहुँचानेके लिए रुईकी उत्पत्तिका केन्द्रीकरण कर दिया गया है। रुईकी कीमतें विदेशोकी कीमतोसे तय होती है। जब रुईकी उत्पत्तिका विभाजन खादीके अर्थशास्त्रकी आवश्यकताओके मुताबिक होगा, तब रुईकी कीमतमें घटा-बढी नही होगी और अबसे कम तो वह हर हालतमे रहेगी। राज्यके सरक्षण या स्वेच्छा-प्रेरित प्रयत्नोसे जब लोग केवल खादीके ही व्यवहारकी आदत डाल लेगे, तब वे उसके सस्ते-महँगेपनपर उसी तरह ध्यान नही देगे जिस तरह कि लाखों शाकाहारी मांसाहार और शाकाहारकी कीमतोकी कोई तुलना नही करते। वे तो मांसाहारकी बजाय भूखो मर जाना पसन्द करेंगे, फिर वह चाहे मुफ्त ही क्यों न बाँटा जाये।

लेकिन मै यह मानता हूँ कि खादीमे ऐसी जीवन्त आस्था बहुत ही कम कांग्रेस-जनोंकी है। मन्त्री कांग्रेसी है। वे अपने आसपासके वातावरणसे प्रेरणा पाते है। अगर खादीमें उनकी जीवन्त आस्था हो, तो उसे लोकप्रिय बनानेके लिए वे बहुत-कुछ कर सकते है।

१९२० मे स्वराज्यका जो मूल कार्यक्रम बनाया गया था, खादी उसका आवश्यक अग थी। १९२१-२२ मे हजारो कांग्रेसजनोने सैकड़ो सभाओंमें यह बात दुहराई थी कि हरेक गाँवमें चरखा चलने लगे, तभी लाखों आदमियोंको स्वराज्य मिल सकता है। मरहूम अलीबन्धु बेशुमार सभाओमे तकरीर करते हुए अकसर यह कहा करते थे

कि जब तक हरेक घरमे चरखा और हरेक गाँवमे करघा नही होगा, तब तक आजादी हासिल नही हो सकती। मौ० मुहम्मद अली अपनी सजीव भाषामे कहा करते थे कि "हमारे चरखे हमारी आजादीके जगके हथियार है और उनसे निकलनेवाली सूतकी आँटियाँ हमारे गोला-बारूद है।" वे ऐसे दृढ़ विश्वासके साथ यह बात कहते थे कि वह श्रोताओके दिलमे बैठ जाती थी। लेकिन शुरूके उन दिनोका वह विश्वास कायम नही रहा। काग्रेसजनोकी दृष्टिमे, आम तौरपर, खादी स्वराज्यके लिए जरूरी नही रही। श्री जवाहरलाल नेहरूने खादीको हमारी आजादीकी वर्दी कहा है। लेकिन कितने उसे इस मानीमे अपनाते है? काग्रेसजन अगर ऐसा विश्वास रख सके तो खादी अपने-आप चल निकलेगी। क्योकि स्वतन्त्रता किसी कीमतपर भी महँगी नही है। वह तो जीवनका प्राण है। अपनी जिन्दगीके लिए कोई कौन-सा खर्च करनेको तैयार न होगा? सविनय अवज्ञा तो एक अस्थायी चीज है। काग्रेसी झण्डा उसका द्योतक नही है। उसका डिजाइन ऐसा रखा गया है कि वह स्वतन्त्रताके मूल तत्त्वोंको व्यक्त करे। खादी उसकी पृष्ठभूमि है। उसके ऊपर चरखा अकित है और वही उसको कायम रखे हुए है। उसके रंगोसे जाहिर होता है कि स्वतन्त्रता हासिल करनेके लिए साम्प्रदायिक एकता कितनी जरूरी है। ये शर्ते पूरी हो जाये तो शायद सविनय अवज्ञाकी और उसके कारण उठाये जानेवाले कष्टोकी कोई जरूरत ही न रहे। मेरे लिए तो खादी पहनना आजादीका बाना धारण करना है।

खादीके इस अर्थको तहेदिलसे मान लिया जाये, तो मै बतला सकता हूँ कि काग्रेसी मन्त्री ही नही, बल्कि सभी मन्त्री और खादी कार्यकर्ता तथा काग्रेसजन क्या कर सकते हैं और उन्हे क्या करना चाहिए।

यह हो सकता है कि एक मन्त्री केवल इसीलिए रहे कि वह खादी और ग्रामोद्योगकी देखभाल करे। इसलिए इस कामका एक महकमा होना चाहिए, जिसे दूसरे महकमोका सहयोग मिलना चाहिए। इस प्रकार कृषि-विभाग रुई-उत्पादनके विकेन्द्रीकरणकी योजना बनायेगा, गाँवोके उपयोगके लिए रुईकी पैदावार लायक जगहकी पैमाइश करेगा, और इस बातका पता लगायेगा कि उसके प्रान्तके लिए कितनी रुईकी जरूरत होगी। यही नही, बल्कि उपयुक्त केन्द्रोमें वितरणके लिए वह रुईका स्टाक भी रखेगा। स्टोरका महकमा प्रान्तमे उपलब्ध खादीको खरीदेगा और अपनी जरूरतका कपड़ा बनवायेगा। तकनीकी महकमे चरखों तथा दस्तकारीके दूसरे साधनोकी तरक्की के लिए कोशिश करेगे। ये सब महकमे अ० भा० चरखा सघ और अ० भा० ग्रामोद्योग संघको अपने विशेषज्ञ मानकर उनके साथ बराबर सम्पर्क रखेगे।

राजस्व-मन्त्री खादीको मिलकी प्रतियोगितासे बचानेके उपाय सोचेगा।

खादी कार्यकर्ता अथक उत्साहके साथ खादी विज्ञानके नियमोकी छानबीन करेगे और खादीको अधिक टिकाऊ तथा अधिक आकर्षक बनानेकी कोशिश करेगे और खादीके प्रसारके उपाय सोचनेके लिए अपनेको जिम्मेदार समझेंगे। यह याद रखना चाहिए कि ईश्वर उन्हीकी मदद करता है जो सदा जागरूक रहते है और अपने सारे गुणोका उपयोग अपने मिशनकी साधनाके लिए करते हैं।

आशा है कि सभी कांग्रेसजन न सिर्फ समारोहोंमें बल्कि आदतन खादी पहनकर, खुद कताई करके और जब कभी उनसे कहा जाये तबी खादी कार्यकर्ताओंकी मदद करके अपने पड़ोसियोंमें खादीके सन्देशका प्रसार करेंगे।

सेगाँव, ४ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

२००. टाटानगरमें हरिजन कल्याण-कार्य[1]

बिहारके मंत्री श्री जगलाल चौधरी द्वारा घतकीडीह हरिजन पाठशालाकी नई शाखाके उद्घाटन-समारोहका पूर्ण और विस्तृत विवरण मेरे सामने है। यह समारोह टाटानगरमें सम्पन्न हुआ। प्रबन्धक श्री जे० जे० गांधीने, जो निजी तौरपर हरिजन कल्याण-कार्यमें दिलचस्पी लेते हैं, अपने भाषणके दौरान मंत्री महोदयसे शाखाका उद्घाटन करनेकी प्रार्थना करते हुए और बातोंके साथ यह कहा:[2]

सेगाँव, ४ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

२०१. पत्र : मीराबहनको

५ दिसम्बर, १९३८

चि० मीरा,

जहाँ तक पत्र लिखनेका सम्बन्ध है, पिछले तीन दिनसे मैंने तुम्हारी उपेक्षा की है। काम इतना रहा कि तुम्हारे लिए समय ही नहीं निकाल सका। इसलिए यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूँ। परन्तु तुम्हें पत्र लिख न सकूँ, तो भी यहाँ काफी चीजें हैं जो रोज तुम्हारी याद दिलाती हैं।

पता नहीं तुम्हारे शरीर, मन और आत्माका क्या हाल है? तुम्हारे पत्रकी बड़ी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित किया गया था।

२. भाषण यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें वक्ताने हरिजन बच्चोंकी शिक्षाको बढ़ावा देनेके लिए स्टील कम्पनी द्वारा किये जा रहे प्रयत्नोंका ब्योरा दिया था।

मुझे शारदासे कहना पड़ेगा कि वह यहाँके समाचार तुम्हे लिख दिया करे।
सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

आखिर तुम्हारा पत्र पेशावरसे आ गया! मै बिलकुल अच्छा हूँ। रक्तचाप ठीक है। यहाँ सर्दी शुरू हो गई है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१८) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१३ से भी।

२०२. पत्र : अमृत कौरको

५ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

मैंने दो पत्र तुम्हे दिल्लीके पतेपर भेजे थे। उनमें से एक पत्र मेरी मूर्खतावश ४, भगवानदास रोडके बजाय १२, भगवानदास रोड भेज दिया गया था। तो भी मुझे आशा है वह तुम्हे मिल ही गया होगा।

ऐसा लगता है कि यहाँ सब ठीक चल रहा है। मुलाकातोंका सिलसिला जारी है। आनन्द एक सप्ताहके उपवास पर है। बीचमें चौथे दिन नीबू और केला ले लेगा।

महादेवने मॉटकी मुलाकातपर पाँच घण्टे लिखा।[1]

बाकी शारदा लिखेगी।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

यह लखनऊ जा रहा है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९६) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०५२ से भी।

---

[1] १. देखिए पृ० १८३-९२।

२०३. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगांव
५ दिसम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

मैंने 'ग्रामउद्योग पत्रिका' के दोनो संस्करण पढ़े है।

क्या हम इस स्थितिमें है कि ग्रामीणोंको यह तरीका बता सकें कि बिना पालिश किया चावल पालिश किये हुए चावलसे सस्ता कैसे मिल सकता है?

क्या यह प्रमाणित हो चुका है कि बिना पालिश किया हुआ चावल कमजोर मेदेवाले लोगोको भी हजम हो जाता है? छोटेलाल और बाबा साहबके अनुभव मेरे मनमे है। क्या हमारे पास ऐसा कोई उपकरण है जिसे हम ग्रामीणोंको धानकी भूसी अलग करनेके लिये दे सकते है? यदि मध्य प्रान्तकी सरकार हर गाँवमे बिना पालिश किये हुए चावलका प्रयोग करनेकी व्यवस्था करनेके लिए हमें कोई पद दे तो क्या हम इस उत्तरदायित्वको निभा सकते है? यदि नही, तो फिर वे इसका प्रबन्ध कैसे करेंगे?

हिन्दी पत्रिका किसने लिखी है? लेखक कोई भी हो, यह अच्छी हिन्दी नही है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४१) से।

२०४. पत्र : ना० र० मलकानीको

सेगांव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

प्रिय मलकानी,

अपने स्वीकृत दायरेसे बाहरकी कोई चीज मै कदाचित् ही पढता हूँ। परन्तु पिछले सप्ताह और इस सप्ताह 'क्रॉनिकल' साप्ताहिकमे प्रकाशित तुम्हारे लेखोने मेरा ध्यान आकृष्ट किया और मै उन्हे अधूरा नही छोड़ सका। [अस्पष्टता आदिकी] ऐसी कुछ और कठिनाइयोंको भी हम साफ कर लें।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३) से।

२०५. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

चि० मीरा,

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि तुम्हारे मनपर जो पहली छाप पडी, वह अनुकूल है। मेरा खयाल है कि यह कायम रहेगी। क्या तुम इस्लामिया कॉलेज और एडवर्ड कॉलेज देख आई हो? क्या रामदास या चन्द्रभाईने तुम्हारा पता लगा लिया था? बेशक, पश्तो भाषा तुम्हे सीखनी होगी। उसमे तुम्हे कोई कठिनाई नही होगी। सलग्न पत्र मेहरताज[1] के पत्र-सहित खान साहबको दे देना।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च :]

क्या तुमने ऐसा नही कहा था कि अगद[2] की लिखी पुस्तक मिल गई है? मुझे तो वह खोजनेपर भी नही मिली। पुस्तकका नाम क्या था?

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४१९) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१४ से भी।

२०६. पत्र : शामलालको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

प्रिय लाला शामलाल,

सीमाप्रान्तसे मैंने इन्दरपालके बारेमें लिखा था। अब मैंने फिर लिखा है। आपने जिन दूसरे कैदियोका जिक्र किया है उनका विवरण भी मुझे दीजिए। वे प्रान्तीय सरकारके अधिकार-क्षेत्रमे है या केन्द्रीय सरकारके?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८६) से।

१. अब्दुल गफ्फार खाँकी पुत्री।
२. रेजिनाल्ड रेनॉल्ड।

२०७. पत्र: देवदास गांधीको

५ दिसम्बर, १९३८

चि० देवदास,

जरूरत मालूम हो, तो पत्र लिखनेमें सकोच नही करना चाहिए।

तूने कतरन भेजी, ये अच्छा किया। इस दलीलका जवाब समय बचा तो दूंगा। वे लोग जितना तू समझता है, उतनी आसानीसे एजेन्सी नही देगे।

जमनादास तो गया। मुझे भी मैसूरकी नौकरी पसन्द नही होगी। लेकिन मेरी निन्दा हो, इस बातकी मुझे कोई चिन्ता नही है। रामदासको शान्ति मिलती हो, तो वह भले ही नौकरी स्वीकार कर ले। इस सम्बन्धमे मेरी स्थिति यह है। वह बेकार भी नही बैठ सकता, और बिना पैसेका या कम पैसेका काम भी नही ले सकता। तू उसे लिखते रहना। तेरी बात तो वह मानेगा ही।

रामदास नीमूके लिए तरसता है। उसे पूना बुला रहा है। उसका भी इलाज वह वहाँ कराना चाहता है। इसलिए मैंने सलाह दी है कि ठीक है, अभी वह पूना चली जाये। इलाज करा ले, उसके बाद मजेमे उसका प्रबन्ध बनारसमें कर देना। मुझे तेरा विचार भी पसन्द आता है, यद्यपि मुझे देहरादूनकी योजना भी अच्छी लगती है। रत्नकी परीक्षा पास करनेके बाद उसे वेतन तो ज्यादा मिलेगा ही। १५० रु० भी मिलनेमे मुझे कोई अड़चन नही दिखाई देती। यो, इसमे भाग्य तो होता ही है, लेकिन मै समझता हूँ, साठ रुपये तो किसी भी हालतमे मिलेंगे ही। फिर भी, वह सितार सीख ले, यह तो मुझे पसन्द ही है।

बा मजेमे है।

वल्लभभाईकी माँग है कि पूरी जनवरी बारडोलीमें ही बिताई जाये। मैंने इसे स्वीकार कर लिया है। महादेव भी ठीक है। मेरी तो भगवान ही निबाहते है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

बा को तू या लक्ष्मी दो पक्तियाँ लिख दिया करो। वह तुम सबके प्रेमको बहुत तरसती है जोकि स्वाभाविक ही है।

तुझे किस पतेपर पत्र भेजूं, ताकि वह जल्दी मिले? आफिसके या हरिजन निवासके पतेपर?

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २००८) से।

२०८. पत्र : वैकुण्ठभाई ल० मेहताको

५ दिसम्बर, १९३८

भाई वैकुण्ठ,

तुम्हारा लेख चन्द्रशंकर[1] ने यहाँ भेजा था। मैंने उसे प्रकाशनके लिए भेज दिया है। चन्द्रशंकर अपनी जिम्मेदारीपर लेख नही छाप सकता। अत. समय बचानेके लिए लेख आदि यही भेजा करना। महादेव अच्छा है, यो आराम तो अभी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री वैकुण्ठभाई लल्लूभाई मेहता
सर लल्लूभाई सामलदासका बगला
अंधेरी, बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३६५) से।

२०९. पत्र : शान्तिकुमार न० मोरारजीको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

चि० शान्तिकुमार,

जब कभी मै उस तरफ आऊँ, तब तुम मुझे अपने आफिसमे ले जाना। अगर तुम्हे सन्देश भेजूं, तो औरोको भी भेजने पड़ेगे। स्नेहीजन छूट दे दे, तो दूसरोसे भी मिले। व्रतके रूपमे तो ऐसे नियम पाले नही जा सकते। अलबत्ता सन्देशके लिए तुम्हारा आग्रह ही हो, तो मै तुम्हे निराश नही करना चाहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री शान्तिकुमार नरोत्तम मोरारजी
जुहू
पो० ऑ० सान्ताक्रूज
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२९) से; सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी

१. हरिजनबन्धुके सम्पादक चन्द्रशंकर शुक्ल।

२१०. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

५ दिसम्बर, १९३८

चि० अमृतलाल,

सुशीलाबहन कहती थी कि पाखाने गन्दे रहते हैं और बाँकेलाल[1] कोई काम करता नहीं लगता। कहती थी कि उसे दिये जानेवाले २० रुपये किसी और काम आ सकते हैं। इसपर विचार करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८०) से।

२११. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

चि० मणि,

तूने सुन्दर वर्णन किया है। तेरे कामका क्या कहना? तू मेरी बात मान और शरीरमें तेलकी मालिश या तो किसीसे करा या खुद कर। जो सिपाही अपने शरीरको स्वस्थ नहीं रखता, वह दण्डका भागी होता है, और होना भी यही चाहिए।

यदि लोग अहिंसाका पाठ सीख गये हो और मारपीट वगैरह सहन कर ले, तो फिर उनकी हार हो ही नहीं सकती। महादेव यहीं है। मजेमें है। वह जान-बूझकर ही कम लिखता है। इस बार मैंने उसे 'हरिजन' में बहुत लिखने दिया। ऐसा बार-बार नहीं होने दूँगा। उसपर बिलकुल कोई जिम्मेदारी न हो, यह अच्छा है। मैं तो अभी अच्छा ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
तारघरके पास
राजकोट

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १२२-३

१. सेगाँवका एक भंगी।

२१२. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

५ दिसम्बर, १९३८

चि० चिमनलाल,

मुझे लगता है, हमें दो गोशालाएँ नही करनी चाहिए। इसीका विस्तार हो, तो तुम्हारी तबीयत उसका बोझ सह लेगी। 'गोशाला हमें खा जायेगी' का अर्थ यह है कि यदि उसपर हमारा खर्च अधिकाधिक बढता जाये, और सारी जमीन ढोरोके लिए ही लग जाये, तो फिर हमारे लिए यही एक काम रह जायेगा। अत. मेरी सलाह है कि तुम, अमृतलाल, मुन्नालाल, पारनेरकर और बलवन्तसिंह इस विषयकी चर्चा करके अपना निर्णय मेरे सामने रखो। अन्ततः कितना खर्च हमें उठाना पड़ेगा? कोई अन्तिम सीमा निर्धारित कर लेना तो आवश्यक है ही। जिन ढोरोकी जरूरत न हो, उनका प्रबन्ध मैं कर सकता हूँ।

क्या अब हम दूध बिलकुल नही बढ़ा सकते? आसपाससे हम जो दूध लेते थे, वह क्या बन्द हो गया?

घी तो अब हम शायद किसीको नही दे सकेंगे?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५९५) से।

२१३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

५ दिसम्बर, १९३८

चि० अमला,

मेरे लिए तू मार्गरेट स्पीगल कभी नही होगी, सदा अमला ही रहेगी। तेरी तबीयत कैसी रहती है? किसी दिन तो आकर अपना चेहरा दिखा जा।

मैंने यहूदियोके बारेमे जो-कुछ लिखा था,[1] वह तूने पढा? क्या तुझे वह अच्छा लगा?

महादेवकी तबीयत ठीक होती जा रही है। फिलहाल वह सेगाँवमे ही रहता है। इस पत्रके साथ मेरे हस्ताक्षर हैं।

१. देखिए "यहूदी लोग", पृ० १५३-७।

यहाँ सब मजेमे हैं। कुत्ता चंगा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीसे. स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१४. पत्र: रामेश्वरी नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

प्रिय भगिनी,

तुमारे अगले खतका उत्तर प्यारेलालने भेजा है। राजगढका खत मेरे सामने है। खूब काम कर रही हो। खतो परसे मैं प्रवास वर्णन बना सकता हूँ इतना समय मेरे पास नही है। इसलिये प्रवास खतम होनेपर हरिजनके लिये एक विवरण भेज दो। हिंदीमे होगा तो इग्रेजीके लिये यहां बना लेंगे। इंग्रेजीमें भेजेगी तो ह० से० [हरिजन सेवक] के लिये बना लेंगे। प्रत्येक शहर और वहा जो हूआ सक्षेपमे दे दो।[1] भोपाल जो मागे भेजी है ठीक है। कुछ तो वहा होगा ही।

एक दिनके लिये देहरा [दून] होगा। काकासाहेब और बा भी वहा पहोचनेकी आशा रखते है।

बापाकी तबीयत अच्छी रहती होगी। और तुमारी भी।

कही कुछ पैसे इकट्ठे किये?

महादेव यहाँ है। ठीक चल रहा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८६) से। सी० डब्ल्यू० ३०८२ से भी; सौजन्य: रामेश्वरी नेहरू।

१. मध्य भारतमें रामेश्वरी नेहरूके दौरेका वृत्तान्त हरिजन में सात किस्तोंमें प्रकाशित हुआ था। यह वृत्तान्त हरिजन के १८-३-१९३९ के अंकसे प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ था।

२१५. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

चि० शर्मा,

तुमारा स्पष्ट खत मिला।

३० रु०[1] का टेब्लोइड मशीन लिया जाय। पैसे मैं दूंगा।

आजीविकाके बारेमे मुझे विश्वास नही है कि इस कामको अजाम पहुचा सकोगे। इसमें मेरा भय यह है कि किसी न किसी तरह तुमारा खर्च बढ जायगा। असली मुराद थी कि अत्यंत सादगीसे रहोगे वह छुट जाती है। व्यापार और परोपकार साथ-साथ नही चल सकते है। द्रोपदीके साथ बैठकर तुमारे अपने खर्चकी मर्यादा बना लेनी चाहीये और उससे आगे बढना ही नही ऐसा निश्चय कर लेना चाहीये। ऐसा किया जाय तो तुमारा मासिक खर्च किसी संस्थामे से निकाला जाय।

८५० रु० के कर्जाके बारेमें मै क्या कहू ? यह कर्जा करनेमें ही प्रारंभिक भूल हुई है। मै तो इतना ही कह सकता हूं कि कर्जा अदा होने[तक] सब परमारथको भूल जाना और किसी जगह ऐसी नोकरी लेना जिससे खर्च नीकले और कर्जा अदा हो सके। अगर घरमे कुछ जेवर या दूसरी मिल्कत है तो उसे बेचकर कर्जा अदा किया जाय। यह सख्त इलाज है लेकिन मेरा विश्वास है कि सच्चा इलाज भी यही है। दुबारा कभी कर्जा नही करना है। ये भी तय किया जाय।

तब प्रश्न हो जायगा जो काम उठाया है उसका क्या किया जाय। इस बारेमें मेरी बुद्धि नही चलती है। मेरे पास बैठ जानेकी बात तो मौजुद है ही लेकिन तुम समाजमे रहनेकी बरदास्त कर सकते है या नही सोचनेकी बात है।

छोटी बच्ची अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २७४-७५ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. यहाँ ३०० रु० के बजाय ३० रु० गलतीसे लिखे गये हैं।

२१६. पत्र : हरसरन वर्माको

सेगाँव, वर्धा
५ दिसम्बर, १९३८

भाई हरसरन वर्मा,

क्या आप चाहते है कि मै आपका खत श्री रणजित पंडितको भेजू?

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१) से।

२१७. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
६ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

आज तुम्हारा कोई पत्र नही आया है। इसके लिए तुमने मुझे तैयार कर ही रखा था।

आशा है लखनऊमे तुम्हारा वक्त उपयोगी काममे बीत रहा है। सरूप और जवाहरलालके बारेमे तुमसे पूरा समाचार मिलनेकी आशा रखूंगा। जवाहरलालसे तो तुम मुश्किलसे मिल पाओगी। अपनेको बहुत ज्यादा मत थका लेना।

मैं १० तारीखसे पहले श०[1]को कोई पत्र नही लिखूंगा।

मै अभी ठीक हूँ। महादेव भी ठीक है। बालकोबा कल अपनी एक्स-रे परीक्षा करवानेके लिए नागपुर जा रहे है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९७) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०५३ से भी।

१. शमशेरसिंह; देखिए "पत्र : अमृत कौरको" पृ० १०-१२-१९३८।

२१८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

६ दिसम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

संशोधित मसविदा भेज रहा हूँ।

आशा है; सतीशबाबूके प्रमाणपत्रसे तुम और मोटे नहीं हो जाओगे। किताब अभी तक छुई नहीं है। जो प्रतीक्षा करते हैं और सतर्क रहते हैं मृत्युसे पहले उन्हें उनके इस धैर्यका पुरस्कार मिल जाता है।

चावलके बारेमें तुम्हारा जवाब बहुत-कुछ मुझे पालिश किया चावल देनेका-सा है, जबकि मैंने बिना पालिशका चाहा था।[1] हमें यह दिखाना चाहिए कि बिना पालिशका चावल कैसे खाया जा सकता है और पूरा गाँव किस तरह कूटकर उसका छिलका उतार सकता है। अब बताओ, सेगाँवमें मैं क्या करूँ? इस सम्बन्धमें तुम्हें और गहरी खोज करनी होगी। तुमने जो बताया, वह नई चीज नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे कोई ऐसी चीज बताओ जो नई और प्रभावकारी हो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४२) से।

२१९. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

६ दिसम्बर, १९३८

चि० अमृतलाल,

आज तो 'गीता' अनेक सुरोंमें गाई गई। लीलावतीने जिस तरह गाया उसमें सुर नहीं था और तुम उसमें मिल नहीं सकते थे, तो तुम्हें उसे अकेले ही गाने देना चाहिए था। सुशीला भी कभी तुम्हारे सुरमें मिल जाती थी, तो कभी अलग पड़ जाती थी। नतीजा यह हुआ कि इतना बेसुरा गाना सुनकर मुझे पसीना आ गया। यह तो अच्छा हुआ, मुझमें थोड़ी गर्मी आई; लेकिन यो 'गीतामाता' का क्या हुआ? उन्हें कैसा लगा होगा?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८१) से।

1. देखिए "पत्र: जे० सी० कुमारप्पाको", पृ० १९७ भी।

२२० पत्र : विजया एन० पटेलको

सेगाँव
६ दिसम्बर, १९३८

चि० विजया,

यह पत्र तो मै कुछ लिखना चाहिए इसीलिए लिख रहा हूँ। तेरी तबीयत ठीक रहती है, यह भगवानकी दया है।

नारणभाई[1] की तबीयत ठीक होगी। आशा है, तू घबराती नही होगी। उनके खाने-पीनेका ध्यान रखती है न? वे अगर कुछ दिन केवल फलोंके रसपर रहे, तो जरूर फायदा हो। उनकी उम्रमें और कुछ खानेकी जरूरत कम ही रहती है। चायकी आदत हो, तो चाय केवल सूखे भूसेके रगकी होनी चाहिए, यानी छन्नीमे चायकी पत्तियाँ डालकर उसपर खौलता पानी धीरे-धीरे छोड़ा जाये और ऐसा करनेसे जितना रंग आये, उससे सन्तोष कर लिया जाये। चायकी पत्तियोको पानीमें कभी नही डुबोना चाहिए।

यहाँ सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०४) से। सी० डब्ल्यू० ४५९६ से भी; सौजन्य : विजयाबहन एम० पंचोली।

२२१. बातचीत : डी० ताकाओकाके साथ[2]

[७ दिसम्बर, १९३८][3]

यदि जापान भारतपर अपनी लालच-भरी निगाहे डालना बन्द कर दे तो यह हो सकता है। इसमे कोई सन्देह नही कि आप अपनी सेना तो भारतमे नही लाते है, परन्तु आप अपना माल भारतके बाजारोमे भरनेके लिए अपनी अद्वितीय कुशलता, सत्यको छिपानेकी अपनी योग्यता और भारतीयोकी कमजोरीकी जानकारीका इस्तेमाल करते है। और आपके मालमे प्राय बहुत हलके किस्मकी दिखावटी वस्तुएँ ही होती

१. विजया एन० पटेलके पिता।
२. महादेव देसाईके लेख "एक जापानी यात्री" से उद्धृत। ताकाओका जापानी संसदके सदस्य थे और यह जानना चाहते थे कि भारत और जापानके बीच मित्रता कैसे स्थापित हो सकती है।
३. बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१२-१९३८ के अनुसार।

है। शोषणमें आपने भारतके शासकोके तरीकोका ही अनुकरण नही किया है बल्कि आप एक कदम और आगे बढ गये है। अब जहाँ तक जापानी दृष्टिकोणका सम्बन्ध है, भारतसे मिलनेवाले लाखो रुपयोकी हानि आप सहन नही कर सकते। यदि आपको रुपया अपने-आप नही मिल जाता तो वह रुपया शस्त्रोकी सहायतासे भी लेनेकी सामर्थ्य आपमें है। परन्तु जापान और भारतको पास लानेका वह कोई तरीका नही होगा। उन्हे तो वह नैतिक बन्धन समीप ला सकता है जिसका आधार आपसी मित्रता हो।

परन्तु आज उस मित्रताके लिए कोई आधार नही है। आप अपनी कला ही को लीजिए। मै इसे पसन्द करता हूँ। बहुत साल पहले मैंने जापान और जापानी जीवनका एडविन आर्नोल्ड द्वारा लिखित एक बहुत मनमोहक विवरण पढा था। वह चित्र सदा मेरे सामने रहा है। मै आपके सभी अच्छे गुणोको आत्मसात् करना चाहता हूँ। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि जापानकी अच्छी चीजें देनेके लिए यहाँ कोई नही आता। आप हमपर केवल अपना माल लादनेमें विश्वास करते है। मैं एक गज भी जापानी कपड़ा, चाहे वह कितना ही बढिया और सुरुचिपूर्ण क्यो न हो, कैसे ले सकता हूँ? क्योकि उसका अर्थ होगा भारतके गरीब लोगोका भूखो मरना। आप राजनयकी निपुणता, कौशल, सस्ती चीजोके उत्पादन, सशस्त्र युद्ध और शोषणमे पश्चिमको बहुत पीछे छोड आये है। जब तक आपको शोषण करनेमें कोई बुराई नजर नही आती आपकी हमारे साथ मित्रता कैसे हो सकती है?

श्री ताकाओकाने जानना चाहा कि क्या गांधीजी जापानके नये दलको, जो "एशिया एशियावासियोंके लिए" के सिद्धान्तका समर्थक है, कोई सन्देश देंगे। गांधीजी ने कहा:

"एशिया एशियावासियोके लिए" इस सिद्धान्तका मतलब यदि यूरोप-विरोधी सगठन बनाना है तो मै इस सिद्धान्तसे सहमत नही हूँ। जब तक कि हम एशियाको कूप-मण्डूक ही न बने रहने देना चाहते हो तब तक 'एशिया एशियावासियोके लिए' यह नारा हमें मान्य नही हो सकता? लेकिन एशिया कूप-मण्डूक नही बना रह सकता। उसे ससार-भरको सन्देश देना है। परन्तु ऐसा तभी हो सकता है जब एशिया स्वय उस सन्देशका पालन करे। एशिया-भरमे, जिसमे भारत, चीन, जापान, बर्मा, श्रीलका और मलय राज्य है, बौद्ध प्रभावकी छाप है। मैंने बर्मावासियो और श्रीलका-वासियोसे कहा कि आप नाममात्रके ही बौद्ध है और भारत वास्तवमें बौद्ध है। वही बात मै चीन और जापानसे कहूँगा। परन्तु यदि एशियाको अपना ही नही, सारे विश्वका उत्थान वाछित है तो उसे बुद्धका सन्देश फिरसे सीखना होगा और फिर वह सन्देश ससारको देना होगा। आज सब जगह आचरणमे इस सन्देशको अस्वीकार किया जा रहा है। बर्मामें हर बौद्ध भिक्षुसे मुसलमान डरते है। परन्तु जो सच्चा बौद्ध है उससे किसीको डर क्यो लगना चाहिए?

इसलिए आप समझ जायेंगे कि आपको देनेके लिए मेरे पास इसके सिवा और कोई सन्देश नही है कि आप अपनी-अपनी पुरानी परम्पराके प्रति सच्ची निष्ठा रखें।

सन्देश २,५०० वर्ष पुराना है परन्तु अभी तक इसको जीवनमें सच्चे तौरपर नही उतारा गया है। २५०० वर्ष क्या होते है? अहिंसाके पूर्ण पुष्पको, जो मुरझाता हुआ प्रतीत हो रहा है, अभी पूर्णत· विकसित होना है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१२-१९३८

२२२. जर्मन आलोचकोंको जवाब

यहूदियोके प्रति जर्मनोके बरतावसे सम्बन्धित मेरे लेख[१] पर जर्मनीने जो रोप जाहिर किया है उसके लिए यह बात नही कि मैं तैयार नही था। यूरोपकी राजनीतिके बारेमें अपनी अज्ञानता तो मैं खुद ही स्वीकार कर चुका हूँ। पर यहूदियोको उनकी बहुत-सी मुसीबतोको दूर करनेके उपाय सुझानेके लिए मुझे यूरोपीय राजनीतिके सही ज्ञानकी जरूरत भी नही थी। उनपर जो जुल्म हुए है, उनके बारेमे मुख्य तथ्य बिलकुल निर्विवाद है। मेरे लेखपर पैदा हुआ रोष जब दब जायेगा और थोडी शान्ति हो जायेगी, तब अत्यन्त क्रुद्ध जर्मनको भी यह मालूम हो जायेगा कि मेरे लेखकी तहमे जर्मनीके प्रति मित्रताकी ही भावना थी, द्वेषकी भावना हरगिज नही।

क्या मैंने बार-बार यह नही कहा है कि विशुद्ध प्रेम-बन्धुत्वकी भावना ही सक्रिय अहिंसा है? यदि यहूदी लाचारी और आवश्यकतावश अहिंसाको ग्रहण करनेके बजाय सोच-समझकर सक्रिय अहिंसा, यानी गैर-यहूदी जर्मनोके प्रति बन्धुत्वकी भावनाको अपना ले, तो वे जर्मनोको कोई हानि नही पहुँचा सकते और मुझे पूरा विश्वास है कि जर्मनोका पत्थर दिल भी पसीज जायेगा। संसारकी प्रगतिमे यहूदियोंकी बहुत बड़ी देन रही है, परन्तु उनका यह महान कार्य उनकी सबसे बडी देन होगी और युद्ध एक अतीतकी चीज बन जायेगा।

यह बात मेरी समझमे ही नही आती कि मेरे उस बिलकुल निर्दोष लेखपर कोई जर्मन क्यो नाराज हो? निस्सन्देह, जर्मन आलोचक भी, दूसरोकी तरह, यह कहकर मेरा मजाक उडा सकते थे कि यह तो केवल एक स्वप्नदर्शीका प्रयत्न है, जिसका असफल होना निश्चित है। इसलिए मैं उनके इस रोषका स्वागत ही करता हूँ, हालाँकि मेरे लेखपर उनका यह रोष बिलकुल नामुनासिब है। क्या मेरे लेखका कोई असर हुआ है? क्या लेखकको यह लगा है कि मैंने जो उपाय सुझाया है, वह ऊपरसे जैसा हास्यास्पद लगता है असलमें वैसा हास्यास्पद नही है बल्कि बिलकुल व्यावहारिक है, बशर्ते कि बदलेकी भावना जिसमें नही है, ऐसे कष्टसहनके सौन्दर्यको हम समझ ले?

मैंने ये लिख लिखकर अपनी, अपने आन्दोलनकी और जर्मन-भारतीय सम्बन्धोकी कोई भलाई नही की है, इस कथनमे धमकी भरी हुई है, और इसलिए यह कथन अनुचित न भी हो तो अप्रासगिक तो जरूर है। जिसे मैं अपने अन्तरतममे सौ फीसदी

१. देखिए "यहूदी लोग", पृ० १५३-७।

सही सलाह समझता हूँ, उसे देनेमें यदि मैं इस डरसे पसोपेश करूँ कि इससे मेरे देशपर या मुझपर या जर्मन-भारतीय सम्बन्धोंपर कोई आँच आ सकती है तो मुझे अपनेको कायर ही समझना चाहिए।

बर्लिनके लेखकने निश्चय ही यह एक अजीब सिद्धान्त निकाला है कि जर्मनीसे बाहरके लोगोंको जर्मन-कार्रवाईपर टीका-टिप्पणी नहीं करनी चाहिए, उनका उद्देश्य अत्यन्त मैत्रीपूर्ण हो तब भी उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। जर्मन या दूसरे बाहरी लोग यदि हिन्दुस्तानियोंके बारेमें हमें दिलचस्प बातें बतलायें, तो अपनी तरफसे मैं निश्चय ही उनका स्वागत करूँगा। अंग्रेजोंकी ओरसे मुझे कुछ कहनेकी कोई जरूरत नहीं है। लेकिन ब्रिटिश लोगोंको अगर मैं थोड़ा भी जानता हूँ तो वे भी ऐसी बाहरी आलोचनाका, जो अच्छी जानकारीके साथ की जाये और द्वेषसे मुक्त हो, स्वागत ही करते हैं। इस युगमें, जबकि दूरियाँ मिट रही हैं, कोई भी राष्ट्र 'कूपमण्डूक' बनकर नहीं रह सकता। कभी-कभी तो दूसरोंके दृष्टिकोणसे अपनेको देखना बड़ा लाभकारक होता है। इसलिए अगर जर्मन आलोचकोंकी नजर मेरे इस जवाबपर पड़े, तो मैं उम्मीद करता हूँ कि वे न केवल मेरे लेखके बारेमें अपनी राय ही बदल देंगे, बल्कि बाहरी आलोचनाके महत्वको भी महसूस करेंगे।

सेगाँव, ८ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१२-१९३८

२२३. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुन्शीको

८ दिसम्बर, १९३८

भाई मुन्शी,

चक्कीके बारेमें प्यारेलालको तुम्हें जवाब लिखे कई दिन हो गये। शायद वह पत्र कहीं भटक गया। मशीनी चक्कियोंका उपयोग तुम जेलोंमें कर सकते हो।

बुद्ध मन्दिरका काम शिथिल किये बिना धर्मानन्द कोसाम्बी[1] भारतीय विद्या भवनका काम कर सकते हो, तो अवश्य करें।

मिनिस्ट्री अगर लम्बे समय तक चली,[2] तो तुम्हें घर छोड़नेके साथ और भी अनेक मोह छोड़ने पड़ेंगे। तुम्हारे खिलाफ शिकायत है कि तुम अपनी शक्तिसे अधिक काम करके अपना स्वास्थ्य बर्बाद कर रहे हो। तुम्हें यह मोह भी छोड़ना पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६४२) से; सौजन्य : क० मा० मुन्शी।

१. पाली भाषाके एक प्रसिद्ध विद्वान।
२. क० मा० मुन्शी बम्बई प्रान्तके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलमें गृहमन्त्री थे।

२२४. पत्र : दामोदरदास मूँदड़ाको[1]

८ दिसम्बर, १९३८

भाई दामोदर[2],

दोनो उत्तर बहुत लम्बे है। लेकिन लम्बे या छोटे भजनेकी आवश्यकता नही। मेरी जानकारीके लिए ठीक है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० १०१५४ से, सौजन्य : सचिव, आन्ध्र प्रदेश राज्य समिति, सम्पूर्ण गाधी वाड्मय, हैदराबाद।

२२५. आलोचनाओंका जवाब

कुछ मित्रोने मेरे पास अखबारोकी दो कतरने भेजी है, जिनमे यहूदियोके नाम मेरी अपीलकी आलोचना की गई है। दोनों आलोचकोका कहना है कि यहूदियोंके साथ जो अन्याय हो रहा है उसके प्रतिकारके लिए अहिंसाका उपाय सुझाकर मैंने कोई नई बात उनके सामने नही रखी है, क्योकि पिछले दो हजार वर्षोंसे वे अहिंसाका ही तो पालन कर रहे है। जाहिर है कि इन आलोचकोंको मैं अपना आशय स्पष्ट नही कर पाया हूँ। जहाँ तक मै जानता हूँ, यहूदियोने अहिंसाको अपना धर्म-सिद्धान्त, या सुविचारित नीति भी बनाकर उसका पालन कभी नही किया। वस्तुत उनके ऊपर यह कलक लगा हुआ है कि उनके पूर्व-पुरुषोनें ईसामसीहको सूली दी थी। क्या यह नही माना जाता है कि वे "जैसेके साथ तैसे" की नीतिमे विश्वास करते है? अपने ऊपर अत्याचार करनेवालोके प्रति क्या उनके दिलोमे हिंसाका भाव नही है? क्या वे यह नही चाहते कि उनपर हो रहे अत्याचारके लिए तथाकथित लोकतन्त्रात्मक राष्ट्र जर्मनीको दण्ड दे और उन्हे उसके अत्याचारसे मुक्त करे? अगर वे ऐसा चाहते है, तो उनके दिलोमे अहिसा नही है। उनके अन्दर तथाकथित -अहिंसा हो भी, तो वह कमज़ोर और असहायोकी अहिंसा है।

मैंने जिस बातपर जोर दिया है वह तो यह है कि दिलसे भी हिंसा निकाल दी जाये और इस महान त्यागसे उद्भूत शक्ति काममे लाई जाये। एक आलोचक

१. दामोदरदास मूँदड़ा द्वारा भेजे हुए पत्रके पीछे गांधीजी ने यह पत्र लिख दिया था। उसी पत्रके साथ पद्मजा नायडूसे प्राप्त एक पत्र और उसका जवाब तथा जमनालाल बजाजसे प्राप्त एक पत्र भी था।

२. जमनालाल बजाजके सचिव।

का कहना यह है कि अहिंसाको कार्यान्वित करनेके लिए उसके पक्षमें लोकमतका होना जरूरी है। स्पष्टतया ऐसा लिखते हुए उसके खयालमे अनाक्रामक प्रतिरोध ही है, जिसे कमजोरोका शस्त्र समझा जाता है। लेकिन मैंने कमजोरोके निष्क्रिय प्रतिरोध और बलवानोके सक्रिय अहिंसात्मक प्रतिरोधमे फर्क रखा है। इसमे से दूसरा भयकर-से-भयकर विरोधके बावजूद काम कर सकता है और करता है। लेकिन वह अधिक-से-अधिक सार्वजनिक सहानुभूति जगाता है। हम यह जानते है कि अहिंसात्मक रूपमें कष्ट-सहन करनेसे सगदिल भी पसीज जाते है। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि यहूदी अगर उस आत्म-शक्तिकी मदद पा सके जो केवल अहिंसासे प्राप्त होती है, तो हिटलर उनके ऐसे साहसके सामने, जैसा उसने मनुष्योमे बड़े पैमानेपर अभी तक कभी नही देखा है, सिर झुका देगा और वह तब यह स्वीकार कर लेगा कि वह उसके सर्वोत्तम तूफानी दस्तोकी वीरतासे भी बढकर है। ऐसा साहस केवल वही दिखा सकते है जिनका कि सत्य और अहिंसा अर्थात् प्रेमके ईश्वरमे जीता-जागता विश्वास हो।

निस्सन्देह आलोचक यह दलील दे सकते है कि मैंने जिस अहिंसाका चित्रण किया है वह सर्वसाधारण मनुष्योके लिए सम्भव नही है, बल्कि सिर्फ बहुत थोडेसे, बहुत विकसित मनुष्योके लिए ही सम्भव है। लेकिन मैंने इस विचारके खिलाफ हमेशा यह कहा है कि उपयुक्त प्रशिक्षण और नेतृत्व मिलनेपर सर्वसाधारण भी अहिंसाका पालन कर सकते है।

फिर भी मैं यह देखता हूँ कि मेरे कहनेका यह गलत अर्थ लगाया जा रहा है, क्योकि मैंने पीडित यहूदियोको अहिंसात्मक प्रतिरोधकी सलाह दी है, इसलिए लोक-तन्त्रात्मक राष्ट्रोसे मै इस बातकी आशा करता हूँ अथवा उनको मैं सलाह दूंगा कि वे यहूदियोकी ओरसे हस्तक्षेप न करे। मुझे इस आशकाका जवाब देनेकी जरूरत नही है। मेरे कुछ कहनेसे ही बडे-बडे राष्ट्र कोई कार्रवाई करनेसे रुक जायेगे, ऐसा निश्चय ही कोई खतरा नही है। यहूदियोको अमानुषिक अत्याचारोसे मुक्त करनेके लिए जो-कुछ वे कर सकते है वह तो वे करेगे ही, क्योकि ऐसा करनेके लिए वे बाध्य है। मेरी अपीलका जोर तो इस बातमें है कि बडे राष्ट्र अपनेको प्रभावकारी ढगसे यहूदियोकी मदद करनेमे असहाय महसूस कर रहे है। इसलिए मैंने यह उपाय पेश किया है, जो अगर ठीक ढगसे अपनाया जाये तो मेरी समझमें अचूक रहेगा।

मगर इस सम्बन्धमे जो सबसे सगत आलोचना मुझे मिली वह यह है जब मै यह जानता हूँ कि हिन्दुस्तानमे ही, जहाँ कि मै खुद काम कर रहा हूँ और जहाँ मै अपनेको स्वयनियुक्त सेनापति कहता हूँ, इस नुस्खेको पूर्णतया स्वीकार नही किया गया है, तो फिर यहूदियो द्वारा इसे स्वीकार करनेकी आशा कैसे की जा सकती है? मेरा जवाब यह है कि वे लोग सौभाग्यशाली है जो किसी बातकी आशा नही करते। कम-से-कम इस मामलेमे मै उन्हीकी श्रेणीमे हूँ। यह नुस्खा पा जाने और इसके असरके बारेमे निस्सशय हो जानेपर मुझे ऐसा लगा कि जिन मामलोमे इसे प्रभाव-कारी ढगसे प्रयुक्त किया जा सकता है, उनमे यदि मै लोगोका ध्यान इसकी तरफ न खीचूं, तो वह मेरी गलती होगी।

अभी तक यूरोपकी राजनीतिकी चर्चासे मै बचता ही रहा हूँ। मेरी सामान्य स्थिति अब भी वही है। अबीसीनियाके मामलेमे मैने यह उपाय लगभग दबी हुई आवाजमे पेश किया था। चेको और यहूदियोका मामला मेरे लिए अबीसीनियोके मामलेसे अधिक स्पष्ट था। इसलिए मै इस बारेमे लिखे बगैर न रह सका। डॉ० मॉटने उस दिन मुझसे शायद यह ठीक ही कहा था कि चेको और यहूदियोके बारेमें मैने जैसे लेख लिखे है वैसे मुझे ज्यादा-से-ज्यादा लिखने चाहिए, क्योकि और कुछ नही तो उनसे मुझे हिन्दुस्तानकी लडाईमे तो मदद मिलेगी ही। उन्होने कहा था, अहिंसाका सन्देश सुननेके लिए पाश्चात्य राष्ट्र जितने इस समय तैयार है, उतने पहले कभी नही थे।

सेगाँव, ९ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१२-१९३८

२२६. लाल फीता

एक प्रमुख भारतीय मित्रने, श्री खेर और श्री मुन्शीको सरकारी काममे जी-तोड़ मेहनत करते देखकर, मुझसे एक दिन कहा कि इस मेहनतका उनके स्वास्थ्यपर इतना बुरा प्रभाव पडा है कि उनकी उम्र वास्तविक उम्रसे अधिक मालूम पडती है। उन्होने मुझे यह चेतावनी भी दे दी कि यदि मैने उन दोनोको इतना ज्यादा काम करनेसे मना न किया, तो देश उनके जीवनसे हाथ धो बैठेगा। काश! मेरा उन दोनो मन्त्रियोपर वही प्रभाव होता जिसका कि इन मित्रने मुझे गौरव दिया है। अगर मुझे उनपर इस तरहका अधिकार होता तो निश्चय ही मै उन्हे इस तरह तिल-तिलकर आत्मघात करनेसे रोक देता। जो-कुछ इन दो मन्त्रियोपर लागू होता है, वही बाकी मन्त्रियोपर भी लागू होता है। इस बातचीतके कुछ ही दिन बाद मेरे पास एक आई० सी० एस० अफसर आया जिसे श्री खेरने एक खास जिम्मेदारी दे रखी है। उसने मुझसे कहा, "मै श्री (वैसे उसने 'मिस्टर' शब्द इस्तेमाल किया था) खेरकी आशाएँ पूरी करना चाहता हूँ। लेकिन मै नही जानता कि उन्हे कैसे सन्तुष्ट करूँ। मेरा विश्वास है कि मै सदा जागरूक और मसरूफ रहा हूँ। लेकिन जबसे कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बना है, हमारा काम बढ गया है। मन्त्री न स्वय आराम करते है और न हमे करने देते है। परिणाम यह हुआ है कि फाइलोका पहाड़ लगता जा रहा है। दिनके दिन काम निपटा देना प्राय. असम्भव हो गया है। और अब मुझे ऐसा काम सौपा गया है जिसमे बहुत-कुछ सोचने और विचार करनेकी जरूरत है। मेरे लिए समस्याओका अध्ययन जरूरी है। लेकिन मुझे यह समझमे नही आता कि मै इन फाइलोका क्या करूँ।" मैने तुरन्त ही उत्तर दिया, "जला डालो।" मेरा अभिप्राय भी यही था।

इस दूसरे मुलाकातीके वाद ही एक समाजवादी मित्र पहुँचे। उन्होने कहा "हमारे सम्बन्धमे वहुत गलतफहमी है। हमारे 'वाक आउट' पर आपने जो लेख प्रकाशित किया है[1] उसने उस गलफहमीको और वढा दिया है। मै आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि हम रचनात्मक आलोचनाके अपने अधिकारको सुरक्षित रखते हुए, काग्रेस और मन्त्रियोके काममे रोडा अटकाना नही चाहते — वल्कि सहायता ही करना चाहते है। आप हमारी कठिनाइयोकी तरफ भी देखिए। कराची-काग्रेसका प्रस्ताव[2] और काग्रेसका घोषणापत्र[3] मौजूद ही है। हम ईमानदारीसे यह महसूस करते है कि आर्थिक सहायताके वारेमे उनमे जो वायदे किये गये थे, उनका पूरी तरह पालन नही हो रहा है। काग्रेसी मन्त्रियोकी कठिनाइयोकी गम्भीरताको मै घटाना नही चाहता हूँ। लेकिन खाली सोचते रहनेसे ही तो समस्याका निपटारा नही हो सकेगा। ऐसी शक्तियाँ काम कर रही है जिन्हे कोई रोक नही सकता। परिस्थितिसे लाभ उठाकर सर्वसाधारणको काग्रेसके विरुद्ध भडकाया जा रहा है। सर्वसाधारणके पास मतकी शक्ति है। उन्हे अपनी इस शक्तिका ज्ञान होता जा रहा है। अगर हमने परवाह न की, तो एक दिन ऐसा भी आ सकता है जव काग्रेस सर्वसाधारण पर अपना प्रभाव, चाहे अस्थायी रूपसे ही सही, गँवा वैठेगी।"

आमतौरपर मै इन मित्रकी वातोसे सहमत हूँ। मैने उनसे कहा . "मै इस असन्तोप का कारण स्पष्ट रूपसे समझता हूँ। आपका एक अपना दर्शन है। आजके काग्रेसी मन्त्रि-मण्डल समाजवादी नही है। उन्हे 'गाधीवादी' समझा जाता है, चाहे इसका कुछ भी अर्थ हो। आपका कार्यक्रम तो बिलकुल स्पष्ट है। आपके पास ऐसा साहित्य मौजूद है जो आपका पथ-प्रदर्शन कर सकता है। लेकिन गाधीवादीमे क्या तात्पर्य है, यह मै स्वय नही जानता। मेरी नाव अज्ञात समुद्रमे वह रही है। मुझे वीच-वीचमें गहराई नापनी होती है। जव मेरी ही यह शोचनीय स्थिति है, तो मन्त्रियोकी हालत तो और भी खराव होनी चाहिए। वे 'लाल फीते' से इस तरह जकडे हुए है कि उन्हे सोचने-विचारनेका समय ही नही मिलता। उन्हे तो इतनी भी फुर्सत नही कि वे मुझसे मुलाकात करे और विचार-विनिमय करे। और इससे भी वुरी वात यह है कि उनकी हालत जानते हुए मुझे भी यह हिम्मत नही होती कि उन्हे पत्र ही लिख दूँ। 'हरिजन' के स्तम्भो द्वारा तो मुझे उनसे वात करनी ही नही चाहिए।"

मैने पिछले अनुच्छेदमे वहुत-सी वातोकी चर्चा की है, पर मेरा खास उद्देश्य तो 'लाल फीते' पर विचार करना है। अगर मन्त्री अपनी नई जिम्मेदारियोसे निपटना चाहते है, तो उन्हे 'लाल फीते' को जला डालनेका ढग खोजना चाहिए। पुरानी व्यवस्था 'लाल फीते' से ही और उसीके आधारपर वनी रह सकती है। यह नई व्यवस्थाका दम घोट देगी। मन्त्रियोको उन लोगोसे जरूर मिलना चाहिए जिनकी

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४११-४।
२. देखिए खण्ड ४५, पृ० ३९२-३।
३. देखिए खण्ड ६५, परिशिष्ट ३।

सद्भावनासे वे इन पदोपर आसीन रह सकते है। उन्हे छोटी-से-छोटी और बडी-से-बडी शिकायत सुननी चाहिए। लेकिन उन्हे उन सबकी और अपने पास आनेवाले पत्रो और अपने फैसलोकी फाइले रखनेकी जरूरत नही है। उन्हे अपने पास केवल इतने कागजात ही रखने चाहिए जिनसे उनकी याददाश्त ताजी रहे और कामका सिलसिला बना रहे। विभागीय पत्र-व्यवहार बहुत कम हो जाना चाहिए। मन्त्री इडिया ऑफिसके प्रति जवाबदेह नही है, जो यहाँसे कई हजार मीलकी दूरीपर है। वे तो अपने उन लाखो मालिकोके आगे जवाबदेह है, जो न तो यह जानते है कि 'लाल फीता' क्या है और न उन्हे उसके जाननेकी फिक्र ही है। उनमे से कितने ही तो लिख और पढ भी नही सकते। पर उनकी मुख्य आवश्यकताएँ पूरी होनी चाहिए। काग्रेसियोने उन्हे यह सोचना सिखा दिया है कि शासन-सूत्र काग्रेसके हाथमे आते ही हिन्दुस्तान-भरमे न कोई भूखा रहेगा, न कोई नगा। मन्त्री यदि उस दायित्वके साथ जो उन्होने अपने ऊपर लिया है न्याय करना चाहते है तो उन्हे अपना समय और दिमाग इसी किस्मकी समस्याओको सुलझानेमे लगाना चाहिए। अगर वे तथाकथित 'गाधीवादी' है तो उन्हे गाधीवादको समझनेके लिए अपनी अन्तरात्माको टटोलना चाहिए, उसके लिए मेरे पास आनेकी जरूरत नही है। मै भी हमेशा यह नही जान पाता कि वह क्या है। लेकिन मै इतना जरूर जानता हूँ कि अगर उसकी ठीक तरहसे तलाश की जाये और उसका अनुसरण किया जाये, तो वह इतना मौलिक और क्रान्तिकारी है कि भारतकी सभी वास्तविक आवश्यकताओको पूरा कर सकता है। काग्रेस एक क्रान्तिकारी सस्था है। पर उसकी क्रान्ति ससारकी उन सभी राजनीतिक क्रान्तियोसे भिन्न होनी है जिनका विवरण इतिहासमे लेखबद्ध है। पिछली क्रान्तियोका आधार जहाँ हिंसा था, वहाँ काग्रेसकी क्रान्तिका आधार जान-बूझकर अहिंसात्मक रखा गया है। अगर यह भी हिंसात्मक होती, तो शायद पुराने ढग और तरीके बहुत-कुछ उसी तरह कायम रह जाते। लेकिन काग्रेसके लिए बहुत-से पुराने ढग और तरीके वर्जित है। सबसे महत्वपूर्ण पुलिस और फौज है। मैने यह तो मान लिया है कि जब तक काग्रेसी पदासीन है और व्यवस्था कायम रखनेके लिए वे शान्तिपूर्ण उपाय नही खोज पाते, तब तक वे इन दोनोका इस्तेमाल करनेके लिए बाध्य है। लेकिन मन्त्रियोके सामने सदा यह सवाल रहना चाहिए कि क्या पुलिस और फौजका इस्तेमाल अनिवार्य है? अगर हाँ, तो क्यो? अगर जाँच करनेपर भी — पुराने ढगसे नही, वह तो बहुत महँगा और प्राय व्यर्थ सिद्ध हुआ है, बल्कि बिना खर्च किये लेकिन पूरी तरह और कारगर ढगसे जाँच करनेपर भी — उन्हे यह लगे कि हम पुलिस और फौजकी सहायताके बगैर राजकाज नही चला सकते, तो अहिंसाका यह तकाजा है कि कांग्रेसको मन्त्रि-पद त्याग देना चाहिए और दुर्लभ 'अमृतकलश' की तलाशमें फिर निकल पड़ना चाहिए।

सेगाँव, ९ दिसम्बर, १९३८

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१२-१९३८

२२७. पत्र : अमृत कौरको

सेगांव, वर्धा
९ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

यह पत्र जालन्धरके पते पर जा रहा है। तुम्हारे पत्र मुझे मिल गये। पंतजीसे तुम्हारी बातचीत हो गई इसकी मुझे खुशी है। भ्रष्टाचारका मामला इतना गम्भीर होता जा रहा है कि नजरन्दाज नहीं किया जा सकता। अगली बैठकमें मैं इस पूरे मामलेपर विचार-विमर्श करनेवाला हूँ।

महादेव ठीक है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९८) से; सौजन्य. अमृत कौर। जी० एन० ७०५४ से भी।

२२८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

९ दिसम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

२० दिसम्बरके बाद जो भी दिन[1] चाहो निश्चित कर लो और मुझे उसकी सूचना दे दो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४४) से।

१. अ० भा० चरखा संघ परिषद्की बैठकके लिए।

२२९. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
९ दिसम्बर, १९३८

चि० मीरा,

यही बतानेके लिए एक पंक्ति लिख रहा हूँ कि यहाँ सब ठीक है। म्यूरियल और डॉरोथी आज सुबह आई थी। मेरी भी यहाँ है। कुछ ही दिनोमे शान्ताका विवाह एक भारतीयसे लन्दनमे हो जायेगा। वह प्रसन्न है और उसे आशा है कि वह पतिके साथ वापस लौट आयेगी।

सरदार और जयरामदास भी यहाँ है।

आशा है कि वहाँकी सर्दी तुम्हारे लिए बहुत कडी साबित नही होगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२०) से, सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० १००१५ से भी।

२३०. पत्र : लीलावती आसरको

९ दिसम्बर, १९३८

चि० लीला,

आजके किस्सेसे मुझे बहुत दु ख हुआ है। लेकिन अपने स्वभावके विरुद्ध तू करती भी क्या?

वैसे यह पत्र लिखनेका प्रयोजन कुछ और है। मै समझ गया हूँ कि सु०[1] जो मेरे साथ सोती है, यह तू और अमतुस्सलाम बर्दाश्त नही कर सकती, कारण चाहे जो हो। तुम दोनोको अप्रसन्न करके मैं अपना प्रयोग नही करना चाहता, इसलिए तुम दोनो जान लो कि फिलहाल मेरा प्रयोग बन्द रहेगा। इसमे तुम्हारा दोष नही है। दोष मैं केवल अपना ही मानता हूँ। लेकिन इस सम्बन्धमे मुझे तुम्हारे साथ चर्चा नही करनी, न तुमसे कोई कैफियत लेनी है। मैने तो तुम्हे केवल सूचना दी है।

यह पत्र अमतुस्सलामको दिखा देना।

बापूके आशीर्वाद

१. नाम नही दिया गया है।

[पुनश्च]

यह पत्र सवेरे ही लिखकर देना था, लेकिन समय ही नही मिला।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७९४) से, सौजन्य लीलावती आसर

२३१. पत्र: कृष्णचन्द्रको

९ दिसम्बर, १९३८

चि० कृ० चं०,

ध्यानावस्थित पूर्णतया हो सके तो सबसे अच्छा ही है। उसका अर्थ यह हूआ कि जिसपर हमारी श्रद्धा है वह देहातीत हो गया है। उसकी चेष्टा क्या देखे जिसने देह छोड दिया है? लेकिन मै ऐसा कहाँ हो पाया हूँ। इसलिए कान तत्र बन्द हो जानेका मौका नही आ सकता है। यह कृत्रीम क्रिया नही है। तुमारे तो पूर्णतया ध्यानावस्थित होनेका प्रयत्न करना है। मेरी चेष्टा तो देख ही लेते हो। उसमे कुछ नही भरा है। मै बहूत अपूर्ण मनुष्य हू। असहिष्णुता मेरेमे काफी पाता हू। क्रोध भी ऐसा ही है। इन सब चीजोको दबा सकता हू। लेकिन यह तो कुछ भारी बात न हूई।

कातते समय ध्यान तकलीके सूतमे ऐसा समजो कि वह ईश्वर कराता है और प्रत्येक ततुमे वह छिप कर बैठा है। उसका दर्शन अतरचक्षुसे करो।

कातना जिसको गौण मानते हो वही प्रधान वस्तु बन जायगी। सत्याग्रहीकी भाषामे साधन साध्यका अभेद बन जाता है।

हलन चलन देखना विपयासक्ति तो है ही यह बात अब तो समजमे आनी चाहीये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४५६६) से। एस० जी० ७१ से भी।

२३२. अ० भा० ग्रामोद्योग संघ प्रशिक्षण विद्यालय

इस प्रशिक्षण विद्यालयके दीक्षान्त-समारोहकी रिपोर्टसे मैं अधोलिखित चनता हूँ[१]

अ० भा० ग्रा० सं० के ग्राम कार्यकर्ता प्रशिक्षण विद्यालयका सत्रीय अधिवेशन बृहस्पतिवार, १७ नवम्बरको मगनवाड़ी, वर्धामें हुआ जिसकी अध्यक्षता सरदार वल्लभभाई पटेलने की।. . .सुपरिटेंडेंट श्रीयुत जे० पी० पटेल. . .ने अध्यक्ष और अतिथियोंका स्वागत करते हुए अन्य बातोंके अलावा यह कहा:

". . .इस समय जो उद्योग सिखाये जाते है वे हैं—कागज बनाना, तेल निकालना, मधु-मक्खी पालन, गुड़ बनाना, धानकी कुटाई और आटा पीसना। विद्यालयका पाठ्यक्रम पाँच मासका है।. . .

"ग्रामीण अर्थशास्त्र, वही-खाता और स्वास्थ्य व सफाईकी भी शिक्षा दी जाती है।. . .

"विद्यार्थियोंको प्रविष्ट करनेमें हमारा मुख्य उद्देश्य यह रहता है कि वे यहाँका पाठचक्रम पूरा करनेके बाद अपनेको पूर्णतया किसी-न-किसी प्रकारकी ग्राम-सेवामें लगा दें।. . .

"शिक्षा राष्ट्रभाषाके माध्यमसे दी जाती है।. . ."

यहाँके प्रबन्धकोको मैं यह सलाह देना चाहूँगा कि वे यहाँसे निकलनेवाले सभी विद्यार्थियोका एक रजिस्टर रखे, ताकि उनके साथ जीवन्त सम्पर्क रखा जा सके और उनकी एक प्रकारकी स्नातकोत्तर पत्राचार कक्षा चलाई जा सके। किसी भी विद्यार्थीको यथासम्भव फिरसे पुराने ढर्रेपर नही पड़ना चाहिए और न ही प्रगति न कर सकनेपर हताश ही होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १०-१२-१९३८

१. यहाँ कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

२३३. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१० दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

आशा है कि मेरे सभी पत्र तुम्हे मिल गये होंगे। ज० ला० और मौलाना कल रात आये। अध्यक्षताके प्रश्नपर ही हमारी ढाई घंटे बातचीत हुई। सुभाष शामको जरूर आ गये होंगे।

आशा है, तुम्हें अपनी मटरगश्तीसे कोई नुकसान नही पहुँचा होगा। शम्मीको मेरा पत्र आज जायेगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३८९९) से, सौजन्य . अमृत कौर। जी० एन० ७०५५ से भी।

२३४. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

१० दिसम्बर, १९३८

चि० अमृतलाल,

आज अचानक कानमके नख देखे। देखना, कितने गन्दे है! उसके नख, कान, दाँत वगैरहकी सफाईके लिए शिक्षक जिम्मेदार है न? वह अभी तक रामधुनमें भी भाग नही लेता। ऐसा क्यो? उसकी योग्यता तो अब भजन गानेकी भी होनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८२) से।

२३५. पत्र : प्रभावतीको

सेगाँव, वर्धा
१० दिसम्बर, १९३८

चि० प्रभा,

तेरा और जयप्रकाशका, दोनो पत्र मिले।

बारडोली पहली जनवरीको जाना है। आ सको तो दोनो वहाँ आना।

तेरे हाथका इलाज भाप, कटिस्नान तथा दूध और फलकी खुराक है। बारडोली आई तो अच्छा कर दूँगा।

बा शायद राजकोट जायेगी। महादेव अच्छा है। जयप्रकाशसे कहना, मेरी इच्छा है कि वह कुछ दिन मेरे साथ बिताये। हम दोनो एक-दूसरेको ठीक समझ ले, ऐसी मेरी तीव्र इच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५२५) से।

२३६. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

१० दिसम्बर, १९३८

त्रावणकोर राज्य-कांग्रेसके अध्यक्षकी अनुमति प्राप्त कर लेनेके बाद अब मैं लोगोको यह बता सकता हूँ कि १३ और १४ नवम्बरको मुझसे जिस शिष्टमण्डलने भेट की थी[1] उसे मैंने क्या सलाह दी थी। मैंने उनसे यह कहा था कि यदि वे दीवानके खिलाफ अपने आरोपो पर अडे रहते है तो इससे उनके वास्तविक उद्देश्यको हानि पहुँचेगी और असली सवाल यह नही है कि उक्त आरोप[2] सही है या नही। सवाल सही राजनीतिक दृष्टिका है। त्रावणकोरकी जनता जो संघर्ष चला रही है उसके विषयमें राज्य-सरकारका कहना यह था कि संघर्ष वैयक्तिक है। उत्तरदायी सरकारकी माँगसे संघर्ष वैयक्तिक नही रहा, उसका स्तर ऊँचा हो गया। मैं ऐसे किसी संघर्षमें सहयोग नही कर सकता था जो स्वराज्यकी महत्वपूर्ण बातको तो छोड दे और अपना समय और शक्ति एक वैयक्तिक मामलेका निपटारा करानेमें खपाता

१. शिष्टमण्डल वस्तुत: गांधीजी से १५ तारीखको मिला था, देखिए पृ० १४६-९।
२. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४३०-२ भी।

रहे। अगर लड़नेवालोका सारा ध्यान आरोपो पर ही केन्द्रित रहा तो उत्तरदायी सरकारके सवालकी उपेक्षा होना अनिवार्य है।

अपनी रायके सही होनेमे मेरा विश्वास अडिग था, किन्तु मैंने उनसे कह दिया था कि अगर उनकी राय मेरी इस रायसे भिन्न हो तो उन्हें अपने ही विश्वासके अनुसार चलना चाहिए, क्योकि सघर्ष चलानेका भार तो उन्हीको उठाना है। मैंने उनसे यह भी कहा था कि अगर हिंसाकी घटनाएँ होती रहे तो वे कैसे हुई, इसका विचार किये बिना उन्हे सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित कर देना होगा क्योकि जनता द्वारा की गई हिंसा, वह किसीके इशारेपर की गई हो तो भी, यह बताती है कि जनतापर राज्य-काग्रेसका पर्याप्त प्रभाव नही है। सविनय अवज्ञाके स्थगित होनेका मतलब सघर्षका स्थगित होना नही है। उसका इतना ही अर्थ है कि हम अपने विभिन्न साधनोमे से अब किसी एकपर पहले-जैसा जोर नही दे रहे हैं। रचनात्मक कार्यक्रम हमारा एक स्थायी मूल्यवाला साधन है। सविनय अवज्ञाकी अपनी स्पष्ट मर्यादाएँ है और अवसरकी माँगपर उसे स्थगित करनेकी जरूरत पड़ जाती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१२-१९३८

२३७. बातचीत : ईसाई मिशनरियोंके साथ[1]

[१२ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

उनमें से एकने गांधीजी से पूछा कि जीवनमें उनका उद्देश्य क्या है। "हम जो-कुछ करते हैं उसे करनेकी प्रेरणा जिससे मिलती है", वह चीज धार्मिक है, या सामाजिक, या राजनैतिक।

गांधीजी विशुद्ध धार्मिक। यही प्रश्न स्वर्गीय माटेग्युने, जब मैं एक विशुद्ध राजनैतिक प्रतिनिधि-मण्डलमे वहाँ गया था तो मुझसे पूछा था। उन्होने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा था, "आप एक समाज-सुधारक होते हुए भी इस भीड़में कैसे शामिल हो गये?" मेरा उत्तर था कि यह मेरे सामाजिक कार्यका ही विस्तार है। सारी मानवजातिके साथ तादात्म्य स्थापित किये बिना मै धार्मिक जीवन जी नही सकता था, और राजनीतिमे भाग लिये बिना वैसा हो नही सकता था। मनुष्यकी गतिविधियोका पूरा क्षेत्र आज एक अविभाज्य इकाई है। आप उसे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और विशुद्ध धार्मिक — इस तरहके पृथक् खण्डोमे विभाजित

१ और २. इसे प्यारेलालके "नॉन वायलेन्स ऐण्ड वर्ल्ड क्राइसिस" (अहिंसा और विश्व-संकट) से लिया गया है। मिशनरियोंमें अन्तर्राष्ट्रीय मिशनरी परिषद्के मन्त्री विलियम पैटन, उत्तरी अमेरिकाके मिशनरी सोसाइटी सम्मेलनके मन्त्री लेस्ली बी० मॉस, ब्रिटिश और विदेशी बाइबिल सोसाइटीके डॉ० स्मिथ और डॉ० जॉन मॉट शामिल थे। वे सब अन्तर्राष्ट्रीय मिशनरी सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए भारत आये थे। सम्मेलन १२ दिसम्बर, १९३८को ताम्बरम्में आरम्भ हुआ था।

नही कर सकते। मानवीय कार्यसे अलग किसी धर्मको मै नही जानता। वह अन्य सब गतिविधियोको एक नैतिक आधार प्रदान करता है, जो अन्यथा उन्हे नही मिलेगा, और जीवन अर्थहीन कोलाहल और आवेशकी एक भूलभुलैया-मात्र रह जायेगा।

प्रश्न : जन-साधारणपर आपके प्रभावको देखते हुए क्या हम यह पूछ सकते हैं कि आप जिससे प्रेरित होते हैं, वह आपका अपने ध्येयके प्रति प्रेम है या जन-साधारणसे प्रेम ?

उत्तर : जन-साधारणसे प्रेम। जन-साधारण बिना कोई भी ध्येय एक बेजान चीज है। जन-साधारणसे प्रेमके कारण अस्पृश्यताकी समस्या जल्दी ही मेरे जीवनमें आ गई। मेरी माँ ने कहा, "इस लडकेको तुम्हे छूना नही चाहिए, यह अछूत है।" "क्यो नही छूना चाहिए ?" मैंने पलटकर सवाल किया, और उसी दिनसे मेरा विद्रोह शुरू हो गया।

प्र० : आप हम ईसाइयोंसे यह अपेक्षा रखते होंगे कि हम आपके उदाहरणका अनुकरण करें। अपने धार्मिक उद्देश्यके लिए क्या हम राजनीतिमें कूद पड़ें ?

उ० : जो लोग विश्वके विभिन्न भागोसे इस देशमे आते हैं, वे यह नही कह सकते कि हम देशकी राजनीतिसे कोई सरोकार नही रखेंगे। जन-साधारणके साथ बन्धुत्व की अपनी भावनाको दबानेके लिए यदि वे सरकारके साथ सौदेबाजी करते हैं, तो वे अपनी आस्थाके प्रति सच्चे नही रहेगे। मान लीजिए, सरकार इस देशके लोगोके साथ कोई दारुण अन्याय करती है और मिशनरियोसे यह कहा जाता है कि उन्हे उसके खिलाफ उँगली भी नही उठानी है तो निश्चय ही कम-से-कम वे इतना तो कर ही सकते है कि उस अन्यायके प्रति अपनी नाराजगी जाहिर करनेके लिए इस देशसे चले जायें। यदि कोई मिशनरी अपनेको सेवाके लिए पेश करे तो उसे उसके अवसर अवश्य मिलेगे। आज आर्थिक क्षेत्र है तो कल सामाजिक क्षेत्र हो सकता है और फिर राजनैतिक क्षेत्र हो सकता है। आप तब यह नही कह सकते कि "मै तो अपने को इस या उस कार्य तक ही सीमित रखूँगा, और कोई अन्य कार्य नही करूँगा।" मै जब दक्षिण आफ्रिका गया तो उस देशके बारेमे कुछ भी नही जानता था। मै तब सिर्फ अपने मुवक्किलसे ही बँधा था, फिर भी वहाँ पहुँचनेके बाद सात दिनके अन्दर ही मुझे यह पता चल गया कि मुझे जिस परिस्थितिसे निपटना है वह इतनी भयानक है कि बताई नही जा सकती।

गांधीजी से फिर यह पूछा गया कि उनकी अहिंसाका उस पैसिफिस्ट (शान्तिवादी) मनोभावनासे, "जिसे हम, पाश्चात्य लोग, अपनानेकी कोशिश कर रहे हैं, पर जिसमें बहुत सफलता नहीं मिल रही है," क्या सम्बन्ध है ?

गांधीजी मेरे विचारमे अहिंसा किसी भी रूपमे निष्क्रियता नही है। अहिंसा, जैसाकि मै उसे समझता हूँ, विश्वकी सबसे सक्रिय शक्ति है, इसलिए, चाहे भौतिकवादकी समस्या हो या कुछ और, यदि अहिसा उसका कोई प्रभावी प्रतिकार प्रदान

नही करती, तो वह मेरी धारणावाली सक्रिय शक्ति नही है। या, इसे उल्टे ढंगसे इस तरह भी कह सकते हैं कि यदि तुम मेरे सामने कुछ ऐसी पहेलियाँ रखो जिनका मैं जवाब न दे सकूँ, तो मैं कहूँगा कि मेरी अहिंसा अभी अधूरी है। अहिंसा सर्वोच्च धर्म है। आधी शताब्दीके अपने अनुभवमें मेरे सामने अभी तक एक भी परिस्थिति ऐसी नही आई है जिसमे मुझे अपनेको लाचार मानना पडा हो, जिसका मेरे पास कोई अहिंसात्मक इलाज न रहा हो।

यहूदियोके प्रश्न को ही लीजिए, जिसपर मैंने अभी-अभी कुछ लिखा है।[1] अहिंसाका रास्ता अपनानेसे किसी भी यहूदीको अपनेको लाचार महसूस करनेकी जरूरत नही रहेगी। एक मित्रने मुझे पत्र लिखकर यह आपत्ति की है कि उस लेखमे मैंने यह माना है कि यहूदी हिंसक रहे हैं। यह सच है कि यहूदी अपने-आपमे सक्रिय रूपसे हिंसक नही रहे है। परन्तु, उन्होने यह कामना की हैं कि जर्मनोपर मानव-जातिका अभिशाप पड़े और वे यह चाहते है कि अमेरिका और इग्लैड, उनकी ओरसे, जर्मनीसे लड़े। यदि मैं अपने शत्रुपर वार करता हूँ, तो वह निस्सन्देह हिंसा है। किन्तु सच्चा अहिंसक होनेके लिए मुझे उससे प्रेम करना चाहिए और वह जब वार कर रहा हो तब भी मुझे उसके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए। यहूदी सक्रिय रूपसे अहिंसक नही रहे है, अन्यथा वे, तानाशाहोके कुकर्मोंके बावजूद, यही कहते, "हम उनके हाथो कष्ट भोगेंगे, क्योकि कोई बेहतर रास्ता उन्हे मालूम नही है। पर हम जिस तरह वे चाहते है, उस तरह कष्ट नही भोगेंगे।" एक भी यहूदी यदि इस तरह करे तो वह अपने आत्मसम्मानको बचा सकेगा और ऐसा उदाहरण रखेगा जो, सक्रामक होनेपर, पूरे यहूदी समाजको बचा सकेगा। साथ ही, वह मानवजातिके लिए एक अमूल्य विरासत भी होगा।

आप पूछेंगे, चीनके बारेमे आप क्या कहते हैं। चीनियोकी दूसरे लोगोपर हमलेकी कोई योजना नही है। उन्हे नये इलाके हथियानेकी इच्छा नही है। शायद यह सच है कि चीन इस तरहके आक्रमणके लिए तैयार नही है, शायद जो उसका शान्तिवाद लगता है वह मात्र अकर्मण्यता है। हर हालतमें, चीनकी अहिंसा सक्रिय नही है। जापानके विरुद्ध उसकी साहसिक प्रतिरक्षा इस बातका पर्याप्त प्रमाण है कि चीन अपने सकल्पोमे कभी अहिंसक नही रहा है। यह कहना कि वह अपनी प्रतिरक्षा कर रहा है, अहिंसाकी दृष्टिसे कोई उत्तर नही है। इसीलिए उसकी सक्रिय अहिंसाके लिए जब परीक्षाकी घडी आई, तो वह उसमे पूरा नही उतरा। यह कोई चीनकी आलोचना नही है। मैं चीनियोकी सफलताकी कामना करता हूँ। स्वीकृत मानदण्डोके अनुसार उनका व्यवहार बिलकुल सही है। परन्तु स्थितिकी यदि अहिंसाकी दृष्टिसे जाँच की जाये, तो मुझे कहना होगा कि चीन-जैसे ४० करोड जनसख्यावाले और सुसस्कृत राष्ट्रके लिए यह शोभनीय नही है कि वह जापानके आक्रमणका प्रतिरोध करनेके लिए जापानके ही तरीकोका सहारा ले। चीनियोमे यदि मेरी धारणावाली अहिंसा होती तो जापानके पास जिस तरहके नवीनतम विनाशकारी यन्त्र है, उनका कोई उपयोग

१. देखिए पृ० १५३-७।

नही रह जाता। चीनी तब जापानसे कहते 'अपने सारे यन्त्र ले आओ, हम अपनी आधी आबादी तुम्हे अर्पित करते है। परन्तु बाकीके २० करोड तुम्हारे आगे घुटने नही टेकेंगे।' यदि चीनी ऐसा करते, तो जापान चीनका दास हो जाता।

और अपन तर्कके समर्थनमें उन्होंने शेलीकी कविता, 'द मास्क ऑफ अनार्की' की ये सुप्रसिद्ध पंक्तियाँ उद्धृत कीं: "तुम हो बहुत, वे हैं सिर्फ थोड़े-से".

खड़े रहो शान्त और अडिग
घने खामोश जंगल की तरह,
बाँहें कसे, ऐसी भंगिमासे
जो अजेयताके संकल्पको वाणी दे रही हो।
आततायी तुमपर यदि टूटें,
उन्हें टूट पड़ने दो,
मार-काट, जोर-जुल्म
जो भी करें करने दो।
किया करें वे नर-संहार,
होओ मत भयभीत, होओ मत चकित,
चुक न जाये जोश उनका जब तक
बाँहें कसे, देखो बस अपलक।
शर्मसे गड़े वे तब लौटेंगे
वहीं, आये थे जहाँसे
खून जो बहाया है, बोलेगा
लज्जा बन उनके गालोंपर।
नींदसे जगे शेरों-से उठो
उठो अजेय संख्यामें,
सोते हुए गले पड़ी जंजीरें
ओसकी हैं बूँदें, इन्हें छितराओ
तुम हो बहुत, वे हैं सिर्फ थोड़े-से।

परन्तु इसपर यह आपत्ति की गई है कि अहिंसा यहूदियोके मामलेमे तो ठीक है, क्योकि वहाँ व्यक्ति और उसके उत्पीडकोके बीच व्यक्तिगत सम्पर्क रहता है, लेकिन चीनमे जापान ऐसी तोपो और ऐसे विमानोके साथ आ रहा है जो वडी दूरसे मार करती है। जो व्यक्ति ऊपरसे मृत्यु-वर्षा करता है उसे यह जाननेका कभी अवसर नही रहता कि उसने किन्हे और कितनोको मारा है। हवाई लडाईमे जव कोई व्यक्तिगत सम्पर्क रहता ही नही, तो अहिंसा उसका मुकाबला कैसे कर सकती है? इसका जवाव यह है कि मृत्युवाहक वमके पीछे मनुष्यका हाथ होता है जो वमको गिराता है, और उसके भी पीछे मानव-हृदय होता है जो उस हाथको चलाता

है। फिर आतककी नीतिके पीछे यह धारणा रहती है कि आतक यदि काफी मात्रामे प्रयुक्त किया जाये तो वाछित परिणाम पैदा करता है, अर्थात् प्रतिपक्षी अत्याचारीकी इच्छाके आगे घुटने टेक देता है। परन्तु मान लीजिए कि लोग यह सकल्प कर लेते है कि वे अत्याचारीकी इच्छा कभी पूरी नही करेंगे, और न ही उसका प्रतिकार अत्याचारीके तरीकोसे करेंगे, तो अत्याचारी देखेगा कि आतकको जारी रखनेसे कोई लाभ नही है। अत्याचारीको यदि पर्याप्त आहार दे दिया जाये तो एक समय आयेगा जब वह उससे बुरी तरह अघा जायेगा। दुनियाके सारे चूहे यदि आपसमे सलाह करके यह निश्चय कर ले कि वे बिल्लीसे डरेंगे नही, बल्कि सबके-सब सीधे उसके मुँहमे दौड़ेंगे, तो चूहे जीवित रहेंगे। मैंने एक बिल्लीको सचमुच चूहेके साथ खेलते देखा है। उसने उसे फौरन ही नही मार डाला, बल्कि अपने जबड़ोमे दबाये रखा। वह उसे छोड देती थी, और जैसे ही वह भागनेकी कोशिश करता वह उसपर फिर झपट पडती थी। अन्त मे वह चूहा सिर्फ भयसे ही मर गया। यदि चूहेने भागनेकी कोशिश न की होती, तो बिल्लीको खेलका मजा न आता। मैंने अहिंसाका पाठ अपनी पत्नीसे, उसे अपनी इच्छाके आगे झुकानेकी कोशिश करते हुए सीखा था। वह एक ओर तो मेरी इच्छाका दृढतासे प्रतिरोध करती थी और दूसरी ओर मेरी मूर्खतासे उसे जो यातना होती थी उसे चुपचाप शान्तिसे भोगती रहती थी। इससे आखिर मुझे अपने ऊपर शर्म आने लगी और अपनी इस मूर्खता-भरी धारणासे मुक्ति मिल गई कि मै उसपर शासन करनेके लिए पैदा हुआ हूँ। अन्तमे, वह अहिसामे मेरी गुरु बन गई। दक्षिण आफ्रिकामे मैंने जो-कुछ किया वह केवल सत्याग्रहके उसी नियमका प्रसार था जिसे वह अनिच्छासे अपने ऊपर लागू किया करती थी।

परन्तु अभ्यागतोंमें से एकने आपत्ति करते हुए कहा: आप हिटलर और मुसोलिनीको जानते नहीं हैं। उनमें किसी तरहकी नैतिक प्रतिक्रिया नहीं हो सकती। विवेक उनमें है ही नहीं और दुनियाकी रायका उनपर कोई असर नहीं होता। उदाहरणार्थ, यदि चेकोस्लोवाकियाके लोग आपकी सलाह मानकर इन तानाशाहोंका अहिंसासे मुकाबला करे, तो क्या वे इनके हाथोमें नही खेलेंगे। इस बातको देखते हुए कि तानाशाहीकी परिभाषा ही अनैतिकता है, क्या नैतिक परिवर्तनका नियम उसके लिए ठीक रहेगा?

गाधीजी आपके तर्कमे पहले ही यह मान लिया गया है कि मुसोलिनी और हिटलर-जैसे तानाशाहोका सुधार असम्भव है। परन्तु अहिंसामे विश्वासका आधार यह धारणा है कि मानव-स्वभाव मूलत एक-जैसा है और इसलिए वह प्रेमके प्रति अवश्य अपनी अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाता है। यह याद रखना चाहिए कि अभी तक उन्हे अपनी हिंसाका सदा तुरन्त उत्तर मिला है। अपने जीवनमे उन्हे सगठित अहिंसात्मक प्रतिरोधका खास बडे पैमानेपर कभी सामना नही करना पडा है। इसलिए, मेरे विचारमे यह केवल अत्यन्त सम्भव ही नही बल्कि अनिवार्य है कि हिसाके प्रदर्शनकी उनमे चाहे जितनी क्षमता हो, पर अहिंसात्मक प्रतिरोधको उन्हे उससे श्रेष्ठ मानना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, अहिंसाकी जो तकनीक मैंने चेक लोगोके आगे रखी है,

उसकी सफलता तानाशाहो की सद्भावनापर निर्भर नही है। अहिंसात्मक प्रतिरोधी तो ईश्वरकी अमोघ सहायतापर भरोसा रखता है, जो अलघनीय लगनेवाली कठिनाइयोमे भी बराबर उसकी हिम्मत बाँधे रखती है। उसकी आस्था ही उसे अजेय बना देती है।

इसके प्रत्युत्तरमें उस अभ्यागतने कहा कि ये तानाशाह यह होशियारी बरतते हैं कि बल-प्रयोग नही करते, बल्कि जो-कुछ उन्हे चाहिए उसपर बस कब्जा कर लेते है। इन परिस्थितियोंमें अहिंसात्मक प्रतिरोधी क्या कर सकते है?

गाधीजी मान लीजिए, वे आते है और खानो, फैक्ट्रियो और चेक लोगोके प्राकृतिक सम्पदाके सभी स्रोतोपर कब्जा कर लेते है। तब उसके तीन परिणाम हो सकते है (१) आदेशोकी अवज्ञा करनेपर चेक लोगोका सहार किया जाये। वह चेक लोगोकी शानदार विजय होगी और उससे जर्मनीका पतन शुरू हो जायेगा। (२) जबर्दस्त सैन्य शक्तिके आगे चेक लोगोका हौसला टूट सकता है। सभी सघर्षोमे यह परिणाम आम तौरपर सामने आता है। परन्तु हौसला यदि टूटता है तो वह अहिंसाके कारण नही टूटेगा, वह अहिसाके न होने या काफी मात्रामे न होनेके कारण ही टूटेगा। (३) तीसरी चीज यह हो सकती है कि जर्मनी कब्जेमे आये नये स्रोतोका उपयोग अपनी फालतू आबादीको धन्धेमें लगानेके लिए करे। इसे भी हिसात्मक प्रतिरोधसे रोका नही जा सकेगा, क्योकि हम यह मान चुके है कि हिंसात्मक प्रतिरोधका सवाल पैदा नही होता। इस तरह सभी कल्पनीय परिस्थितियोमे अहिंसात्मक प्रतिरोध ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

मै यह नही मानता कि हिटलर और मुसोलिनी दुनियाकी रायसे आखिर बिलकुल अछूते रह सकते है। लेकिन आज इन तानाशाहोको दुनियाकी रायकी अवज्ञा करनेमे इसलिए सन्तोष मिलता है कि तथाकथित बडी शक्तियाँ इनके सामने निर्दोष रूपमे आ नही सकती, और इनके मनमे यह कसक है कि बडी शक्तियोने इनके लोगोके साथ पहले अन्याय किया है। अभी उस दिन एक आदरणीय अग्रेज मित्रने मेरे आगे यह स्वीकार किया कि नाजी जर्मनी इग्लैडके पापका फल है, और वार्साई-सन्धिने ही हिटलरको जन्म दिया है।

प्रश्न: एक ईसाईके नाते मै अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिमें किस तरह योग दे सकता हूँ? अन्तर्राष्ट्रीय अराजकता कैसे खत्म की जाये और अहिंसाको शान्तिकी स्थापनाके लिए कैसे कारगर बनाया जाये? पराधीन राष्ट्रोंको बात छोड़ दें, पर चोटीके राष्ट्रोंको निरस्त्रीकरणके लिए कैसे तैयार किया जाये?

उ० एक ईसाईके नाते आप अहिंसात्मक कार्रवाई द्वारा प्रभावशाली योगदान कर सकते है, यद्यपि उसमें आपको सर्वस्व गँवाना पड सकता है। बडी शक्तियाँ जब तक साहसके साथ अपनेको निरस्त्र करनेका फैसला नही करेगी, कभी शान्ति स्थापित नही हो सकेगी। मुझे ऐसा लगता है कि हालकी घटनाएँ बडी शक्तियोमे यह विश्वास जगा कर रहेगी। मेरी यह निश्चित आस्था है—और आधी सदी तक अहिंसापर बराबर अमल करते रहनेके बाद यह आस्था आज पहलेसे कही सुदृढ़ हो गई है

—कि मानव-जातिकी रक्षा केवल अहिंसासे ही हो सकती है, और जहाँ तक मैं 'बाइबिल'को समझ पाया हूँ, उसकी मुख्य शिक्षा भी यही है।

प्र० : आपने कहा है कि जहाँ तक भारतका सवाल है, आपको आशा है कि वह अहिंसापर जमा रहेगा। यह आशा किन लक्षणोंपर आधारित है?

उ० : यदि आप बाहरी प्रमाण चाहें तो वैसा तो मैं कोई दे नहीं सकता। पर अपने अन्तःकरणमें मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि यह देश कोई और मार्ग नहीं अपनायेगा। आपको यह याद रखना चाहिए कि जो-कुछ मैंने उत्तर-पश्चिम सीमा-प्रान्तमें देखा है अभी मैं उससे अभिभूत हूँ। जो-कुछ वहाँ मैंने देखा मैं उसके लिए तैयार नहीं था। वे इसके [अहिंसाके] लिए बहुत ही उत्सुक हैं और उनके दिलोंमें गहरी सचाई है। उन्हें खुद अहिंसामें प्रकाश और आशा दिखाई दे रही है। खान साहबने मुझे बताया कि इससे पहले सब ओर अंधेरा था, एक भी परिवार ऐसा नहीं था जिसकी कुछ दूसरे परिवारोंसे जानी दुश्मनी न हो। वे इस तरह रहते थे जैसे एक माँदमें कई शेर रह रहे हों। यद्यपि पठान सदा चाकू, खंजर और राइफल से लैस रहते थे, फिर भी वे इस भयसे कि कहीं उनकी नौकरी न चली जाये, अपने बड़े अफसरोंसे बहुत आतंकित रहते थे। हजारों लोगोंमें वह स्थिति अब बदल गई है। जो पठान खान साहबके अहिंसात्मक आन्दोलनके प्रभावमें आये हैं, उनमें जानी दुश्मनी बीते जमानेकी बात होती जा रही है। जीविकाके लिए छोटी-मोटी नौकरियोंपर निर्भर रहनेकी बजाय, उन्होंने खेतीकी ओर मुँह मोड़ा है, और यदि वे अपना वायदा पूरा कर पाये तो शीघ्र ही उद्योगोंकी ओर मुड़ेंगे।

प्र० : आपका उपासनाका ढंग क्या है?

उ० : हम प्रातः ४.२० पर और सायं ७ बजे सम्मिलित प्रार्थना करते हैं। यह क्रम वर्षोंसे चला आ रहा है। हम 'गीता'के श्लोकों और अन्य मान्य धार्मिक ग्रन्थों का पाठ करते हैं, तथा संतोंके भजन भी गाते या पढ़ते हैं। व्यक्तिगत उपासनाका तो वर्णन नहीं किया जा सकता। वह निरन्तर और अचेतन रूपसे भी चलती रहती है। कोई क्षण ऐसा नहीं जाता जब मुझे एक ऐसे द्रष्टाकी उपस्थितिकी अनुभूति न होती हो जिसकी दृष्टिसे कुछ भी छिपा नहीं है, और मैं उससे तालमेल रखनेके लिए प्रयत्नशील रहता हूँ। मैं ईसाई मित्रोंकी तरह प्रार्थना नहीं करता हूँ। इसलिए नहीं कि मुझे उसमें कोई दोष लगता है, बल्कि इसलिए कि शब्द मेरे मुँहसे नहीं निकलते। मैं समझता हूँ कि यह सब आदतकी बात है।

प्र० : आपकी प्रार्थनामें क्या याचना भी की जाती है?

उ० : होती भी है और नहीं भी। ईश्वर हमारी जरूरतोंको जानता है और उन्हें पहलेसे ही पूरा कर देता है। उसे मेरी याचनाकी आवश्यकता नहीं है। परन्तु मुझे, एक बहुत ही अपूर्ण मानवप्राणी होनेके कारण, उसकी रक्षाकी आवश्यकता है, जैसेकि बच्चेको पिताके संरक्षणकी आवश्यकता होती है। पर मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे कुछ भी करनेसे उसकी योजनाओंमें कोई परिवर्तन नहीं आता है। आप चाहें तो मुझे भाग्यवादी कह सकते हैं।

प्र० : क्या आपको अपनी प्रार्थनाका कोई उत्तर मिलता है?

उ० : इस मामलेमे मैं अपनेको बडा सौभाग्यशाली मानता हूँ। उसके उत्तरका मुझे कभी अभाव नही रहा। क्षितिजपर जब गहनतम अन्धकार छाया था — जेलोमें अपनी अग्नि-परीक्षाओके दौरान जब मेरे सामने कठिनाइयाँ-ही-कठिनाइयाँ थी — मैंने उसे अपने सबसे निकट पाया। जीवनमे एक भी क्षण मुझे ऐसा याद नही आता जब मैंने यह महसूस किया हो कि ईश्वरने मुझे त्याग दिया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-१२-१९३८

२३८. सन्देश : सी० के० गिब्बनको[1]

[१२ दिसम्बर, १९३८ या उसके पूर्व][2]

आप ऐंग्लो-इंडियन समाजको स्वतन्त्र भारतके नागरिकोके नाते अपने कर्तव्यके प्रति सजग करनेका जो प्रयास कर रहे है, मैं उसकी सफलताकी कामना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-१२-१९३८

२३९. हिन्दू-मुस्लिम एकता

स्व० मौलाना शौकत अलीके स्मारकके बारेमे मैंने कई तजवीजे पढी है।[3] ज्योही मुझे मौलाना साहबकी मृत्युके बारेमे मालूम हुआ, जिसकी कि अभी बिलकुल ही आशा नही थी, मैंने कुछ मुसलमान मित्रोको अपने अन्तस्तलकी समवेदना प्रकट करते हुए लिखा। उनमे से एक मित्रने लिखा है :

> सच्ची और स्थायी हिन्दू-मुस्लिम एकताकी कितनी तात्कालिक और सख्त जरूरत है, इस विषयमें दो रायें नहीं हो सकतीं। जितनी जल्दी यह एकता होगी, उतना ही सबके लिए यह हितकर होगा। इस मामलेमें देर करनेके इतने गम्भीर चिन्ताजनक परिणाम हो सकते हैं, जिनकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। आज जो हालत है उससे अत्यन्त भयानक स्थिति आ सकती है, जिसे, जहाँ तक सम्भव हो, रोकना ही चाहिए। मैं यह जानता हूँ कि शौकत अपने ढंगसे सच्चा हिन्दू-मुस्लिम समझौता करानेके लिए सचमुच चिन्तित थे।

१. ऐंग्लो-इंडियन सिविल लिबर्टीज एसोसिएशनके महासचिव।
२. जिस समाचारके अन्तर्गत यह सन्देश छपा था, उसपर १२ दिसम्बर, १९३८ तारीख पड़ी थी।
३. शौकत अलीकी मृत्यु २७ नवम्बरको हुई थी।

स्वर्गमें उनकी आत्माको, यह जानकर कि उनका एक जीवन-उद्देश्य आखिर पूरा हो गया, जितनी शान्ति मिलेगी उतनी किसी दूसरे कामसे नहीं मिल सकती। ऐसे भी लोग हो सकते है जिन्हे इसमें सन्देह हो। लेकिन चूँकि मैं मौलानाको और उनका दिमाग किस तरह काम करता था इस बातको खूब अच्छी तरह जानता हूँ, इसलिए यह बात पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ।

मै इस रायसे पूर्णतया सहमत हूँ कि बावजूद इसके कि मौलाना साहब कभी-कभी जोशमे आकर उल्टी बात बोल जाते थे, पर उनके दिलमे एकता और शान्ति के लिए वही तमन्ना थी जिसके लिए कि वह खिलाफतके दिनोमे बडे मोहक ढगसे बोलते और काम करते थे। मुझे इसमें कोई शक नही है कि हिन्दू और मुसलमान दोनो कौमोका एकताके लिए किया हुआ सयुक्त निश्चय ही उनका सबसे सच्चा स्मारक होगा — खाली कागजी एकताका निश्चय नही, बल्कि दिली एकताका निश्चय, जिसका आधार सन्देह और अविश्वास नही, बल्कि आपसी विश्वास होना चाहिए। कोई दूसरी एकता हमे नही चाहिए, और बगैर उस एकताके हिन्दुस्तानको सच्ची आजादी भी हासिल नही होगी।

सेगाँव, १२ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १७-१२-१९३८

२४०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

१२ दिसम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

मेरा खयाल है सायकाल ५ का समय बहुत ठीक रहेगा।[1] यदि कोई दूसरा समय अधिक उपयुक्त हो, तो मै अपना कार्यक्रम उसीके अनुसार कर लूंगा।

बापूके आशीर्वाद

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४६) से।

१. देखिए "पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको", पृ० २१६।

२४१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१२ दिसम्बर, १९३८

चि० अमला,

पाँच रुपये मिले। तू चाहे मार्गरेट स्पीगल नामसे हस्ताक्षर कर, मेरे लिए तो अमला ही रहेगी। लिफाफेपर मैं जैसा तू चाहे वैसा पता लिखूंगा।

तेरी तबीयत ठीक रहती होगी।

गुजरातीका थोडा भी अभ्यास कर ले, तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीसे स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२४२. पत्र : बलवन्तसिंहको

१२ दिसम्बर, १९३८

चि० बलवतसिह,

तुमारा क्रोध तुमको और गायको खा जायगा। मैं सब चीज नही देख सकता हू इसलिए मैंने सबको यह काम सिपुर्द किया। तुमारे पास प्लान नही है। मेरे पास अखूट भडार रहता तो मैं आख बद करके तुमका खर्च करने देता। मर्यादा कहा है मुझे जाणना न चाहीये। तुमको मैं विशारद नही मानता। मेरा अखूट विश्वास तुम पर है और धीरज है। इसलिये तो आगे बडता जाता हू। हा मैं १०० से भी अधिक गाय रखना चाहता हू लेकिन मेरे पास प्लान कहा है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

धीरजसे तुमारे साथीयोको नही समझा सकोगे तो सेवा किस तरह करोगे।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१२) से।

२४३. पत्र : ब्रजकृष्ण चांदीवालाको

सेगांव, वर्धा
१२ दिसम्बर, १९३८

चि० ब्रजकृष्ण,

मैंने जो किया था वह भाईके लिये नहिं चल सकता है। सिवाय सोडाके कुछ दवाई तो ली ही नही सिर्फ फलोके रस पर रहा था। मालीश, कटीस्नान वगैरा चलता था। बीचमे कुछ खानेका प्रयत्न करता था तो ज्यादा बीमार पडता था। अतमे बकरीके दूधने मुझे जान बक्षी।

वही जो इलाज हो सके करो। सरस्वती कुछ करे तो देखो। पुना ले जाना है तो वहा ले जाओ।

सत्यवतीका प्रश्न कठिन है। वहं पूरे इलाज भी नही करेगी।

मीरठवाले उत्तर नही देते है सो आश्चर्य है। मैं लिखता हूँ। मेरी और महादेवकी तबीयत अच्छी है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मीलोके बारेमें मेरी मति नही चलती है सिवाय कि मजदूरोको संगठित करे।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५८) से।

२४४. पत्र : हरसरन वर्माको

सेगांव, वर्धा
१२ दिसम्बर, १९३८

भाई हरसरन वर्मा,

तुमारा खत मिला है। अच्छा किया मुझको लिखा। जो मुझको लिखा है वह काग्रेस कमेटीके पास भी रखना चाहीये।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०) से।

२४५. भेंट : सेलिस्टीन स्मिथको[1]

[१३ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

मैंने किसी लड़कीके आनेकी बात कभी सोची न थी। अपने घरसे इतनी दूर आनेवाली किसी लड़कीकी जिम्मेदारी लेना सम्भव है हमारी शक्तिसे कुछ ज्यादा सिद्ध हो। परन्तु आप देख सकती है कि मेरे इर्द-गिर्द यहाँ काफी लड़कियाँ है और यदि एक लड़की इस तरह अमेरिकासे यहाँ आ भी जाती है तो उसके यहाँ आनेकी मुझे ज्यादा चिन्ता नही होगी बशर्ते कि वह यहाँका यह अविश्वसनीय रूपसे सादा जीवन —उसे तो यह ऐसा ही लगेगा— बिता सके। यहाँ वह जो-कुछ सीख सकती है या यहाँ से जो-कुछ वह अपने साथ ले जा सकती है, वह है सादे जीवनका रहस्य। अमेरिकामें जीवन चाहे कितना भी सादा क्यों न हो वह यहाँके जीवनकी सादगीकी तुलनामे कदापि नही ठहर सकता। मै नही जानता कि अमेरिका ऐसी सादगी अपना सकता है या ऐसी सादगी पसन्द भी करता है या नहीं। दूसरी जो चीज वह अपने साथ ले जा सकती है, वह है अहिंसाकी भावना। यह इस बात पर निर्भर है कि यदि यहाँ वातावरणमे अहिंसा व्याप्त है तो शब्दों या भाषणोकी सहायताके बिना वह इसे कितना आत्मसात कर सकती है। यदि यहाँ वातावरणमे अहिंसा न हो तो लेखो और भाषणो के द्वारा वह इसे नही समझ पायेगी और न आत्मसात ही कर पायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-१२-१९३८

२४६. देशी राज्योंके सम्बन्धमें कांग्रेस कार्य-समितिके प्रस्तावका मसविदा[3]

१३ दिसम्बर, १९३८

देशके बहुत-से हिस्सोमे देशी राज्योकी जनतामे जो जागृति पैदा हुई है, कार्य-समिति उसका स्वागत करती है और समझती है कि तमाम हिन्दुस्तानकी जिस बड़ी

१. प्यारेलाल के "वीकली लेटर" से उद्धृत। सेलिस्टीन स्मिथ न्यूयार्क के 'यंग विमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन' के नीग्रो-विभागकी सचिव थीं। वह वर्धा शिक्षा-योजनासे प्रभावित हुई थीं और जानना चाहती थीं कि वह अपनी संस्थाकी एक लड़की वहाँ भेज सकती हैं या नहीं; और यदि वह उसे वहाँ भेजें तो वह क्या सीखेगी और अमेरिका के लिए उसकी देन क्या होगी।

२. सेलिस्टीन स्मिथका गांधीजी के साथ एक फोटोग्राफ १३ दिसम्बरके बॉम्बे क्रॉनिकल में प्रकाशित हुआ था। उससे यह संकेत मिलता है कि वे इस तारीखसे पहले मिले थे।

३. इंडियन ऐनुअल रजिस्टर के अनुसार प्रस्तावका मसविदा गांधीजी ने तैयार किया था।

आजादीके लिए कांग्रेस इतने दिनोसे कोशिश कर रही है, उसके लिए यह बहुत ही आशाजनक चिह्न है। देशी राज्योमे राजाओकी छत्रच्छायामे नागरिक स्वाधीनता और उत्तरदायी शासनकी प्रजाकी जो माँग है, उसका यह समिति समर्थन करती है और वह कह देना चाहती है कि देशी रजवाडोमे आजादी और आत्माभिव्यक्तिके जो आन्दोलन चल रहे हैं उनके साथ कांग्रेस पूरी तरह आत्मीयता प्रकट करती है। समितिको यह जानकर खुशी है कि कुछ राजा प्रजाकी इस जागृतिको विकासका चिह्न समझते है और अपनेको समयकी गतिके साथ बदलकर प्रजाके साथ सहयोग कर रहे है। समिति उनके इस कामकी कद्र करती हैं, लेकिन उसे इस बातपर दु:ख है कि अन्य कई राजा इन आन्दोलनोका दमन कर रहे है। वे शान्तिमय और वैध सस्थाओ तक को अवैध करार दे रहे है। किसी भी प्रकारका राजनीतिक कार्य नही होने देते। कही-कही तो निर्दय और अमानुषिक दमनसे काम लिया जा रहा है। खास तौरपर समिति इस बातको बहुत ही निन्दनीय समझती है कि कुछ राजा अपनी प्रजाको कुचलनेके लिए ब्रिटिश सरकारकी मदद लेनेकी कोशिश कर रहे है। समिति इस बातका ऐलान कर देना चाहती है कि देशी राज्योके अन्दर उत्तरदायी शासनकी माँगके लिए वहाँ जो समुचित आन्दोलन होगे उनके दमनके लिए अगर ब्रिटिश अधिकारी राजाओको फौज या पुलिसकी बेजा मदद दे, तो कांग्रेसको भी यह अधिकार है कि वह प्रजाकी रक्षा करे।

समिति नये सिरेसे सब लोगोका ध्यान हरिपुरा-कांग्रेसके उस प्रस्तावकी तरफ दिलाना चाहती है जिसमे राज्योके बारेमे कांग्रेसकी नीति बिलकुल साफ कर दी गई है। कांग्रेसको इस बातका अधिकार ही नही है, बल्कि वह इस बातको अपना विशेषाधिकार भी समझती है कि वह देशी राज्योमे प्रजाके नागरिक अधिकारो और उत्तरदायी शासनकी माँगके लिए कोशिश करे, मगर मौजूदा हालतको ध्यानमे रखते हुए उसे इस कामकी कुछ सीमाएँ माननी पडी है और सावधानीका खयाल उसे सीधे तौरपर सस्थाकी हैसियतमे रियासतोकी भीतरी लडाइयोमे हिस्सा लेनेसे रोकता है। कांग्रेसने अपनी यह नीति लोगोकी सर्वोत्तम भलाईका खयाल करके, उन्हे अपनी शक्ति और अपने स्वावलम्बनके भावका विकास करनेका मौका देनेके उद्देश्यसे तय की थी। इस नीतिका एक हेतु यह भी था कि कांग्रेस अपनी तरफसे देशी राज्योके प्रति सद्भाव ही प्रकट करे और यह उम्मीद जाहिर करे कि देशी रियासतोके राजे-महाराजे खुद ही अपने-आप हवाके रुख को पहचान लेगे और उसे पहचानकर लोगोकी न्याययुक्त आकाक्षाओको पूरा करेगे। अनुभवने यह साबित कर दिया है कि हरिपुरा-कांग्रेसमे तय की गई यह नीति बुद्धिमानीकी नीति थी, लेकिन इस नीतिके ये माने कभी नही थे कि कांग्रेस उससे बँधी हुई है। कांग्रेसने अपना यह अधिकार हमेशा सुरक्षित रखा है, जैसाकि उसका फ़र्ज है, कि वह देशी राज्योकी प्रजाको ठीक रास्ता दिखाये और उन्हे अपने असरकी पूरी-पूरी मदद दे। इन दिनो देशी राज्योकी प्रजामे जो अपूर्व जागृति दिखाई देती है, उससे यह स्पष्ट है कि कांग्रेसको देशी राज्योकी प्रजाका उत्तरोत्तर ज्यादा साथ देना है।

हरिपुरा-कांग्रेसने जो नीति निर्धारित की थी और जो अनुभवसे बिलकुल ठीक साबित हुई है, उसपर कांग्रेस चलती रहेगी। इसलिए देशी राज्योंमे उत्तरदायी शासनके लिए जो आन्दोलन हो रहे हैं उनका जहाँ कांग्रेस हार्दिक स्वागत करती है, वहाँ वह जनताको यह सलाह भी देती है कि जो लोग सम्बन्धित राज्योंके रहनेवाले नहीं हैं, वे उन राज्योंमे होनेवाले सत्याग्रह वगैरहमें भाग न लें। ऐसे आन्दोलनोंमें बाहरके लोगोंके शामिल होनेसे राज्यके आन्दोलनोंको सच्ची शक्ति नही मिलेगी। इतना ही नही, उससे राज्यकी प्रजाको हानि भी पहुँच सकती है और वे उन्हे अपना निजी जन-आन्दोलन विकसित करनेसे भी रोक सकते है, क्योंकि प्रजाकी असली शक्ति और सफलता निजी जन-आन्दोलनपर ही निर्भर करती है।

समिति इस बातका विश्वास करती है कि देशी राज्योंमें होनेवाला हरएक आन्दोलन कांग्रेसकी अहिंसाकी मौलिक नीतिपर कड़ाईके साथ आरूढ़ रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन नेशनल कांग्रेस, फरवरी १९३८ से जनवरी १९३९, पृ० ६९-७०

२४७. पत्र : बलवन्तसिंहको

१३ दिसम्बर, १९३८

चि० बलवंतसिंह,

अब तो समझे कि मैंने तो तुमारी वकालत चिमनलालके पास की कि गायोको दो जगह रखनेकी आवश्यकता नही है। मै जो चाहता हूँ वह यह कि सब मिल के गाय और उसका परिवार मिलकर सो तक चला जाय तो उसके लिये क्या खर्च होगा और उसमे से हमको कितनी आमद होगी। मजदूर तो हो लेकिन जब प्लान नही है तो जिसको पैसे इकट्ठे करना है उसको तो प्लान चाहीये। इसलिये मैंने कहा यहा जितने है वे मिल कर कुछ बना लेवे तो उस पर मैं विचार कर सकु। अगर तुमारी और पारनेरकरकी बन जाती तो मेरा रास्ता कुछ खुल सकता था। मैं तो जल्दीसे इस कामको कर लेना चाहता हू।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१५) से।

२४८. तार : पट्टम् ताणु पिल्लैको

वर्धा
१४ दिसम्बर, १९३८

ताणु पिल्लै
राज्य-कांग्रेस
त्रिवेन्द्रम्

मेरा स्पष्ट विचार है कि मुकदमा चलाये जानेके बावजूद आपको सुनवाई आरम्भ होनेसे पहले ही अपने आरोप वापस ले लेने चाहिए। यदि अदालत कार्रवाई जारी रखे तो भी आपको यह कहते हुए अपना बचाव पेश करनेसे इनकार कर देना चाहिए कि आपको जो परामर्श मिला है और जिसे आप सही मानते हैं उसके अनुसार आपने निश्चय किया है कि आरोपोंको आगे न बढाया जाये क्योंकि वे उत्तरदायी सरकार स्थापित करनेकी व्यापकतर नीतिसे मेल नही खाते।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे . पट्टम् ताणु पिल्लै पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२४९. पत्र : भूलाभाई जे० देसाईको

सेगाँव
१४ दिसम्बर, १९३८

भाई भूलाभाई,

नरीमनका पत्र पढा। मुझे तो लगता है, उसके साथ भारी अन्याय हुआ है। यदि इस पत्रसे अलग और कुछ न हो, और मेरी मान्यता ठीक हो, तो कल जब हम बैठें, तब तुम्ही बातको सुधार लो तो अच्छा हो। तुम अपनी ओरसे पहले ही सुझाव रखो, इसलिए यह लिखा है। मैंने वल्लभभाईको मोटरमें से ही लिखा था। लेकिन अब देखता हूँ मुझे तुम्हे लिखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीसे भूलाभाई देसाई पेपर्स, सौजन्य . नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२५०. पत्र : सुशीला गांधीको

सेगाँव, वर्धा
१६ दिसम्बर, १९३८

चि० सुशीला,

बा को लिखा तेरा पत्र पढा। तुझे यहाँ घसीटना मुझे तो अच्छा लगता है, लेकिन अभी नही बुलाऊँगा। बारडोलीमें जितने दिन रह सके, रहना। यहाँ मै तो कामके मारे सिर उठा नही सकता, फिर तुझे क्या बुलाऊँ?

तूने जो टीके लगवाये थे, उसकी सूजन अब कम हो गई होगी।

नानाभाईकी तबीयत ठीक होगी। तुम्हारा पहली तारीखको ही मेरे पास आ जाना क्या बहुत जल्दी माना जायेगा?

यहाँ इस बीच लोगोका आना-जाना काफी रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९०) से।

२५१. तार : जैनब र० पटेलको[1]

[१६ दिसम्बर, १९३८][2]

जमनालालजीके तारसे यह शोक समाचार मिला। तुम सबके लिए मेरे हृदयमे सवेदना और प्रार्थना है। मै जानता हूँ कि तुम बहादुर हो। आशा है कि डॉक्टरकी परम्पराको परिवार पूरी तरह कायम रखेगा। सप्रेम।

बापू

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १७-१२-१९३८

१. सुप्रसिद्ध फ्रीमेसन डॉ० रजब अली विश्राम पटेलकी पत्नी। १९२१ के असहयोग-आन्दोलनमें डॉक्टरने ५०,००० रुपया दान दिया था और वह राशि महात्मा गांधीको अपनी इच्छानुसार खर्च करनेके लिए सौंप दी थी।

२. डॉ० रजब अलीका देहान्त १६ दिसम्बर, १९३८ को हुआ था।

२५२. तार : पट्टम् ताणु पिल्लैको

वर्धा

[१७ दिसम्बर, १९३८][1]

ताणु पिल्लै
अध्यक्ष राज्य-कांग्रेस
त्रिवेन्द्रम्

आपको मेरी जोरदार सलाह है कि त्रिवेन्द्रम्के समीप किये जानेवाले सम्मेलन और वाइसरायके आगामी दौरेके समय किये जानेवाले प्रदर्शनोपर लगाये गये मौजूदा प्रतिबन्धका प्रतिरोध न किया जाये। मेरी यह भी सलाह है कि उत्तेजक प्रतिबन्धोके बावजूद सविनय अवज्ञाको अस्थायी रूपसे स्थगित कर दिया जाये। स्वतन्त्रतापर लगाये गये कष्टप्रद प्रतिबन्धोका सहर्ष पालन करना सविनय अवज्ञाकी कला सीखनेका एक पाठ होगा।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे . पट्टम् ताणु पिल्लै पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय ।

२५३. तार : पट्टम् ताणु पिल्लैको

वर्धा

१७ दिसम्बर, १९३८

ताणु पिल्लै
अध्यक्ष राज्य-कांग्रेस
त्रिवेन्द्रम्

[आरोप-पत्र] निम्न प्रकार वापस ले लिया जाये। गम्भीरतासे और प्रार्थनापूर्वक सोच-विचार करके हम इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि दीवानके खिलाफ जो आरोप-पत्र महाराजा साहबकी सेवामे पेश किया गया है उसे उत्तरदायी सरकार स्थापनाके महत्तर संघर्षके हितमे बिना शर्त वापस ले लिया जाये। अपने आरोप पूर्णतया और स्पष्ट शब्दोमे वापस लेनेके साथ ही यदि

१. मूल तारमें मात्र '१७' तारीख है। किन्तु ९ जनवरी, १९३९ को वाइसराय त्रावणकोर पहुँचे थे, इस तथ्यको देखते हुए तारकी यह तिथि निर्धारित की गई है।

हम यह नही कहते कि हमने पूरी जिम्मेदारीके साथ और एकपक्षीय प्रमाणपर आधारित कथनकी सचाईमे पूरा विश्वास रखकर ही आरोप लगाये थे तो हम अपने प्रति, अपने महान् उद्देश्यके प्रति और जनताके प्रति ईमानदार नही रहेगे। लगाये गये आरोपोकी सत्यतामे हमारा विश्वास कायम है किन्तु अब हम इस मतपर पहुँचनेपर बाध्य हो गये है कि हमारा उन आरोपोपर डटे रहना त्रावणकोरमे उत्तरदायी सरकार कायम करानेके महान् सघर्षके लिए अहितकर होगा। अत हम उन आरोपोको वापस लेते है और जनतासे हमारा अनुरोध है कि वह आरोपोसे या उनमे हमारे विश्वाससे प्रभावित न हो। यदि उक्त प्रत्याहारके बावजूद प्राभियोजन चलाया जाये तो बादमे अदालतमे निम्न बात भी कहिए। हमें खेद है कि सरकारी वकील आरोपोके हमारे प्रत्याहारसे सन्तुष्ट नही है। हमे जो-कुछ भी दण्ड दिया जाये उसे हम सहर्ष स्वीकार करेगे क्योकि हमारे बिला शर्त प्रत्याहारका अर्थ ही है कि हमने कानूनी दण्डसे बचनेके लिए नही प्रत्युत उत्तरदायी सरकारके महत्तर उद्देश्यके हित-साधनकी खातिर आरोपोको वापस ले लिया है। अत बचाव पेश करनेका हमारा कोई इरादा नही है और चूँकि हमने आरोपोका प्रत्याहार किया है, हमारे लिए अपनेको दोषी स्वीकार कर लेना सम्भव नही है।

गांधी

मूल अग्रेजीसे . पट्टम् ताणु पिल्लै पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२५४. सन्देश : इलाहाबाद विश्वविद्यालय छात्र-संघको[1]

[१८ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

मेरा यह विश्वास है कि अहिसाके सिवा कोई और चीज हमारी कठिनाइयोको दूर नही कर सकती।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-१२-१९३८

१. यह सन्देश विश्वविद्यालय सेनेट हॉलमें गांधीजी के चित्रके अनावरणके समय भेजा गया था।
२. यह सन्देश दिनांक १८ दिसम्बर, १९३८ के अन्तर्गत दी गई रिपोर्टमें छपा था।

२५५. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

सेगाँव, वर्धा
१८ दिसम्बर, १९३८

अत्यन्त गोपनीय

प्रिय सुभाष,

मै यह पत्र बोलकर ही लिखवाऊँगा क्योंकि मै अभी अपनी आँखोसे काम नही लेना चाहता। *मौलाना साहब, नलिनी बाबू*[1] और घनश्यामदासजी मुझे यह पत्र लिखवाते सुन रहे है। बगाल-मन्त्रिमण्डलके बारेमे हमारी विस्तृत बातचीत हुई। मेरा यह विश्वास आज पहलेकी अपेक्षा और दृढ़ हो गया है कि हमे मन्त्रिमण्डलको गिरानेकी कोशिश नही करनी चाहिए। उसमे हेर-फेर करवानेसे भी कोई लाभ नही होगा। और सम्भवत मन्त्रिमण्डलमें काग्रेसियोके शामिल किये जानेसे हमें हानि बहुत होगी। इसलिए मै यह महसूस करता हूँ कि प्रशासनको अपेक्षाकृत शुद्ध बनाने और निश्चित कार्यक्रम तथा नीतिको चालू रखनेका सबसे अच्छा तरीका यह होगा कि हम जो भी सुधार चाहते हो, उन्हे हम वर्तमान मन्त्रिमण्डलसे ही सम्पन्न करवानेकी कोशिश करे। जब कोई असली महत्वका प्रश्न उठे और मन्त्रिमण्डल देशके हितोंके विरुद्ध निर्णय ले, तब उसी बिनापर नलिनी बाबूको मन्त्रिमण्डलसे बाहर आ जाना चाहिए, और वे कह रहे है कि वे ऐसा ही करेंगे भी। उस हालतमें उनका मन्त्रिमण्डलसे अलग होना शोभाजनक और पूरी तरह न्यायसगत होगा। मुझे मालूम हुआ है, जहाँ तक म्युनिसिपल-कानूनमे सशोधनका सम्बन्ध है, अनुसूचित वर्गके पृथक् निर्वाचक-मण्डल बनानेकी बात छोड़ दी गई है। मुसलमानोंके पृथक् निर्वाचक-मण्डलका आग्रह अब भी किया जा रहा है। कह नही सकता कि विरोधको इस हद तक ले जाना ठीक होगा या नही कि समझौतेका कोई रास्ता ही न रह जाये। यदि मुसलमानोका मत स्पष्ट रूपसे पृथकताके पक्ष मे हो तो मेरा विचार है कि बुद्धिमत्ता इसीमें है कि उन्हे सन्तुष्ट कर दिया जाये। मै नही चाहूँगा कि वे इस बातको काग्रेसके विरोधके बावजूद मनवा ले। उस हालतमे तो यह बात काग्रेसके खिलाफ जायेगी।

यदि आप मेरी राय मानते हो तो कैदियोकी रिहाईका मामला आजकी अपेक्षा बहुत ज्यादा आसान बन जायेगा। और यदि यह राय आपको अच्छी लगती हो तो नई नीतिके बारेमे खुली घोषणा कर देनी चाहिए। उम्मीद है कि इससे बगालमे व्याप्त तनावमे कमी आ जायेगी और बगालमें उत्साहहीनताकी स्थिति स्वत समाप्त हो

१. नलिनी रंजन सरकार, बंगालके वित्त मन्त्री।

जायेगी। मौलाना साहब इस बातसे पूरी तरह सहमत हैं और नलिनी बाबू तथा घनश्यामदास भी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७७८४) से, सौजन्य. घनश्यामदास बिड़ला।

२५६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
[१८ दिसम्बर, १९३८ के पश्चात्][1]

भाई वल्लभभाई,

सारे कागजात[2] पढ लिये। मामला भयंकर है। ठाकुर साहब दृढ रहे तो अभी सब कुछ निपट जाये। पर उनके दृढ़ रहनेके विषयमें मुझे शक है। कागजोसे जो कुछ पता चलता है, उसका उपयोग कहाँ तक किया जा सकता है? तुम्हे न्योता मिले तो जरूर जाना। मेरा खयाल है कि यदि तुम जाओ तो तुम्हें रेजिडेंट[3] से भी मिलना चाहिए और साफ बात कर लेनी चाहिए। राजाका निमन्त्रण पूरी तरह गुप्त नही रखा जा सकता। इसलिए अगर इतनी हिम्मत राजाकी न हो, तो राजकोट जानेमें शायद कोई लाभ नहीं।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
बम्बई–४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३०

१. राजकोटके ठाकुर साहब धर्मेन्द्रसिंहजीने समझौता करानेके लिए वल्लभभाई पटेलके साथ पत्र-व्यवहार किया था। वल्लभभाईने ठाकुर साहबके नाम अपने १८ दिसम्बरके पत्रमें लिखा था कि "आपका पत्र मिलनेपर मैं तुरन्त चला आऊँगा और लोगोंको संघर्ष समाप्त कर देनेके लिए समझाऊँगा।" अत: यह पत्र १८ दिसम्बरके बादका होना चाहिए।

२. वल्लभभाई पटेल और राजकोटके ठाकुर साहबके बीच हुए पत्र-व्यवहारके कागजात।

३. ई० सी० गिब्सन।

२५७. टिप्पणियाँ

कांग्रेसजनोंके खिलाफ शिकायत

मेरे सामने दो पत्र हैं — एक तो रंगूनके खादी-भण्डारका है और दूसरा कर्नाटकका। इन पत्रोंमें यह शिकायत की गई है कि जिस खादीको अखिल भारतीय चरखा संघने अप्रमाणित कर दिया था उसे हमारे यहाँकी कांग्रेस कमेटियोंने प्रमाणित कर दिया है। शिकायतकी सचाईके बारेमें कोई शक नहीं। दोनों कांग्रेस कमेटियों द्वारा दिये गये प्रमाणपत्रोंकी नकलें मेरे सामने हैं। कांग्रेस कमेटियों को यह मालूम होना चाहिए कि ये प्रमाणपत्र नियमके खिलाफ हैं। खादीके बारेमें तो प्रमाणपत्र केवल एक ही संस्था दे सकती है, और वह है अखिल भारतीय चरखा संघ। जब तक कांग्रेसका वह प्रस्ताव बदल नहीं जाता जिसके अनुसार चरखा संघका निर्माण हुआ है, तब तक किसी भी कांग्रेस कमेटीको न तो ऐसा करनेका अधिकार है और न यह अधिकार दिया जा सकता है।

'प्रमाणित खादी'-जैसी कोई चीज ही नहीं है। खादीके हरएक थान और हरएक चीजको प्रमाणित करना नामुमकिन है। चरखा संघ द्वारा स्वीकृत खादी बेचनेके लिए केवल दुकानों और व्यक्तियोंको ही प्रमाणपत्र दिये जा सकते हैं। खादी बनानेवाले कारीगरोंको निश्चित रूपसे पर्याप्त मजदूरी दी जायेगी, इस दृष्टिसे खादीकी व्याख्याको विस्तृत कर दिया गया है। जो लोग कोई दूसरी खादी बेचते हैं वे खादी बनानेवाले मजदूरोंको उस मजदूरीसे वंचित कर देते हैं, जो कि चरखा संघने अपनी खुशीसे, उनके लिए निश्चित कर दी है। किसी कांग्रेसजन या कांग्रेस-कमेटीके बारेमें यह शिकायत नहीं आनी चाहिए कि चरखा संघ द्वारा संचालित राष्ट्रनिर्माणके उस महान प्रयोगमें उनकी तरफसे दस्तंदाजी की जा रही है, जो भूखसे मरती हुई उन लाखों कत्तिनोंके शरीरमें प्राण डाल रहा है और उनके सूखे चेहरोंको जीवनकी चमक दे रहा है, जिन्हें दो पैसा रोज भी दिलानेका जिम्मा कोई दूसरा नहीं ले सकता। इसलिए मैं आशा करता हूँ, कांग्रेस कमेटियाँ और कांग्रेसजन न केवल चरखा संघके इस काममें कोई दस्तंदाजी नहीं करेंगे बल्कि उसकी बहुसंख्यक संस्थाओंको, खासकर खादीकी बिक्रीमें, पूरे दिलसे सहयोग देंगे। अगर खादीकी माँग बराबर बढ़ती गई तो हरएक अकाल-पीड़ित क्षेत्रमें खादी-उत्पादनके इस फायदेमन्द कामका इन्तजाम किया जा सकता है।

सिर्फ 'हिन्दुस्तानी'

एक मुसलमान मित्र ने, जो अपनेको कांग्रेसका पुराना कार्यकर्ता कहते हैं, लिखा है:

'टाइम्स ऑफ इंडिया' ने अपने १२ सितम्बरके अंकमें आपके 'हरिजन' में प्रकाशित 'कांग्रेसियों, सवाधान!' शीर्षक लेख[1] का सारांश छापा है। मद्रासमें हिन्दी-विरोधी आन्दोलन तथा दण्ड-विधान संशोधन अधिनियम (क्रिमिनल लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट)के उपयोगने जो स्थिति पैदा कर दी है उसके बारेमें आपका स्पष्टीकरण काफी जोरदार है। इसमें शक नहीं कि आपने आन्दोलन करनेवालोंको जो नेक सलाह दी है उससे उन्हें बहुत-कुछ सन्तोष मिलेगा, और वे इस प्रश्नपर विचार करनेका सही तरीका अपनायेंगे। मगर इस बारेमें मैं आपका ध्यान एक ऐसे गलत प्रयोगकी तरफ खींचना चाहता हूँ जो मालूम होता है हिन्दुस्तानकी 'राष्ट्रभाषा' के सम्बन्धमें लापरवाहीके कारण किया जा रहा है। मैं जहाँ तक जानता हूँ, इस विषयके कांग्रेसके प्रस्तावमें 'हिन्दुस्तानी' शब्द रखा गया है, न कि 'हिन्दी'। आपने, खुद अपने तमाम भाषणों और लेखोंमें हमेशा 'हिन्दुस्तानी' शब्दका इस्तेमाल किया है। इसलिए यह अफसोसकी बात है कि अधिकांश कांग्रेसजन, कांग्रेसके प्रस्तावके बरखिलाफ 'हिन्दी' शब्दका इस्तेमाल करते आ रहे हैं।

इस गलत शब्दके इस्तेमालसे कांग्रेसके मुख्तलिफ सदस्योंमें बहुत गलतफहमी और तनाजा पैदा हो गया है। मेरे विचारसे न तो वह 'हिन्दी' है, न 'उर्दू'। इसलिए जब कांग्रेसवाले राष्ट्रभाषाका जिक्र करे, तब उन्हें 'हिन्दुस्तानी' शब्दका ही इस्तेमाल करना चाहिए।

मैं इस तजवीजका तहेदिलसे समर्थन करता हूँ। राष्ट्रभाषाका केवल एक ही नाम है, और वह है 'हिन्दुस्तानी'।

सेगाँव, १९ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २४-१२-१९३८

२५८. मद्य-निषेध

काग्रेसी प्रान्तोमे मद्य-निषेधका काम जिस तरह हो रहा है, उसमें उस भावनाके दर्शन नही होते जो उसके मूलमे थी। इसमे मन्त्रियोका शायद कोई कसूर नही है, क्योकि इसके लिए लोकमत उतना जोरदार नही है, न काग्रेसी मत ही प्रबल है। काग्रेसजन इस बातको महसूस करते हुए नही मालूम पडते कि मद्य-निषेधसे लाखो आदमियोको नई जिन्दगी हासिल होगी। इससे उन्हे ठोस रूपमे नया नैतिक और आर्थिक बल प्राप्त होगा। वे इस बातको महसूस नही करते कि मद्य-निषेधसे कांग्रेसको ऐसी प्रतिष्ठा और इज्जत मिलेगी जैसी और किसी कामसे शायद ही मिले। वे यह नही देखते कि मद्य-निषेधके कार्यक्रमको चलाना जनताके जीवनके साथ हमारे तादात्म्य का और इस दृढ निश्चयका द्योतक है कि शराबकी आमदनीसे कोई वास्ता नही

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० ३६०-३।

रखा जायेगा। और तो और, राजाजी-जैसे मद्य-निषेध के पक्के हिमायतीने भी इतना साहस नही किया कि शराबसे होनेवाली आमदनी शराबखोरीकी बुराई दूर करनेमें ही लगाते। मेरे खयालमे इस विषयमे वह जरूरतसे ज्यादा सावधान साबित हुए है। काग्रेसजनोने यह सीखा है कि आजादी हासिल करनेके लिए कोई भी कीमत चुकाना ज्यादा नही है। लेकिन अगर हम शराब और नशेबाजीके शिकार बने रहे, तो हमारी आजादी गुलामोकी आजादी होगी। तमाम प्रान्तोमे पूर्ण मद्य-निषेध करनेके लिए कोई भी कीमत क्या बहुत ज्यादा है?

इतनेपर भी हम देखते है कि मन्त्री लोग मद्य-निषेधके कार्यक्रमोको विशुद्ध बनियेपनकी भावनासे बना रहे है। उन्हे उससे होनेवाली आर्थिक क्षतिका ध्यान रहता है। मुझे ताज्जुब होता है कि अगर सभी शराबी और अफीमची यकायक शराब और अफीमका परित्याग कर दे तो वे क्या करेगे! शायद यह जवाब दिया जाये कि उस हालतमे आयमे आई कमीकी पूर्तिके लिए कुछ-न-कुछ प्रबन्ध तो वे करेगे ही। लेकिन वे स्वेच्छापूर्वक क्यो नही कर डालते? अच्छाई तो निस्सन्देह किसी कामको स्वेच्छापूर्वक करनेमे ही है, मजबूरन करनेमे नही। याद रखना चाहिए कि भूकम्पसे सालाना आमदनीसे ज्यादा नुकसान हो जानेपर भी बिहार सरकारका काम रुक नही गया था। और जब अकाल तथा बाढोसे लोग तबाह होते है और सरकारी आमदनीमे कमी पडती है, तब प्रान्तीय सरकारे क्या करती है? मै तो मानता हूँ कि काग्रेसी सरकारे आमदनीकी खातिर मद्य-निषेधके काममे देरी करके अपनी प्रतिज्ञा का, शब्दोमे न सही पर भावनाकी दृष्टिसे, जरूर भग कर रही है।

नये कर लगाकर वे आमदनी कर सकती है और इसके लिए उन्हे ईमानदारीके साथ कोशिश भी करनी चाहिए। शराबखोरी शहरोमे बहुत ज्यादा है, अत इन इलाकोमे वे नया कर लगा सकती है। मद्यनिषेधसे जहाँ अनेक मजदूर काम करते है उन कारखानोके मालिकोको प्रत्यक्ष मदद मिलती है। इन कारखानोके मालिक निश्चय ही आमदनीकी उस कमीको पूरा कर सकते है। अहमदाबादमे कुछ ही महीने मद्य-निषेधका जो काम हुआ है उससे मालिक-मजदूर दोनोको आर्थिक लाभ हुआ है। इसलिए कोई वजह नही कि इस बहुमूल्य सेवाके लिए मालिकोसे क्यो न कुछ वसूल किया जाये? इसी तरह आमदनीके और भी अनेक साधन आसानीसे ढूँढे जा सकते है।

मैने तो निस्सकोच यह सुझाव भी दिया है कि जहाँ अतिरिक्त आयकी कोई अमली सूरत न हो, वहाँ भारत सरकारसे सहायता या कम-से-कम बिना ब्याज कर्ज ही लेनेकी माँग की जाये।

मद्य-निषेध तत्काल न करनेकी वाजिब वजह सिर्फ यह हो सकती है कि इस बारेमे पहलेका कोई अनुभव नही है, और इसलिए इसमे सावधानीकी जरूरत है। सेलमके प्रयोगको मैने इसी रूपमे लिया था। मद्रास-सरकार पहला कदम बहुत सोच-समझकर, पर दृढ निश्चयके साथ उठाना चाहती थी और उसकी असफलताका खतरा उठानेके लिए तैयार नही थी। सेलमके प्रयोगमे जो सफलता प्राप्त हुई उससे इस सम्बन्धकी सारी योजनाको पूरी करनेका काफी प्रोत्साहन मिलना चाहिए। लेकिन

हरएक सरकारकी इस इच्छाको समझना असम्भव नही है कि स्थानीय अनुभव हासिल करनेके लिए वे मद्य-निषेधका काम क्रमश करे। कांग्रेसकी कार्य-समितिने पूर्ण मद्य-निषेधके लिए तीन सालका जो समय रखा उसकी यही वजह थी। यह वक्त तेजीके साथ बीता जा रहा है। और यदि भारतको निश्चित समयके अन्दर इस बुराईसे मुक्त होना है, तो रुपयेकी कमी या आमदनीमे घाटा होनेके भयसे इसमे कोई देरी नही होनी चाहिए। और अगर इस कार्यक्रमको पूरे उत्साहके साथ चलाया जाये, तो इसमे कोई सन्देह नही कि दूसरे प्रान्त और रजवाड़े भी इसका अनुसरण करेगे।

सेगाँव, १९ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१२-१९३८

२५९. जिला बोर्ड

मुझे अक्सर ऐसा लगा है कि जिला बोर्ड और म्युनिसिपल कौंसिले कुछ ऐसी अनावश्यक चीजे है कि जिनके लिए लोगोको व्यर्थ ही कर देना पड़ता है। असहयोग के दिनोमे मेहमदाबादमे यह बात मुझे अच्छी तरह जँच गई। तब मैंने लोगोको सलाह दी थी कि अगर वे अपनी कौंसिलका या उसे जो-कुछ भी कहा जाता हो उसका, बहिष्कार कर दे, तो वे अपने यहाँकी सफाई तथा रोशनीका काम खुद ही कर सकते है और बिना किसी ढकोसले या ज्यादा खर्चेके अपने स्कूलोंको भी चला सकते है। इतना ही नही, इन सवालोको लेकर सम्बन्धित पक्षोमे जो बहुत सारा लड़ाई-झगडा चलता है उससे भी बच सकते है।

कुछ दिन पहले जब सूरत जिला बोर्डके एक सदस्यने आकर मुझे बोर्ड द्वारा जारी किया हुआ एक गश्तीपत्र दिखलाया और अपनी योजनापर मेरा आशीर्वाद माँगा, तो अपनी बातकी सचाई मुझे और भी स्पष्ट हो गई। यह योजना बोर्डके सदस्योके रूपमे उसमे जो-कुछ करनेकी उम्मीद की जाती है उसकी सीमासे आगे जाती थी। बोर्डमे चालीस सदस्य है। मै याददाश्तसे यह लिख रहा हूँ। दरअसल, उन्हे इसके सिवा और कोई काम नही है कि कुछ समयके अन्तरसे बोर्डकी बैठक करके खर्चेकी मदोपर बहस कर लिया करे। बोर्डमे कांग्रेसका भारी बहुमत है और कुछ सदस्योको इस बातका बड़ा खयाल है कि हम कुछ काम करे। लेकिन वे यह नही जानते कि जन-सेवाके लिए अपने समयका वे किस तरह उपयोग करे। बोर्डकी आमदनी इतनी नही है कि उसके सब महकमो और खासकर सड़कोको सुव्यवस्थित और ठीक हालतमे रखा जा सके। इसलिए गश्तीपत्रमे इस बातका बडा बखान किया गया है कि अप्रैलमे राष्ट्रीय सप्ताहकी अवधिमे बोर्डके सदस्य और कर्मचारी सड़कोंकी मरम्मत वगैरहका काम करेगे। इस कहावतके अनुसार कि कुछ भी न करनेसे जो-कुछ भी किया जाये वही ठीक है, राष्ट्रीय सप्ताहमे काम करनेका विचार निश्चय ही सराहनीय था। लेकिन इतना अच्छा नही था कि मै भी उसकी प्रशंसा कर देता। इसलिए

मैंने कहा "अगर आप मेरा आशीर्वाद चाहते है, तो आपको अभी काम शुरू कर देना चाहिए, और न केवल एक सप्ताहमे छुट्टीके तौरपर बल्कि अपने पूरे कार्यकालमें इस तरह नियमित रूपसे काम करते रहना चाहिए, जैसेकि वैतनिक कर्मचारियोसे आशा की जाती है — हाँ, अपनी घरेलू तथा दूसरी जिम्मेदारियोका आप जरूर ध्यान रखे। दूसरे शब्दोमे, आपको राष्ट्रीय सेवक बन जाना चाहिए। सरकारी तौर-पर आप केवल आवश्यक मदोको स्वीकार-अस्वीकार करनेके लिए ही एकत्र हो, लेकिन छोटी-छोटी नियुक्तियो आदिपर लम्बी बहसो या तू-तू मैं-मैं मे कभी न पडे। आपका सच्चा और ठोस काम तो पदके दायरेके बाहरका होना चाहिए। आप खुदकी बनाई हुई अव्वल दर्जेकी सडकोपर गर्व करे और अपने स्कूलोका सचालन योग्यतापूर्वक करे। इसका ध्यान रखे कि आपके जिलेको पानी पर्याप्त मिलता है या नही, खेतोमे खाद ठीक तरहसे दी जाती है या नही और उन्ही चीजोकी खेती होती है या नही जोकि राष्ट्रीय दृष्टिसे उपयोगी है। लोगोको आप सफाईका सही तरीका सिखाये और उन्हे शराबखोरीसे रोककर स्वेच्छापूर्वक मद्य-निषेध करे। बडी उम्रवालोके लिए आप रात्रि-शालाएँ चलाये। अगर आप ईमानदारीके साथ अपना फर्ज अदा करना चाहते है, तो आपके लिए इतना काम है कि जिसे करना आपके लिए सहज नही है। ऐसा करके आप दूसरे बोर्डोके सामने भी एक उदाहरण रखेगे और इस बातको साबित कर देगे कि आपके निर्वाचकोने आपका चुनाव ठीक ही किया था। इसका नतीजा यह होगा कि खुद निर्वाचक और दूसरे लोग भी कार्यकर्ताओका एक ऐसा स्वयसेवक दल बन जायेगे जो अपने आसपासके लोगोके जीवनमे क्रान्तिकारी तबदीली कर देगे। जो-कुछ मै आपसे कह रहा हूँ उसपर अगर आप दिलसे गौर करे तो आपको फौरन इस बातका पता लग जायेगा कि हाथकी कताई, धुनाई और बुनाईके बगैर आप यह सब नही कर सकते। इससे ऐसे हरएक लडके-लडकी, पुरुष और स्त्रीको फुरसतके बाद पूरा काम दिया जा सकेगा, जो यह हलका काम करनेके अयोग्य नही है, और अपने जिलेकी आमदनीमे आप जल्दी ही कई लाख रुपयेकी वृद्धि कर लेगे। जब आप इस कार्यक्रमको पूरा कर लेगे, तब मै आपको आशीर्वाद दूँगा। बल्कि मै आपका विज्ञापन करनेवाला एजेट ही बन जाऊँगा। अगर आप ऐसा नही कर सकते, तो फुरसतके वक्तकी अपनी देशभक्तिका दिखावटी प्रदर्शन करके अपने कामके साथ आप खिलवाड न करे।"

मगर मुझे भय है कि हिन्दुस्तानके जिला बोर्ड स्वेच्छापूर्वक सेवाके इस कार्यक्रम को, जिसे कि मैंने ऊपर बतलाया है, पूरी तरह पसन्द नही करेगे। इसलिए मेरा प्रस्ताव है कि कम-से-कम कांग्रेसी प्रान्त ही इस सम्बन्धमे एक आदर्श कानून बनाये जिसका लक्ष्य म्युनिसिपल, स्थानीय और जिला बोर्डोको उनकी कार्यक्षमताके आधारपर गठित करना हो। मै यह तो चाहता हूँ कि ये निर्वाचित हो, लेकिन प्रबन्ध सम्बन्धी कोरा दफ्तरी काम करने लायक स्त्री-पुरुष बहुत कम निकलेगे। हरेक सदस्यका काम अच्छी तरह निर्धारित कर दिया जायेगा। मै तो चाहूँगा कि वैतनिक कर्मचारी चुने हुए सदस्योके साथ-साथ काम करे। इस तरह, चुने हुए सदस्य मालिकके साथ-साथ

उनके साथी कार्यकर्ता भी होंगे। बोर्डोंके कामकी मैंने जो कल्पना कर रखी है, यह उसकी बहुत मोटी रूपरेखा है। कांग्रेस, क्रान्तिकारी शब्दके व्यापक और बुद्धिमत्तापूर्ण अर्थमें एक क्रान्तिकारी संस्था है। उसका सब काम मौलिक ही होना चाहिए। उसकी सारी हलचलोंका उद्गम, उसका ध्येय अहिंसा होना चाहिए। उसका रूप एक ऐसी सुग्रथित शृंखलाका होना चाहिए, जिसमें छोटे-से-छोटा घटक बड़े-से-बड़े घटकके साथ एक निश्चित ढंगसे जुड़ा हो, जिससे जो कोई चाहे वह यह देख सके कि यह मुख्य उद्देश्यकी पूर्तिके लिए बनी हुई एक कलापूर्ण कृति है। इसके लिए कांग्रेसमें एक मन और एक इच्छाका होना जरूरी है — किसी एक आदमीका मन और इच्छा नहीं, बल्कि अनेक स्त्री-पुरुषोंके मनों और इच्छाओंका एकीकरण।

सेगाँव, १९ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१२-१९३८

२६०. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
१९ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

मैं तुम्हें एक पंक्ति भी लिखकर नहीं भेज पाया हूँ।

ठीक है, मेरे लिए जो कम्बल बनाया गया है उसे मैं नहीं छोड़ूँगा। मुझे नहीं मालूम कि मैं जो कम्बल ओढ़ रहा हूँ वह पुराना ही है या नया। मैं पूछताछ करूँगा और नया ले लूँगा। पुरानेका मैं क्या करूँ?

औंधका संविधान तैयार हो जायेगा तो तुम्हें भी एक प्रति जरूर भेज दी जायेगी।

यदि क०[1] में उत्तरदायी सरकार बने तो क्यों न तुम इसकी पहली मन्त्री बनो और अपनी मर्जीके मुताबिक उसके भाग्यका निर्माण करो। जब तुम आओगी तब हम इस विषयपर चर्चा करेंगे।

मुझे लगता है कि मुझे पहली जनवरीको बारडोलीके लिए रवाना हो जाना पड़ेगा। वहाँ कार्य-समितिकी बैठक ७ को हो रही है, इसलिए तुम्हें अहमदाबाद होते हुए आना चाहिए। यदि तुम ३ को चल पड़ो तो बारडोली ६ को पहुँच जाओगी। और लिखनेके लिए वक्त नहीं है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६५४) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६४६३ से भी।

१. कपूरथला।

२६१. पत्र : अगाथा हैरिसनको

सेगाँव, वर्धा
२० दिसम्बर, १९३८

प्रिय अगाथा,

तुम्हारे सुन्दर पत्रका उत्तर दिये बिना मैं कैसे रह सकता हूँ? क्रिसमसका अंग्रेजोंके लिए क्या अर्थ है, मैं जानता हूँ। मेरी समस्त शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ है।

मैं जानता था कि मीराके पत्रको तुम ठीक समझ लोगी। हाँ, उससे बराबर सम्पर्क रखो। वह ईश्वरके हाथोंमे सकुशल है।

जब भी मन करे यहाँ आ जाया करना और जब तक तबीयत हो, बैठना।

आज किसीने तुमसे गपशप नही की होगी। [इसलिए] कुछ इसीके द्वारा सही।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५०६) से।

२६२. पत्र : महादेव देसाईको

२० दिसम्बर, १९३८

चि० महादेव,

यह पत्र तो केवल यह याद दिलानेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हे भूला नही हूँ। मेरी व्यस्तताका पार नही है। लेकिन, लगता है, भगवानको यही मंजूर है। मैं निर्धारित समयसे अधिक काम नही करता। तुम्हारा वहाँ रहना तो उपयोगी सिद्ध हो ही रहा होगा।

अमतुस्सलाम बहुत बीमार है——मलेरियासे। भीड बहुत है। पन्नालाल, गंगाबहन, नानीबहन, ये सब आये है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ११६८६) से।

२६३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२० दिसम्बर, १९३८

चि० ब्रजकृष्ण,

यह है विचित्र[1] का उत्तर। अब क्या किया जाय?

भाई अच्छे होगे।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४५७) से।

२६४. पत्र : एन० एम० जोशीको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

प्रिय जोशी,

तुम्हारे उन दो पत्रोके लिए मै बहुत आभारी हूँ जिनमे तुमने मेरे पत्रका विस्तृत उत्तर दिया है। मुझे इस बात की भी खुशी है कि परुलेकरने थोडी तकलीफ उठाकर अपने भाषणको लिख डाला था। हालाँकि चिह्नित अंश भाषणमे नही है, लेकिन उसमे काफी आपत्तिजनक चीजे है और मेरे द्वारा भेजी गई रिपोर्टमे परुलेकरके मुँहसे जिस किस्मकी बाते कहलाई गई है, उनसे काफी-कुछ मिलती-जुलती बाते है। निम्नलिखित अशोपर ध्यान दो :

> वे अकसर ब्रिटिश अफसरशाहीको शैतानशाही कहते थे। मुझे शैतानशाहीसे भी ज्यादा सख्त कोई शब्द खोजना होगा, क्योंकि यह कार्य कहीं ज्यादा शैतानियतपूर्ण है। . . . वे जानते हैं कि विधेयक आपके हितमें नहीं है और इसीलिए वे आपसे भयभीत है। उन्हें घबराहट होती है। वे सोचते हैं कि आप उनकी गांधी टोपियाँ उतार फेंकेंगे। इस 'गांधी-टोपी' सरकारने अपने कार्योंसे दिखला दिया है कि वे गरीबोंके मित्र नहीं हैं। वे अमीरोंके हित-साधनके लिए सरकारमें

१. विचित्र नारायण शर्मा, एक खादी-कार्यकर्ता, जिसने मेरठके गांधी आश्रम चरखा संघसे लिखा था कि अकाल-पीड़ित क्षेत्रमें खादी-कार्य करनेमें हानि अवश्यम्भावी है। विचित्र नारायण शर्माका पत्र १४ दिसम्बर, १९३८ का था।

बैठे हैं। . . . यदि वे बहसको टालते हैं तो उन्हे विधेयकके बारेमें बम्बईमें चर्चा करनी पड़ेगी जहाँके लोग राजनीतिक दृष्टिसे ज्यादा जागरूक हैं। बम्बईमें मजदूर लोग विराट प्रदर्शन करेंगे और इतना ज्यादा बावेला खड़ा करेंगे कि इस विधेयकके लिए जो लोग जिम्मेदार हैं उन्हे चैनकी नींद हराम हो जायेगी। मजदूरोंकी तुलना सोते हुए शेरसे की जा सकती है। मैं सरकारको आगाह करता हूँ कि वह इसे न जगाये। वे उसके साथ छेड़खानी न करे। वे उस पर हमला न करे। उन्हें समझ लेना चाहिए कि यदि वे उसे उत्तेजित करेंगे, तो श्रमिक वर्गमें इतनी ताकत है कि वह शक्तिशाली-से-शक्तिशाली सरकारको मुँहतोड़ जवाब दे सके। . . . यह विधेयक प्राणलेवा जहरीली गोली है जिसपर चीनी लिपटी हुई है। हमें चीनीकी परत खुरचकर अलग कर देनी चाहिए और जहरको इस विधेयकके बनानेवालोंके निगलनेके लिए छोड़ देना चाहिए।

सोसायटीके एक सदस्यके मुँहसे ऐसी बाते निकले, यह मैं नही चाहूँगा।

नागरिक स्वतन्त्रताको खतरेकी आपकी बातका जहाँ तक सवाल है, मैं चाहूँगा कि आप मुझे ठोस सुझाव दे ताकि प्रान्तीय सरकारे कम-से-कम जान तो सके कि लोकनेता क्या सोच रहे हैं और कर रहे हैं। अथवा, क्या आपका मतलब यह है कि प्रान्तीय सरकारोको इसकी चिन्ता नही करनी चाहिए कि लोकनेता क्या कहते और करते हैं? मैं इस समय यह नही सोच रहा हूँ कि जो लोग हिंसा भड़कानेवाले या कानूनके खिलाफ जानेवाले भाषण करते हैं, उनको क्या सजा दी जा सकती है। मैं तो शान्तिपूर्ण कार्रवाईकी बात सोच रहा हूँ, जैसेकि बेसमझे अनाप-शनाप बोलनेवाले वक्ताओंको चेतावनी देना, और जिन संस्थाओंके वे सदस्य हैं उनके साथ सम्पर्क स्थापित करना। जहाँ तक परुलेकरका सम्बन्ध है, मैं और जाँच-पड़ताल कर रहा हूँ। किसी भी सूरतमें, यह बात मेरे दिमागमें स्पष्ट है कि उनके खिलाफ कोई अदालती कार्रवाई नही होनी चाहिए और यही बात मैं खेरको लिखने जा रहा हूँ।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल।

२६५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

प्रिय जवाहरलाल,

मौलाना साहब काँटोका यह ताज पहनना नही चाहते। यदि तुम फिर कोशिश करना चाहते हो तो कृपया जरूर करो। लेकिन यदि तुम कोशिश नही करते या मौलाना तुम्हारी सुनते नही, तो फिर पट्टाभि ही एकमात्र विकल्प लगते है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३८, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२६६. पत्र : पृथ्वीसिंहको

सेगाँव
२१ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पृथ्वीसिंह,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले है। मै इतना व्यस्त रहा कि तुम्हे इससे पहले पत्र नही लिख सका। परन्तु प्यारेलाल तुम्हारी सारी जरूरतोका ध्यान रखते रहे है। ऊन लिया जा रहा है और मै उसे बुनवा लूँगा तथा बेशक इसका इस्तेमाल खुद करूँगा। हाँ, यदि प्रदर्शनीके लिए इसका ज्यादा अच्छा उपयोग करना तय हुआ तब दूसरी बात है। अभी मैने कोई निश्चय नही किया है।

जब तक तुम्हारी स्थिति कैदीकी है तब तक हो सकता है कि अधिकारियोको तुम्हारे पत्रका प्रकाशन अच्छा न लगे। अत. यद्यपि मै फिलहाल इसका प्रकाशन नही करना चाहता फिर भी मै उन लोगोके बीच जो हिंसापर अहिंसाकी अद्वितीय श्रेष्ठताके बारेमे आश्वस्त नही है, इसका बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करने जा रहा हूँ। जहाँ तक तुम्हारा अपने मामलेका सम्बन्ध है, तुम आश्वस्त रहो कि जो भी मेरे अधिकारमे है वह मै अवश्य करूँगा। इस विषयमे तुम्हे तब तक कुछ करनेकी जरूरत नही है जब तक कि मै तुम्हे ऐसी सलाह नही देता।

कनु द्वारा लिया गया तुम्हारा बड़ा सुन्दर चित्र मेरे पास है जिसे प्यारेलाल तुम्हारे भाईके पास भेज रहे हैं। वह अलगसे तुम्हे पत्र लिखेंगे।

महादेव अब बिलकुल ठीक है। अलबत्ता, मै नही चाहता कि वह अपने रोजमर्राके काममे फिरसे लग जाये।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६३२) से। सी० डब्ल्यू० २९४३ से भी, सौजन्य: पृथ्वीसिंह।

२६७. पत्र: शामलालको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

प्रिय लाला शामलाल,

आपके पत्रसे मुझे आश्चर्य हुआ है, क्योंकि आपने अपने पिछले पत्रमे यह कहा था कि कैदी सरकारको तो कोई आश्वासन देनेके लिए तैयार नही है किन्तु वे मुझे आश्वासन देनेके लिए तैयार है। अब आप कहते है कि वे मुझे भी कोई आश्वासन नही देंगे। यह परिवर्तन क्यो? कृपया यह बात आप कैदियोके ध्यानमे लाये कि यदि वे मुझे भी आश्वासन नही दे सकते, तो जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है इसमे मेरा कोई बस नही चलेगा।

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२८७) से।

२६८. पत्र : जमनालाल बजाजको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

चि० जमनालाल,

तुम्हारे दोनो पत्र मिले थे। पहलेपर अमल किया गया। दूसरेके लिए आग्रह क्यो हो? जलियाँवाला बाग मीटिंगमे तुम न आ सको तो कोई हर्ज नही। भले ही केशवदेवजी हाजिरी दें। वोटकी तो जरूरत नही होगी। तुम्हारी तबीयत खराब है, ऐसा तुम निश्चय न कर बैठना। तबीयतको आरामकी जरूरत है। वह मिलनेसे ठीक हो जायेगी। तुम हिन्दुस्तानमे या लकामे थोड़ी यात्रा कर लो तो काफी हो जायेगा। काम मात्रकी चिन्ता छोड़ दो।

रजब अलीका कारोबार ठीक है क्या? जानकीबहन कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९९६) से।

२६९. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

चि० मनुड़ी[1],

बारडोली आ सके, तो जरूर आ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १५७३) से, सौजन्य : मनुबहन सु० मशरूवाला।

१. गांधीजी की पौत्री, हरिलाल गांधीकी पुत्री।

२७०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२१ दिसम्बर, १९३८

भाई वल्लभभाई,

मौलाना तो साफ मना कर रहे हैं। ऐसी स्थितिमे उनपर ज्यादा दबाव डालना ठीक नही लगता। मुझे लगता है, पट्टाभिके बारेमे विचार करना ही ठीक होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३०

२७१. सन्देश : अखिल भारतीय महिला सम्मेलनको[1]

[२२ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

महिलाएँ अपना उद्धार केवल आप ही कर सकती हैं, पुरुष नही कर सकते। महिलाएँ यदि चाहे तो अहिंसाकी सिद्धिमे सहायक हो सकती है। चरखेके द्वारा वे अपनी गरीब बहनोकी सेवा कर सकती हैं। खद्दर पहनकर वे गरीब घरोकी सहायता कर सकती है। वे हिन्दू-मुस्लिम एकता स्थापित कर सकती हैं। वे पर्देको खत्म कर सकती है और अस्पृश्यताके भूतको भगा सकती है।

दिल्लीमे हो रहा महिला सम्मेलन क्या इनमे से किसी कार्यको पूरा करनेकी जिम्मेदारी लेगा?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २८-१२-१९३८। अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० १०३६२) से भी, सौजन्य : अखिल भारतीय महिला सम्मेलन।

१. सम्मेलन दिल्लीमें २८ दिसम्बरको शुरू हुआ था। अमृत कौरने उसकी अध्यक्षता की थी। बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३८के अनुसार गांधीजी का यह सन्देश गुजरातीमें था।

२. देखिए अगला शीर्षक।

२७२. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव, वर्धा
२२ दिसम्बर, १९३८

प्रिय पगली,

मैं अभी तो अपना बहुत-सारा काम अपने सहायकोंके जरिये ही कर रहा हूँ। अन्यथा मैं उसे निपटा ही नही सकता। मैं मानता हूँ कि बारडोलीमे तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहेगा।

इसके साथ ताईके लिए एक पत्र है और सम्मेलनके लिए एक सन्देश[1] है। तुम्हे जब एक मिला है तो स्वभावत वह भी एक चाहती है।

आशा है, तुम जब चली थी तब शम्मीकी तबीयत अच्छी ही रही होगी। मेरा पत्र तुम्हे पसन्द आया, जानकर खुशी हुई।

महादेवको २४ तारीख को वापस आ जाना चाहिए।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च :]

यहूदियोकी अपीलके जवाबका मसविदा इसके साथ है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९००) से, सौजन्य · अमृत कौर। जी० एन० ७०५६ से भी।

२७३. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगाँव, वर्धा
२२ दिसम्बर, १९३८

चि० मणि,

तू और मृदुला ठीक मिली हो। तेरे दोनो पत्र मिल गये। आराम अच्छी तरह लेना। तू कातती है, यह बहुत अच्छा है। खुराक वगैरहका हाल लिखा जा सकता हो तो लिखना। मृदुला समय किस तरह बिताती है?

महादेव ४ दिनके लिए कलकत्तेके पासकी गोशाला देखने गये है। २४ तारीख को वापस आनेकी सम्भावना है। मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। बा को वहाँ जानेकी

१. देखिए पिछला शीर्षक

इजाजत तो अभी नही मिली। वह कन्या गुरुकुलके लिए देहरादून जा रही है। मै पहली जनवरीको बारडोली जा रहा हूँ।

तुझे और मृदुलाको,

बापूके आशीर्वाद

श्री मणिबहन पटेल
स्टेट जेल
राजकोट — काठियावाड़

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृ० १२३

२७४. पत्र : बलवन्तसिंहको

२२ दिसम्बर, १९३८

चि० बलवतसिंह,

मैंने तुमारे पत्र पर काफी विचार किया। तुमसे गलती तो हो गई है। लेकिन गलती कौन नही करता है? तुमारी सरलता इसमें है कि गलती शीघ्र कबूल भी कर देते हो। जो निर्णय हुआ है उसे कायम रखनेमे गोमाताकी सेवा है तुमारा हम सब का भला है। अगर सचमुच तुमारा क्रोध उतर जायगा तो अतमें सब कुछ अच्छा ही होगा। तुमारी और पारनेरकरकी परीक्षा हो जायगी। पारनेरकर मागे सो मदद उसको देते रहो। बाकी कार्य क्या हो सकता है देख कर मुझे बताओ। चित्तकी प्रसन्नता रहनी चाहीये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१३) से।

२७५. भाषण : स्काउटोंकी रैलीमें[1]

सेगाँव
[२२ दिसम्बर, १९३८][2]

आपने कवायदका जो प्रदर्शन किया है, उसके लिए मैं आपको वधाई देता हूँ। आपके प्रशिक्षणका यह अनिवार्य अग है। यद्यपि आपकी शुरुआत वहुत अच्छी है, तो भी आपको अभी बहुत लम्बा रास्ता तय करना है।

सामूहिक कवायदका उद्देश्य यह होता है कि लोगोके बड़े-बड़े समूहोको कोई भी शारीरिक क्रिया लयके साथ, शीघ्रतासे तथा बिलकुल ठीक विधिसे करनेकी सामर्थ्य प्राप्त हो सके। यदि अपनी सार्वजनिक सभाओ और सार्वजनिक समारोहोमें भी हम वैसा ही कर सकें तो राष्ट्रीय समय और शक्तिकी कितनी वचत हो! पुरुषो तथा महिलाओके समूहो द्वारा अनुशासित ढंगसे शारीरिक क्रिया करनेमें एक मौन सगीत रहता है। अभी मैंने आप लोगोसे कहा कि आप थोडा पास आ जायें, जिससे मेरी धीमी आवाज आप तक पहुँच सके। यदि अपनी कवायदमें आपने काफी ज्यादा तरक्की कर ली होती तो आप सहज भावसे और बिना किसी शोर या अव्यवस्थाके मेरे नजदीक सरक कर आ सकते थे। कवायदमें ऐसी लय और ऐसा सगीत होता है कि क्रिया सहज रूपसे सम्पन्न हो जाती है और इससे थकावट पास नही फटकती। यदि ३० करोड़ लोगोके पूरे राष्ट्रको इस तरह अभ्यास कराया जा सके कि वे एक साथ चले और एक साथ काम करे और जरूरत पड़नेपर एक होकर एक साथ मर मिटे तो हम विना एक भी प्रहार किये स्वतन्त्रता प्राप्त कर ले और ऐसा दृष्टान्त प्रस्तुत करे जो सारे ससारके लिए अनुकरणीय हो।

मुझे यह देखकर विशेष प्रसन्नता हुई कि वर्धाके खोजा वोर्डिंग हाउसने आपकी स्काउट रैलीमें भाग लेनेके लिए अपने यहाँके स्काउट भेजे। होना भी यही चाहिए था। वर्धा शिक्षा योजनामें वाल स्काउटोके प्रशिक्षणकी भी व्यवस्था की गई है। यदि यह प्रशिक्षण पारस्परिक अविश्वास और सन्देह दूर करनेमें सहायक नही होता और विभिन्न वर्गो और जातियोमे सौहार्दकी वह परिपूर्ण भावना नही पनपाती जिसका यद्यपि जाकिर हुसैन समितिकी रिपोर्टमे कोई स्पष्ट उल्लेख तो नही है लेकिन जो इसके वावजूद उस योजनाका अभिन्न अग है, तो इसका कोई मृत्य नही। वर्धा

१. प्यारेलालके "वीकली लेटर" से उद्धृत। इस रैलीका आयोजन वर्धा शिक्षा-योजनाके अन्तर्गत छात्र-अध्यापकों के लिए वर्धामें किए गये स्काउट-कलाके २१ दिनके प्रशिक्षण-क्रमके बाद किया गया था।

२. तारीख हिन्दू, २३-१२-१९३८ से ली गई है।

शिक्षा योजनाका उद्देश्य विद्यार्थियोंको मात्र पढ़ने-लिखनेकी शिक्षा देना नहीं है। इसका उद्देश्य इस प्रकारके जीवनकी शिक्षा देना है, जिससे हमारे करोड़ों लोगोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति होगी। इसके पीछे विचार यह रखा गया है कि यह एक जीवन्त और जीवनदायी प्रयोग बने। इसलिए अध्यापकोंको, जिन्हें इस शिक्षाका प्रचारक बनना है, अधिक विस्तृत और व्यापक प्रशिक्षणकी आवश्यकता है। स्काउट-कला उस प्रशिक्षणका महत्वपूर्ण और उपयोगी अंग है।

श्रद्धेय मालवीयजी द्वारा संस्थापित पुरानी सेवा-समितिके कार्यके बारेमें मैं कुछ जानता हूँ। इनमें पण्डित हृदयनाथ कुंजरूने जो काम किया, मैं उसके विषयमें भी जानता हूँ; और मैं समितिके व्यवस्थापक श्री बाजपेयीके सम्पर्कमें भी आया हूँ। इसलिए यदि मैं सुझावोंके रूपमें कुछ बातें कहूँ तो यह एक मित्र द्वारा की गई बातें मानी जानी चाहिए। मैंने ध्वज-वन्दना समारोह देखा तो उसके बारेमें कुछ अयथार्थताका-सा आभास मिला। आपका गीत आडम्बरपूर्ण भाषामें लिखा गया है। उस गीतमें आपने अपने प्राण उस ध्वजके लिए न्योछावर करनेकी तत्परता प्रकट की है जिसके बारेमें आपने कल्पना की है कि वह एक दिन सारे संसारमें लहरायेगा। जब आप वह गीत गा रहे थे, मैंने अपने-आपसे पूछा कि क्या आप गम्भीरतापूर्वक वैसा ही मानते हैं? मैं यह कहनेकी धृष्टता करूँगा कि इस गीतमें जैसी भावनाएँ व्यक्त की गई हैं, वैसी भावनाओंका सम्बन्ध राष्ट्रीय ध्वजके अतिरिक्त अन्य किसी भी झण्डेसे नहीं होना चाहिए। अन्यथा वे मात्र एक खयाली चीज ही बनकर रह जायेंगी, और उनका आदि और अन्त उस गीत तक सीमित रह जायेगा। लोग बहुत-से झण्डोंके लिए अपने प्राण न्योछावर नहीं कर सकते। यदि आपको अपना अलग झण्डा रखना ही है और ध्वजारोहण समारोह भी करना ही है तो गीतका स्वर धीमा रहना चाहिए। एक बात यह भी है कि मैं देख रहा हूँ कि आपका आदर्श-वाक्य झण्डेपर अंग्रेजीमें लिखा है। मुझे तो यह बड़ा असंगत लग रहा है। आपका आदर्श वाक्य हिन्दुस्तानीमें होना चाहिए। स्काउट-आन्दोलनका उद्देश्य मात्र शारीरिक प्रशिक्षण नहीं, अपितु दिल और दिमागको प्रशिक्षण देना भी होना चाहिए। यदि यह मात्र बाह्याचार तक ही सीमित रहे और आभ्यन्तरिक गुणोंकी उपेक्षा करे तो इस प्रशिक्षणका कोई मूल्य नहीं।

अब दो शब्द यहाँ एकत्रित छात्र-अध्यापकोंसे। इस शिक्षा-योजनाके अन्तर्गत तैयार होनेवाला यह शिक्षकोंका पहला दल है, इसलिए उनपर बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। यह उनकी नहीं, अपितु इस शिक्षा योजनाकी कसौटी है जिसे वे अंजाम देने जा रहे हैं। इसलिए उनकी शोभा इसीमें है कि वे छोटी-बड़ी जो भी बात कहें या छोटा-बड़ा जो भी काम करें, वह ठीक विचार करके बिलकुल सही ढंगसे कहें और करें। जो भी शब्द वे कहें उसे पहले तौल लें और इस बातका ध्यान रखें कि कोई भी शब्द व्यर्थमें न बोला जाये। वे शिल्पके माध्यमसे सारी शिक्षा देने जा रहे हैं और यह एक नया प्रयोग है — ऐसा प्रयोग जो पहले कभी नहीं किया गया। अपने सारे कामोंमें बराबर अपनी बुद्धिके ठीक प्रयोग करनेपर ही यह प्रयोग सफल

होगा। यदि मन, वचन अथवा कर्मसे अप्रामाणिकता बरती गई तो वह इसकी सफलताके मार्गमे सबसे बड़ी बाधा होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-१२-१९३८

२७६. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेगाँव, वर्धा
२३ दिसम्बर, १९३८

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

मैं देखता हूँ कि कुछ रियासतोमे वहाँके रेजिडेंट लोग रियासतके शासकको सरदार पटेल आदि जैसे कांग्रेसी नेताओके साथ किसी भी प्रकारका सम्बन्ध रखने से मना करते है। ऐसे दो मामलोके अकाट्य प्रमाण मेरे पास है। इनमे से एकका उल्लेख मै यहाँ करनेको स्वतन्त्र हूँ। यह राजकोटके सम्बन्धमें है। मै उसकी सारी तफसील बताकर आपको परेशान नही करना चाहता। मै आशा करता हूँ कि केन्द्रीय उच्चाधिकारियोंका यह मशा नही है कि देशी नरेशोको कांग्रेसजनोके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने से मना किया जाये। रियासतोकी जनताने मार्ग-दर्शन और सलाहके लिए हमेशा कांग्रेसपर भरोसा किया है। रियासतोंकी जनतामे बढ़ती हुई चेतनाको देखते हुए इसमें आश्चर्यकी कोई बात नही है कि नरेश लोग अपनी प्रजाके साथ होनेवाले विवादोको निपटाने के लिए कांग्रेसकी सलाह और सहायता लेते है। नरेशोके लिए रेजिडेंटो द्वारा नापसन्दगी जाहिर करनेका मतलब वैसा न करनेके आदेशके समान है। लन्दनमें अभी हालमे जो-कुछ घोषणाएँ की गई है, उनसे प्रकट होता है कि ऐसे मामलोमें उच्च सत्ताका कोई इरादा नरेशोके कार्योंमें दखल देनेका नही है। यदि मेरी यह धारणा ठीक है, और यदि जाँचसे आपको पता चले कि मेरी शिकायत सही है, तो वैसी सूरतमे क्या मै आशा करूँ कि आप सभी रेजिडेंटोको आदेश देंगे कि देशी नरेश लोग यदि अपनी कठिनाइयोको हल करनेमें कांग्रेसजनोकी सहायता लेना चाहे तो उनके मामलेमे वे दखल न दे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स : माइक्रोफिल्म न० १०७; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

२७७. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२३ दिसम्बर, १९३८

प्रिय कु०,

तुम बम्बई गये इसकी मुझे खुशी है। यदि कोई नहीं जाता तो वह गलती ही होती। निस्सन्देह हमारे उद्देश्यके लिए सर्वोत्तम व्यक्ति तुम्हीं थे। मैं चाहूँगा कि यदि सम्भव हो तो तुम जो-कुछ करते रहे हो, उसके बारेमें ३० तारीखको मुझे कुछ और बताओ। लेकिन अगर तुम जरूरी समझो तो उक्त तारीखके और पहले भी मिल सकते हो।

मैं चाहूँगा कि सर पी० ३ जनवरीके बाद जल्दीसे-जल्दी बारडोली आ जायें।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४७) से।

२७८. पत्र : सर्वेपल्ली राधाकृष्णनको

सेगाँव, वर्धा
२३ दिसम्बर, १९३८

प्रिय सर राधाकृष्णन,

जैसाकि आप जानते हैं, मेरा उद्देश्य सदा यह रहा है कि प्रान्तोका भाषाओंके आधारपर पुनर्विभाजन किया जाये। इसके लिए संकेत आन्ध्र-आन्दोलनसे मिला था। इसलिए यदि आन्ध्रको इस समय भी प्रान्तका दर्जा मिल जाये तो मुझे बहुत ही खुशी होगी।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, खण्ड ६, पृ० ३५२-५३ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. इस वक्त डॉ० सर्वेपल्ली राधाकृष्णन सेगाँवमें गांधीजी से यह अनुरोध करने आये हुए थे कि वह राजाजीको मनायें कि मद्रासके स्कूलोंमें हिन्दी अनिवार्य न की जाये; देखिए "पत्र : च० राजगोपालाचारीको", पृ० २६४-५।

२७९. पत्र: इन्दु एन० पारेखको

सेगाँव, वर्धा
२३ दिसम्बर, १९३८

चि० इन्दु,

तेरा पत्र मिला। पिछला भी मिला था। दोनोंमें भावावेश है। तू धीरजके साथ वहाँ नौकरी खोज, या फिर मेरे पास बारडोली आ जा। वहाँ विचार करेंगे। ढीला क्यो पड़ता है? मै पहली जनवरीको रवाना होकर बारडोली पहुँचूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२५६) से।

२८०. पत्र: बलवन्तसिंहको

सेगाँव
२३ दिसम्बर, १९३८

चि० बलवंतसिंह,

तुम्हारा पत्र मैं ध्यानसे पढ गया हूँ। अच्छा है। लेकिन मै देखता हूँ कि गाइओके वियोगकी बर्दाश्त हो नही सकती है। इतना समझो कि यह वियोग अधिक सेवाके कारण ही होता है। मुझे अनुभव हो जावेगा; तुमको भी हो जावेगा। अभी भी जो हो रहा है उसकी योग्यताका तुमारे दिलमे शक रहा है। यह ठीक बात नही है। क्योकि शक है तो तुम्हारे त्यागमे ज्ञान नही है। कलकी तुम्हारी बातसे मैं यह समजा कि तुम्हारा दिल साफ हो गया है और तुमने समझ लीया है कि जो हो रहा है वह सब तरहसे उचित ही है। तुम्हारी क्षुद्रवृत्तिका तो मुझे ख्याल तक नही है। अहंकार की मैंने अवश्य बात की थी और वह भी मैंने तो स्तुतिके रूपमें कहा था। मैंने तो यहा तक कहा कि तुम्हारी गोभक्तिका तो मुकाबला न परनेकर न और कोई कर सकता है। न तुम्हारे जितनी मजदूरी पारनेरकर या और कोई कर सकता है। तुम्हारा अनुभव भी काफी है क्योकि बचपनसे ही खेती और गोरूका अनुभव मिला हैं। मैंने यह भी कहा ऐसा होते हुवे तुम्हारा ज्ञान व्यवस्थित नही है, शास्त्रीय नही है इसलीये पशु विज्ञानमे आगे बढ नही सकते है और तुम्हारा क्रोध तुमको और गाईको भी खा जाता है। इसके साथ मैंने परनेकरको अपना दिल देखनेका कहा, और अपनेमे आत्मविश्वास लगे कि वह कब्जा ले सकता है तब ही कब्जा

ले ले। उस शर्तसे और इस हालतमे कब्जा उसको दीया है। नायकमजी से मैंने बाते कर ली है। वह तुमसे बात कर लेगा। इस वक्त कोई निश्चित रूपसे काम न लीया जाय। थोडा आराम लो, शान्तिसे जो हुवा है और हो रहा है उसपर ख्याल करो, थोडा वाचन मनन करो, और सहज रूपमे जो-जो आश्रमका कार्य मिल जावे वह करो। चिमनलालसे मिल कर जिस कामके लीये उसको ज्यादा भीड़ होगी उसे करो। तुम्हारे जैसे-जैसे सेवकके लीये हमारी सस्थामे कामकी कोई कमी हो ही नही सकती है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१४) से।

२८१. पत्र : सरस्वतीको

सेगाँव, वर्धा
२३ दिसम्बर, १९३८

चि० सुरु,

तेरा खत मिला है। मुझे अगले खतोका कुछ स्मरण नही है तेरे सब खतका उत्तर मैंने भेजा है। मामाके[1] साथ मैंने काफी बाते की है, तुझको मेरे पास भेजने का खूब आग्रह किया है। अब तू विनय करती रहेगी तो शायद तुझे भेज देगे। मुझे लिखा करना। मामा सब चीज जानते है। तुझे निर्भय होकर बात करना चाहीये।

बा आज देहरादून गई है कन्या-गुरुकुल उत्सवमे गई है। हम सब १ ली जानेवारीको बारडोली जाते है। वहाँ एक मास रहना होगा। मैं तो आशा करूँगा कि तू वहा पहोच जायगी।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। कातीके खत आते रहते है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१७४) से। सी० डब्ल्यू० ३४४८ से भी; सौजन्य: कान्तिलाल गांधी।

१. जी० रामचन्द्रन।

२८२. अहिंसा ही एकमात्र मार्ग

श्री ग्रेगका यह पत्र[1] पाठकोंके लाभार्थ मैं यहाँ प्रस्तुत करता हूँ। श्री ग्रेगने खादी और अहिंसापर कई पुस्तकें लिखी हैं। उन्होंने संसारकी घटनाओंका परिश्रम-पूर्वक और सही अध्ययन किया है। पाठकोंको ज्ञात होना चाहिए कि श्री ग्रेग भारतमें काफी दिनों तक रह चुके हैं और यहाँसे अच्छी तरह परिचित हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २४-१२-१९३८

२८३. निर्देश-पुस्तिकाकी जरूरत

श्री मृदुलाबहनने मुझे एक पत्र भेजा है जिसका अर्थ स्वतन्त्र अनुवाद करने पर इस प्रकार है:

> कन्या स्वयंसेविका दल बनानेकी दिशामें काम आरम्भ हो चुका है। स्वाभाविक है कि उन्हें कवायद, झण्डा-अभिवादन, राष्ट्र-गीत आदिमें अभ्यास करवानेकी आवश्यकता है। यदि कोई ऐसी निर्देश-पुस्तिका हो जिसमें ये महत्त्वपूर्ण विषय आ जायें तो इनके सम्बन्धमें सारे भारतमें व्यवहारकी एकरूपता हो सकती है। आजकल तो अराजकता है। हर व्यायामशाला अपनी मनचाही बातें सिखाती है, अपने ही पारिभाषिक शब्दोंका उपयोग करती है या अपने ही शब्द गढ़ लेती है, और बहुत जगह तो आदेश अंग्रेजीमें दिये जाते हैं। जरा सोचिए कि यह कैसी बात है कि गाँवकी लड़कियोंको, जो अंग्रेजी समझती ही नहीं, अंग्रेजीमें आदेश दिये जायें। यह काम अनिवार्य रूपसे केन्द्रीय कार्यालयको सँभालना चाहिए और जल्दीसे-जल्दी निपटा देना चाहिए। मेरे द्वारा सुझाई गई पुस्तक यदि एकदम प्रकाशित कर दी जाये तो यह उस स्वयंसेवक दलके प्रशिक्षणके लिए उपयोगी होगी जो महाकोशलमें होनेवाले आगामी कांग्रेस-अधिवेशनको ध्यानमें रखकर संगठित किया जा रहा है।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। रिचर्ड बी० ग्रेगने "युद्धके आधुनिक तरीकों और शस्त्रों" के फलस्वरूप होनेवाली विभीषिकाओंका वर्णन करनेके बाद यह मत व्यक्त किया था कि ऐसी कार्रवाइयोंका लड़कर सामना करनेका नाटक करना बहादुरी नहीं सरासर बेवकूफी है। उन्होंने अपने तर्ककी पुष्टिके लिए रसेल द्वारा लिखित पुस्तक *ह्विच वे टु पीस?* की एक प्रति भी भेजी थी जिसमें कहा गया है कि युद्ध द्वारा युद्धका स्थायी अन्त करना असम्भव है और पूर्ण शान्तिवाद ही उसका एकमात्र व्यावहारिक उपाय है।

मैं केन्द्रीय कार्यालयका ध्यान इस पत्रकी ओर दिलाता हूँ। इस किताबको एक हफ्तेके अन्दर प्रकाशित करना कठिन नही होना चाहिए। सामग्री तो उपलब्ध है ही, लेकिन बिखरी पड़ी है। मेरा खयाल है कि इस विषयपर डॉ० हार्डीकरने कुछ साहित्य प्रकाशित किया है। पण्डित मालवीयजीकी संस्थाने भी कोई निर्देश-पुस्तिका निकाली होगी। मुझे मालूम है कि बड़ौदाके प्रो० माणिकरावने हिन्दुस्तानीमे सरल प्रारिभाषिक शब्द तैयार करनेकी दिशामें बडा प्रयत्न किया है। वे शब्द काफी हद तक हमारी जरूरते पूरी करते हैं। इस सामग्रीका उपयोग करके प्रामाणिक पुस्तक निकालना आसान काम होना चाहिए।

इस बारेमे मैं महाकोशल स्वागत-समितिको अपने उस सुझावका स्मरण दिलाना चाहूँगा जो मैंने हरिपुरामे दिया था। वह यह था कि कांग्रेसियो और आगन्तुकोके लिए सफाई आदिके बारेमे सरल हिन्दुस्तानीमे एक निर्देश-पुस्तिका होनी चाहिए। यह पुस्तिका देवनागरी और उर्दू दोनो लिपियोमे हो। आम तौरपर आगन्तुकोको अपनी ही सूझ-समझसे काम लेनेको छोड़ दिया जाता है। उन्हे यह भी मालूम नही होता कि जहाँ वे जाना चाहते हैं, वे स्थान कहाँ है या उनकी जरूरतकी चीजे उन्हे कहाँ मिलेगी। कांग्रेस-अधिवेशनमे हर साल शामिल होनेवाले हजारो लोगोंकी सहायताके लिए एक ऐसी निर्देश-पुस्तिका का होना जरूरी है जिसमे कांग्रेस नगरका मानचित्र भी हो।

सेगाँव, २४ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-१२-१९३८

२८४. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव, वर्धा
२४ दिसम्बर, १९३८

प्रिय सी० आर०,

सर राधाकृष्णन कल यही थे। उनका कहना था कि हिन्दी-विरोधी आन्दोलन बढ रहा है। उन्होने तुम्हे यह सुझाव दिया था कि तुम्हे एक नैतिक आपत्तिकी धारा स्वीकार कर लेनी चाहिए, जिसके अनुसार ऐसे बच्चोको हिन्दी सीखनेसे मुक्त कर दिया जाये जिनके माता-पिता लिखकर यह कहे कि उन्हे अपने बच्चोके हिन्दी सीखनेपर नैतिक आपत्ति है। मेरा खयाल है तुम्हे याद होगा कि इस तरहका एक सुझाव आन्दोलनके आरम्भमें ही 'हरिजन' मे दिया गया था। मैं समझता हूँ कि इसे कार्यान्वित करनेका अभी भी समय है। इस रियायतका अर्थ यदि एक विवेकहीन आन्दोलनको दी गई छूट भी लगाया जाये, तो भी तुम्हे इसकी कोई परवाह नही होनी चाहिए। तुम वही करोगे जो तुम्हे सर्वोत्तम लगेगा।

आन्ध्रको एक प्रान्तके रूपमे अलग करनेके बारेमे क्या राय है? तुमने इस आशयका कोई वक्तव्य दिया था कि तुम इस सिलसिलेमे कुछ कर रहे हो। क्या तुम कुछ कर रहे हो? वैसे तुम्हारा क्या हाल है?

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०७२) से।

२८५. भेंट: एच० वी० हॉडसनको[1]

[२५ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][2]

श्री हॉडसनने यह राय जाहिर की कि हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नका समाधान इसलिए कठिन हो गया है कि कांग्रेस, अपने स्वरूपके कारण ही, किसी दूसरे दलको न सहनेवाले एक "सर्वाधिकारवादी दल" का रूप ग्रहण करनेकी प्रवृत्ति रखती है और अपनेको मुख्य दलोंमें से केवल एक माननेकी बजाय, इस तरह व्यवहार करती है मानो देशमें वही एकमात्र ऐसा दल हो जो महत्वपूर्ण हो।

गांधीजी: कांग्रेसके बारेमें इस तरहका दृष्टिकोण अपनाना बहुत ही गलत है। कांग्रेस एकमात्र ऐसा दल होनेका जरूर दावा करती है जो इस देशकी जनताकी माँगको पूरा कर सकता है। उसका ऐसा दावा करना पूर्णतया उचित है। किसी दलको एक-न-एक दिन उस सीमा तक अपना अधिकार जताना ही होगा। उससे वह दल 'सर्वाधिकारवादी' नही हो जाता। कांग्रेसकी यह महत्वाकांक्षा है कि वह केवल किसी खास वर्गकी प्रतिनिधि न होकर पूरे राष्ट्रकी पूर्ण प्रतिनिधि बने, और यह एक ऐसी सराहनीय महत्वाकांक्षा है जो उसकी सर्वोत्कृष्ट परम्पराके अनुरूप है। कांग्रेसके इतिहासका यदि आपने अध्ययन किया हो तो आप देखेंगे कि कांग्रेस आरम्भसे ही देशके सभी वर्गोंकी, बिना किसी पक्षपात या भेदभावके, समान रूपसे सेवा और प्रतिनिधित्व करनेकी कोशिश करती आई है। इसकी स्वागत समितिमें राजा और महाराजा भी रहे हैं और कश्मीर तथा मैसूर-जैसे मामलोमे इसने सर्वोपरि सत्ता के विरुद्ध रियासतोके दावेकी वकालत की है। यदि मुस्लिम लीग इसे अपनेमें विलीन करना चाहे तो यह खुशीसे मुस्लिम लीगमे विलीन हो जायेगी या फिर जहाँ तक राजनैतिक कार्यका सवाल है, मुस्लिम लीग को अपनेमें विलीन करना चाहेगी। धार्मिक और सामाजिक कार्योंके लिए अलबत्ता हर सम्प्रदायका अपना अलग सगठन हो सकता है।

१ और २. प्यारेलालके २५-१२-१९३८ के "वीकली लेटर" से उद्धृत। एच० वी० हॉडसन राउंड टेबिल पत्रिकाके सम्पादक थे।

हॉडसन: किन्तु कांग्रेस यदि अन्य राजनैतिक संगठनोको अपनेमें विलीन करनेकी महत्वाकांक्षा रखती है, तो वह एक सर्वाधिकारवादी दल हुए बिना नहीं रह सकती।

गांधीजी: आप उसे सर्वाधिकारवादी कहकर उसे निंद्य ठहरानेकी कोशिश कर सकते है, पर जब देश विदेशी हाथोसे सत्ता छीननेके संघर्षमे जुटा हो तो विलयन अनिवार्य है। अलग-अलग और प्रतिद्वन्द्वी राजनैतिक संगठन वह नही रख सकता। देशकी समूची शक्ति तीसरे अपहर्ता दलको निकाल बाहर करनेमे लगनी चाहिए। भारतमे आज यही हो रहा है। जहाँ कोई ऐसा समान खतरा नही है, जिसका सबको विरोध करना हो, वहाँ विभिन्न विचारधाराओका प्रतिनिधित्व करनेवाले अलग-अलग दल होने चाहिए। आपको यह बात ध्यानमे रखनी चाहिए कि कांग्रेस अपनी इच्छा दूसरोपर थोपती नही है। उसके हाथमें जो भी सत्ता है, अहिंसात्मक है।

हॉडसन: यदि मुसलमानोको साथ लेकर चला जाये, तो क्या पूर्ण उत्तरदायी सरकार प्राप्त करनेकी दिशामें आप और तेजीसे अग्रसर नहीं होंगे?

गांधीजी: बेशक होंगे। व्यक्तिगत रूपसे मै ऐसी कोई चीज नही चाहता जिसका मुसलमान विरोध करते हों। परन्तु मुझे विश्वास है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या का समाधान ज्यादातर लोग जितना सोचते है उससे बहुत जल्दी ही निकल आयेगा। मेरा यह दावा है कि मैं पूरी स्थितिको तटस्थ बुद्धिसे देख सकता हूँ। हमारे झगड़ोमे कोई सार नही है। विभेदके जो मुद्दे है वे सतही है, जोड़नेवाले मुद्दे गहरे और स्थायी है। राजनैतिक और आर्थिक अधीनता सबके लिए समान है। जो जलवायु, जो नदियाँ, जो खेत हम [हिन्दुओ और मुसलमानों] दोनोको वायु, जल और अन्न प्रदान करते हैं वे एक ही है। इसलिए, नेता, महात्मा और मौलाना चाहे कुछ कहे या करें, सामान्य जनता जब पूरी तरह जाग जायेगी तो अपने अधिकारका दावा करेगी और समान बुराइयोंमे लड़नेके लिए एक हो जायेगी।

समाजवादी और साम्यवादी प्रचारका प्रभाव भी दोनों सम्प्रदायोंके जन-साधारण को एक जगह लाता है, क्योकि वह समान हितोंपर जोर देता है। उन लोगोंके साथ मेरे मतभेद हैं, पर जो अधविश्वास विभिन्न सम्प्रदायोको अलग किये रखता है उसे मिटानेके उनके प्रयासकी मैं सराहना किये बिना नही रह सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-१२-१९३८

२८६. सन्देश: त्रावणकोर राज्य-कांग्रेसके अध्यक्षको

[२५ दिसम्बर, १९३८ या उसके पूर्व][1]

त्रावणकोर राज्य-कांग्रेसके अध्यक्षका तार मिलनेपर गांधीजीने कहा, मुझे यह जानकर खुशी हुई कि दीवानके विरुद्ध लगाये गये व्यक्तिगत आरोप वापस ले लिये गये हैं। उन्होंने यह भी कहा कि पूरी स्थितिकी नये सिरेसे जाँच करनेके लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी स्थगित कर देना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि आरोप वापस ले लेनेकी बातको ध्यानमें रखते हुए राज्य-सरकार मुकदमे वापस ले लेगी और कैदियोंको रिहा कर दिया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-१२-१९३८

२८७. मणिबहन और चरखा

मणिबहन तो अपने नामके अनुसार 'मणि' ही है। अपने पिताके लिए जिसने सहर्ष कुमारिकाका जीवन अपनाया हो और उनकी सेवामें जिसने सर्वस्व अर्पित कर दिया हो, ऐसी भारतमें तो मुझे एक मणि ही दिखती है। पिताके एक ही शब्दपर वह राजकोट चली गई। अपनी इस अनन्य भक्तिसे मणिबहनको आश्चर्यजनक शक्ति प्राप्त हुई है। इस समय तो वह जेलमें है।[2] मुझे पत्र लिखती रहती है। कुछ पत्र प्रकाशित करने योग्य है, किन्तु 'हरिजनबन्धु' के लिए इन दिनों मैं लिख ही नहीं पाता। अवकाश ही नहीं मिलता। किन्तु जेलसे लिखे हुए उसके अन्तिम पत्रका अन्तिम वाक्य मैं पाठकोंके समक्ष रखे बिना नहीं रह सकता। इस वाक्यमें चरखेकी स्तुति है। यह रहा वह वाक्य.

> चरखा चलानेका ऐसा निर्विघ्न अवकाश मुझे बहुत समयके बाद मिला। और इस प्रकार शान्तिपूर्वक कातनेका अवसर मिले, तो फिर मुझे किसी और वस्तुकी आवश्यकता ही नहीं होती। मुझे तो इसमें अद्‌भुत आनन्द मिलता है। मन होता है कि जिन दिनों मैं कात नहीं पाई, उन दिनोंकी कमीकी पूर्ति इसी अवकाशमें कर डालूँ।

१. सन्देशकी रिपोर्ट दिनांक २५ दिसम्बर, १९३८ के अन्तर्गत छपी थी।

२. राजकोट-सत्याग्रहमें भाग लेनेके कारण मणिबहन पटेलको ५ दिसम्बर, १९३८को गिरफ्तार किया गया था।

चरखेका प्यार, त्याग, पितृ-भक्ति और प्रथम श्रेणीका साहस — इन सब गुणोका सुन्दर मेल जिनमे हो, ऐसे व्यक्ति बहुत कम दिखते है और जब दिखते है तो मेरा मन खुशीसे नाच उठता है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २५-१२-१९३८

२८८. हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके लिए वक्तव्यका मसविदा[1]

[२६ दिसम्बर, १९३८के पूर्व][2]

हैदराबाद प्रान्त-काग्रेसकी कार्यकारिणीने बड़े सोच-विचारके बाद यह निश्चय किया है कि सत्याग्रहको अस्थायी तौरपर स्थगित कर दिया जाये। यह सत्याग्रह अभी हाल ही मे चलाया गया था और इसके कारण अब तक ४०० से ज्यादा सत्याग्रही कैदी हो चुके है। सजाओकी अवधि एक महीनेसे साढे तीन साल तककी है।

जनता यह जानना चाहेगी कि यह निर्णय किन कारणोसे लिया गया है।

राज्य-काग्रेसके बारेमे बहुत ज्यादा भ्रामक बाते कही गई है। इसे साम्प्रदायिक सस्था बताया गया है। इसकी गतिविधियो और आर्य सुरक्षा लीग तथा हिन्दू सिविल लिबर्टीज यूनियनकी गतिविधियोको भ्रमवश एक मान लिया गया है। दुर्भाग्यसे आर्य-समाज और हिन्दू महासभाके आन्दोलन राज्य-काग्रेसके सविनय अवज्ञा आन्दोलनके साथ-साथ ही चले। निर्णायक कारण यहाँ यह रहा है कि गाधीजी, पण्डित जवाहरलाल नेहरू और दूसरे कांग्रेसी नेताओने यही सलाह दी कि अपनी स्थितिको पूरी तरह स्पष्ट करनेके लिए यह जरूरी है कि हम सविनय अवज्ञाको स्थगित कर दे। उनका कहना है कि आन्दोलनको स्थगित कर देनेसे महामहिम निजामकी सरकारको अवसर मिलेगा कि वह स्थितिका फिरसे जायजा ले। रियासतके अन्दर स्वराज्यका सघर्ष चलानेमे जिन नेताओकी सहानुभूति और समर्थन सदा हमारा एक बडा आधार रहा है, उनकी इस सलाहकी अवहेलना हम नही कर सकते थे।

हम इस आशासे सविनय अवज्ञा स्थगित करते है कि इसे फिरसे चलानेकी जरूरत नही पडेगी। परन्तु इसे फिरसे चलानेकी जरूरत होगी या नही और यदि हुई तो कब होगी, इन प्रश्नोका उत्तर पूरी तरह रियासतके अधिकारियोके रुखपर निर्भर करता है। इस वक्त हमारे ४०० से अधिक साथी साढ़े चार सालसे लेकर दो महीने तककी कैद भोग रहे है। ऐसी स्थितिमें सघर्ष स्थगित कर देना हमारे लिए कोई कम पीडाजनक नही रहा है। सविनय अवज्ञाके लिए हमारी सूचीमे २,००० से अधिक स्वयसेवक है। यह सूची प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। हर बार स्वयसेवकोके कैद होनेपर सूचीमे बढ़ोतरी हो जाती है। रियासतके बाहरके स्वयसेवकोने भी संघर्षमें

१. पहले दो अनुच्छेदोंको छोड़कर मसविदा गांधीजी की लिखावटमें है।
२. देखिए "पत्र: अकबर हैदरीको", पृ० २७४।

भाग लेनेकी इच्छा प्रगट करते हुए हमें अपने नाम भेजे है जिससे हम उलझनमे पड गये है। उनके प्रस्तावको अस्वीकार करनेके लिए हमे इसलिए बाध्य होना पडा है कि हम समझते है कि इस आन्दोलनको अहिंसात्मक बनाये रखनेके लिए यह जरूरी है कि हम आन्तरिक शक्ति और सहायतापर ही निर्भर रहे।

परन्तु यदि हम बातचीत और अनुनय द्वारा अपने उद्देश्यकी पूर्ति कर सकें तो हमे अपनी शक्तिका उपयोग करने और कष्ट उठानेकी कोई इच्छा नही है। इसलिए हम आशा करते है कि सरकार आन्दोलन स्थगित करनेके पीछे शान्ति बनाये रखने और रियासतके प्रति निष्ठा व्यक्त करनेके हमारे उद्देश्यको समझेगी। हमें आशा है कि वह सविनय अवज्ञाके कैदियोको रिहा कर देगी और राज्य-कांग्रेस और इसकी गतिविधियोपर से प्रतिबन्ध उठा लेगी तथा एक ऐसी उत्तरदायी सरकार बनानेकी योजना शुरू करनेकी दिशामे पथ प्रशस्त करेगी जिसमे अल्पमतवालोके अधिकारोके लिए उपयुक्त सरक्षणोकी व्यवस्था भी होगी।

यहाँ हम प्रान्तीय कांग्रेसके सदस्योका ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहेंगे कि अहिंसात्मक स्वराज्य आन्दोलनके दो पहलू है। एक प्रतिकारात्मक और दूसरा रचनात्मक। सविनय अवज्ञा प्रतिकारात्मक है और इसलिए अस्थायी है। दूसरा रचनात्मक और स्थायी है। हमे आशा है कि लोग स्थायी पहलूको कभी नही भूलेंगे। सच तो यह है कि रचनात्मक कार्यक्रममे जितनी तेजी आती है सविनय अवज्ञाके लिए हमारी योग्यता भी उसी परिमाणमे बढ़ती रहती है। रचनात्मक कार्यमे हाथ-कताई, हाथ-बुनाई और इसी तरहकी अन्य उत्पादक प्रवृत्तियाँ, महामहिम निजामकी प्रजाके विविध सम्प्रदायोके बीच दिली एकता बढाना, छूआछूत हटाना, नशीले पदार्थोसे पूरी तरह दूर रहना और इसी तरहके दूसरे सुधार शामिल है। कारण, स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए चलाया जानेवाला अहिंसात्मक आन्दोलन शुद्धीकरण और सामाजिक तथा आर्थिक सुधारकी ही प्रक्रिया है। इसके सिवा वह कुछ और हो भी नही सकता। सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित किये जानेसे कोई यह न सोचे कि उत्तरदायी सरकारके लिए किया जानेवाला आन्दोलन स्थगित किया जा रहा है। सच तो यह है कि इससे हमारे रचनात्मक कार्यमें दुगुना जोर आना चाहिए, क्योंकि सविनय अवज्ञाके स्थगित कर दिये जानेसे रचनात्मक कार्यके लिए मन स्वतन्त्र हो जायेगा।

अन्तमे हम उन सब मित्रोका धन्यवाद करना चाहते है जिन्होंने हमें अपनी सलाह और ठोस मदद देकर हमारी सहायता की है।

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० १०१५२९) से।

२८९. विद्यार्थियोंके लिए लज्जाजनक

पजाबके एक कॉलेजकी लडकीका एक अत्यन्त हृदयस्पर्शी पत्र करीब दो महीनेसे मेरी फाइलमें पडा हुआ है। इस लडकीके प्रश्नका जवाब अभी तक जो नही दिया, इसमे समयके अभावका तो केवल एक बहाना ही था। किसी-न-किसी तरह इस कामसे अपनेको मै बचा रहा था, हालाँकि मै यह जानता था कि इस प्रश्नका क्या जवाब देना चाहिए। इसी बीच मुझे एक और पत्र मिला। यह पत्र एक ऐसी बहनका लिखा हुआ है, जिन्हे जीवनका बहुत अनुभव है। तब मुझे ऐसा महसूस हुआ कि कॉलेजकी इस लड़कीकी जो यह अत्यन्त वास्तविक कठिनाई है, इसका उपाय बताना मेरा कर्तव्य है तथा इसकी अब मै और अधिक दिनो तक उपेक्षा नही कर सकता। पत्र उसने शुद्ध हिन्दुस्तानीमे लिखा है। मुझे इस पत्रके साथ, जो उस लडकी की गहरी भावनाका पूर्ण चित्र मेरे सामने प्रस्तुत करता है, यथाशक्ति न्याय करनेका प्रयत्न करना चाहिए। पत्रका एक भाग मै अपने शब्दोमे नीचे दे रहा हूँ.

> लड़कियो और वयस्क स्त्रियोके सामने, उनकी इच्छाके विरुद्ध, ऐसे अवसर आते ही है जब उन्हे अकेले जानेकी हिम्मत करनी पडती है — या तो उन्हे एक ही शहरमे एक जगहसे दूसरी जगह या एक शहरसे दूसरे शहरको जाना होता है। और जब वे इस तरह अकेली होती है, तब गन्दी मनोवृत्तिवाले लोग उन्हे तग किया करते है। उनके पाससे गुजरते हुए वे वाहियात और गन्दी आवाजे कसते है। और अगर भय न हो, तो इससे भी आगे बढनेमें उन्हे कोई हिचकिचाहट नही होती। मै यह जानना चाहती हूँ कि ऐसे मौको पर अहिंसा क्या काम दे सकती है? हिंसाका उपयोग तो है ही। अगर उस लडकी या स्त्रीमे काफी हिम्मत हो, तो उसके पास जो भी साधन होगे उन्हे वह काममे लायेगी और बदमाशोको सबक सिखा देगी। वे कम-से-कम हल्ला-गुल्ला तो कर ही सकती है, जिससे कि लोगोका ध्यान आकर्षित हो जाये और गुण्डे वहाँसे भाग जाये। मै यह जानती हूँ कि इसके परिणाम-स्वरूप विपत्ति तो टल जायेगी, परन्तु यह कोई स्थायी इलाज नही है। अशिष्ट व्यवहार करनेवाले लोगोको अगर हम जानते हो, तो मुझे विश्वास है कि उन्हे समझाया जा सकता है, प्रेम और नम्रताका उन पर असर होगा। परन्तु उस आदमीके लिए आप क्या कहेगे, जो साइकिलपर चढा हुआ किसी ऐसी लड़की या स्त्रीको देखकर, जिसके साथ कोई पुरुष न हो, गन्दी भाषाका प्रयोग करता है? उसे दलील देकर समझानेका आपको मौका नही है। आपके उससे फिर मिलनेकी कोई सम्भावना नही है। हो सकता है कि आप उसे पहचाने भी नही। आपको उसका पता भी मालूम नही है। ऐसी परिस्थितिमे

वह बेचारी लड़की या स्त्री क्या करे? मैं अपना ही उदाहरण देकर आपको अपना अनुभव बताती हूँ। कल (२६ अक्टूबरकी) रातकी बात है। मैं अपनी एक सहेलीके साथ शामके ७-३० बजेके करीब एक खास कामसे जा रही थी। उस समय किसी पुरुषको साथ ले जाना असम्भव था और कार्य इतना आवश्यक था कि टाला नही जा सकता था। रास्तेमें एक सिख युवक साइकिल पर कुछ गुनगुनाता हुआ जा रहा था। हम सुन सके इतनी दूरी तक उसने गुनगुनाना जारी रखा। हमे यह मालूम था कि वह हमे लक्ष्य करके ही गुनगुना रहा है। हमें उसकी यह हरकत बहुत नागवार मालूम हुई। सडकपर कोई चहल-पहल नही थी। हमारे चन्द कदम जानेसे पहले ही वह लौट पडा। हम उसे फौरन पहचान गई, हालाँकि वह अब भी हमसे काफी फासलेपर था। उसने हमारी तरफ साइकिल घुमाई। ईश्वर जाने, उसका इरादा उतरनेका था, या यो ही हमारे पाससे सिर्फ गुजरनेका। हमे ऐसा लगा कि हम खतरेमें है। हमे अपनी शारीरिक क्षमतामे विश्वास नही था। मैं एक औसत लडकीके मुकाबले शरीरसे कमजोर हूँ। लेकिन मेरे हाथमे एक बडी-सी किताब थी। एकाएक किसी तरह मेरे अन्दर हिम्मत आ गई। साइकिलकी तरफ मैंने किताबको जोरसे दे मारा और चिल्लाकर कहा, "छेड़छाड़ करनेकी तू फिर हिम्मत करेगा?" वह मुश्किलसे अपनेको सँभाल सका और साइकिलकी रफ्तार बढ़ाकर वहाँसे रफूचक्कर हो गया। अब अगर मैंने उसकी साइकिलकी तरफ किताब जोरसे न फेंकी होती, तो वह अन्त तक इसी तरह अपनी गन्दी भाषासे हमें तंग करता जाता। यह एक मामूली बल्कि नगण्य-सी घटना है। लेकिन, काश आप लाहौर आते और हम अभागी लडकियोकी मुसीबतोकी दास्तान खुद अपने कानो सुनते। आप निश्चय ही इस समस्याका ठीक-ठीक हल ढूँढ सकते है। सबसे पहले आप मुझे यह बताये कि ऊपर जिन परिस्थितियो का मैंने वर्णन किया है उनमे लडकियाँ अहिंसाके सिद्धान्तका प्रयोग किस तरह कर सकती है और कैसे अपने-आपको बचा सकती है? दूसरे, स्त्रियोको अपमानित करनेकी जिन युवकोको बहुत बुरी आदत पड गई है, उनको सुधारनेका उपाय क्या है? आप यह उपाय तो सुझायेंगे नही कि हमे उस नई पीढीके आनेका इन्तजार करना चाहिए जिसने बचपनसे ही स्त्रियोके साथ भद्रोचित व्यवहार करनेकी शिक्षा पाई होगी, और तब तक हमे इस अपमानको चुपचाप बर्दाश्त करते रहना चाहिए। सरकारकी या तो इस सामाजिक बुराईका मुकाबला करनेकी इच्छा नही है या वह ऐसा करनेमे असमर्थ है। और हमारे बडे-बडे नेताओके पास ऐसे प्रश्नोके लिए समय ही नही है। कुछ लोग जब यह सुनते है कि किसी लडकीने अशिष्टतासे पेश आनेवाले नवयुवककी अच्छी तरहसे मरम्मत कर दी है, तो कहते है, 'शाबास, ऐसा ही सब लड़कियोको करना चाहिए।' कभी-कभी किसी नेताको हम विद्यार्थियोके ऐसे दुर्व्यवहारके खिलाफ लच्छेदार भाषण करते हुए पाते है। लेकिन ऐसा कोई नजर नही आता,

जो इस गम्भीर समस्याका हल निकालनेमें निरन्तर प्रयत्नशील हो। आपको यह जानकर कष्ट और आश्चर्य होगा कि दीवाली और ऐसे ही दूसरे त्योहारोंपर अखबारोमे इस किस्मकी चेतावनियाँ निकला करती हैं कि रोशनी देखने तकके लिए औरतोको घरोंसे बाहर नही निकलना चाहिए। इस एक ही बातसे आप जान सकते है कि दुनियाके इस हिस्सेमें हम किस कदर मुसीबतोंमें फँसी हुई हैं। न तो इस तरहकी चेतावनियोंके लिखनेवालोंको और न पढ़नेवालोंको ही इस बातपर शर्म महसूस होती है कि ऐसी चेतावनियाँ देनी पड़ती हैं।

एक दूसरी पंजाबी लड़कीको मैंने यह पत्र पढ़नेके लिए दिया था। उसने भी अपने कॉलेज-जीवनके निजी अनुभवोंके आधारपर इस घटनाकी पुष्टि की। उसने मुझे बताया कि पत्र-लेखिकाने जो-कुछ लिखा है, वैसा ही अनुभव अधिकाश लड़कियोका है।

एक और अनुभवी महिलाने लखनऊकी अपनी सहेलियोके अनुभव लिखे हैं। सिनेमा-थियेटरोंमे उनके पीछेकी लाइनमें बैठे लड़के उन्हे परेशान करते हैं, उनके लिए वे ऐसी भाषाका प्रयोग करते है जिसे अश्लीलके सिवा और कोई नाम नही दिया जा सकता। लड़कियोंके साथ किये जानेवाले भद्दे मजाक भी पत्र-लेखिकाने मुझे लिखे हैं, लेकिन मै उन्हे यहाँ उद्धृत नही कर सकता।

अगर सिर्फ तात्कालिक निजी रक्षाका सवाल हो तो इसमे सन्देह नही कि अपनेको शारीरिक दृष्टिसे कमजोर बतानेवाली उस लड़कीने जो इलाज — साइकिलके सवारपर जोरसे किताब मारकर — किया वह बिलकुल ठीक है। यह बहुत पुराना इलाज है। मैं 'हरिजन' मे पहले भी लिख चुका हूँ कि यदि कोई व्यक्ति हिंसक व्यवहार करनेपर उतारू होना चाहता है, तो उसके रास्तेमे शारीरिक कमजोरी भी रुकावट नही डालती, भले ही उसके मुकाबलेमे शारीरिक दृष्टिसे कोई बलवान विरोधी हो। और हम यह भली-भाँति जानते है कि आजकल तो शारीरिक बलका प्रयोग करनेके इतने ज्यादा तरीके निकल चुके है कि एक छोटी लेकिन चालाक लड़की किसी की हत्या और विनाश तक कर सकती है। जिस परिस्थितिका उल्लेख पत्र-लेखिकाने किया है वैसी परिस्थितिमें लड़कियोको आत्मरक्षाके तरीके सिखानेका रिवाज आजकल बढ़ रहा है। लेकिन वह लड़की यह भी खूब समझती है कि भले ही वह उस क्षण अपने हाथकी किताबका उपयोग आत्मरक्षाके हथियारके रूपमे कारगर ढंगसे कर सकी हो, लेकिन इस बढ़ती हुई बुराईका वह कोई सच्चा इलाज नही है। अश्लील मजाकके कारण बहुत घबरानेकी जरूरत नही है। लेकिन उसकी ओरसे आँख मूँद लेना भी ठीक नही। ऐसे सब मामले अखबारोंमें छपवा देने चाहिए। ठीक-ठीक मालूम होनेपर शरारतियोंके नाम भी अखबारोमे छपवा देने चाहिए। इस बुराईका भण्डाफोड़ करनेमें किसीका झूठा लिहाज नही करना चाहिए। इस सार्वजनिक बुराईके विरुद्ध प्रबल लोकमतके समान कोई और इलाज नही है। जैसाकि पत्र-लेखिकाने कहा है, इसमे कोई शक नही कि इन मामलोको जनता बहुत उदासीनतासे देखती है। लेकिन सिर्फ जनताको ही क्यो दो दिया जाये? उसके सामने अभद्रताके ऐसे

मामले आने भी तो चाहिए। चोरीके मामले पता लगाकर छापे जाते हैं, उनके पीछे पड़ा जाता है तब कही जाकर चोरी कम होती है। इसी तरह जब तक ऐसे अभद्रता के मामले दबाये जाते रहेंगे, तब तक इस बुराईका इलाज नही हो सकता। बुराई और पाप भी अपने शिकारको खोजनेके लिए अन्धकार चाहते हैं। जब उनपर रोशनी पडती है तो वे खुद ही खत्म हो जाते है।

लेकिन मुझे डर यह है कि आधुनिक लडकीको भी अनेक लोगोकी दृष्टिमे आकर्षक बनना प्रिय है। वह दुस्साहसको पसन्द करती है। ऐसा लगता है कि पत्र-लेखिका आम लड़कियो-जैसी नही है। आधुनिक लडकी हवा, वर्षा या धूपसे बचनेके उद्देश्यसे नही, बल्कि लोगोका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करनेके लिए तरह-तरहके भड़कीले कपडे पहनती है। वह पाउडर वगैरहसे अपनेको रँगकर कुदरतको भी मात करना चाहती है और असाधारण सुन्दर दिखना चाहती है। अहिंसात्मक मार्ग ऐसी लडकियोके लिए नही है। मैं इन पृष्ठोमे बहुत बार लिख चुका हूँ कि हमारे हृदयमे अहिंसाकी भावनाका विकास हो इसके लिए भी कुछ निश्चित नियम होते हैं। यह एक कष्टसाध्य प्रयत्न है। विचार और जीवनके तरीकोमे यह क्रान्ति उत्पन्न कर देता है। यदि पत्र-लेखिका और उसी की तरहके विचार रखनेवाली दूसरी सब लडकियाँ ऊपर बताये गये तरीकेसे अपने जीवनको बिलकुल ही बदल डाले, तो उन्हे जल्दी ही यह अनुभव होने लगेगा कि उनके सम्पर्कमे आनेवाले नौजवान उनका आदर करना तथा उनकी उपस्थितिमे भद्रोचित व्यवहार करना सीखने लगे हैं। लेकिन यदि उन्हे किसी समय ऐसा लगे, जैसाकि सम्भव है, कि उनके शीलपर हमला होनेका खतरा है, तो उनमें मनुष्यकी पाशविकताके आगे आत्मसमर्पण करनेके बजाय मर जानेका साहस होना चाहिए। कहा गया है कि जिस लडकीको बाँधकर या मुँहमे कपडा ठूँसकर इस तरह विवश कर दिया जाता है कि वह मुकाबला भी न कर सके, ऐसी लडकी उतनी आसानीसे, जितना कि मैं सोचता हूँ, मर नही सकती। फिर भी मैं जोरोके साथ यह कहता हूँ कि जिस लड़कीमें मुकाबला करनेका दृढ सकल्प है, वह उसे विवश करनेके लिए काममे लाये गये सारे बन्धनोको तोड सकती है। दृढ सकल्प उसे मरनेकी शक्ति दे सकता है।

लेकिन यह साहस उन्हींके लिए सम्भव है, जिन्होने इसका अभ्यास कर लिया है। जिनका अहिंसामे दृढ विश्वास नही है, उन्हे आत्मरक्षाके साधारण तरीके सीखकर कायर युवकोंके अश्लील व्यवहारसे अपना बचाव करना चाहिए।

परन्तु बडा सवाल तो यह है कि नवयुवक साधारण शिष्टाचार भी किसलिए छोड दे, जिससे कि भली लड़कियोको उनसे सताये जानेका हमेशा डर लगा रहे? मुझे यह जानकर दुःख होगा कि ज्यादातर नवयुवकोमे स्त्री-सम्मान की भावनाका ही लोप हो गया है। इसके विपरीत, उन्हे तो अपने युवक-वर्गको बदनाम न होने देनेकी सावधानी रखनी चाहिए और अपने साथियोमे पाये जानेवाले असभ्यताके ऐसे प्रत्येक मामलेका इलाज करना चाहिए। उन्हे हरएक स्त्रीका अपनी माँ और बहनकी तरह आदर करना सीखना चाहिए। यदि वे शिष्टाचार नही सीखेंगे, तो उनकी सारी शिक्षा बेकार है।

और क्या प्रोफेसरों तथा स्कूल-शिक्षकोंका यह कर्तव्य नहीं है कि जिस प्रकार वे अपने विद्यार्थियोंको कक्षामें बैठाकर पाठ्यक्रमके विषय सिखाते हैं, उसी प्रकार वे उन्हें शिष्टताका पाठ भी सिखायें?

सेगाँव, २६ दिसम्बर, १९३८

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३१-१२-१९३८

२९०. पत्र : अकबर हैदरीको[1]

सेगाँव
२६ दिसम्बर, १९३८

प्रिय सर अकबर,

हैदराबादके मामलेपर मैंने जान-बूझकर आपको कष्ट नहीं दिया। परन्तु हैदराबाद राज्य कांग्रेसने जो निर्णय किया है, उसमें चूँकि मैंने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, इसलिए मुझे लगा कि मुझे आपको अवश्य लिखना चाहिए। आशा है, [सविनय-अवज्ञा] स्थगित करने[2] की इस बुद्धिमत्ताकी आप सराहना करेंगे और उनकी कार्रवाईका उत्तर उदार ढंगसे देंगे।

आशा है, अब आप पूर्ण स्वस्थ हो गये होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८४१) से।

२९१. पुर्जा : जमनालाल बजाजको

२६ दिसम्बर, १९३८

कल हम लोग कुछ समय बात करेंगे, या फिर तुम दो-एक दिन रुक सको तो रुक जाओ। मुझे लगता है, तुम्हारे मर्जका इलाज सरल है। घबराने-जैसी कोई बात नहीं है। अन्ततः तुम्हारा विनाश तो नहीं ही है। किन्तु तुम्हारा दोष मैं अवश्य स्वीकार करता हूँ, क्योंकि मुझे तो ऐसे सारे अनुभव हो चुके हैं। अभी तो इतना ही कहता हूँ कि यह उलझन यहीं सुलझा लेनेके बाद ही यहाँसे जाना।

१. हैदराबादके दीवान।
२. देखिए "हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके लिए वक्तव्यका मसविदा", पृ० २६८-९।

आज रातको ही लिख डालूँगा।[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९९७) से।

२९२. पत्र : जमनालाल बजाजको

दोबारा नहीं पढ़ा

सेगाँव
२६ दिसम्बर, १९३८

चि० जमनालाल,

अभी अंग्रेजीकी एक सुन्दर उक्ति देखी थी। उसका अर्थ यह है कि मनुष्यको अपने दोषोका नही, गुणोका चिन्तन करना चाहिए, क्योकि मनुष्य जैसा चिन्तन करता है वैसा बनता है। इसका अर्थ यह नही है कि दोष देखे ही नही। देखे तो जरूर, लेकिन उनका विचार करके पागल न बने। ऐसा हमारे शास्त्रोमे भी लिखा है। इस कारण तुम्हे आत्मविश्वास रखकर यह निश्चय करना चाहिए कि तुम्हारे हाथो कल्याण ही होनेवाला है। हुआ तो है ही।

तुम्हे अतिलोभ छोडना चाहिए। व्यक्तिगत व्यापार, फिर चाहे उसका उद्देश्य परोपकार करना ही क्यो न हो, खत्म कर देना चाहिए। खत्म न कर सको तो कडी मर्यादा निश्चित करनी चाहिए। राजनीतिक क्षेत्रसे भी निकलनेका प्रयत्न करना चाहिए। अगर उसमे रहना ही पडे और तुम अपनी ही शर्तोपर रह सकते हो तो केवल मध्य प्रान्तके सगठनका कार्य करो। पर तुम्हारा क्षेत्र तो पारमार्थिक व्यापार है। इसलिए तुम फिरसे चरखा-सघमे अपनी सारी शक्तिका उपयोग करो। इस काममे तुम्हारी बुद्धि, तुम्हारी नीति और तुम्हारी व्यापार-शक्तिका पूरा उपयोग हो सकता है। राजनीतिमे बहुत गन्दगी रहती है। उसके अन्दर तुम्हें सन्तोष मिले, इसकी कम ही सम्भावना है। चरखा-सघ पूर्ण सफल हो जाये तो सहज ही पूर्ण स्वराज मिल सकता है। इसमे तुम कूद पड़ो, तो ग्रामोद्योग, अस्पृश्यता-निवारण आदिमे भी थोडा-बहुत ध्यान दे सकते हो। लेकिन वह तो तुम्हारी इच्छापर निर्भर है। यह तो अतिलोभको रोकनेके लिए और तुम्हे मनके मुताबिक पूरा काम मिल सके, इसके लिए सूचित कर दिया है।

दूसरी वस्तु विकार है। यह जरा कठिन है। मै अगर तुम्हे ठीक-ठीक जान पाया हूँ तो मैं यह समझता हूँ कि तुम्हे स्त्रियोके द्वारा अपनी परिचर्या करवाना रोक देना चाहिए। सब इसे पचा नही सकते। यह कह सकते है कि हमारे मण्डलमे स्त्री-परिचर्या लेनेवाला प्राय एकमात्र मैं ही हूँ। मेरी सफलता या असफलताका निर्णय मेरी मृत्युके बाद ही निकल सकेगा। मेरे लिए तो यह प्रयोग ही है। मै स्वय भी

१. देखिए अगला शीर्षक।

दावेके साथ नही कह सकता कि मै सफल ही हुआ हूँ। मेरी कामना शुकदेवजीकी स्थितिको पहुँचनेकी है। उस स्थितिसे मै कई योजन दूर हूँ। अगर तुममें आत्म-विश्वास हो तो मुझे कुछ कहना ही नही है। लेकिन अगर न हो और मेरा समझना ठीक हो तो तुम्हे गहरा आत्मावलोकन करके उचित परिवर्तन करना चाहिए। इसमे स्त्री-सेवा छोडनेकी बात नही है।

इनमे से एक भी चीजकी प्रतिध्वनि यदि तुम्हारे हृदयमें न उठे तो तुम्हे कुछ नही करना है। मेरे साथ विचारोका आदान-प्रदान करते रहना। निराशाकी कोई गुजाइश नही है। तुम पतित नही हो, सत्यनिष्ठ हो। सत्यनिष्ठका पतन सम्भव ही नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९९८) से।

२९३. पत्र: मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
[२७ दिसम्बर, १९३८][1]

चि० मीरा,

तुम्हारी रोजकी डाक एक ऐसी घटना है जिसकी मैं उत्कठासे प्रतीक्षा करता रहता हूँ। मेरा हृदय और मेरी आत्मा तुम्हारे साथ है। आत्मा तो तुम्हारे आसपास ही घूमती रहती है। तुम्हे हार नही माननी चाहिए। तुम्हे खान साहब से जो भी तुम उनसे कहना चाहो सो नम्रतापूर्वक कह सकनेकी कला सीख लेनी चाहिए। तुम्हे अपना स्वास्थ्य ठीक रखना चाहिए और वही, यानी सीमाप्रान्तमे, रहते हुए ही ठीक रखना चाहिए। मैं तुम्हारी मृत्युका जोखिम उठानेके लिए तैयार हूँ लेकिन यह नही चाहूँगा कि अपना स्वास्थ्य सुधारनेके लिए तुम लौटकर सेगाँव आ जाओ। पेशावरमे तुम ठीक रहोगी। यदि उटमजईमे तबीयत ठीक न रहती हो तो सप्ताहका अन्तिम दिन तुम पेशावरमें बिता सकती हो। तुम्हे तीन चीजोकी जरूरत है। तुम्हे घूमने-फिरनेके लिए बाहर जानेकी सुविधा होनी चाहिए, इसके सिवा तुम्हारे पास, केवल तुम्हारे ही लिए एक लडका या लडकी होनी चाहिए। खानसाहबसे कहना कि ऐसी अपेक्षा नही है कि वे तुम्हारे ऊपर खर्च करे, मै कुछ पैसा तुम्हारे लिए कल ही भेजनेकी उम्मीद करता हूँ।

मैंने अगाथासे कहा था कि वह जार्डिनसे तुम्हे निमन्त्रित करनेको कहे। तुम हिन्दुओके घरोमे बेशक जा सकती हो। लेकिन मै चाहता हूँ कि फिलहाल तुम ऐसा तब तक मत करो जब तक खानसाहब स्वय तुम्हे ऐसा करनेके लिए न कहे।

१. बापूज़ लेटर्स टु मीराके अनुसार। मूल पत्रमें तारीख नहीं दी गई है।

जो भी हो तुम अच्छी तरह सोच-समझ लो कि तुम्हे मेरा यह सुझाव पसन्द आया है या नही कि तुम्हे वही करना या मरना है। मैं निस्सन्देह वहाँ मार्चमे आ रहा हूँ। अलबत्ता यह मार्चके मध्यके पहले नही हो सकेगा, क्योंकि कांग्रेसकी बैठक १० मार्चके पहले नही होगी।

महादेव कल लौट आया। कलकत्ताके प्रवासके आखिरी दिन उसके स्वास्थ्यने जवाब दे दिया। वैसे, शरीरसे तो ठीक दिखता है लेकिन उसका दिमाग अच्छी तरह काम नही कर रहा है। उसे विश्रामकी और उपयुक्त आहारकी जरूरत है। गोसाबामे उसने अपने शरीरसे आवश्यकतासे अधिक काम लिया।

यहाँ मुलाकातियोकी काफी भीड़ है किन्तु मैं विभिन्न कामोके लिए निर्धारित अपने समयका ठीक पालन कर रहा हूँ। मुझे पहले जितने सम्पूर्ण रूपसे मौनकी आवश्यकता होती थी उतना अब नही चाहिए। मेरे विषयमे तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए। मैं अपना स्वास्थ्य सचमुच बहुत ठीक रख रहा हूँ, बल्कि लगातार ज्यादा अच्छा होता जा रहा हूँ।

साथमे होम्स[1] का पत्र है। एक पत्र लोदियनका भी आया है जिसके विषयमे मैं 'हरिजन' मे लिखूँगा।[2]

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२१) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१६ से भी।

२९४. भेंट : अमेरिकी अध्यापकोंको[3]

[२९ दिसम्बर, १९३८ के पूर्व][4]

अध्यापक : एक बुजुर्ग और अनुभवी नेताके नाते आप युवकोंको अपना जीवन मानवताकी सेवामें होम देनेकी सलाह कैसे देंगे?

गांधीजी . यह प्रश्न सही ढगसे नही पूछा गया। जब आप सत्याग्रहका अस्त्र अपनाते है तो आप अपना जीवन होम नही देते, अपितु आप अपने-आपको इसके लिए तैयार करते हैं कि घोरतम सकट और उत्तेजनाका बिना प्रतिशोध मुकाबला करे। इससे आपको अवसर मिलता है कि समय आनेपर आप अपना जीवन समर्पित कर दें। अहिंसात्मक तरीकेसे वैसा कर सकनेके लिए पहले प्रशिक्षणकी आवश्यकता होती है। यदि आप पुराने तरीकेको मानते है तो आप सिपाही बननेकी तालीम लेते हैं। यही बात अहिंसापर लागू होती है। आपको अपनी पूरी जीवन-पद्धति

१. जॉन हेन्स होम्स।
२. देखिए "अहिंसाका पालन", ६-२-१९३९।
३ और ४. प्यारेलालके २९-१२-१९३८ के "वीकली लेटर" से उद्धृत।

वदलनी होती है और इसके लिए शान्तिकालमे भी उतना ही प्रयत्न अपेक्षित होता है जितना युद्धकालमे। निस्सन्देह यह एक कठिन काम है। आपको अपना सारा मन इसमे लगाना पडता है और यदि आप सच्चे हृदयसे यह काम करे तो आपके उदाहरणसे आपके इर्द-गिर्दके लोग भी प्रभावित होगे। आजकल अमेरिका दूसरी शक्तियोके साथ मिलकर ससारके तथाकथित कमजोर राष्ट्रोका शोपण कर रहा है। यह ससारका सबसे अधिक वैभव-सम्पन्न देश बन गया है। जिन तरीकोको अपनाकर यह वैभवशाली बना है उन्हे देखते हुए यह कोई अभिमान करनेकी बात नही है। और फिर इस वैभवकी रक्षाके लिए आपको हिंसाका सहारा लेना पडता है। आपको यह वैभव छोडनेके लिए तैयार रहना होगा। इसलिए यदि आप सचमुच हिंसाको त्याग देना चाहते है तो आप यह कहेगे "हमे हिंसा द्वारा उपार्जित द्रव्यसे कोई वास्ता नही है और इसके फलस्वरूप यदि अमेरिका गरीब हो जाता है तो इसकी भी हमें कोई परवाह नही।" तव आपको वह योग्यता हासिल होगी जो पवित्र बलिदान दे सकनेके लिए आवश्यक होती है। तैयारीका अर्थ यह है। यदि आपका सारा राष्ट्र पूरी तरह यह सीख जाये कि शान्तिके लिए कैसे जिया जाता है तो शायद चरम बलिदान देनेका अवसर ही न आये। अहिंसाके लिए जीवित रहना उसके लिए मरनेसे ज्यादा कठिन है।

मित्रगण जानना चाहते थे कि क्या गांधीजी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा व्यवहार्य है।

यदि मैंने 'प्रेम' शब्दका प्रयोग किया होता, जो वास्तवमे अहिंसा ही है, तो आपने यह प्रश्न नही पूछा होता। परन्तु सम्भवत प्रेम शब्दसे मेरा अभिप्राय पूरी तरह अभिव्यक्त नही होता। सबसे ज्यादा समीप अर्थवाला शब्द है 'उदारता'। हम अपने मित्रो और अपनी बराबरीके लोगोसे प्रेम करते है। परन्तु एक निर्दय तानाशाहके प्रति हमारे मनमे प्रतिक्रिया हिंसात्मक होनेपर भयकी और अहिंसात्मक होनेपर दयाकी होती है। अहिसा भय नही जानती। यदि मै सच्चा अहिसावादी हूँ तो मुझे तानाशाहपर दया आयेगी और मै अपने-आपसे कहूँगा — "उसे ज्ञान नही कि मानव कैसा होना चाहिए। एक दिन जबकि उसका सामना ऐसे लोगोसे होगा जिन्हे उसका कोई भय नही होगा, जो न उसके आगे झुकेगे और न उसके सामने नाक रगडेगे, और वह चाहे कुछ भी करे, उसके प्रति उनके मनमे कोई दुर्भाव नही होगा, तब वह जान पायेगा कि मानव कैसा होता है। आजकल जर्मन लोग जो-कुछ कर रहे है उसका कारण यह है कि अन्य सभी राष्ट्र उनसे भयभीत है। उनमे से कोई भी राष्ट्र हिटलरके सामने यह भाव लेकर नही जा सकता कि उसके हाथ साफ है।

अध्यापक : आज जिस नये भारतका निर्माण हो रहा है, उसमें ईसाई-मिशनोका क्या स्थान है? इस महान कार्यमें सहायता करनेके लिए वे क्या कर सकते है?

गाधीजी भारत क्या है और क्या कर रहा है, उसके प्रति वे आदरभाव रखें। अब तक तो वे ऐसे शिक्षको और धर्मोपदेशकोंकी हैसियतसे आते रहे है जिनकी

भारत और भारतके महान धर्मोके प्रति अजीव धारणाएँ रही है। हमे अज्ञ और अन्धविश्वासी नास्तिको, तथा ईश्वरकी सत्ता अस्वीकार करनेवालोका राष्ट्र बताया गया है। उनकी दृष्टिमे, मरडोकके शब्दोमे हम शैतानकी सन्तान है। क्या विशप हेबरने अपने प्रसिद्ध भजन "फ्रॉम ग्रीनलैंड्स आइसी माउंटेन्ज" मे भारतको ऐसा देश नही बताया "जिसमे हर दृश्य लुभावना है परन्तु जहाँ आदमी ही घिनौना है"? मै समझता हूँ कि यह ईसा मसीहकी शिक्षाके मर्मका सम्पूर्ण उल्लघन है। इसलिए मेरा निजी दृष्टिकोण तो यह है कि यदि आप ऐसा मानते है कि भारतके पास ससारको देनेके लिए कोई सन्देश है और भारतके धर्म भी सच्चे है, भले ही वे अन्य सभी धर्मोके समान अधूरे हो — क्योकि उनका प्रचार भी मानवके माध्यमसे ही हुआ है और मानव स्वय अपूर्ण है और यदि आप सहायक और सहान्वेषी बनकर भारत आये, तो आपके लिए यहाँ स्थान है। परन्तु यदि आप अन्धकारमे भटकनेवाले लोगोके लिए 'सच्चे धर्मके' प्रचारक बनकर आये तो जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है आपके लिए यहाँ कोई स्थान नही। हाँ, आप अपने-आपको हमपर जबर्दस्ती अवश्य लाद सकते है।

अध्यापक : संसारके लिए भारतका सही सन्देश क्या है?

गाधीजी अहिंसा। भारतमें अहिंसाकी यह भावना परिव्याप्त है। भारतने अभी इस भावनाका प्रदर्शन इस सीमा तक नही किया है कि आप इस भावनाके जीते-जागते साक्षी बनकर अमेरिका जाये और वहाँ यह बात कहे। परन्तु आप ईमानदारीसे इतना कह सकते है कि भारत इस आदर्श तक पहुँचनेकी जी-जानसे कोशिश कर रहा है। यदि यह नही तो फिर और कोई ऐसा सन्देश नही जो भारत [विश्वको] दे सके। चाहे आप कुछ भी कहे यह तथ्य तो आपके सामने है ही कि इस सारे उपमहाद्वीपने अपने लिए यह निश्चय किया है कि वह अहिंसाके सिवाय और किसी साधनसे स्वतन्त्रता प्राप्त नही करेगा। किसी दूसरे देशने इस दिशामे प्रयत्न तक नही किया है। मै दूसरे लोगोको इतना भी राजी नही कर सका हूँ कि कम-से-कम अहिंसाका प्रयोग करके तो देखा जाये। निस्सन्देह यूरोपमे भी ऐसा मत जोर पकडता जा रहा है जो अहिंसा-रूपी शस्त्रकी सम्भावनाओका महत्व स्वीकार करने लगा है। परन्तु जब भारत इतना अद्भुत प्रयोग कर रहा है, तो मै उसके लिए यदि सम्भव हो तो सारे ससारकी सहानुभूति उपार्जित करना चाहता हूँ। बहरहाल, आप इस प्रयासके साक्षी तभी बन सकते है जबकि आप सचमुच यह महसूस करे कि हम अहिंसाके आदर्शपर पहुँचनेका प्रयत्न ईमानदारीसे कर रहे है, और जो-कुछ हम कर रहे है वह कोई छल-प्रपच नही है। यदि आपका यह काफी गहरा और जाग्रत विश्वास हो तो इससे आपके लोगोके मनमे एक विचार-मथनकी क्रिया शुरू हो जायेगी।

अध्यापक : यह तो बहुत सुन्दर दायित्व सौंप रहे है आप।

गाधीजी : तो फिर यह दायित्व आप अपने साथ लेकर जाइये।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१-१९३९

२९५. पत्र[1]: अमृत कौरको

सेगाँव
[२९ दिसम्बर, १९३८][1]

प्रिय पगली,

तुम्हारी प्यार-भरी पर्चियाँ मिली। मुझपर कामका इस वक्त बडा बोझ है। पर मै बिलकुल ठीक हूँ। शारदाके पत्र मै नही पढता। उसमे परेशानीकी बात क्या थी?

तुम कहती हो कि मैंने नागपुरके लिए तुम्हे कोई सन्देश नही भेजा। वह तो मुझसे ऐंठ लिया गया था। और यह करिश्मा केवल तुम्ही कर सकती थी। लेकिन उस स्थितिमे जब मुझे डाल दिया गया, तो ताईके पाससे माँग आनेपर बच निकलने का कोई मार्ग नही था। मै तो उसे सिर्फ तुम्हारी ही करतूत कह सकता हूँ।[2]

तुम्हारे स्वास्थ्यकी मुझे चिन्ता है। जितनी जल्दी तुम मेरे पास आ जाओ उतना ही अच्छा है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०१) से, सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७०५७ से भी।

२९६. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
२९ दिसम्बर, १९३८

चि० मीरा,

तुम्हे जार्डिनका कोई पत्र नही मिला, यह हैरानीकी बात है। क्या मैंने तुम्हे खान साहबसे कह देनेको लिखा था कि अगर गवर्नर उन्हे बुलाये तो उन्हे इनकार नही करना चाहिए? शायद तुम्हे भी बुलाया जाये। मुझे खुशी है कि अब तुम्हारे शिष्य काफी नियमित रूपमे आते है।[3] यह एक बडा काम हो रहा है।

१. तारीख अमृत कौरके हाथ की है।

२. देखिए "पत्र: अमृत कौरको", पृ० २५५ भी।

३. मीराबहन खुदाई खिदमतगारोंको धुनाई और कताई सिखा रही थी।

मिलड्रेड आज यहाँ आ गई। वह म्यूरियलके दलसे दो दिन पहले ही आ गई है।

यहाँ अब जाड़ा नही रहा है। इन जाडोमे ठंड प्राय: पड़ी ही नही। २५ रुपये इसके साथ है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२२) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१७ से भी।

२९७. पत्र: चन्दन पारेखको

सेगाँव, वर्धा
२९ दिसम्बर, १९३८

चि० चन्दन,

शकरको पैसे भेज दिये है। अनन्तभाईको पत्र न लिखा हो, तो आभारका सुन्दर पत्र लिख देना, और उसकी नकल मुझे भेजना। इस पत्रके साथ ह०[1] का पत्र है। उसपर विचार करना। यदि तुम दोनोके निर्दोष होनेकी सम्भावना हो, तो ह० को उसका लाभ देना। यदि न हो, तो जो तुझे लिखना हो, लिख भेजना। पत्र मुझे भेजना और उसकी नकल अपने पास रखना।

तूने मुझे पत्र लिखनेका वचन तो दिया था, लेकिन वचनका पालन नही किया। करती, तो पहुँचते ही पत्र लिखती।[2] वहाँ कैसा-क्या चल रहा है, यह जाननेकी इच्छा रहती ही है। बा के समाचार भी तू ही दे सकती है। बा तो एक प्रकारसे अपाहिज ही है। वह जबतक वहाँ है, तब तक उसकी ओरसे तू लिख सकती है।

सुबहका भूला शाम तक घर वापस आ जाये, तो भूला नही कहलाता। अब भी अपने वचनको पूरा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४५) से; सौजन्य: सतीश द० कालेलकर।

१. नाम नहीं दिया गया है।

२. अमेरिकासे लौटनेके बाद चन्दन पारेख लड़कियोंको अंग्रेजी पढ़ाने और स्वयं हिन्दी सीखने कन्या गुरुकुल, देहरादून गई थी। कस्तूरबा और द० बा० कालेलकर उनके साथ गये थे।

२९८. भाषण: मगन संग्रहालय और उद्योग-भवनके उद्घाटन-समारोहमें[1]

वर्धा
३० दिसम्बर, १९३८

मगनलाल गाधी उन थोड़े-से व्यक्तियोमे एक थे जिन्होने, दक्षिण आफ्रिकामे जिस समय मैंने स्वैच्छिक गरीबी और सेवाका आदर्श अपनानेके लिए वकालत छोडने का निर्णय किया तब, अपना भाग्य मेरे साथ जोडकर अनिश्चित भविष्यमे छलाग लगाई थी। वे फीनिक्स आश्रमके सस्थापक सदस्योमे थे और जब 'इडियन ओपिनियन' को वहाँसे डर्बन ले जाया गया तो मुद्रणालयका काम उन्होने सँभाला था। वे दक्षिण आफ्रिका मुख्यत धनोपार्जनके लिए गये थे, किन्तु उन्होने अपनी इस आकाक्षाकी बलि देकर मेरे साथ ही जीने या मरनेका निश्चिय किया और उसपर सदा अटल रहे।

उनमे असाधारण प्रतिभा थी, ऐसी मेरी राय है। उनके मस्तिष्कका अनेक विषयोमें खासा प्रवेश था। उनका जीवन बहुत ही व्यवस्थित और अनुशासनबद्ध था इसलिए किसी भी नई चीजको वे आसानी और सरलतासे ग्रहण कर सकते थे। उन्होने यद्यपि यन्त्रशास्त्रकी शिक्षा नही पाई थी, फिर भी वे फीनिक्समे छपाईकी मशीनोके बहुत कम समयमे जानकार बन गये थे। भारत आनेके बाद तो उन्हे लोकसेवाकी ही लगन लग गई। 'वणाट शास्त्र' नामक किताब लिखकर उन्होने खादी-विज्ञानकी नीव डाली। मगनलालकी मृत्युके बाद खादी-विज्ञानने बहुत प्रगति की है, फिर भी वह पुस्तक आज भी अपने विषयकी एक प्रामाणिक पुस्तक मानी जाती है। अभी ग्रामोद्योग सघने जिन-जिन उद्योगोको हाथमे लिया है उन सबमे वे प्रवीण तो नही थे, लेकिन उनके खादी-प्रवृत्ति-रूपी मध्यबिन्दुसे ही ग्रामोद्योग सघका विकास हुआ है, और इस तरह यह प्रवृत्ति उसकी पुरोगामी बन गई है।

अब दो शब्द इन मकानोके बारेमे। जैसाकि श्री कुमारप्पाने कहा है, इन मकानोको इस तरह बनानेका प्रयत्न किया गया है कि वे ग्रामीण जीवनको शोभा दे सके। फिर भी हमारे देहातोमें आज जो झोपडे देखनेमे आते है, उनके मुकाबलेमें तो ये महँगे और आलीशान ही माने जा सकते है। ग्रामोद्योग सघ जिस तरहका ग्रामीण भारत बनानेका स्वप्न देख रहा है, उसमे कारीगरोके घर कैसे होने चाहिए

१. प्यारेलालके "ए ड्रीम फुलफिल्ड" से उद्धृत। इस समारोहमें तीससे ज्यादा अर्थशास्त्री भी उपस्थित थे; ये अर्थशास्त्री नागपुरमें हो रहे एक अर्थशास्त्रीय सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए आये हुए थे। गाधीजी ने अपना भाषण हिन्दुस्तानीमें दिया था।

और कैसे होगे, उसकी कुछ झाँकी ये मकान कराते है। मै आपको इस विषयमे इतना विश्वास दिला सकता हूँ कि जिस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए वे बनाये गये है, उसके अनुरूप किफायत और सादगी रखनेमे जरा भी ढिलाई नही की गई है। सघके व्यवस्थापकोके बारेमे अधिकसे-अधिक आलोचना यही की जा सकती है कि वे अभी अपना काम जैसा चाहिए वैसा नही समझ सके है। सघ अपनी गलतियोको माननेके लिए और गलतियोसे भी भविष्यके लिए नये-नये सबक सीखनेके लिए हमेशा तैयार है। उसे डर तो केवल पूर्णताके वेशमें आनेवाले अज्ञानका ही है।

इतना तो हुआ बाह्य वस्तुओके बारेमे। भीतर जानेसे आलोचक शायद यह पूछेगे कि इन पुराने औजारो और उत्पादनकी क्रियाओसे स्वराज्य किस तरह हासिल होगा? ये ग्रामोद्योग तो हमारे पास पहलेसे ही थे। पश्चिमकी औद्योगिक प्रतिस्पर्धामे क्या ये बाजी मार सकेगे? और पाश्चात्य देश अपने आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारो और इजीनियरीकी कुशलतासे जो उपलब्धियाँ प्राप्त कर सके है, उन्हे क्या ये प्राप्त कर सकेगे? मेरा जवाब यह है कि ग्रामोद्योग हमारे पास पहलेसे थे तो सही, लेकिन उनमे जो प्रचण्ड शक्तियाँ छिपी हुई है, उनका हमारे पूर्वजोको खयाल नही था और जाग्रत जनसमूहने स्वतन्त्रता-प्राप्तिके साधनके रूपमे उनसे कभी काम नही लिया था। यह बात मै स्वीकार करता हूँ कि हमारे कॉलेजोमे सिखाये और समझाये जानेवाले एक ही साँचेमे ढले हुए प्रचलित अर्थशास्त्रमे और उसके अनुसार चलनेवाले समाजमे, चरखे और ग्रामोद्योगोका शायद स्थान न हो और इस अर्थशास्त्रको सीखनेवालो और उस समाजमे रहनेवाले लोगोको खादी और ग्रामोद्योगका पुनरुद्धार करना शायद मध्ययुगकी तरफ लौटने-जैसा लगे। लेकिन मै तो यह चाहता हूँ कि आप सब मस्तिष्क मे जमे पुराने विचारोको छोडकर इस उद्योग-भवनमे प्रवेश करे। कल्पना कीजिए कि चरखा एक छोटी-सी मिल है जिसकी सहायतासे सतत और सर्वत्र फैली हुई बेकारी और कगालियतसे भरे हुए इस देशमे आदमी घर बैठे दो आना रोज कमा सकता है और अगर यह न हो तो उसे दो पैसे भी नही मिलेगे। इस मिलकी स्थापना लाखो घरोमे हो जाये — और हो सकती है — तो फिर मै ससारमे ऐसी एक भी चीज नही देखता जो इसके साथ प्रतिस्पर्धामे उतर सके।

और फिर यह बात भी नही कि इससे दो आना रोजसे ज्यादा कमाई हो नही सकती। अगर मै अपने बुद्धिजीवियोका सहयोग प्राप्त कर सकूँ, तो मै यह आशा रखता हूँ कि मेरी मृत्युसे पहले ही चरखा उस स्थितिको पहुँच जायेगा कि जिसमे कत्तिने आठ आना रोज कमा सकेगी। दुनियामे आप मुझे दूसरा ऐसा एक भी उद्योग या उद्योग-सघ आज बताये कि जिसने १८ वर्षके कार्यकालमे इतनी कम पूँजीके जरिये लाखो गरीब आदमियोकी जेबमे चार करोड रुपया डाला हो। फिर वह पैसा हिन्दू-मुसलमान, सवर्ण-अवर्ण सबमे बिना किसी भेदभावके तकसीम होता है, और इस तरह उसने उन्हे आर्थिक सम्बन्धके सूत्रसे जोडकर एक-दूसरेसे सयुक्त कर दिया है। इस जीवनप्रद और ऐक्यवर्द्धक प्रवृत्तिको सात लाख गाँवोमे फैला देनेके लिए अगर काफी आदमी काम करनेवाले पैदा हो जाये, तो आप जरा कल्पना

कीजिए कि स्वराज हमारे कितने नजदीक आ जाये। इस औद्योगिक क्रान्तिमे भाग लेनेके लिए बहुत बडा इजीनियर या यन्त्रशास्त्री होनेकी जरूरत नही। कोई भी सामान्य मनुष्य, स्त्री या बालक इसमे सम्मिलित हो सकता है।

मै चाहता हूँ कि आप सब लोग इस सग्रहालय और उद्योग-भवनको एक खिलौनोकी दुकान नही, बल्कि स्वशिक्षण और अध्ययनका जीवित ग्रन्थ समझे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१-१९३९

२९९. बातचीत: अर्थशास्त्रियोंके साथ[1]

वर्धा
३० दिसम्बर, १९३८

मै चाहता हूँ कि जो-कुछ आपने यहाँ देखा है, उसकी आलोचना करके मुझे वतलाये कि उसमे आपको क्या-क्या खामियाँ मालूम पडती है। खाली प्रशसासे मुझे कोई मदद नही मिलेगी, क्योकि मेरी प्रशसा कहाँ होनी चाहिए यह मै जानता हूँ। विना सोचे-विचारे एकदम यह कहनेसे भी काम नही चलेगा, कि यह सव तो असफल ही होना है। कुछ अर्थशास्त्रियोने ऐसा ही किया है, लेकिन ऐसी निन्दाका मुझपर कोई प्रभाव नही पडता। अलवत्ता अगर बारीकीसे सहानुभूतिपूर्वक अध्ययन करके आप कोई खामियाँ पाये, तो उन्हे मुझे वतलाये, उसके लिए मै आपका आभार मानूँगा।

प्र०: क्या आप बड़े पैमानेपर उत्पादनके खिलाफ है?

उ०: मैंने ऐसा कभी नही कहा। यह विश्वास तो उन गलतफहमियो पर ही आधारित है जो मेरे बारेमे फैली हुई है। मेरा आधा वक्त ऐसी बातोके जवावमें ही चला जाता है। लेकिन वैज्ञानिकोसे तो मुझे ज्यादा अच्छी जानकारीकी आशा करनी चाहिए। आपका सवाल तो अखबारी तथा अन्य गैरजिम्मेदार खवरोपर आधारित है। वड़े पैमानेपर उत्पादनके खिलाफ तो मै उन चीजोके सम्बन्धमे हूँ, जिन्हे गाँववाले ही बिना किसी कठिनाईके पैदा कर सकते है।

प्र०: योजना-आयोगके बारेमें आपका क्या खयाल है?

उ०: उसके वारेमे मै कुछ नही कह सकता, क्योकि मैंने उसका अध्ययन नहीं किया है। कार्य-समितिमे मेरे सामने उसपर विचार नही हुआ। मै तो कार्य-समिति को किसी मामलेपर तभी कोई सलाह देता हूँ जब वह मुझसे उसके लिए कहती

१. प्यारेलालके "वीकली लेटर" से उद्धृत। ये अर्थशास्त्री, जिनकी संख्या करीब तीस थी, नागपुरमें हो रहे अर्थशास्त्रीय सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए आये थे; वे गांधीजीसे मिलनेके लिए वर्धा जा पहुँचे थे और मगन संग्रहालयके उद्घाटन-समारोहमें शामिल हुए थे।

है। मतलब यह है कि कार्य-समिति जो-कुछ भी करे उसके लिए यह नही समझ लेना चाहिए कि उस सबमे मेरी छाप है या मेरे सामने उसपर विचार हुआ है। जहाँ तक आम निर्णयोका ताल्लुक है, मैंने खास तौरसे अपने ऊपर कोई जिम्मेदारी नही रखी है।

प्र० : क्या उसे आपका आशीर्वाद प्राप्त नहीं है?

उ० · जिस चीजको मैं जानता ही नही या जिसमे मेरी कोई दिलचस्पी नही है उसमे मेरे आशीर्वादका क्या मतलब?

प्र० : क्या आप समझते है कि गृह-उद्योगों और बड़े-बड़े उद्योगोंका मेल बैठ सकता है?

उ० : हाँ, बशर्ते कि उनका आयोजन इस तरह किया जाये जिससे गाँवोको मदद मिले। जिन प्रधान उद्योगोकी राष्ट्रको आवश्यकता है, उनका केन्द्रीकरण हो सकता है। लेकिन तब ऐसे किसी उद्योगको मै प्रधान उद्योगके रूपमे स्वीकार नही करूँगा, जो थोड़े-से संगठनसे गाँववालोके द्वारा किया जा सकता हो। उदाहरणके लिए, पहले मुझे यह पता नही था कि हाथका बना कागज भी चल सकता है। लेकिन अब मैं ऐसी आशा करता हूँ कि अखबारो वगैरहके लिए तो नही, पर मेरे खयालसे हरएक गाँव अपनी जरूरतका कागज तो खुद ही तैयार कर सकता है। फर्ज कीजिए कि कागज बनाने पर सरकारी नियन्त्रण है और वह इस उद्योगका केन्द्रीकरण करती है, तो उस हालतमे मैं यह आशा करूँगा कि सरकार गाँवोमे बन सकनेवाले सारे कागजका सरक्षण करेगी।

प्र० : गाँवोंके संरक्षणका क्या मतलब है?

उ० : शहरोके दबावसे उन्हे बचाना। एक वक्त ऐसा था जब शहर गाँवो पर निर्भर थे, लेकिन अब इससे उलटा है। परस्परावलम्बन भी नही है। आज तो शहर गाँवोका शोषण करके उन्हे चूसे जा रहे है।

प्र० : क्या गाँवोंको उन बहुत-सी चीजोकी जरूरत नहीं है, जो शहरोंमें बनती हैं?

उ० : मुझे तो कुछ ऐसा ही लगता है। लेकिन जो भी हो मेरी योजना तो यह है कि जो माल शहरोकी ही तरह गाँवोमे भी बन सकता हो, उसे शहरोमें किसी हालतमे तैयार न किया जाये। शहरोका काम तो यह है कि गाँवोमे जो-कुछ पैदा हो उसका वे उपयुक्त रूपमे वितरण करे।

प्र० : मिलोंमें बने कपड़ेका क्या हम हाथसे बने कपड़ेके साथ मेल बैठा सकते हैं?

उ० · जहाँ तक मैं जानता हूँ, मेरा जवाब 'नही' मे ही हो सकता है। हमें जितने कपड़ेकी जरूरत है वह सब तो गाँवोमे ही तैयार हो सकता है।

प्र० : लेकिन मिलोंकी तादाद तो बढ़ रही है।

उ० : यह हमारा दुर्भाग्य है।

प्र० : लेकिन यह तो एक ऐसी बात है जिसको करनेका योजना-आयोगने भी निश्चय किया है।

उ० : यह मेरे लिए नई खवर है। ऐसा हो तव तो कांग्रेसको पहले खादीवाले अपने प्रस्तावको फाड़ फेंकना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

३००. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
३१ दिसम्बर, १९३८

भाई वल्लभभाई,

शम्भुशंकरको तो तुम जानते ही हो। वे पालीताणाके लिए स्वराज्य लेनेकी आशा रखते हैं। दरबारको पत्र तो लिखा ही है। शम्भुशंकर काफी स्वतन्त्र स्वभावके हैं। उन्हें उम्मीद तो यह है कि केवल ईश्वरके भरोसे रहकर वे अपनी मुराद हासिल कर लेंगे, परन्तु बुजुर्गोंके आशीर्वादकी आशा तो रखते ही हैं। मैंने कह दिया है कि यदि वे ऐसी श्रद्धासे लड़ें, और लड सके तो उन्हें आशीर्वाद तो मिलेंगे ही। जो सत्य और अहिंसाके पुजारी हैं, आशीर्वाद तो उनकी जेबमें रहते हैं। परन्तु उन्हें इतनेसे थोड़े सन्तोष हो सकता है? तुम्हारे आशीर्वाद तो उन्हें जरूर चाहिए। उनकी बात सुनकर आशीर्वाद देना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
पुरुषोत्तम बिल्डिंग
ऑपेरा हाउसके सामने
बम्बई–४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३१

३०१. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

३१ दिसम्बर, १९३८

"जमनालालजी
पता लिखो[1]
दिल्ली

तार मिला। आदेशके सम्बन्धमें कोई चिन्ता नहीं। सम्भव हो तो बारडोली आ जाना। बापू।"[2]

चि० राधाकृष्ण,

यह तार कल भेजो[3], खत भी साथमें है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

म्यूरियल लेस्टरके बारेमें प्रबन्धका सन्देशा मिला होगा। उनको ३ बजे कल यहाँ भेजो।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०३९) से।

३०२. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगाँव
३१ दिसम्बर, १९३८

चि० शर्मा,

तुमने ठीक कहा है, समय हमारा शत्रु हो रहा है। विचारश्रेणीमें तुमको अन्तर नहीं लगता यह मेरे लिये बहुत संतोषजनक बात है। लेकिन सबसे ज्यादा संतोष

१. राधाकृष्ण बजाजको पता लिखनेके लिए कहा गया था। गांधीजी ने यह आदेश गुजरातीमें लिखा था।

२. यह अंग्रेजीमें है। आगेका अंश हिन्दीमें है।

३. पत्र लिखते समय जमनालाल बजाजका तार मिला था। इसी समय गांधीजीने प्यारेलालसे कहा कि तुम राधाकृष्ण बजाजसे पहलेके स्थानपर निम्नलिखित तार भेजनेके लिए कहो: "तुम्हारा तार मिला। बारडोलीमें चार तारीखको तुमसे और जयपुरके मित्रोंसे मिलूँगा। बापू" (पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २०८)।

मुझे तुमारे निश्चयसे होता है। तुमारा धर्म घी बेचनेका नही है। तुमारा धर्म नैसर्गिक तथा अन्य लेकिन ग्राह्य उपचारोसे रोगियोको दुरुस्त करना है। और अब शहरमे ऐसे उपचार करके आजीविका पैदा करोगे यह मुझे अच्छा लगता है। "स्व-धर्मे निधन श्रेय" यह 'भगवद्गीता' के एक श्लोकका हिस्सा है[1] और उसका अर्थ लाभ यह है कि अपने धर्ममे नाश भी अच्छा है। परधर्ममे तो हमेशा भय ही है कभी नही है।

अगर अच्छा लगे तो छोटी-सी पत्रिका भी निकाल दो। जो निवेदन[2] पुस्तको को छोडते समय किया था उसका उल्लेख करके। अब क्या करोगे यह बता दिया जाय। मुझे खबर देते रहो।

एक परीक्षामें तुम्हारे उत्तीर्ण होना होगा। सबके साथ आसानीसे और उनमे भी मेरे साथ रहने वालोके साथ आसानीसे रहनेकी कला हस्तगत करना।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २७४-५

३०३. भेंट : टिमोथी टिंगफांग ल्यूको[3]

३१ दिसम्बर, १९३८

रेवरेंड ल्यूने . . . चीनियोंकी सहायताके लिए भेजे गये भारतीय चिकित्सक मिशनके लिए धन्यवाद देते हुए कहा :

"हम इसे चीनके प्रति भारतकी सहानुभूति और सद्भावनाकी अभिव्यक्ति मानते हैं। चीनका यह संघर्ष केवल चीनके लिए नहीं बल्कि पूरे एशियाके लिए है। . . .

"हमें भौतिक विनाशका भय नहीं है, . . . पर सांस्कृतिक विनाशका है। शंघाईमें पहला बम पुस्तकालयपर पड़ा था। हमारे कॉलेज मिटा दिये गये हैं। प्रोफेसर मारे गये हैं। . . .

"इससे भी ज्यादा दुःखदायी चीज नैतिक क्षति है। . . .

१. भगवद्गीता, अध्याय-३, श्लोक ३५।

२. गांधीजी की टीका-टिप्पणियोंके साथ यह १४-१२-१९३४ के *हरिजन* में प्रकाशित हुआ था। देखिए खण्ड ५९, पृ० ४७५-६।

३. प्यारेलाल लिखित "ए वर्ल्ड इन एगोनी" से उद्धृत। रेवरेंड टिमोथी टिंगफाग ल्यू ताम्बरम्के मिशनरी सम्मेलनमें भाग लेनेवाले चीनी प्रतिनिधिमण्डलके सदस्य थे। ल्यू चीनकी विधानसभा 'युआन' के प्रतिनिधि थे। दो अन्य चीनी प्रतिनिधियों, शंघाई-स्थित वाई० एम० सी० ए० के एसोसिएशन प्रेस के सम्पादक वाई० टी० वू० और कन्फ्यूशियस सम्बन्धी कई ग्रन्थोंके लेखक पी० सी० सू के साथ वे गांधीजी से मिलने सेगाँव आये थे। रोडेशियाके कुछ प्रतिनिधि और जापानके एक प्रतिनिधि भी वहाँ थे। गांधीजी ने उन्हें एक 'छोटी-सी दुनिया' कहा था; देखिए "पत्र : एफ० मेरी बारको", ७-१-१९३९।

हम आपका सन्देश चाहते हैं। . . . हम आपसे आध्यात्मिक मार्गदर्शनकी आशा रखते हैं।"

गाधीजी . शान्तिनिकेतनके एक चीनी मित्रने एक बार मुझसे चीनियोके लिए सन्देश देनेको कहा था। मुझे उनसे क्षमा माँगनी पडी। उसके कारण मैंने उन्हे बता दिये थे। यदि मै इतना ही कहता कि चीनियोके संघर्षमें मेरी उनके साथ सहानुभूति है, तो मेरे-जैसे व्यक्तिके इस कथनका कोई बहुत महत्व नही होता। मै तो चीनियोसे निश्चित रूपसे यह कह सकनेके योग्य होना चाहता हूँ कि उनकी मुक्ति केवल अहिंसाके ही तरीकेसे सम्भव है। परन्तु मेरे-जैसे व्यक्तिका जो उस लडाईसे बाहर है, ऐसे लोगोसे, जो जिन्दगी और मौतके सघर्षमें जुटे है, यह कहना उपयुक्त नही लगता कि "इस तरह नही, उस तरह लड़िए।" नये तरीकेको अपनानेकी उनकी तैयारी नही होगी, और पुरानेके बारेमें उनके मनमें दुविधा ऊपरसे पैदा हो जायेगी। मेरा हस्तक्षेप केवल उन्हे डाँवाँडोल करेगा और उनके मनमे उलझन पैदा करेगा।

परन्तु सघर्षमे जुटे हुए चीनियोंको भेजनेके लिए मेरे पास कोई 'सन्देश' न होते हुए भी मुझे आपके आगे अपना दृष्टिकोण रखनेमे कोई सकोच नही है। मै आपसे यह पूछने ही जा रहा था कि आपका सास्कृतिक विनाश हो रहा है, इससे आपका क्या आशय है। यह जानकर तो मुझे दुःख ही होगा कि चीनी सस्कृति ईंट और चूनेमे बसती है या उन भारी ग्रन्थोमे बसती है जिन्हे दीमक खा सकती है। किसी राष्ट्रकी सस्कृति उसके लोगोके हृदय और आत्मामें बसती है। चीनी सस्कृति उसी हदतक चीनी है जहाँ तक वह चीनी जीवनका अग बन गई है। इसलिए आपका यह कहना कि आपकी संस्कृति और आपकी नैतिकताके लिए विनाशका खतरा उपस्थित है, मुझे यह सोचनेको मजबूर करता है कि आपके देशका सुधार-आन्दोलन केवल सतही था। जुएकी भावना लोगोके हृदयसे गई नही है। वह कानूनके दण्डसे दबी है, समाज द्वारा पैदा किये गये वातावरणसे नही दबी है। हृदय बराबर जुआ खेलता रहा है। जापान निस्सन्देह दोषी है और वह जो-कुछ कर चुका है या कर रहा है, उसके लिए उसे अवश्य दोष देना चाहिए। परन्तु जापान तो इस समय भेड़ियेकी तरह है, जिसका काम ही भेडोका खात्मा करना है। भेड़ियेको दोष देनेसे भेड़ोको कोई खास मदद नही मिलेगी। भेडोको यह सीखना होगा कि भेड़ियेके पजोमें पड़नेसे कैसे बचा जाये।

यदि आपमें से कुछ लोग भी अहिंसाको अपना ले, तो वे चीनी सस्कृति और नैतिकताके जीवन्त स्मारकोकी तरह अडिग रहेगे। और तब, चाहे चीन युद्ध-क्षेत्रमे पराजित हो जाये, पर अन्तमे चीनका भला ही होगा, क्योकि वह साथ ही ऐसा सन्देश प्राप्त कर रहा होगा जिसमे आशा और मुक्तिका आश्वासन होगा। जापान सगीनकी नोकसे अनिच्छुक लोगोके गलोमे जबर्दस्ती मादक द्रव्य नही उतार सकता। वह केवल प्रलोभन खड़े कर सकता है। आप जापानी शस्त्र-शक्तिका शस्त्र-शक्तिसे जवाब देकर लोगोंको इन प्रलोभनोके प्रतिरोधकी शिक्षा नही दे सकेंगे। शस्त्र-शक्ति चाहे और कुछ प्राप्त कर सके या न कर सके, पर वह चीनी नैतिकता और चीनी सस्कृतिकी रक्षा नही कर सकती।

यदि आप मेरे विचारोके सत्यको अनुभव करते है, तो आप चीनके लिए एक जीवन्त सन्देश बन जायेंगे। आप तब चीनियोसे कहेगे "जापान चाहे कितना भी भौतिक विनाश करे, वह चीनका सास्कृतिक विनाश नही कर सकता। हमारे लोगोको इतना शिक्षित और प्रबुद्ध होना चाहिए कि वे जापान द्वारा सोचे जा सकनेवाले सभी प्रलोभनोका प्रतिरोध कर सके। स्मारक और नगर धूलमे मिलाये जा सकते है। वे दो दिनका तमाशा है, जिनका समय खुद किसी दिन खात्मा कर देगा। यदि जापानी उन्हे नष्ट करते है तो वह महज समयके मुँह से निवाला निकालना होगा। जापानी हमारी आत्माको भ्रष्ट नही कर सकते। चीनकी आत्मा यदि जख्मी होती है, तो वह जापानके हाथो नही होगी।"

चीनी मित्रकी यह राय थी कि जापानकी अर्थ-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाये तो ही चीनकी रक्षा हो सकती है। वे यह जानना चाहते थे कि भारतमें जापानी मालके बहिष्कारकी क्या सम्भावनाएँ हैं।

गाधीजी: काश, मै यह कह सकता कि उसकी बहुत आशा है। हमारी सहानुभूतियाँ आपके साथ है, पर उन्होने हमें गहराई तक झकझोरा नही है, नही तो हमने समस्त जापानी मालका, खासकर जापानी कपडेका बहिष्कार कर दिया होता। जापान केवल आपको ही नही जीत रहा, वह अपनी मशीनकी बनी सस्ती-कमजोर वस्तुओसे हमे भी जीतनेकी कोशिश कर रहा है। चिकित्सक मिशनका भेजा जाना मित्रता और सद्भावनाका सकेत है, जो यहाँ प्रचुर मात्रामें है। पर मै उससे बहुत सन्तुष्ट नही हूँ, क्योकि मै यह जानता हूँ कि हम इससे बहुत ज्यादा कर सकते थे। आपकी तरह हमारा राष्ट्र भी एक बडा राष्ट्र है। यदि हम जापानसे यह कह देते कि 'हम आपका गज-भर भी कपडा आयात नही करेंगे और न आपको अपनी रुई ही भेजेगे', तो जापान अपना आक्रमण जारी रखनेसे पहले दो-बार सोचता।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

३०४. पत्र: अमतुस्सलामको

[१९३८][1]

चि० अ० स०,

मै क्या कहूँ! जो करती है उसमें 'मै' है। उसकी शिकायत नही है। कल खा न सकी वही बताता है कि मेरी नही चलती है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१२) से।

१. बापूके पत्र – ८: बीबी अमतुस्सलामके नाम में इस पत्रको इसी स्थानपर रखा गया है।

३०५. पत्र : अमतुस्सलामको

[१९३८][1]

बेटी,

तू तेरी तबीयतको सुधारनेके लिए कुछ भी कर सकती है। बहाना ढूंढ कर कुछ नही कर सकती है। अच्छी हो जायेगी तो मुझे बडी खुशी होगी।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१३)से।

३०६. पत्र : अमतुस्सलामको

[१९३८][2]

चि० अ०स०,

मैं तो आज कुछ लिख नही सकता हूँ। सुशीलाने जो कुछ लिखा है ऐसा ही करना। शरीर बिगड़ना नही चाहिए।

बापुकी दुआ

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४) से।

३०७. सुसंस्कृत अराजकता — राजनैतिक आदर्श

मेरी दृष्टिमे राजनैतिक सत्ता हमारा ध्येय नहीं हो सकता। जिन साधनोकी बदौलत जीवनके प्रत्येक विभागमें अपनी उन्नति करनेकी लोगोंमें शक्ति आती हैं, उनमे से राजनैतिक सत्ता एक है। राष्ट्रके प्रतिनिधियो द्वारा राष्ट्रीय जीवनका नियमन करनेकी शक्तिका ही नाम राजनैतिक सत्ता है। यदि राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाये कि वह स्वय नियत्रित रहे तो प्रतिनिधित्वकी आवश्यकता ही नही रहती। वह एक सुसंस्कृत अराजकताकी अवस्था होगी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना ही शासक होगा। वह अपना नियमन आप ही इस तरह करेगा कि जिससे उसके पड़ौसीके हितमें बाधा न हो। आदर्श स्थितिमे राजसस्था ही नही रहेगी तो फिर राजनैतिक सत्ता कहाँसे आयेगी।

१. बापूके पत्र – ८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम में इस पत्रको इसी स्थानपर रखा गया है।
२. बापूके पत्र – ८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम में इस पत्रको इसी स्थानपर रखा गया है।

इसलिए थोरोने अपने अभिजात सूत्रमें कहा है कि सबसे बढ़िया सरकार वह है जो कमसे-कम शासन करती है।

सर्वोदय, जनवरी, १९३९

३०८. बातचीत : मॉरिस फ्रीडमैनके साथ[1]

[१ जनवरी, १९३९ या उसके पूर्व][2]

फ्रीडमैन : मैं तो यथार्थवादी हूँ इसलिए दुनियामें आज औद्योगीकरणकी जो बाढ़ आ रही है, उसके विषयमें मुझे कैसी वृत्ति रखनी चाहिए? . . . यदि हम उसका केवल विरोध ही करें तो क्या यह शक्तिका अपव्यय नहीं होगा? क्या यह ज्यादा अच्छा न होगा कि हम इसकी दिशा बदलनेकी कोशिश करें?

गांधीजी : आप इंजीनियर हैं इसलिए अपनी बात समझानेके लिए मैं यान्त्रिकीसे एक उदाहरण देता हूँ, क्योंकि आप वह समझ सकेंगे। जिसे बल-समान्तर चतुर्भुज कहते हैं उससे आपका परिचय है ही। उसमें ये विभिन्न बल एक-दूसरेको काटते नहीं हैं। प्रत्येक बल अपनी निर्धारित दिशामें बिना किसी बाधाके काम करता है और इन सबकी क्रियाके परिणामस्वरूप हमें गतिकी अन्तिम दिशा प्राप्त होती है। आपने जो सवाल उठाया है उसके साथ भी यही नियम लागू होता है। रूसमें औद्योगीकरणकी उपासना हो रही है — बड़े-बड़े यन्त्र-उद्योग वहाँ पराकाष्ठापर पहुँच गये हैं, लेकिन वहाँका जीवन मुझे आकर्षक नहीं लगता। 'बाइबिल' की भाषामें कहूँ तो "यदि मनुष्य सारी दुनियाको जीत ले पर अपनी आत्माको खो दे, उससे उसका क्या श्रेय हो सकता है?" आधुनिक भाषामें कहें तो मनुष्य अपना व्यक्तित्व खो दे और यन्त्रका मात्र एक पुर्जा बनकर रह जाये तो यह चीज उसकी मानवीय गरिमाको शोभा नहीं देती बल्कि उसे घटाती है। मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति समाजका एक पूर्णतः विकसित और जीवन्त सदस्य हो। गाँवोंको स्वावलम्बी होना चाहिए। अहिंसाके मार्ग पर चलना हो तो मुझे इसके सिवा कोई दूसरा हल नहीं दिखता। मेरा तो अब यही विश्वास है। मैं जानता हूँ कुछ लोगोंका विश्वास औद्योगीकरणमें ही है। मैं तो अपनी सारी शक्ति लगाकर अपने विश्वासकी सिद्धिमें लगा हुआ हूँ। समजनकी क्रिया चल रही है। जो अनेक शक्तियाँ काम कर रही हैं, उनमें से क्या परिणाम निकलेगा, इसका मुझे पता नहीं। पर जो भी परिणाम आये वह श्रेयस्कर ही होगा।

फ्रीडमैन : लेकिन क्या स्वावलम्बी गाँवोंके आदर्शको जोखिममें डाले बगैर औद्योगीकरणके साथ कुछ समझौता नहीं किया जा सकता?

१. प्यारेलालके "वीकली लेटर" से उद्धृत। डॉ० फ्रीडमैन, जिन्हें भारतानन्द भी कहा जाता था, मूलतः पोलैंडके निवासी थे। वे बंगलौरमें गवर्नमेंट इलेक्ट्रिकल वर्कशॉपके प्रमुख थे। भारतीय राजनीति और दर्शनमें उनकी गहरी रुचि थी।

२. गांधीजीने यह बातचीत फ्रीडमैन ने सेगाँव में की थी, जहाँपर गांधीजी १ जनवरी तक थे।

गाधीजी किया जा सकता है। रेलवेको ही लीजिए। इसका मैंने त्याग नही कर दिया है। मोटर मुझे अप्रिय लगती है, फिर भी, अनिच्छासे ही क्यो न हो, उसका उपयोग मैं करता ही हूँ। फाउन्टेनपेन मुझे अच्छा नही लगता, पर आज इसीसे काम ले रहा हूँ, हालाँकि पेटीमे वरूकी कलम भी रखता हूँ। फाउन्टेनपेनसे लिखते वक्त हमेशा मेरा मन मुझे डक-सा मारता है, और पेटीमे पडी हुई वरूकी कलमकी याद आ जाती है। ऐसा समझौता तो पग-पगपर होता रहता है। पर हमे इसका खयाल रहना चाहिए कि वह समझौता है, और उचित आदर्श हमेशा नजरके सामने रखना चाहिए और उसका चिन्तन करना चाहिए।

फ्रीडमैन : व्यस्त पश्चिमके साथ जब मैं भारतके गाँवोंकी तुलना करता हूँ, तब ऐसा लगता है, मानो मैं बिलकुल ही निराली दुनियामें विचरण कर रहा हूँ। यहाँके गाँव जरा भी आगे बढ़ते हुए नहीं दिखाई देते।

गाधीजी . ऊपरी नजरसे आप देखेंगे, तो ऐसा ही प्रतीत होगा। पर जिस क्षण आप उन लोगोके साथ बात करेंगे, आप देखेंगे कि उनकी जिह्वासे ज्ञान झर रहा है। उनके अन्दर गहरी आध्यात्मिक वृत्ति है। इसे मैं सस्कारिता कहता हूँ। यह चीज आपको पश्चिममें देखनेको नही मिलेगी। यूरोपके किसी किसानके साथ आप बात करेंगे, तो आप देखेंगे कि ईश्वर या आत्माके बारेमे उसे कोई दिलचस्पी नही होती। भारतके ग्रामीणमे तो युगो-पुरानी सस्कारिता छिपी हुई पडी है। उसकी दरिद्रता और निरक्षरताको आप दूर कर दे, तो आपको उसमे शिष्ट, सस्कारवान, स्वतन्त्र नागरिकका सुन्दर-से-सुन्दर नमूना देखनेको मिलेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

३०९. पत्र : एस० वेलु पिल्लैको[1]

वर्धा
१ जनवरी, १९३९

आपका तार पढकर दु ख हुआ। मैंने अपनी योग्यतानुसार अच्छीसे-अच्छी सलाह दी है। दीवानके प्रति मेरा कोई पक्षपात नही है। जो मित्रजन यहाँ आये थे उन्हें मैंने बार-बार यह बता दिया था कि यदि उन्हे मेरी सलाह बिलकुल सही न लगती हो तो उन्हे आरोप वापस लेनेकी जरूरत नही है। मैंने यह कभी नही कहा था कि जनताकी स्पष्ट इच्छाके प्रतिकूल भी वे वापस ले लिये जाये। आखिर आपसे, नेता होनेके नाते, यह अपेक्षा तो की ही जाती है कि आप जनताकी इच्छा जानते हैं।

१. यह एस० वेलु पिल्लैके तारके उत्तरमें था, जिसमें यह कहा गया था कि राज्य कांग्रेसने तो आरोप वापस ले लिये लेकिन दीवानने उसका उसी भावनासे उत्तर नहीं दिया, त्रावणकोरकी लड़ाईका कोई नतीजा नहीं निकला, गिरफ्तारियाँ अभी भी जारी हैं, और रियासतमें हर-कहीं असन्तोष है।

आपके तारके बावजूद, मेरी यह धारणा है कि आरोपोका वापस ले लेना ठीक था। यदि अब मुकदमे जारी रहते है तो आपका रास्ता साफ है। यदि वहाँ असन्तोष है तो आप नेताओको, जो कदम आपने उठाया है उसका औचित्य दिखाकर, असन्तोष दूर कर सकना चाहिए। आन्दोलन यदि सचमुच सही आधारपर खड़ा है और लोग समझ-बूझकर उसका समर्थन कर रहे है, तो वह अब पहलेसे भी ज्यादा प्रबल होना चाहिए। आरोपोका बोझ हट जानेसे आपका रास्ता बिलकुल साफ हो जाता है, और यदि आप हिंसाकी शक्तियोपर नियन्त्रण रख सके तो आपको सविनय अवज्ञा शुरू करनेमे कोई कठिनाई नही होगी। मेरा अपना अन्त करण बिलकुल साफ है। मेरी सलाह अभी भी आपके लिए हाजिर है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-१-१९३९

३१०. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

सेगाँव, वर्धा
१ जनवरी, १९३९

भाई सम्पूर्णानन्दजी,

डा० जाकेर हुसेन कुछ दिनो तक मेरे साथ थे। हिन्दू-मुस्लिम मसलेके बारेमे उन्होने एक यादी तैयार की है। उसमे से यू० पी० के बारेमे जो लिखा है वह आपको भेजता हू।[1] उसमे जो सूचनाए है मुझको तो बहुत अच्छी लगती है। आप उसे देखें, और उनमे से जिसका अमल हो सकता है किया जावे। चाहे तो डॉ० जाकेर हुसेनको सीधा आप पत्र लिख सकते है। मै उन्हे बरसोसे पहचानता हू। वह सज्जन है।

आपका,
मो० क० गाधी

मूल पत्रसे : सम्पूर्णानन्द पेपर्स, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१. इसमें जाकिर हुसेनने संयुक्त प्रान्तकी विभिन्न मुस्लिम शैक्षणिक संस्थाओंको सरकारी सहायता देनेका सुझाव दिया था। उन्होंने यह भी सिफारिश की थी कि पुस्तकालयो तथा उर्दूमें साहित्यिक कार्य करनेवाली संस्थाओंकी भी मदद की जानी चाहिए।

३११. भेंट: टिमोथी टिंगफांग ल्यू, वाई० टी० वू और पी० सी० शूको[1]

[१ जनवरी, १९३९][2]

चीनी शिष्टमण्डलके सदस्योंने सूक्ष्म प्रश्न पूछे . . . उनमें से एकने पूछा: "क्या यह जरूरी नहीं है कि व्यक्ति पहले अपने जीवनमें, अन्य व्यक्तियोंके साथ अपने व्यवहारमें, अहिंसाका पालन करे?"

गाधीजी. अन्यथा सोचना तो भ्रम ही होगा। यदि कोई व्यक्ति दूसरोके प्रति अपने निजी सम्बन्धोमे अहिंसाका व्यवहार नही करता और वडे मामलोमे इसका व्यवहार करनेकी आशा करता है तो यह उसकी भारी भूल है। उदारताकी तरह ही अहिंसा भी घरसे ही शुरू होती है। परन्तु यदि व्यक्तिके लिए अहिंसामे प्रशिक्षित होना जरूरी है तो राष्ट्रके लिए तो यह और भी जरूरी है। ऐसा नही हो सकता कि कोई व्यक्ति अपने निजी दायरेमे तो अहिंसक रहे और बाहर वह हिंसक हो उठे। अन्यथा वह अपने दायरेमे भी अहिंसक नही होगा, उसकी अहिंसा अहिंसाका दिखावा मात्र ही होगी। जब कोई प्रतिद्वन्द्वी विरोधमे खडा होता है तभी, उदाहरण के तौरपर किसी चोर या हत्यारेके सामने आनेपर ही, आपकी अहिंसाकी परीक्षा होती है। उस हालतमे आप चोरका सामना उसीके शस्त्रोसे करनेकी कोशिश करते है या आपको वैसी कोशिश करनी चाहिए, अथवा आप प्यारसे उसे निरस्त्र करनेकी कोशिश करते है। शालीन लोगोके बीच रहते हुए अहिंसाकी परीक्षाका अवसर आता ही नही, अत उस स्थितिको अहिंसात्मक नही कहा जा सकता। पारस्परिक सहनशीलता अहिंसा नही है। इसलिए जैसे ही आपको यह विश्वास हो जाये कि अहिंसा जीवनका नियम है, आपको उनके प्रति अहिंसाका आचरण करने लगना चाहिए जिनका व्यवहार आपके प्रति हिंसात्मक रहा है। यह नियम राष्ट्रो और व्यक्तियोपर समान रूपसे लागू होता है। निस्सन्देह इसमे प्रशिक्षण जरूरी है। आरम्भ सदा स्वल्पसे ही होता है, परन्तु यदि विश्वास दृढ हो तो शेष बादमे स्वयं होता चलता है।

प्र०: क्या हिंसाके व्यवहारमें यह खतरा नहीं रहता कि व्यक्तिमें 'शहादतकी भाव ग्रन्थि' उत्पन्न हो जाये या इसके कारण उसमें कुछ अभिमान घर कर जाये?

१. प्यारेलालके "ए वर्ल्ड इन एगोनी" से उद्धृत।

२. प्यारेलालके अनुसार ताम्बरम् सम्मेलनके सदस्य "वर्षके अन्तिम दिन तथा नये सालके दिन सेगाँवमें थे"। ल्यू पहले दिन गांधीजी से अलगसे मिले (देखिए पृ० २८८-९०) और "बादमें" उन सभी लोगोंने एक साथ गांधीजी से बातचीत की। ऐसा अनुमान है कि यह जनवरीकी पहली तारीख थी।

उ० : यदि किसीमे वैसा अभिमान और अहंमन्यताका भाव हो तो वह अहिंसा नही है। नम्रताके बिना अहिंसा आ ही नही सकती। मेरा अपना यह अनुभव है कि जब कभी मैंने अहिंसात्मक रूपसे कार्य किया है, मुझे उसकी प्रेरणा किसी अदृश्य शक्तिसे मिली है और उसीके बलपर मै उसमे लगा रहा हूँ। यदि मैं अपनी ही इच्छाशक्ति पर निर्भर रहता तो मैं बुरी तरह असफल हो जाता। जब मैं पहली बार जेल गया तो यह सोचकर कि अब क्या होगा, मेरा दिल धड़कने लगा था। जेल-जीवनके विषयमे मैंने भयावह बाते सुनी थी। परन्तु ईश्वरकी शरणमे मुझे विश्वास था। हमारा अनुभव यह था कि जो लोग प्रार्थनाकी भावनासे जेल गये, वे विजयी होकर वापस लौटे; और जो अपनी ही शक्तिके भरोसे गये, वे असफल हुए। जब आप यह कहते है कि ईश्वर आपको शक्ति देता है तो उसमें आत्मदयाकी भी कोई गुजाइश नही रहती। आत्मदया तभी आती है जब आप कोई ऐसा काम करते है, जिसके लिए आप दूसरोसे मान्यताकी आशा रखते है। परन्तु यहाँ तो मान्यताका कोई प्रश्न ही नही है।

दूसरे मित्रने अपने मनकी उलझन इस तरह सामने रखी: "मेरा अहिंसापर दृढ़ विश्वास है। आठ साल पहले मैंने आपकी पुस्तक 'एक्सपेरिमेंट्स विद ट्रुथ' पढ़ी और . . . उसका चीनी भाषामें अनुवाद किया। उसके बाद जापानी आक्रमण हुआ। अहिंसापर मेरे विश्वासकी कड़ी परीक्षा हुई। . . . एक ओर तो मैं यह महसूस करता था कि मैं अपने ही लोगोको अहिंसाका उपदेश नहीं दे सकता, जिनका . . . यह विश्वास था कि शक्तिसे प्रतिरोध करना ही एकमात्र उपाय है। . . . परन्तु दूसरी ओर जब मैं सहानुभूतिपूर्ण रुख अपनानेकी कोशिश करता हूँ और ऐसी स्थितिमें कुछ सहायता-कार्य करनेकी कोशिश करता हूँ तो मुझे लगता है कि जिसे मैं परम धर्म मानता हूँ . . . उसके विरुद्ध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें मैं नैतिक और भौतिक दोनों तरहका समर्थन दे रहा हूँ।"

गांधीजी : आपकी स्थिति कठिन है। ऐसी कठिनाइयाँ मेरे सामने कई बार आई है। बोअर युद्धमे मैंने ऐम्बुलेंस दस्ता तैयार करके अंग्रेजोके पक्षमें भाग लिया। तथाकथित जुलू-विद्रोहके वक्त भी मैंने ऐसा ही किया। तीसरी बार महायुद्धके दौरान भी ऐसा ही हुआ। तब मेरा अहिंसामे विश्वास था। मेरा उद्देश्य पूर्णत: अहिंसात्मक था। इस असगत आचरणसे मुझे शक्ति मिली। दूसरे लोग अनुसरणके लिए मेरा उदाहरण नही अपना सकते। इन तीनो अवसरोंपर अपने आचरणपर दृष्टिपात करते हुए मुझमें कोई पश्चात्तापकी भावना नही है। मुझे यह भी मालूम है कि इन अनुभवोंके कारण मेरी अहिंसात्मक शक्तिमें कोई कमी नही आई है। विशेषकर जुलू-विद्रोहके दौरान जो असली काम मुझे सौपा गया वह बिलकुल लोकोपकारका ही काम था। मुझे और मेरे साथियोंको यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि हमने जख्मी जुलूओकी मरहम-पट्टी करके उन्हे फिरसे जीवन-दान दिया। यह कहा जा सकता है कि यदि उन्हें हमारी सेवाएँ नही मिलती तो उनमे से कुछ-एक तो मर ही जाते। मैं

इस अनुभवका उल्लेख इसलिए नही कर रहा हूँ कि मैंने उसमे चाहे कितने ही अप्रत्यक्ष रूपसे भाग लिया हो, वह युक्तिसगत था। मै यह उल्लेख यह दिखानेके लिए कर रहा हूँ कि उस अनुभवसे मुझमे अहिंसाका भाव और भी दृढ हो गया और महान जुलू जातिके लिए मेरे मनमे पहलेसे ज्यादा प्रेम-भाव उत्पन्न हुआ। मुझे यह समझनेका अवसर भी मिला कि अश्वेत जातियोके विरुद्ध गोरोके युद्धका क्या अभिप्राय है।

इससे आपको यह सबक सीखना है कि आप अत्यन्त अल्पसंख्याकी स्थितिमें है, इसलिए आप अपने लोगोसे हथियार छोड़ देनेके लिए तब तक नही कह सकते जब तक कि उनका हृदय-परिवर्तन न हो जाये और हथियार रख देनेपर वे अपने-आपको ज्यादा उत्साही और बहादुर न महसूस करने लगे। परन्तु लोगोको युद्धसे विमुख करनेकी चेष्टा न करते हुए भी आप निजी तौरपर अहिसाका पूर्ण पालन कीजिए और युद्धमे किसी तरहसे भी भाग लेना अस्वीकार कर दीजिए। अपने हृदयमे जापानियोके लिए प्यार बढ़ाइए। आप आत्म-निरीक्षण करें कि क्या आप उन्हे सचमुच प्यार करते है? और क्या उनके आपको नुकसान पहुँचानेके बावजूद आपके मनमे उनके प्रति कोई दुर्भाव तो नही है? इतना ही काफी नही है कि उनके गुणोका स्मरण करके उन्हे प्यार किया जाये। उनके बुरे कारनामोके बावजूद आपको चाहिए कि आप उनसे प्यार करे। यदि आपके दिलोमें जापानियोके प्रति वैसा प्यार हो तो आप अपने आचरणमे ऊँचा हौसला दिखायेंगे जो सच्ची अहिंसाका उच्चतम मापदण्ड है और जिसे आपके चीनी मित्र अवश्य देख पायेंगे और उसे पहचानेंगे। क्योकि आप जापानियोसे प्यार करते है इसलिए आप जापानी शस्त्र-बलकी विजय नही चाहेंगे। इसी प्रकार चीनी शस्त्र-बलकी विजयके लिए भी प्रार्थना नहीं करेंगे। जब दोनो ओरसे शस्त्रोका प्रयोग हो रहा हो तो यह निर्णय कर पाना कठिन है कि किस पक्षको सफलता मिलनी चाहिए। इसलिए आप केवल यही प्रार्थना करेंगे कि सही पक्षकी ही विजय हो। यद्यपि आप अपने-आपको सब तरहकी हिंसासे दूर रखेंगे, फिर भी आप खतरेसे मुँह नही मोडेंगे। अपने जीवनकी रत्ती-भर भी परवाह किये बिना आप मित्र और शत्रुकी सेवा समान भावसे करेंगे। यदि कही कोई महामारी फूट पड़े या आग बुझाई जानी हो तो वहाँ आप दौड़े हुए जायेंगे और अपने अपरिमित उत्साह और अहिंसापूर्ण बहादुरीसे अपना नाम रोशन करेंगे। परन्तु आप यह नही चाहेंगे कि ईश्वर जापानियों का बुरा करे। यदि सयोगवश कुछ जापानी सिपाही या हवाबाज चीनियोके हाथ लग जाये और चीनियोकी क्रुद्ध भीड द्वारा उनका वध कर दिये जानेका खतरा हो या किसी दूसरी तरह उनसे दुर्व्यवहार हो रहा हो तो आप अपने लोगोसे उनके पक्षमें बहस करेंगे और यदि जरूरत पड़े तो अपना जीवन देकर भी उनकी रक्षा करेंगे। आप एमिली हॉबहाउसकी कहानी जानते है। वह अंग्रेज महिला थी, फिर भी वह साहस-पूर्वक बोअर बन्दी शिविरोमे जाती थी। वह बोअर लोगोको प्रोत्साहित करती थी कि वे हौसला न छोडे, और कहा जाता है कि यदि उसने बोअर महिलाओके दिल उस तरह अपने ही तरीकेसे मजबूत न किये होते तो शायद युद्ध कोई अलग रुख

अख्तियार कर लेता। उसका हृदय अपने लोगोंके प्रति रोषसे भरा था, उनके बारेमे एक भी अच्छी वात उसके मुँहसे कभी नही निकली। आप उसके अपरिमित रोषकी नकल मत कीजिए जिसकी वजहसे उसकी अहिंसा कुछ दोषपूर्ण हो गई थी, परन्तु आप 'शत्रुके' प्रति उसके स्नेहकी नकल कीजिए जिसके कारण उसने अपने देशवासियोके बुरे कारनामोकी निन्दा की। आपके उदाहरणका चीनियो पर प्रभाव पड़ेगा। और शायद इससे कुछ जापानियोको शर्म भी आये। वही लोग जापानियोंमे आपका सन्देश ले जानेवाले होगे।

सम्भवत. आप कहेंगे कि यह प्रक्रिया तो बहुत धीमी है। सम्भवत वर्तमान विपरीत परिस्थितियोमे आरम्भमे तो ऐसा ही होगा। परन्तु आप जैसे आगे बढ़ेंगे लगातार उसका वेग अकल्पित गतिसे बढ़ता जायेगा और उसमे तेजी आयेगी। मैं एक दुर्दमनीय आशावादी हूँ। मेरा आशावाद मेरे इस विश्वासपर आधारित है कि व्यक्तिमे अहिंसाके विकासके लिए अपरिमित संभावनाएँ हैं। जितना ज्यादा अपने अन्दर इस अहिंसा-भावनाको विकसित करेंगे, उतनी ही यह ज्यादा फैलेगी और अन्तमे यह आपके इर्द-गिर्द सब जगह छा जायेगी और शायद क्रमश. सारे ससारमे व्याप्त हो जायेगी।

प्र० : मेरा अहिंसामें विश्वास है; मैं प्रायः अनुभव करता हूँ कि विभिन्न प्रेरणाएँ मुझे एक साथ प्रेरित करती हैं। युद्धमें एक जनरलको भी विभिन्न प्रेरणाएँ प्रभावित करती हैं। क्या यह सम्भव नहीं है कि शत्रुको प्यार करते हुए उसके साथ युद्ध किया जाये? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम अपने मनमें प्यार रखते हुए शत्रुको गोली मारें?

उ० : प्राय हम विभिन्न प्रेरणाओंसे प्रभावित होते ही है। परन्तु वह अहिंसा नही होगी। हिंसाकी अवस्थाएँ हो सकती हैं, अहिंसाकी नही। अहिंसाके पुजारीका अनवरत प्रयत्न यह रहता है कि वह तथाकथित शत्रुके प्रति घृणाकी भावना अपने मनसे बिलकुल निकाल बाहर कर दे। प्यारसे शत्रुको गोली मारने-जैसी कोई बात, जैसाकि आप सुझाते है, नही हो सकती।

श्री पी० सी० शूने अन्तमें अपनी समस्या गांधीजी के सामने रखी।

पी० सी० शू : मैं ईमानदारीसे कह सकता हूँ कि मेरे मनमें जापानियोंके प्रति घृणाका भाव नहीं है। परन्तु मैं महसूस करता हूँ कि उनकी सैनिक पद्धति ही बुरी है। . . . मुझे आशा थी कि साम्बरम्‌में कदाचित् पारस्परिक सद्भावना और शान्तिके आधारपर दोनों देशोके बीच कोई अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित हो जायेगा। परन्तु निराशा ही मेरे हाथ लगी। . . . हमारी कठिनाई यह है: यद्यपि हम ईमानदारीसे अहिंसापर विश्वास करते हैं तो भी इसे प्रभावपूर्ण बनानेका तरीका हम नहीं खोज पाये हैं।

गाधीजी . उससे क्या कोई कठिनाई होनी चाहिए? एक व्यक्ति जो अपने समय की किसी विशेष बुराईको समझता है और देखता है कि यह बुराई उसपर हावी हो रही है तो वह प्रेरणाके लिए अपने हृदयकी गहराईमें प्रवेश करता है और जब उसे प्रेरणा मिल जाती है तब वह दूसरोंको भी वैसी प्रेरणा देता है। सभाएँ और

वर्ग-सगठन तो ठीक हैं। उनसे कुछ मदद मिलती है। परन्तु वह बहुत कम होती है। वे एक ढाँचेके समान हैं, जिसे वास्तुकार खडा करता हैं — वह एक अस्थायी और कामचलाऊ उपाय है। वास्तविक महत्व तो उस अजेय निष्ठाका है जिसे कभी दबाया नही जा सकता।

निष्ठा विकसित की जा सकती है। केवल वह साधन, जिसके द्वारा निष्ठाका विकास किया जा सकता है और जिस तरह यह फलवती होती है, हिंसाके लिए अपनाये गये साधनसे भिन्न है। आप प्रार्थना द्वारा हिंसाका विकास नही कर सकते। दूसरी ओर निष्ठाको विकसित करनेका प्रार्थनाके अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय है ही नही।

अहिसा तभी सफल होती है जब हमारा ईश्वरमे जीवन्त विश्वास हो। बुद्ध, ईसा, मुहम्मद अपने-अपने तरीकेसे शान्तिके योद्धा थे। ससारके इन शिक्षको द्वारा अपने पीछे छोडी गई इस परम्पराको हमे समृद्ध करना है। ईश्वर अपनी योजनाएँ अपने आश्चर्यजनक तरीकोसे कार्यान्वित करता है और अपने साधन स्वय जुटाता हैं। पैगम्बर और अबूबक्र एक गुफामे फँस गये थे। एक मकड़ीने, जिसने उस गुफाके प्रवेश-द्वारपर ही अपना जाला बुन रखा था, उन्हे आततायियोसे बचा लिया था। आपको मालूम होना चाहिए कि ससारमे जितने भी धर्म-सस्थापक हुए हैं उन्होने अपना कार्य शून्यसे आरम्भ किया है!!

प्र० : ईसा-जैसा अन्तःकरण रखनेवाले लोग कहीं इक्के-दुक्के मिलते हैं और क्योंकि उनमें भी एकता और संगठन नहीं है इसलिए उनकी बात अरण्यरोदन बनकर रह जाती है। मेरे मनमें यह बात आती है कि क्या प्यार संगठित किया जा सकता है? यदि हाँ, तो कैसे?

उ० पुराने तरीकेसे सगठन तो शायद सम्भव नही होगा। परन्तु यदि सगठित होकर अहिसात्मक कार्रवाई की जाये तो उसमे कोई बन्धन नही है। मै प्रयोगोकी एक श्रृखला द्वारा यह दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि यह सम्भव है। इसका अपना एक तरीका है।

प्र० : यदि चीन युद्धमें विजयी होता है तो उस विजयके कारण उसकी हालत बेहतर होगी या खराब?

उ० यदि चीन जीत जाये और जापानी तरीकोकी नकल करने लगे तो वह जापानको उसीकी बाजीमे पछाड देगा। परन्तु चीनकी विजयसे ससारको कोई नई आशा नही मिलेगी। क्योकि तब चीन जापानका ही परिवर्तित रूप होगा। परन्तु चीन चाहे जीते या हारे, आपकी कार्रवाईकी दिशा स्पष्ट है। यदि चीन लड़ाई के मैदानमे हार जाये तो भी आपकी अहिसा निर्भय रहेगी और उसका फर्ज पूरा हो चुकेगा। यदि चीन जीत जाता है तो जापानके तरीकोकी नकल करनेसे चीनको रोकनेके प्रयासमे आपको फाँसीके तख्तेपर झूलना होगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

३१२. भेंट : एस० एस० तेमाको[1]

[१ जनवरी, १९३९][2]

तेमा : हमारे लोग अपनी कांग्रेसको भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जितना सफल कैसे बना सकते हैं?

गाधीजी कांग्रेसकी सफलताका सीधा-सादा कारण यही है कि इसका श्रीगणेश ऐसे लोगो द्वारा किया गया था जो उस समयके सबसे अधिक नि स्वार्थ और सुसस्कृत लोग थे। उन्होंने अपनेको जनताका प्रतिनिधि बनाया और सेवा और आत्मत्याग द्वारा उसका हृदय जीत लिया। वे जनतामे से आये थे और जनताके थे। आपके पास, जहाँ तक मुझे विदित है, ऐसे आफ्रिकियोका कोई दल नही है जो गरीबीमें रहने और काम करनेसे सन्तुष्ट रहे। जो शिक्षित है उनमे वैसा पूर्ण नि स्वार्थ-भाव नही है। और फिर आपके अधिकाश नेता ईसाई है, जबकि बटु और जुलू लोगोका विशाल जनसमूह ईसाई नही है। आपने यूरोपीय वेश-भूषा और तौरतरीके अपना लिये है, और इसलिए आप अपने ही लोगोके बीच अजनबी बन गये है। राजनीतिक दृष्टिसे यह एक असुविधा है। इससे आपके लिए जन-साधारणके दिलो तक पहुँचना कठिन हो जाता है। आपको 'बटु' कहलाये जानेका भय नही होना चाहिए और 'ऐसगई'[3] लेकर चलने या कमरमे सिर्फ एक छोटा-सा अँगोछा बाँधकर घूमनेमे शर्म महसूस नही करनी चाहिए। जुलू या बटुका शरीर काफी सुडौल होता है, इसलिए उसे अपने उघडे शरीरपर शरमानेकी जरूरत नही है। उसे आपकी तरहके कपडे पहननेकी जरूरत नही है। आपको एक बार फिर आफ्रिकी बनना होगा।

ते० : कुछ समयसे दक्षिण आफ्रिकामें एक संयुक्त भारतीय-आफ्रिकी अश्वेत मोर्चा बनानेकी कुछ बात चल रही है। आपका इस बारेमें क्या विचार है?

गा० यह एक गलती होगी। आप इस तरह शक्तिको नही, दुर्बलताको इकट्ठा कर देंगे। आपमे से हरएक अपने पैरोपर खडा होकर ही एक-दूसरेकी ज्यादा-से-ज्यादा सहायता कर सकेगा। दोनो मामले अलग-अलग है। भारतीयोकी सख्या बहुत ही कम है। वे गोरे लोगोके लिए कभी भी 'खतरा' नही बन सकते। दूसरी ओर,

१. प्यारेलालके "ए वर्ल्ड इन एगोनी-२" से उद्धृत। जोहानिसबर्गके डी० आर० मिशनके रेवरेंड एस० एस० तेमा नीग्रो थे और आफ्रिकी कांग्रेसके सदस्य थे। वे ताम्बरम् सम्मेलनके उन प्रतिनिधियोंमें से थे जो सम्मेलनके बाद गाधीजी से मिलने आये थे।

२. प्रतिनिधि ३१ दिसम्बर और १ जनवरीको सेगाँवमें थे। ३१ दिसम्बरको केवल ल्यूने ही गाधीजीसे भेंट [illegible] थी। तेमा सम्भवत॰ उनसे १ जनवरीको मिले थे।

३. आफ्रीकियोंकी छोटा-सा माला।

आप उस धरतीकी सन्तान है; आपका उत्तराधिकार छीना जा रहा है। आपको उसका प्रतिरोध करना ही होगा। आपका सवाल बहुत बडा है। उसे भारतीयोके सवालके साथ मिलाना नही चाहिए। इससे इन दोनो जातियोके बीच अत्यन्त मैत्रीपूर्ण सम्बन्धोकी स्थापनाका निषेध नही होता। भारतीय कई तरहसे आपके साथ सहयोग कर सकते है। वे आपके साथ सदा ईमानदारीसे व्यवहार करके आपकी सहायता कर सकते है। वे यह कर सकते है कि आपकी न्यायोचित आकाक्षाओका विरोध न करे, अपनेको 'सुसस्कृत' और आपको 'जगली' न बताये, और इस तरह आपको नुकसान पहुँचाकर अपने लिए रियायतें हासिल करनेकी कोशिश न करें।

ते० : इन दोनों जातियोंमें आप कैसे सम्बन्ध पसन्द करेंगे?

गा० : जितने घनिष्ठ हो सकते हो उतने घनिष्ठ। लेकिन जहाँ मैंने आफ्रिकी और भारतीयके बीच सभी भेदभाव खत्म कर दिये है, वहाँ उसका अर्थ यह नही है कि मै उनमे कोई भिन्नता ही नही मानता। मानव-समुदायकी विभिन्न नस्ले किसी पेडकी विभिन्न शाखाओकी तरह है। जिस समान मूल स्कन्धसे हम फूटे है, उसे एक बार स्वीकार कर लेनेपर हम मानव-परिवारकी मूल एकताको समझ जाते है, और तब द्वेष और अस्वस्थ प्रतिस्पर्धाके लिए कोई गुजाइश नही रहती।

ते० : हमें अपनी मुक्तिके लिए हिंसाको साधन बनाना चाहिए या अहिंसाको?

गा० : हर हालतमे निश्चय ही अहिंसाको। परन्तु आपकी उसमे जीवन्त आस्था होनी चाहिए। आपके चारो ओर जब घटाटोप अँधेरा हो, तब भी आपको आशा नही छोड़नी चाहिए। जो व्यक्ति अहिंसामे विश्वास करता है, वह एक जीवन्त ईश्वरमे विश्वास करता है। वह पराजय स्वीकार नही कर सकता। इसलिए, मेरी सलाह सदा अहिंसाकी ही है, पर वह वीरकी अहिंसा होनी चाहिए, कायर की नही।

ते० : आपके उदाहरणने हमें इतना प्रभावित किया है कि हम सोचते हैं कि क्या यह सम्भव नहीं है कि हमारे एक-दो युवक, जो हमें आशा है आगे नेतृत्व करनेवाले है, आपके पास प्रशिक्षणके लिए आ जायें।

गा० . यह एक काफी अच्छा और सही विचार है।

ते० : आपके खयालसे क्या ईसाई धर्म आफ्रिकाको मुक्ति दिला सकता है?

गा० . ईसाई धर्म, जिस रूपमे वह आज जाना जाता है और प्रयोगमे लाया जाता है, आपके लोगोको मुक्ति नही दे सकता। मेरा यह विश्वास है कि जो लोग आज अपनेको ईसाई कहते है वे ईसाके वास्तविक सन्देशको समझते नही है। जुलू-विद्रोहके दिनोमे मैंने जुलू लोगोंपर किये गये कुछ भयानक अत्याचारोंको देखा था। क्योकि एक आदमीने, उनके सरदार बाम्बात्ताने, टैक्स देनेसे इनकार कर दिया, इसलिए पूरी जातिको यातनाएँ दी गई! मैं [तब] एक ऐम्बुलेंस-दस्तेका नायक था। जिन जुलू लोगोको कोड़े लगाये गये थे उन्हे इलाजके लिए हमारे पास लाया गया था, क्योकि कोई गोरी नर्स उनकी परिचर्याको तैयार नही थी। उन लोगोकी जख्मी पीठो को मैं कभी भूल नही सकूँगा। फिर भी, उन सब जुल्मोको करनेवाले अपने-आपको

ईसाई कहते थे। वे 'शिक्षित' थे, जुलू लोगोसे अच्छे कपड़े पहनते थे, पर वे नैतिक रूपसे उनसे ऊँचे नही थे।

ते० : हमारे बीचमें से जब भी कोई नेता उभरता है, तो कुछ समय बाद ही उसका पतन हो जाता है। उसमें या तो धनकी लालसा भड़क उठती है, या वह मद्यपान या किसी अन्य व्यसनमें डूब जाता है और हम उससे हाथ धो बैठते हैं। इसका इलाज हम कैसे करे?

गा० यह समस्या कोई खास तौरपर आपके लिए ही नही है। आपका नेतृत्व प्रभावहीन इसलिए सिद्ध हुआ है कि वह जन-साधारणमे से नही उभरा है। यदि आपका सम्बन्ध जन-साधारणसे हो तो आप उन्हीकी तरह रहेगे, उन्हीकी तरह सोचेगे। तब आपका और उनका ध्येय एक होगा। यदि मै आपकी जगह होऊँ तो एक भी आफ्रिकीसे अपनी वेशभूषा बदलने और अपनेको असाधारण बनानेको न कहूँ। उससे उसका नैतिक स्तर एक इच भी ऊँचा नही होता।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-२-१९३९

३१३. राजकोट

राजकोटका सघर्ष जिस शानके साथ शुरू हुआ था उसी शानके साथ अभी हालमे समाप्त भी हो गया है।[1] लेकिन अभी तक उसके बारेमे मैंने शायद ही कुछ कहा हो। मेरी खामोशीकी यह वजह नही थी कि उसमे मेरी दिलचस्पी नही थी। इस राज्यके साथ मेरे गहरे सम्बन्ध रहे हैं, इसलिए यह तो सम्भव ही नही था। इस रियासतमे मेरे पिता दीवान थे। इसके अलावा स्वर्गीय ठाकुर साहब [वर्तमान ठाकुर साहबके पिता] मुझे अपने पिताकी तरह मानते थे। मेरी खामोशीकी वजह तो यह थी कि सरदार वल्लभभाई इस आन्दोलनकी आत्मा थे, और उनकी या उनके कामकी प्रशसा करना आत्म-स्तुति करनेके समान होगा।

इस सघर्षने यह दिखा दिया कि अगर जनता अच्छी तरहसे उसपर अमल करे, तो अहिंसात्मक असहयोग क्या कुछ नही कर सकता है। जनताने जो एकता, दृढता और त्यागकी क्षमता दिखलाई है उसकी मुझे बिलकुल आशा नही थी। लेकिन लोगोने दिखला दिया कि अपने शासककी बनिस्बत वे महान है और अहिंसात्मक कार्यमे एकजुट प्रजाके सामने अग्रेज दीवानकी भी कुछ नही चल सकती।

१. उत्तरदायी सरकारकी स्थापनाके बारेमें समझौता २६-१२-१९३८को हुआ था। उसकी मुख्य शर्तें थीं: (१) सभी दमनकारी कार्रवाइयाँ खत्म कर दी जायें; (२) सभी राजनैतिक बन्दी छोड़ दिये जायें, (३) सत्याग्रह बन्द कर दिया जाये; (४) संविधानका मसविदा तैयार करनेके लिए दस व्यक्तियोंकी एक समिति बनाई जाये जिनमें से सात व्यक्तियोंकी नियुक्ति वल्लभभाई पटेलके सुझावके अनुसार होनी चाहिए।

ठाकुर साहबने अंग्रेज दीवानकी सलाह और रेजिडेटकी ज्ञात इच्छाओको ठुकराकर वागडोर अपने हाथोमे ले ली है, इसके लिए वे वधाईके पात्र है।

मेरे पास जो कागजात है उनपर से मै जानता हूँ कि रेजिडेटके समर्थनसे सर पैट्रिक कैडेलने जो-कुछ किया, वह ठाकुर साहबके नौकरकी हैसियतसे उनके लिए बड़ा अशोभनीय है। उन्होने तो इस तरहका काम किया मानो वही राज्यके मालिक हो। उन्होने इस वातका कि वे शासक-जातिके है और उनकी नियुक्ति केन्द्रीय सत्ताकी मजूरीसे हुई है, वडा दुरुपयोग किया और वे यह मानकर चले कि अपनी मनमानी करनेका उन्हे पूरा इख्तियार है। यह लिखते वक्त तक मुझे यह मालूम नही है कि वे समझदारीसे नौकरीसे रिटायर हो गये है या उनका क्या हुआ है। मेरे पास जो पत्र-व्यवहार है उससे जाहिर होता है कि राजा लोग इस पर गम्भीरताके साथ विचार कर रहे है कि अग्रेज दीवानका रखना कहाँ तक अक्लमन्दी है। केन्द्रीय सत्ताको भी अपने रेजिडेटोपर इस बातकी निगरानी रखनी चाहिए कि उसकी घोषणाओके शब्दो पर ही नही बल्कि उनमे निहित भावनापर भी अमल होता है या नही।

जो राजा लोग रेजिडेटोसे डरते है, वे आशा है राजकोटके उदाहरणसे यह जान जायेंगे कि अगर वे सच्चे है और उनकी प्रजा वस्तुत उनके साथ है, तो उन्हे रेजिडेटोसे डरनेकी कोई जरूरत नही है। निस्सन्देह उन्हे यह महसूस करना चाहिए कि सर्वोच्च सत्ता न तो शिमलामे है, न व्हाइट हॉलमे, उसका निवास तो उनकी प्रजामें ही है। अपनी अहिंसात्मक शक्तिपर भरोसा रखनेवाली जागृत प्रजा तो सशस्त्र शक्तियोके कैसे भी गठजोडके सामने स्वतन्त्र ही रहती है। राजकोटमे तीन महीनेके अन्दर जो हुआ वही हरएक रियासतमे हो सकता है, बशर्ते कि वहाँकी प्रजा भी वैसी ही हो जैसीकि राजकोटकी साबित हुई है।

मै यह दावा नही करता कि राजकोटकी प्रजामे अहिंसा-गुणका वह दुर्लभ स्तर आ गया है, जो किसी भी कठिनाईका मुकाबला कर सकता है। लेकिन राजकोटने यह वतला दिया है कि समस्त प्रजा द्वारा सगठित रूपसे ग्रहण की हुई मामूली अहिंसा भी कितना काम कर सकती है।

राजकोटकी प्रजाका काम निश्चय ही महान है, लेकिन सत्याग्रहीके रूपमें उसकी सच्ची परीक्षा तो अभी होनी है। उसने जिन गुणोसे विजय प्राप्त की है, उसे कायम रखनेके लिए भी यदि वह उन्ही गुणोपर कायम न रही, तो सारा किया-कराया चौपट हो जायेगा। सारे हिन्दुस्तानके काग्रेसियोने एक लम्बे अभ्यासके वाद सविनय प्रतिरोध करनेकी अपनी क्षमता तो दिखला दी है, लेकिन रचनात्मक अहिंसाकी अपनी क्षमता अभी उन्हे दिखलानी है। सविनय अवज्ञा तो अविनय अर्थात् हिंसासे मिश्रित होनेपर भी काम लायक समझी जा सकती है, लेकिन रचनात्मक कार्य बहुत कठिन है, उसमे हिंसाका आसानीसे पता चल जाता है। और हिंसाका जरा भी समावेश विजयको भी एक जालमे परिणत कर देता है और वह विजय एक भ्रम सावित होती है। क्या जनता आवश्यक नि स्वार्थता और आत्म-त्याग दिखलायेगी? अपना और अपने आश्रितोका स्वार्थ-साधन करनेके प्रलोभनसे क्या वह दूर रहेगी?

सत्ताके लिए किसी भी तरहकी छीना-झपटीसे आम जनताको वह लाभ नहीं होगा जोकि एक दूरदर्शी और दृढ़ निश्चयी नेतृत्वसे, जिसके आज्ञा-पालनके लिए सब स्वेच्छापूर्वक तैयार हों, और वस्तुतः होना भी चाहिए। काठियावाड़ अन्दरूनी कुचक्रोंके लिए प्रसिद्ध है। उसमें जहाँ वीरोंको पैदा करनेकी खासियत है, वहाँ राजनीतिज्ञोंकी एक ऐसी जाति भी मौजूद है जिसके जीवनका एकमात्र उद्देश्य अपना स्वार्थ सिद्ध करना है। अगर इन राजनीतिज्ञोंकी चली तो राजकोटमें रामराज्य नहीं होगा। रामराज्यका मतलब तो है सर्वतोमुखी स्वार्थ-त्याग। उसके लिए लोगोंको अपने ऊपर स्वयं अंकुश लगाना चाहिए। जनता अगर रचनात्मक अहिंसाको अमली रूप दे, तो राजकोटका ऐसा प्रभाव पड़ सकता है कि वह आसानीसे एक अनुकरणीय उदाहरण बन जायेगा।

इसलिए विजयके इस अवसरपर आत्मसन्तोष करने और व्यर्थकी खुशियाँ मनानेके बजाय, विनम्रता, आत्म-निरीक्षण और प्रार्थनासे काम लेना चाहिए। मैं सब-कुछ उत्सुकताके साथ देखता रहूँगा और ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा।

बारडोली जाते हुए रेलगाड़ीमें, २ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१-१९३९

३१४. क्या अहिंसाका कोई प्रभाव नहीं पड़ता?

अपने लेखपर हुई इस आलोचनाका कि यहूदी तो पिछले २,००० वर्षोंसे अहिंसक ही रहे हैं, मैंने जो जवाब[1] दिया था, उसपर एक सम्पादकीय लेखमें 'स्टेट्समैन' ने लिखा है:

> पास्टर नीमोलर[2] और लूथरन चर्चपर हुए अत्याचारोंकी बात सारी दुनियाको मालूम है; अनेक पास्टरों (पादरियों) और साधारण ईसाइयोंने 'जनता' की अदालतों, हिंसा और धमकियोंके कष्टोंको बहादुरीके साथ बरदाश्त किया और बदले या प्रतिहिंसाका विचार लाये बिना वे सत्यपर कायम रहे। लेकिन जर्मनीमें कौन-सा हृदय-परिवर्तन नजर आता है? बाइबिल सरचर्स लीगके जिन सदस्योंने नाजी सैनिकवादको ईसाके शान्ति-सन्देशका विरोधी मानकर अस्वीकार किया, वे आज जेलखानों और नजरबन्द कैम्पोंमें पड़े सड़ रहे हैं और पिछले पाँच सालोंसे उनकी यही दुर्दशा हो रही है। कितने जर्मन ऐसे हैं, जो उनके बारेमें कुछ जानते हैं या जानते भी हैं तो उनके लिए कुछ करते हैं?

१. देखिए "आलोचनाओंका जवाब", पृ० २११-३।

२. नाजी विरोधी प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्रविद् मार्टिन नीमोलर गेस्टापो द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये थे और उन्हें एक नजरबन्दी कैम्पमें कैद करके रखा गया था।

अहिंसा, चाहे वह निर्बलकी हो या बलवान की, किन्हीं अत्यन्त विशेष परिस्थितियोंको छोड़कर सामाजिकके बजाय व्यक्तिगत प्रयोगकी ही चीज मालूम पड़ती है। मनुष्य अपनी मुक्तिके लिए क्या करे, यह सम्बन्धित व्यक्तिके विचारका विषय है। पर राजनीतिज्ञोका सम्बन्ध तो कारणों, सिद्धान्तो और अल्पसंख्यकोसे है। श्री गाधीका कहना है कि हिटलरको उस साहसके सामने झुकना पड़ेगा जो उसके "तूफानी दस्तो" द्वारा प्रदर्शित साहससे निश्चित-रूपेण श्रेष्ठ है।" अगर ऐसा होता, तो वॉन ओसिट्ज्की[1]-जैसे मनुष्यकी उसने जरूर तारीफ की होती। मगर नाजियोके लिए साहस उसी हालतमें गुण मालूम पड़ता है जबकि उनके अपने ही समर्थक उससे काम ले; अन्यत्र वह 'मार्क्सवादियो-यहूदियोंके धृष्टतापूर्ण उत्तेजक कार्य' हो जाता है। बड़े-बड़े राष्ट्र इस विषयमें अभी तक कुछ भी नहीं कर पाये, यह देखकर श्री गांधीने अपना नुस्खा पेश किया है। बड़े राष्ट्रोकी यह ऐसी असमर्थता है जिसके लिए हम सबको अफसोस है और हम सब चाहते है कि यह दूर हो। यहूदियोको श्री गांधीकी सहानुभूतिसे तसल्ली मिल सकती है, लेकिन उनके उत्थानमें इससे ज्यादा मदद मिलनेकी सम्भावना नहीं है। ईसामसीहका उदाहरण अहिंसाका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है और उन्हें जिस बुरी तरह मारा गया, उससे हमेशाके लिए यह सिद्ध हो गया है कि सांसारिक और भौतिक रूपमें यह बड़ी बुरी तरह असफल हो सकती है।

मै तो नही समझता कि पास्टर नीमोलर और दूसरे व्यक्तियोका कष्ट-सहन बेकार साबित हुआ है। उन्होंने अपने स्वाभिमानको कायम रखा है और यह साबित कर दिया है कि उनकी श्रद्धा किसी भी कष्ट-सहनसे विचलित नही हो सकती। हिटलरके दिलको पिघलानेके लिए वे काफी साबित नही हो सके, इससे केवल यही जाहिर होता है कि हिटलरका दिल पत्थरसे भी अधिक कठोर चीजका बना हुआ है। मगर, सख्त-से-सख्त धातु भी पर्याप्त गर्मीसे पिघल जाती है, उसी प्रकार सख्तसे-सख्त दिल भी अहिसाकी गर्मीसे पिघल जायेगा और गर्मी उत्पन्न करनेकी अहिसाकी ताकतकी तो कोई सीमा ही नही।

हरएक कार्य बहुत-सी ताकतोका परिणाम है, चाहे वे एक-दूसरेके विरुद्ध असर करनेवाली ही क्यो न हो। ऊर्जा कभी जाया नही होती। यह हम यान्त्रिकी की किताबोमे पढते है। मनुष्यके कामोमे भी यह उसी तरहसे लागू है। अन्तर यह है कि पहले मामलेमें हमे आमतौरपर यह मालूम होता है कि वहाँ कौन-कौनसी ताकते काम कर रही है और ऐसी हालतमें हम हिसाब लगाकर उसका नतीजा भी पहले ही से बता सकते है। जहाँ तक मनुष्यके कामोका ताल्लुक है, वे

१. कार्ल वॉन ओसिट्ज्की (१८८९-१९३८), जर्मन शान्तिवादी और लेखक। उन्हें राज्यके शत्रुके रूपमें गिरफ्तार करके जेलमें डाल दिया गया था। जेलमें रहते हुए उन्हें शान्तिका नोबेल पुरस्कार दिया गया था। हिटलर इस बातसे इतना नाराज हुआ कि उसने जर्मनोंके लिए ऐसे पुरस्कार स्वीकार करनेकी मनाही कर दी थी।

ऐसी ताकतोके सयोगका परिणाम होते है जिनमे से बहुत-सी ताकतोकी हमें कोई जानकारी नही होती। लेकिन हमे अपने अज्ञानको इन ताकतोकी क्षमतामें अविश्वास करनेका कारण नही बनाना चाहिए। होना तो यह चाहिए कि अज्ञानके कारण हमारा इनमें और भी ज्यादा विश्वास हो जाये। चूंकि अहिंसा दुनियाकी सबसे बड़ी ताकत है और काम भी यह बहुत छुपे ढगसे करती हैं, इसलिए इसमे बहुत ज्यादा श्रद्धा रखनेकी जरूरत है। जिस तरह ईश्वरमे हमारा विश्वास श्रद्धा पर आधारित है, उसी तरह अहिंसामे हमारा विश्वास श्रद्धा पर आधारित होना चाहिए।

हिटलर मात्र एक आदमी ही तो है और उसकी जिन्दगी एक औसत आदमीकी स्वल्प जिन्दगीसे बडी नही है। अगर जनता उसका साथ देना छोड़ दे, तो वह एकदम अशक्त हो जाये। मैंने यह आशा नही छोडी है कि मानव-समाजके कष्ट-सहनका चाहे इन कष्टोका कारण वह स्वय ही हो उसके हृदयपर असर पड़ेगा। मगर, यह तो मै मान ही नही सकता कि जर्मनोंके पास दिल नही है या ससारकी दूसरी जातियोकी अपेक्षा वे कम सहृदय है। अगर समय रहते उसकी आँखें नही खुली तो वे एक-न-एक दिन अपने इस नेताके खिलाफ, जिसकी वे इतनी पूजा कर रहे है, विद्रोह कर देंगे। और जब उसकी आँखें खुलेंगी या वे विद्रोह करेंगे तब हम देखेंगे कि पास्टर नीमोलर और उसके साथियोकी मुसीबतो और कष्ट-सहनने इस जागृतिको पैदा करनेमें कितना काम किया है।

सशस्त्र सघर्षसे जर्मनोकी शस्त्र-शक्तिको नष्ट किया जा सकता है, पर जर्मनीके दिलको नही बदला जा सकता। पिछले महायुद्धमे उनकी पराजय हुई थी पर उससे भी उनके दिल तो नही बदले थे। उसने एक हिटलर पैदा किया, जो विजयी राष्ट्रोसे बदला लेनेपर तुला हुआ है। और यह बदला कैसा भयानक है। इसका जवाब वही होना चाहिए जो स्टीवेन्सनने अपने साथियोको दिया था, जो गहरी खाईको पाटनेसे हताश हो गये थे और जिसको भरनेके बाद ही पहली रेलवे-लाइनका निकलना मुमकिन हो सका था। उसने अपने साथियोसे, जिनमें विश्वासकी कमी थी, कहा कि "विश्वास बढाओ और गढेको भरे चले जाओ। वह अथाह नही है और इसलिए वह जरूर भर जायेगा।" इसी तरह मैं भी इस बातसे मायूस नही हुआ हूँ कि हिटलर या जर्मनीका दिल अभी तक नही पिघला है। इसके बरखिलाफ, मैं यही कहूँगा कि मुसीबतो-पर-मुसीबते सहते चले जाओ, जब तक कि अन्धेको भी यह नजर न आने लगे कि दिल पिघल गया है। जिस तरह पास्टर नीमोलरने मुसीबतें बरदाश्त करके अपनी महिमा बढाई है, उसी तरह अगर एक यहूदी भी बहादुरीके साथ डटकर खडा हो जाये और हिटलरके हुक्मके आगे सर झुकानेसे इनकार कर दे, तो उसकी शान भी बढ़ जायेगी और वह अपने भाई यहूदियोके लिए मुक्तिका रास्ता साफ कर देगा।

मेरा यह विश्वास है कि अहिंसा सिर्फ व्यक्तिगत गुण नही है, बल्कि एक सामाजिक गुण भी है जिसे कि दूसरे गुणोकी तरह विकसित करना चाहिए। इसमें कोई शक नही कि समाज अपने आपसके कारोबारमे अहिंसाका प्रयोग करनेसे ही व्यवस्थित होता है। मै जो कहना चाहता हूँ वह यह है कि इसे एक बडे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय पैमानेपर काममें लाया जाये।

'स्टेट्समैन' द्वारा जाहिर की गई इस रायसे मुझे आश्चर्य हुआ है कि ईसा-मसीहकी मिसालने हमेशाके लिए यह साबित कर दिया है कि अहिंसा सासारिक बातोमें नाकामयाब साबित होती है। हालांकि मै साम्प्रदायिक अर्थमें अपने-आपको ईसाई नही कह सकता, मगर ईसामसीहने अपनी कुर्बानीसे जो उदाहरण कायम किया है, उससे अहिसामे मेरी अखड श्रद्धा और भी बढ गई है और अहिंसाके इसी सिद्धान्तके अनुसार ही मेरे तमाम धार्मिक और सासारिक काम होते है। मुझे यह भी मालूम है कि सैकडो ईसाई ऐसे है, जिनका ऐसा ही विश्वास है। अगर ईसा-मसीहसे हमे अपने सम्पूर्ण जीवनको विश्व-प्रेमके सनातन सिद्धान्तके अनुसार ढालनेकी शिक्षा नही मिली, तो उनका जीवन और बलिदान बेकार है।

बारडोली जाते हुए रेलगाड़ीमें, २ जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१-१९३९

३१५. तार : च० राजगोपालाचारीको

[४ जनवरी, १९३९ या उसके पश्चात्][1]

श्री रमण मेननके असामयिक निधनपर उनके शोक-संतप्त परिवारको कृपया मेरी ओरसे हार्दिक सवेदना प्रकट करे। सेठ जमनालाल बजाज भी अपनी सवेदना प्रकट करते है।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ६-१-१९३९

३१६. तार : कृष्णस्वामीको[2]

५ जनवरी, १९३९

तार पुनर्प्रेषित। मेरी रायमें ऐसे उम्मीदवार अयोग्य, लेकिन आपको प्रान्तीय कमेटीसे अधिकृत निर्णय प्राप्त करना चाहिए।

गांधी

अग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. रमण मेननका देहान्त ३ जनवरीको हुआ था। जमनालाल बजाज बारडोलीमें, जहाँ गाधीजी उस समय थे, ४ जनवरीको आये थे।

२. कृष्णस्वामीने तार द्वारा पूछा था कि क्या अप्रमाणित खादीके उत्पादक और बुनकर त्रिपुरा कांग्रेस अधिवेशनके लिए प्रतिनिधियोंके चुनावमें खडे हो सकते हैं।

३१७. पत्र : शुएब कुरेशीको

बारडोली
५ जनवरी, १९३९

प्रिय शुएब,

जाकिर हुसेन चार-पाँच दिन मेरे साथ रहे। उनसे बातचीतके दौरान मुझे पता चला कि भोपालसे जामिया मिलियाको जो सहायता मिलती थी वह बन्द कर दी गई है। क्या पैसेकी तगीके सिवा सहायता बन्द करनेका कोई और कारण है? अगर नही, तो मै चाहूँगा कि जामियाकी खातिर तुम कुछ छँटनी करनेकी बातपर विचार करो। जामिया एक ऐसी सस्था लगती है जिसकी जरूरत है। ऐसा लगता है कि यह एकमात्र ऐसी मुस्लिम सस्था है जिसके कार्यकर्ता आत्म-त्यागी है और पक्के मुसलमान होनेके साथ ही पक्के राष्ट्रवादी भी है।

मेरे मनपर जो बोझ रखा हुआ था, उसे कहकर उतार देनेके बाद अब मै मामलेको तुम्हारे हाथोमें सौंपता हूँ।

आशा है, गुलनार और बच्ची ठीक-ठाक है।

तुम सबको प्यार सहित,

बापू

जनाब शुएब कुरेशी साहब
भोपाल

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३१८. पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको

बारडोली
६ जनवरी, १९३९

आदरणीय भाई,

आपका पत्र मिला। आप जो लिखते है, बिलकुल सच है। सच्ची परीक्षा तो अब आगे होनी है।[1] सरदारको आपका पत्र दिखा दिया है। वे अभी बम्बई रवाना हो गये। कहते गये कि आपको जो भय है, वह निराधार है।

१. यहाँ संकेत राजकोट सत्याग्रहकी ओर है; देखिए "पत्र : रणछोड़लाल पटवारीको", पृ० १८०-१।

मेरा अहमदाबाद जाना तो कार्यक्रममें नही है।

मोहनदासके साष्टांग दण्डवत

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२३) से। सी० डब्ल्यू० २७८९ से भी; सौजन्य: छगनलाल गाधी।

३१९. तार: पट्टम् ताणु पिल्लैको

वारडोली
७ जनवरी, १९३९

अध्यक्ष, राज्य काग्रेस
त्रिवेन्द्रम्

प्रसन्नता है कि प्रदर्शन रद कर दिये गये और मद्यनिषेध कार्य आरम्भ कर दिया गया है। मुकदमे वापस ले लिये जानेका हर्ष है।[1]

गांधी

मूल अंग्रेजीसे . पट्टम् ताणु पिल्लै पेपर्स; सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

३२०. तार: जी० रामचन्द्रनको

[७ जनवरी, १९३९][2]

तुमने कुछ क्यों नही लिखा। प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स: सौजन्य प्यारेलाल।

१. यह कार्यकारी अध्यक्ष आर० शंकर के ३ जनवरी, १९३९ के तारके जवाबमें था। अपने तारमें आर० शंकरने गांधीजीको सूचित किया था कि मद्य-निषेध आन्दोलन शुरू किया जा चुका है।

२. यह तार उसी पृष्ठ पर लिखा गया था जिसपर पट्टम् ताणु पिल्लैके नाम तारका मसविदा लिखा गया था। देखिए पिछला शीर्षक।

३२१. तार : घनश्यामदास बिड़लाको[1]

७ जनवरी, १९३९

जयपुर रियासतको लिखे जमनालालजीके पत्रमें आपके १२ अक्टूबरके तारका उल्लेख है, जिसमे कहा गया है कि सीकरके बाकी कैदी १३ तारीखको छोड दिये जायेंगे। इसमे आपके नामका उल्लेख नही है। लेकिन चुनौती दी जाये तो आपका नाम प्रगट करनेकी जरूरत पड़ सकती है। क्या आपको कोई आपत्ति है? बारडोलीके पते पर तार कीजिए।

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २०९

३२२. जमनालाल बजाजके लिए समाचारपत्रोंको दिये जानेवाले वक्तव्यका मसविदा[2]

बारडोली
७ जनवरी, १९३९

जयपुरकी रियासतमे — जो मेरा जन्मस्थान है और पूर्वजोसे चला आ रहा घर है — अपने प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगाये जानेके बारेमे मै क्या करने जा रहा हूँ, इसके बारेमे कई अफवाहे फैल रही है। यह प्रतिबन्ध मुझे तथा मेरे मित्रोको भी आश्चर्यमे डालनेवाला है। जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमे मैने अपना सारा जीवन शान्तिके ही कार्योमे लगाया है। कांग्रेसजनोंके लिए अहिंसाका और चाहे जो अर्थ हो परन्तु मेरा तो यह धर्म है और मै यथाशक्ति इसका पालन करनेकी कोशिश करता हूँ। मै रियासतोका दुश्मन नही हूँ। मेरा उनके प्रति सदा मित्रताका रुख रहा है। मेरा सदा यह विश्वास रहा है कि भारतमे जो नई जागृति आई है उसके प्रति रियासतोकी प्रतिक्रिया अनुकूल हो सकती है। इस प्रतिबन्धके पीछे क्या रहस्य छिपा है यह जाननेके लिए मै अब पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ। आदेशके शब्द किसी भी अर्थमें मुझपर लागू नही होते। मै जल्दबाजीमें कोई काम नही करना चाहता। जयपुर रियासतके अधिकारियो को उलझनमें डालनेका भी मेरी कोई मशा नही है। परन्तु प्रतिबन्ध हटवानेकी

१. यह तार पिलानी भेजा गया था।
२. मसविदा गांधीजी की लिखावटमें था।

दिशामे किया गया प्रत्येक सम्मानजनक प्रयास यदि असफल हो जाता है तो जनता को भरोसा होना चाहिए कि मै अपने कर्तव्यका पालन करूँगा।

मेरा तात्कालिक उद्देश्य अभी तो जयपुर रियासतमे दुर्भिक्ष-पीडितोको मण्डल[1] की मार्फत राहत पहुँचाना है। मुझे आशा है कि प्रतिबन्ध भावी दान-कर्त्ताओके आडे नही आयेगा। मै सभी सम्भावनाओको ध्यानमे रखते हुए प्रबन्ध कर रहा हूँ। इसमें कोई सन्देह नही कि मेरे जयपुर जानेका मुख्य कारण दुर्भिक्षसे राहत दिलानेके उपाय करना था।

मेरी चिन्ताका दूसरा विषय इस समय यह है कि हालके सकटके दौरान सीकरमे जिन नौ व्यक्तियोको कैदमे डाल दिया गया है उन्हे रिहा करानेकी कोशिश की जाये। उनमें से एकको सजा दी जा चुकी है और बाकी आठपर अभी मुकदमा चलाया जायेगा। मेरे पास ऐसी आशा करनेका खासा आधार था कि उन्हे आम माफी दे दी जायेगी। मै उन्हे मात्र यही आश्वासन दे सकता हूँ कि जब तक मै स्वतन्त्र हूँ, मै उन्हे रिहा करवानेमे कोई कसर उठा नही रखूँगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७७) से।

३२३. जमनालाल बजाजके लिए पत्रका मसविदा[2]

कैम्प बारडोली
७ जनवरी, १९३९

अध्यक्ष
प्रशासन परिषद् (कौसिल ऑफ स्टेट), जयपुर

श्रीमान्,

गत १६ दिसम्बरका संलग्न आदेश मुझे उसी मासकी २८ तारीखको सवाई माधोपुरमे जयपुर जाते समय मिला था।

इस आदेशसे मुझे दुःख भी हुआ और आश्चर्य भी। श्री एफ० एस० यग, आई० जी० पी०, से मेरी स्टेशनपर एक घटेसे भी अधिक बातचीत हुई, जिसमें वे मुझे आदेशका उल्लघन न करनेकी बात समझाते-बुझाते रहे। वैसे मुझे यह सब समझाने-बुझानेकी जरूरत नही थी, क्योकि जब मै इस तरहका कोई आदेश मिलनेकी सम्भावना पर गांधीजी के साथ विचार-विमर्श कर रहा था तो उन्होने मुझे यह सलाह दी थी कि मै इस आदेशको तुरन्त न तोडूँ, बल्कि कोई अन्तिम कदम उठानेसे पहले सारी परिस्थितिपर उनके साथ सलाह-मशविरा कर लूँ।

१. जयपुर राज्य प्रजा-मण्डल।

२. यह मसविदा गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था और दो बार संशोधित किया गया था। गांधीजी के हाथका लिखा पहला मसविदा जी० एन० ३०७६ में उपलब्ध है।

इसलिए मैंने अपनी यात्रा स्थगित कर दी और मै दिल्ली चल दिया। मित्रो, साथी कार्यकर्ताओ और अतमे गाधीजीसे विचार-विमर्श करनेके बाद, मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यदि यह आदेश अगली १ फरवरीसे पहले बिना शर्त रद न किया जाये तो उस दिन मुझे इसका उल्लघन करना चाहिए।

अधिकारियोको यह मालूम है कि गत १ नवम्बरको मैंने जयपुर रियासत प्रजामण्डलकी ओरसे, जिसका कि मै प्रधान हूँ, एक सार्वजनिक अपील जारी की थी। उसमे यह कहा गया था कि क्योकि शेखावाटी और अन्य इलाके अकालग्रस्त है, इसलिए *मण्डलको और सब कार्य छोडकर सहायता-कार्यकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले लेनी चाहिए।* वे यह भी जानते थे कि एक समाचारपत्रमे यह खबर छपनेपर कि जयपुरमे सत्याग्रह शुरू होनेवाला है, मैंने उसका साफ-साफ खण्डन किया था।

मुझे पता नही कि १६ दिसम्बरको या उससे पहले ऐसा क्या हुआ जिसके कारण जयपुर रियासतमे मेरे प्रवेशका पूर्वानुमान कर यह आदेश पारित किया गया। मैंने देखा कि उसी दिन रियासतके गजटमे इस आशयकी एक अधिसूचना प्रकाशित हुई थी कि "एक आपत्कालीन स्थिति पैदा हो गई है जिसमे लोगोको गैरकानूनी रूपसे कई देनदारियोकी अदायगी न करनेके लिए भडकाया जा सकता है, और उसके खिलाफ कदम उठाना आवश्यक है।" इस चीजको देखते हुए कि मेरे प्रवेशके खिलाफ आदेश उसी दिन पारित किया गया, यह मानना युक्तियुक्त होगा कि अधिकारियोकी रायमे मेरा सम्बन्ध कर-बदीके आशकित अवैध आन्दोलनसे है। यदि अधिकारियोको यह भय था कि मै इस तरहके आन्दोलनका नेतृत्व करनेवाला हूँ, तो उन्हे कम-से-कम मुझसे यह मालूम करना चाहिए था कि उनके पास जो सूचना है वह सही भी है या नही। वे मुझे इतना तो जानते ही थे कि यह विश्वास कर सकते कि मै सचाईको उनसे छिपाऊँगा नही।

वस्तुत, अधिकारियोको यह मालूम है कि सीकरके हालके सकटमे मैंने, लोगोके प्रति अपने दायित्वको निभाते हुए, उनकी भी सहायता की थी। वे यह जानते है कि मेरा प्रभाव पूर्णतया शातिके लिए ही प्रयुक्त किया गया था।

इसीलिए उस आदेशसे जब मैंने यह जाना कि "आपकी (मेरी) उपस्थिति और गतिविधियोसे शाति-भग होनेकी सभावना है" और यह कि, इस कारण, "सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे तथा लोगोमे अमन कायम रखनेके लिए जयपुर-रियासतमें आपके (मेरे) प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक समझा गया है", तो मुझे कितना आश्चर्य हुआ होगा, इसकी आप स्वय अच्छी तरह कल्पना कर सकते है। मेरे लिए उसका ठीक तरह वर्णन करना सम्भव नही है। मै निस्संकोच कह सकता हूँ कि यह अधिसूचना मेरे पूरे सार्वजनिक जीवनको झूठा ठहराती है।

इस आदेशमे मुझे वर्धाका निवासी बताया गया है। मेरे खयालसे, ऐसा शायद गलतीसे ही लिखा गया है। क्योकि जयपुर-रियासतके लिए तो निश्चय ही मै जयपुरका निवासी हूँ। वर्धा और दूसरे स्थानोमे मेरा कारोबार है, इसका यह अर्थ नही हो सकता कि मै जयपुरका निवासी नही रह गया।

रियासतमे हमारी स्थिति क्या है, यह आज मेरे और मेरे सहकर्मियोके लिए एक विचारणीय गम्भीर प्रश्न बन गया है।

प्रजामण्डल जुलाई १९३१ मे शुरू किया गया था और नवम्बर १९३६ में उसका पुनर्गठन हुआ था। उसका एक सविधान है। जयपुर रियासतके बहुत-से प्रतिष्ठित व्यक्ति उसके सदस्य हैं। उसने अपनी गतिविधियाँ अभी तक जयपुरके कानूनकी सीमाओके अन्दर ही रखी है और सभाओ व जुलूसोपर लगाये गये कष्टप्रद तथा अनुदार प्रतिबन्धोका पालन किया है।

परन्तु मुझे दिये गये इस आदेशसे मण्डलकी आँखे खुल गई हैं। वह अब इस निष्कर्षपर पहुँचा है कि यदि नागरिक स्वतन्त्रता नही मिलती है और ऐसी सभाओ, जुलूसो और सस्थाओके सगठनकी यदि बेरोकटोक अनुमति नही मिलती है जिनमे अहिंसाका कडाईसे पालन होता हो, तो उसे अवश्य सत्याग्रह का सहारा लेना चाहिए।

मै यह बता दूँ कि हमारी गतिविधिका क्षेत्र क्या है। हमारा लक्ष्य बहुत स्पष्ट है। हम महाराजाकी सरक्षतामे उत्तरदायी सरकार चाहते हैं। इसलिए हमें लोगोको यह बताना होगा कि उत्तरदायी सरकार क्या होती है और उसके योग्य बननेके लिए उन्हे क्या करना चाहिए। परन्तु हमारा इरादा इसके लिए सत्याग्रह करनेका नही है। लेकिन हमे जनताके सभी वर्गोकी शिकायते दूर करानेकी कोशिश करनी है, हमे रचनात्मक और शिक्षात्मक गतिविधियाँ चलानी है। फिर भी मण्डलकी इच्छा इस समय करबन्दीका प्रचार करनेकी कतई नही है। यदि हमे अपनी गतिविधियोमे, जो मूल रूपसे शातिपूर्ण और जीवनका निर्माण करनेवाली है, रियासतका सहयोग मिलता है, और स्वीकृत शिकायतोको दूर करानेमे सहयोग मिलता है, तो करबन्दीका सहारा लेनेकी कभी जरूरत नही पडेगी। पर यदि दुर्भाग्यसे वह जरूरी हो गया, तो मण्डल रियासतके अधिकारियोको वैसा करनेके अपने इरादेकी पर्याप्त सूचना देगा। क्योकि मण्डल खुले, सम्मानित और पूर्णतया अहिंसात्मक तरीकोके पक्षमे है। इसलिए मेरा निवेदन यह है कि मण्डलको अपनी पूर्णतया वैध और अहिंसात्मक गतिविधियाँ बेरोकटोक चलानेकी पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। परन्तु यदि यह युक्तियुक्त प्रार्थना इस महीनेकी ३१ तारीखसे पहले स्वीकार नही की गई तो मैं, न चाहते हुए भी, इस आदेशके बावजूद रियासतमें घुसनेका प्रयास करनेको बाध्य होऊँगा और मण्डल अपनेको ऐसे कदम उठानेके लिए स्वतन्त्र मानेगा जो उसे मानव-गरिमाके अनुरूप अपनी अभिव्यक्तिके लिए आवश्यक लगते है।

मेरी ऐसी धारणा है कि इससे कम कुछ करना सामाजिक आत्महत्या होगा। मुझे विश्वास है कि रियासतकी परिषद् मेरी और मण्डलकी वफादारीपर असह्य दबाव नही डालेगी।

भवदीय

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३९३-६ से। जी० एन० ३०७६ से भी।

३२४. पत्र : एफ० मेरी बारको

बारडोली,
७ जनवरी, १९३९

चि० मेरी,

बेशक, तुम्हारे पत्र कारोबारी पत्र हैं, पर यदि कारोबार भगवानके प्राणियोंकी सेवा ही हो, तो कारोबारी पत्र भी प्रेमपत्र बन जाते हैं। इसलिए तुम्हें अपने पत्रोंके कारोबारी होनेपर क्षमायाचनाकी कोई आवश्यकता नहीं है।

तुमने जिस कार्यका उल्लेख किया है, उसके लिए उपयुक्त कोई महिला मेरे ध्यानमें नहीं आ रही है।

म्यूरियल १८ व्यक्तियोंका एक दल लायी थी। मैंने उस दलको एक लघु विश्व की संज्ञा दी।[1]

यद्यपि यह एक औपचारिकता है, फिर भी तुम्हारी तरह मैं भी इस वर्षके लिए तुम्हें शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

तुम्हें और मीराको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०७४) से। सी० डब्ल्यू० ३४०४ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार।

३२५. पत्र : बलवन्तसिंहको

बारडोली
७ जनवरी, १९३९

चि० बलवन्तसिंह,

तुम्हारा कैसे चल रहा है? क्या करते हो? चित्त प्रसन्न है? मुझे सब लिखो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१६) से।

१. देखिए पादटिप्पणी ३, पृ० २८८।

३२६. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

वारडोली
७ जनवरी, १९३९

चि० प्रभुदयाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे पैर आशा है अब तक अच्छे हो गये होंगे।

वस्तीके बारेमें तुमने जो लिखा है, उस विषयमें वहाँ खत भेजा था। पूरी तहकीकात हो गई है। वहाँसे कुछ जवाब भी आ गया था। जब हम वापिस लौटेंगे तो पूछ लेना। यदि खत कहीं पड़ा होगा तो तुम्हें बता दूँगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६८८)से।

३२७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

७ जनवरी, १९३९

उड़ीसाकी रियासतोंके पोलिटिकल एजेंट मेजर आर० एल० बजलजेटकी हत्या[1] अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है और इससे हमें बड़ा सदमा पहुँचा है। मैं शोकाकुल परिवारको अपनी सहानुभूति भेजता हूँ। मुझे आशा है कि मृतकके साथ जो सूबेदार गया था, उसके घाव अच्छे हो जायेंगे। मैं प्रजा-मण्डलसे यह आशा करता हूँ कि वह कड़ाईके साथ इस घटनाकी पूरी छानबीन करेगा और हत्याके कारणका पता लगा लेगा। इससे सभी कार्यकर्ताओंको चेतावनी मिल जानी चाहिए कि वे सामूहिक आन्दोलन चलानेमें बहुत ज्यादा सावधानी बरतें। उन्हें यह जान लेना चाहिए कि अहिंसासे रत्तीभर भी डगमगानेसे स्वाधीनता आन्दोलनको, चाहे वह रियासतोंमें चल रहा हो या सारे भारतमें, हानि ही होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१-१९३९

१. उड़ीसाकी रामपुर रियासतमें ५-१-१९३९ का एक भीड़के द्वारा बजलजेटकी हत्या कर दी गई थी।

३२८. अप्रमाणित खादी-विक्रेता[1]

तमिलनाडुके चरखा-सघके मन्त्रीने हमारे पास एक शिकायत भेजी है, जिसके बारेमें उन्हे चरखा-सघकी केरल-शाखाने लिखा है। शिकायतमे इस बातका निश्चित प्रमाण है कि तिरुपुरके कुछ व्यापारी "शुद्ध खादी" के नामसे कपडा बेच रहे है, और चरखा-सघके नामका भी दुरुपयोग कर रहे है। सघके मन्त्रीने हमारे पास दो लेबल भेजे है, जिन्हे ये विक्रेता इस तरह बेचे जानेवाले कपडेपर चिपका देते है। इनपर 'एस० मरियासुसाई चेट्टियार, खद्दर स्टोर, तिरुपुर' और 'एम० के० चिदम्बरम् चेट्टियार एण्ड ब्रदर ए० पालानिअप्पा मुदालियर, खद्दर-स्टोर तिरुपुर' और कपडेके विवरणके तौरपर 'अ० भा० चरखा-सघ द्वारा प्रमाणित शुद्ध खादी' छपा हुआ है।

एस० मरियासुसाई चेट्टियारको चरखा-सघने खादीका कारोबार करनेका प्रमाणपत्र कभी नही दिया, और ए० पालानिअप्पा मुदालियरका प्रमाणपत्र लगभग चार साल हुए रद कर दिया गया था। ऐसी धोखेबाजीके लिए साधारण भारतीय दण्ड-विधानके तहत निश्चय ही सजा दी जा सकती है। बहरहाल, इन व्यापारियोके लिए तथा जनताके लिए यह ज्यादा अच्छा होगा कि खादीकी माँगसे इस तरह अनुचित फायदा न उठाया जाये और जिन व्यापारियोको प्रमाणपत्र चरखासघकी ओरसे नही मिला है, वे ऐसे कारोबारसे अपनेको अलग ही रखे या कम-से-कम छलपूर्वक चरखा सघके नामका दुरुपयोग तो न करें।

बारडोली, ८ जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १४-१-१९३९

३२९. सरदार पृथ्वीसिंह[2]

सरदार पृथ्वीसिंहने मुझे पत्र लिखकर बताया है कि वे स्वस्थ है और उनकी आवश्यकताएँ सरकार और मित्र, जैसा भी मौका हो, पूरी कर रहे है। मेरा उनसे बराबर पत्र-व्यवहार होता रहता है। वे बताते है कि बहुत-से मित्र उनसे मिलनेकी इच्छा रखते है। वे चाहते है कि मै उन सबको धन्यवाद दूँ, पर साथ ही यह भी बता दूँ कि उन्हे उनसे मिलनेके लिए इतनी दूर रावलपिण्डी जानेका कष्ट उठानेकी जरूरत नही है। और यदि वे ऐसा करना चाहे, तो भी [मुलाकातके लिए] तुरन्त

१ और २. ये "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत छपे थे।

कोई दिन निश्चित न होनेपर निराश न हो। मुलाकातके दिन आम तौरपर काफी मुलाकाती उनसे मिलने आते है। वे चाहते है कि जो भी मित्र उनसे मिलनेकी इच्छा रखते है, वे सब मुझसे पत्रव्यवहार करे ताकि मैं उनका मार्गदर्शन कर सकूं। उनकी यह इच्छा मैं भावी मुलाकातियो तक पहुँचा रहा हूँ और प्यारेलाल, या महादेवको जैसे ही उसको पूरा काम करनेकी अनुमति मिलेगी, खुशीसे इसका प्रबन्ध करेंगे। परन्तु ऐसा केवल कुछ व्यक्तियोके लिए ही हो सकेगा, क्योकि अधिकारियोसे पत्र-व्यवहार किये बिना कुछ सम्भव नही होगा। और इस तरह जो व्यक्ति आज मेरी अस्वस्थतामे मेरी सहायता कर रहे हैं, उनपर कामका इतना बोझ पड जायेगा कि वे शायद ही वहन कर सकें।

बारडोली, ९ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-१-१९३९

३३०. त्रावणकोर

त्रावणकोर से एक ईसाई मित्र लिखते हैः

त्रावणकोरके ईसाई क्षेत्रोंमें आपके बारेमें यह भारी गलतफहमी है कि आप ईसाइयोंके हितोके पूर्णतया विरोधी है, और यह तबसे पैदा हुई है जबसे आपने महाराजाके नाम लिखे अभ्यावेदन वापस लेनेपर जोर देना शुरू किया है। जनमतका रुझान, जैसाकि बहुत-से मित्रोने मेरे आगे व्यक्त किया है, कुछ इस प्रकार हैः

त्रावणकोरकी महारानी और सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरके प्रभावसे, आपके मनमें यह गलत धारणा बैठ गई है कि त्राणवकोरका वर्तमान आन्दोलन त्रावणकोरके हिन्दुओंपर आधिपत्य जमानेके लिए ईसाइयोके एक अभियानके सिवा और कुछ नहीं है। त्रावणकोर-आन्दोलनके विरुद्ध आप आज जो-कुछ कर रहे हैं, उसके पीछे आपके मनकी यही धारणा काम कर रही है। इसके अतिरिक्त, सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरने मन्दिर-प्रवेशकी सुप्रसिद्ध घोषणा कर पूरे हिन्दू-समाजकी महान सेवा की है, इसलिए उनकी त्रुटियाँ चाहे कैसी भी हो, आप उन्हें हर तरहके लांछन और व्यक्तिगत आरोपसे बचाना चाहते हैं। इसी उद्देश्यको दृष्टिमें रखते हुए आप राज्य-कांग्रेस पर अपना अभ्यावेदन वापस लेनेके लिए इतना दबाव डाल रहे हैं। अन्यथा, ऐसा कोई कारण नहीं है जिससे आप राजकोटके प्रति एक तरहकी और त्रावणकोरके प्रति दूसरी तरहकी नीति अपनायें। राजकोटके मामलेमें वल्लभभाई पटेल और बहुत-से अन्य लोगोने दीवानके खिलाफ कितने ही व्यक्तिगत आरोप लगाये थे, और

हाल ही में तो वल्लभभाईने वर्तमान दीवानको हटानेके लिए एक और लड़ाई छेड़ने तककी धमकी दी थी। आप इस सबका समर्थन करते हैं। लेकिन त्रावणकोरके मामलेमें यद्यपि इतनी दूर होनेके कारण आपके लिए यहाँकी परिस्थितिको समझना पूर्णतया असम्भव है, फिर भी आप अभ्यावेदनके प्रश्नपर अपनी शर्तें रख रहे हैं और सरकारके सभी न्यायविरोधी कार्योंपर चुप्पी साधे हुए हैं। अभ्यावेदनको वापस लेनेके बाद भी नेता अभी तक जेलमें हैं, बड़ी संख्यामें बराबर गिरफ्तारियाँ हो रही हैं, और यद्यपि आन्दोलन एक तरहसे मर चुका है फिर भी रियासत-भरमें लोगोंको आतंकित किया जा रहा है। आप चुपचाप यह सब देख रहे हैं और एक भी शब्द नहीं बोल रहे हैं। त्रावणकोर-सरकारके प्रति आपके पक्षपातका यह एक और प्रमाण है।

इसी तरहके, पर और ज्यादा तीखे शब्दोवाले दूसरे भी कई पत्र मुझे मिले हैं। इन आरोपोका यदि मैं उत्तर दूँ तो वातावरण थोडा साफ हो सकता है। मेरा अत करण बिलकुल साफ है। मेरा कहना यह है कि जितनी दिलचस्पी मैंने त्रावणकोर के आन्दोलनमे ली है उतनी किसी और रियासतके आन्दोलनमे नही ली है। और इसका सीधा-सादा कारण यह है कि साबरमती आश्रमके श्री जी० रामचन्द्रनने, जिनकी बुद्धिमत्ता, हिम्मत, लगन और अहिंसापर मेरा बहुत विश्वास है, मुझसे ऐसा करनेके लिए बडा आग्रह किया था। मेरी स्वीकृति मिलनेके बाद उन्होने अपनेको सघर्षमें झोक दिया। उन्होने मुझे बताया था कि सभी वर्ग सघर्ष चाहते है। उनके कहनेपर ही मैंने राजकुमारी अमृत कौरसे त्रावणकोर जाने और जो-कुछ बातचीतसे सम्भव हो, वह सब करनेकी प्रार्थना की थी।

उत्तरदायी सरकारके लिए चल रहे सघर्ष को दीवान के खिलाफ आरोपोसे जोडा जाये, मै इस बातके विरुद्ध रहा हूँ। लेकिन, साथ ही, मै इसपर भी जोर देता आया हूँ कि अगर नेताओ को मेरी सलाह माकूल न लगे तो उन्हें आरोप वापस लेनेकी जरूरत नही है, क्योकि जन-साधारणने यदि विरोध किया तो उसका वार तो आखिर उन्हीको झेलना पडेगा। और वे यदि अपनी बात दृढ विश्वासके साथ नही रख सके, तो ऐसा नही कर सकेगे। मैंने उनसे यह भी कहा था कि यदि वे बर्खास्तगीको ही एकमात्र सवाल बना ले तो इन आरोपोपर डटे रहना और आगेकी कार्रवाई करना न्यायोचित होगा। परन्तु यदि उनका जोर उत्तरदायी सरकार पर है, तो इन आरोपोको लेकर कोई कार्रवाई करनेका कोई अर्थ नही है। इससे देशका ध्यान बँटेगा और यदि अभियोग चला तो उन्हे अपना समय और साधन आरोपोको सिद्ध करनेमे ही लगाने होगे। दूसरी ओर, यदि वे उत्तरदायी सरकार प्राप्त कर लेते है, जो कि एकता तथा अहिंसा और सत्यमे दृढ आस्था होनेसे वे अवश्य प्राप्त कर लेंगे, तो उनका वर्तमान और भावी सभी दीवानोपर नियन्त्रण कायम हो जायेगा। अत आरोप इसी-लिए वापस लिये गये कि आरोप-वापस लेनेकी सलाह नेताओंको पूरी तरह जँच गई थी। अभी-अभी मुझे कार्यवाहक प्रधानका जो व्यक्तव्य मिला है, उससे भी मुझे यही पता चलता है।

राजकोटके साथ इस मामलेकी तुलना अनभिज्ञताकी द्योतक है। वहाँ मैंने आदोलनका कभी भी मार्गदर्शन नही किया। मेरे मार्गदर्शनका अवसर ही नही था। सरदारको उसकी जरूरत नही थी। यदि उन्हें जरूरत होती तो वह उनके लिए सदा उपस्थित था। दीवानकी बर्खास्तगीका वहाँ कोई सवाल नही था। यदि लडाई उत्तरदायी सरकारके लिए होती, तो सरदार आरोपोके साथ कोई भी सरोकार रखनेसे दृढतापूर्वक इनकार कर देते। यह ठीक है कि उन्होंने संघर्षका विरोध करनेवाले सभी तरहके लोगोकी भर्त्सना की थी, पर वह किसी अधिकारीकी बर्खास्तगीको संघर्षका आधार बनानेसे बिलकुल जुदा चीज थी।

त्रावणकोरके सघर्षमें मेरे मार्गदर्शनकी कभी कमी नही रही। परन्तु आलोचकोको यह समझ लेना चाहिए कि मै इस संघर्षका सचालन नही कर रहा हूँ। मुझसे जब सलाह माँगी जाती है तो मै दे देता हूँ। मेरी सारी सलाह और मेरे सारे कामको सर्वसाधारणके आगे रखनेकी न तो जरूरत है और न वैसा सम्भव ही है। मेरा ज्यादातर काम पर्देके पीछे है। वह गुप्त नही है। मेरे पास छिपानेको कुछ नही है। परन्तु बहुतसे काम, अपने ध्येयके हितको दृष्टिमे रखते हुए, चुपचाप करने होते है, गुप्त रूपसे भी (इन शब्दोके सही अर्थोमें) करने होते हैं।

अतमें मेरे आलोचकोको यह समझ लेना चाहिए कि वर्तमान दीवान अपने पदपर कायम रहे इसमे मेरी कोई दिलचस्पी नही है। दीवानके साथ यदि मेरा पत्र-व्यवहार रहा है तो वह केवल ध्येयके लिए रहा है, जिसमें न्यायके लिए वकालत की गई है। जहाँ तक महारानीका सवाल है, पूरे संघर्षमे उनके साथ मेरा कोई पत्र-व्यवहार नही हुआ है। मेरा यह कहना है कि मै पक्षपातसे *अलग* हूँ और सदा रहा हूँ। ईसाइयो और गैर-ईसाइयोमे, राजनैतिक दृष्टिसे, मै कोई भेद नही मानता। धर्मकी दृष्टिसे जरूर मानता हूँ, और उसमे भी मै ईसाई धर्म और अन्य धर्मोका उतना ही आदर करता हूँ जितना कि अपने धर्मका।

बारडोली, ९ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१-१९३९

३३१. जमनालालजी पर प्रतिबन्ध

जमनालालजी पर जो प्रतिबन्ध लगाया गया है, वह बड़ा अजीब है। उन्हें मिला हुक्म इस प्रकार है :

> वर्धा (मध्यप्रान्त) के सेठ जमनालाल बजाज,
>
> चूँकि जयपुर सरकारको यह मालूम हुआ है कि जयपुर-राज्यमें आपकी मौजूदगी और हलचलोसे अमनमें खलल पड़नेकी सम्भावना है, लिहाजा सार्वजनिक हित और सार्वजनिक शान्ति बनाये रखनेके लिए जयपुर-राज्यके अन्दर आपके प्रवेशकी मनाही करना आवश्यक मालूम पड़ता है।
>
> इसलिए आपको चाहिए कि जब तक कोई और हुक्म न मिले, आप जयपुर-राज्यमें न आयें।
>
> बहुक्म, प्रशासन परिषद्
> (ह०) एम० अलताफ ए० खेरी
> सचिव, प्रशासन प्ररिषद्, जयपुर

दरअसल जमनालालजी ऐसे आदमी हैं जिनकी उपस्थितिसे कही कोई खतरा होनेकी संभावना नही हो सकती। लोग हमेशा उन्हें शान्ति करानेवालेके रूपमे ही जानते रहे हैं। सरकारी अधिकारियोंके साथ उनके सम्बन्ध बहुत ही अच्छे रहे हैं। उनके गुणोंकी कद्र भी इतनी हुई है कि १९१६ या उसके आसपास उन्हें रायबहादुरका खिताब दिया गया, जिसे असहयोगके दिनोंमें उन्होने छोड दिया। व्यापारकी दुनियामें वे एक बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति हैं और बहुत बड़े व्यापारी होनेके अलावा, बैंकर भी हैं। यों तो वे बड़े उत्साही कांग्रेसी है, मगर 'आन्दोलनकारी' के रूपमें वे कभी प्रसिद्ध नही रहे। हाँ, रचनात्मक कार्य और समाज-सुधारमें वे सबसे आगे हैं। यह जरूर सच है कि अपनी अन्तरात्माके अनुसार चलनेका उनमे साहस है और उसके लिए वे कई बार अपने सर्वस्वकी भी बाजी लगा चुके हैं। जेलसे वे कभी नही डरते। जमनालालजी पर तामील किये गये हुक्ममें जो-कुछ कहा गया है, स्पष्टत वह गलत है और उनपर बिलकुल लागू नही होता। शायद यह कहा जाये कि हुक्मकी शब्दावली तो सिर्फ औपचारिकताके लिए है, क्योकि बिना उसके कानूनन उनपर ऐसा हुक्म तामील नही किया जा सकता। अगर ऐसा है, तो इससे निश्चित रूपसे ही सिद्ध होता है कि यह कानून जमनालालजी-जैसे लोगोपर लागू करनेकी मन्शासे हरगिज नही बना था। जमनालालजी-जैसे व्यक्तिको जयपुर या देशके किसी अन्य भागमें न आने देनेके लिए इसका प्रयोग तो कानूनका बिलकुल स्पष्ट दुरुपयोग है।

और इसमें भी मजेदार बात वह है कि जमनालालजीको 'वर्धा निवासी' कहा गया है। वे दरअसल तो जयपुर राज्यके ही निवासी है, वहाँ उनकी जायदाद है और वहाँ उनके अनेक सगे-सम्बन्धी रहते है।

ऐसे हुक्मके आगे मेरी ही सलाहपर जमनालालजीने सिर झुकाया है। ऐसी अफवाह थी कि अगर उन्होने जयपुरमे दाखिल होनेकी कोशिश की, तो शायद उन्हे गिरफ्तार कर लिया जायेगा। इसलिए उन्होंने मुझसे सलाह ली कि अगर इस तरहका हुक्म उनपर तामील हो तो उनका क्या कर्तव्य होगा। जयपुरके उनके साथी कार्यकर्ताओका यह मत था कि ऐसा कोई आदेश हो तो वे वही फौरन उसे भंग करे। लेकिन मेरा मत इससे भिन्न था, और अपनी रायपर पछतानेकी मुझे कोई वजह मालूम नही पड़ती। मैंने अपने मनमे सोचा कि ऐसा हुक्म देना तो पागलपन होगा और जो पागल है उनकी बातो पर ज्यादा ध्यान नही देना चाहिए, बल्कि उन्हें शान्त होनेका मौका देना चाहिए। मुझे मालूम हुआ है कि गिरफ्तारीके खयालसे बडी-बडी तैयारियाँ की गई थी। अत जो लोग गिरफ्तार करनेके लिए आये थे, उन्हे अपना शिकार न पाकर एक तरहकी निराशा जरूर हुई होगी।

इन्तजार करनेमे और अधिकारियोको यह समझानेकी कोशिश करनेमें कि उन्होने जल्दबाजी की है और गलत काम किया है, जमनालालजीका कोई नुकसान नही हुआ है। जयपुरकी प्रजा और एक जिम्मेदार आदमी होनेके नाते, शायद यह उनका फर्ज ही था कि वे अधिकारियोंको अपने निश्चयपर फिरसे विचार करनेका मौका दे। फिर भी वे ध्यान न दे और जमनालालजी यह आदेश भग करनेका निश्चय करें, जैसाकि उन्हे करना ही होगा, तो वह ऐसा और भी ज्यादा नैतिक शक्ति और प्रतिष्ठाके साथ करेंगे। और अहिंसात्मक कार्यमे तो नैतिक शक्ति ही महत्वपूर्ण है।

यह स्मरण रहे कि महाराजा तो अपने मन्त्रियोके हाथोकी कठपुतली मात्र है, और वे सब बाहरी आदमी है, बल्कि उनमे से कुछ तो अंग्रेज है। वहाँकी प्रजा, अथवा वहाँके प्रदेशके बारेमे वे कुछ नही जानते। वे तो एक तरहसे उनपर जबर्दस्ती थोपे गये हैं। जयपुरके स्थानीय लोगोको राजकाजके लिए अयोग्य माना जाता है, हालाँकि विदेशियोके आनेसे पहले भी, किसी-न-किसी रूपमे, जयपुर राज्यका काम चल ही रहा था। पिछले सप्ताह मुझे बताना पड़ा था कि अपने बहुत सक्षिप्त कार्यकालमे राजकोटमे अंग्रेज दीवानने अपने-आपको कितना अयोग्य सिद्ध किया था। इसमे कोई शक नही कि जयपुर परिषद्का, जिसमे बाहरी आदमी ही भरे हुए है, कम-से-कम यह कृत्य उसकी गैर-जिम्मेदारी और अयोग्यताका एक दु खद प्रदर्शन है। एक आदमीका निर्वासन, फिर वह आदमी चाहे कितना ही बडा क्यो न हो, नगण्य-सी बात मालूम पड सकती है। लेकिन आगेकी घटनाओसे यह कार्रवाई मूर्खतापूर्ण और महँगी सिद्ध हो सकती है। पाठकोको शायद यह पता न हो कि जयपुरमे प्रजामण्डल भी है, जो पिछले छ. सालसे जमनालालजीकी प्रेरणासे काम कर रहा है। इस समय जमनालालजी ही उसके अध्यक्ष हैं। मण्डल एक शक्तिशाली

१. देखिए "जमनालाल बजाजके लिए पत्रका मसविदा", पृ० ३११-३।

सस्था है, जिसके सदस्य जिम्मेदार आदमी हैं, और उसने काफी रचनात्मक कार्य किया हैं। अगर यह प्रतिबन्ध न उठा, तो मण्डलको भी अपना फर्ज अदा करना पड़ेगा क्योंकि यह प्रतिबन्ध, ऐसा कहा जाता हैं, मण्डलके रचनात्मक और वैध कार्योको रोकनेकी पेशबन्दी भी हैं। अधिकारी ऐसी सस्थाके बढते हुए प्रभावको बर्दाश्त नही कर सकते जिसका उद्देश्य महाराजाकी छत्रच्छायामे जयपुरमें उत्तरदायी शासन प्राप्त करना है, फिर उसके साधन चाहे कितने ही खरे क्यो न हो। ऐसा मालूम पडता है कि जिन सस्थाओकी किसी भी रूपमे कोई राजनीतिक आकाक्षा है, उनकी हलचलोको रोकनेकी क्रूर नीतिकी यह पेशबन्दी हैं। और अफवाह तो यह भी है कि राजपूतानेकी सभी रियासतो द्वारा ग्रहण की जानेवाली यह एक सयुक्त नीति है। यह नीति सिर्फ जयपुरकी ही हो या अन्य सभी रियासतोकी भी हो, वह काफी अनिष्टकारी है और जमनालालजी तथा जयपुरकी जनताके लिए अपनी पूरी शक्तिके साथ इसका प्रतिरोध करना आवश्यक है। यह जरूर है कि वह प्रतिरोध काग्रेसके सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तके अनुरूप होना चाहिए।

बारडोली, ९ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१-१९३९

३३२. तार: अकबर हैदरीको[1]

बारडोली
९ जनवरी, १९३९

सर अकबर हैदरी
हैदराबाद, दक्षिण

तारके लिए, जिसमे कुछ रिहाइयोकी सूचना दी गई है, धन्यवाद। पत्र अभी नही मिला।

गाधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००९४) से, सौजन्य: आन्ध्र प्रदेश सरकार।

१. इस तारकी फोटो-नकल १९६९-७० में नई दिल्ली में आयोजित गाधी-दर्शन प्रदर्शनी में दिखाई गई थी।

३३३. पत्र : जमनालाल बजाजको

[९ जनवरी, १९३९][1]

चि० जमनालाल,

घ० का तार मिल गया है।[2] वे राजी हो गये हैं। पत्र रजिस्टर्ड डाकसे भेज दिया गया।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९९९) से।

३३४. औंधका संविधान[4]

औंध-राज्यके लिए जो नया संविधान हालमें बनाया गया है उसमें कितनी ही चौंका देनेवाली चीजें हैं। पर यहाँ तो मैं मताधिकारके लिए अयोग्यताएँ और न्यायालय, इन दो विषयोंके बारेमें ही लिखना चाहता हूँ।

अब तक मैं यह मानता और कहता आया हूँ कि हरएक वयस्क आदमीको — फिर वह निरक्षर हो या साक्षर — मत देनेका अधिकार होना चाहिए। लेकिन कांग्रेस-विधानको जिस तरह अमलमें लाया जा रहा है उसको देखकर मेरी राय बदल गई है। अब मैं यह मानने लगा हूँ कि मताधिकारके लिए अक्षरज्ञानका होना आवश्यक है। इसके दो कारण हैं। मत एक खास अधिकार माना जाना चाहिए, और इस कारण उसके लिए कुछ योग्यता भी आवश्यक समझी जानी चाहिए। सबसे सरल और सीधी योग्यता साक्षरताकी — लिखना, पढना आ जानेकी — है। और साक्षरतापर आधारित मताधिकारके प्रयोगसे बना हुआ मन्त्रि-मण्डल यदि मताधिकारसे वंचित निरक्षर प्रजाजनोंके हितकी चिन्ता रखनेवाला होगा, तो इस वांछित अक्षरज्ञानका प्रसार तो देखते-देखते हो जायेगा। औंधके संविधानमें प्राथमिक शिक्षाको नि:शुल्क और अनिवार्य बना दिया गया है। श्रीमन्त अप्पा-साहबने मुझे विश्वास दिलाया है कि वे इस बातकी कोशिश करेंगे कि औंध-राज्यमें छह महीनेके अन्दर निरक्षरता समाप्त हो जाये। इसलिए मुझे आशा है कि मताधिकारके

१. तारीख गांधीजीके हाथ की नहीं, किसी औरके हाथ की लिखी है।

२. देखिए "तार : घनश्यामदास बिड़लाको", पृ० ३१०।

३. आशय अनुमानत: कौंसिल ऑफ स्टेट, जयपुरके अध्यक्ष को लिखे पत्रसे है; देखिए "जमनालाल बजाजके लिए पत्रका मसविदा", पृ० ३११-२।

४. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत छपा था।

लिए अक्षरज्ञानकी जो योग्यता निश्चित की गई है, उसका औंध-राज्यमे कोई विरोध नही होगा।

प्रचलित प्रथामे दूसरा परिवर्तन यह किया गया है कि निम्न श्रेणीकी अदालतमें न्यायप्रणालीको मुफ्त और बहुत सादा बना दिया गया है। लेकिन आलोचक न्यायके मुफ्त और सादा होनेसे तो नही, पर एक दूसरी बातसे शायद नाराज होगे। वह यह कि बीचकी तमाम अदालतोको उडा दिया गया है, और विवादियो तथा अभियुक्तोका भाग्य मात्र उच्च न्यायालयके हाथमे सौप दिया गया है और उसमे एक ही न्यायाधीश है। पौन लाखकी जनसख्यामे बहुत-से न्यायाधीशोका होना अनावश्यक है और अशक्य भी है। और अगर योग्य मनुष्यको मुख्य न्यायाधीश बना दिया जाये, तो यह सम्भव है कि वह बडी-बडी तनख्वाहवाले न्यायाधीशोकी न्यायापीठ जितना ही शुद्ध न्याय दे सके। न्यायका स्वरूप इतना सादा कर देनेमे कल्पना यह रही है कि अदालतोकी बोझिल और लम्बी-चौडी कार्य-विधि समाप्त कर दी जाये, और कानूनोके बडे-बडे पोथे और ब्रिटिश अदालतोमे काममे आनेवाली रिपोर्टोंका उपयोग भी खत्म कर दिया जाये।

बारडोली, १० जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १४-१-१९३९

३३५. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

बारडोली

[११ जनवरी, १९३९][1]

चि० काका,

तीन दिनका मौन चल रहा है, इसलिए पत्रोके उत्तर दे पा रहा हूँ।

सजीव कामतके सम्बन्धमे जो चाहिए उसे इस पत्रके साथ रख रहा हूँ।

शकरका पत्र तुम्हारे देखनेके लिए है। उसे फिर लिखना। मैंने नानावटीको पत्र लिख दिया है। अधिक विचार करनेके बाद मैंने उसे यह सुझाव दिया है कि रात सेगाँवमे बिताये और दिन तुम्हारे पास। लेकिन अगर सफरमे भी उसकी जरूरत हो, तो भले वह बराबर तुम्हारे साथ रहे। तुम्हारी जरूरत पूरी करना मुझे अधिक महत्वका काम मालूम होता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरे वहाँ आनेमे अभी और समय लगेगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९१७) से।

१. तारीख किसी औरके हाथकी लिखी है।

३३६. पुर्जा : वल्लभभाई पटेलको

बारडोली
११ जनवरी, १९३९

मेरा सदासे यह निश्चित मत रहा है (और इस समय भी यह मेरे मनपर हावी है) कि प्रत्येक प्रान्तमे एक-दो चुने हुए नेताओके सिवाय बाकी सब कार्यकर्ताओ को चुप रहना चाहिए। और यदि यह सभव न हो तो उन्हे सभाओमे पहलेसे अच्छी तरह सोचे हुए, संक्षिप्त, सादे, लिखे हुए भाषण पढ देने चाहिए। सबको याद रखना चाहिए कि अब लोगोके हाथ अधिकाधिक सत्ता आती जा रही है। ऐसी स्थितिमे लोकनायकोके मुँहसे ऐसा एक भी शब्द नही निकलना चाहिए जिसपर पहलेसे विचार न कर लिया गया हो।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३२

३३७. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

बारडोली
१२ जनवरी, १९३९

चि० काका,

महादेवको लिखा तुम्हारा पत्र पढा। क्या मेरी नीति बदल गई है? कलकत्तेमें जो हुआ सो हुआ। हमें इस कक्षासे हाथ खीच लेना चाहिए। वामनचन्दका वेतन तो वह आज देगा न? अभी नई कक्षा न खोलना ही शायद बेहतर होगा। मै आऊँगा, तब इस बातकी चर्चा करेंगे। मुझे डर है, हम लोग कही आपसमे ही न लड़ने लगे।

कलका मेरा पत्र[1] मिला होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथका पत्र श्रीमनके लिए है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९१८) मे।

१. देखिए पृ० ३२४।

३३८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

वारडोली
१२ जनवरी, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

मेरे पास एक भी मिनिट नही रहती। यह भी कष्टसे लिख रहा हूँ।

ब्रह्मचर्यके लिये वलवान साधन चित्त शुद्धि है। उसमें वाह्य साधन कुछ अंश तक सहायक होते है।

प्रार्थना अनजान पनमे भी चलती है उसका मतलव यह है कि जव मनुष्य उसीमे रत रहता है तो उसे पता नही है कि वह प्रार्थना करता है। जैसे घाढ़ निशमें सोता हूआ मनुष्यको निद्राका पता नही रहता है। रामनामका विस्तृत अर्थ यह कृष्ण नाम भी आया, चर्खा चलाना भी रामनाम हो सकता है: आज तो इतना ही।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३०९) से। एस० जी० ७२ से भी।

३३९. बातचीत: तोयोहिको कागावाके साथ[1]

[१४ जनवरी, १९३९][2]

अब गांधीजीसे उनकी बातचीतको लेते हैं।

आपकी ख्याति यहाँ आपसे पहले ही पहुँच चुकी है, डॉ० कागावा।

इन शब्दोंके साथ गांधीजी डॉ० कागावाके अभिनन्दनके लिए उठे। . . . प्रारम्भिक प्रश्न दक्षिण भारतके सूखे, अकालों और सहकारी आन्दोलनके बारेमें थे। [उन्होंने पूछा:] क्या यह आन्दोलन भारतमें फूल-फल रहा है?

गाधीजी . फूल-फल रहा है, यह तो मै नही कह सकता। जैसे-तैसे चल रहा है। यह ब्रिटिश सरकार द्वारा शुरू किया गया था। यह भीतरसे नही उठा, वल्कि

१. महादेव देसाई लिखित "डॉ० कागावाज विजिट" से उद्धृत। कागावा एक जापानी समाज-सुधारक, इवेंजेलिस्ट और लेखक थे और ताम्बरम् सम्मेलनमें भाग लेनेके लिए भारत आये थे।

२. महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे।

लोगोपर ऊपरसे थोपा गया। इसकी व्यवस्था एक घिसे-पिटे नमूनेपर की गई है, इसलिए इसमे समयकी आवश्यकताओके अनुरूप विकासकी गुजाइश नही है। पर आपके यहाँ, मुझे मालूम है, एक बृहत् सहकारी आन्दोलन है।

कागावा : हाँ, वह दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है। उत्पादकोंकी ही ३,५०,००० सहकारी समितियाँ हैं जो खुद उन्हींके द्वारा संगठित की गई हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा सहकारी समितियाँ हैं, फसल-बीमा सहकारी समितियाँ हैं और गोदामोमें माल का संग्रह करनेवाली सहकारी समितियाँ हैं।

गा० युद्धके बारेमें जापानमे लोगोकी भावनाएँ क्या हैं?

का० : मेरी स्थिति तो जापानमें एक विधर्मीकी-सी है। अपने विचार व्यक्त करनेकी बजाय, मैं आपसे यह जानना चाहूँगा कि यदि आप मेरी स्थितिमें हों तो क्या करेंगे।

गां० : अपने विचार व्यक्त करना मेरी धृष्टता होगी।

का० : नहीं, मैं यह जाननेको बहुत उत्सुक हूँ कि आप क्या करेंगे।

गा० मै अपने ऊपसिद्धान्तोकी घोषणा करूँगा और गोलीका शिकार हो जाऊँगा। मैं सहकारी समितियो और आपके सारे कामको एक पलड़ेमे रखूँगा, और आपके राष्ट्रके सम्मानको दूसरेमे। और यदि आपको लगे कि राष्ट्रका सम्मान बेचा जा रहा है, तो मै आपसे कहना चाहूँगा कि जापानके विरुद्ध अपने विचारोकी घोषणा कीजिए और ऐसा करके अपनी मृत्यु द्वारा जापानको जीवित रखिए। परन्तु इसके लिए आन्तरिक विश्वास आवश्यक है। मुझे नही मालूम कि यदि मैं आपकी स्थितिमे होता तो जो-कुछ मैंने कहा है, वह सब कर सकता या नही, पर क्योंकि आपने मेरी राय माँगी है इसलिए वह तो मुझे देनी ही है।

का० : विश्वास तो है। परन्तु मित्र मुझसे रुकनेको कह रहे हैं।

गा० आपके अन्दरका मित्र जब कहता है, "यह करो", तो उन मित्रोकी बात मत सुनो। मित्र, चाहे कितने ही अच्छे हो, कभी-कभी हमे धोखा दे सकते हैं। उनका तर्क अन्यथा हो ही नही सकता। वे तो आपसे जीवित रहने और अपना काम करनेको ही कहेगे। मैंने जब जेल जानेका फैसला किया तो मुझसे यही अनुरोध किया गया था। परन्तु मैंने मित्रोकी बात नही सुनी, जिसका फल यह हुआ कि जेलकी ठोस चारदीवारीमे बद हो जानेपर मुझे स्वतन्त्रताका आलोक मिला। मै एक अँधेरी कोठरीमे था, पर यह महसूस करता था कि उन दीवारोके अन्दरसे मै सब-कुछ देख सकता हूँ, जबकि बाहर रहकर कुछ नही देख सकता था।

का० : क्या आपके यहाँ भारतमें कुछ सिचाई सहकारी समितियाँ हैं?

गा० · मेरे खयालसे नही है। निस्सदेह आपके यहाँ ये सब चीजे हैं। आपने शानदार काम किये है, और हमे आपसे बहुत-सी बाते सीखनी है। परन्तु चीनको जिन्दा निगलना, उसे मादक विषसे मूर्च्छित करना और कितनी ही अन्य भयानक बातोको, जो पडित जवाहरलाल द्वारा दी गई एक पुस्तक 'व्हाट वार मीन्स' मे मैने

पढी है, हम कैसे समझें। ये सब अत्याचार आप कैसे कर सके? और आपके महा-कवि इसे मानवताका युद्ध और चीनके लिए एक वरदान कहते हैं!

डॉ० कागावा धर्मोंके अध्येता हैं। वे यह जानना चाहते थे कि गांधीजी की अहिंसाकी शिक्षाका 'भगवद्गीता' से कैसे मेल बैठता है। गांधीजी ने कहा कि इसपर इतने थोड़े समयमें कोई चर्चा नहीं हो सकती, पर मैं कहूँगा कि आप 'गीता' पर मेरी भूमिका पढ़ें, जहाँ मैंने इस प्रश्नका उत्तर दिया है। वह उत्तर मुझे अपने अनुभवमें से ही मिला था और वह व्याख्या मेरे खयालसे जरा भी बनावटी नहीं है।

का० : मैंने सुना है आप 'भगवद्गीता' का प्रतिदिन पाठ करते हैं?

गा० : हाँ, हम एक सप्ताहमे पूरी 'गीता' का पाठ कर लेते है और हर सप्ताह करते है।

का० : परन्तु 'गीता' के अंतमें कृष्ण हिंसाका उपदेश देते हैं।

गां० : मैं ऐसा नही मानता। मैं भी लड़ रहा हूँ। यदि मैं हिंसात्मक ढंगसे लड़ता तो प्रभावशाली ढंगसे नही लड़ सकता था। 'गीता' का सदेश 'गीता' के दूसरे अध्यायमे मिलता है जहाँ कृष्ण स्थितप्रज्ञता और समत्वकी बात करते हैं। 'गीता' के दूसरे अध्यायके अन्तिम १९ श्लोकोमें कृष्ण यह समझाते है कि यह स्थिति कैसे प्राप्त की जा सकती है। वे हमें बताते हैं कि यह अपने समस्त विकारोको नष्ट करके प्राप्त की जा सकती है। अपने समस्त विकारोको नष्ट कर देनेके बाद आपके लिए अपने भाईको कत्ल करना सम्भव ही नही है। जिसमे कामनाएँ नष्ट हो गई है, जो सुख और दु:खके प्रति उदासीन है, जो उन तूफानोमें भी अक्षुब्ध रहता है जो मरणशील मानवको उद्विग्न कर देते हैं — ऐसा कोई आदमी हत्या करे, तो उस आदमीको मैं देखना चाहूँगा। यह सारी बात ऐसी भाषामें समझाई गई है जिसका सौन्दर्य अनुपम है। ये श्लोक यह दिखाते है कि कृष्ण जिस युद्धकी बात कर रहे है, वह आध्यात्मिक युद्ध है।

का० : परन्तु तब वास्तविक लड़ाई हो रही थी। आपकी यह व्याख्या आपकी अपनी विशिष्ट व्याख्या है।

गां० : यह मेरी हो सकती है, पर मेरी व्याख्याके रूपमें तो इसका कोई मूल्य नही है।

का० : साधारण बुद्धिको तो ऐसा ही लगता है कि वह वास्तविक लड़ाई थी।

गा० उस सबको आप शान्तचित्त होकर उसके सही सन्दर्भमें पढ़े। युद्धका एक बार उल्लेख होनेके बाद फिर कोई उल्लेख नही है। शेष तो आध्यात्मिक उपदेश है।

का० : क्या किसीने उसकी आपकी तरह व्याख्या की है?

गां० . हाँ। वहाँ युद्धका उल्लेख जरूर है, पर वह युद्ध अन्दर चल रहा है। पाण्डव और कौरव सत और असतकी आन्तरिक शक्तियाँ हैं। वह युद्ध मानव-हृदयमे चलनेवाला देवो और असुरोका युद्ध है, ईश्वर और शैतानका युद्ध है। इस व्याख्याके

पक्षमें आन्तरिक प्रमाण स्वय उस रचनामे है और महाभारतमे है जिसका कि 'गीता' एक लघु अश है। यह दो परिवारोके आपसी युद्धका इतिहास नही है, बल्कि मनुष्यका इतिहास है — मनुष्यके आध्यात्मिक सघर्षका इतिहास है। अपनी व्याख्याके लिए मेरे पास ठोस कारण है।

का० : इसीलिए मैं कहता हूँ कि यह आपकी व्याख्या है।

गा० . पर उससे कुछ नही होता। प्रश्न यह है कि यह व्याख्या युक्तियुक्त है या नही, यह बुद्धिको जँचती है या नही। यदि ऐसा है, तो इससे कोई फर्क नही पड़ता कि यह मेरी है या किसी क ख ग की है। यदि ऐसा नही है, तो मेरी होनेपर भी इसका कोई मूल्य नही है।

का० : मुझे तो अर्जुनके विचार अद्भुत लगते है। कृष्णने उसके लिए कुछ बहाना ढूँढ़ लिया है, और ईसाई धर्म से पहले यह स्वाभाविक और आवश्यक था।

गा० यह व्याख्या तो ऐतिहासिक दृष्टिसे भी गलत है। बुद्ध ईसाके कालसे बहुत पहले मौजूद थे, और उन्होने अहिंसाका उपदेश दिया था।

का० : परन्तु अर्जुनके विचार मुझे कृष्णके विचारोंसे अच्छे लगते है।

गा० तो आपके अनुसार, शिष्य गुरुसे बडा था!

का० : परन्तु आप जो कहते है मै उससे, अहिंसाकी आपकी शिक्षासे सहमत हूँ। आपकी व्याख्याको ध्यानमें रखते हुए मै 'गीता'को फिर पढ़ूँगा। . . .

डॉ० कागावा फिर अपने कृषि और सहकारिताके विषय पर आ गये जिसका उन्होंने बहुत ही सावधानीसे अध्ययन किया है। वे बोले, "आपके यहाँ हर दस सालमें एक बार अकाल पड़ जाता है।"

गा० . हमारे यहाँ वह हर साल पड़ता है, अकाल हमारा स्थायी मित्र है।

का० : तब आपको ज्यादा पेड़ लगाने चाहिए, ईंधन और मवेशियोके चारेके लिए और ज्यादा पेड़ लगाने चाहिए। चावल और जौ ही काफी नहीं है, आपको प्रोटीनवाले पेड़ोंकी ज्यादा जरूरत है।

गा० · नही, हमे शासन-प्रणालीमे परिवर्तनकी जरूरत है!

यह बड़े खेदकी बात थी कि डॉ० कागावाको उसी दिन शामको बम्बई जाना था। . . . अपने सहकारिताके कार्यक्रमपर विस्तारसे विचार-विमर्श करनेके लिए ही क्यों न हो, वे भारतके प्रमुख व्यक्तियोंके पास शायद और ज्यादा दिन ठहर सकते थे। पर गांधीजीने उनसे जो अपीलकी वह एक और ही आधारपर थी।

गा० · शातिनिकेतनको देखे विना आप भारतसे कैसे जा सकते है?

का० : मैंने कविवरकी कविताएँ पढ़ी है और मुझे वे प्रिय है।

गा० परन्तु आपको कविवरसे प्रेम करना है।

का० : यदि मैं 'गीतांजलि'का प्रतिदिन पाठ कर सकूँ तो मैं कविवरको प्रतिदिन देख सकता हूँ, और मुझे क्या उनसे प्रेम नहीं है? शायद वे अपनी कविताओसे अधिक महान है।

गां० कभी-कभी सचाई इससे उल्टी होती है। पर कविवरका जहाँ तक सवाल है, वे अपनी महान कविताओसे कही ज्यादा महान है। अब, एक प्रश्न और। अपने कार्यक्रम मे क्या आपने पाडिचेरीको भी रखा है? यदि आप आधुनिक भारतका अध्ययन करना चाहते है, तो आपको शातिनिकेतन और अरविन्द घोषका आश्रम दोनो देखने चाहिए। पता नही आपकी इस यात्राके सलाहकार कौन है। काश कि इस मामलेमे आपने मुझे अपना सलाहकार बनाया होता।

का० : नहीं, आप तो जीवनके एक अच्छे मार्गदर्शक हैं।

डॉ० कागावाने गांधीजीसे पूछा कि वे और कौन-सी पुस्तकें नित्य पढ़ते हैं। गांधीजीने 'रामायण' का उल्लेख किया और कहा कि ऐसा माना जाता है कि उसमें काफी युद्ध और रक्तपात आदि है "पर मेरे लिए नहीं है।" डॉ० कागावाने कहा कि सीताकी कथाके कारण, जो पवित्रताका आदर्श है, वह मुझे भी प्रिय है।

गां० पर उस अनुपम काव्यमे और भी सुन्दर चीजे है। मैंने मूल नही पढी है जो महान है। परन्तु जो हिन्दीमे है वह एक महान भक्तकी रचना है और वह भारतके जन-साधारणका धर्मग्रथ है। उत्तर भारतमे तुलसीकृत रामायण चार सौ सालोसे हजारो परिवारोके लिए प्रेरणाका स्रोत रही है।

डॉ० कागावाने शंकराचार्य और रामानुजकी चर्चा की और गांधीजीने शंकराचार्यके प्रति, उनकी सीधी और गजबकी तार्किक पद्धतिके प्रति अपना विशेष अनुराग व्यक्त किया। परन्तु गांधीजी फिर उनके यात्रा-कार्यक्रमकी बातपर आ गये और उन्होंने इस बातपर बड़ा अफसोस प्रकट किया कि रेवरेड हॉजने, जिनकी कार्यक्रम बनानेकी जिम्मेदारी रही है, उनके (गांधीजीके) प्रति पक्षपातके कारण, बारडोलीको तो उसमें शामिल कर लिया पर शांतिनिकेतनको नही किया! [उन्होंने कहा:]

आप कलकत्ता जा रहे है और शातिनिकेतन नही जा रहे! यह बडे अफसोसकी बात है। आप कहते है कि मै गोसाबा जा रहा हूँ। देखिए, गोसाबा, गोसाबा है, पर शातिनिकेतन भारत है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-१-१९३९

३४०. जयपुर

मालूम होता है कि जयपुरके अधिकारी उस समय तक खुश न होगे, जब तक कि वे जयपुरके देशभक्तोके होशहवास अच्छी तरह दुरुस्त न कर देगे। अब उन्होंने जयपुर राज्य प्रजामण्डलको, जिसके कि अध्यक्ष जमनालालजी है, गैरकानूनी घोषित कर दिया है। जमनालालजीने राज्य परिषद्के अध्यक्षके नाम अपना पत्र[1] प्रकाशित कर, दिया है। यह पत्र इसी अकमे अन्यत्र मिलेगा। उम्मीद थी कि वह पत्र अधिकारियोको अपना हुक्म वापस लेनेकी प्रेरणा देगा। मगर जयपुर परिषद, जिसके बारेमे भूलसे पिछले सप्ताह मैने यह लिखा था[2] कि उसमे सब बाहरके ही आदमी है, मगर अब मुझे मालूम हुआ है कि उसके चार सदस्य राज्यके ही है, इस बातपर आमादा लगती है कि उन सब कार्योका अस्तित्व ही मिटा दिया जाये, जिनसे जमनालालजी और उनके सहयोगियोका सम्बन्ध है, फिर वे कार्य चाहे सामाजिक हो, या मानव-सेवाके अथवा कोई और।

अधिकारियोका ऐसे लोगोसे जिनको वे पसन्द नही करते, पेश आनेका यह एक नया तरीका है। मै केवल यह आशा ही कर सकता हूँ कि जयपुरके अधिकारी अखिल भारतीय सकट उत्पन्न करनेसे बाज आयेगे। ऐसे तीन कारण है जिनसे जयपुरका सवाल वैसा रूप धारण कर सकता है। जमनालालजी खुद ही एक संस्था है। इसके अलावा वे काग्रेसके कोषाध्यक्ष और उसकी कार्य-समितिके सदस्य भी है। जयपुरमे जो तरीका अपनाया जा रहा है, वह इतना भीषण है कि पूरी शक्तिके साथ उसका मुकाबला करना ही चाहिए। उसका मुकाबला यदि नही किया गया तो रियासतोमे होनेवाली ऐसी हरेक हलचलका, जिसका प्रजाकी न्यायोचित राजनीतिक आकाक्षाओसे जरा भी सम्बन्ध हो, सर्वथा अन्त हो जायेगा।

जयपुरके बारेमे विचित्र बात यह है कि वहाँ असली शासन महाराजाका नही बल्कि एक ऊँचे अग्रेज अधिकारीका[3] है। क्या इसका मतलब यह है कि वे केन्द्रीय सत्ताकी इच्छानुसार चलते है? अगर ऐसा है, तो हालकी घोषणाओका क्या हुआ? अगर ऐसा नही है तो क्या कोई अग्रेज दीवान ऐसी नीतियाँ शुरू कर सकता है, जो अन्तमे खुद राज्यके लिए विनाशक हो? मै समझता हूँ कि जयपुरका खजाना इतना भरा-पूरा है कि सर्वनाशके आधुनिक हथियारोका सहारा लेनेके बावजूद यदि प्रजा आत्मसमर्पण न करे और लगातार बहिष्कार करती रहे, तो भी उससे हर हालतमे राज्यका काम चलता रहेगा। लेकिन यह वक्त है कि राजा लोग और केन्द्रीय

१. देखिए "जमनालाल बजाजके लिए पत्रका मसविदा", पृ० ३११ ३।
२. देखिए "जमनालालजी पर प्रतिबन्ध", पृ० ३२०-२।
३. सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉन, जयपुर रियासतके प्रधानमंत्री।

सरकार इस सम्बन्धमें अपनी कोई समान नीति बना ले। या जैसाकि कुछ लोग कहते हैं, यह समझा जाये कि जयपुरने जो तरीका अपनाया, वही उनकी समान नीति है? मैं तो केवल यही उम्मीद कर सकता हूँ कि ऐसा नहीं है।

बारडोली, १६ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-१-१९३९

३४१. मेथिलेटेड स्पिरिट पीना[1]

पत्र-लेखक लिखते हैं[2]

मद्य-निषेधके काममें लगे हुए लोगोंको पत्र-लेखकके पत्रपर ध्यान देना चाहिए।

बारडोली, १६ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-१-१९३९

३४२. हिंसा बनाम अहिंसा

हिन्दुस्तानमें आज जगह-जगह हिंसा और अहिंसाकी पद्धतिके बीच एक द्वन्द्व चल रहा है। हिंसा तो पानीके प्रवाहकी तरह है। पानीको निकलनेका रास्ता मिलते ही वह प्रबल वेगसे बहने लगता है। अहिंसा पागलपनसे काम कर ही नहीं सकती। वह तो अनुशासनका सारतत्त्व है। किन्तु जब वह सक्रिय बन जाती है, तब फिर हिंसाकी कोई भी शक्ति उसे कुचल नहीं सकती। अहिंसा सोलहों कलाओंसे वहीं उदित होती है, जहाँ उसके नेताओंमें कुदनकी शुद्धता और अटूट श्रद्धा होती है इसलिए द्वन्द्वमें यदि अहिंसा हारती हुई दिखाई दे तो ऐसा नेताओंकी श्रद्धा कम होनेसे या उनकी शुद्धतामें कमी आ जानेसे अथवा दोनों ही कारणोंसे होगा। यह होते हुए भी अन्तमें हिंसापर अहिंसाकी ही विजय होगी, यह माननेका कारण मालूम होता है। जो घटनाएँ घट रही हैं, उनका रुख ऐसा है कि हिंसाकी व्यर्थता कार्यकर्ता खुद ही समझ जायेंगे। पर एक प्रसिद्ध कार्यकर्ताने लिखा है :[3]

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत छपा था।

२. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें कहा गया था कि मद्य-निषेध लागू होनेके साथ शराबियोंने हल्की मेथिलेटेड स्पिरिट पीनी शुरू कर दी है। उन्होंने सुझाव दिया था कि इसकी बिक्रीपर नियन्त्रण लगाया जाना चाहिए।

३. केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

"सत्याग्रहका मुकाबला करनेका रियासतोका तरीका ब्रिटिश सत्ताके तरीकेसे भिन्न मालूम होता है। कुछ रियासतोंमें जो तरीके अख्तियार किये गये हैं वे बहुत ही अमानुषिक और बर्बर हैं। क्या ऐसे वर्वर तरीकोके विरुद्ध अहिंसा सफल हो सकेगी है? . . ,

उड़ीसाके पोलिटिकल एजेंटकी हत्याके सम्बन्धमें आपने जो विचार प्रकट किये हैं[1], उन्हें मैंने कई बार पढ़ा है। अफसोसकी बात यह है कि उड़ीसाके देशी राज्योंकी प्रजापर जो अत्याचार हुए हैं उनका आपने उल्लेख नहीं किया। . . . अगर भीड़ने पोलिटिकल एजेंटके विरुद्ध हिंसासे काम लेनेमें गलती की, तो क्या पोलिटिकल एजेंटका गोली चलाना और इस तरह भीड़को उत्तेजना दिलानेका काम उचित था? . . .

. . . सत्य और अहिंसाके आप-जैसे महान उपदेशकने भारत-सरकारके पोलिटिकल विभागको — और खासकर पूर्वी रियासतोंकी एजेंसीको — क्यो चेतावनी नहीं दी कि देशी राज्योकी प्रजाके साथ पेश आनेमें वे ऐसे जंगली तरीके इख्तियार न करे? इस एजेंसीकी कार्रवाई सचमुच ही भयंकर रही है और पोलिटिकल एजेंटकी हत्या पूर्वी रियासतोंकी एजेंसीकी पाशविक दमन-नीतिकी पराकाष्ठाका परिणाम है। . . . और यदि एजेंटके लिए हमदर्दी जाहिर की जाती है, तो उसी जगह जो दो आदमी सम्भवतः पुलिसकी हिंसाके परिणाम-स्वरूप मारे गये, उनके लिए सहानुभूति क्यों न जाहिर की जाये? . . .

निस्सन्देह, आत्मरक्षाका अधिकार हर किसीको है, और इसी तरह सशस्त्र विद्रोह करनेका अधिकार भी है। पर गहराईसे विचार करनेके वाद कांग्रेसने जान-बूझ कर दोनोका ही त्याग कर दिया है और ठोस कारणोसे किया है। अहिंसामे यदि बड़ी-से-बड़ी उत्तेजनाके आगे भी डटे रहनेकी ताकत न हो, तो उसकी कोई कीमत नही। चाहे जितनी उत्तेजनाके सामने टिके रहनेकी शक्तिमे ही उसकी सच्ची कसौटी है। स्त्रियोका सतीत्व लूटा गया हो और उसे अपनी आँखो देखनेवाले अहिंसात्मक रहे हो, तो वे जीवित क्यो है? और सतीत्व लूटनेकी घटनाओका पीछेसे पता लगा, तो उस वक्त फिर हिंसक बलके प्रयोगका अर्थ ही क्या रहा? अहिंसाका तरीका तो पीछे भी कारगर हो सकता है। अत्याचारियोपर मामला चलाया जा सकता है, या उनके कृत्योको जनताकी अदालतमे रखा जा सकता है। अपराधियोको क्रुद्ध भीड़के हवाले कर देना तो बर्बरता होगी।

एजेटकी हत्यासे सम्बन्ध रखनेवाली दलील प्रस्तुत विषयके लिए अप्रासगिक है। मुझे एक तरफ राजा तथा पोलिटिकल एजेट, और दूसरी तरफ लोगोंकी कार्रवाईका औचित्य कुछ तोलना तो था नही। एजेटकी हत्याकी साफ-साफ शब्दोमे

१. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० ३१५।

निन्दा करना, और वह भी सिर्फ सहानुभूतिकी भावनासे नही, बल्कि कांग्रेसकी मौलिक नीतिका भंग करने और अनुशासनहीन कृत्यके लिए — इतना ही मेरे लिए काफी था। राजाओके दुष्कृत्योपर मैने 'हरिजन" मे अकसर प्रकाश डाला है, पर इसलिए नही कि लोग उनपर अपना गुस्सा उतारे, बल्कि लोगोको मात्र यह बतानेके हेतुसे कि वे उन दुष्कृत्योका अहिंसक ढगसे मुकाबला किस प्रकार कर सकते है। उडीसामे खासा सुन्दर काम चल रहा था, इस बातके मै काफी प्रमाण दे सकता हूँ। इस हत्याने वहाँके आन्दोलनमे, जो ठीक तरहसे चल रहा था, खलल डाल दिया है। रणपुरमे आज भयानक वीरानी छा गई है। निर्दोष और दोषी सभी भाग-भाग कर इधर-उधर छिप रहे है। दमनसे बचनेके लिए वे घर-बार छोड-छोड कर गाँवोको वीरान करते जा रहे है, कारण, ऐसा तो नही है कि केवल वास्तविक अपराधी ही दमनकी चक्कीमे पिसेगे। किसी-न-किसी रूपमे वहाँ आतक फैलाया जा रहा है, और सारे हिन्दुस्तानको लाचार होकर आज यह सब देखना पड रहा है। सत्ताधारी अपने अफसरोकी — खास कर गोरे अफसरो की — हत्या होने पर उससे निपटनेका इससे भिन्न कोई दूसरा तरीका जानते ही नही। नया तरीका जाननेके लिए तो अहिंसाके मार्गकी उन्हे धीरे-धीरे शिक्षा लेनी है। पर मुझे अपनी दलीलको बहुत विस्तार देनेकी जरूरत नही। हाथ-कगनको आरसीकी जरूरत ही क्या? दोनो ही मार्गोकी हिन्दुस्तानमे आज परीक्षा हो रही है। कार्यकर्ताओको दोनोमे से एक मार्ग चुन लेना है। मै जानता हूँ कि भारतवर्ष केवल अहिंसाके ही मार्गसे स्वतन्त्र होगा। जो कार्यकर्ता कांग्रेसमे रहकर इससे अन्यथा विचार रखते है, अथवा उलटी रीतिसे काम लेते है, वे अपने प्रति तथा कांग्रेसके प्रति अन्याय कर रहे है।

बारडोली, १६ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २१-१-१९३९

३४३. पत्र : मीराबहनको

बारडोली

१६ जनवरी, १९३९

चि० मीरा,

इन दिनो कामका इतना बोझ रहा है कि मै एक भी पत्र नही लिख सका हूँ। आज मै 'हरिजन' के लिए साय ५ बजेके बाद तक काम करता रहा। अभी सन्ध्याकी प्रार्थनाके लिए जानेसे पहले मेरे पास एक-दो मिनटका समय है।

तुम जुराबको उसके कामके लिए [पारिश्रमिक], जैसा तुमने लिखा है, उस हिसाबसे अवश्य दे देना। यदि तुम्हे उसके कामसे पूरा सन्तोष हो तो उसे उतना ही या उससे अधिक भी दे दिया जाये तो कुछ अनुचित नही होगा।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारे अभी हालके पत्र आशाप्रद रहे है। यदि वे निराशा-जनक होते तो चाहे एक-आध पक्ति ही लिखनेके लिए मै समय जरूर निकालता।

सुशीला तुम्हे प्रतिदिन पत्र लिखती ही रही है। इस तरह तुम्हे मेरी सेहतके बारेमें सब-कुछ पता है। मै महसूस तो बहुत अच्छा करता हूँ।

घटनाएँ बडी तेजीसे घट रही है। 'हरिजन' के अगले अकमे तुम देखोगी कि क्या हो रहा है।

मुझे आशा है कि तुम्हे जैसा भोजन चाहिए वह अब मिल रहा है।

देवदास और लक्ष्मी अभी यहाँ है। रामदास कल आया था। वह कल पूना जा रहा है। कैलेनबैक जहाजसे शनिवारको आ पहुँचेगे।

यहाँ असख्य मुलाकाती है। सेगाँव-जैसी शान्ति यहाँ नही है। परन्तु सरदार अवाछित दर्शनार्थियोसे मुझे बचाये रखते है।

रामदासकी तबीयत बहुत अच्छी तो नही मालूम होती। प्रेमाबहन आज आई है। मृदुला पिछले चार दिनोसे यहाँ है।

आगा खाँ मिलने आये थे। उस मुलाकातके बारेमे बतानेके लिए कुछ है नही। वह चाहते है कि यदि जरा भी सम्भव हो तो काग्रेस जिन्नाके साथ मामला तय कर ले।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२४) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००१० से भी।

३४४. पुर्जा: अमृतलाल वि० ठक्करको

बारडोली
१६ जनवरी, १९३९

इसे हरिजन फडमे दाखल किया जाय। मुझे रसीद भेजी जाय।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८१) से।

३४५. पत्र : सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉनको

बारडोली
१८ जनवरी, १९३९

प्रिय मित्र,

पहले मेरा विचार था कि साथका यह पत्र प्रकाशित कर दूँ, जिसमे सेठ जमनालालजीके जयपुर-रियासतमे प्रवेशपर प्रतिबन्ध-सम्बन्धी आपके रुखका स्पष्टीकरण किया गया है। लेकिन दूसरी बार विचार करनेपर मुझे लगा कि श्री चुडगर[1] के पत्रकी प्रति आपको भेजकर उसपर आपकी राय जाननेसे मेरा प्रयोजन अधिक सिद्ध होगा। मेरा उद्देश्य राजा-महाराजाओ और उन लोगोके बीच सद्भावना बढाना है जिन्हे ऐसे मामलोके सिलसिलेमे जिनमे मैत्रीपूर्ण वार्ताके जरिये न्याय दिलवासा सम्भव हो, किसी-न-किसी तरह उनके सम्पर्कमे आना पडता है। और अब चूँकि मुझे आपके साथ पत्र-व्यवहार करना ही पड रहा है इसलिए कि श्री चुडगरके पत्रके बारेमे आपकी राय जो भी हो, मै आपको यह सुझाव देना चाहूँगा कि आपको सेठ जमनालालजी और उनके सगठनपरसे प्रतिबन्ध हटा लेना चाहिए। इससे जयपुर-रियासतमे शान्तिको खतरा नही होगा। सच तो यह है कि मै ऐसा मानता हूँ कि प्रतिबन्धोसे निश्चय ही शान्तिको खतरा है।[2]

हृदयसे आपका,

सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉन
दीवान, जयपुर-राज्य, जयपुर

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३९७-८। सी० डब्ल्यू० ७८०९ से भी; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

१. सीकरके राव राजाके वकील और कानूनी सलाहकार; देखिए "जयपुर" ३०-१-१९३९।
२. सर बीकमके उत्तरके लिए, देखिए "जयपुर", ३०-१-१९३९।

३४६. पत्र : चन्दन पारेखको

वारडोली
१८ जनवरी, १९३९

चि० चन्दन,

तेरा पत्र मिला। ह० को तूने जो पत्र लिखा है, वह मैं उन्हे भेजे देता हूँ। मेरा पत्र पाकर ह०ने दक्षिणामूर्तिको छोड दिया है। नानाभाई मुझसे मिल भी गये है। इस प्रकार ह०ने पहला विकल्प ही स्वीकार कर लिया है। अपनी निर्दोषताके बारेमे तो वे दृढ ही है। लेकिन जब उन्होने दक्षिणामूर्तिको छोड़ दिया है और स्त्री-शिक्षाके क्षेत्रसे अलग हो गये है, तब और कुछ करनेको नही रह जाता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४६) से; सौजन्य : सतीश द० कालेलकर।

३४७. पत्र : रवीन्द्र आर० पटेलको

वारडोली
१८ जनवरी, १९३९

चि० रवीन्द्र,

तेरा पत्र मिला। वहाँके अनुभवसे तू वहाँसे उकता जाये, और धनवान बननेका लोभ सर्वथा छोड़कर, गरीबीके साथ देशसेवामे मस्त हो जाये, तो उसे मैं सफलता ही मानूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४५५) से।

३४८. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

वारडोली
१८ जनवरी, १९३९

बापा,

आपको ५,००० रु० का एक चेक सीमा-प्रान्तसे भेजा गया था। श्री जसाराम लिखते है कि वह खादी-कार्यके लिए था, इसलिए आप इतने रुपये डॉ० गोपीचन्द को भेज दीजिएगा। मै जब फिर सीमा-प्रान्त जाऊँगा, तब इसी व्यक्तिसे हरिजन-कार्यके लिए भी पैसा प्राप्त करनेकी आशा करता हूँ।

वापू

[पुनश्च :]

उड़ीसा-सम्बन्धी आपका पत्र अभी मिला। सरदारका वहाँ जाना बहुत मुश्किल है। राजेन्द्र वावू तो जायेंगे ही। यहाँसे भी वे काम चला रहे है। क्या आप खानदेशको मद्यनिषेधके कामके लिए १५ दिन दे सकते है? डॉ० गिल्डरने वचन दिया है कि आप आये, तो वे १२ दूकाने वन्द करवा देंगे। आ सके, तो झटपट आ ही जाइए। तार करना।

वापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११८२) से।

३४९. पत्र : बलवन्तसिंहको

वारडोली
१८ जनवरी, १९३९

चि० वलवंतसिंह,

तुम्हारा पुराना खत वापिस करता हू। अक्षर पहिले से ठीक तो हैं। परन्तु सुधारके लीये काफी जगह हैं। ठूस ठूस कर लिखना नही चाहीये। बायें बाजु पर हमेशा जगह होनी चाहीये। परन्तु शब्द-शब्दके वीचमे भी जगह रखी जाये। कलम की नोक पतली होनी चाहिये। और यह सव सुधारना भी गोमाताके निमित्त करना यह सकल्प करना। सकल्पकी महिमा तो जानते है न।

जो हिसाव तुमने भेजा है वह तो अच्छा है ही है। तुम्हारी प्रमाणिकताके वारेमें, तुम्हारी निस्वार्थ बुद्धिके वारेमें कभी शका थी ही नही।

शान्तिसे रहते हैं वह अच्छा ही है। शरीर मजबूत कर लो, हिन्दी ज्ञानमें वृद्धि करो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९१७) से।

३५०. प्रेम एक सार्वभौम गुण

एक भारतीय ईसाई सज्जन लिखते हैं:[1]

आपके लेख "यहूदी लोग"[2] पर कई तरहकी और काफी टीका-टिप्पणी हुई है। मैं अपनेको यहाँ इस आलोचना तक ही सीमित रखना चाहता हूँ कि ईसा मसीहने जिस प्रेमका उपदेश दिया, वह सामाजिक या सामूहिक नहीं, बल्कि वैयक्तिक गुण था।

इस बातसे इनकार करना कि ईसा मसीहकी जीवन-प्रणाली जितनी व्यक्तिके लिए थी उतनी ही पूरे समुदायके लिए भी थी, निश्चय ही ईसाई धर्मके मूल सत्यको नकारना है। वे प्रचलित व्यवस्थासे बिलकुल असन्तुष्ट थे। फरीसियों और धर्मशास्त्रियोंके पाखंड और घमंडसे उन्हें इतनी चिढ़ थी कि उन्हें वे "साँपोंकी औलाद" और "पाखंडी" कहते थे। उन्होंने सराफोंके काले कारनामोंका भण्डा फोड़कर और उनपर अपने घरको "चोरोंका अड्डा" बनानेका आरोप लगाकर, रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचारका खुल्लम-खुल्ला विरोध किया था। उन्होंने जाति-बहिष्कृतोंके साथ भोजन किया और वेश्याओंसे सांत्वनाके शब्द कहे और इस प्रकार अस्पृश्यताके पापकी भर्त्सना की।

उनके उपदेश क्रान्तिकारी और सार्वभौम होनेके कारण लोगोंके रोषको जगाते थे; अन्यथा सत्ताधिकारी एक ऐसे आदमीको, जिसमें उनका न्यायाधीश तक कोई 'पाप' नहीं देख पाया था, गिरफ्तार करने और मृत्यु-दण्ड देनेकी बात भला क्यों सोचते?

उनके उपदेशोंमें उन्हें [सत्ताधिकारियोंको] एक ऐसी शक्तिकी गन्ध मिली थी जिसका उपयोग करके उनमें [ईसा मसीहमें] आस्था रखनेवाले निश्चय ही उनके समाजके पूरे ढाँचेको गिरा सकते थे। 'जो तुम्हारे एक गालपर चाँटा मारे उसके आगे दूसरा गाल कर देना', 'शत्रुसे प्रेम करना', 'कष्टमें आनन्द अनुभव करना', 'अपने पड़ोसीसे वैसा ही प्रेम करना जैसा तुम्हें अपने-आपसे है', 'दूसरेके दोषकी ओर इशारा करनेसे पहले अपने दोषको देखना', 'जो तुम्हें यंत्रणा देते हैं उनके लिए ईश्वरसे प्रार्थना करना', 'अपराधीको

१. पत्रके केवल कुछ अंश ही उद्धृत किये गये हैं।

२. देखिए पृ० १५३-७।

बार-बार क्षमा करना', 'गरीबोंकी सेवा करना', 'सब-कुछ छोड़कर ईसाका अनुसरण करना'—यह सब उस सार्वभौम सिद्धान्तका सार है जिसके लिए वे जिये और मरे थे। इसका पर्याप्त प्रमाण कि अपने शिष्योंसे उन्होंने कहा था कि स्वयं अपने उदाहरणसे वे विश्वको यह सन्देश प्रत्यक्ष करके दिखायें, और उनके शिष्योंने खुद एक नई व्यवस्थाके पुर्ननिर्माणका आह्वान अनुभव किया था कि हमें प्रारम्भिक चर्चमें मिलता है, जिसकी रचना उन [शिष्यों]के बलिदानोंसे हुई थी और जिसे ईसाका शरीर कहा गया है। 'न्यू टेस्टामेंट'का एक अत्यन्त सुन्दर अंश, '१-कॉरिन्थियन्स'का १३ वाँ परिच्छेद, सन्त पॉलने उस समय लिखा था जब कॉरिन्थका चर्च आन्तरिक विवादोंके कारण छिन्न-भिन्न होने लगा था। उसमें जो प्रेमका सन्देश है वह सामूहिक कार्यका सन्देश था। 'जंगजू चर्च' [चर्च मिलिटेन्ट] नामसे अभिहित यह चर्च निश्चय ही, उस ईसाई समाजका प्रतीक है जो 'सर्वविजयी' प्रेमके द्वारा बुराईकी ताकतोंके खिलाफ लड़नेकी कोशिश करता है।

हमारे मनमें साहस और आस्थाका अभाव होनेके कारण, ईसाई धर्मकी मुख्य शिक्षाको केवल वैयक्तिक आचारका नियम कहकर टाल देना हमारे लिए सुविधाजनक तो हो सकता है, पर यह एक खतरनाक सिद्धान्त है जिससे तथाकथित ईसाई राष्ट्रोंकी स्थिति आज शोचनीय हो गई है।

यह ठीक है कि अहिंसाका परिणाम चर्म-चक्षुओंको सदा दिखाई नहीं देता। यह भी सच है कि प्रेमकी राह पर चलना—अहिंसा अपार प्रेमके सिवा और क्या है—कोई आसान बात नहीं है। परन्तु प्रेमको एक सामाजिक गुण न मानना न केवल ईसाई धर्मके अस्तित्वको, बल्कि विश्वके सभी बड़े धर्मोंके अस्तित्वको नकारनेके समान होगा और उस भयकी भावनाके आगे घुटने टेकनेके समान होगा जो आज सारे विश्वपर छाया हुआ है।

अहिंसाको अभी राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर काफी आजमाया नहीं गया है। गांधीजी ने जहाँ इसे आजमाया है वहाँ यह सफल रही है। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस'के सिद्धान्तका गुलाम होकर यूरोप क्या ईसाकी शिक्षाको बिलकुल झुठला नहीं रहा है? ईसाई जगतके सामने आज यही प्रश्न है। सबसे बड़ी स्वतंत्रता क्या शक्तिका प्रतिरोध शक्तिके साधनोंसे कर सकनेमें है, या उसका उच्चतम और शाश्वत रूप उस रक्तमें से उभरेगा जो किसी एक राष्ट्र या अनेक राष्ट्रों द्वारा स्वेच्छासे बहाया जायेगा?

सलीब रे, तूने मुझ,
गिरे हुएको, सँभाला,
तेरे पाससे भागनेकी
फिर मैं कैसे करूँ कामना।

धूलमें पड़ा था,
बुझ गई थी जीवन-ज्योति।
और धरती से फूट रहा है
—जीवनका रक्त-सुमन,
जिसे कभी नहीं है मुरझाना।

इस पत्रसे सच्चे शकालुओको यह विश्वास हो जाना चाहिए कि ईसाने जिस प्रेमका उपदेश दिया था और जिस प्रेमको अपनाया था, वह मात्र वैयक्तिक गुण नही था, बल्कि तत्वत: सामाजिक और सामूहिक गुण था। ईसासे छ: सौ साल पहले बुद्धने भी यही उपदेश दिया था और यही मार्ग अपनाया था।

बारडोली, २० जनवरी, १९३९
[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-३-१९३९

३५१. पत्र : अकबर हैदरीको

बारडोली
२० जनवरी, १९३९

प्रिय सर अकबर,

मुझे आपके तार मिले और इसी माहकी ५ तारीखका पत्र भी। संलग्न दस्तावेज भी मिल गये जो बादमे आये। ये दो दस्तावेज वर्धासे पता बदलकर भेजे गये थे और इससे पहले कि मैं उत्तर भेज सकता, मुझे राज्य-कांग्रेसके अपने मित्रोसे मुलाकात करनी थी। इसलिए देर हो गई है, तदर्थ आप क्षमा करें।

सबसे पहले मैं आपके पत्रके मित्रतापूर्ण स्वरके लिए आपको धन्यवाद दे दूँ। आपसे इससे भिन्न या इससे कमकी आशा भी नही थी।

फिर भी इस पत्रसे मुझे सन्तोष नही हुआ है। मेरी प्रार्थनासे सम्बद्ध बात एक ही थी और वह थी सविनय अवज्ञा आन्दोलनको वापस लेते हुए राज्य-कांग्रेस द्वारा जारी किया गया घोषणापत्र[1] तथा उसकी भाषा। यदि इससे सारी अपेक्षाएँ पूरी हो जाती तो इसका परिणाम तत्काल यह होना चाहिए था कि उन सब कैदियोको रिहा कर दिया जाता, जिन्होंने अन्दर रहते हुए और राज्य-कांग्रेसके सदस्योके रूपमे सत्याग्रह किया था।

श्री काशीनाथराव वैद्यका वक्तव्य भी अप्रासंगिक था। राज्य-कांग्रेसका घोषणापत्र उनके सामने नही था। यदि उन्हे घोषणापत्रके फलितार्थोका ज्ञान होता तो वह कभी जेल नही जाते। तो भी राज्य-कांग्रेसके घोषणापत्रके आधारपर ही

१. देखिए "हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके लिए वक्तव्यका मसविदा", पृ० २६८-९।

उनके मामलेमे माफी दे दी जानी चाहिए। श्री काशीनाथराव वैद्यका वक्तव्य पढनेपर आपके पत्रके आशयकी पुष्टि नही होती। मै उनके वक्तव्यको सौम्य और नम्रतापूर्ण मानता हूँ। उसमे धमकी की कोई बात नही है। उन्होने सयत ढगसे और तर्कपूर्वक राज्य-काग्रेसकी स्थितिको स्पष्ट करनेकी कोशिश की है और अपनी सजा सुनाये जानेकी तारीख तककी घटनाओको पेश किया है। यह ध्यानमे रखने योग्य है कि उन्होने सविनय-अवज्ञा स्थगित किये जानेकी बात स्वीकार कर ली है और राज्य-काग्रेसके सदस्योसे अनुरोध किया है कि वे सविनय अवज्ञा न करे।

आर्यन लीग और हिन्दू महासभाके कार्योको राज्य-काग्रेसकी गतिविधियोसे अलग करके देखना चाहिए। राज्य-काग्रेसका उनके साथ एकीकरणका इरादा कभी नही था।

क्या आप यह चाहते है कि मै इस बातका पता लगाऊँ कि सरदार पटेल, श्री देव या श्री भूलाभाईने क्या कहा या क्या किया? सच तो यह है कि यद्यपि मै फिलहाल सरदारके साथ ही रह रहा हूँ, मैने आपका पत्र उन्हे नही दिखाया है। यह बात नही कि मै आपका पत्र उन्हे दिखाना नही चाहूँगा, लेकिन बात यह है कि उनके पास उनका अपना निश्चित काम है जैसाकि मेरे पास अपना है। तथापि यदि उन लोगोकी रायका मेरे उद्देश्य या इस चर्चासे कोई सम्बन्ध होता तो मै इस बातका पता लगा सकता हूँ कि उन्होने क्या कहा था। बहरहाल, यदि आप चाहते है कि मै इसका पता लगाऊँ तो मै ऐसा खुशीसे करूँगा।

मैने किसीको गुप्तरूपसे हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच समझौतेके प्रयत्नोके खिलाफ सलाह दी थी, इस बातको आपने अपने मनसे निकाल दिया, वह ठीक किया। श्री नरसिह रावको अपने साथ बाबा लाया था। मौलवी बहादुर यार जग भी उस दलमे शामिल होनेवाले थे। परन्तु वह आ नही सके। वहाँ गतिरोध की स्थिति आ गई थी। इसलिए मैने उन्हे सलाह दी कि वे आगे न बढे अपितु मौलाना अबुल कलाम आजादकी सलाहका इन्तजार करे और उनके निर्देशनमे काम करे। मौलाना साहब इस वक्त आपसे पत्र-व्यवहार कर रहे है।

अब 'वन्देमातरम' के बारेमे। कुछ विद्यार्थी मेरे पास आये जरूर थे। मैने उनसे कहा कि 'वन्देमातरम' धार्मिक प्रार्थना नही है तो भी उन्हे पूरा अधिकार है कि वे इसे अपने कमरोमे या अपने प्रार्थना-कक्षमे गाये। मैने उनसे यह भी कहा कि यदि वे अपनी बात [अधिकारियोके समक्ष] रीतिपूर्वक पेश करे तो उनकी शिकायत दूर हो जानी चाहिए, और जबतक शिकायत दूर न हो तबतक, यदि कही और नही जा सकते, अपनी पढाई बन्द रखे। उस्मानिया विश्वविद्यालय द्वारा जारी किया गया स्पष्टीकरण मैने देखा है। उससे मुझे सन्तोष नही हुआ है। मेरा यह विचार जरूर है कि यह ऐसा मामला है जिसे आपको जल्दी ही सुलझा लेना चाहिए। पूरे तथ्य मेरे पास नही है। इसलिए यदि मैने गलती की हो तो कृपया आप मेरी भूल दुरुस्त कर दे। परन्तु कहनेकी जरूरत नही कि यह सवाल एक अलग और स्वतन्त्र सवाल है।

मैंने इस मामलेमें कोई दिलचस्पी नहीं ली है। मैं विद्यार्थियोंका मार्गदर्शन नहीं कर रहा हूँ। जो मेरे पास आये थे उनसे मैंने कह दिया था कि यद्यपि मैं यह मानता हूँ कि उनका यह प्रश्न महत्वपूर्ण है परन्तु उसका अध्ययन करनेके लिए मेरे पास वक्त नहीं है।

आपका कहना है कि शराबी और इस तरहके दूसरे लोग सत्याग्रह करके जेल गये हैं। मुझे सूचना देनेवालोंका कहना है कि यदि ऐसे लोग जेल गये हैं तो उन्हें ऐसा करनेका अधिकार नहीं दिया गया था और राज्य-कांग्रेससे उनका कोई सम्बन्ध नहीं था।

मेरा विश्वास है कि आपके पत्रके सभी मुद्दोंका जवाब इसमें आ गया है।

यदि मेरे तर्कमें कुछ सार हो तो मैं वही प्रार्थना फिरसे दोहराता हूँ कि राज्य-कांग्रेसके सभी कैदी रिहा कर दिये जायें और राज्य-कांग्रेसको, राजनीतिक या दूसरी तरहकी जो भी वैधानिक कार्रवाइयाँ हैं, उन्हें चालू रखनेकी अनुमति दे दी जाये।

आशा है, आप पूर्ण स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६८४६) से।

३५२. पत्र : ना० र० मलकानीको

बारडोली
२० जनवरी, १९३९

प्रिय मलकानी,

तुमने बैंकर[1] को जो पत्र लिखा है उससे मैं शर्मिंदा हूँ। उसकी जो प्रति मुझे मिली है उसे मैं साथ सलग्न कर रहा हूँ। क्या एजेंसीके विषयमें तुम्हारी धारणा इतनी खराब और खादीका महत्व इतना कम है कि तुम वैसी बातें लिखनेको बाध्य हो गये? खादीके प्रति जैसा तिरस्कार तुमने दिखाया है, उसे सहन करनेकी अपेक्षा मैं यह बात ज्यादा पसन्द करूँगा कि खादी सिन्धमें नष्ट ही हो जाये। निस्सन्देह तुम्हारे लिए खादी-कार्यका स्थान पहला होना चाहिए और दूसरे किसी भी काम का उसके बाद। मैं नहीं चाहता कि तुम तपाकसे यह उत्तर दो कि चोइथराम और यहाँ तक कि जयरामदाससे तुम्हारी जो अपेक्षा थी, उनका काम उससे भी ज्यादा खराब रहा है। तब वह मजबूरीकी बात थी।

१. शंकरलाल बेंकर, सचिव, अखिल भारतीय चरखा संघ।

मुझे गहरी चोट पहुँची है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३०) से।

३५३. पत्र : मीराबहनको

बारडोली
२० जनवरी, १९३९

चि० मीरा,

तुम्हारे सारे पत्र, संक्षिप्त हो या लम्बे, कला-कृतियाँ होते हैं। मुझे खुशी है कि तुम्हारी जॉनके साथ अच्छी पट रही है। अगर धीरज रखोगी तो तुम देखोगी कि पठानके लिए तुम्हारे दिलमे आदर बढता जाता है। वह बहुत बढिया आदमी होता है—एक बार उसे तुमपर विश्वास हो जाये तो खुले दिलसे व्यवहार करता है।

मेरे स्वास्थ्य की तुम्हे चिन्ता करनेकी आवश्यकता नही है। जितनी सावधानी रख सकता हूँ, रख रहा हूँ। जितना आराम सम्भव है, ले रहा हूँ। रक्तचाप काबूमे है। मुझे डर है कि जब तक मै बनवासी न बन जाऊँ और समस्त बाह्य गतिविधियाँ न छोड दूं, यह जरूर घटता-बढता रहेगा। लेकिन वह तो गलत होगा। मुझे ऐसी कला खोजनी होगी, जिससे मै दीर्घजीवी होते हुए अन्त तक काम करता रहूँ। युवावस्थामे अपनी बहुत-सी जिन्दगी व्यर्थ गँवानेके कारण मै वह कला पूरी तरह तो कभी सीख नही सकूँगा। अब जो भी जिन्दगी बची है, उसमे परमात्मा मुझे जो भी दे, उसके लिए हमे आभारी होना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२५) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००२० से भी।

३५४. पत्र : अमृतलाल टी० नानावटीको

बारडोली
२० जनवरी, १९३९

चि० अमृतलाल,

काकासाहबका पत्र तुम्हें कल भेजा था। तुम्हे जाना पडेगा, यह सुनकर यहाँ सब लोगोंको दु:ख हो रहा है। सगीत वहाँकी एक स्थायी चीज मानी जाती थी, वह अब बन्द हो जायेगा। यह बात किसीको अच्छी नही लगती। मुझे भी यह बात अखरती जरूर है। अगर तुम्हारा शरीर साथ दे, तो मेरा यह सुझाव है। तुम्हे रोज सबेरे फल और दूधका नाश्ता करके ६ बजे पैदल चल देना चाहिए। तुम आरामसे काकासाहबके पास सवा-सात बजे पहुँच जाओगे। साढे-सातसे काम शुरू किया जा सकता है। रोज पाँच बजे या साढे चार बजे काम बन्द करो और छ या साढे-छः बजे सेगाँव पहुँचो। ऐसा कर सको, तो दोनो पक्ष सध जाये। स्वस्थ शरीरवालेके लिए इतनी मेहनत कुछ भी नही है। दक्षिण आफ्रिकामे मै अपने ऑफिससे सात मील दूर रहता था, और रोज या तो पैदल या बाइसिकिलसे आया-जाया करता था। लेकिन तुम्हारे ऊपर मुझे अधिक बोझ नही डालना है। विचार करके देखना। यह पत्र काकासाहबको दिखाना और जो उचित हो सो करना। काकासाहबके पास तो जाना ही है, इतना निश्चित मानकर बाकी विचार करना। काकासाहब २४ घटे तुम्हारी हाजिरी चाहते हो, ऐसा मै नही समझता। लेकिन अगर ऐसा हो, तो फिर प्रश्न नही उठता। यदि वे तुम्हे अपने साथ सफरमे भी ले जाना चाहे, उस दशामे भी फिर सेगाँवमें सेवा करना सम्भव नही रह जाता। मैने यह कुछ-कुछ अँधेरेमे लिखा है।

बाकी सब ठीक चल रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८३) से।

३५५. तार : बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'को

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

बालकृष्ण
'प्रताप' कार्यालय
कानपुर

पूरा ध्यान दे रहा हूँ।[1] मेहताब[2] मेरा मार्गदर्शन कर रहे हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल ।

३५६. पत्र : जयरामदास दौलतरामको

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

प्रिय जयरामदास,

तुम्हे स्वय नही लिखना चाहिए, बल्कि किसी औरसे लिखनेको कहना चाहिए। न जाने क्यो मुझे ऐसा लगता है कि हैदराबाद जाना गलत है। माताएँ प्राय समझदार कम और स्नेहमयी अधिक होती है। परन्तु यदि उनकी इच्छा पूरी न करनेसे तुम्हारा मन उद्विग्न होता है तो मै समझता हूँ कि तुम्हें जरूर हैदराबाद चले जाना चाहिए। क्या इन्दौर जाना सम्भव नही है? माथेरान क्यो नही? नासिक या देवलाली अच्छे स्थान है। इस दृष्टिसे सिंहगढ भी अच्छा है। और वहाँ तुम्हे दिनशा मेहताकी भी सहायता मिल सकती है। मेरी बड़ी इच्छा है कि तुम शीघ्र ही कोई निश्चय कर लो।

लिखना नही।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२५३) से, सौजन्य. जयरामदास दौलतराम ।

१. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपने तारमें गांधीजीका ध्यान ढेंकानाल सत्याग्रह शिविरमें शरणार्थियों की दुर्दशाकी ओर आकृष्ट किया था।

२. हरेकृष्ण मेहताब।

३५७. पत्र : सुशीला गांधीको

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

चि० सुशीला,

तेरा पत्र अभी मिला। मेरा मौन चल रहा है, इसलिए जवाब तुरन्त दे पाता हूँ। अगर तुझे रोकनेका कारण ममता मात्र हो, तो तेरा दक्षिण आफ्रिका चले जाना ही ठीक होगा। तेरे जानेसे मणिलालको मदद भी मिलेगी। सीताकी तुझे चिन्ता रहती है, मुझे नही। वहाँ भी वह कुछ तो सीखेगी ही। अतः मेरी राय यह है. अगर अकोलामे तेरी सेवाकी जरूरत न हो, तो तू मजेसे दक्षिण आफ्रिका चली जा। यह करना तेरा कर्तव्य है। लेकिन अब तू ठहर ही गई है, तो मणिलालको लिखकर उसकी राय भी जान ले, यही बुद्धिमानी है।

सीताको जो पुस्तक मिली थी, वह उसे पढ़ती है क्या?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९१) से।

३५८. पत्र : चन्दन पारेखको

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

चि० चन्दन,

तेरा पत्र मिला। मैंने तुझे रुपये भेजे या नही? कनु यहाँ नही है। मुझे याद है कि मैंने उससे कह दिया था।

ह० के जो पत्र मेरे पास पडे है, भेज रहा हूँ। तू ही इन्हे रखना। अब इन्हे प्रगट करनेकी जरूरत नही रही। उसने दक्षिणामूर्ति छोड दिया, स्त्री-शिक्षा भी छोड दी। यही हमारी माँग थी। इन पत्रोका तुझपर क्या असर होता है, मुझे बताना। अब ह० को तेरे लिखनेकी कोई जरूरत नही रही। फिर भी, अगर तेरी इच्छा हो, तो लिखना और पत्र मुझे भेजना। मुझे उचित लगेगा, तो भेजूंगा। अब ह० काण्डका बोझ तेरे मनपर नही रहना चाहिए।

अपने अध्ययनमें जुट जाना। तबीयत बिगड़ने न देना। रोज खूब चलनेका ध्यान रखना। वहाँ फल मिलते हैं या नहीं? मसालों और तेलसे बचना।

अपने अक्षर सुधारना। गुजराती भाषामें भी सुधारकी गुंजाइश है। अंग्रेजीमें तो है ही। मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च.]

शंकरका सुन्दर पत्र पैसोंकी पहुँचके बारेमें था।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७)से, सौजन्य सतीश द० कालेलकर।

३५९. पत्र: पुरुषोत्तम के० जेराजाणीको

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

भाई काकुभाई,

सरकारको कम दामपर बेचनेका जो तुमने कारण बताया है वह यहाँ लागू नहीं होता। बड़ा आर्डर मिलनेपर हमें दाम तो कम बताने ही चाहिए, क्योंकि ऐसा करनेमें खर्च भी कम होता है। अब तुमने जो लिख दिया सो ठीक है। मैंने तो भविष्यके लिए सुझाव दिया है। मेरे सुझावके औचित्य-अनौचित्यके विषयमें शंकरलालके साथ बातचीत करना। अन्तमें तुम्हारे अनुभवके सामने मेरी राय तो गौण ही बैठती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८४०) से; सौजन्य पुरुषोत्तम के० जेराजाणी।

३६०. पत्र : सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉनको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

प्रिय मित्र,

मेरे १८ तारीखके पत्रका तुरन्त उत्तर देनेके लिए आपको धन्यवाद।

भेंटके बारेमे यदि आप श्री चुडगरके विवरणको नही मानते तो मुझे आशा थी कि आप अपना विवरण मुझे भेजेंगे। यह मामला इतना महत्वपूर्ण है कि मै इसे यो ही छोड नही सकता। यदि आप चाहे तो चुडगर द्वारा दिये गये विवरणके साथ मै आपका विवरण भी खुशीसे छाप दूंगा।[1]

हृदयसे आपका,

सर डब्ल्यू० बीकम सैंट जॉन
दीवान, जयपुर-राज्य, जयपुर

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३९९। सी० डब्ल्यू० ७८०९ से भी; सौजन्य: घनश्यामदास बिडला।

३६१. पत्र : ना० र० मलकानीको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

प्रिय मलकानी,

महादेव अभी काम नही कर रहे है। और खजाची कनु[2] में अभी इतना बचपना है कि वह भार उठा नही सकता। वह लड़का भला है, पर यदि कोई अपने कर्तव्य पर ध्यान न दे तो कोरी भलमनसाहत किस काम की? चाँदवानीका चेक आते ही मैंने उसे तुम्हारे पास भेजनेको दे दिया था। वह उसे भेजना भूल गया। फिर छुट्टीपर चला गया। आज पूछनेपर उसने निर्लज्जतासे बताया कि उसकी उसे बिलकुल याद ही नही रही। कसूर उसका नही मेरा है। मैंने उसे अच्छी तरह प्रशिक्षित नही किया है।

कृपया क्षमा करना। चेक इस पत्रके साथ ही है।

१. सर बीकमके उत्तरके लिए, देखिए "जयपुर", ३०-१-१९३९।
२. कनु गांधी।

यदि तुम ग्राम-पुनर्निर्माण कार्य पर एकाग्रतासे ध्यान न दे सको, तो इसे लौटा देना। मुझे चाँदवानीके प्रति ईमानदार रहना है। यदि तुम इस कार्यपर अपना सारा ध्यान नही लगा सकते तो मुझसे हर महीने रुपयोकी आशा मत रखो। वैसे हर हालतमे मैं तुम्हे तीन महीने तो रुपये भेजूंगा ही।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३१) से।

३६२. पत्र : सुशीला गांधीको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

चि० सुशीला,

मणिलालका पत्र मै कल ही पूरा पढ़ पाया। वह पत्र इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। लगता है, सीधा आ गया है। इस पत्रको पढकर मुझे यही लगा कि तुझे जो पहला स्टीमर मिले उससे भागना चाहिए। कलका लिखा मैं रद करता हूँ। मणिलालका यह पहला पत्र है, जिससे मुझे सन्तोष हुआ है। तुम दोनोके पत्रोमें सामान्यत. कुछ होता नही। पत्र ऐसे होने चाहिए कि उनमें लिखनेवालेके जीवनकी झलक मिले। यह पत्र मुझे इतना भाया है कि मुझे वापस चाहिए। बा की राय तो है ही कि तुझे तुरन्त मणिलालके पास जाना चाहिए। मैं जब यह राय दे रहा हूँ तब मुझे अकोलाकी जरूरतका भान भी है ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९२) से।

३६३. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

चि० मनुडी,

तुझे मैं खुद पत्र न लिखूं, बल्कि दूसरेसे लिखाऊँ, तो ठीक होगा न? कल शारदासे लिखाया। इसपर दादी नाराज़ हो गई और बोली, "मनुको पत्र लिखने जितना भी समय तुम्हें नही मिलता, और वह लड़की तुम्हारे लिए मरी जाती है।" अब तू मरी जाती है या नही, यह तो तू जाने, लेकिन ले यह पत्र। अपने समाचार तो तू बिलकुल नही लिखती, न सुरेन्द्रको लिखती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५७४) से; सौजन्य: मनुबहन सु० मशरूवाला।

३६४. पत्र : रामीबहन के० पारेखको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

चि० रामी,

तेरी लिखावट कई महीनों (या शायद वर्षों) बाद देखी। तू लिखती रहे तो अच्छा लगे। मैं तो काममें लगा रहता हूँ, न भी लिखूं, तब भी तुझे लिखना ही चाहिए। बच्चो-सहित तुम दोनों मजेमें होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२७) से।

३६५. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला था। नैतिक दृष्टिसे तो तुम्हारे कामकी सफाई नही दी जा सकती। तुम किसान नही माने जा सकते। बल्कि ऐसा कहा जा सकता है, कि किसान न होते हुए भी, तुमने किसान माने जानेके लिए जाल रचा। लेकिन अपने इस काममे तुम्हे अनीतिकी गध नही आई, तो अभी तो कुछ करने-जैसा नही लगता। जल्द-से-जल्द बोर्डसे अलग हो जाओ, यह शायद उचित होगा। इस सम्बन्धमे कानूनको ठीक समझनेवाले किसी वकीलसे पूछ कर, वह जैसा कहे वैसा करो। यही सबसे अच्छा उपाय मालूम होता है।

शिकायत करनेवालेको मै कोई जवाब नही देना चाहता। वह इन बारीकियोको नही समझेगा।

रामजीभाईके बारेमे समझा।

चमडे और मरे ढोरोके बारेमें तो मुझे याद नही है। महत्वकी बात हो, तो फिर लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७१०) से, सौजन्य · डाह्याभाई म० पटेल।

३६६. पत्र : अमतुस्सलामको

बारडोली
२२ जनवरी, १९३९

प्यारी बेटी,

तेरी चिट्ठी मिली। मै क्या कहू? बा दुखी है सही। वह चाहती है तू जल्दी आ जा। मै नही चाहता। मै चाहता हू कि वहा तेरा काम है तो नही आना। भाइयोके पास भी जाना चाहीये। मेरे सिवाय नही रह सकती वह पागलपन है। फिर तो जैसा चाहे सो कर।

मेरे शकके बारेमे क्या लिखु? मेरे निकालनेसे नही निकलेगा। वखत ही निकाल सकता है। अपने आप घुसा है और जाना है तो अपने आप जायगा। तू

स्थिर हो जायगी। अपना फर्ज अदा करेगी तो शक निकल ही जायगा। कोई न कोई खत तो तुझे मिला करेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४११) से।

३६७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

बारडोली
२१ जनवरी, १९३९

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारे दोनो खत मिले।

भाईको अच्छा होगा, दिल्लीके . . .[1]के बारेमें समजा।

दिल्लीके नजदीक दा० गोपीचद काम करे तो भले करे।

प्रार्थना भवनमे ज्यादा पैसा हरिजन आश्रम देवे उसमे क्या हानि हो सकती है? यह तो स्वीकार्य मानना चाहीये। उसमे विचार करनेकी आवश्यकता नही है।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। यहा काफीसे अधिक काम रहता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७६) से।

३६८. देशी राज्य

देशी राज्योमे स्वतन्त्रताका आन्दोलन एक नया रूप धारण करता जा रहा है। इतिहासकी पुनरावृत्ति होनेवाली है। तालचेर और ढेकानालने दमनमे सबसे बाजी मार ली है। तालचेरकी कुल ७५,००० की आबादीमें से २६,००० आदमी तालचेर छोडकर ब्रिटिश उडीसामे चले गये है। यह कोई मामूली बात नही है। इन शरणार्थियोको जो तकलीफे बरदाश्त करनी पड़ रही हैं, प्रो० रगाने उनका हृदय-विदारक विवरण प्रकाशित किया है। महान समाज-सुधारक और परोपकारी ठक्कर बापाने भी, जो कहींसे भी आर्तवाणी सुनाई पड़ते ही सहायताके लिए पहुँच जाते है, उनकी बातोका समर्थन किया है। कोई दो महीनोसे वे लोग निर्वासित हैं। मैंने आशा की थी कि वे अपने घरोको लौट गये होंगे। लेकिन मालूम पड़ता है कि इन लोगोके भाग्यमे अभी भी शान्ति नही बदी है।

१. मूलमें शब्द स्पष्ट नही है।

अकेले उडीसाके लिए यह सम्भव नही है कि वह इनकी सहायताका काम सँभाल ले। उडीसाकी सरकारके पास इतना रुपया नही, जो इनके लिए खर्च कर सके। इसलिए मै उम्मीद करता हूँ कि मारवाडी रिलीफ सोसायटी शरणार्थियोके लिए कोई काम ढूँढकर उनकी सहायताका भार अपने ऊपर ले लेगी।

राणपुरमे पोलिटिकल एजेटकी हत्या हो गई है।[1] इसलिए पुलिस और फौज निर्दोष स्त्री-पुरुषोके ऊपर मनमाने जुल्म कर रही है। मै उम्मीद करता हूँ कि उड़ीसाकी सरकार परिस्थितिका दृढतासे मुकावला करेगी और साम्राज्यीय सत्ताको मनमानी न करने देगी। साम्राज्यीय सत्ता तो अपने वर्गके किसी आदमीको उन परिस्थितियोमे खोते ही अपनी वुद्धि खो वैठती है, जिन परिस्थितियोमें मेजर वजलगेटकी दुर्भाग्यपूर्ण हत्या हुई है। इस हत्यासे हमको यह जान लेना चाहिए कि ऐसे कृत्योसे जनताको कोई लाभ नही हो सकता।

जयपुर रियासत जयपुरियोको ऐसी शिक्षा देना भी वरदाश्त नही करती जिससे वे उत्तरदायी शासनकी माँग करे, उसके योग्य वने, और अव वह अपने ही एक सर्वोत्तम पुत्रको जिन्दा ही दफना देना चाहती है।

राजकोटके ठाकुरसाहव जो वात कह चुके, उसीसे उनको मुकरवाने और प्रजाको गम्भीरताके साथ दिये उनके वादेको तुड़वानेमें उनके सलाहकारोको कोई पशोपेश नही होता। इस सम्वन्धमें मेरे पास जो सवूत है, यदि उनपर विश्वास किया जाये, तो पश्चिमी रियासतोके रेजिडेण्ट खुद ही इस वचन-भगमें शामिल है। उसके लिए तो कांग्रेस और सरदार एक वला है। राजकोटमें हिन्दू-मुसलमानो तथा आम जनता और भायातोके वीच झगड़े करानेके लिए भूमिका तैयार की जा रही है। यो इनमेंसे कोई भी अभी तक आपसमे नही लड़ा है। आशा है कि मुसलमान और भायात खुद अपनी मुक्तिके दुश्मन सावित नही होगे। सुधारकोका काम तो स्पष्ट है। उन्हे सभी तरहके सघर्षोको रोकना चाहिए और मौका पड़नेपर अपने ही आदमियोके हाथो मरनेके लिए तैयार रहना चाहिए। अहिंसात्मक असहयोगके हथियारका प्रयोग उन्होने अद्भुत सफलताके साथ किया है। अव भी चुपचाप वैठे हुए वे पूरी तरह इसको अपना सकते है। असली मौलिक तो प्रजा ही है, राजा और राज्याधिकारी तो उसके नौकर है, जिनका काम अपने मालिकोकी इच्छाका पालन करना है। जागृत और सचेत प्रजाके लिए, जो एकमतसे सोचना और काम करना जानती है, यह वात अक्षरश सत्य है।

अन्य रियासतोकी प्रजासे मै प्रार्थना करूँगा कि वह आगे वढ़नेमें जल्दवाजीसे काम न ले। वह धैर्य और सयमसे काम लेगी, तो स्वतन्त्रता उसे मिलकर रहेगी। उसे चाहिए कि आपसमें मिल-जुलकर रहे और अपनी शक्तिको समझे। आपसी मतभेद उसमे नही रहने चाहिए। फूट डालकर शासन करनेकी अनुत्तरदायित्वपूर्ण भेद-नीतिका किस तरह मुकावला किया जाये, इसका उसे ज्ञान होना चाहिए। सुधारक अहिंसाकी कलामे प्रवीण हो तो यह कोई मुश्किल वात नही है।

१. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोको", पृ० ३३५।

त्रावणकोरवाले जरा सावधान रहे। इस बातका मेरे पास काफी सबूत मौजूद है कि वहाँ हिन्दुओ, ईसाइयों और एजवाओमे फूट डालनेकी कोशिश हो रही है। उन्हे उत्तरदायी शासन प्राप्त करना है, तो इस बात को भूल ही जाना होगा कि वे भिन्न-भिन्न जातियोके है। उन्हे यह सीखना होगा कि वे एक और अखण्ड राजनैतिक इकाई है और हिंसाकी सभी शक्तियोपर नियन्त्रण रखना होगा। यदि उन्हे अहिंसात्मक उपायोसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है तो सारे त्रावणकोरमे पुलिसकी मददके बगैर शान्ति बनाये रखनेकी जिम्मेदारी भी उन्हे उठानी होगी। अज्ञानी जनतामे प्रचार करनेके लिए सभा और जलूस आवश्यक है। लेकिन नागरिकताके अपने कर्तव्यको समझनेवाली जागृत जनताके लिए उनकी कोई जरूरत नही है। स्वराज्य जागृत जनताके ही लिए है, निद्राग्रस्त और अज्ञानी जनताके लिए नही है।

बारडोली, २३ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-१-१९३९

३६९. अन्दरकी गन्दगी

मेरा और मेरे साथियोका बहुत-सा वक्त कांग्रेसजनोमें व्याप्त भ्रष्टाचारकी शिकायतो पर ध्यान देनेमे जाता है। इस तरहके पत्रोका एक ताजा नमूना बम्बईके एक कांग्रेसीने भेजा है। वह लिखते है[1]

> पिछले इतवारको बम्बईमें त्रिपुरी-कांग्रेसके लिए प्रतिनिधियोंका चुनाव हुआ था। मतदान सवेरे ८ बजेसे शुरू होनेवाला था। मैं कोई पौने नौ बजे कांग्रेस-भवन पहुँचा, लेकिन यह जानकर तो मैं हैरतमें आ गया कि इस ४५ मिनटके थोड़े-से समयमें ही कोई मेरे नामसे मतदान कर चुका था। और भी बहुतों को ऐसा ही अनुभव हुआ। मैंने इसका पता लगानेकी कोशिश की और यद्यपि (जैसी आशा थी) ऐसा करनेवालेका तो मैं पता नही लगा सका, मगर मुझे मालूम हुआ कि दूसरोंके नामसे मतदान करनेका यह काम नियमित रूपसे संगठित था और मतदान शुरू होते ही सामूहिक रूपसे शुरू हो गया था। ऐसी हालतमें यह स्वाभाविक ही था कि जो लोग आध घंटेकी भी देरीसे आये, उन्हे निराश होना पड़ा, क्योंकि इस बीच उनके नामसे मतदान हो चुका था।
>
> इस गन्दगीको रोकनेके लिए अनेक उपाय आपको सुझाये जा चुके है, लेकिन मेरी नम्र सम्मतिमें जब तक हम मतदाताओको मतकी पर्ची देनेसे पहले अपनी सदस्यताके कार्ड पेश करनेकी और उनपर बाकयदा मुहर लगवानेकी पद्धति न डालेंगे, तब तक इस बारेमें कुछ नहीं हो सकता। . . .

१. यहाँ पत्रका एक अंश ही उद्धृत किया जा रहा है।

इस पत्रमें सुझाई हुई बात बिलकुल ठीक है। मेरा तो यही खयाल था कि अपनी शिनाख्तका कार्ड पेश करनेपर ही हरएक मतदाताको मत देने दिया जाता है।

मगर उपर्युक्त पत्रको उद्धृत करनेमे मेरा मशा सिर्फ यही नही है कि बम्बईमें होनेवाली जालसाजीकी ओर ध्यान आकर्षित करके उसको रोकनेका उपाय बताये। यह पत्र तो एक तरहका सकेत है। जाली मत देनेके अलावा कांग्रेस-रजिस्टरोमें भी पूरी गडबड़ की जाती है और उनमे जाली नाम दर्ज रहते है। इन रजिस्टरोकी वही कीमत है जो जाली सिक्कोसे भरी हुई तिजोरीकी हो सकती है। काग्रेसके चुनावोमे झगडा होनेकी बात आम होती जा रही है। काग्रेसजनोकी अनुशासनहीनता हर जगह बढती ही जा रही है। उनमे से अनेक तो ऐसे भाषण देते है जिनमे न केवल उत्तरदायित्वकी भावना नही होती बल्कि जो हिंसात्मक भी होते है। बहुत-से सदस्य हिदायतोका पालन नही करते। बिहारका उदाहरण इस समय उल्लेखनीय है। बिहारके किसान काग्रेसी समझे जाते है। उनके नेता काग्रेसी है। लेकिन बिहारके मन्त्रियोको किसानोके विद्रोह तथा प्रदर्शनका सदा भय बना रहता है। अभी दो दिन पहलेकी बात है, जब खानदेशसे एक सुप्रसिद्ध काग्रेसी कार्यकर्ताके नेतृत्वमें कलेक्टरके बगलेपर किसानोके प्रस्तावित कूचकी तार द्वारा खबर मिली थी। इसी तरहके और भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते है।

रोमके पतनसे बहुत पहले उसका ह्रास शुरू हो गया था। जिस काग्रेसकी परवरिश पचास सालसे अधिक वर्ष तक देशके सर्वोत्तम मस्तिष्कवाले लोग करते रहे है, वह अपने अन्दर ह्रास शुरू होते ही नष्ट नही हो जायेगी। और अगर भ्रष्टाचारका वक्त पर ही मुकाबला कर लिया जाये, तब तो उसके नष्ट होनेकी कोई जरूरत ही नही है।

मेरी रायमें काग्रेसके सामने सबसे बड़ा काम इस चतुर्मुखी ह्रासका मुकाबला करना है। अपने लक्ष्यसे अभी भी हम बहुत दूर है। जब तक कि हमें अपने साधनों और उनके अर्थ तथा फलितार्थोका ही ठीक निश्चय न हो तब तक उसकी ओर हम बढ़ ही नही सकेंगे। और जब परीक्षाकी घडी सचमुच आयेगी तब हम उसके लिए तैयार नही मिलेगे। उस हालतमे अगर मुझे सत्याग्रहियोकी किसी सेनाका नेतृत्व करनेके लिए कहा गया तो मै उस बोझको नही उठा सकूंगा। यह एक बहुत बड़ी बातको स्वीकार करना है। लेकिन मै अगर ऐसा न करूँ तो मै कायर ही नही बल्कि उससे भी बड़ा अपराधी ठहराया जाऊँगा। जनसाधारणमे तो अहिंसाका भाव काफी परिमाण मे मौजूद है, लेकिन जिन्हे जनसाधारणका संगठन करना है उनमे वह काफी परिमाण मे नही है। और जिस तरह अपनी तिजोरीमे कुछ न होनेपर कोई बैंकर बैंक नही चला सकता, उसी तरह जब तक बिना टालमटोल आज्ञा-पालन करनेवाले सैनिक न हो, तब तक कोई सेनापति किसी लड़ाईका सचालन भी नही कर सकता।

किसी काग्रेसीको मुझे इस तरह सोचनेके लिए दोष नही देना चाहिए। काग्रेसमें न होते हुए भी मैंने उससे अपना सम्बन्ध नही तोडा है। कार्ग्रेसवाले अब भी मुझसे उम्मीद करते है कि जब मेरी रायमे कुछ करनेका अवसर आये तब मै

उनको आह्वान करूँ। यही नही, यदि ईश्वर चाहेगा तो मै समझता हू कि मैंने अबतक जो लड़ाइयाँ लड़ी है उनसे भी ज्यादा जबरदस्त लड़ाईका नेतृत्व करनेकी मुझमे शक्ति और सामर्थ्य है। लेकिन रास्तेमे बड़े-बडे रेगिस्तान है। उनमें से एकका मैंने यहाँ उल्लेख किया है जिसे कांग्रेसवाले देख सकते है, जिससे निपट सकते है। मेरे परदा उठाकर इस गन्दगीको लोगोके सामने ले आनेसे कांग्रेसका कोई नुकसान नही होगा। हाँ, यदि इस बातको जानते हुए भी मै लोगोसे छिपाऊँ, तो जरूर नुकसान होगा।

इस समय कांग्रेसकी जो हालत है उसमे मुझे देशके अन्दर अराजकता और सर्वनाश फैलनेके सिवा और कुछ होता नजर नही आता। क्या त्रिपुरीमे हम इस कठोर सत्यका सामना करेंगे?

बारडोली, २३ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २८-१-१९३९

३७०. 'कितने भगवत्परायण!'

कुमारी म्यूरियल लेस्टर, जो दुनिया घूमी हुई है, और गोलमेज सम्मेलनके दिनोमे [लन्दनके] ईस्ट एण्डमें मेरी मेजवान थी, आजकल सीमाप्रान्तमे है। बादशाह खानसे मिलनेके बाद वे उनके बारेमे लिखती है:

> अब मुझे खान अब्दुल गफ्फार खाँको भलीभाँति जान लेनेके बाद, मैं ऐसा महसूस करती हूँ कि जहाँ तक अद्भुत व्यक्तियोंसे मिलनेका सवाल है, इस तरहका सौभाग्य मुझे अपने जीवनमें शायद कोई और नहीं मिलनेवाला है। वे 'न्यू टेस्टामेंट' की सौम्यतासे युक्त, 'ओल्ड टेस्टामेंट' के राजकुमार है। वे कितने भगवत्परायण है! आपने उनसे हमारा परिचय सम्भव कराया, इसके लिए मैं आपकी आभारी हूँ।
>
> वे कल हमें उटमंजई ले जा रहे है। मीरासे फिर भेंट करके खुशी होगी।

यह वैयक्तिक प्रमाण-पत्र यदि मुझे एक असन्तुलित मनकी अतिरंजना लगता, तो मै इसे कभी प्रकाशित न करता। यह सच है कि म्यूरियल लेस्टर जिससे मिलती है, तुरन्त उसके उज्ज्वल पक्षको देख लेती है। यह कोई दोष नही, बल्कि एक गुण है। कोई भी व्यक्ति, भगवत्परायण मनुष्य भी, दोषसे मुक्त नही है। वह भगवत्परायण इसलिए नही है कि वह दोषमुक्त है, बल्कि इसलिए है कि वह अपने दोषोंको जानता है, उन्हे दूर करनेका प्रयास करता है, वह उन्हें छिपाता नही है और अपने-आपको सुधारनेके लिए सदा तैयार रहता है। खानसाहब, जो अपनेको खुदाई खिदमतगार कहनेमे गर्वका अनुभव करते है, ऐसे ही है। वे एक निष्ठावान मुसलमान है जिनकी नमाजो और रोजोमें कभी कोई नागा नही होता। 'कुरान' की उनकी व्याख्या इतनी उदार है जितनी मैंने अब तक नही देखी थी। खुदाई खिदमतगारोमें कताई

आदि चालू करनेके लिए मैंने उन्हे जिन कार्यकर्ताओंकी सेवाएँ पेश की उसमे से उन्हे एकको चुनना था। उन्होने जानबूझकर मीराबाई, मेडेलीन स्लेड,को चुना। वह अभी तक उसी घरमें रह रही थी जिसमे खानसाहब रहते हैं और अब खानसाहबके घरसे लगे कमरोमे रह रही है। वहाँ वह अपनी कक्षा चलाती है। वह मुझे प्राय. नित्य पत्र लिखती है। यद्यपि वह जिनसे प्रेम करती है उन्हे बख्शती नही, फिर भी मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि म्यूरियल लेस्टरके मन पर इस महामना फकीरकी जो पहली छाप पडी है, उसकी उसके [मीराके] पत्रोसे भी पुष्टि होती है। फिर भी अग्रेज अधिकारियोके लिए इस व्यक्तिका कोई उपयोग नही है। वे इससे डरते हैं और इसपर अविश्वास करते हैं। यह अविश्वास वैसे मुझे बुरा न लगता, पर इससे प्रगतिमे बाधा पड़ती है, इससे भारत और इग्लैडकी हानि होती है और इस तरह विश्वकी भी होती है।

बारडोली, २३ जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २८-१-१९३९

३७१. इस्लामी संस्कृति

एक महान मुसलमान सज्जनने मुझसे उस दिन कुछ ऐसे प्रश्न पूछे, जो मुझे अजीब-से मालूम हुए। अजीब इसलिए कि मेरा तो यह खयाल था कि हरएक मुसलमान जो मुझे जानता है — और यह महान मुसलमान सज्जन भी मुझे जानते है — वह मेरे बदले उनका जवाब दे सकता था। वह सवाल-जवाब यह हैं:

प्र० : मुसलमानोके लिए क्या आप अब भी वही है, जोकि दक्षिण आफ्रिकामें थे — यानी उनके मित्र, पिता और रहनुमा।

उत्तर : मैंने दक्षिण आफ्रिकामे उनका या और किसीका पिता होनेका कभी दावा नही किया। उनका रहनुमा और दोस्त मैं बेशक था। (मै यहाँ यह कह दूं कि वहाँ मुसलमान और दूसरे लोग मुझे 'भाई' कहकर पुकारते थे।) चौबीस साल पहले दक्षिण आफ्रिकामे मैं उनके लिए जो था आज भी बिलकुल वही हूँ। दूसरे भारतवासियोकी तरह मुसलमानोको भी मै सहोदर भाई समझता हूँ। जिन आम और खास अधिकारोके अन्य भारतवासी हकदार है, उनका मुसलमानोको भी हक है।

प्र० : तो जिस तरह आप अपनी हिन्दू-संस्कृतिकी उन्नति चाहते है, उसी तरह क्या आप उनकी संस्कृतिकी भी तरक्की चाहते हैं?

उत्तर : बेशक। इसके विपरीत मैं कुछ और कर ही नही सकता, क्योकि मेरा विश्वास है कि इस्लाम और दूसरे महान धर्म उतने ही सच्चे है, जितना सच्चा कि मेरा अपना धर्म है। इस्लाम और ईसाई धर्म अपने साथ जो सस्कृतियाँ यहाँ लाये, उनसे भारत और समृद्ध हुआ है। मौजूदा परस्पर-विरोधकी भावनाएँ, मेरी रायमें, टिकनेवाली नही है।

प्र० : आपकी इजाजत से मैं जरा साफ बात कहूँगा। अकबर जो सपना देखा करता था, उसमें मेरा विश्वास नहीं है। वह सब मजहबोंको मिलाकर एक नया धर्म स्थापित करना चाहता था। क्या आपका भी वैसा ही कोई ध्येय है?

उत्तर : मुझे पता नही कि अकबर कैसा सपना देखा करता था। सब मजहबोको एक बनानेका मेरा कोई इरादा नही है। हरएक धर्मका मानवीय विकासमे अपना खास योगदान है। ससारके बडे-बडे धर्मोको मै एक ही वृक्षकी अनेक शाखाएँ मानता हूँ। हालाँकि ये निकली एक ही वृक्षसे है, पर एक शाखा दूसरी शाखासे भिन्न है।

प्र० : आप मुझे बतायेंगे कि हिन्दुस्तानी जबानसे आपका क्या मतलब है? क्या आप एक सामान्य शब्दकोशके पक्षमें है?

उत्तर जरूर। मेरा खयाल है कि मौलवी अब्दुल हक साहबने एक ऐसा शब्दकोश तैयार किया है जिसमे उर्दूके उन तमाम शब्दोंको ले लिया गया है जो काशीके शब्द-सागरमे मिलते है, और हिन्दीके उन शब्दोको लिया है, जो उस्मानिया लुगतमे पाये जाते है। मौलवी साहबके शब्दकोशको स्वीकार कर लेनेके लिए मैने काग्रेससे सिफारिश की है। और नये शब्द दाखिल करनेके लिए मैने मौलाना अबुल कलाम आजाद और राजेन्द्रबाबूका एक बोर्ड बना देनेकी तजवीज रखी है।

प्र० : सरहदी जनजातियोंके बारेमें आपका क्या खयाल है? आपको यह तो मालूम ही है कि वे लोग ब्रिटिश हुकूमतके नीचे रौंदे जा रहे हैं? क्या आप इस पक्षमें हैं कि हिन्दुस्तानसे उनके सम्बन्धोंका नियमन सीमाप्रान्तकी इच्छाके अनुसार हो?

उत्तर. अवश्य। इस दिशामे मैं प्रयत्न कर रहा हूँ। मैने तो कई बार सार्वजनिक रूपसे कहा है कि हिन्दुस्तानको उनके साथ विश्वास और मित्रताका सम्बन्ध जोडना चाहिए, उन्हे उसे अपना कुदरती दुश्मन नही समझना चाहिए। मैं उनके बीचमे खुद जानेकी कोशिशमे हूँ और बादशाह खानके लिए भी इजाजत लेनेका प्रयत्न कर रहा हूँ।

उन्होने कुछ और भी प्रश्न पूछे, पर वे सर्वसाधारणके लिए उतनी दिलचस्पीके प्रश्न नही है, जितने कि वे प्रश्न जिनके जवाब मैने ऊपर दिये है। और जहाँ तक मै जानता हूँ, उनमे वाद-विवादकी भी कोई बात नही है। मुझे यहाँ यह भी कह देना चाहिए कि साम्प्रदायिक एकतामे मेरा जो विश्वास था वह अब भी है। मेरा जीवन अब भी उसके लिए अर्पित है। यद्यपि कोई-न-कोई राजनीतिक समझौता तो होना ही है, पर बगैर हृदयकी एकताके मुझे उससे सन्तोप नही होगा। और स्थायी मित्रता या भ्रातृत्वका आधार अगर अहिंसा नही होगी, तो हृदयकी एकता की कल्पना भी नही की जा सकती।

बारडोली, २३ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-१ १९३९

३७२. तार : जमनालाल बजाजको

वारडोली
२३ जनवरी, १९३९

जमनालाल बजाज
मार्फत कानोडिया
कलकत्ता

समय निश्चित कर रखा गया है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१०

३७३. पत्र : अमतुस्सलामको

वारडोली
२३ जनवरी, १९३९

प्यारी बेटी,

तेरा खत मिला। कैसा खत? दूर बैठी भी काटती है। तेरी चिंता मैं क्यों करूं। भगवान सबकी करता है।

ताज़ुबी है मृदुलाबहन नही मिली।

मेरी तबीयत अच्छी है। १६०/९४ दोपहरको था।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२) से।

३७४. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

बारडोली
२३ जनवरी, १९३९

प्रिय भगिनि,

तुमारे दोनो खत मिले है। लेख 'हरिजन' मे प्रगट होगे।[1] मैंने ही तो मागे थे ना? मै दूसरेकी राह देख रहा था। वह अच्छी होगी। बा अच्छी है।

बापुके आशीर्वाद

रामेश्वरी नेहरू
पाकपट्टम
पंजाब

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८७) से। सी० डब्ल्यू० ३०८३ से भी; सौजन्य . रामेश्वरी नेहरू।

३७५. भेंट : 'टाइम्स ऑफ इंडियाके प्रतिनिधि'को

बारडोली
२४ जनवरी, १९३९

प्रतिनिधि द्वाराके यह पूछनेपर कि पिछले सप्ताहके 'हरिजन' में आपके इस कथनका क्या अभिप्राय है कि "यदि जयपुरके अधिकारी इस जिदपर अड़े रहे कि सेठ जमनालाल बजाजको रियासतमें प्रवेश नहीं करने दिया जायेगा तो अखिल भारतीय संकट खड़ा हो जायेगा,"[2] गांधीजी ने कहा :

सेठ जमनालाल जयपुरकी प्रजा होते हुए भी अखिल भारतीय स्तरके आदमी है। वे काग्रेस-कार्यसमितिके सदस्य भी है और यह तो सभी स्वीकार करेगे कि वे मूलत: एक शान्तिप्रिय व्यक्ति है। वे उस सगठनके प्रधान है जो पिछले कुछ सालोंसे जयपुरमे कार्य करता आ रहा है और जिसे काम करनेकी अनुमति भी दी गई है। इसकी गतिविधियोमे कभी कुछ भी गुप्त नही रहा है। इस संगठनमे गम्भीर प्रकृतिके

१. इन्हें १८-३-१९३९, १-४-१९३९, १५-४-१९३९, २९-४-१९३९, ६-५-१९३९, और २०-५-१९३९ के हरिजन में प्रकाशित किया गया था।

२. देखिए "जयपुर", पृ० ३३१-३२।

प्रसिद्ध कार्यकर्ता है जिन्होने पुरुषों और महिलाओ दोनोके बीच काफी ज्यादा रचनात्मक कार्य किया है। जयपुरमे शासन-तन्त्रकी बागडोर एक प्रसिद्ध राजनैतिक-सैनिक-अधिकारीके हाथमे है, जमनालालजी और उनके सघ अर्थात् जयपुर राज्य प्रजा मण्डलके विरुद्ध घोषित प्रतिबन्धके बारेमे रियासतकी नीतिका निर्धारण और सचालन वही कर रहे हैं। मै यह मानता हूँ कि जयपुरके प्रधानमन्त्री, सर वीकम सेट जॉन, इस सम्बन्धमें जो भी कर रहे हैं, केन्द्रीय सत्ताकी कम-से-कम मौन स्वीकृतिके बिना नही कर रहे होगे, क्योकि उसकी अनुमतिके बिना वह जयपुर-जैसी महत्त्वपूर्ण रियासतके प्रधानमन्त्री भी नही बन सकते थे।

यदि जयपुरके अधिकारियोकी कार्यवाहीसे एकाएक प्रथम श्रेणीका सकट पैदा हो जाये तो ऐसा नही हो सकता कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस और सारा भारत उदासीन भावसे चुपचाप देखता रहे और वहाँ जमनालालजी बिना किसी अपराधके जेलमे बन्द कर दिये जाये और प्रजामण्डलके सदस्योसे भी ऐसा ही व्यवहार किया जाये। ताकत होते हुए भी काग्रेस यदि इसका उपयोग नही करती और जयपुरकी जनताको इस प्रकार अपने समर्थनके लाभसे वचित करके उनकी भावनाका दमन होने देती है तो वह अपने कर्तव्यकी अवहेलना करेगी। मेरे इस कथनका कि जयपुर या राजकोटमे जो-कुछ हो रहा है, उससे अखिल भारतीय सकट पैदा हो सकता है, यही अर्थ है।

मेरी तो राय यह है कि काग्रेस द्वारा हस्तक्षेप न करनेकी नीति तब तक राजनीतिमत्ताका श्रेष्ठ उदाहरण मानी जा सकती थी जब तक कि रियासतोके लोगोमें जागृति नही आई थी। लेकिन इस समय जब रियासतोके लोगोमे चहुँमुखी जागृति है और अपने न्यायसगत अधिकारोको स्थापित करनेके लिए वे लम्बी अवधि तक कष्ट सहनेको तैयार है तो अब वह नीति कायरताकी द्योतक होगी। यदि एक बार यह चीज़ समझ ली जाये तो सारे भारतमे जहाँ भी कही स्वतन्त्रताके लिए सघर्ष होता है, यह सारे भारतका सघर्ष माना जायेगा। जहाँ कही काग्रेस ऐसा समझती है कि उसका हस्तक्षेप करना उपयोगी होगा वहाँ इसे हस्तक्षेप अवश्य करना चाहिए।

गांधीजी से एक और प्रश्न पूछा गया: एक संस्थाके रूपमें कांग्रेसका और विभिन्न प्रान्तोके कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोका एक ऐसे मसलेपर संकट खड़ा करना कहाँ तक उचित माना जा सकता है जिसका सम्बन्ध महज एक रियासतसे ही है? इसके उत्तरमें गांधीजी ने कहा:

मान लीजिए कि ब्रिटिश भारतके किसी खास जिलेमे जिलाधीश उस जिलेके लोगोकी हत्या कर दे तो क्या काग्रेसके लिए हस्तक्षेप करना और अखिल भारतीय स्तर पर सकट खड़ा कर देना उचित नही होगा? यदि इसका उत्तर 'हाँ' हो तो हस्तक्षेपके विषयमे काग्रेसके आचरणकी जाँच करनेके लिए जयपुरके मामलेमे भी यही बात लागू होती है। यदि काग्रेसने ऐसा प्रस्ताव न किया होता कि वह [रियासतोमे] हस्तक्षेप नही करेगी तो वास्तवमे यह सवाल ही न उठता। इसलिए बिना सोचे-समझे बात करनेवाले लोग मुझपर बहुत बार यह आरोप लगाते है कि मैंने यह क्यो कहा

था कि भारतीय रियासते संवैधानिक दृष्टिसे हमारे लिए विदेशी राज्यो-जैसी है। मै यह आरोप स्वीकार नही करता। मै रियासतोमे घूमता रहा था और मुझे ठीक पता था कि रियासतोके लोग अभी तैयार नही है।

जिस क्षण वे लोग तैयार हो गये, कानूनी, सवैधानिक और कृत्रिम सीमाएँ नष्ट हो गई। यह वहुत वडा नैतिक प्रश्न है। कानूनी या सवैधानिक औचित्य और इसी तरहकी दूसरी चीजे अपने-अपने क्षेत्रमे तो सही है परन्तु मानव-मनके इन कृत्रिम वन्धनोको तोडकर ऊपर उठते ही ये चीजे मानव-प्रगतिमे वाधक वन जाती है। मै अपनी आँखोके सामने आज यही चीज होते देख रहा हूँ। किसी वाहरी प्रेरणाके विना ही मुझे यह सूझा कि समय आ गया है जव काग्रेसको इस तरहका हस्तक्षेप करना चाहिए जैसाकि आप देख रहे है। और यदि काग्रेसने नैतिक शक्तिका जो दर्जा हासिल किया है उसे वह कायम रखती है, दूसरे शब्दोमे, यदि काग्रेस अपनी अहिसाकी नीतिका पालन कर पाती है, तो यह हस्तक्षेप मजिल-दर-मजिल वढता ही जायेगा।

लोग कहते है कि मैने अपना दृष्टिकोण वदल दिया है और जो-कुछ मैने सालो पहले कहा था अव मै उससे उल्टा कहता हूँ। सच्चाई यह है कि मै वही हूँ परन्तु परिस्थितियाँ वदल गई है। मेरी वाते और कार्य सामयिक परिस्थितियो द्वारा प्रेरित होते है। मेरे वातावरणमे क्रमश विकास होता रहा है और एक सत्याग्रहीके रूपमे मै उससे प्रभावित हुआ हूँ।

प्रतिनिधिने गांधीजी का ध्यान राजकोट और बड़ौदाकी हालकी घटनाओंकी ओर दिलाया जहाँ अल्पमतवाले लोग कांग्रेसके हुक्म चलानेके रवैयेके खिलाफ विरोध प्रकट कर रहे हैं। गांधीजी ने उत्तरमें कहा कि इन घटनाओंसे वे विचलित नहीं हुए हैं। उन्होंने कहा :

चूँकि इस वक्त साम्प्रदायिक मनमुटाव है इसलिए स्वतन्त्रता-आन्दोलन वापस ले लिया जाये या उसे फिलहाल रोक लिया जाये, ऐसा नही हो सकता। मुझे दिखाई दे रहा है कि इतिहास अपने-आपको दुहरा रहा है और सत्ताधारी, जिन्हे कि पीछे हटना पड़ रहा है, अपना होश खो वैठे है और [जनतामे] अन्दर-ही-अन्दर झगड़े खडे कर रहे है और मतभेद उभार रहे है। उन्हे आशा है कि वे इन मतभेदोके द्वारा अपनेको जैसे-तैसे सत्तामे वनाये रख सकेगे। यदि लोगोको यह पता हो कि अहिसाकी पद्धति किस तरह काममे लाई जाती है तो इस तरह काम करनेवाली शक्तियाँ हतवुद्धि हो जायेगी और जनताकी विजय होगी।

उदाहरणके लिए, यदि राजकोटके लोगोको स्वतन्त्रता मिल जाये तो वहाँके मुसलमानोको सव प्रकारसे लाभ ही होगा। आज वे वहाँके शासकोंकी नही अपितु उनके सलाहकारोकी मर्जी पर निर्भर है। कल वे जनताके साथ उसके अधिकारोमे हिस्सेदार होगे, क्योकि वे भी तो प्रजा ही है। लेकिन मै सचमुच ऐसा नही मानता कि राजकोटमे मुसलमान वास्तवमे विरोध कर रहे है। यह वात मै निजी अनुभवके आधारपर जानता हूँ कि हिन्दुओके साथ उनके वहुत अच्छे सम्वन्ध है। तीन महीनेके

संक्षिप्त किन्तु शानदार सघर्षके दौरान राजकोटके हिन्दुओ और मुसलमानोमें कोई मतभेद नही रहा। चाहे मुसलमान ज्यादा सख्यामे जेल न गये हों, लेकिन सामूहिक रूपसे उन्होने सघर्षका समर्थन किया।

बड़ौदाका यह दुर्भाग्यपूर्ण झगड़ा सचमुच मेरी समझमे नही आता। मै अभी इतना हतप्रभ हूँ कि वस्तुस्थितिको पूरी तरह समझ नही पा रहा हूँ। लेकिन इस मामलेमे भी मै यही कहूँगा कि यदि वड़ौदामे स्वायत्त शासन हो जाता है तो महाराष्ट्रीयोको क्या हानि हो सकती है? उनमे इतनी ताकत है कि वे अपने अधिकारोकी रक्षा कर सकते है। यह बात नही है कि तथाकथित बहुसख्यक गुजराती उन्हे कुचल डालेगे और यदि बहुसख्यक लोगोको रियासतकी नौकरियोमे अपने हिस्सेके चन्द टुकड़े मिल भी जाये, तो यह कोई ऐसी बात नही है जिसके कारण महाराष्ट्रके लोग स्वतन्त्रताके संघर्षमे भाग नही ले। इसलिए यद्यपि मै इस झगड़ेकी तह तक नही जा सका हूँ तो भी जब तक सुधारक अहिंसक बने रहते है और महाराष्ट्रीयोकी कार्रवाईकी वजहसे उनके प्रति अपने मनमे कोई दुर्भाव नही लाते है तब तक मुझे इसमे कोई खतरा नही लगता। जहाँ तक वड़ौदाका सम्बन्ध है, जब यह बात ध्यानमे आती है कि २,५००,००० की आबादीमे से कुछ-एक हजार ही महाराष्ट्रीय है और वे भी ज्यादातर वड़ौदा शहरमे ही है, तब इस प्रश्नका कोई महत्व नही रह जाता।

[अंग्रेजीसे]
टाइम्स ऑफ इंडिया, २५-१-१९३९, और हरिजन, २८-१-१९३९

३७६. पत्र : मणिलाल गांधीको

बारडोली
२५ जनवरी, १९३९

चि० मणिलाल,

इस पत्रके साथ १०० पौडका चेक है। यह पुस्तकालयकी इमारतकी मरम्मत के लिए है न? ज्योतिषीकी भविष्यवाणीका क्या डर? मेरे कूच करनेका वक्त तो अब है ही। कल मेरे चले जानेका समाचार सुनो, तो रोना मत। मेरा काम तुम दोनो करना, और मेरे उत्तराधिकारियोके रूपमे अपनेको शोभान्वित करना। बल्कि उस उत्तराधिकारमे वृद्धि करना। पैसा तो हाथका मैल है, लेकिन अगर मुझमे कुछ गुण रहे हो, तो वे ही तुम्हारी विरासत है। उनमे इजाफा करना और सुखी होना। इस विरासतमे सबका हिस्सा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९३) से।

३७७. पत्र : सुशीला गांधीको

वारडोली
२५ जनवरी, १९३९

चि० सुशीला,

तेरा पत्र तेरे ही योग्य है। यह मुझे ६·३० पर मिला। इस समय ७·५० हुए है। मै तो केवल तुम लोगोका श्रेय ही सोचता हूँ, वर्ना वाप कैसा? सपनेसे या भविष्यवाणीसे डर कर रुक जाना अनुचित माना जायेगा। भविष्यवाणी सच्ची हो, तो भी कर्तव्यसे चूकना उचित नही। मै मर जाऊँ या अकोलामे कोई मर जाये, तो तेरे यहाँ नही रहनेसे क्या हर्ज होगा? अगर तेरी हाजिरी यहाँ सेवाके लिए जरूरी होती, तो यहाँ रहना तेरा कर्तव्य होता, अन्यथा तेरा स्थान मणिलालके वाजूमे है। तू उसकी वामागी है। वामाग याने वायाँ वाजू। तू उसकी अर्द्धांगिनी है। जहाँ मणिलाल, वहाँ तू। बिना सकोचके और हलके मनसे जा। यही तेरा कर्तव्य है।

साथका पत्र मणिलालके लिए है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९४) से।

३७८. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

वारडोली
२६ जनवरी, १९३९

गोपनीय

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

पिछले महीनेकी २३ तारीखके मेरे पत्रके उत्तरमें इसी महीनेकी ४ तारीखका आपका जो स्पष्ट पत्र मिला उसपर से मै आपका ध्यान अमुक घटनाओकी ओर, मै उन्हे जिस तरह देखता हूँ उसके अनुसार, आकर्षित करनेका साहस कर रहा हूँ।

उड़ीसामे हालत सबसे खराब लगती है।[1] वहाँ जनमत अन्य स्थानोकी तरह शक्तिशाली नही है और रणपुरमे मेजर वजलजेटकी अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण हत्यासे परिस्थिति और जटिल हो गई है। उड़ीसा सरकारने, जैसाकि सरकारी तौरपर स्वीकार

१. देखिए "देशी राज्य", पृ० ३५३-५५।

भी किया गया है, जो भी सहायता वह दे सकती थी, दी है। इस दुर्भाग्यपूर्ण काण्डके अलावा, तालचेरकी कुल ७५,००० की आबादीमे से २६,००० व्यक्ति ऐसे कष्टोके कारण जो अवर्णनीय बताये जाते है, ब्रिटिश उडीसामे चले आनेको बाध्य हुए है।

मै ऐसा महसूस करता हूँ कि इस देशान्तरणके कारणोंकी छानबीन करवाना और लोगोकी शिकायतें दूर करना रेजीडेटका कर्तव्य है।

काठियावाडके रेजीडेटने, जहाँ तक मै समझ सका हूँ, राजकोटके ठाकुर साहब को प्रजाके साथ हुए अपने पवित्र समझौतेको, जो एक सरकारी अधिसूचना[1] के रूपमे प्रकाशित हुआ था, तोडनेके लिए प्रेरित किया है। राजकोटमे इसलिए संघर्ष फिर शुरू हो गया है।

जयपुरके अंग्रेज प्रधानमन्त्रीने, कहते है, सुप्रसिद्ध बैंकर, परोपकारी और समाज-सुधारक सेठ जमनालाल बजाजको और उस सामाजिक-राजनैतिक सगठनको, जिसके कि वे प्रधान है, कुचल डालनेकी प्रतिज्ञा की है।[2] उनका अपराध यही है कि वे महाराजाके अधीन उत्तरदायी सरकार चाहते है।

मै ऐसा समझता हूँ कि यदि येह जानकारी विश्वसनीय है, तो केन्द्रीय सरकार उसकी जिम्मेदारीसे बच नही सकती।

इसका अर्थ यह है कि रियासतके लोगोको केवल अपने शासकोसे ही नही लडना है, जो स्वय अपनी प्रजाका प्रतिरोध करनेमें असमर्थ है, बल्कि उन्हे केन्द्रीय सरकारके अदृश्य और अति शक्तिशाली हस्तक्षेपसे भी लडना है।

इस भयानक समस्याको मैं आपके आगे रखनेका दुस्साहस कर रहा हूँ। भयानक मै इसे इसलिए कहता हूँ क्योकि मुझे नही मालूम कि यह केन्द्रीय सरकार और काग्रेस दोनोको कहाँ तक उलझायेगी—उस काग्रेसको जिसका रियासतके लोगोके प्रति एक नैतिक कर्तव्य है। मै यह बात समझ सकता हूँ कि सर्वोच्च सत्ता पर रियासतोको बाहरी खतरे और भीतरी अराजकतासे बचानेके सधिजन्य दायित्व है। परन्तु क्या इसीसे जुडी हुई यह बात भी उतनी ही सत्य नही है कि यदि रियासते अपनी प्रजाका दमन करती है तो सर्वोच्च सत्ताको उसकी भी रक्षा करनी चाहिए। क्या कोई रियासत भाषण, सभाओ और इसी तरहकी अन्य स्वतन्त्रताओका दमन कर सकती है, और इसके बावजूद वह सर्वोच्च सत्तासे यह अपेक्षा रख सकती है कि यदि उसकी प्रजा अपनी स्वाभाविक स्वतन्त्रताके लिए, जिसका कि किसी भी अच्छे समाजमे हर मानव-प्राणी को अधिकार होता है, अहिंसात्मक सघर्ष करे तो उसके दमनमे वह उसकी सहायता करेगी?

जब तक कि मुझे बतानेके लिए कोई खास बात न हो, मुझे अपने इस पत्रके उत्तरकी अपेक्षा नही है। मै जानता हूँ कि आप हर समय कितने व्यस्त रहते है।

१. देखिए "देशी राज्य", पृ० ३५३-५५।
२. देखिए पृ० ३३१-३२।

मेरे लिए यह जान लेना ही काफी है, जैसाकि मैं जानता भी हूँ, कि मेरे पत्रों पर आप स्वयं ध्यान देते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी मुद्रित प्रतिकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ४०१-२ से भी।

३७९. पत्र : चन्दन पारेखको

बारडोली
२६ जनवरी, १९३९

चि० चन्दन,

तुझे ३० रुपये भेज देनेको मैंने कनुसे कहा है। यह भेजना रह गया था. इसका मुझे खेद है।

अगर तेरा मामला ह० के खिलाफ नहीं होता, तो वे जानेवाले नहीं थे, इतना तू निश्चित समझ? अपने पहले पत्रका उद्देश्य तू मत भूल। ह० से तुझे स्त्री-शिक्षा छुड़वानी थी, वह छूट गई है। अब और कुछ करना निर्दयताकी सीमामें आयेगा। तेरा प्रयोजन सिद्ध हो गया है। तुझे मैं दोषी नहीं मानता। तू मुझसे यही न्याय चाहती थी न? जमनालालजी आदिको ये पत्र सौंपूँ और वे तुझे दोषी ठहरायें, तो क्या तू अपने-आपको दोषी मानेगी? क्या तू इतनी मूर्ख है? तेरे पत्रका तो यही अर्थ हैं, क्योंकि तू लिखती है कि "अगर वे लोग मुझे दोषी ठहरायें तो मैं दोषी हूँ।" यह वाक्य बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं है। मैं तुझे निर्दोष ठहराऊँ, उसके बाद तेरे लिए और क्या करनेको रह जाता है? लेकिन मैंने तो तुझे इससे अधिक दिलाया है। तुझे निर्दोष ठहराया है, और ह० से दक्षिणामूर्ति और स्त्री-शिक्षा छुड़ाई है। ह० के मुँहसे उनका दोष स्वीकार करानेसे तुझे और क्या मिलेगा? कैदीको दण्ड दिया जाता है, लेकिन कैदीसे जबरदस्ती अपराध स्वीकार नहीं कराया जाता। सचमुच तू मूर्खता प्रदर्शित कर रही है। तुझे कहने जितना अधिकार तूने मुझे दिया है या नहीं? स्वस्थ होकर जवाब लिखना। तू कहेगी, तो मैं जरूर जमनालालजी आदिको कष्ट दूँगा।

मेरी सलाह है कि तू ह० को भूलकर अपने काममें ध्यानावस्थित हो जा। भोजन अनुकूल न पड़े, तो स्वयं पकाना। कुकरमें बनानेमें १५ मिनट लगेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४८) से; सौजन्य : सतीश द० कालेलकर।

३८०. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२६ जनवरी, १९३९

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमको मेरा खत मिला होगा। तुमारा प्रश्न यथार्थ है। इसमे क्या हूआ यह कहनेसे औषध नही मिलेगा। क्यो हूआ वह जानना चाहीये। आर्यन लीगमे काफी हिंसा है, उसको कौन पहूचेगा, तुमारे वर्णनका अर्थ यह निकलता है कि मुसलमान हिंसाशास्त्र ज्यादा जानते है, दो हिंसक युध्ध करे तब अहिंसक क्या करे? जब कुछ नही कर सकता है तब वह प्रार्थना करे, बलवासे दूर रहे। और बलीदान देनेका मौका ढूंढे।

हिं० टाइम्सके बारेमे तुमारे देवदाससे बात करना।

दगा का बयान यहांके अखबारमे तो कुछ नही है। स्टेट्समेन कुछ था?

कृपलानीका खत मैंने पढा नही है। प्या०[1] को दिया है। कृ०[2] को भेजेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४७५) से।

३८१. भाषण : किसानोंकी सभामे[3]

बारडोली

२६ जनवरी, १९३९

जो प्रस्ताव आपने पास किये है, उन्हे मैंने यहाँ आनेसे पहले ही पढ लिया था। जो निर्णय आपने किये है, उनके लिए मै दोनो पक्षोको धन्यवाद देता हूँ। सरदारने

१. प्यारेलाल।

२. आचार्य जे० बी० कृपालानी।

३. इस सभामें लगभग दस-पन्द्रह हजार भूपति और 'हाळी'— खेतिहर मजदूर — या 'दुबळा' लोग उपस्थित थे। सभाका आयोजन किसानों और ग्राम-कार्यकर्ताओंकी उस समितिकी सिफारिशोंको स्वीकार करनेके लिए किया गया था जो पिछले वर्ष हाळियोंका उनकी अवदशासे उद्धार करनेके सवालपर विचार करनेके लिए नियुक्त की गई थी। समितिकी सिफारिशें निम्नलिखित थी:

(१) प्रत्येक हालीको २६ जनवरी, १९३९ से साढे चार आना प्रति पुरुष और तीन आना प्रति स्त्री मजदूरी दी जाये; (२) ऐसा प्रत्येक हाळी जो अपने मालिकके खेत पर १२ या उससे ज्यादा वर्ष काम कर चुका हो, मालिकके कर्जसे मुक्त माना जायेगा; (३) जिन्होंने १२ से कम वर्ष तक काम किया हो, उनका कर्ज, कर्जकी कुल रकमका बारहवाँ हिस्सा प्रतिवर्षके हिसाबसे कम हो जायेगा; (४) ऐसे हाळियोंकी दैनिक मजदूरीसे एक आना प्रतिदिन तबतक काटा जाता रहेगा जब तक पूरा कर्ज अदा नहीं हो जाता; स्त्रियोंकी मजदूरीसे कुछ नहीं काटा जायेगा; (५) १२ वर्षकी अवधि पूरी होनेपर प्रत्येक

आपसे कहा कि यह निर्णय आप ईश्वरको साक्षी मानकर कर रहे है। जो मनुष्य अपनी प्रतिज्ञा भंग करता है, उसका क्या हाल होता है, इसका थोडा-बहुत अनुभव आप लोगोको हो चुका है। मै आशा करता हूँ कि आप अपने इन निर्णयोका पूरी तरह पालन करेंगे। कई बार ऐसा होता है कि लोग स्वेच्छासे ऐसा नही करते। तब उन्हे कानूनकी प्रेरणासे करना पडता है और उसके पीछे दण्डका भय भी होता है। आपने ये निर्णय स्वेच्छासे किये, यह बहुत अच्छी बात है। 'दुबला' जातिके लोग इन निर्णयोके बाद अब 'दुबला' नही रहे, वे बन्धनसे मुक्त हो गये। यह कोई छोटी उपलब्धि नही है। वैसे, इन निर्णयोंको बारीकीसे देखने पर तो मुझे यह लगता है कि यहाँके किसान बड़े कुशल व्यापारी है। कारण, इन निर्णयोके द्वारा तो आपने एक लाभका सौदा किया दीखता है। पहले 'दुबला' लोगोसे आप अपनी इच्छाके अनुसार काम लेते थे। अब इसके बदले आप उनसे पूरा काम लेंगे और उन्हें समुचित मजदूरी देंगे। तो, इस निर्णयसे आपने कोई बडा कार्य किया है, ऐसा नही है। मै इससे बहुत प्रभावित नही हुआ। मेरी राय तो यह है कि स्त्री हो या पुरुष, यदि वह आठ घंटे काम करे, तो उसे कम-से-कम आठ आना अवश्य मिलना चाहिए। ईश्वरकी इच्छा होगी, तो किसी दिन मेरे जीते-जी यह स्थिति होगी। आठ आने आपको शायद ज्यादा मालूम होते होंगे, लेकिन सच पूछो तो ये ज्यादा नही है और आपने तो स्त्रीके तीन आने ही ठहराये है, जबकि स्त्रीसे काम तो पुरुष जितना ही लिया जाता है। इसीलिए मैने आपको धन्यवाद तो दिया, लेकिन उसके साथ यह भी कहा कि इस सौदेमे आपको लाभ भी है।

मै आपसे आग्रह करता हूँ कि इस प्रस्तावका आप अक्षरार्थ न करे। ऐसा न माने कि साढे चार आने और तीन आनेसे ज्यादा दिया ही नही जा सकता। 'दुबला' लोगोको आपने बन्धन-मुक्त किया, इसका अर्थ यह है कि वे जहाँ चाहे वहाँ मजदूरी कर सकते है और जितनी चाहे उतनी मजदूरी पा सकते है। लेकिन इस निर्णयका रहस्य तो इस बातमे है कि वे जहाँ है वहाँ रहेंगे और इस निर्णयके कारण आपके और उनके सम्बन्ध पवित्र बनेंगे। हमने कहा है कि 'दुबला' लोगोको अब 'हलपति' का दरजा मिल गया है। इसका अर्थ यह नही कि किसान हल नही चलायेंगे। हलपति तो किसान ही होंगे। 'दुबले' उनके लिए ही हल चलायेंगे। अलबत्ता, सच्ची बात तो यही है कि जो जमीन जोतता है, वही हलपति है और आदर्श स्थिति यह होगी कि किसी दिन किसान और 'दुबले', दोनो ही हलपति हो जायेंगे। एक बात और। प्रस्तावका यह अर्थ नही है कि किसी बार साल अच्छा आये और फसल बढ़िया हो, तो भी आप उन लोगोको साढे चार आने ही दे। यदि आपने ऐसा किया, तो मै कहूँगा कि आपने प्रस्तावका पालन नही किया है।

हाली, कर्ज पूरा अदा हुआ हो या न हुआ हो, कर्जसे मुक्त हो जायेगा; (६) कर्जदारकी मृत्यु हो जानेपर कर्ज समाप्त माना जायेगा। (७) प्रत्येक 'दुबला' को ८० रु० वार्षिक मजदूरी दी जायेगी और यदि उसपर कोई कर्ज हो तो इस मजदूरीमें से कर्जकी अदायगीके लिए १५ रु० काटे जा सकेंगे। (८) कर्जसे सम्बन्धित सारे प्रश्नोंका निपटारा करनेके लिए ग्राम-पंच नियुक्त किये जायेंगे।

आप लोगोने १९२१ मे आजादीकी बड़ी प्रतिज्ञा ली थी। उस प्रतिज्ञाके अधिकाशका पालन आपने अभी तक नही किया है। जो आपने आज किया है, वह तो १९२१ में करना चाहिए था। अनेक वर्ष पूर्व जो करना चाहिए था, उसे आज आपने इतनी देरमे किया है। तथापि, यह पुण्य-कार्य है और आप धन्यवादके पात्र है।

खेती हमारा मुख्य धन्धा है किन्तु सही खेती करना हमें आता नही है और खेतीका काम बारह माह तो होता नही है। इसके सिवा उससे पेट भी नही भरता। इसीलिए मैने चरखेको "अन्नपूर्णा" का नाम दिया है। और चरखेके जितने गीत मै पहले गाता था, उतने ही आज भी गाता हूँ। अत यदि हलपतियोको आगे बढना है, तो उन्हे चरखा चलाकर अपनी कमाईमें वृद्धि करनी चाहिए। अपना काम करनेके बाद जो भी समय बचे, उसमे आपको चरखा चलाना चाहिए।

मै आशा करता हूँ कि आप दोनो पक्ष इस प्रस्तावका पूरा-पूरा पालन करेंगे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १९-२-१९३९

३८२. पत्र : सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉनको

बारडोली
२७ जनवरी, १९३९

प्रिय मित्र,

इसी माहकी २५ तारीखके आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

मुझे डर है कि आपकी हिचकिचाहटसे मेरी कोई हमदर्दी नही है। श्री चुडगरने जो रिपोर्ट भेजी है, वह इतनी महत्वपूर्ण है कि अवश्य छपनी चाहिए। मुझे चिन्ता केवल यह थी कि मै ऐसी रिपोर्ट न छापूँ जिसकी सचाईपर कोई उँगली उठा सके।

मेरा श्री चुडगरसे पत्र-व्यवहार जारी है और अगर वे सेठ जमनालालजीको दी गई अपनी रिपोर्ट पर जमे रहते है, तो मुझे जयपुरकी जनताके हितमे उसे प्रकाशित करना पड़ सकता है।

श्री चुडगरके विवरणको प्रकाशित करनेपर आप जो "उचित कार्रवाई" करनेवाले हैं, उसका अर्थ मेरी समझमे नही आया।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ४००-१। सी० डब्ल्यू० ७८०९ से भी; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

३८३. पत्र: अमतुस्सलामको

२७ जनवरी, १९३९

चि० अमतुल सलाम,

मैं हैरान हूँ मैंने मनाइ नही की है। मैंने तो मेरी हालत बताई। तूने कहा और मैंने पसद कीया। तेरा ठिकाना ही नही है और जब तुझे स्पर्श न मिले तो भी फिकर नही है कि और तेरी फिकर मौलानाके इनकारकी तो क्यो स्पर्शकी बातसे खत भरा है। लेकिन अब इस झगड़े मे पड़ना नही चाहता हूँ। मृदुलाके पास जानेकी कुछ भी जरूरत नही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६९) से।

३८४. तार: विश्वनाथदासको

[२८ जनवरी, १९३९ के पूर्व][1]

मुख्यमन्त्री,
कटक

ठक्करबापा कहते है कि तालचेरके शरणार्थी भूखो मर रहे है और कष्ट पा रहे है। चिकित्सीय सहायता चाहते है। कृपया राहत पहुँचाये।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य: प्यारेलाल।

१. तालचेरके शरणार्थियोंकी दुर्दशाके जिक्रके आधारपर; देखिए "देशी राज्य", पृ० ३५३-५।

३८५. तार : जानकीदेवी बजाजको

बारडोली
२८ जनवरी, १९३९

जानकीदेवी बजाज
वर्धा

अभी तब तक जयपुर न जाओ, जब तक कि डॉक्टर और मैं यह न कह दें कि तुम बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्नचित्त हो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१०

३८६. जमनालाल बजाजके लिए वक्तव्यका मसविदा[1]

बारडोली
२८ जनवरी, १९३९

ऐसा पता चला है कि जयपुरके प्रधानमन्त्रीने जयपुर राज्य प्रजा मण्डलको और मुझे कुचल डालनेकी प्रतिज्ञा की है। उस नीतिका अनुसरण करते हुए अपने विचारसे उन्होंने मेरे लिए ऐसा प्रबन्ध किया है जिससे उनके लिए कोई खतरा न रह जाये। शीघ्र ही मण्डलके सदस्योंके साथ भी यही होना है। परन्तु यदि हम अपने प्रति और उस दायित्वके प्रति जो हमने स्वयं अपने ऊपर लिया है, सच्चे हैं तो चाहे हमारे शरीर बन्दी हो जाये या किसी और तरह आहत हो जाये, पर हमारी आत्मा स्वतन्त्र रहेगी।

अब जब मेरी आवाज जबर्दस्ती बन्द की जानेवाली है, मैं एक बार फिर यह बता दूँ कि हम किसलिए लड़ रहे हैं। हमारा लक्ष्य महाराजाके अधीन उत्तरदायी सरकारकी स्थापना है परन्तु सविनय अवज्ञा हमने इसलिए शुरू नहीं की है कि दरबार पर उत्तरदायी सरकार देनेके लिए दबाव डाला जाये। सविनय अवज्ञाका उद्देश्य तो अहिंसाके दायरेमें रहते हुए बोलने, लिखने, सभाएँ करने, जुलूस निकालने, संगठन बनाने आदिकी स्वतन्त्रताके उस मूल अधिकार पर जोर देना है, जो सभी

१. यह जमनालाल बजाज द्वारा अपनी गिरफ्तारीके समय जारी किया जाना था। जी० एन० ३०७८ में गांधीजी के हाथका लिखा मसविदा उपलब्ध है।

समाजोंको प्राप्त है। हम सविनय अवज्ञा करनेको इसलिए बाध्य हुए है कि यह मूल अधिकार हमसे छीन लिया गया है। जैसे ही यह अधिकार वापस मिल जायेगा सविनय अवज्ञा बन्द कर दी जायेगी।

इसलिए सामूहिक सविनय अवज्ञा या करबन्दी आन्दोलनका अभी कोई सवाल नही है।

इस चीजको देखते हुए कि मण्डल एक तरहसे अवैध संस्था घोषित कर दिया गया है, हमें अपने मौजूदा रजिस्टरको रद्द ही मानना चाहिए। यदि सम्भव हो तो रियासतके अन्दर, और यदि आवश्यक हो तो रियासतके बाहर एक नया रजिस्टर खोला जाना चाहिए। जो लोग यह जानते हैं कि आज मण्डलका सदस्य बनने तकमें खतरा है केवल वही अब सदस्य बनेंगे। फिर भी, आशा है कि रियासतके अन्दर या बाहर रहनेवाले जयपुरिये बड़ी संख्यामे मण्डलके सदस्य बनेंगे और कम-से-कम इसी तरह इस प्रतिबन्धके प्रति अपने विरोधका प्रदर्शन करेंगे।

इन सदस्यो के नाम, पते और व्यवसाय पजीकृत किये जायेंगे, और समय-समय पर प्रकाशित किये जायेंगे।

मण्डलके कार्योका प्रबन्ध मेरी अनुपस्थितिमे . . .[1] करेंगे और वे मण्डल और अध्यक्षके अधिकारोका उसी तरह उपयोग करेंगे मानो संविधान चालू हो। पाँच व्यक्तियोंकी इस परिषद्को इनके स्थानपर अन्य व्यक्तियोंको रखनेका अधिकार होगा। सविनय अवज्ञाके सभी मामलोंमें आवश्यक होने पर परिषद् गांधीजीकी सलाह लेगी और उसके अनुसार चलेगी।

[अंग्रेजीसे]

पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ४०३-४। जी० एन० ३०७८ से भी।

३८७. बातचीत : नगरपालिकाओं और स्थानीय मण्डलोंके प्रतिनिधियोंके साथ[2]

बारडोली

२८ जनवरी, १९३९

उनका पहला सवाल कर लगानेके प्रश्नसे सम्बन्धित था।

कांग्रेसने करका बोझ कम करनेकी नीति स्वीकार की है। फिर जब कांग्रेसजन स्थानीय मण्डलों और नगरपालिकाओंमें जाते हैं तो उन्हें नगरपालिकाओंसे सम्बन्धित कल्याण कार्योंके कार्यक्रमको लागू करनेके लिए ज्यादा पैसेकी जरूरत होती है। नये

१. साधन-सूत्रमें यह स्थान खाली छोड़ा हुआ है।

२. प्यारेलाल के "म्युनिसिपल सर्विस ऐण्ड नॉन-वायलेन्स" से उद्धृत। नगरपालिकाओं और स्थानीय मण्डलोंके लगभग २०० प्रतिनिधि अपने प्रतिदिनके कामकी विभिन्न जटिल समस्याओंपर विचार-विमर्श करनेके लिए गांधीजीसे मिले थे।

कर लगाये बिना यह कैसे किया जा सकता है? और लोग तो स्वभावतः नये कर नहीं देना चाहते। यह दुविधा कैसे सुलझाई जा सकती है?

उ०. यदि किसी स्थानीय मण्डल या नगरपालिकाके अधिकारक्षेत्रमे मै करदाता होता तो अतिरिक्त करके रूपमे मै एक पाई तक नही देता और दूसरोको भी ऐसी ही सलाह देता कि जब तक हमारा दिया हुआ पैसा हमे चौगुना होकर वापस न मिले, तब तक कोई नया कर न दिया जाये। जो लोग लोगोके प्रतिनिधि बनकर स्थानीय मण्डलो या नगरपालिकाओमे जाते है वे वहाँ मान प्राप्त करने या आपसी प्रतिद्वन्द्विताओमे पडनेके लिए नही अपितु प्रेम-भावसे सेवा करनेके लिए जाते है और यह सेवा पैसे पर नही निर्भर होती। हमारा देश गरीब है। यदि हमारे नगरपालिकाओके सदस्य सच्चे सेवाभावसे अनुप्राणित हो तो वे बिना तनख्वाहके काम करनेवाले सफाई-कर्मचारी, भगी और सड़क बनानेवाले मजदूर बन जायेगे और इस काममे गर्व अनुभव करेगे। वे अपने साथी पार्षदोको भी, जो कांग्रेसके टिकट पर न आये हो, अपने साथ आनेके लिए कहेगे और यदि उन्हें अपने-आपमे और अपने मिशनमे निष्ठा होगी तो उनके उदाहरणकी उचित प्रतिक्रिया अवश्य होगी। इसका अर्थ है कि नगरपार्षदोको अपना सारा वक्त अपने काममे देना होगा। उनका अपना कोई स्वार्थ नही होगा। अगला कदम यह होगा कि नगरपालिका या स्थानीय मडलके अधिकार-क्षेत्रकी सारी वयस्क जनसख्याका जायजा ले लिया जाये। सबको यह कहा जाये कि वे नगरपालिकाके काममे अपना हाथ बँटाये। एक नियमित रजिस्टर बना लिया जाना चाहिए। जो इतने गरीब है कि पैसेका सहयोग तो नही दे सकते, परन्तु हृष्टपुष्ट है, उन्हें बिना पारिश्रमिक लिये परिश्रम करनेको कहा जा सकता है। सच्चा भारत कुछ-एक बड़े शहरो नही अपितु सात लाख गाँवोमे रहता है। भारतकी वास्तविक समस्याओका सामना और समाधान गाँवोमे किया जाना है। हमे गाँवोके लिए बेहतर सड़के, बेहतर सफाई और बेहतर पेय जलकी पूर्तिकी आवश्यकता है।

यदि हम पैसेको आधार बनाकर चले तो हम इस भगीरथ कार्यको अशमात्र भी नही निपटा सकेगे। परन्तु भारतके पास जनशक्तिका अपार भडार है। यदि हम इस जनशक्तिको सगठित कर सके, तो बहुत ही कम समयमे देशका रूप बदल सकते है।

अपने श्रम-साधनोको जुटानेके लिए चरखेसे बढकर और कोई साधन नही है। यह अहिंसाका स्वाभाविक प्रतीक-चिह्न भी है जोकि समस्त जीवनदायी सामूहिक क्रिया-कलापकी आत्मा है। नगरपालिकाकी किसी भी योजनामें चरखेके प्रचारका स्थान निश्चित होना चाहिए — वह योजना चाहे गाँवोकी बेकारी दूर करनेसे सम्बन्धित हो, जिसके कारण ग्रामीण जनसख्याका अधिकाश गरीबीमे तथा भयावह परिस्थितियोमे अपने दिन काट रहा है, या वह उन गन्दी बस्तियोका जीवन सुधारनेसे सम्बन्धित हो जो हमारे बड़े-बड़े शहरोके लिए कलक-स्वरूप है।

परन्तु इसके लिए चरखेमे हमारा जीवन्त विश्वास होना चाहिए — ऐसा विश्वास जिससे कि हमे कताई-शास्त्र और इससे सम्बन्धित सारी प्रक्रियाओका सूक्ष्म अनुशीलन करने और इनमे पारगत होनेकी प्रेरणा मिले। आज तो स्थिति यह है कि सिनेमा

जाने और यहाँ तक कि बेकारकी बातोंमे अपना समय नष्ट करना हमें अच्छा लगता है। बिना काम किये पैसा बनानेका धन्धा हमें रुचिकर लगता है, चरखा नही। फिर भी, मेरा तो यह विश्वास है कि हम अपने अहिंसाके उद्देश्यकी ओर उसी सीमा तक आगे बढ़ सकेंगे जिस सीमा तक हम चरखेका व्यापक प्रचार करनेमे सफल होगे।

उपर्युक्त योजनाका अनुसरण करके हम करदाताको उसके द्वारा दिया गया कर अत्यन्त उन्नत सेवाओं और नागरिक सुविधाओंके रूपमें कई गुना करके लौटा सकेंगे और तब यदि अतिरिक्त कर लगाना अनिवार्य हो जाये तो वह उसका बुरा नही मानेगा।

जम्बुसर नगरपालिकाके एक सदस्यने पूछा : "हमारी नगरपालिकामें सत्रह सदस्य हैं जिनमें से आठ कांग्रेस टिकटपर और शेष नौ गैर-कांग्रेसी हैं। वे हमेशा ही हमें बहुमतसे हरा सकते हैं और हमारी योजनाओंको उलट सकते हैं। ऐसी स्थितिमें हमें क्या करना चाहिए?"

गांधीजी : यह कोई समस्या नही है। अगर वे पुराने ढर्रे पर चलना चाहते हैं और भाषण देने और इस तरहके अन्य कामोंमे लगे रहना चाहते है तो आपको उनकी नकल करनेकी या उनकी तरह वक्त बरबाद करनेकी जरूरत नही है। आप इन बैठकोंमे हाजिर तो हो जायें परन्तु व्यर्थके वाद-विवादमे अपना समय नष्ट न करें। इसके बदले आप अपना सारा वक्त अपने हाथोंमें बाल्टी और झाड़ू पकड़कर, फावड़ा और टोकरीसे काम करके, बीमार और अस्वस्थ लोगोकी परिचर्या करके तथा उन्हे डाक्टरी मदद दिलाकर, अशिक्षित करदाताओंको पढाकर, उनके बच्चोको लिखना-पढ़ना सिखाकर करदाताओंकी उपयोगी सेवा करनेमें लगायें। उसके परिणामस्वरूप दो बाते हो सकती हैं। या तो आपके उदाहरणकी छूत आपके विरोधियोंको भी लगेगी और वे स्वयं आपके साथ हो जायेंगे और तब विवादका कोई सवाल ही नही रहेगा। या फिर करदाता खरे और खोटेमे अन्तर करना सीख जायेगा और अगले चुनावोंमे सारे सत्रह स्थान कांग्रेसियों द्वारा ही भरे जायेंगे। विरोधका अन्त करनेका यह अहिंसात्मक तरीका है। इससे संघर्ष और झगड़ा मिटता है और दूसरा दल चाहे कुछ करे या नही, हमारा रास्ता साफ हो जाता है।

प्र० : गुजरातमें कई जगह राष्ट्रीय सप्ताह मनाया जा रहा है। और इस सिलसिलेमें लोगोंको ग्राम-सुधार अथवा नगर-सेवाकार्यमें भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किया जा रहा है। क्या यह अच्छा नहीं होगा कि इस समारोहकी तारीख बदलकर शुक्ल पक्षमें कर दी जाये? इससे सामूहिक कार्य रात हो जानेके बाद भी जारी रह सकता है और रोशनीके खर्चेमें कमी की जा सकती है।

उ० . देशके विभिन्न भागोंमे विभिन्न पंचाग प्रचलित हैं। परन्तु राष्ट्रीय पर्वके लिए सर्वसामान्य पंचागका ही अनुसरण किया जाना चाहिए। यदि आपका नगर-सेवा-सम्बन्धी उत्साह दिखावा मात्र नही है जो राष्ट्रीय सप्ताहके आरम्भके साथ शुरू होकर उसका अन्त होते ही समाप्त हो जायेगा तो राष्ट्रीय सप्ताहके अलावा भी

आपको नगर-सेवाके ऐसे अनेक सप्ताह मनाने चाहिए। इन सप्ताहोंकी तारीखें किसी स्थानके लिए जो प्रवृत्ति चुनी जाये उसकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखते हुए नियत की जा सकती हैं।

प्र० : सूरत नगरपालिकाके एक सदस्यने पूछा, "नगरपालिकाके लिए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, किस प्रकारका कर लगाना बेहतर है?"

गां० : करदाता अप्रत्यक्ष कर ज्यादा पसन्द करते हैं, क्योंकि इसका प्रभाव प्रत्यक्ष अनुभव नहीं किया जाता। परन्तु प्रत्यक्ष कर का शिक्षणात्मक महत्व ज्यादा है और जब इसका उद्देश्य करदाताको नगरपालिकाके प्रति अपने कर्त्तव्योंके विषयमें ज्यादा जागरूक करना हो तो प्रत्यक्ष कर इसके लिए उपयुक्त सिद्ध होंगे।

खेड़ा जिलेके एक सज्जनकी शिकायत थी: "स्थानीय मण्डलों द्वारा संचालित प्रारम्भिक स्कूलोंमें हम बुनियादी शिक्षाकी वर्धा-योजनाको चलाना चाहते हैं। स्थानीय मण्डल इसके लिए रजामन्द है। परन्तु शिक्षा-विभागका निरीक्षक-वर्ग और शिक्षा-विभागके उच्च अधिकारियोंका अभी वही पुराना दृष्टिकोण है। वर्धा योजनाके सिद्धान्तोंमें अभी उनका विश्वास नहीं है। हम इस कठिनाईको कैसे दूर करें?"

गां० : यह मेरे लिए आश्चर्यकी बात नहीं है। मुझे आश्चर्य तो तब होता जब उच्च शिक्षाधिकारियोंका वर्धा शिक्षा-योजनामें एकदम विश्वास हो गया होता। विश्वास अनुभवसे आयेगा। फिलहाल मैं इतना ही कह सकता हूँ कि जहाँ चाह होती है वहाँ राह निकल ही आती है। मैं नहीं समझता कि शिक्षा-मन्त्रीके लिए शिक्षा निदेशकको यह अनुदेश देनेमें कोई वैध कठिनाई हो सकती है कि जो स्कूल वर्धा शिक्षा-योजनाको कार्यान्वित करना चाहें उनकी हर मुमकिन तरीकेसे मदद की जाये। शिक्षा विभागको अपने पथका अनुसरण करानेमें मध्यप्रदेश मन्त्रि-मण्डलको कोई कठिनाई नहीं हुई। परन्तु यदि कोई वैध या प्राविधिक कठिनाई सामने आती है तो वह वैध तरीके से दूर भी की जा सकती है।

प्र० : प्रौढ़ शिक्षा योजनामें हमारा उद्देश्य साक्षरता-प्रसार होना चाहिए या 'उपयोगी ज्ञान' का प्रसार? स्त्री-शिक्षाके विषयमें क्या किया जाना चाहिए?

उ० : धन्धेमें लगे हुए वयस्क लोगोंकी मूलभूत आवश्यकता यह है कि उन्हें पढ़ना-लिखना आना चाहिए। व्यापक निरक्षरता भारतके लिए पापरूप और लज्जास्पद है। निरक्षरताका अन्त होना ही चाहिए। अलबत्ता, साक्षरता-प्रसारकी अथ और इति वर्णमाला सीखनेमें ही नहीं हो जानी चाहिए। इसके साथ-साथ उपयोगी ज्ञानका प्रसार भी किया जाना चाहिए। परन्तु नगरपालिका संस्थाओंको एक ही समयमें दो नावोंपर पैर रखनेके प्रयाससे बचना चाहिए। अन्यथा उनकी असफलता निश्चित है।

जहाँ तक महिलाओंमें व्याप्त निरक्षरताका सम्बन्ध है, इसका कारण पुरुषोंमें व्याप्त निरक्षरताकी तरह मात्र सुस्ती या निष्क्रियता नहीं है। अधिक प्रबल कारण तो उनकी वह हीन स्थिति है जिसे अत्यन्त प्राचीन कालसे चली आ रही परम्पराने उन पर थोप दिया है। यह उनके प्रति किया गया एक बहुत बड़ा अन्याय है। पुरुषने

उसे अपनी सहयोगिनी और अर्धांगिनी बनानेके बजाय घरका काम करनेवाली परिचारिका और सुखोपभोगका साधन-मात्र बना लिया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि हमारा समाज लुजपुज हो गया है। स्त्रीको मनुष्य जातिकी जननी कहा जाता है और यह ठीक ही है। हमारा उसके प्रति और अपने प्रति भी यह कर्तव्य है कि हमने उसके साथ जो महान् अन्याय किया है उसका परिमार्जन करे।

खेड़ा जिलेके कपड़वंजसे आये हुए एक मित्रने पूछा, "आपने कुछ विषयोंपर अलग-अलग अवसरोंपर विभिन्न मत प्रकट किये है। हमारे विरोधी हमारी वर्तमान नीतियोंका विरोध करनेके लिए उनका दुरुपयोग करते हैं। ऐसी परिस्थितियोंमें हमें क्या करना चाहिए?"

गां०: इन कथनोमे जो विरोध है वह ऊपरी है और इसका समाधान आसानी से किया जा सकता है। निरापद नियम यह है कि समयके क्रममे जो बात सबसे बादमे कही गई हो उसे पिछली सब बातो पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। परन्तु पहले या बादका मेरा कोई भी कथन, यदि वह आपके हृदय और मस्तिष्कको प्रभावित नही करता, तो आप उसे माननेके लिए बाध्य नही है। उसका यह अर्थ नही होगा कि मेरा दृष्टिकोण गलत है। परन्तु ऐसे किसी दृष्टिकोणको स्वीकार कर लेना गलत होगा जिसकी सचाई आप देख नही पाते या जिसे आप आत्मसात् नही कर सकते।

प्र०: ऐसे लोगोंसे कैसे निबटा जाये जो हर किसी जगहको शौचादिके लिए इस्तेमाल करते हैं और गन्दगी फैलाते हैं? वे इसके पक्षमें यह तर्क देते हैं कि उनके धर्मका यही विधान है। इसके अलावा मक्खियों, मच्छरों, पागल कुत्तों, बन्दरों आदिका उपद्रव कैसे शान्त किया जा सकता है? कुछ लोग अहिंसाकी आड़ लेकर उन्हें नष्ट करनेका विरोध करते हैं।

उ०: जहाँ तक शौचादिका सम्बन्ध है इस समस्याका समाधान करनेके दो तरीके है—एक, बाहरी तौर पर जोर-जबरदस्तीका और दूसरा, अहिंसाका। सफाईके नियमो का भग करनेवाले लोगोको कानूनी दण्ड दिया जा सकता है। मैंने उसके लिए "बाहरी तौर पर जोर-जबरदस्ती" शब्दोका उपयोग जानबूझ कर किया है। स्वतन्त्रताकी तरह ही जब धार्मिक स्वतन्त्रताका उपभोग दूसरेके स्वास्थ्य और सुरक्षाकी कीमत पर या शालीनता और नीतिकी अवहेलना करते हुए किया जाता है तब वह स्वेच्छाचार बन जाती है। यदि आप अपने लिए अप्रतिबन्धित और पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते है तो आपको चाहिए कि आप समाजसे सन्यास लेकर एकान्तवास करे। जहाँ कही भी शौचादि करनेकी आदतको, जिसमे दूसरोकी सुविधा और स्वास्थ्यका ध्यान नही रखा जाता, मै अहिंसाकी विडम्बना मात्र मानता हूँ। जहाँ कही गन्दगी हो, चाहे वह शारीरिक हो या नैतिक, वहाँ अहिंसा नही रह सकती।

दूसरा तरीका यह है कि इस तरहकी गन्दगी फैलानेवाले सम्प्रदायोके धर्माचार्योको खोज निकालना चाहिए और धीरजसे तर्क द्वारा उनके हृदयको प्रभावित करनेका प्रयत्न करना चाहिए।

जहाँ तक मक्खियो, मच्छरो, आवारा कुत्तो और बन्दरो आदिका सम्बन्ध है, मै निजी तौर पर तो इसे सहन कर लूंगा, परन्तु सारा समाज, यदि उसे जीवित रहना है, तो इस स्थितिको सहन नही कर सकता। ये हानिकर जीवजन्तु हमारे दुष्कृत्योका ही परिणाम है। यदि मै किसी सार्वजनिक स्थान पर बन्दरोका पोषण करूँ और इस तरह दूसरोका जीवन दूभर कर दूं तो मै ही हिंसा करता हूँ और समाजके लिए सिवाय इसके और कोई चारा नही है कि वह मेरी हिंसा द्वारा पैदा किये गये इन हानिकर जीवोको नष्ट कर दे। अमुक कार्यमे अहिंसा है या नही, इसकी कसौटी उस कार्यके पीछे छिपी मनोवृत्ति है, स्वय वह कार्य नही। ऐसा नागरिक जो जीवदयाकी गलत भावनामे पड़कर दूसरो पर हानिकर जीव छोड़ता है, हिंसाका अपराधी है।

अहमदाबादमें महिलाओंके उद्धार और स्वतन्त्रताके लिए स्थापित संस्था, ज्योति संघकी संस्थापिका और समाजसेविका श्रीमती मृदुला साराभाईने गांधीजीसे समाजमें महिलाओंकी स्थितिके बारेमें चन्द महत्वपूर्ण प्रश्न पूछे: "महिलाओंमें नागरिक और राजनीतिक चेतनाके जागृत होनेसे उनके परम्परागत गृहस्थीके कार्य और समाजके प्रति उनके कर्तव्यके बीच संघर्ष पैदा हो गया है। यदि कोई महिला सार्वजनिक कार्यमें मन लगाती है तो उसे अपने बच्चों या अपने घरबारकी उपेक्षा करनी पड़ती है। इस उलझनको कैसे सुलझाया जाये?"

'गीता' के प्रसिद्ध श्लोकको अपने उत्तरका आधार बनाते हुए गांधीजी ने कहा कि सहज-प्राप्त स्वधर्मको छोड़कर दूरके ढोल सुनकर उनके पीछे जाना हमेशा गलत होता है। प्रस्तुत कर्तव्यकी उपेक्षा करना विनाशका मार्ग है। सवाल यह है कि क्या अपना सारा समय घरके काममें लगा देना ही महिलाओंका कर्तव्य है? बहुत बार ऐसा होता है कि महिलाओंका समय घरके आवश्यक कामोमें नही अपितु अपने पतिके लिए आमोद-प्रमोद जुटाने और अपने ही शौकोंको पूरा करनेमें लगता है।

गाधीजी मै समझता हूँ कि महिलाओकी यह घरकी दासता हमारे जगलीपन की निशानी है।

मेरे मतमे रसोईघरकी गुलामी मुख्यत: हमारे जगलीपनका ही अवशेष है। यह बहुत उपयुक्त अवसर है कि हमारा महिला-समाज इस दु स्वप्नसे मुक्ति पा जाये। महिलाओका सारा वक्त घरके काममे ही नही लग जाना चाहिए।

मृदुलाबहन: चुनावके दौरान आपके कांग्रेसजन हमसे सब तरहकी सहायताकी आशा करते है। परन्तु जब हम उनसे कहते हैं कि वे अपनी पत्नियों और पुत्रियोंको घरसे बाहर हमारे साथ भेजें तो वे कई तरहके बहाने बनाते है और उन्हें घरकी चार-दीवारीके अन्दर बन्दी बनाकर रखना चाहते हैं। आप इसका क्या उपाय सुझाते है?

गा०: ऐसे सब प्रागैतिहासिक नमूनोके नाम 'हरिजन' में प्रकाशनके लिए मेरे पास भेज दो।

सेगाँव, ७ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-२-१९३९

३८८. पत्र : जनरल शिन्देको

वारडोली
२९ जनवरी, १९३९

प्रिय जनरल शिन्दे,

आपके इसी २५ तारीखके पत्रके लिए मैं आपका आभारी हूँ।

मैं महाराष्ट्रीय और गुजराती लोगोंके बीच एकता चाहता हूँ। उनके बीच दरार पैदा होनेका कोई भी कारण नही है।

अगर आपके पास सरदार वल्लभभाई द्वारा भद्रन और एनामें दिये गये भाषणोंकी प्रतियाँ हों,[1] तो मैं उन्हे देखना चाहूँगा। सरदार इन दोनो समुदायोंमे फूट पैदा करने वाले व्यक्ति नही हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य . प्यारेलाल।

३८९. पत्र : मैसूरके महाराजाको

वारडोली
२९ जनवरी, १९३९

प्रिय महाराजा साहब,

श्री रंगास्वामीके हाथो आपने कृपापूर्वक जो ऊनी शाल भेजा था, उसके लिए मैं बहुत दिनोसे आपको धन्यवाद देना चाह रहा था। मुझे आशा है कि रियासत और प्रजाके बीच सुखद सम्बन्ध हैं, और आगामी सुधारसे शान्ति और समृद्धिके एक नये युगका सूत्रपात होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मैसूरके महाराजा

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य: प्यारेलाल ।

१. जनरल शिन्देने अपने पत्रमें सरदार पटेल पर आरोप लगाया था कि भद्रन और एनामें दिये गये अपने भाषणों और अपने प्रेस-वक्तव्यों द्वारा सरदार पटेलने महाराष्ट्रियों और गुजरातियोंके बीच मनमुटाव पैदा करनेकी कोशिश की थी। उन्होंने गांधीजी से अनुरोध किया था कि वे सरदार पटेलको वैसा करनेसे रोकनेके लिए अपने प्रभावका इस्तेमाल करें।

३९०. पत्र : अमतुस्सलामको

२९ जनवरी, १९३९

प्यारी बेटी,

तेरे दो खत मिले।

मैं क्या हुक्म करु। मैंने कह दिया है जो चाहे वह कर सकती है क्योंकि मैं नही जानता हूं किसमें तेरा श्रेय है। ऐसी हालतमें मेरा कुछ भी कहना बेहुदापन सा लगता है। अच्छा यही है कि जैसा तुझे अच्छा लगे वही करना। मैं उसीमें राजी हूंगा। यह मैं न दुखमें लिखता हूं न रोषमें। सिर्फ तेरा भला समझकर लिखता हूं।

वहां सब खुश होंगे? तेरी तबीयत अच्छी होगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३)से।

३९१. भाषण: किसानोंकी सभामें[1]

बराड

[२९ जनवरी, १९३९][2]

यह एक अत्यन्त शुभ अवसर है, इस विषयमें दो मत नहीं हो सकते। जब जमीनें जानेका समय आया और वे गई, तब हम अपने भाषणोंमें कहते थे कि ये जमीनें सरकारको पचेंगी नहीं; ये हमें वापस मिलेंगी। और अब वे हमें वापस मिल गई हैं। ऐसा न समझना कि इसमें किसीका पुरुषार्थ काम आया है। ऐसा मानोगे, तो बड़ी भूल करोगे। जिस हद तक हमने अहिंसा और सत्यका पालन किया है, उस हद तक हमें सफलता मिली है। छीता पटेल[3] अपनी बात पर दृढ़ रहे, वे बराड अन्त तक नहीं आये और इस तरह उन्होंने अपनी प्रतिज्ञाका पूरा पालन किया।

१. जब्त हुई जमीनें वापस मिलनेके अवसर पर; भाषणका पाठ महादेव देसाईकी "बारडोली" शीर्षकसे गुजराती और अंग्रेजीमें लिखित तत्सम्बन्धी विवरणसे लिया गया है।

२. गांधीजीकी दिनचारीके अनुसार।

३. छीता पटेलने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक जब्त की हुई जमीनें वापस नहीं मिलनीं तब तक वे ब्रिटिश प्रदेशमें पाँव नहीं रखेंगे।

ऐसी प्रतिज्ञा केवल छीताभाईने ही नही की, भारतमें जगह-जगह ऐसे अनेक व्यक्ति पड़े हुए है और उन्हीके पुण्य-प्रतापसे हमे आज ये जमीनें वापस मिल गई है।

किन्तु वापस मिली हुई अपनी ये जमीनें हमे पुन. खोना आना चाहिए। जमीनो की प्राप्तिका आप यह अर्थ न लगायें कि स्वराज्य मिल गया है और हम इस स्वराज्यका भोग करने योग्य हो गये हैं। यदि हमने ऐसा माना तो हम पापके भागी होंगे। उनके मिलनेसे इतना ही सूचित होता है कि जिस मार्ग पर हम आज तक चलते आये है, उसी मार्ग पर चलकर अन्तमे हम स्वराज्य प्राप्त करेगें। इसलिए अब हमें कुछ भी करनेके लिए नही रह गया, ऐसा माननेकी भूल हम न करे। यदि हम अपने स्वार्थ-साधनमे लगे रहे, पैसा कमाते रहे और जुआ खेलते रहे, तो हम यह जीती हुई बाजी हार जायेंगे, इतनी चेतावनी मैं आपको देना चाहता हूँ।[1]

आज हम प्रभुसे यह याचना करे कि आज तक उसने हमें जितना बल दिया, उससे सौ-गुना अधिक बल दे। अभी तक तो हमने अपना घर-बार खोनेकी, जेल जानेकी ही शक्ति प्रकट की है, अब हमें फाँसी पर चढने अथवा आगमे जलकर भस्म हो जानेकी शक्ति प्राप्त करनी है। यदि हमने इस शक्तिका विकास किया और उसे प्रकट किया, तो स्वराज्य मिलेगा, मिलेगा, अवश्य मिलेगा। किन्तु यदि हम यह भूल गये, तो हम अपनी सारी अर्जित सम्पत्ति खो बैठेंगे और हमें दिवाला निकालना होगा। मेरी आपसे विनय और प्रार्थना है कि हममे से कोई भी परीक्षाकी घड़ीमे ऐसा दिवाला न निकाले।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २६-२-१९३९, और हरिजन, १८-२-१९३९

३९२. राजकोट

राजकोटके संघर्षमें मेरी व्यक्तिगत दिलचस्पी है। वहीं मैंने मैट्रिक तककी अपनी शिक्षा पाई, और अनेक वर्षो तक मेरे पिता वहाँ दीवान रहे। वहाँके लोगोको जो तमाम मुसीबतें उठानी पड रही हैं, उन्हे मेरी पत्नी इतना ज्यादा महसूस करती है कि मेरी ही तरह वृद्ध और जेल-जीवनकी कठिनाइयोको बहादुरीके साथ बर्दाश्त करनेमें मुझसे कम समर्थ होते हुए भी उसे ऐसा लगता है कि उसे राजकोट जाना ही चाहिए। और सम्भवत. पाठकोके हाथोमे यह लेख पहुँचनेसे पहले वह वहाँ चली भी गई होगी।[2]

लेकिन मै तो इस संघर्ष पर तटस्थ रूपसे ही विचार करना चाहता हूँ। इस सम्बन्धमें अन्यत्र उद्धृत सरदारका वक्तव्य[3] इस दृष्टिसे एक कानूनी दस्तावेज है कि

१. इसके बादका अनुच्छेद हरिजन से लिया गया है।

२. कस्तूरबा गांधीको ३ फरवरीको सत्याग्रहके लिए रियासतमें प्रवेश करने पर गिरफ्तार कर लिया गया था।

३. देखिए परिशिष्ट १ ।

एक भी शब्द फालतू नही है और न उसमें ऐसी कोई बात है जिसका असंदिग्ध सबूतसे समर्थन न होता हो। और उस सबूतका अधिकाश उन लिखित दस्तावेजो पर आधारित है जो वक्तव्यके साथ परिशिष्टके रूपमें सलग्न है।

यह इस बातका सबूत पेश करता है कि राजकोटके शासक और उनकी प्रजा के बीच जो पवित्र समझौता हुआ था, वह जानबूझकर तोड़ा गया।[1] और समझौते को तोड़नेका काम ब्रिटिश रेजिडेंट[2] की, जिसका वाइसरायसे सीधा सम्बन्ध है, प्रेरणासे और उसके आदेशपर हुआ।

जो समझौता हुआ उसमें एक ब्रिटिश दीवान[3] भी शरीक था। उसे इस बात पर गर्व था कि वह ब्रिटिश सत्ताका प्रतिनिधि है। उसने शासक पर शासन करनेकी उम्मीद की थी। इसलिए वह इतना मूर्ख नही था कि सरदारके फन्देमें आ जाता। अतएव समझौता दुर्बल शासकसे जबर्दस्ती नही ऐंठा गया था। ब्रिटिश रेजिडेंटको काग्रेस और सरदारसे इसलिए नफरत थी कि वे ठाकुर साहबको दिवालिया होने और शायद गद्दी छिननेसे बचाना चाहते थे। काग्रेसके प्रभावको वह सह नही सका। इसलिए ठाकुरसाहब अपनी प्रजासे किये हुए वायदेको पूरा करें, उससे पहले ही उसने उनसे उसे तुड़वा दिया। सरदारको राजकोटसे जो समाचार मिल रहे है उनपर विश्वास किया जाये, तो रेजिडेट ब्रिटिश सिहके खूनी पंजे दिखाकर प्रजासे मानो यह कह रहा है कि 'तुम्हारा शासक तो मेरे हाथका खिलौना है। मैंने उसे गद्दी पर बैठाया है और उतार भी सकता हूँ। वह भलीभाँति जानता था कि उसने मेरी इच्छाके विरुद्ध काम किया है। इसलिए अपनी प्रजाके साथ समझौता करनेके उसके कामको मैंने चौपट कर दिया है।- तुम जो काग्रेस और सरदारसे सम्बन्ध रखते हो, उसके लिए मै तुम्हे ऐसा सबक दूँगा जिसे तुम अगली पीढ़ी-तक भी नही भूलोगे।'

शासकको एक तरहसे कैदी-सा बनाकर उसने राजकोटमें दमन-चक्र शुरू कर दिया है। सरदारको मिले एक ताजा तारमे कहा गया है:

> बेचरभाई जसानी और दूसरे स्वयंसेवक गिरफ्तार हो गये। २६ स्वयंसेवकोंको रातके वक्त एजेंसीकी सीमामें एक दूरकी जगह ले जाकर बुरी तरह पीटा गया। गाँवमें भी स्वयंसेवकोके साथ इसी तरहका व्यवहार हो रहा है। एजेंसीकी पुलिस स्टेट-एजेंसीका नियन्त्रण कर रही है और गैर-फौजी सीमामें निजी मकानोंकी तलाशी ले रही है।

ब्रिटिश भारतमें सविनय अवज्ञाके दिनोमे ब्रिटिश अधिकारी जो कुछ करते थे, उसीकी ब्रिटिश रेजिडेट वहाँ पुनरावृत्ति कर रहा है।

मै जानता हूँ कि यदि राजकोटकी जनता इस सब पागलपनका खुद पागल हुए बगैर मुकाबला कर सके और अपने पर होनेवाली क्रूरताओको विनम्रता मगर दृढ़ता

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड लिनलिथगोको", पृ० ३६५-६७, और "देशी राज्य", पृ० ३५३-५।

२. ई० सी० गिब्सन।

३. सर पैट्रिक आर० कैडेल।

और वहादुरीके साथ वर्दाश्त कर सके, तो वह विजयी ही नही होगी वल्कि ठाकुर साहवको भी आजाद करा सकेगी। वह यह सिद्ध कर देगी कि काग्रेसकी प्रभुताके अधीन वही सच्ची शासक है। लेकिन अगर वह पागल हो गई और दुर्बल प्रतिशोध की वात सोचने और हिंसात्मक कामोका सहारा लेने लगी, तो उसकी हालत पहलेसे भी वदतर हो जायेगी और तव काग्रेसकी प्रभुताका कोई असर नही पडेगा। काग्रेसकी प्रभुता तो केवल उन्हीके काम आती है जो अहिंसाके झंडेको अपनाते है जैसेकि ब्रिटेनकी प्रभुता 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' के सिद्धान्तको माननेवालोके ही काम आती है।

राजकोटकी प्रजा का जव शासक और रियासतके छोटे-से पुलिस दस्तेसे नही, वल्कि ब्रिटिश साम्राज्यके अनुशासित सैनिकोसे मुकावला है, तव ऐसी स्थितिमे कांग्रेसका कर्तव्य क्या है?

पहली और स्वाभाविक वात यह है कि राजकोटकी प्रजाकी सुरक्षा और सम्मान-रक्षाकी जिम्मेदारी काग्रेसी मन्त्रिमण्डल अपने ऊपर ले ले। यह सच है कि भारत सरकार अधिनियम मन्त्रियोंको रियासतोंके वारेमे कोई अधिकार नही देता। लेकिन वे एक ऐसे शक्तिशाली प्रान्तके शासक है, जिसमे राजकोट तो एक छोटा-सा टुकड़ा मात्र है। इस हैसियतसे भारत सरकार अधिनियमके दायरेसे वाहर भी उनके अधिकार और कर्तव्य है, जो और भी अधिक महत्वपूर्ण है। फर्ज कीजिए कि भारतमे जितने भी गुण्डे है वे सब राजकोटमें जा बसें, और वहाँसे वे हिन्दुस्तान-भरमे उत्पात मचायें, तो स्पष्टतया मन्त्रियोका यह अधिकार और कर्तव्य होगा कि वम्वईमे रहनेवाले ब्रिटिश प्रतिनिधिकी मार्फत वे सर्वोच्च सत्तासे राजकोटकी स्थिति सुधारनेकोक हे। और सर्वोच्च सत्ताका यह फर्ज होगा कि वह या तो ऐसा करे या मन्त्रियोसे हाथ धोये। क्योकि हरएक मन्त्रीपर ऐसी हरएक वातका असर पडे विना नही रह सकता, जो उसके प्रान्तकी भौगोलिक सीमामे होती है, फिर वह चाहे उसके कानूनी दायरेके वाहर ही क्यो न हो, खासकर जव वह वात उसकी शालीनताको भी चोट पहुँचाती हो। उन भागो में उत्तरदायी शासन है या नही, यह देखना चाहे मन्त्रियोका काम न हो, लेकिन अगर उन भागोमे प्लेग फैले या मार-काट मचे तो उसपर ध्यान देना उनका काम जरूर है। नही तो उनका शासन मात्र दिखावा और धोखा ही है। इस प्रकार उड़ीसाके मन्त्री अगर तालचेरके २६,००० शरणार्थियोको उनकी रक्षाका और भापणकी तथा सामाजिक तथा राजनीतिक स्तर पर मिलने-जुलनेकी आजादीका पूरा आश्वासन देकर उनके घर भेजनेमे कामयाव न हो, तो वे आरामसे अपनी कुर्सियो पर वैठे नही रह सकते। जो काग्रेस आज ब्रिटिश सरकारके साथ मिलकर काम कर रही है, वह ब्रिटिश सरकारके अधीनस्थ देशी राज्योंके अन्दर दुश्मन और विदेशी मानी जाये, यह वात तो असह्य है।

राजकोटमें ब्रिटिश रेजिडेंटकी प्रेरणासे प्रजाकी आजादीके फरमानको धृष्टतापूर्वक तोड़ा गया है। यह ऐसी गलती है जिसको यथासम्भव जल्दी-से-जल्दी दुरुस्त करना ही चाहिए। यह ऐसा जहर है जो सारे शरीरमे व्याप्त हो रहा है। क्या वाइसराय महोदय राजकोटके महत्वको समझकर इस जहरको दूर करेंगे?

वारडोली, ३० जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ४-२-१९३९

३९३. आधुनिक लड़की

मुझे ११ लडकियोकी तरफसे लिखा हुआ एक पत्र मिला है। उनके नाम और पते मेरे पास भेज दिये गये है। मैं उस पत्रमे सिर्फ इतना परिवर्तन करके नीचे दे रहा हूँ जिससे वह अधिक पठनीय बन जाये, लेकिन उसके अर्थमे कोई परिवर्तन नही कर रहा हूँ:

'हरिजन' के ३१ दिसम्बर, १९३८ के अंकमें "विद्यार्थियोके लिए लज्जाजनक"[1] शीर्षकसे प्रकाशित एक छात्राके पत्रपर की गई आपकी टिप्पणी विशेष ध्यान देने योग्य है। मालूम होता है कि आधुनिक लड़कीने आपको इतना ज्यादा चिढ़ा दिया है कि आपने उसके बारेमें यहाँ तक कह डाला कि उसे तो अनेक भँवरोकी दृष्टिमें आकर्षक बनना प्रिय है। आपका यह वचन, जिससे स्त्रियोंके बारेमें आपकी सामान्य धारणा प्रगट होती है, बहुत उत्साह-वर्धक नहीं है।

इन दिनों जब स्त्रियाँ चारदीवारीसे बाहर निकलकर पुरुषोंकी सहायताके लिए आगे आ रही है और जीवनका भार वहन करनेमें समान भाग ले रही हैं, यह सचमुच आश्चर्यकी बात है कि उनके साथ पुरुषों द्वारा दुर्व्यवहार होनेपर भी दोष उन्हींको ही दिया जाता है। इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि ऐसे दृष्टान्त दिये जा सकते हैं, जिनमें दोनों पक्षोंका एक-सा दोष हो। कुछ लड़कियाँ ऐसी हो सकती हैं, जिन्हें अनेक भँवरोंकी दृष्टिमें आकर्षक बनना प्रिय हो। परन्तु ऐसी घटनाओंसे यह तो सिद्ध होता ही है कि फूलकी खोजमें सड़कोंपर मँडरानेवाले अनेक भँवरे मौजूद हैं। और यह तो कभी नहीं माना जा सकता और न माना जाना चाहिए कि सभी आधुनिक लड़कियाँ ऐसी होती हैं और सभी आधुनिक नौजवान भँवरे होते हैं। आप खुद बहुत-सी आधुनिक लड़कियोंके सम्पर्कमें आये हैं और आपको उनके दृढ़ संकल्प, त्याग और अन्य उत्तम स्त्रियोचित गुणोंका परिचय मिला होगा।

जहाँ तक आपकी पत्र-लेखिकाके बताये हुए दुर्व्यवहारोंके खिलाफ लोकमत तैयार करनेका सवाल है, यह काम लड़कियोंके करनेका नहीं है। इसका कारण उनकी झूठी शर्म नहीं, बल्कि उनकी असमर्थता है।

१. देखिए पृ० २७०-४।

परन्तु आपके जैसे जगद्वंद्य महात्माका ऐसा कथन यह सिद्ध करता है कि आप भी इस दकियानूसी और अशोभनीय कहावतका समर्थन करते हैं कि 'नारी नरककी खान है।'

परन्तु उपरोक्त बातोंसे आप यह निष्कर्ष न निकालें कि आधुनिक लड़कियोंमें आपके लिए आदर नहीं है। वे आपका उतना ही आदर करती हैं, जितना हरएक नौजवान करता है। लेकिन उन्हें यह बहुत बुरा लगता है कि कोई उनसे घृणा करे या उनपर दया दिखाये। अगर वे सचमुच दोषी हों, तो वे अपना तौर-तरीका सुधारनेको तैयार हैं। उन्हें दोष देनेसे पहले उनका कोई दोष हो, तो वह पूरी तरह साबित किया जाना चाहिए। इस बारेमें वे न तो स्त्रियोंके प्रति विशेष सुविधाके नियमोंकी शरण लेना चाहती हैं और न यह चाहती हैं कि वे चुपचाप खड़ी रहें और न्यायाधीश मनमाने तौरपर उनको दोषी ठहरा दें। सचाईका सामना करना चाहिए; और आधुनिक लड़की सचाईका सामना करनेका काफी साहस रखती है।

मेरी पत्र-लेखिकाओको शायद यह पता नही कि मैंने ४० वर्षसे भी पहले दक्षिण आफ्रिकामे भारतीय स्त्रियोकी सेवा आरम्भ की थी, जब शायद इनमे से किसीका जन्म भी नही हुआ होगा। मेरा यह विश्वास है कि मै स्त्री-जातिके लिए कोई अपमानजनक बात लिख ही नही सकता। स्त्री-जातिके लिए मेरा आदर इतना अधिक है कि वह मुझे उनका बुरा सोचने ही नही दे सकता। जैसाकि अंग्रेजीमें कहा गया है, स्त्री पुरुषका उत्तम अर्धांग है। और मेरा लेख विद्यार्थियो की बेहयाईकी कलई खोलनेके लिए लिखा गया था, न कि लड़कियोकी दुर्बलताओका विज्ञापन करनेके लिए। परन्तु सही उपचार बता सकनेके लिए यह आवश्यक था कि मै रोगका निदान करते समय बीमारी पैदा करनेवाले सभी कारणोका उल्लेख करूँ।

'आधुनिक लड़की' शब्दका विशेष अर्थ है। इसलिए अपनी बातका दायरा कुछ लड़कियो तक सीमित रखनेका कोई सवाल नही था। परन्तु जो लडकियाँ अंग्रेजी शिक्षा पाती है, वे सब आधुनिक लड़कियाँ नही है। मै बहुत-सी ऐसी लड़कियोको जानता हूँ, जिनमे 'आधुनिक लड़की' की कोई बू नही है। परन्तु कुछ लडकियाँ ऐसी है जो आधुनिक लड़कियाँ बन गई है। मेरे शब्दोका अर्थ भारतीय छात्राओको यह चेतावनी देनेका था कि वे आधुनिक लड़कीकी नकल करके उस समस्याको, जो एक गम्भीर खतरा बन गई है, पेचीदा न बनाये। कारण, जिस समय मुझे उपरोक्त पत्र मिला उसी समय आन्ध्रकी एक छात्राका पत्र भी मिला था, जिसमे आध्रके विद्यार्थियोके व्यवहारकी सख्त शिकायत की गई थी। वर्णनसे लगता है कि यह व्यवहार उससे भी अधिक अशोभनीय है जिसका लाहौरवाली लड़कीने वर्णन किया है। आन्ध्रकी इस पुत्रीका कहना है कि उसकी सहेलियोके सादे ढंगसे उनकी रक्षा नही होती। परन्तु उनमे इतना साहस नही है कि जो लड़के अपनी संस्थाके लिए कलंक-स्वरूप है, उनके जंगलीपनका भडाफोड़ कर सकें। मै विश्वविद्यालयके अधिकारियोसे इस शिकायतपर ध्यान देनेका अनुरोध करता हूँ।

इन ११ लडकियोसे मेरा अनुरोध है कि वे विद्यार्थियोके असभ्य व्यवहारके खिलाफ एक जिहाद शुरू कर दे। ईश्वर उन्ही की मदद करता है जो अपनी मदद आप करते है। लडकियोको पुरुषोकी गुडागर्दीसे अपनी रक्षा करनेकी कला सीखनी ही चाहिए।

बारडोली, ३० जनवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ४-२-१९३९

३९४. जयपुर

जयपुर तथा राजकोटके संघर्षका अन्तर पाठकोको समझा देना जरूरी है।

राजकोटका सघर्ष स्पष्टत इसलिए है कि राज्यके अन्दर उत्तरदायी सरकार कायम की जाये, और अब इसलिए कि राजाने अपनी प्रजाको जो वचन दिया था, उसका पालन कराया जाये। राजकोटके हरएक मर्द और औरतमे अगर कुछ आन होगी, तो वहाँ के ब्रिटिश रेजिडेटके अपमानजनक व्यवहारका मुकाबला वे मरते दम तक करेगे।

किन्तु जयपुरका सघर्ष एक बहुत छोटे प्रश्नको लेकर है। राज्यकी एक राजनीतिक संस्थाको उत्तरदायी शासनकी माँग करनेके अपराधमे एक तरहसे गैर-कानूनी करार दे दिया गया है; और उसके अध्यक्ष पर, जो खुद जयपुरके निवासी है, पाबन्दी लगा दी गई है। जिस क्षण ये पाबन्दियाँ उठा ली जायेगी, और आजादीके साथ मिलने-जुलने, सभा वगैरह करनेका अधिकार दे दिया जायेगा, उसी क्षण सविनय अवज्ञा बन्द हो जायेगी। पर यहाँ भी ब्रिटिश सिंहने अपना भयंकर पंजा बढाया है। सीकरके रावराणाके कानूनी सलाहकार बैरिस्टर चुडगरकी जयपुरके अग्रेज प्रधानमन्त्रीके साथ बातचीत हुई थी। बातचीतके साराशकी निम्नलिखित रिपोर्ट श्री चुडगरने जमनालालजीके पास भेज दी .

> आपको यह जतला देना मै अपना फर्ज समझता हूँ कि जयपुरके प्रधान मन्त्री सर बीकम सेंट जॉनसे गत ९ जनवरीको ११ बजे मै नटनीका बाग स्थित उनके बंगलेपर सीकरके बारेमें मिला था। उस समय जयपुरके मामलेपर भी हमारी थोड़ी-सी चर्चा हुई थी, जिसका सार यह है:
>
> मैंने सर बीकमसे कहा कि जयपुर राज्यकी हदमें जमनालालजीके प्रवेश पर जो पाबन्दी लगाई गई है, उससे सारे हिन्दुस्तानमें लाखों आदमियोंको दुःख और आश्चर्य हुआ है — खासकर इसलिए कि जमनालालजी एक शान्तिप्रिय व्यक्तिके रूपमें अच्छी तरह प्रसिद्ध है, और इस वक्त तो उनका उद्देश्य राज्यके अकाल-पीड़ित इलाकेमें सहायता-कार्यकी देखरेख और उसका निर्देशन ही था। इसके जवाबमें सर बीचमने यह तो स्वीकार किया कि आप शान्तिप्रिय

व्यक्ति हैं, पर उनका ऐसा खयाल था कि आप और आपके आदमी अकाल-पीड़ित इलाकोंकी आम जनताके सम्पर्कमें आयेंगे; और यह उन्हें चन्द स्पष्ट राजनीतिक कारणोंसे पसन्द नहीं था। मैंने उन्हें बताया कि जमनालालजी अनिश्चित काल तक इस आदेशको माननेवाले नहीं हैं इसलिए राज्य तथा प्रजाके हितकी दृष्टिसे यह बेहतर होगा कि यह आदेश मिलनेके बाद जमनालालजीने पत्रोंमें जो वक्तव्य प्रकाशित कराया है, उसे ध्यानमें रखते हुए आदेश वापस ले लेना चाहिए, जिससे कि अनावश्यक संकट टल जाये। सर बीकम पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। उन्होंने कहा कि जमनालालजी अगर आदेशकी अवज्ञा करते हैं, तो उनके ऐसा करनेसे पैदा होनेवाली किसी भी स्थितिका मुकाबला करनेके लिए मैं तैयार हूँ। उन्होंने यह भी कहा कि कांग्रेसवाले अहिंसक संघर्ष द्वारा क्रान्ति करनेपर उतारू हैं, पर अहिंसा तो शक्तिमें हिंसासे किसी भी तरह कम नहीं है, बल्कि उसमें हिंसा से भी प्रबल शक्ति है। उन्होंने आगे कहा कि हिन्दुस्तानी लोग अंग्रेज जातिकी स्वभावगत मानवीय भावनाओंका अनुचित लाभ उठा रहे हैं। अंग्रेजोंकी जगह हिन्दुस्तानमें अगर जापान या हिटलरका शासन होता तो अहिंसा कभी भी इतनी कारगर नहीं हो सकती थी।

इसके बाद उन्होंने कहा कि मैं पूर्ण विचारके बाद इस रायपर पहुँचा हूँ कि अहिंसा चाहे कितनी ही शुद्ध हो, उसका जवाब हिंसासे ही देना चाहिए। और, जयपुरके अहिंसक आन्दोलनका जवाब मैं 'मशीनगन' से दूँगा। मैंने सर बीकमको ध्यान दिलाया कि सब अंग्रेज इस प्रकार नहीं सोचते हैं और अंग्रेज जाति भी, एक राष्ट्रके रूपमें, उनके विचारोंसे सहमत नहीं होगी। उन्होंने कहा कि "सहमत हो या न हो", पर मेरी खुदकी तो ऐसी ही राय है कि अहिंसा और हिंसामें कोई अन्तर नहीं है, और अहिंसाका जवाब हिंसासे देनेमें कुछ भी अनुचित नहीं है।

अगर आप या महात्माजी इस वक्तव्यका कोई उपयोग करना चाहें, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।

मैं तो यह पढ़कर हक्का-बक्का रह गया। मुझे यह इतना आश्चर्यजनक लगा कि मैंने यह वक्तव्य जयपुरके प्रधानमन्त्रीको अपने निम्नलिखित (१८-१-१९३९) पत्रके साथ भेज दिया.[1] प्रधानमन्त्रीने (२०-१-१९३९ को) मुझे उस पत्रका यह जवाब दिया :

आपका १८ तारीखका कृपापूर्ण पत्र प्राप्त हुआ। साथ ही श्री चुडगरके उस पत्रकी नकल भी मिली जो उन्होंने सेठ जमनालाल बजाजको लिखा था। उस पत्रमें जो-कुछ लिखा है, उसकी सचाईकी जांच करनेसे पहले आपने उसे प्रकाशित करनेमें झिझक दिखाई, यह बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य था, जिसकी मैं निजी

१. पत्रके लिए देखिए पृ० ३३६।

तौरपर इसलिए बहुत कद्र करता हूँ क्योंकि अब मैं आपको यह बतला सकता हूँ कि इस पत्रमें दिया हुआ मेरे विचारोंका बयान बिलकुल गलत है। समझमें नहीं आता कि श्री चुडगर मेरे कथनको इतना गलत कैसे समझे। इस घटनासे भविष्यमें ऐसी मुलाकातें देनेके सम्बन्धमें मेरी झिझक और पक्की हो गई है।

अब चूंकि हकीकत आपको मालूम हो गई है, इसलिए मुझे विश्वास है कि ऐसे पत्रको प्रकाशित करनेकी आपकी अनिच्छा और पुष्ट हो जायेगी। लेकिन अगर आप विपरीत निर्णयपर पहुँचे, तो जितनी जल्दी हो सके, कृपया मुझे उसकी खबर दे दें, ताकि मैं उचित कार्रवाई कर सकूँ।

आपने मेरे ऊपर जो कृपा दिखाई उसके लिए पुनः धन्यवाद।

इसका जवाब मैंने इस प्रकार दिया (२२-१-१९३९).[1]

उसका जवाब (२५-१-१९३९ को) यह आया:

आपके इसी २२ ता० के पत्रके लिए अनेक धन्यवाद।

मुझे विश्वास है कि निजी तथा व्यक्तिगत समझी जानेवाली मुलाकातको कलमबन्द करनेमें मेरी स्वाभाविक हिचकिचाहटके प्रति आप सहानुभूति दिखायेंगे — खासकर जबकि मुलाकात लेनेवाला गलत रिपोर्ट प्रकाशित करनेकी धमकी दे चुका है। मुझे विश्वास है कि आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि ऐसी कार्रवाईसे केवल कटुता ही बढ़ेगी, और जहाँ तक मैं देखता हूँ कोई उपयोगी हेतु पूरा नहीं होगा।

लेकिन अगर श्री चुडगर अपनी गलत रिपोर्ट प्रकाशित कर देना उचित ही समझें तो मुझे विश्वास है कि आप मुझे आगाह कर देंगे ताकि मैं, जैसाकि मैं पहले ही कह चुका हूँ, इस सम्बन्धमें उचित कार्रवाई कर सकूँ।

इसका जवाब मैंने (२७-१-१९३९ को) नीचे लिखे अनुसार भेजा:[2]

यह सारा पत्र-व्यवहार मैंने श्री चुडगरको दिखाया और उन्होंने इस सम्बन्धमें (२८-१-१९३९ को) श्री जमनालालजीको जो पत्र लिखा था, उसकी निम्नलिखित नकल मेरे पास भेज दी:

महात्माजी और सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉनके बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ है और जिसका अन्त महात्माजीके २७ तारीखके पत्रसे होता है, उसे मैं पढ़ गया हूँ। आपको मैंने १५ तारीखको जो पत्र लिखा था उसे मैंने फिर एक बार ध्यानपूर्वक पढ़ लिया है। मैं कहता हूँ कि उसमें जो बयान मैंने दिया है, वह मेरे और सर बीकमके बीच हुई बातचीतकी बिलकुल सही रिपोर्ट है।

१. पत्रके पाठके लिए देखिए पृ० ३४९।
२. पत्रके पाठके लिए देखिए पृ० ३७०।

प्रधानमन्त्रीके पत्र बड़े ही विचित्र हैं। मैंने उनसे माँगी तो थी रोटी, पर उन्होंने दिया मुझे पत्थर! अब अगर वे अपना बयान देनेमे असमर्थ हो और इस स्थितिमें मै श्री चुडगरके बयानको सच्चा मान लूँ, तो वे (सर बीकम) मुझे क्षमा करे। उनका महज इनकार करना और साथ ही धमकी देना, कोई महत्व नही रखता।

कांग्रेस, ताकत रखते हुए भी, इन्तजार करती रहे और चुपचाप देखती रहे, और जयपुरकी प्रजाको मानसिक तथा नैतिक भूखसे मरने दे — खासकर जबकि प्राकृतिक अधिकारपर लगाई गई ऐसी पाबन्दीके पीछे ब्रिटिश साम्राज्यकी ताकत हो — यह सम्भव नही है। अगर प्रधानमन्त्री जो कुछ कर रहे हैं उसे करने का उन्हे *अधिकार* नही है तो कम-से-कम उन्हे उस पदसे तो हटा ही देना चाहिए।

बारडोली, ३० जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-२-१९३९। (सी० डब्ल्यू० ७८०९) से भी; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

३९५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

बारडोली
३० जनवरी, १९३९

चि० कान्ति,

मैंने तुझे कई सन्देश भेजे थे। बा, मै और सब लोग चिन्तामें रहते है कि तेरे पत्र क्यों नही आते। आज तेरा पत्र मिला। मेरी तबीयत ठीक ही है। तुझे हफ्तेमे एक कार्ड लिखना तो नही ही भूलना चाहिए।

रामचन्द्रनके साथ मेरी खूब बात हुई है। उसका पत्र अभी ही आया। अब उसे विश्वास हो गया है। सरस्वतीको भेजनेके लिए उसे मना तो रहा हूँ। इसमे सरस्वतीकी मदद चाहिए।

अब प्रार्थनाका समय हो गया, इसलिए बस।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैं पहलीको सेगाँव जाऊँगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३५७) से; सौजन्य : कान्तिलाल गांधी।

३९६. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

३० जनवरी, १९३९

चि० कान्ति,

इन दिनो मै कोई सुझाव अपनी ओरसे पेश नही करता। प० का नाम मेरे आगे रखा गया था, और वही एक नाम था। दूसरी बार चुने जानेके खिलाफ मैने अपनी आपत्ति व्यक्त की थी।

कलका मेरा पत्र मिला होगा।

सरस्वतीके पत्र मेरे पास कभी-कभी आते है।

अपनी तबीयतका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३५६) से, सौजन्य : कान्तिलाल गाधी।

३९७. "लताड़ और प्यार"

अभी हालमे बम्बईमें हुई नरेन्द्र मण्डलकी बैठकका निम्नलिखित विवरण, जिसे प्रामाणिक बताया गया है, पढने मे पाठकोको दिलचस्प मालूम होगा — साथ ही इसे पढ़ते हुए उन्हे दु ख भी होगा·

> बीकानेरके महाराजा साहबने राजकोटकी घटनाओंका विवरण देते हुए चर्चा आरम्भ की। उन्होने कहा कि वहाँकी अशान्तिका कारण यह है कि वहाँ प्रभावशाली जागीरदारोंका अभाव है, निजी खर्च और राज्यके खर्चमें भेद नहीं रखा गया है और काठियावाड़की रियासतें छोटी हैं। कांग्रेस इसे एक आजमाइशी लड़ाई मानती है और राजकोटको उसने कई कारणोंसे चुना है। उसमें मुख्य कारण ये हैं : राजकोट छोटी और सीमित साधन-सामग्रीवाली रियासत होणेके कारण कांग्रेसके हमलेका सामना देर तक नहीं कर सकेगी, और ऐसे हमलेके लिए पृष्ठभूमि तैयार की जा चुकी है। काठियावाड़में कांग्रेस सशक्त और सक्रिय है, और फिर लड़ाईका संचालन करने तथा अभियान चलानेके लिए सरदार वल्लभभाई पटेल पास ही बैठे हुए हैं। इसके बाद, बीकानेरके महाराजा साहबने यह सुझाव दिया कि कई-एक रियासतोंके लिए संयुक्त पुलिस रखी जाये, क्योंकि अलग-अलग रियासतोंके — विशेषकर छोटी

रियासतोंके — साधन-सामग्री सीमित हैं और इसलिए इस खतरेका सामना करनेके लिए, जो हम सबपर समान रूपसे आया हुआ है, वे काफी नहीं हैं। सर्वोच्च सत्ता और उसके प्रतिनिधियोंका भी ऐसा ही संकेत है। उन्होंने कहा कि ब्रिटिश भारतीय प्रदेशोंसे मिलनेवाली सहायता और सहयोगपर भी अब ज्यादा निर्भर नहीं रहा जा सकता, क्योंकि वहाँ कांग्रेसका ही बोलबाला है और स्वभावतः वे लोग भारतीय रियासतोंकी मदद नहीं करना चाहेंगे। उल्टे मौन या मुखररूपसे उनकी सहानुभूति तो भारतीय रियासतोंकी प्रजा अथवा बाहरी आन्दोलनकारियोंके साथ है। उड़ीसाकी रियासतोंमें जब इसी तरहका उपद्रव हुआ और उन्होंने उड़ीसा सरकारसे मदद माँगी तो उड़ीसा सरकारके रुखसे वास्तवमें यही बात प्रकट हुई थी।

अपनी बात जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि कांग्रेस भारतीय रियासतों की ओर अब अधिकाधिक ध्यान देगी। अब तक कांग्रेसकी नीति, जैसाकि कांग्रेसके हरिपुरा-अधिवेशनके प्रस्तावमें और उससे पहले बताया गया था, यह थी कि वह रियासतोंके मामलोंमें हस्तक्षेप नहीं करेगी और रियासतोंकी प्रजासे यही कहा गया था कि वे अपने बलबूतेपर ही सब काम करें। कारण स्पष्ट है। कांग्रेस सक्रिय रूपसे ब्रिटिश भारतकी समस्याओंमें व्यस्त थी और भारतीय रियासतोंकी जनतामें शक्ति पैदा करना और उनमें आत्म-निर्भरताकी भावना पोषित करना चाहती थी। कांग्रेस ब्रिटिश भारतमें अपना दबदबा लगभग कायम कर चुकी है, अतः यह स्वाभाविक है कि अब वह अपनी शक्ति और प्रभावका उपयोग भारतीय रियासतोंके मामलेमें करे।

एक दूसरी बात भी है: कांग्रेसजनोंमें जो मतभेद पैदा हो रहे हैं उनकी ओरसे लोगोंका ध्यान हटाने के लिए लड़ाईकी योजनाएँ सामने लाना जरूरी है। राजनीतिका यह एक सूक्ष्म किन्तु छोटा सिद्धान्त-वाक्य है। इटली द्वारा अबीसीनियाकी विजय और आस्ट्रिया और सूडेटेन लैंडके विरुद्ध जर्मनीकी मुहीमोंके कारणोंमें एक यह भी है। इससे इन शक्तियोंको दलगत फूटसे लोगोंका ध्यान हटाने और अपने अनुयायियोंमें उत्साह पैदा करनेमें सहायता मिलती है। हमें सर्वोच्च सत्ताका रुख भी ध्यानमें रखना है। इस सम्बन्धमें इस विषयपर अभी हालमें श्री गांधीने जो-कुछ कहा उसे हमें ध्यानमें रखना है। मेरी रायमें किसी बाहरी शक्तिकी बनिस्बत, हमें अपनी ही ताकतपर ज्यादा भरोसा रखना चाहिए; क्योंकि बाहरी सहायता मिल भी सकती हो तो वह अनिश्चित और अपर्याप्त ही होगी।

राजकोटके मामलेके विहंगावलोकनके पश्चात महाराजाने राजपूतानाकी रियासतोंकी समस्याकी चर्चा की और राजाओंको उन्होंने उस नीतिकी रूपरेखा बताई जिसका अनुसरण वह अपनी रियासत बीकानेरमें कर रहे थे। उन्होंने बताया कि उन्होंने १९१३ में राज्य विधानसभा शुरू की थी और यह सभा

तबसे सरकारी व्ययपर चर्चा करती आई है। बीकानेरमें 'राजपत्र'—सरकारी गजट—प्रकाशित होता है। बाहरसे आनेवाले आन्दोलनकारियों और उन आन्दोलनकारियोंमें भेद करते हैं जो राज्यके ही प्रजाजन हैं। उन्होंने कहा कि यह अन्तर बहुत महत्त्वपूर्ण है और सदा ध्यानमें रखा जाना चाहिए। बाहरी आन्दोलनकारी, जिनकी रियासतकी भलाईमें कोई आर्थिक दिलचस्पी नहीं है, और जो मात्र नेता कहलाने और जनताकी नजरोंमें आनेके लिए यह भूमिका अपनाते हैं उन्हें तो तत्काल निकाल बाहर करना चाहिए। उनका कोई लिहाज नहीं करना चाहिए। उनकी गतिविधियाँ जारी रहना रियासतके लिए संकट-रूप है और वहाँ उनकी उपस्थिति खतरनाक है। इसका उपाय है कि उनको रियासतसे बाहर कर दिया जाये और उनके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये। यद्यपि रियासतके अन्दरके आन्दोलनकारी भी रियासतके लिए और रियासतकी शान्ति-सुव्यवस्था तथा प्रगतिके लिए उतने ही हानिकर हैं, परन्तु उनकी स्थिति कुछ भिन्न है। राज्यमें उनकी थोड़ी-बहुत जमीन-जायदाद होती है, उससे उनके कुछ हित-सम्बन्ध होते हैं। वेकभी-कभी शायद ऐसी तकलीफोंकी भी शिकायत करते हैं जो किसी सीमा तक सही होती हैं और ऐसी तकलीफें जहाँ तक हो सके दूर कर देनी चाहिए ताकि उस आन्दोलनमें जोर न रह जाये जिसका कि वे समर्थन और पोषण करते हैं। जहाँ तक सम्भव हो सही शिकायतें दूर कर दी जानी चाहिए और आन्दोलन दबा दिया जाना चाहिए। यदि आन्दोलनकारी प्रामाणिक किस्मके हों और शिक्षित बेकारोंके वर्गमें से हों तो रियासतमें उन्हें उपयुक्त नौकरी देकर उनके मुँह बन्द करनेकी कोशिश की जानी चाहिए। कहावत है कि "कौर डालकर मुँह बन्द कर देना ज्यादा अच्छा है।"

उसके बाद प्रजा-मण्डलोंके प्रश्नपर चर्चा हुई। इस चर्चामें बीकानेरके महाराजा, सर कैलाश नारायण हकसर, जयपुरके रा० ब० पण्डित अमरनाथ अटल, उदयपुरके पण्डित धर्मनारायण और अलवरके मेजर हार्वेने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। बूँदीके श्री रावर्टसन और सिरोहीके श्री मैकग्रेगरने कुछ प्रश्न पूछे। श्री अटलने जयपुरमें प्रजामण्डलकी उत्पत्ति और विकासका सविस्तार वर्णन किया। उससे यह स्पष्ट था कि इन प्रजा-मण्डलोंके संस्थापक और उन्नायक प्रजाके असन्तुष्ट लोग और रियासतकी नौकरीसे बरखास्त किये गये छोटे अधिकारी होते थे। सबको सावधान और सचेत रहने के लिए आगाह किया गया। इस बातपर सहमति प्रकट की गई कि इन लोगोंपर कड़ी निगरानी रखी जाये और उनकी गतिविधियोंकी पूरी खबर दी जाये चाहे वे कितनी ही सीमित या व्यापक क्यो न हों। यह कहा गया कि इन प्रजा-मण्डलोंको तत्काल कुचल दिया जाये और उन्हे शक्ति या प्रभाव प्राप्त नहीं करने दिया

जाये। यदि उन्होंने कुछ शक्ति या प्रभाव प्राप्त भी कर लिया हो तो चतुराईसे उनकी गतिविधियोंको शारदा-कानून जैसे सामाजिक कार्योंकी ओर मोड़ देनेका प्रयास किया जाये। दूसरी ओर यह सुझाव दिया गया कि रियासतोंकी जनता की प्रामाणिक और निर्दोष सलाहकार संस्थाएँ बनाने को प्रोत्साहन दिया जाये, जो रियासतोंमें तथाकथित उत्तरदायी सरकारके विषयमें लोगोंको प्रशिक्षण देने के कामकी शुरुआत करे। रियासतोंसे बाहरके प्रजामण्डलोंकी उपेक्षा की जाये।

सर्वश्री गांधी और पटेल-जैसे कांग्रेसके नेता रियासतोंमें जिस उत्तरदायी शासनकी वकालत कर रहे हैं उसके बारेमें सामान्य राय यह थी कि रियासतो की प्रजा इसके लिए बिलकुल तैयार नहीं है और इसलिए ऐसा शासन देना रियासतों और प्रजाके लिए हानिकर और व्यवस्थित प्रगति तथा शान्तिके लिए घातक होगा। इस सभाकी रायका सार इस सूत्रमें आ जाता है कि 'लोगोकी शिकायतों आदिपर ध्यान दो परन्तु उन्हे उत्तरदायी शासनकी बात मत करने दो।' बीकानेरके महाराजाने कांग्रेसके प्रति अपनी नीति दृढ़तापूर्वक बताई। उन्होंने जो-कुछ कहा उसका सार यह था कि 'न्याय दो परन्तु दृढ़ बने रहो। लॉर्ड मिंटोके सन् १९०८में लिखित प्रसिद्ध पत्रमें सुझाई गई दमन और समझौते की, 'लताड़ और प्यार' की, नीतिका अनुसरण करो। कब नरमी बरती जाये और कब कठोरता दिखाई जाये और दोनोंका मिश्रण कैसे किया जाये, इन सबमें तालमेल रखना होगा और इसके लिए काफी चतुराई और विवेक-बुद्धिकी आवश्यकता होगी। निर्णय इस बातपर निर्भर करेगा कि रियासत-को जिस स्थितिका सामना करना पड़ रहा है वह कैसी है और प्रस्तुत समस्या किस प्रकार की है। बहरहाल उनकी चर्चामें यह बात बिलकुल साफ थी कि प्रजा-मण्डलोंको ऐसी सामान्य संस्थाओं और राजनीतिक संस्थाओंके रूपमें रियासतोंमें स्थापित नहीं होने देना चाहिए और यदि वे पहलेसे कायम हो तो उन्हे कुचल दिया जाना चाहिए और उनपर प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिए, और उनकी गतिविधियोंपर कड़ी निगरानी रखी जानी चाहिए। उनका दमन कैसे किया जाये, इसके लिए कोई सुनिश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते। अलग-अलग रियासतें अपनी योजनाएँ बनायेंगी और काम करने के अपने ढंग निश्चित करेंगी।

निम्नांकित अस्थायी निर्णय लिये गये: १. रियासतोंके लिए संयुक्त पुलिस रखी जाये; २. प्रजा-मण्डलोंको तत्काल कुचल दिया जाये; ३. प्रजाकी उचित शिकायतें दूर की जायें; ४. बाहरी आन्दोलनकारियोंके साथ सख्ती बरती जाये और उन्हें बाहर निकाल दिया जाये; ५. सामाजिक गतिविधियोंको प्रोत्साहन दिया जाये किन्तु राजनीतिक गतिविधियोंको नहीं; ६. रियासतके प्रजाजनोंकी प्रामाणिक सलाहकार समितियोंको प्रोत्साहन दिया जाये; ७. 'दमन और समझौते' की तथा 'न्याय दो पर दृढ़ बने रहो' की नीतिका पालन किया जाये।

यदि इस रिपोर्टमे सम्मेलनमे दिये गये भाषणोका यह सार सही है तो इससे पता चलता है कि कुछ रियासतोमे अन्तत स्वतन्त्रताका जो आन्दोलन चल पडा है, उसे कुचलने का कुचक्र चल रहा है। लताड़ और प्यार साथ-साथ चलनेवाले है। इससे मुझे एक लैटिन कहावत याद आती है जिसका अर्थ है. "मुझे यूनानियोसे डर लगता है खासकर जब वे भेट लाते है!" आगेसे शासकोके अनुग्रहको सन्देहकी दृष्टिसे ही देखना होगा। जब-कभी सुधार किये जायेगे, वे लोगोकी सुख-समृद्धिके लिए नही अपितु कौर डालकर मुँह बन्द करनेके लिए किये जायेगे। परन्तु मनुष्यकी योजनाएँ, वह चाहे राजा ही क्यो न हो, प्राय उलट जाती देखी गई है। ईश्वरको अक्सर मनुष्यकी योजनाओको उसकी अपेक्षासे भिन्न बिलकुल दूसरा ही मोड़ देते पाया गया है। यदि लोग भयसे मुक्त हो गये है और उन्होने आत्मबलिदानकी कला सीख ली है तो उन्हे किसीके अनुग्रहकी कोई आवश्यकता ही नही है। लताड़से वे कभी नही डरेगे। जिस चीजकी उन्हे जरूरत होगी, उसे वे ले लेगे और उसे आत्मसात् कर लेगे।

बारडोली, ३१ जनवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-२-१९३९

३९८. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

३१ जनवरी, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

श्री क० मा० मुन्शी, सर पुरुषोत्तमदास और अब श्री घनश्यामदास बिडलाने भी मुझे बताया है कि रियासतोके बारेमे और विशेषकर जयपुरके बारेमे 'हरिजन' मे प्रकाशित मेरे लेखोसे आपको बडी परेशानी हो रही है। इसलिए मैने सलग्न लेख[1] का प्रकाशन स्थगित कर दिया है। वैसे, मै यह लेख पूनामें 'हरिजन' के प्रबन्धकको भेज चुका था।

यह कहनेकी जरूरत नही कि मेरी यह कतई इच्छा नही है कि मै ऐसा कोई काम करूँ जो आपको परेशानीमें डालनेवाला हो। यदि यह मेरे बसके ही बाहर हो तब दूसरी बात है। मेरा उद्देश्य यह है कि सम्बन्धित प्रजाको न्याय मिले।

मैने अपने पिछले पत्रमे[2] जिन तीन मामलो का जिक्र किया है, उनके बारे में आप कोई प्रभावपूर्ण कारंवाई कर सके तो कितना अच्छा हो!

१. देखिए "जयपुर", पृ० ३८९-९।

२. देखिए पृ० ३६५-७।

क्या मैं यह आशा रखूं कि आप मुझे एक पंक्ति लिखकर यह बतायेंगे कि इस लेखका, जिसका प्रकाशन फिलहाल स्थगित कर दिया गया है, मैं क्या करूँ?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७८०६) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला।

३९९. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

बारडोली
३१ जनवरी, १९३९

चि० पुरुषोत्तम,

ये रहे पण्डितजी के बारेमें दो शब्द।[1]

तेरी तबीयत ठीक रहती होगी।

कभी-कभी कुसुम, मजु वगैरहके समाचार भी देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

४००. नारायण मोरेश्वर खरेकी स्मृतिमें[2]

बारडोली
३१ जनवरी, १९३९

पण्डितजीके बारेमें लिखना मुझे अच्छा लगता है। उनके अनेक मधुर संस्मरण मेरे मस्तिष्कमें भरे पड़े हैं। लेकिन उन्हें लिखनेका समय बिलकुल नहीं है। सारे संस्मरणोंका सार यह है कि पवित्रता और संगीतका मेल मैंने बहुत थोड़े व्यक्तियोंमें देखा है, और यह मेल पण्डितजीमें बड़ी मात्रामें था। गुजरातमें अच्छे संगीतके प्रति रुचि उत्पन्न करनेवाले पण्डितजी ही थे। इसके लिए गुजरात सदैव उनका ऋणी रहेगा।

मो० क० गांधी

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१. देखिए अगला शीर्षक।

२. इनका ६ फरवरी, १९३८को हरिपुरामें निधन हो गया था।

४०१. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

बारडोली
३१ जनवरी, १९३९

श्री सुभाष बोसने अपने प्रतिद्वन्द्वी उम्मीदवार डॉ० पट्टाभि सीतारामैयापर निर्णायक विजय प्राप्त की है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि शुरूसे ही कुछ कारणोवश, जिनमे इस समय जानेकी कोई आवश्यकता नही है, मैं निश्चित रूपसे उनके दोबारा चुने जानेके विरुद्ध था। इस चुनावके सम्बन्धमे उन्होने जो वक्तव्य जारी किये है, उनमे दी गई दलीलो या तथ्योसे मैं सहमत नही हूँ। मेरे खयालमें तो उन्होने अपने सहयोगियोके बारेमे जो-कुछ कहा है, वह अनुचित और अशोभनीय है। तो भी मैं उनकी विजयसे खुश हूँ और चूँकि मौलाना अबुल कलाम आजाद द्वारा अपना नाम वापस ले लेनेके बाद डॉ० पट्टाभिको चुनावसे पीछे न हटनेकी सलाह मैंने दी थी, इसलिए यह हार उनसे ज्यादा मेरी है। अगर मैं अमुक निश्चित नीति और सिद्धान्तोका प्रतिनिधित्व नही करता हूँ, तो फिर कुछ भी नही हूँ। इसलिए यह स्पष्ट हो गया है कि कांग्रेसके प्रतिनिधि उन सिद्धान्तोको और उस नीतिको मान्य नही करते, जिनका कि मैं प्रतिपादन करता हूँ।

इस हारसे मैं खुश हूँ। इससे मुझे उस बातको अमलमे लानेका अवसर मिला है, जिसकी सलाह मैंने दिल्लीमे हुई अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीमे अल्पसंख्यक गुटवालोके सभासे उठकर चले जानेपर एक लेख[2] लिखकर दी थी। सुभाष बाबू अब उन लोगोकी कृपाके सहारे अध्यक्ष नही बने जिन्हे वे दक्षिण पथी कहते है, बल्कि चुनावमे जीतकर अध्यक्ष बने है। इससे वह अपने ही समान विचारवाली कार्य-समिति चुन सकते है और बिना किसी बाधा या अड़चनके अपना कार्यक्रम अमलमे ला सकते है।

एक बात तो अल्पसख्यक और बहुसख्यक दोनो गुटोको मान्य है; दोनों ही काग्रेसकी आन्तरिक शुद्धि चाहते है। 'हरिजन'मे प्रकाशित मेरे लेखोसे यह साफ हो चुका है कि काग्रेस तेजीसे एक भ्रष्ट सगठन बनती जा रही है, क्योकि उसके रजिस्टरोमे बहुत बडी सख्यामे जाली नाम दर्ज है।[3] पिछले कई महीनोंसे मैं यह सलाह देता आ रहा हूँ कि काग्रेसके इन रजिस्टरोका सशोधन किया जाये और उन्हे नये सिरेसे लिखा जाये। मुझे इसमे जरा भी शक नही कि इस समय इन नकली मतदाताओके कारण जो प्रतिनिधि चुने गये है, छानबीन करनेपर वे प्रतिनिधि

१. यह साधन-सूत्रमें "आइ रिजॉयस इन दिस डिफीट" शीर्षकके अंतर्गत प्रकाशित हुआ था तथा बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-२-१९३९, हिन्दू, ३१-१-१९३९, और हिन्दुस्तान टाइम्स, १-२-१९३९ तथा अन्य अनेक समाचारपत्रोंमें भी प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए खण्ड ६७, पृ० ४४६-७।

३. देखिए "अन्दर की गन्दगी", पृ० ३५५-७।

नही रहने पायेंगे। लेकिन मै ऐसा कोई उग्र कदम उठानेका सुझाव नही दे रहा हूँ। इतना ही काफी होगा कि रजिस्टरोसे जाली मतदाताओके नाम निकाल दिये जाये और ऐसी व्यवस्था की जाये कि भविष्यमे ऐसा करना सम्भव न रह जाये।

अल्पसंख्यकोको हतोत्साह होनेकी जरूरत नही। अगर वे काग्रेसके वर्तमान कार्यक्रममे विश्वास रखते है तो उन्हे मालूम हो जायेगा कि उसके अनुसार काम किया जा सकता है, फिर चाहे वे अल्पमतमें हो अथवा वहुमतमे और काग्रेसके वाहर हो या अन्दर।

मौजूदा परिवर्तनसे केवल ससदीय कार्यक्रममें फर्क पड सकता है, और किसीमें नही। मन्त्रिमण्डलोका चुनाव उन लोगोने किया है जो अभी तक वहुमतमे थे और उन्होने ही उसका कार्यक्रम वनाया है। लेकिन ससदीय कार्यक्रम काग्रेस-कार्यक्रमका एक छोटा-सा अग है। काग्रेसी मन्त्रियोको आखिरकार यही समझकर चलना है कि उन्हे अपना पद किसी भी दिन छोड़ना पड सकता है। काग्रेसी मन्त्रियोके लिए इस वातका कोई महत्व नही है कि उनसे किसी ऐसे मुद्देपर पद-त्याग करनेको कहा जाता है जिसके विपयमे वे काग्रेसकी नीतिसे सहमत है अथवा वे स्वय इस कारण त्यागपत्र देते है कि वे कांग्रेसकी नीतिसे सहमत नही है।

सुभाष वावू देशके दुश्मन तो है नही। उन्होने उसके लिए कष्ट सहन किये है। उनकी रायमे उनका कार्यक्रम और उनकी नीति दोनो अत्यन्त अग्रगामी है। अल्पसंख्यक उसकी सफलता ही चाहेगे। लेकिन यदि वे उसके अनुसार न चल सके, तो उन्हे कांग्रेसके वाहर आ जाना चाहिए। उनसे वन पड़ा तो वे वहुमतकी शक्ति वढायेगे।

वे किसी भी स्थितिमे वाधक न होगे। यदि वे सहयोग न कर सके, तो उन्हे अलग हो जाना होगा। काग्रेसजनोको मैं यह याद दिलाना चाहता हूँ कि जो लोग कांग्रेस-मनोवृत्ति रखते हुए भी सोच-समझकर काग्रेससे वाहर है, वे उसका सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करेगे। इसलिए जो लोग काग्रेसके भीतर रहनेमे असुविधा अनुभव करते हो, वे वाहर आ सकते है, लेकिन दुर्भावनासे नही, वल्कि ज्यादा सेवा करनेकी भावना से।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ४-२-१९३९

४०२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

बारडोली
३१ जनवरी, १९३९

मुझसे अपीलें की जा रही है कि देशी रियासतोके मामलेमें मै जल्दबाजी न करूँ। इन अपीलोकी कोई जरूरत नही है। राजकोटके लोगो द्वारा तीन-महीने तक अहिंसात्मक सघर्ष करनेके बाद सपरिषद् ठाकुर साहब और प्रजाका प्रतिनिधित्व करनेवाले सरदार पटेलके बीच एक सम्मानजनक समझौता हुआ था और सर्वत्र हर्षोल्लासके साथ वह सघर्ष समाप्त हुआ था। मगर ब्रिटिश रेजिडेंटने ठाकुर साहब और प्रजा द्वारा किये गये इस सुन्दर कार्य पर पानी फेर दिया है।[2]

इज्जतका तकाजा था कि लोग उस समझौतेको बहाल करानेके लिए मरते दम तक लड़े जो ठाकुर साहब और उनकी प्रजामे हुआ था। अब यह सघर्ष राजा और उनकी प्रजाके बीच नही, बल्कि असलमे काग्रेस और ब्रिटिश सरकारके बीच है, जिसके प्रतिनिधि रेजिडेट है। खबर है कि वे सगठित गुडागर्दीसे काम ले रहे है। वे उन बेकसूर स्त्री-पुरुषोका हौसला पस्त करनेकी कोशिश कर रहे है, जो विश्वास-भगके कारण नाराज है और सही नाराज है।

यह कहना भ्रमात्मक है कि राजकोट आजमाइशी मामला बनाया गया है।[3] काठियावाडकी रियासतोके बारेमे कोई योजनाबद्ध कार्य नही किया जा रहा है। यही हो रहा है कि जो लोग अपनेको कष्ट सहनेके लिए तैयार समझते है, वे सरदार से सलाह लेने आते है और सरदार उनको राह बताते है। राजकोट तैयार जान पड़ा, इसीलिए वहाँ लड़ाई शुरू हुई।

जयपुरका मामला बहुत ही सीधा और राजकोटसे भिन्न है। अगर मुझे मिली खबर सही है, तो वहांके अग्रेज प्रधानमन्त्री इस बातपर तुले हुए है कि उत्तरदायी शासनकी भावनाको लोगोमें फैलाने तकका कोई आन्दोलन वहाँ न चलने दिया जाये।[4] इसलिए जयपुरमें सविनय अवज्ञा उत्तरदायी शासनके लिए नही, बल्कि प्रजामण्डल और उसके अध्यक्ष सेठ जमनालाल बजाजपर लगाये गये प्रतिबन्धको हटानेके लिए की जा रही है।[5]

१. यह वक्तव्य "राजकोट ऐण्ड जयपुर" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था तथा हिन्दू, हिन्दुस्तान टाइम्स और बॉम्बे क्रॉनिकल में भी छपा था।

२. इसका भारत सरकारने जो उत्तर दिया उसके लिए देखिए परिशिष्ट २।

३. देखिए "लताड़ और प्यार", पृ० ३९०-४।

४ और ५. देखिए "जयपुर", पृ० ३८६-९।

मेरी रायमें वाइसरायका कर्तव्य है कि वे राजकोटके रेजिडेंटसे कहे कि वह उस समझौतेको बहाल करें और जयपुरके अंग्रेज प्रधानमन्त्रीसे कहें कि वह प्रतिबन्ध हटा ले। वाइसरायके ऐसा करनेसे किसी भी हालतमें यह नही समझा जा सकता कि उन्होंने देशी रियासतोके मामलोमे अनावश्यक हस्तक्षेप किया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-२-१९३९

४०३. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धागंज
२ फरवरी, १९३९

घनश्यामदास बिड़ला
नई दिल्ली

बिलकुल ठीक हूँ। जरूरी आराम कर रहा हूँ। चिन्ता की कोई बात नही है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८०२) से, सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

४०४. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेगाँव
२ फरवरी, १९३९

प्रिय कु,

मै आज ही यहाँ आया हूँ। संलग्न लेख-सामग्री[1] को तैयार करनेमें मुझे इतना अधिक समय नही लेना चाहिए था। असलमें मैं पूरी पुस्तक पढ जाना चाहता था, पर वह असम्भव था। और अब तो मै खाटपर पड़ गया हूँ। मतलब यह कि डॉक्टरोका कहना है कि यदि मै आत्महत्या करना नही चाहता तो मुझे बिस्तरपर लेटे रहना चाहिए और यथासम्भव कम-से-कम काम करना चाहिए। पूर्ण मौन रखनेको कहा गया है। इसलिए इसे मै अत्यन्त आवश्यक हो जानेपर ही तोड़ूँगा। इन परिस्थितियोमें मैंने सोचा कि कुछ शब्द तुम्हे तुरन्त भजने चाहिए। हजार क्षमायाचनाओ सहित वे यहाँ प्रस्तुत है।

१. देखिए अगला शीर्षक।

आशा है, तुम्हारी समिति ठीक प्रगति कर रही होगी और सीता[1] अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रही होगी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४८) से।

४०५. प्राक्कथन

सेगाँव, वर्धा
२ फरवरी, १९३९

'व्हाई द विलेज मूवमेण्ट' का तीसरा संस्करण निकालना पड़ रहा है। यह एक शुभ लक्षण है। यह पुस्तक एक ऐसी जरूरतको पूरा करती है जो काफी महसूस की जा रही थी। आन्दोलनकी आवश्यकता और व्यावहारिकता के बारेमे जितनी भी शकाएँ प्रकट की गई है, प्रोफेसर जे० सी० कु[मारप्पा]ने प्राय. उन सभीका समाधान किया है। कोई भी देहात-प्रेमी इस पुस्तिकाको लिये विना नही रह सकता। किसी भी शकालुकी शकाएँ इससे मिट सकती है। यह पुस्तिका उन लोगोके लिए वेकार है जो यह मान बैठे है कि अगर कोई आन्दोलन जरूरी है तो वह गाँवोको मिटाने और भारतमे जगह-जगह ऐसे बड़े शहर कायम करनेका आन्दोलन होना चाहिए जहाँ अत्यन्त केन्द्रीकृत उद्योग हो और हरएकके पास पर्याप्तसे भी अधिक चीजे हो। सौभाग्यसे विनाशकी इस विचारधाराके अनुयायी अभी बहुत नही है। मै सोचता हूँ कि जिसे देखकर भविष्यके विषयमे निराशा होने लगती है, ऐसी इस प्रवृत्तिके प्रसारको रोकनेके लिए क्या ग्राम-आन्दोलन बिलकुल सामयिक नही है? यह पुस्तिका इस प्रश्नका उत्तर देनेका एक प्रयास है।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१४९) से।

१. जे० सी० कुमारप्पाके छोटेभाई भारतन कुमारप्पाकी धर्मपत्नी।

४०६. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
२ फरवरी, १९३९

चि० मीरा,

मैंने कई दिन तक तुम्हारी उपेक्षा की है, परन्तु सुशीलाकी हिदायत है कि तुम्हे रोज पत्र लिखती रहे। मुझे शारीरिक-श्रमसे तो पूर्ण विश्राम लेना ही है, परन्तु जितना हो सके, मानसिक श्रमसे भी विश्राम लेना है। चिन्ता न करना। अपने काममे डूब जाओ।

वा को राजकोट जाना है इसलिए वह वही[1] रह गई।

सप्रेम,

वापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२६) से; सौजन्य: मीरावहन। जी० एन० १००२१ से भी।

४०७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
२ फरवरी, १९३९

वा,

तू क्यो चिन्तित होती है? मेरी चिन्ता मत कर। अपनी तवीयत ठीक कर। रामनाम ले। यह मान कर चल कि अनेकोंके पुण्यसे हम यह लड़ाई जीतेंगे। उसमें तेरे पुण्य भी हैं ही।

वापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
वापुना वाने पत्रो, पृ० ३१

१. वारडोलीमें।

४०८. पत्र : हीरालाल शर्माको

सेगांव, वर्धा
२ फरवरी, १९३९

चि० शर्मा,

वारडोलीमे इतने काममें फस गया था कि बीमार होकर आज आया। यही कारण है तुमारे खतका देरसे उत्तर भेजना का। चिंताकी बात नही है ठीक हो जायगा।

३ फरवरी, १९३९

लेकिन मै किसीको एक लाइन भेजनेका कह सकता था कि उत्तर जल्दी नही भेजा जायगा यह नही किया क्योकी शीघ्र उत्तर भेजनेकी आशा बनी रही।

डिस्ट्रकशन कन्स्ट्रकशन साथ चलाने वाली चीज है। तुमारा डिस्ट्रक्शन कुछ ऐसा लगता है कि उसकी तुम बर्दाश्त न कर सको। आज एक करे और कल दूसरा ऐसे न बनने पाय।

पत्रिका मै नही लिख सकता हूँ। तुमने ही कही लिखा है कि जब तक कनस्ट्रक्शन शरु नही हुआ तब तक सब बात बेकार है। जो चल रहा है उसमें पत्रिकाको शायद स्थान भी नही है।

तुमारे अगले खतमे कुछ सिद्धांतकी बात थी कि समाज और कुटुब अलग बात है और होनी चाहीये। अगर दोनो एक समजते हो लेकिन आज वहा तक नही पहोचते हो तो कहना क्या?

मेरे साथ रहनेवाले और तुममें भेद नही है यह बात अमलमें बता दोगे तब मेरा काम हो गया समजुगा।

कुत्ताकी मिसाल तो कठोर है। लेकिन बात सही है। यो तो हम सब कुत्तेके जैसे है सहिष्णुता नही है। लेकिन समाजमे रहना और असहिष्णु रहना बड़ी विपरीत बात है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १७७-८ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

४०९. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

[२ फरवरी, १९३९ के पश्चात्][1]

भाई सम्पूर्णानन्दजी,

आपका पत्र मिला था। शीघ्र स्वीकृति न भेज सका। जो बात मुझको लिखी है वही डॉ० जाकिर हुसेनको लिखी होगी।

झंडा और वन्दे मातरम्के विषयमें आपका खत मुसाफरीमें मिल गया था। आपने लिखा वह सही था। उसी दिशामें मैं काम कर रहा हूं।

कौंसिल इत्यादिमें जानेवालोंकी स्थितिका मसला दिन प्रति दिन कठिन होता जाता है। लेकिन यह हमारी व्याधिका एक लक्षण ही है। मैं तो प्रत्यक्ष देख रहा हूं कि कांग्रेसकी अवनति हो रही है। स्वार्थ, खटपट, असत्य, हिंसा इत्यादिका जोर काफी बढ़ रहा है। मुझे डर है कि हम अन्दरूनी त्रुटियोंके कारण मिट रहे हैं। देखें ईश्वरकी क्या इच्छा है।

आपका,
मो० क० गांधी

मूल पत्रसे . सम्पूर्णानन्द पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

४१०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

सेगाँव
३ फरवरी, १९३९

भारत सरकार तथा जयपुरकी सरकारने राजकोट और जयपुरके बारेमें मेरे वक्तव्यों[3] के जवाबमें जो विज्ञप्तियाँ[4] निकाली हैं, वे इस अर्थमें उल्लेखनीय हैं कि उनमें बहुत-सी बातें छोड़ दी गयी हैं, बहुत-सी दबा दी गयी हैं और बहुत-सी अपनी ओरसे मिला दी गयी हैं।

१. यह पत्र सम्पूर्णानन्दके नाम लिखे १-१-१९३९ के पत्रसे सम्बद्ध प्रतीत होता है। गांधीजी इस तारीखको वापस सेगाँव पहुँचे थे।

२. यह "नॉट ए वार ऑफ वर्ड्स" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था तथा ४-२-१९३९ के हिन्दू, बॉम्बे क्रॉनिकल, और हिन्दुस्तान टाइम्समें भी प्रकाशित हुआ था।

३. देखिए "राजकोट", पृ० ३०२-४ और ३८१-२ तथा "जयपुर", पृ० ३३१-२ और ३८६-९।

४. भारत सरकार द्वारा जारी की गयी विज्ञप्तिके लिए देखिए परिशिष्ट २।

कमेटीके सदस्योके चुनावके बारेमें ठाकुर साहबने जो पत्र भेजा था, उसे प्रकाशित करना सरदार वल्लभभाई पटेलका कर्तव्य नही था। कमेटीके सदस्योके चुनावके सम्बन्धकी शर्तें एक अलग पत्रमे ठाकुर साहबकी सुविधाके लिए बतलाई गई थी। नाजुक वार्ता करनेमें इस प्रकारकी कार्रवाईका किया जाना कोई नई बात नही है। ठाकुर साहबने जो पत्र भेजा था उसके दो अर्थ किसी हालतमे नही निकाले जा सकते, और इसमे कोई सन्देह नही कि अपने पत्रका वे जो अर्थ कर रहे है वह इस प्रसंगमे बिलकुल ही अप्रस्तुत है।

मेरा यह कहना है कि ठाकुर साहबने अपने पत्रका जो अर्थ लगाया है वह पत्र लिखते समय उनके मस्तिष्कमे नही था, बल्कि बादमे आया है और यह अर्थ उन्होने ब्रिटिश रेजिडेंटको खुश करनेके लिए ढूँढ निकाला है, क्योकि ब्रिटिश रेजिडेंट इस बातसे सख्त नाराज हो गये थे कि ठाकुर साहबने उन्हे कोई सूचना दिये बिना एक काग्रेसी से बातचीत करने तथा उसे पत्र लिखनेका साहस किया। जो लोग इन ब्रिटिश रेजिडेंटो और देशी राज्योके बारेमे कुछ भी ज्ञान रखते होगे, उन्हे यह अवश्य मालूम होगा कि देशी राज्योके नरेश रेजिडेंटके सचिव और चपरासियोसे भी कितना अधिक डरते है। ऐसा मै अपनी व्यक्तिगत जानकारीके आधारपर लिख रहा हूँ।

आन्दोलनके फिरसे आरम्भ होनेके बारेमे सरदार वल्लभभाई पटेलने जो वक्तव्य[1] दिया है, उसके परिशिष्टोमे इस बातका काफी प्रमाण है कि सारा झगड़ा रेजिडेंटकी नाराजीकी वजहसे हुआ है। यह कहना बिलकुल गलत है कि कमेटीके सदस्योके नामो मे परिवर्तन करनेसे इनकार करनेके कारण सरदार पटेलने नही बतलाये। इन परिशिष्टोमे से एक मे उनके पत्रका अनुवाद दिया गया है।

सरदार वल्लभभाई पटेलने जिन लोगोको कमेटीमें रखे जानेकी सिफारिश की थी उन्हे कमेटीमे नामजद करनेपर जब ठाकुर साहब राजी हुए तो उनकी दृष्टिमें मुसलमान और भायात भी थे। किन्तु यह बात दोनो पक्षोको मान्य थी कि सुधारोंके अन्तर्गत सभी अधिकारोको सुरक्षित किया जायेगा। उपयुक्त कार्यवाही तो यह होती कि कमेटीके सामने शहादत दिलवाई जाती। मेरा तो यह कहना है कि जैसा हिन्दुस्तानके हरएक स्थानपर होता है, मुसलमानो तथा भायातोने कमेटीके सदस्योके चुनावपर जो आपत्ति की, उसके लिए बादमे उकसाया गया।

मैंने यह नही कहा कि ठाकुर साहबसे अमुक-अमुक काम करनेके लिए कहा जाये। उनकी कोई स्वतन्त्र इच्छा नही है। उनकी इच्छा तो वही होगी जो रेजिडेंटकी होगी। एक बार ठाकुर साहबने रेजिडेंटकी इच्छाके विरुद्ध काम करनेका साहस किया। नतीजा यह हुआ कि उनकी गद्दी जाते-जाते बची। मेरी माँग यह है कि ब्रिटिश रेजिडेंट समझौतेको फिरसे प्रतिष्ठापित करे और उसे कार्यान्वित करनेमें मदद पहुँचायें। अगर अमुक पक्षोको सतुष्ट करनेके लिए केवल कमेटीके सदस्योमे परिवर्तन किये जानेका सवाल हो, तो मै सरदार वल्लभभाई पटेलको

१. देखिए परिशिष्ट १।

राजी करनेके लिए तैयार हूँ, किन्तु शर्त यह है कि बाकी सब बातें पूर्णरूपसे पूरी कर दी जाये।

किन्तु विज्ञप्तिमे प्रस्तुत प्रश्नसे सम्बद्ध इस अत्यन्त महत्वपूर्ण बातका कोई जिक्र नही किया गया है कि कमेटीके कार्यक्षेत्रमे भी इतना परिवर्तन कर दिया गया है कि उसकी शक्ल ही बदल गई है। कमेटीके इस कार्यक्षेत्रका निर्धारण सपरिषद् ठाकुर साहबकी सहमतिसे हुआ था और परिषद्का एक सदस्य ब्रिटिश दीवान भी था। जिसपर राजाकी ओरसे हस्ताक्षर किये गये हो, ऐसे किसी समझौतेका इस प्रकार भग किया जाना मैंने कभी नही देखा था। मैं यह अवश्य कहूँगा कि राजकोटके सम्बन्धमे रेजिडेटने, जिसे अपने क्षेत्रके नरेशोके सम्मानका रक्षक होना चाहिए, ठाकुर साहबका नाम मिट्टीमे मिला दिया है।

सुसगठित गुण्डागर्दीका आरोप मैं फिर दुहराता हूँ। ब्रिटिश एजेन्सीकी पुलिस राजकोटमे कार्य कर रही है। सरदार वल्लभभाई पटेलके पास जो तार आये है उनसे यह जाहिर होता है कि सत्याग्रह करनेवाले सुदूर स्थानोंपर ले जाये जाते है और वहाँ पर वे नगे करके पीटे जाते हैं, और बादमें वहीपर बिना किसी सहारेके छोड़ दिये जाते है। इन तारोसे यह भी प्रकट होता है कि रेडक्रॉसके डाक्टरो तथा एम्बुलेस-दलोको हालेन्डामे हुए लाठी-चार्जमे घायल लोगोंको किसी प्रकारकी सहायता पहुँचानेसे मना कर दिया गया है। इसीको मै सुसगठित गुण्डागर्दी कहता हूँ। ये आरोप अगर अस्वीकार किये जाते है तो उनके बारेमें निष्पक्ष जाँच करवाई जाये।

मैं प्रश्नको साफ-साफ प्रस्तुत कर दूँ। मै राजकोटके अन्दरूनी मामलोमें कोई हस्तक्षेप नही करना चाहता। मैं यह चाहता हूँ कि राजकोट स्थित रेजिडेंट अपना हस्तक्षेप रोके। राज्य और प्रजाके बीच इस समय जो तनातनीका सम्बन्ध है उसके लिए रेजिडेंट प्रत्यक्षरूपसे जिम्मेदार है। सर्वोच्च सत्ताका यह कर्तव्य है कि वह देखे कि जो भी समझौता हुआ है, उसका पूरी तौरसे पालन किया जाये।

मुसलमानो और भायातोके प्रतिनिधित्वको लेकर जो आपत्ति की गई है, यदि वह वास्तवमे सचाई और ईमानदारीके साथ की गई हो तो उसे दूर किया जा सकता है। मै एक बार फिर वाइसरायसे अपील करता हूँ कि वे प्रश्नका अध्ययन ज्यादा गहराईके साथ करे। ऐसा न हो कि दिल्लीके सचिवालयमे जब दोषोपर परदा डालनेवाली विज्ञप्तियाँ तैयार की जा रही हो, उस बीच कोई गम्भीर दुखद घटना हो जाये। यह वाग्युद्ध नही है। यह युद्ध ऐसा है जिसमे कि वे लोग, जो अब तक कभी जेल नही गये हैं और जिन्होंने न कभी लाठियोकी मार ही खाई है, सभी मुसीबतो और खतरोका सामना करनेके लिए तैयार हो गये है और उन्हे झेल रहे हैं।

जयपुरके बारेमें मुझे केवल एक शब्द कहना है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि वहाँके अग्रेज प्रधानमन्त्री[1] जयपुर राज्य परिषद्के एक सदस्य हैं। मेरा कहना यह है कि वही सब-कुछ है। उन्होने प्रजा-मण्डल तथा सेठ जमनालाल बजाजसे बदला

१. सर डब्ल्यू० बीकम सेंट जॉन।

चुकानेकी शपथ ले ली है और मैं दावेके साथ कहता हूँ कि प्रजा-मण्डलके सम्बन्धमे राज्य जो कार्रवाई कर रहा है, उसके बारेमे वह चाहे जो शब्दाडम्बर रचे, वस्तुत प्रजा-मण्डलको गैरकानूनी सस्था घोषित किया जा चुका है। अगर प्रजा-मण्डल गैरकानूनी संस्था नही घोषित की गई है, तो अधिकारियोको चाहिए कि वे सेठ जमनालाल बजाजको जयपुर-राज्यमे प्रवेश करनेकी स्वतन्त्रता दे दे और उन्हे तथा मण्डलको बगैर किसी प्रकारकी छेड़खानी किये प्रजाको उत्तरदायी शासनके सम्बन्धमे शिक्षा देने दे। और अगर वे प्रत्यक्ष रूपसे या अप्रत्यक्ष रूपसे हिंसाका प्रचार करे, तो अधिकारीगण उन्हे सजा भी दे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-२-१९३९

४११. तार : जमनालाल बजाजको[1]

[३ फरवरी, १९३९ या उसके पूर्व][2]

अपनी योजनापर डटे रहो। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है और तुम्हारी सफलता निश्चित है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-२-१९३९

४१२. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
३ फरवरी, १९३९

घनश्यामदास
बिड़ला हाउस
अल्बुकर्क रोड
नई दिल्ली

सूजन बहुत घट गई है। एक तरहसे पूर्ण विश्राम ही कर रहा हूँ। रक्तचाप कल रात १५६/९८ था। अधिकारी जब तक लिखित

१. जमनालाल बजाज जयपुर राज्य प्रजा-मडलके अध्यक्ष थे और एक आदेश द्वारा जयपुर रियासतमें उनके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। उस आदेशकी अवज्ञा करके वे रियासतमें प्रवेश करनेवाले थे। उन्होंने ३ फरवरीको गांधीजी को तार दिया था: "घनश्यामदास प्रवेशमें विलम्ब करनेके लिए जोर डाल रहे हैं।" गांधीजी ने स्पष्टतः इसीके जवाबमें यह तार भेजा था।

२. जमनालाल बजाजने ३ फरवरीकी अपनी डायरीमें लिखा है कि उन्हें गांधीजीका एक तार मिला। सम्भवतः वह यही तार था।

रूपमें उनसे ऐसी प्रार्थना न करे, जमनालालजीको प्रतीक्षा नही करनी चाहिए।[1] मै इस आशयका एक वक्तव्य दे चुका हूँ कि जयपुर सरकारकी विज्ञप्ति सर्वथा असन्तोपजनक है।[2]

बापू

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७८०३) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिडला।

४१३. पत्र : मीराबहनको

सेगाँव, वर्धा
३ फरवरी, १९३९

चि० मीरा,

तुम्हारा पेशावरसे भेजा गया पत्र समाचारोसे भरा है। तुम अब घटनाओके बीचमें रह रही हो। तुम्हे हर तरहसे अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करनी ही चाहिए। पैरोको अच्छी तरह ढँककर रखो। जिस खुराककी तुम्हे जरूरत हो, उसका आग्रह रखो। उसमे अति न करो। अपने बूतेसे बाहर भी न जाओ। फिर सब ठीक हो जायेगा।

मेरी कोई चिन्ता न करो। जब तक ईश्वरको मेरी जरूरत है, वह मुझे पृथ्वी पर रखेगा। मै यहाँ होऊँ या और कही, दोनो ठीक है। हमारी नही, उसकी इच्छा पूरी हो।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२७) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००२२ से भी।

१. यह घनश्यामदास बिड़लाके तारके उत्तरमें था जिसमें यह सुझाया गया था कि जमनालाल बजाज जयपुर लौटनेके लिए एक पखवाड़े और प्रतीक्षा कर सकते हैं।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

४१४. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
३ फरवरी, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

चुनाव[1] के वाद और जिस ढंगसे वह लड़ा गया, उसे देखते हुए मैं यह महसूस करता हूँ कि मैं कांग्रेसके अगले अधिवेशनमें शरीक न होकर देशकी सेवा करूँगा। इसके अलावा मेरा स्वास्थ्य भी वहुत अच्छा नही है। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी मदद करो। कृपया मुझपर उपस्थित होनेंके लिए दवाव मत डालना।

आशा है, तुम्हे और इन्दुको खालीमे आराम करनेसे लाभ हुआ होगा। इन्दुको चाहिए कि मुझे पत्र लिखे।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय; ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० ३०७ से भी।

४१५. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

३ फरवरी, १९३९

चि० काका,

कवि खबरदार[2] के लिए प्रवन्ध हो गया है। अम्वालालभाई उसे हर महीने २०० रुपये या तो स्वयं या उगाह कर देंगे।

वुक उसके वारेमें ज्यादा जानकारी चाहता है। छातीका एक्स-रे भी माँगता है। वह ज्यादा मदद कर सकेगा, इसकी आशा कम है। क्या तुमने पार्वतीको पत्र लिखा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९१९) से।

१. कांग्रेस-अध्यक्ष का।
२. अर्देशर फरामजी खबरदार।

४१६. पत्र : दत्तात्रेय बा० कालेलकरको

३ फरवरी, १९३९

चि० काका,

मैं अब अपनेको बिलकुल निकम्मा महसूस कर रहा हूँ। तुम आना, किन्तु मैं क्या कर सकूँगा, यह समझमें नही आता। ३ या ४ तारीख तक तो [बुनियादी] तालीमवाले प्रशिक्षणार्थी यहाँ है ही। आशा करता हूँ कि रोमन लिपि[1] के बारेमें लिख पाऊँगा। हिन्दी-प्रचारकोंके सम्बन्धमे जो उचित हो सो करना। मुझे कोई रास्ता साफ-साफ सूझ नही रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९२०) से।

४१७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
[३ फरवरी, १९३९ के पश्चात्][2]

बा,

तेरा पत्र मिला। तू तो अब राज्यकी मेहमान हो गई। अपनी तबीयतका ध्यान रखना। मणि[3] तेरे साथ है, इसलिए मैं निश्चित हूँ। हाँ, तेरे पत्र मुझे मिलने चाहिए। तेरी बात मैं याद रखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३२

१. देखिए "रोमन लिपि बनाम देवनागरी लिपि", पृ० ४२०-१।
२. ३ फरवरी,, १९३९ को कस्तूरबा गाधी राजकोटमें प्रवेश करनेपर गिरफ्तार कर ली गई थीं।
३. मणिबहन पटेल।

४१८. बातचीत : अध्यापक-प्रशिक्षणार्थियोंके साथ[1]

३/४ फरवरी, १९३९

आजकल अल्पसंख्यकोंके अधिकारोंकी बहुत चर्चा चलती है। इसलिए आज मैं अंग्रेजीमे बोलूंगा यद्यपि केवल अंग्रेजी समझनेवालोकी सख्या यहाँ बहुत ही कम है।[2] लेकिन मैं आपको आगाह करता हूँ कि अगली सभामे मैं यह नही करूँगा। आपको हिन्दुस्तानी सीखनेका दृढ संकल्प करके यहाँसे वापस जाना चाहिए। यदि हमारी बुद्धि अंग्रेजी माध्यमके द्वारा ही काम कर सकती है तो बुनियादी तालीमकी कल्पनाको कार्यान्वित करना असम्भव है और हमारे करोड़ों लोगोकी शैक्षणिक आवश्यकताओंकी पूर्ति तो बुनियादी तालीम ही कर सकती है।

प्रतिनिधियोंने गांधीजी से कितने ही प्रश्न किये। पहले प्रश्नसे यह शंका प्रकट होती थी कि वर्धा-योजना भविष्यकी कसौटीपर टिक सकेगी, या वह महज एक अस्थायी चीज है? बहुत-से बड़े-बड़े शिक्षाशास्त्रियोंका तो यह मत है कि एक-न-एक दिन व्यापक औद्योगीकरणके लिए दस्तकारियोंको स्थान खाली करना ही होगा। एक ऐसा समाज जिसने कि वर्धा-योजनाके अनुसार शिक्षा पाई होगी और जो न्याय, सत्य और अहिंसापर आधारित होगा, क्या औद्योगीकरणके प्रबल प्रवाहमें टिक सकेगा?

गांधीजी . यह कोई व्यावहारिक प्रश्न नही है। हमारे तात्कालिक कार्यक्रम पर इसका कोई असर नही पडेगा। हमारे सामने प्रश्न यह नही है कि आगे आनेवाले जमानेमें क्या होने जा रहा है, बल्कि सवाल तो यह है कि हमारे गाँवोमे जो करोडो लोग रहते हैं, उनकी सच्ची आवश्यकता इस बुनियादी तालीमकी योजनासे पूरी हो सकेगी या नही। मेरा खयाल यह नही है कि हिन्दुस्तानमे इस हद तक कभी औद्योगीकरण हो जायेगा कि गाँव रहेगे ही नही। हिन्दुस्तानका अधिकाश भाग तो हमेशा गाँवोका ही रहेगा।

"हालमें कांग्रेसके अध्यक्षका जो चुनाव हुआ है, उसके फलस्वरूप अगर कांग्रेसकी नीतिमें परिवर्तन हुआ, तो बुनियादी तालीमकी योजनाका क्या होगा?" यह दूसरा प्रश्न था।

१. प्यारेलालके "वर्धास्कीम अंडर फायर" से उद्धृत। पूरे भारत से लगभग ७५ प्रतिनिधि वर्धाके अध्यापन प्रशिक्षण केन्द्रके तीन सप्ताहके शिविरमें एकत्रित हुए थे। अपने-अपने प्रान्तोंमें जानेसे पहले वे गांधीजीसे मिले थे।

२. आशा देवीके कहने पर गांधीजीने हिन्दीमें बोलना आरम्भ किया था लेकिन कुछ प्रतिनिधि उनकी बात समझ नहीं रहे थे।

गांधीजी ने जवाब दिया कि यह भय अकारण है। कांग्रेसकी नीतिमें अगर कोई हेरफेर हुआ, तो वर्धा-योजनापर उसका कोई असर नहीं पड़ेगा।

उसका असर अगर पड़ेगा ही, तो ऊँची राजनीतिक बातो पर ही पड़ेगा। आप लोग यहाँ तीन हफ्तेके अभ्यासक्रमका शिक्षण लेनेके लिए आये हैं, जिससे कि आप अपने-अपने प्रान्तमें जाकर अपने विद्यार्थियोको वर्धा-योजनाके अनुसार तालीम दे सकें। आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि इस शिक्षा-पद्धतिसे हमारी आवश्यकताएँ जरूर पूरी होगी।

औद्योगीकरणकी भारी-भारी योजनाएँ भले पेश की जाये, पर कांग्रेसने आज अपना जो लक्ष्य निर्धारित किया है, वह देशका औद्योगीकरण नही है। बम्बईमे कांग्रेसने जो प्रस्ताव[1] पास किया था, उसके अनुसार उसका ध्येय तो ग्रामोद्योगोका पुनरुद्धार है। किसानोके हितोको ध्यानमे रखनेवाली औद्योगीकरणकी किसी लम्बी-चौड़ी योजनाके जरिये आप लोक-जागृति नही कर सकते। इन योजनाओसे उनकी आमदनीमें एक पाईकी भी वृद्धि नही होगी; जबकि अ० भा० चरखा संघ और अ० भा० ग्रामोद्योग संघ एक सालके ही अरसे मे उनकी जेबोमे लाखो रुपये पहुँचा देगे। कांग्रेस कार्य-समिति या मन्त्रिमण्डलोमें चाहे जो परिवर्तन हो, मुझे तो जाती तौर पर कांग्रेसकी रचनात्मक प्रवृत्तियोंके लिए कोई खतरा मालूम नही होता। हालांकि इन प्रवृत्तियोकी शुरुआत कांग्रेसने ही की थी, पर एक लम्बे अरसेसे वे अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये हुए है और अपनी उपयोगिता उन्होने पूरी तरह साबित कर दी है। बुनियादी तालीम इनकी एक शाखा है। शिक्षा-मन्त्री भले ही बदल जाये, पर यह तो रहेगी ही। इसलिए जो लोग बुनियादी तालीममें दिलचस्पी रखते है, उन्हे कांग्रेस की राजनीतिके बारेमें परेशान होनेकी जरूरत नही। शिक्षाकी इस नई योजनामें कोई अपने गुण होगे तो वह जीवित रहेगी, न होगे तो आप ही खत्म हो जायेगी।

लेकिन इन प्रश्नोसे मुझे सन्तोष नही होगा। इनका बुनियादी तालीमकी योजनासे कोई सीधा सम्बन्ध नही है। ये प्रश्न हमे उस दिशामे जरा भी आगे नही ले जाते। मैं चाहता हूँ कि आप मुझसे इस योजनासे सीधा सम्बन्ध रखनेवाले प्रश्न पूछे; जिससे मैं एक विशेषज्ञकी तरह आपको सलाह दे सकूँ।

सभामें जानेसे पहले एक भाईने गांधीजीसे पूछा था: क्या इसके पीछे असली मुद्दा यह है कि तकलीके साथ जिसका सम्बन्ध न साधा जा सके, ऐसी कोई बात शिक्षक विद्यार्थीसे न कहे? इसका उत्तर आम सभामें देते हुए गांधीजीने कहा:

यह तो मेरे ऊपर लांछन लगाना है। यह सच है कि सारी शिक्षाका किसी बुनियादी उद्योगके साथ सम्बन्ध जोड़ना चाहिए, ऐसा मैंने कहा है। आप जब किसी उद्योग द्वारा ७ या १० वर्षके बालकको ज्ञान देते हो, तब शुरुआतमे उस दस्तकारीके साथ जिनका मेल नही बैठाया जा सके, ऐसे सब विषय आपको छोड़ देने चाहिए। ऐसा

१. देखिए खण्ड ५९, पृ० २३२।

करते हुए शुरू-शुरूमे छोडी हुई ऐसी बहुत-सी वस्तुओको दस्तकारीके साथ जोडनेके रास्ते आप ढूँढ़ निकालेगे। यदि आप शुरूमे इस तरह काम लेगे तो अपनी खुदकी और विद्यार्थियोकी शक्ति बचा सकेगे। आज तो [जो तरीका ऊपर बताया गया है] उसके अनुसार चलने के लिए कोई पुस्तके नही है, न हमें रास्ता दिखानेवाली मिसाले ही मौजूद है। इसलिए हमे धीरे-धीरे चलना है। मुख्य बात यह है कि शिक्षकको अपने मनकी ताजगी बनाये रखनी चाहिए। जिसका दस्तकारीके साथ मेल न बैठाया जा सके, ऐसा कोई विषय आनेपर आप निराश न हो, खीझ न उठे बल्कि उसे छोड दे और जिसका मेल बैठा सके, उसे आगे चलाये। सम्भव है कि कोई दूसरा शिक्षक सही रास्ता ढूँढ निकाले और यह बता सके कि उस विषयका दस्तकारीके साथ कैसे मेल बैठ सकता है। और जब आप बहुत-से लोगोके अनुभवोका संग्रह करेगे, तो बादमे आपको रास्ता बतानेवाली पुस्तके भी मिल जायेगी, जिससे आपके पीछे आनेवालोका काम अधिक सरल बन जायेगा।

आप पूछेगे कि जिन विषयोका मेल न बैठाया जा सके, उनको छोडनेकी क्रिया कितने समय तक की जाये? मै तो कहूँगा कि जिन्दगी-भर। आखिरमे आप देखेगे कि बहुत-सी चीजे जो आप पहले शिक्षाक्रममे से छोड़ चुके थे, उनका आपने उसमे समावेश कर लिया है तथा जितनी चीजे समावेश करने लायक थी, उन सबका समावेश हो चुका है और आपने आखिर तक जिनको छोड़ दिया था, वे बहुत अनावश्यक थी और उन्हे छोडना ही बेहतर था। यह मेरा जीवनका अनुभव है। मैंने यदि बहुत-सी चीजे छोड़ न दी होती, तो मै जितनी चीजे कर सका हूँ, वह नही कर पाता।

हमारी शिक्षामे आमूल परिवर्तन होना ही चाहिए। दिमाग को हाथके काम द्वारा शिक्षा मिलनी चाहिए। मै कवि होता तो हाथकी पाँच उँगलियोकी अद्भुत शक्तियोके बारेमे कविता लिख सकता। दिमाग ही सब-कुछ है और हाथ-पैर कुछ नही, ऐसा आप क्यो मानते है? जो अपने हाथको शिक्षा नही देते, जो शिक्षाकी सामान्य रूढिमे से होकर निकलते है, उनका जीवन नीरस बन जाता है। उनकी सारी शक्तियोका विकास नही होता। केवल पुस्तकीय ज्ञानमे बालकको इतना रस नही आता कि उसका सारा ध्यान उसीमें लगा रहे। दिमाग खाली शब्दोसे थक जाता है और बच्चेका मन दूसरी जगह भटकने लगता है। हाथ न करने लायक काम करते है, आँखे न देखने लायक चीजे देखती है, कान न सुनने लायक बाते सुनते है और उनको क्रमश: जो-कुछ करना, देखना और सुनना चाहिए, उसे वे करते, देखते और सुनते नही है। उन्हे सही चुनाव करना नही सिखाया जाता। और इससे उनकी शिक्षा कई बार उनका विनाश करनेवाली सिद्ध होती है। जो शिक्षा हमे अच्छे-बुरेका भेद करना और अच्छेको ग्रहण करना तथा बुरेको त्यागना नही सिखाती, वह शिक्षा सच्ची शिक्षा ही नही है।

श्रीमती आशादेवीने पूछा कि हाथ द्वारा मनको किस प्रकार शिक्षा दी जा सकती है, यह आप समझायेंगे?

गाधीजी · स्कूलमे चलनेवाले सामान्य पाठ्यक्रममे एकाध दस्तकारी जोड देना, यह पुरानी कल्पना थी। अर्थात् उसमे दस्तकारीको शिक्षासे बिलकुल अलग रखकर सिखलानेकी बात थी। मुझे यह एक गम्भीर भूल लगती है। शिक्षकको दस्तकारी सीख लेनी चाहिए और अपने ज्ञानको उस दस्तकारीके साथ जोडना चाहिए, जिससे वह खुद पसन्द की गई दस्तकारीके द्वारा यह सारा ज्ञान विद्यार्थियोको दे सके।

कताईका उदाहरण लीजिए। जब तक मै गणित नही जानता, तब तक मैंने तकलीपर कितने गज सूत काता या उसके कितने तार हुए या मेरे काते हुए सूतका अक कितना है, यह मै नही बता सकूँगा। यह करनेके लिए मुझे अक सीखने चाहिए और जोड, बाकी, गुणा तथा भाग भी सीखने चाहिए। अटपटे हिसाब गिननेमे मुझे अक्षरोका इस्तेमाल करना पडेगा, अत इससे मै बीजगणित सीखूंगा। इसमे भी मै रोमन अक्षरोके बजाय हिन्दुस्तानी अक्षरोके उपयोगका आग्रह रखूंगा।

फिर ज्यामिति लीजिए। तकलीकी चकतीसे वृत्तका अच्छा प्रमाण और क्या हो सकता है? इस प्रकार मै यूक्लिडका नाम लिये बिना ही विद्यार्थीको वृत्तके बारेमे सब-कुछ सिखा सकता हूँ।

फिर आप शायद पूछे कि कताई द्वारा बालकको इतिहास, भूगोल किस तरह सिखाये जा सकते है? थोडे समय पहले 'कपास—मनुष्यका इतिहास'[1] नामक पुस्तक मेरे देखनेमे आई थी। उसे पढनेमे मुझे बहुत ही आनन्द आया। वह एक उपन्यास जैसी लगी। उसके शुरूमे प्राचीन कालका इतिहास दिया गया था। फिर कपास पहले-पहल किस प्रकार और कब बोई गई, उसका विकास किस तरह हुआ, अलग-अलग देशोके बीच रुईका व्यापार कैसे चलता है, आदि वस्तुओका वर्णन था। जब मै अलग-अलग देशोके नाम बालकोको सुनाऊँगा, तब साथ ही स्वाभाविक रीतिसे उन देशोके इतिहास-भूगोलके बारेमे भी कुछ कहता जाऊँगा। अलग-अलग समयमे अलग-अलग व्यापारिक सन्धियाँ किस-किसके राज्य-कालमे हुई? कुछ देशोमे बाहरसे रुई मँगानी पडती है और कुछ मे कपडा बाहरसे मँगाना पडता है, उसका क्या कारण है, हरएक देश अपनी-अपनी जरूरतके मुताबिक रुई क्यो नही उगा सकता? यह चर्चा मुझे अर्थ-शास्त्र और कृषिशास्त्रके मूल तत्वो पर ले जायेगी। कपासकी अलग-अलग जातियाँ कौन-सी है, वे किस तरहकी जमीनमे उगती है, उन्हे कैसे उगाया जाये, वे कहाँसे प्राप्त की जा सकती है, वगैरह जानकारी मै विद्यार्थियोको दूँगा। इस तरह तकली कातनेकी बात परसे मै ईस्ट इडिया कम्पनीके सारे इतिहासपर आऊँगा। वह कम्पनी यहाँ कैसे आई, उसने हमारे कताई-उद्योगको किस तरह नष्ट किया; अग्रेज आर्थिक उद्देश्य से हमारे यहाँ आये और फिर राजनीतिक सत्ता जमानेकी आकाक्षा वे क्यो रखने लगे, यह वस्तु मुगल और मराठोके पतनका, अग्रेजी राज्यकी स्थापनाका और फिर हमारे जमानेमे लोक-जागरणका कारण कैसे हुई, यह सब भी मुझे वर्णन करके बताना पड़ेगा। इस तरह इस नई योजनामे शिक्षा देनेकी अपार गुजाइश है। और

१. कॉटन — दि स्टोरी ऑफ मैनकाइंड।

बालक यह सब दिमाग और स्मरण-शक्तिपर अनावश्यक बोझ पड़े बिना ही बहुत जल्दी सीखेगा।

इस बातको अधिक विस्तारसे समझा दूँ। जैसे किसी प्राणिशास्त्रीको अच्छा प्राणिशास्त्री बननेके लिए प्राणिशास्त्रके अलावा दूसरे बहुत-से शास्त्र सीखने चाहिए, उसी प्रकार बुनियादी तालीमको यदि एक शास्त्र माना जाये, तो वह हमें ज्ञानकी अनन्त शाखाओंमें ले जाता है। तकलीके ही उदाहरणका विस्तार किया जाये, तो जो शिक्षक-विद्यार्थी केवल कातनेकी यान्त्रिक क्रियापर ही अपना ध्यान एकाग्र नहीं करेगा (इस क्रियामें तो बेशक वह निष्णात होगा ही) बल्कि इस वस्तुका तत्व ग्रहण करनेकी कोशिश करेगा, वह तकली और उसके अंग-उपांगका अभ्यास करेगा। तकलीकी चकती पीतलकी और सींक लोहेकी क्यों होती है, यह प्रश्न वह अपने मनसे पूछेगा। प्रारम्भिक तकलीकी चकती तो चाहे-जैसी बनाई जाती थी। इससे भी पहलेकी प्राचीन तकली में बाँसकी सींक और पत्थर या मिट्टीकी चकती उपयोगमें लाई जाती थी। अब तकलीका शास्त्रीय ढंगसे विकास हुआ है और जो चकती पीतलकी और सींक लोहेकी बनाई जाती है, वह सकारण है। यह कारण विद्यार्थीको ढूँढ़ निकालना चाहिए; उसके बाद विद्यार्थीको यह भी जाँचना चाहिए कि इस चकतीका व्यास इतना ही क्यों रखा जाता है, कम-ज्यादा क्यों नहीं रखा जाता? इन प्रश्नोंका सन्तोषजनक हल ढूँढ़नेके बाद और इस वस्तुका गणित जान लेनेके बाद आपका विद्यार्थी अच्छा इंजीनियर बन जाता है। तकली उसकी कामधेनु बनती है। इसके द्वारा अपार ज्ञान दिया जा सकता है। आप जितनी शक्ति और श्रद्धासे काम करेंगे, उतना ज्ञान इसके द्वारा दे सकेंगे। आप यहाँ तीन सप्ताह रहे हैं। इतने समयमें इस योजनाके पीछे मर-मिटने तकको तैयार होनेकी श्रद्धा आप लोगोंमें आ गई हो, तो आपका यहाँ रहना सफल माना जायेगा।

मैंने कताईका उदाहरण विस्तारसे बतलाया है, इसका कारण यह है कि मुझे उसका ज्ञान है। मैं बढ़ई होता तो अपने बालकको ये सब बातें उसी कलाके द्वारा सिखाता। अथवा कार्डबोर्डका काम करनेवाला होता, तो उस कामके जरिये सिखाता।

हमें असली जरूरत तो ऐसे शिक्षकोंकी है, जिनके विचार मौलिक हों, जिनमें सच्चा उत्साह और जोश हो और जो हर रोज यह सोच सकें कि आज विद्यार्थियोंको क्या सिखाया जाये। शिक्षकको यह ज्ञान पुरानी पोथियोंमें से नहीं मिलेगा। उसे अपनी निरीक्षण और विचार करनेकी शक्तिका उपयोग करना है और हस्त-उद्योगकी मददसे शब्दों द्वारा बालकको ज्ञान देना है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षा-पद्धतिमें क्रान्ति होनी चाहिए, शिक्षककी दृष्टिमें क्रान्ति होनी चाहिए। आज तक आप निरीक्षकोंकी रिपोर्टोंसे मार्गदर्शन पाते रहे हैं। आपने, निरीक्षकको जो पसन्द आये, वही करनेकी इच्छा रखी है, ताकि आपकी संस्थाके लिए अधिक पैसे मिलें अथवा आपकी अपनी तनख्वाहमें वृद्धि हो। पर नया शिक्षक इस सबकी परवाह नहीं करेगा। वह तो कहेगा, यदि मैं अपने विद्यार्थीको अधिक अच्छा मनुष्य बनाऊँ और वैसा करनेमें

अपनी सब शक्ति लगा दूं, तो मानूंगा कि मैंने अपना कर्तव्य पूरा किया। मेरे लिए इतना ही काफी है।

प्र० : इस अध्यापन-मन्दिरमें आनेवाले विद्यार्थी-शिक्षकोंको पहले कोई दस्तकारी सिखाई जाये और फिर उस दस्तकारी द्वारा शिक्षा किस तरह दी जाये, इसका ठोस और स्पष्ट विवेचन उनके सामने किया जाये तो क्या ज्यादा ठीक न होगा? अभी तो उन्हें यह कहा जाता है कि अपनेको सात बरसका लड़का मानिए और हरएक विषय दस्तकारीके माध्यमसे फिरसे सीखिए। इस तरह नई पद्धतिमें कुशल बनकर शिक्षक बननेमें तो उन्हें कई वर्ष लग जायेंगे।

गा०. नही, बरसो नही लगेंगे। कल्पना कीजिए कि शिक्षक जब मेरे पास आता है, तब उसको गणित, इतिहास और दूसरे विषयोका कामचलाऊ ज्ञान होता है। मै उसको कार्डबोर्डकी पेटी बनाना या कातना सिखाता हूँ। उसी समय मै उसको बताता हूँ कि इस दस्तकारी द्वारा गणित, इतिहास और भूगोलका ज्ञान वह किस प्रकार पा सकता है। इस तरह वह सीखता है कि अपने ज्ञानका दस्तकारीके साथ कैसे मेल बैठाया जाये। ऐसा करनेमे उसे अधिक समय नही लगना चाहिए। दूसरा उदाहरण लीजिए। मान लीजिए कि मैं अपने सात वर्षीय लड़केके साथ बुनियादी तालीमके स्कूलमे जाता हूँ। हम दोनो कातना सीखते है और मै अपने सारे पूर्वज्ञानका कताईके साथ मेल बैठा लेता हूँ। उस लड़केके लिए यह सब नया-नया है। ७० वर्षके पिताके लिए यह सब दोहराना-भर है, पर वह अपना पुराना ज्ञान नये ढंगसे जमा लेगा। क्रियामे उसे थोड़े सप्ताहसे अधिक समय नही लगना चाहिए। इस तरह यदि शिक्षक इस ७ वर्षके बालक-जितनी ग्रहण-शक्ति और उत्कंठा नही रखेगा, तो वह अन्तमे केवल यान्त्रिक कतैया ही बन जायेगा और इससे उसमे नई पद्धतिका शिक्षक बननेकी योग्यता नही आयेगी।

प्र० : मैट्रिक-पास लड़केको आज कॉलेजमें जानेकी इच्छा हो तो वह जा सकता है। जो बालक बुनियादी तालीमके पाठ्यक्रमको पढ़कर निकलेगा, वह भी क्या ऐसा ही कर सकेगा?

गा० मैट्रिक पास होनेवाला लड़का और बुनियादी तालीम पाया हुआ लडका —इन दोनोमे से दूसरा अधिक कार्यक्षम होगा, क्योकि उसकी शक्तियोका विकास हो चुका होगा। कॉलेजमे जाते वक्त मैट्रिक-पासको आमतौरपर जैसी लाचारी महसूस होती है, वैसी उसे नही होगी।

प्र० : कहा गया है कि बुनियादी तालीमके स्कूलमें दाखिल होनेके लिए बालक की उम्र कम-से-कम सात वर्षकी होनी चाहिए। यह उम्र काल-मर्यादासे नापी जाये या मानसिक विकाससे?

गा० : कम-से-कम औसत उम्र सात वर्षकी होनी चाहिए। पर कुछ बालक इससे अधिक उम्रके और कुछ कम उम्रके भी होगे। इसमे शारीरिक और मानसिक दोनो प्रकारकी उम्रका विचार करना पड़ता है। किसी बालकका ७ वर्षकी उम्रमे इतना

शारीरिक विकास हो जाता है कि वह हस्त-उद्योग चला सकता है। दूसरा बालक शायद ७ वर्षमे उतना न कर सके। अत इस बारेमे कोई निश्चित नियम नही बनाया जा सकता। सब बातोका विचार करके निर्णय करना पडेगा।

आपके बहुत-से प्रश्नोसे मालूम होता है कि आपमे से अधिकाशके मनमे शकाएँ भरी पड़ी हैं। यह काम करनेका गलत तरीका है। आपके मनमे दृढ विश्वास होना चाहिए। हमारे करोड़ो बालकोको जीवनकी शिक्षा देनेके लिए वर्धा-योजनाके अन्तर्गत दी जानेवाली शिक्षा ही सच्ची आवश्यक वस्तु है, ऐसी जो प्रतीति मेरे मनमे है वह आपके मनमे हो तो आपका काम चमक उठेगा। ऐसा विश्वास आपमे न हो तो आपके अध्यापकोमें कुछ कमी अवश्य है। वे आपको और कुछ दे सके या न दे सके, पर इतना विश्वास आपके मनमे पैदा करनेकी शक्ति तो उनमे होनी ही चाहिए।

प्र० : बुनियादी तालीमकी योजना गाँवके लिए है, ऐसा माना जाता है। क्या शहरवालोंके लिए कोई रास्ता नहीं है? क्या उन्हें पुरानी पद्धतिसे ही चलना पड़ेगा?

गां० : यह सवाल प्रासंगिक है और अच्छा है, पर मै इसका जवाब 'हरिजन' मे दे चुका हूँ। जितना काम हाथमे लिया है, उतना पूरा कर दे तो बहुत है। हमने जो काम उठाया है, वही काफी बड़ा है। ७ लाख गाँवोकी शिक्षाका प्रश्न हम हल कर सके, तो अभीके लिए इतना काफी है। बेशक, शिक्षा-शास्त्री शहरोके लिए भी विचार कर रहे हैं। पर हम गाँवोके साथ-साथ शहरोका प्रश्न भी उठायेंगे, तो हमारी शक्ति व्यर्थ नष्ट हो जायेगी।

प्र० : मान लीजिए कि किसी गाँवमे तीन स्कूल हैं और हरएकमें अलग-अलग दस्तकारीका प्रशिक्षण दिया जाता है। यदि एक स्कूलमें दूसरेकी अपेक्षा शिक्षाकी अधिक गुंजाइश हो, तो बालकको उनमें से किस स्कूलमें जाना चाहिए?

गा : एक गाँवमे अनेक दस्तकारियोका प्रशिक्षण नही दिया जाना चाहिए, क्योकि हमारे ज्यादातर गाँव इतने छोटे है कि उनमे एकसे अधिक स्कूल रखना ठीक नही रहेगा। बडे गाँवमे एकसे अधिक स्कूल हो सकते है। पर वहाँ दोनोमे एक ही दस्तकारी सिखाई जानी चाहिए। फिर भी इसके बारेमे मैं कोई अटल नियम नही बनाना चाहता। ऐसी बातोमे अनुभवके अनुसार चलना ही उत्तम तरीका है। विभिन दस्तकारियोमे विद्यार्थियोकी कितनी रुचि है और वे विद्यार्थियोकी शक्तिका कितना विकास कर सकते है, उसका निरीक्षण करना चाहिए। मुद्दा यह है कि आप जो भी दस्तकारी पसन्द करे, इससे बालककी शक्तियोका पूर्ण और एक समान विकास होना चाहिए। यह कोई ग्रामोद्योग होना चाहिए और उपयोगी होना चाहिए।

प्र० : बड़ा होनेपर यदि बालकका व्यवसाय दूसरा ही होनेवाला हो, तो वह सात वर्ष किसी हस्त-उद्योगको सीखनेमें क्यों बिगाड़े? उदाहरणके लिए, सराफका लड़का, जो बड़ा होनेपर सराफ होनेवाला है, सात बरस तक कताई करना क्यों सीखे?

गां० : यह प्रश्न नई शिक्षा-योजनाके बारेमे घोर अज्ञान प्रदर्शित करता है। बुनियादी तालीममे लड़का केवल दस्तकारी सीखनेके लिए स्कूल नही जाता। वह स्कूलमें दस्तकारीकी मार्फत प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करनेके लिए, अपने मनका विकास करनेके लिए जाता है। मेरा यह दावा है कि जिस बालकने ७ वर्षका प्राथमिक शिक्षाका नया पाठ्यक्रम पूरा किया होगा, वह किसी सामान्य स्कूलमे ७ वर्ष तक पढे हुए बालककी अपेक्षा अधिक अच्छा सर्राफ बन सकेगा। सामान्य स्कूलमे जानेवाला बालक सराफीके स्कूलमें जायेगा, तो वह उसे अच्छा नही लगेगा, क्योकि उसकी सब शक्तियोका विकास नही हुआ होगा। पुराने वहम, जो जड़ जमाकर बैठे होते है, निकलने मुश्किल है। इस नई शिक्षा-योजनाका अर्थ तनिक अक्षर-ज्ञान और थोड़ी दस्तकारी — इन दोका मिश्रण नही है। यदि यह मुख्य बात मै आप लोगोके मनमे बिठा सकूँ, तो मेरा आजका काम सफल माना जायेगा। दस्तकारीके माध्यमसे पूरी प्राथमिक शिक्षा देना ही इस नई योजनाका ध्येय है।

प्र० : प्रत्येक स्कूलमें एकसे अधिक दस्तकारियाँ सिखाना क्या ठीक नहीं है? सम्भव है कि हर माह और हर साल एक ही दस्तकारी सीखनेमें बालक उकता जाये।

गां० : यदि मुझे कोई शिक्षक ऐसा मिले जिसके विद्यार्थियोको एक महीना कातनेके बाद उसमे दिलचस्पी न रह जाये, तो मै उस शिक्षक को हटा दूंगा। जैसे एक ही वाद्यपर संगीतके नये-नये स्वर निकल सकते है, वैसे ही शिक्षकके हरएक पाठमें नवीनता होनी चाहिए। कभी एक दस्तकारी और कभी दूसरी हाथमे लेनेसे बालककी स्थिति एक शाखासे दूसरी शाखापर कूदनेवाले और कही भी स्थिर न बैठनेवाले बन्दर-जैसी हो सकती है। पर मैने अपनी चर्चामे बताया है कि शास्त्रीय तरीकेसे कताई सिखानेमे कताईके अलावा दूसरे अनेक विषय सिखाने पड़ते है। शीघ्र ही बालक को अपनी तकली और अटेरन बनाना सिखाया जायेगा। अर्थात् शुरूमें कही हुई बात मै फिर कहता हूँ कि यदि शिक्षक दस्तकारीका काम शास्त्रीय वृत्तिसे करेगा, तो वह अपने विद्यार्थियोको अनेक और विविध चीजें सिखायेगा और ये सब विद्यार्थियोकी सभी शक्तियोके विकासमे मदद करेंगी।

सेगाँव, ९ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-२-१९३९ तथा ४-३-१९३९

४१९. तार : महादेव देसाईको[1]

वर्धा
[४ फरवरी, १९३९][2]

महादेव देसाई
बिड़ला हाउस
नई दिल्ली

हालाँकि पूरी बात न जाननेके कारण तुम्हारा सुझाव मुझे नहीं जँचता, तो भी मैं जमनालालजीको सलाह दे रहा हूँ कि वे तुम्हारी हिदायतो पर चलें। स्वास्थ्य अच्छा है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१२

४२०. तार : जमनालाल बजाजको

[४ फरवरी, १९३९][3]

जमनालाल
मार्फत लकइंश्योर, आगरा

तुम्हारा तार मिला। महादेवने तुमको तारसे कुछ सुझाव भेजे हैं। उनका पालन करो। स्वास्थ्य अच्छा है। बा, मणिबहन गिरफ्तार हो गईं, राज्यकी मेहमान हैं।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ४०४

१. महादेव देसाईने ४ फरवरीको नई दिल्लीसे अपने तारमें कहा था: "जमनालालजी की निगरानी करनेवाले पुलिस-अधिकारीने उनसे जबानी यह प्रार्थना की है कि वे अधिकारियोंको पुनर्विचारके लिए कुछ समय दें। इसलिए क्या मैं जमनालालजीसे यह कह सकता हूँ कि अधिकारियोंको एक पत्र लिखें, जिसमें पुलिस-अधिकारीकी प्रार्थनाका उल्लेख हो, विज्ञप्तिकी असंगति दिखाई जाये और उन्हें आठ तकका समय दे दिया जाये। पत्रके लिए उपयुक्त मसविदा मैं उन्हें भेज रहा हूँ। यदि आप सहमत हों तो आप उन्हें पत्र भेजनेकी सलाह दे दें।"

२. देखिए अगला शीर्षक।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

४२१. पत्र : इन्दिरा नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
४ फरवरी, १९३९

चि० इंदु,

अव तू मुझे क्यो याद करेगी? आलमोडामे तुझे लाभ हुआ सुनकर मुझे आनद हुआ। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि तू बिलकुल अच्छी हो जा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९८०१) से; सौजन्य : नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४२२. पत्र : जनरल शिन्देको

सेगाँव
४ फरवरी, १९३९

प्रिय जनरल शिन्दे,

आपके पत्र तथा संलग्न कागजातके लिए अनेकानेक धन्यवाद।[1]

आपने जो उद्धरण मुझे भेजे है उनमे मुझे कोई आपत्तिजनक बात नही दिखाई पड़ती।

जहाँ तक छपे हुए परिपत्रकी बात है, यदि उसमे कही गई बात सच है तो यही कहूँगा कि वह एक दुःखद स्थितिकी सूचक है। सचाईका पता चलानेकी जिम्मेदारी बड़ौदाके समझदार लोगोपर है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य : प्यारेलाल।

१. देखिए "पत्र : जनरल शिन्देको", पृ० ३७९।

४२३. पत्र : शारदा चि० शाहको

४ फरवरी, १९३९

चि० बबुड़ी,

तू मुझसे दूर नही रह सकती तो विवाहके बाद भी यहाँ रह सकती है। मैंने तो जल्दी इसलिए की कि तेरी इच्छा भी थी ही। फिर, मेरा कोई ठिकाना नही। शरीर भी कमजोर है। इसलिए मैंने सोचा कि यह काम मेरे हाथसे ही हो जाये, तो इस ऋणसे छुटकारा पा जाऊँ। तू कुछ दिन ससुरालमे रहकर भी तुरन्त वापस आ सकती है। तबीयत ठीक न रहे, तब तो आ ही जाना। जो तुझे ठीक लगे वह कर सकती है। मेरी यह भी इच्छा है कि तू बारडोलीके काममे शामिल हो जाये।

कपड़ा कहाँ है? लेकिन मैं जो कपड़े पहनता हूँ, उनमें से कोई नया कपडा तू ले ले, क्या यह ठीक नही होगा? ऊपर ओढनेके लिए ठीक होगा या सायेके लिए; जहाँ भी सफेद कपड़ा ठीक लगे? चरखा कैसा? पुस्तकें सब मिलेगी। सूत्र तो तैयार ही है।

दूर रहकर भी तू मेरी सेवा, मेरा काम करेगी।

कलके पत्रका उत्तर सरदारके पत्रमे नही दिया जा सका। मेरी सलाह है कि तू सरदारको इस सम्बन्धमे अपने विचार बता।

धार्मिक वाचनके बारेमें फिर दूसरी बार पूछना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००३) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला

४२४. रोमन लिपि बनाम देवनागरी लिपि[1]

मुझे मालूम हुआ है कि असममें कुछ जन-जातियोको देवनागरीकी जगह रोमन लिपिमें लिखना-पढ़ना सिखाया जा रहा है। मै अपनी यह राय जाहिर कर ही चुका हूँ कि अगर हिन्दुस्तानमे सर्वमान्य हो सकनेवाली कोई लिपि है तो वह देवनागरी ही है, फिर चाहे उसे सुधरे रूपमे स्वीकार किया जाये या वह जैसी अब है उसी रूपमे। जब तक मुसलमान स्वेच्छासे शुद्ध वैज्ञानिक और राष्ट्रीय दृष्टिसे देवनागरीकी श्रेष्ठता स्वीकार नही करते, तबतक उर्दू या फारसी लिपि जरूर जारी रहेगी। मगर मौजूदा समस्याके लिए यह बात अप्रासंगिक है। इन दो

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

लिपियोंके साथ-साथ रोमन लिपि नहीं चल सकती। रोमन लिपिके समर्थक तो इन दोनों ही लिपियोंको रद कर देनेकी राय देंगे। किन्तु विज्ञान तथा भावना, दोनों ही दृष्टियोंसे रोमन लिपि नहीं चल सकती। रोमन लिपिमें अच्छाई केवल यह है कि छापने और टाइप करनेमें वह आसान पड़ती है। किन्तु उसे सीखनेमें करोड़ों लोगोंको जो मेहनत पड़ेगी, उसे देखते हुए इस लाभका हमारे लिए कोई मूल्य नहीं है। लाखों-करोड़ों लोगोंको तो देवनागरीमें या अपने-अपने प्रान्तकी लिपिमें ही अपना साहित्य पढ़ना है, इसलिए उन्हें रोमन लिपि जरा भी सहायता नहीं पहुँचा सकती। करोड़ों हिन्दुओं और मुसलमानोंके लिए भी देवनागरी सीखना आसान है, क्योंकि अधिकांश प्रान्तीय लिपियाँ देवनागरीसे ही निकली हैं। मैंने इसमें मुसलमानोंका समावेश जान-बूझकर किया है। मसलन, बंगालके मुसलमानोंकी मातृभाषा बंगला है, और तमिलनाडुके मुसलमानोंकी तमिल। उर्दू-प्रचारके वर्तमान आन्दोलनका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि हिन्दुस्तान-भरके मुसलमान अपनी-अपनी मातृ-भाषाके अलावा उर्दू भी सीखें। हर हालतमें 'कुरानशरीफ' पढ़नेके लिए उन्हें अरबी सीखनी ही पड़ेगी। मगर करोड़ों हिन्दू-मुसलमानोंके लिए रोमन लिपिका प्रयोजन तो अंग्रेजी सीखनेके सिवा दूसरा कुछ भी नहीं है। इसी तरह हिन्दुओंको अपने धर्म-ग्रन्थ मूल भाषामें पढ़नेके लिए देवनागरी सीखनेकी जरूरत पड़ती है, और वे उसे सीखते ही हैं। इस तरह देवनागरी लिपिको सर्वमान्य बनानेके लिए एक ठोस आधार है। अगर हम रोमन लिपिको लागू करें, तो वह ऊपरसे थोपी हुई ही होगी और कभी लोकप्रिय नहीं हो सकेगी। जब सच्ची लोक-जागृति आयेगी, तो ऊपरसे थोपी गई कोई भी चीज टिक नहीं सकेगी। और यह लोक-जागृति ज्ञात कारणोंसे कोई जितनी आशा कर सकता है, उससे कहीं ज्यादा जल्दी आनेवाली है। फिर भी लाखों-करोड़ों लोगोंको जगानेमें वक्त लगेगा। जागृति कोई ऐसी चीज तो है नहीं जो साँचेमें ढालकर बनाई जा सकती हो। यह तो रहस्यमय ढंगसे आती है या आती हुई प्रतीत होती है। राष्ट्रीय कार्यकर्ता जन-मानसको पहलेसे समझकर उस प्रक्रियाको केवल तेज कर सकते हैं।

सेगांव, ५ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-२-१९३९

४२५. क्षमायाचना नहीं

यहूदी मित्रोसे मुझे दो पत्र मिले है जिनमे यहूदी समस्यापर 'हरिजन' में प्रकाशित एक वार्तालापमे मेरे एक कथनपर विरोध प्रकट किया गया है। उनमे से एक पत्र यहाँ उद्धृत किया जा रहा है:

> **मेरा ध्यान २४ दिसम्बर, १९३८ के 'हरिजन' के एक अनुच्छेद[1] की ओर आकर्षित किया गया है जिसमें रिपोर्टके अनुसार आपने यह कहा है कि "यहूदियोंने यह कामना की है कि जर्मनोंको सारी मानवजातिका शाप लगे और वे यह चाहते है कि अमेरिका और इंग्लैंड उनकी ओरसे जर्मनीसे लड़ें।" मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आपकी बात गलत ढंगसे रखी गई है, क्योंकि ऐसा कुछ नहीं है जिससे इस तरहका कथन उचित ठहराया जा सके। फिर भी इन शब्दोसे मुझे बड़ी व्यथा पहुँची है, इसलिए आपकी ओरसे आश्वासनके दो शब्द पाकर मुझे खुशी होगी।**

मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि जो आश्वासन माँगा गया है वह मै नही दे सकता। क्योकि श्री प्यारेलालने जो शब्द मुझसे कहलवाये है वे मैने कहे थे। पश्चिमसे मुझे जो पत्र मिलते है प्राय उन सभीमे यहूदियोके कष्टोका वर्णन रहता है और जनतन्त्रीय देशोसे जर्मन अत्याचारोका बदला लेनेकी माँग होती है। मै यह भी कह दूं कि इस रुखमे मुझे कोई बुराई भी नही दिखती। यहूदी कोई फरिश्ते नही है। मेरा आशय यह था कि मै अहिंसाका जो अर्थ करता हूँ उस अर्थमे वे अहिंसक नही है। उनकी अहिंसामे प्रेम न तो था और न है। वह निष्क्रिय है। वे प्रतिरोध इसलिए नही करते क्योकि वे जानते है कि उन्हे प्रतिरोधमे कोई सफलता नही मिलेगी। यदि मुझमे सक्रिय अहिंसा न हो, तो उनकी जगह मै भी निश्चय ही अपने उत्पीडकोपर ईश्वरका कोप पडनेकी कामना करूँगा। मुझे पत्र लिखनेवालोने यह दावा नही किया है कि जर्मन यहूदी यह नही चाहते कि इंग्लैंड, अमरीका और फ्रास जैसी बड़ी शक्तियाँ इन अत्याचारोको रोके और यदि जरूरी हो तो इसके लिए जर्मनीके विरुद्ध युद्ध तक करे। एक यहूदी मित्र मेरे साथ रह रहे है। उनका अहिंसामें बौद्धिक विश्वास है। परन्तु वे कहते है कि वे हिटलरके लिए प्रार्थना नही कर सकते। जर्मन अत्याचारोपर उनमे इतना रोष है कि उनकी चर्चा करते हुए वे अपनेपर नियन्त्रण नही रख पाते है। उनके इस रोषपर मै उनके साथ झगड़ता नही हूँ। वे अहिंसक होना चाहते है, परन्तु अपने यहूदी भाइयोके कष्टोको बरदाश्त नही कर पाते है। जो बात उनके बारेमे सच

1. देखिए पृ० २२४।

है, वह उन हजारो यहूदियोके बारेमें भी सच है जिन्होने "शत्रुसे भी प्रेम करने" की बात कभी सोची नही है। उनके लिए, और लाखो लोगोके लिए, "प्रतिशोध मधुर है, क्षमा दिव्य है।"

सेगाँव, ५ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

४२६. पत्र : सुभाषचन्द्र बोसको

सेगाँव
५ फरवरी, १९३९

प्रिय सुभाष,

आशा है, तुम्हे मेरा निजी पत्र और कल भेजा हुआ पत्र[1], दोनो मिल गये होंगे।

मुझे मौलाना साहबका तार मिला है जिसमे यह सुझाव है कि वे और दूसरे लोग कार्य-समितिसे अलग हो जाये।[2] मैंने उसको यह उत्तर दिया है कि इससे शायद तुम्हे [सुभाषको] परेशानी होगी। अब राजेन बाबूका पत्र आया है। उसमे भी वही सुझाव है और उसका इस तर्क द्वारा समर्थन किया गया है कि यदि इस्तीफे तुम्हारे हाथमे हो तो इससे तुम्हे मदद ही मिलेगी। इससे तुम एक अस्थायी कार्य-समिति चुन सकते हो जो भावी कार्यक्रम बनानेमें तुम्हारी मदद करेगी। राजेन बाबूका तर्क मुझे सही लगता है। मेरी समझके अनुसार पुराने साथी, जिन्हे तुम दक्षिणपथी मानते हो, कार्य-समितिमे काम नही करेंगे। यदि तुम्हारे लिए यह ज्यादा सुविधाजनक हो तो तुम उनके इस्तीफे अभी ले सकते हो। उनकी उपस्थिति तुम्हारे लिए और उनके लिए भी उचित नही होगी। तुम्हे अपना कार्यक्रम गढनेके लिए स्वतन्त्र रहना चाहिए और दक्षिणपथियोसे (मैं चाहता हूँ तुम्हारी कल्पनामें जो दल है उनके लिए कोई ज्यादा अच्छे और देसी नाम चुनो) यह आशा रखनी चाहिए कि जहाँ तक उनसे बन पडेगा, वे तुम्हे समर्थन देंगे और जहाँ वे तुमसे सहमत नही होंगे, वहाँ तुम्हारे काममे रोडा अटकाये बिना तटस्थ रहेंगे।

अपने वक्तव्य[3] के उत्तरमें दिया गया तुम्हारा वक्तव्य[4] मैंने अभी-अभी पढ़ा है। यद्यपि इसका उत्तर दिया जाना चाहिए, लेकिन मैं इसका उत्तर नही दे रहा हूँ। जहाँ तक मेरा बस चले, मैं तुम्हारे साथ सार्वजनिक विवादमें नही पड़ना चाहता।

१. ये पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. कार्य-समितिके सदस्योंके इस्तीफेके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट ३।
३. देखिए पृ० ३९६-७।
४. देखिए परिशिष्ट ४।

यदि जरूरी समझो तो यह पत्र तुम मित्रोंको दिखा सकते हो। मैं इसकी प्रतियाँ मौलाना साहब आदिको भेज रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४२७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

५ फरवरी, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

यह प्रति[1] तुम्हारे सूचनार्थ है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४२८. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

[५ फरवरी, १९३९][2]

चि० जानकीबहन,

कल तो नानाभाई और मनुभाई आते हैं। उनको सेगाँव आने देना अच्छा होगा। आजकल यहां भीड नही है। और उनको लेनेके लिये पुन्नालाल जाते हैं तो खाली क्यों तुमको तकलीफ दूं? मंगलवारको शायद पाच आदमी आवेंगे। उनको भी सेगाँव लाना तो चाहता हूं। कुछ परिवर्तन करना होगा तो देख लूगा। जमनालाल पकडे गये सो अच्छा ही हूआ है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

विवाह विधि नानाभाई करेंगे। व्यासजी भले आवे।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३००२) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. यह तारीख जमनालालजीकी गिरफ्तारी तथा मंगलवार, दिनांक ७ फरवरी, १९३९ को सम्पन्न हुए विजया पटेल और शारदा शाहके विवाहके उल्लेखके आधारपर निश्चित की गई है।

४२९. पुर्जा : अमृत कौरको

[५ फरवरी, १९३९ या उसके पश्चात्][1]

विरोधाभासवाली बात बिलकुल लागू नहीं होती। मेरा मतलब यह है कि साधारण मनुष्य यदि यह कामना करता है कि ईश्वर अत्याचारीको दण्ड दे, तो उसमें गलत कुछ नहीं है। अहिंसा नई चीज है। अहिंसामें आस्था रखनेवालेके लिए किसीके ऊपर ईश्वर अथवा मनुष्यके प्रकोपकी कामना करना गलत होगा। परन्तु यदि कोई उत्पीडित मनुष्य प्रत्याक्रमण करता है और इसमें दूसरोंकी सहायता चाहता है, तो अहिंसामें आस्था रखनेवालेको वह गलत नहीं लगना चाहिए। इस तर्कको समझनेकी तुम्हें कोशिश करनी चाहिए।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४२०९) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ७८४५ से भी।

४३०. भेंट : दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय विद्यार्थियोंको[2]

बारडोली

[६ फरवरी, १९३९ के पूर्व][3]

विद्यार्थियोंने गांधीजीसे पूछा : "दक्षिण आफ्रिकामें पैदा हुए हम लोग अपने अभिगृहीत देशमें भारतीय संस्कृतिको सुरक्षित रखनेके लिए क्या करें? अंग्रेजीके अलावा अन्य कौन-सी भाषाएँ आप हमें सीखनेके लिए कहेंगे?"

गांधीजीने पहले तो उन्हें अंग्रेजीको प्रथम स्थान देनेके लिए झिड़का और फिर यह सलाह दी कि उन्हें उसके बजाय हिन्दुस्तानी सीखनी चाहिए जिसमें संस्कृत और फारसी या अरबी मूलके वे सब शब्द हों जिन्हें आम लोग इस्तेमाल करते हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दू लोग संस्कृतके अध्ययनकी और मुसलमान अरबीके अध्ययनकी उपेक्षा नहीं कर सकते। केवल इसीलिए नहीं कि उनके लिए इन भाषाओंका अध्ययन अपने-अपने धार्मिक ग्रन्थोंको मूल भाषामें पढ़नेके लिए अनिवार्य है, अपितु इसलिए भी कि इन दोनों भाषाओंमें संसारकी सर्वोत्तम कविताका सृजन किया गया है। उन्होंने अन्तमें कहा :

१. यह पुर्जा एक तारके पृष्ठभाग पर लिखा हुआ है, जो दामोदरकी ओरसे वच्छराज, वर्धाको ५-२-१९३९ को भेजा गया था।

२ और ३. प्यारेलालके "ए वर्ल्ड इन एगोनी–२" ६-२-१९३९ से उद्धृत। ये विद्यार्थी भारतमें डॉक्टरी शिक्षा पानेके लिए आये थे और वे चाहते थे कि मेडिकल कॉलेजोंमें प्रवेश पानेके लिए गांधीजी उनकी सहायता करें।

सबसे ज्यादा ध्यान रखनेकी बात यह है कि आप सादगी और अध्यात्म-भावनाको, जो भारतीय सस्कृतिकी विशिष्ट पहिचान है, निष्ठापूर्वक बनाये रखें।

विद्यार्थियोंका दूसरा प्रश्न यह था कि वे दक्षिण आफ्रिकामें अपने अधिकारोंके लिए संघर्षको सत्याग्रह द्वारा जारी रखें या वैधानिक आन्दोलन द्वारा।

गाधीजी · मै कहूँगा कि यदि दक्षिण आफ्रिकाके लोगोमे साहस हो तो वे सत्याग्रह द्वारा ही सघर्ष जारी रखे और विश्वास रखे कि इसमे उनकी जीत अवश्य होगी। मुझे आशा है कि किसी दिन दक्षिण आफ्रिकामे जन्मे युवकोमेसे कोई ऐसा अवश्य निकलेगा जो वहाँ बसे हुए अपने देशवासियोके अधिकारोका पक्ष लेगा और उन अधिकारोको सिद्ध करना अपने जीवनका लक्ष्य बनायेगा। उसका आचार-व्यवहार इतना विशुद्ध, सुसस्कृत, सच्चा और गरिमा-युक्त होगा कि वह सारे विरोधको निरस्त कर देगा। गोरी जातियाँ तब कहेगी, "यदि सभी भारतीय इस-जैसे हो तो उन्हे अपने समान दर्जा देनेमें हमें कोई आपत्ति नही है।" परन्तु वह उत्तर देगा. "इतना ही काफी नही है कि भारतीय लोगोके एक ही प्रतिनिधिको आप अपनी बराबरीका माननेके लिए तैयार हो जाये। मै जो-कुछ हूँ वही मेरे दूसरे देशवासी भी हो सकते है, बशर्ते कि उन्हे बुरा-भला कहने और उन पर अनेक प्रकारकी निर्योग्यताएँ लादनेके बजाय आप उन्हे उदारतापूर्वक शिक्षा-सम्बन्धी और दूसरी सुविधाएँ प्राप्त करनेका अवसर दे। आज उन्हे उन सुविधाओसे वंचित रखा जाता है। जब कभी कोई ऐसा व्यक्ति निकल आयेगा, तब उसे मेरी सीखकी जरूरत नही होगी। वह अपनी चारित्रिक प्रतिभासे अपनी शक्ति और योग्यता स्वय ही प्रमाणित कर देगा और सफलता प्राप्त करेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

४३१. महात्माकी मूर्ति[1]

कांग्रेस-नगरमे २५,००० रुपयेकी लागतसे महात्माकी मूर्ति बनानेकी खबरको लेकर उसके विरोधमे मेरे पास लोगोके पत्र-पर-पत्र आ रहे है। इस मूर्तिके बारेमें मुझे कुछ भी पता नही है। इस सम्बन्धमे मैंने पूछताछ की है। मगर इस खबरकी पुष्टि होने तक मै इन्तजार नही करना चाहता। यह मानकर कि ऐसी मूर्ति बनाई जा रही है, मै अपने पत्र-लेखकोके विरोधका जोरदार समर्थन करता हूँ और उनकी इस बातसे सहमत हूँ कि एक मनुष्यकी आकृतिकी मिट्टी या धातुकी प्रतिमा बनानेपर २५,००० रुपये खर्च करना निश्चय ही पैसेकी बरबादी है — एक ऐसे मनुष्यकी प्रतिमा पर, जो कि खुद ही मिट्टीका बना हुआ है और जो उस कॉंचकी चूड़ीसे भी अधिक नाजुक है जिसे यदि ठीक तरहसे रखा जाये, तो वह हजारो साल तक सुरक्षित रखी

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

रह सकती है, जबकि मानव-काया तो रोजरोज क्षीण होती रहती है और निश्चित आयु पूरी होनेपर बिलकुल नष्ट हो जाती है। अपने मुसलमान दोस्तोंसे, जिनके बीचमें मेरी जिन्दगीका सबसे अच्छा हिस्सा गुजरा है, मैंने अपनी मूर्तियों और तसवीरोंके प्रति अपनी नापसन्दगी सीखी है। और अगर यह खबर सच है, तो मैं चाहूँगा कि स्वागत-समिति इस बेकार चीजको बनानेका इरादा छोड़ दे। जितना पैसा स्वागत-समिति बचा सके उतना उसे बचा लेना चाहिए। अगर यह खाली अफवाह ही है, तो मेरी ये पंक्तियाँ उन लोगोंके लिए चेतावनी-स्वरूप होनी चाहिए, जो मेरी आकृति की प्रतिमा और तसवीरें बनवाकर, जिन्हें कि मैं दिलसे नापसन्द करता हूँ, मेरा सम्मान करना चाहते हैं। जो लोग मुझमें विश्वास करते हैं अगर वे कृपा कर उन प्रवृत्तियोंको, जिनके लिए कि मैं लड़ रहा हूँ, आगे बढ़ायेंगे और कमसे-कम उस रुपयेको, जिसे कि वे प्रतिमाओं और तसवीरोंपर खर्च करना चाहते हैं, हरिजन सेवक संघ, अ० भा० ग्रामोद्योग संघ, अ० भा० चरखा-संघ या हिन्दुस्तानी तालीमी-संघके काममें लगायेंगे, तो मैं उसे अपना काफी सम्मान समझूँगा।

सेगाँव, ६ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-२-१९३९

४३२. कस्तूरबा गांधी राजकोट क्यों गई?[1]

राजकोटकी लड़ाईमें अपनी पत्नीके शरीक होनेके बारेमें मैं कुछ भी नहीं कहना चाहता था। लेकिन उनके शरीक होनेके बारेमें कुछ ऐसी निष्ठुर टीकाएँ मेरे देखनेमें आई हैं कि स्पष्टीकरण देना जरूरी हो गया है। मुझे यह कभी नहीं सूझा था कि उसे लड़ाईमें जाकर शामिल होना चाहिए। इसका एक कारण तो यही था कि वह इतनी वृद्ध हो गई है कि सविनय अवज्ञाकी लड़ाईकी मुसीबतें उनसे अब बरदाश्त नहीं हो सकती। आलोचकोंको भले ही इसमें ताज्जुब हो, लेकिन उन्हें मेरी इस बात पर जरूर यकीन कर लेना चाहिए कि हालाँकि वह बेचारी बहुत पढ़ी-लिखी नहीं है, मगर जो वह करना चाहती है, उसे करनेके लिए वह बिलकुल स्वतन्त्र है और वर्षोंसे रही है। जब उन्होंने दक्षिण आफ्रिका या हिन्दुस्तानकी आजादीकी लड़ाईमें भाग लिया, तो ऐसा उसने अपनी आन्तरिक प्रेरणासे ही किया था। और राजकोट की लड़ाईमें भी ऐसा ही हुआ है। मणिबहनकी गिरफ्तारकी बात सुनने पर वह अपनेको काबूमें न रख सकी और मुझसे बोली, मैं उन्हें राजकोट जाने दूँ। मैंने उनसे कहा कि वह बहुत ज्यादा कमजोर है। दिल्लीमें हाल ही में वह स्नानगृहमें बेहोश हो गई थी, और देवदासने प्रत्युत्पन्नमतिसे काम न लिया होता तो उनकी वहीं मृत्यु हो जाती। लेकिन उन्होंने कहा कि इसकी चिन्ता नहीं थी। इसके बाद मैंने

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

उन्हे सरदारसे सलाह लेनेके लिए कहा। उन्होने भी इनके आग्रहको अमान्य कर दिया।

पर इस बार तो सरदारको पिघल ही जाना पड़ा। रेजिडेटके उकसानेपर ठाकुर साहब द्वारा वचन-भग किये जानेसे मुझे जो वेदना हुई उसे उन्होने देखा था। पाठकोको यह जानना चाहिए कि राजकोटके साथ मेरा पैतृक सम्बन्ध है और वर्तमान ठाकुर साहबके पिताके साथ तो मेरे व्यक्तिगत सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ थे। कस्तूरबा राजकोटकी लड़की है। उन्हें यह व्यक्तिगत आह्वान जैसा लगा। राजकोटकी दूसरी पुत्रियाँ वहाँ की प्रजाके स्वातन्त्र्य-युद्धमें कष्ट झेलती रहे और वह चुपचाप बैठी रहे यह उन्हे सहन न हो सका। इसमे सन्देह नही कि हिन्दुस्तानके नक्शेपर राजकोट एक तुच्छ स्थान है। किन्तु मेरे और मेरी पत्नीके लिए वह तुच्छ नही है। उनका जन्म यद्यपि पोरबन्दरमे हुआ था, पर लालन-पालन तो राजकोटमें ही हुआ। और फिर जो युद्ध अहिंसापर आधारित हो और जिसमे इतने तमाम विश्वसनीय साथी कार्यकर्ताओने भाग लिया हो, उससे कस्तूरबा या मै कोई ताल्लुक न रखूं, यह कैसे हो सकता है?

स्वातन्त्र्य-युद्धमे राजकोटकी लडाईकी सफलता एक अगली मजिलका काम करेगी। और जब यह लडाई सफलताके साथ समाप्त होगी — जल्दी या देरीसे सफल यह जरूर होगी — तब मै आशा करता हूँ कि कस्तूरबाका उसमे भाग लेना उस स्वातन्त्र्य-यज्ञमे एक तुच्छ योगदान माना जायेगा। सत्याग्रहकी लड़ाई एक ऐसी लडाई है, जिसमे अगर दिल मजबूत हो तो, वृद्ध-से-वृद्ध और कमजोर-से-कमजोर शरीरवाला भी हिस्सा ले सकता है।

सेगाँव, ६ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-२-१९३९

४३३. अहिंसाका पालन

'हरिजन'के हालके अंकोको और यूरोपके संकट और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तके बारेमें आपने जो-कुछ लिखा, उसे मै बड़ी दिलचस्पीके साथ पढ़ता रहा हूँ। लेकिन अहिंसाकी समस्यामें एक बात ऐसी है, जिसके बारेमें अगर समय होता तो मै सेगाँवमें ही आपसे बातचीत करता,[1] क्योंकि उसका उल्लेख आप या तो कभी करते ही नहीं, या कभी-कभार ही करते हैं। आप कहते हैं कि अहिंसात्मक असहयोग, जिस रूपमें आपने उसे विकसित किया है, उस हिंसाका जवाब है जो अब सारे संसारका ध्वंस करनेपर उतारू है। ऐसी भावना और

१. लॉर्ड लोथियन १८ जनवरी से २० जनवरी, १९३८ तक सेगाँवमें थे; देखिए खण्ड ६६, पृ० ३८३-४।

ऐसे कामका महान प्रभाव हो सकता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। लेकिन शत्रु-मित्र सबके लिए एक समान निःस्वार्थ प्रेमकी अहिंसात्मक भावनाको सफल होनेके लिए क्या यह जरूरी नहीं है कि जहाँ वह प्रकट हो वहाँ शासन उदार, लोकतन्त्रात्मक और वैधानिक होना चाहिए? कानून और सरकारके बगैर समाज कायम नहीं रह सकता। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति तब तक स्थापित नहीं हो सकती जब तक कि विभिन्न राष्ट्र वैधानिक शासनकी एक ऐसी पद्धतिको स्वीकार न कर लें जो उन्हें एकता और कानून प्रदान करके अराजकताका खात्मा कर दे। इसमें कोई शक नहीं कि किसी-न-किसी दिन ईश्वरीय कानून मनुष्योंके दिल और दिमागपर इस प्रकार अंकित हो जायेगा कि उसका पालन करनेके लिए किसी मानवी कानून या शासनकी कोई जरूरत नहीं होगी, बल्कि व्यक्तिगत रूपमें वे खुद ही उसके अभिव्यंजक बन जायेंगे। लेकिन वह तो चरम स्थिति है। इस दिव्य लक्ष्यकी ओर बढ़नेका आरम्भ इस रूपमें होना जरूरी है कि सबसे पहले विविध जातियाँ, धर्म और राष्ट्र एक ऐसे विधानके अन्तर्गत एक होनेको रजामन्द हों, जिसके द्वारा उनकी एकता और पारस्परिक सदस्यता कायम रहे। जिन कानूनोंके मातहत वे रहे, वे सार्वजनिक विचार-विमर्श के बाद और किसी-न-किसी रूपमें बहुमतके निश्चयसे जारी होने चाहिए और जहाँ उनका पालन स्वेच्छापूर्वक न हो, वहाँ समझाने-बुझाने और उदाहरण पेश करनेसे काम न चलनेपर, उनका पालन युद्ध द्वारा नहीं बल्कि पुलिस द्वारा कराया जाये। सर्वप्रभुतासम्पन्न राष्ट्रोंके बीच रचनात्मक अहिंसाकी भावनाको काममें लानेसे हम संघ-शासन [फेडरेशन] के किसी-न-किसी रूपपर ही पहुँचेंगे। क्योंकि ऐसा किये बगैर वह सफल नहीं हो सकती। वह प्रभावकारी रूपमें कायम है, इसका सबूत संघात्मक पद्धतिका उभरना ही होगा। इस प्रकार यूरोपकी समस्याका एकमात्र सच्चा हल यही है कि वहाँके २५ राष्ट्रोंका एक लोकतन्त्रीय संविधानके मातहत संघ बनाया जाये, जो ऐसी सरकारका निर्माण करे जो यूरोपको प्रतिस्पर्धी और परस्पर विरोधी राष्ट्रोंका एक समूह मानकर नहीं, बल्कि स्वायत्त भागोंवाली एक पूर्ण इकाई मानकर उसकी समस्याओंपर विचार करे और उनके लिए कानून बनाये। इसी प्रकार भारतीय समस्याका एकमात्र हल यह है कि ग्रेट ब्रिटेनके नियन्त्रणके स्थानपर वहाँ लोकतन्त्रीय संविधान कायम किया जाये। और जो बात यूरोप तथा भारतके लिए ठीक है, कालान्तरमें वही सारी दुनियाके लिए भी ठीक है और युद्धको रोकनेका एकमात्र अन्तिम साधन है।

हो सकता है कि दिल और दिमागमें ऐसा परिवर्तन लानेका, जिससे कि विभिन्न राष्ट्र संघीय लोकतन्त्रीय संविधानको स्वीकार कर सकें, अहिंसात्मक असहयोग सर्वोत्तम — शायद एकमात्र — साधन हो। लेकिन लोकतन्त्रीय संघ-

शासनकी प्राप्ति आवश्यक है, उसीसे इसकी (अहिंसात्मक असहयोग की) सफलता निश्चित होती है, उसके बिना यह सफल नहीं हो सकती। इस बातपर मैं हमेशा उत्सुकतासे ध्यान देता रहा हूँ और आश्चर्य करता रहा हूँ कि आप यह सोचते मालूम पड़ते हैं कि अहिंसात्मक असहयोग खुद अपनेमें ही काफी है, और आप यह कभी नहीं कहते कि इसका लक्ष्य मनुष्यों, जातियों, धर्मों और राष्ट्रोंको मिलानेवाली लोकतन्त्रीय शासन-पद्धतिकी स्थापना ही होना चाहिए, हालांकि उसकी प्राप्ति हृदयके आध्यात्मिक परिवर्तनके द्वारा ही सम्भव है, बल या हिंसा अथवा चालाकीसे उसे प्राप्त नहीं किया जा सकता।

मैं यह सब भारतीय संविधानके पक्षमें परोक्ष रूपसे तर्क करनेके लिए नहीं लिख रहा हूँ, हालाँकि उस समस्यासे भी स्पष्ट ही इसका सम्बन्ध है। भारत सरकार अधिनियम लोकतन्त्रीय संघ-शासनके सिद्धान्तका स्पष्टतः एक बहुत अपूर्ण रूप है, और यदि उसको चलाना है तो तेजीके साथ उसका विकास होना आवश्यक है। उसके लिए जो खास दलील हमेशा मैंने दी वह यह है कि मौजूदा हालातमें प्रान्तों, रियासतों, मुसलमानों और हिन्दुओंको एक सूत्रमें पिरोनेवाले एकमात्र वैधानिक समझौतेका वही ऐसा आधार है जिसको अमली रूप दिया जा सकता है। और उसमें आमतौरपर जितने समझे जाते हैं, उससे कहीं ज्यादा विकासके बीज मौजूद हैं। अगर आपका आध्यात्मिक सन्देश लोगोंमें घर कर जाये, तो इसका विकास शीघ्रतासे और आसानीके साथ हो सकता है। मेरा उद्देश्य इस वैधानिक समस्याके बारेमें आपकी कोई राय प्राप्त करना नहीं है, लेकिन इस पत्रके पूर्व भागमें जो बृहत्तर प्रश्न उठाया गया है, उसका मैं जरूर जवाब चाहता हूँ।

लॉर्ड लोथियनका यह पत्र मुझे जनवरीके शुरूमे मिला था, लेकिन आवश्यक कार्योंके कारण इससे पहले मैं इसमें उठाये गये महत्वपूर्ण सवालकी चर्चा नही कर सका।

सोच-समझकर अहिंसापर आधारित समाजमे शासनका रूप क्या हो, इस बारेमें कुछ लिखनेसे मैं जान-बूझकर बचता रहा हूँ। अहिंसा सारे समाजकी एकताको उसी प्रकार कायम रखे हुए है जिस प्रकार कि गुरुत्वाकर्षण पृथ्वीको उसकी स्थितिमें कायम रखे हुए है। लेकिन जब गुरुत्वाकर्षणके नियमका पता लगा, तो उस खोजसे ऐसे परिणाम निकले, जिनका हमारे पूर्वजोको कुछ ज्ञान न था। इसी प्रकार जब सोच-समझकर अहिंसाके नियमानुसार समाजका निर्माण होगा, तो उसका ढाँचा खास-खास बातोमे आजसे भिन्न होगा। लेकिन पहलेसे ही मैं यह नही कह सकता कि सम्पूर्णतया अहिंसापर आधारित शासनका रूप कैसा होगा।

आज तो जो हो रहा है, वह यह कि अहिंसाके नियमकी उपेक्षा करके हिंसाको सर्वोच्च स्थान प्रदान कर दिया गया है मानो वह एक शाश्वत नियम हो। इसलिए इग्लैंड, अमेरिका और फ्रांसमे जिन लोकतान्त्रिक प्रणालियोको हम काम करते

हुए देखते हैं, वे नाम मात्रको ही लोकतान्त्रिक हैं, क्योंकि वे भी हिंसापर नाजी जर्मनी, फासिस्ट इटली या सोवियत रूससे कुछ कम निर्भर नहीं हैं। फर्क सिर्फ यह है कि पिछले तीन देशोंमें हिंसा लोकतन्त्रीय देशोंकी बनिस्बत कहीं ज्यादा अच्छे रूपमें संगठित है। फिर भी हम देखते हैं कि शस्त्रास्त्रोंके मामलेमें एक-दूसरेसे आगे बढ़नेकी आज पागलोंकी-सी होड़ मची है। और संघर्ष होनेपर, जिसका कि एक दिन होना अनिवार्य है, अगर इन लोकतन्त्रोंकी विजय हुई तो वह सिर्फ इसलिए होगी कि उनके पीछे यह सोचनेवाली प्रजाओंका सहारा होगा कि अपने यहाँके शासनमें हमारी भी आवाज है। जबकि हो सकता है कि अन्य तीन राष्ट्रोंमें वहाँकी प्रजाएँ ही अपने यहाँकी तानाशाहियोंके खिलाफ विद्रोह कर दें।

मैं यह मानता हूँ कि अहिंसाको राष्ट्रीय पैमानेपर स्वीकृत किये बगैर वैधानिक या लोकतन्त्रीय शासन-जैसी कोई चीज नहीं हो सकती। इसीलिए अपनी शक्ति मैं इस बातको प्रतिपादित करनेमें लगाता हूँ कि अहिंसा हमारे व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवनका नियम है। मैं समझता हूँ कि मैंने प्रकाश देख लिया है, हालाँकि देखा है कुछ धुंधले रूपमें ही। सावधानीके साथ मैं इसलिए लिखता हूँ क्योंकि मैं यह दावा नहीं करता कि मैंने उस सारे नियमको जान लिया है। जहाँ अपने प्रयोगोंकी सफलताओंको मैं जानता हूँ, वहीं अपनी असफलताओंका भी मुझे ज्ञान है। मगर सफलताएँ इतनी हैं कि मेरे अन्दर एक अमर आशा पैदा हो गई है।

मैं अकसर कहता रहा हूँ कि अगर साधनोंकी फिक्र रखी जाये तो ध्येय अपनी फिक्र खुद कर लेगा। अहिंसा साधन है, और ध्येय है हरएक राष्ट्रके लिए पूर्ण स्वाधीनता। अन्तर्राष्ट्रीय संघ तभी होगा जबकि उसमें शामिल होनेवाले बड़े-छोटे सभी राष्ट्र पूरी तरह स्वाधीन हों। राष्ट्र अहिंसाको जितना आत्मसात् करेंगे, स्वाधीनता उतनी ही अधिक होगी। एक बात निश्चित है। अहिंसापर आधारित समाजमें छोटे-से-छोटा राष्ट्र भी अपनेको बड़े-से-बड़े राष्ट्रके बराबर मानेगा। बड़े-छोटेका भाव बिलकुल समाप्त हो जायेगा।

इससे यह परिणाम निकलता है कि भारत सरकार अधिनियम तो सिर्फ काम-चलाऊ चीज है, जिसका स्थान एक ऐसे अधिनियमको लेना चाहिए जो खुद राष्ट्रके द्वारा ही बनाया जाये। जहाँ तक प्रान्तीय स्वराज्यका सम्बन्ध है, किसी हद तक उसको सँभालना सम्भव पाया गया है। वैसे उसके अमलका मेरा अपना जो अनुभव है, वह किसी भी प्रकार सुखद नहीं है। कांग्रेसी सरकारोंका जनतापर वैसा अहिंसात्मक प्रभाव नहीं है जिसकी मैंने उनसे आशा की थी।

लेकिन संघ-शासनका ढाँचा तो मेरे लिए सोचनेके लायक भी नहीं है, क्योंकि उसमें असमानोंकी साझेदारीकी कल्पना की गई है, फिर वह चाहे शिथिल ढंगकी ही क्यों न हो। रियासतें कितनी असमान हैं, इसका जिस बुरे रूपमें प्रदर्शन किया जा रहा है उसके लिए मैं तैयार नहीं था। इसलिए भारत सरकार अधिनियममें जिस संघ-शासनकी कल्पना है, उसे मैं बिलकुल असम्भव मानता हूँ।

इस प्रकार अपने-आप यह परिणाम निकलता है कि जब तक अहिंसाको खाली नीतिके बजाय एक जीवित शक्ति, एक अलंघ्य सिद्धान्तके रूपमें स्वीकार नहीं किया

जायेगा, तब तक मुझ-जैसोके लिए, जो अहिंसाके हामी है, वैधानिक या लोकतन्त्रीय शासन एक दूरका स्वप्न ही रहेगा। यद्यपि मैं विश्वव्यापी अहिंसाकी हिमायत करता हूँ, पर मेरा प्रयोग हिन्दुस्तान तक ही सीमित है। यहाँ उसे सफलता मिली, तो ससार बिना किसी प्रयत्नके उसे स्वीकार कर लेगा। मगर इसमे एक बड़ा 'लेकिन' मौजूद है। पर विघ्नोकी मुझे चिन्ता नही। अन्धकार जितना ही अभेद्य होता है, मेरा विश्वास भी उतना ही प्रखर होता है।

सेगाँव, ६ फरवरी, १९३९

बापूके आशीर्वाद

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ११-२-१९३९

४३४. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
६ फरवरी, १९३९

बा,

इसके साथ अकोलासे आये पत्र रख रहा हूँ। तू मजेमें होगी। कल दोनो लड़कियों[1] का विवाह है। तेरी गैरहाजिरी सबको अखर रही है। कन्यादान मुझे करना है, और वह भी तेरी गैरहाजिरी में।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३१

४३५. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

७ फरवरी, १९३९

चि० जानकीबहन,

तुम्हे चिन्ता नही करनी है। जो चिन्ता करता है वह योद्धा नही कहलाता। जयपुर जानेमे कुछ सार नही है। इसलिए यही बैठे धर्मपालन करना है। ईश्वरको जो करना होगा, वह होगा।

टेलीफोनसे आई हुई सूचनाएँ अपने पास रखता हूँ।[2] कुछ वक्तव्य निकालनेकी इच्छा है। मोटर नही रोकता।

१. ७ फरवरीको विजया पटेलका विवाह मनुभाई पंचोलीसे और शारदाबहन शाहका विवाह गोरधनदास चोखावालासे हुआ था।

२. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", ८-२-१९३९।

अपनी आजकी हालतमें तुम यहाँ किसलिए आना चाहती हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०००) से।

४३६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
७ फरवरी, १९३९

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया। लीम्बडीमें जो-कुछ हो रहा है, वह भयानक है। परन्तु हमारे लिए आश्चर्यजनक नहीं है। ऐसी घटनाएँ तो होंगी, इससे भी भयानक होंगी। इसीसे प्रजाकी परीक्षा होगी। हमारा मार्ग सीधा है। इसपर कुछ लिखनेकी सोच रहा हूँ। चूँकि अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करते हुए सब-कुछ करता हूँ इसलिए सब चीजोंको जिस तरह मैं चाहता हूँ, उस तरह नहीं निपटा पाता। सुभाषबाबू जो कर रहे हैं, वह मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। अच्छा हुआ, हम बच गये। राजेन्द्रबाबूके बारेमें देख लेना।

जब भी मिलना हो मैं तैयार हूँ।

मणिका पत्र आया है सो साथमें है। दोनों लड़कियोंके विवाह करके अभी लिखने बैठा हूँ। सादगीका कोई पार न था। किसीको नहीं बुलाया गया। गाँवके हरिजन वगैरह थे। बहुत अच्छा लगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३२-३

४३७. तार : चंद्रभाल जौहरीको[1]

[७ फरवरी, १९३९ या उसके पश्चात्]

जमनालालजी जहाँ कहीं भी हैं सुरक्षित हैं।[2] वक्तव्य प्रकाशित करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ। मुझे सूचित करते रहो।

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१३

१. यह चंद्रभाल जौहरीके ६ फरवरी, १९३९ के तारके उत्तरमें था जो ७ तारीखको गांधीजीको मिला था। जमनालाल बजाज ५ फरवरी, १९३९ को गिरफ्तार हुए थे और जयपुर सरकारने यह नहीं बताया था कि वे कहाँ ले जाये जा रहे हैं। जौहरीने अपने तारमें इस बातपर चिन्ता व्यक्त की थी।

२. जमनालालको भरतपुर रियासतमें ले जाकर ७ फरवरीको रिहा कर दिया गया था।

४३८. तार : राजेन्द्रप्रसादको

[७ फरवरी, १९३९ या उसके पश्चात्][1]

रा[जेन्द्र प्रसाद]
सदाकत आश्रम
पटना

सम्मेलन नही बुलाया है। मेरे सामने ऐसा कोई प्रस्ताव नही है। क्या आप सम्मेलन चाहते है?

अंग्रेजीकी प्रतिसे: जमनालाल बजाज पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४३९. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

[७ फरवरी, १९३९ के पश्चात्][2]

चि० बबुड़ी,

तेरे दो पत्र मिले। यदि तू पत्रके ऊपर 'निजी' आदि लिख दे, तो तेरा पत्र कोई नही पढ़ेगा। और मै पढ़कर फाड डालूँगा।

तू घबरा मत। छुट्टी लेकर झटपट मेरे पास आ जा। यहाँ मन भरके बातें करेंगे। तेरा अनुभव कोई नया नही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यदि साथके पत्र[3] का उपयोग करना चाहे तो कर लेना।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००२१) से; सौजन्य: शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. यह तथा पिछला शीर्षक चन्द्रलाल चौधरी से प्राप्त तारकी पीठपर लिखा गया था; देखिए पिछला शीर्षक।

२. स्पष्ट है कि यह पत्र शारदाका विवाह, जो ७ फरवरीको सम्पन्न हुआ था, होनेके कुछ दिन बाद लिखा गया था।

३. देखिए अगला शीर्षक।

४४०. पत्र : गोरधनदास चोखावालाको

सेगाँव, वर्धा
[७ फरवरी, १९३९ के पश्चात्][1]

चि० गोरधनदास,

शारदाको अटपटा लगता हो, तो अभी उसे मेरे पास भेज दो। कभी घरसे वाहर नही निकली, इसलिए सम्भव है उसे वहाँ सब नया-नया-सा लगता हो।

वापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००८४) से, सौजन्य: शारदावहन गो० चोखावाला।

४४१. तार : लीम्बड़ी प्रजा मण्डलको

[८ फरवरी, १९३९ के पूर्व][2]

इन घटनाओमे यदि लोग अहिंसक और वहादुर वने रहे, उत्पीड़न तथा सम्पत्ति, शरीर और जीवनकी हानि सहन करते रहे तो विजय उनकी होगी। मुझे जानकारी देते रहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १०-२-१९३९

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. इस तारकी रिपोर्ट दिनाक ८ फरवरीके अन्तर्गत छपी थी।

४४२. तार: जेठानन्दको

वर्धा
८ फरवरी, १९३९

रायबहादुर जेठानन्द
डेराइस्माइलखाँ

दगोके लिए गहरा दुख है। मैं लाचार हूँ, हालांकि मुख्यमत्रीको तार[1] भेज रहा हूँ। अखबारोमे जैसा कहा गया है, क्या मुसलमान मारे गये है।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य. प्यारेलाल।

४४३. तार: डॉ० खानसाहबको

वर्धा
८ फरवरी, १९३९

डॉ० खानसाहब
पेशावर

डेराके दंगोके बारेमे क्या आप कोई प्रभावकारी कदम उठा रहे है।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे. प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल।

१. देखिए अगला शीर्षक।

४४४. पत्र : मोतीलाल रायको

सेगाँव, वर्धा
८ फरवरी, १९३९

प्रिय मोतीबाबू,

सीधे अ० भा० च० सं० को किस्त भेजना बेहतर होगा।

दीक्षान्त भाषण अभी नही मिला है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (जी० एन० ११०५३) से।

४४५. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
८ फरवरी, १९३९

बा,

तुझे बहुत कष्ट हो रहा है। जो भी असुविधा हो, उसकी खबर जरूर देना। तू दु:ख सहन करनेके लिए ही जन्मी है, इसलिए तेरी तकलीफोकी बात सुनकर मुझे कोई अचम्भा नही होता। सरकारको तार तो मैंने किया है। तेरी तकलीफोके बारेमे अखबारमें कुछ नही देना चाहता। भगवान तो वहाँ भी तेरे पास बैठे ही है; जो उन्हे करना होगा, सो करेंगे।

कानम मजेमे है। रातको तुझे याद करता है। बिलकुल चिन्ता न करना। अमतुस्सलाम यहाँ है। वह कानमको सँभालती है।

चि० मणि, तू वहाँ है, यह कितनी अच्छी बात है!

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३१

४४६. पत्र : कृष्णचन्द्रको

८ फरवरी, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

लबा खतकी आशा न की जाय। ब्रह्मचारी वही है जो दूसरोकी शादी निश्चेट होकर कर सके। जिसको देखनेमे क्षोभ है वह न देखे। मैंने किसीको नही बुलाये थे।

अ० ब० को दूरसे प्रणाम करो बाकी भूल जाओ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३१०) से। एस० जी० ७३ से भी।

४४७. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

वर्धा
८ फरवरी, १९३९

सेठ जमनालाल बजाजके बारेमे निम्नांकित टेलीफोन रिपोर्ट मिली है।[2] सेठ जमनालालजी जब दुबारा कैद किये गये तब उनका पुत्र, उनका सचिव और एक नौकर उनके साथ थे।

> सेठ जमनालालजीको जयपुरसे ५० मील दूर अजमेर रोड स्टेशनपर रोका गया और वहाँ उन्हे डाक बँगलेमे रखा गया। श्री यग स्वय सेठजीके पास गये और उनसे अपनी कारमे बैठनेके लिए कहा। सेठजीने यह कहकर मना कर दिया कि "आप मुझे जयपुर रियासतकी सीमासे बाहर करना चाहते हैं। मै जयपुरमे दाखिल होना चाहता हूँ। मै आपके साथ नही जाऊँगा।" इसपर श्री यगने कहा, "हम आपको जयपुर ले जा रहे है। हमारे साथ आइए।"

१. वक्तव्य ९ फरवरीके *हिन्दू* में और *बॉम्बे क्रॉनिकल* में प्रकाशित हुआ था, और किंचित् परिवर्तित रूपमें "बारबेरस बिहेवियर" शीर्षकसे ११ फरवरीके *हरिजन* में भी प्रकाशित हुआ था। किन्तु बादमें ऐसा प्रगट हुआ कि जिस रिपोर्टके आधारपर गाधीजीने वक्तव्य दिया था, वह पूरी तरह सही नहीं थी। देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १२-२-१९३९।

२. रिपोर्ट हिन्दीमें थी, गाधीजीने इसका अनुवाद किया था; देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १२-२-१९३९।

सेठजीने उत्तर दिया, "मै आपकी बातपर यकीन नही कर सकता।" तब श्री यगने कहा, "मुझे आदेश हुआ है। आपको मेरे साथ आना ही होगा।" सेठजीने आदेश दिखानेके लिए कहा परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि आदेश श्री यगके पास नही था। अन्तमे श्री यगने सेठजीसे फिर कहा कि उन्हे जयपुर ले जाया जायेगा। "यदि हम आपको वहाँ नही ले जाते तो आप अखबारोमें यह छपवा सकते है कि जयपुर ले जानेकी प्रतिज्ञा करके हम आपको दूसरी जगह ले गये।" सेठजी उनकी किसी भी बातका विश्वास करनेको तैयार नही थे। उन्होने कहा, "मै अपनी मर्जीसे आपके साथ नही जाऊँगा। यदि आप चाहे तो जबरदस्ती मुझे ले जाये।"

इस बातचीतमे लगभग एक घण्टा लग गया। अन्तमे पाँच जनोने सेठजीको जबरदस्ती कारमें डाला और उन्हे ले गये। इस तरह ताकत इस्तेमाल किये जानेमे सेठजीको आँखके नीचे बाये गाल पर चोट आई। उन्हे अलवर रियासतमें ले जाया गया। यहाँ सेठजीने कहा कि "आप इस तरहकी हरकत नही कर सकते। आप मुझे किसी दूसरी रियासतमें नही छोड सकते। यदि आप ऐसा करेगे तो मैं आपके खिलाफ मुकदमा चला ऊँगा।" इसपर श्री यंग सेठजी को फिर जयपुर रियासतमे ले आये परन्तु उनके वर्तमान ठौर-ठिकानेका हमें कोई पता नही है।

मै यहाँ सिर्फ इतना ही कहूँगा कि यह व्यवहार बर्बरतापूर्ण है। शरीरकी पवित्रता, कानूनी प्रक्रिया और स्वतन्त्रताको ताकपर रख दिया गया है। एक अंग्रेज पुलिस महाधीक्षक इस तरह धोखेबाजी करे, और अपने कैदीको शारीरिक चोट पहुँचाए— इसी बातको मै सगठित गुण्डागर्दी कहता हूँ। परन्तु मुझे मालूम है कि जमनालालजी का आत्मबल कभी नही टूटेगा। वह जयपुर रियासतमें दाखिल अवश्य होगे—चाहे स्वतन्त्र नागरिकके रूपमे दाखिल हो या कैदीके रूपमे।

[अग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ९-२-१९३९

४४८. तार: घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धागंज
९ फरवरी, १९३९

घनश्यामदास बिड़ला
लकी
कलकत्ता

मैं समझता हूँ कि सबसे अच्छा यही होगा कि जमनालालजीके मनको जो ठीक लगे, उन्हे करने दिया जाये। नोटिस भेजना मैं अच्छा नही समझता। यदि अनिवार्य हो तो हम उन्हे कष्ट उठाने दें।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८०४) से; सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला।

४४९. तार: जवाहरलाल नेहरूको

वर्धागंज
९ फरवरी, १९३९

जवाहरलाल नेहरू
आनन्द भवन
इलाहाबाद

सारी बातोंको देखते हुए मैं समझता हूँ कि बुद्धिमत्ता इसीमे होगी कि लुधियाना सम्मेलन कांग्रेस [का अधिवेशन] होने तक स्थगित रखा जाये। मुख्य-मुख्य कार्यकर्ता विभिन्न रियासतोमे चल रहे संघर्षमे लगे हुए है।

बापू

अंग्रेजीसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४५०. पत्र : ना० र० मलकानीको

सेगाँव, वर्धा
९ फरवरी, १९३९

प्रिय मलकानी,

मैंने तुम्हारा पत्र समझ लिया।[1] मैं इससे सन्तुष्ट हूँ। किशोरलालके लौटते ही मैं तुम्हें २०० रु० भेज दूंगा। तुम ३०० रु०के चेकसे काम चालू रखो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२) से।

४५१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
९ फरवरी, १९३९

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो विश्लेषण किया है उसे मैं समझता हूँ। सुभापने तार दिया है कि वह वर्धा आना चाहते हैं। देखें क्या होता है। बेशक मैं जल्दबाजीमें कोई निर्णय नहीं करूँगा। मुझे खुशी है कि सरूप[2] जल्दी आ रही है। मुझे आशा है, सेगाँवका शान्त वातावरण उसके लिए अनुकूल रहेगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३९; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

१. देखिए "पत्र : ना० र० मलकानीको", पृ० ३४३-४ और ३४९-५० भी।
२. विजयलक्ष्मी पंडित।

४५२. पत्र : हरेकृष्ण मेहताबको

सेगाँव, वर्धा
९ फरवरी, १९३९

प्रिय मेहताब,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम इसी १६ तारीखको आ सकते हो।[1]

तुम्हारा,
बापू

मूल अंग्रेजीसे. एच० के० मेहताब पेपर्स, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४५३. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेगाँव, वर्धा
९ फरवरी, १९३९

चि० बबुडी,

विवाह एक धार्मिक संस्कार है, इसलिए वह भोगके लिए नही, बल्कि संयमके लिए है। हमारे यहाँ चार आश्रम है, उनमे से गृहस्थाश्रम दूसरा है। गृहस्थ-जीवनमे वैभवके लिए स्थान नही है, लेकिन सेवाके लिए बहुत स्थान है, और सेवा तथा सन्तति-जनन साथ-साथ नही चल सकते। फिर भी दाम्पत्य जीवनमे सन्तानके लिए स्थान तो है ही। लेकिन सन्तानोत्पत्तिकी जब उत्कट इच्छा हो, तभी पति-पत्नी संयोग कर सकते है। यह सयोग विचारपूर्वक किया जाना चाहिए, आकस्मिक उत्तेजनाके वशीभूत होकर नही। इस धर्मको स्वीकार कर लिया जाये, तो पति-पत्नी एक बिछौने पर नही सोयेंगे। अनेक प्रकारके हाव-भाव नही करेंगे। ऐसी कोई बात नही करेंगे, जिससे सयोग करनेकी ओर मन दौडे। इस जमानेमे यह धर्म कठिन है, किन्तु इसका पालन करनेकी शक्ति भगवान तुम दोनोको दे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००४) से, सौजन्य शारदाबहन गो० चोखावाला।

१. हरेकृष्ण मेहताब उडीसाकी देशी रियासतोंके मामले पर चर्चा करनेके लिए गांधीजीसे मिलना चाहते थे।

४५४. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
९ फरवरी, १९३९

बा,

तेरा पत्र मिला। तू बीमार रहती है, यह मुझे अच्छा नही लगता। लेकिन अब तो हिम्मतसे काम लेना। सुविधाएँ तो मिल ही जायेंगी, और न भी मिले तो क्या? मणि ठीक गा न सकती हो, तो भी तुझे 'रामायण' सुनाये। राम और सीताके दुःखके आगे हमारा दुःख किस गिनतीमे है? तू चिन्तित मत होना। फिलहाल तो मैंने लड़कियोंसे सेवा कराना छोड़ दिया है। तू चिन्ता मत करना। देखूंगा क्या करना चाहिए। सुशीला तो मेरी सेवा करती ही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३१-२

४५५. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

वर्धा
९ फरवरी, १९३९

हालमें राजकोट और जयपुर पर मैंने जो कई लेख लिखे है, उनके सम्बन्धमें आलोचकोंने मुझे मिथ्याचार और हिंसा का दोषी ठहराया है। ऐसे आलोचकोको जवाब देना मेरा फर्ज है। इस किस्मके आरोप पहले भी, या वास्तवमें जबसे मैंने सार्वजनिक जीवनमे प्रवेश किया है तभीसे, मुझपर लगाये गये है। मगर मै यह सहर्ष कह सकता हूँ कि बादमे मेरे अधिकतर आलोचको को यह कबूल करना पड़ा कि मै असत्यपूर्ण और उत्तेजना फैलानेवाली भाषा इस्तेमाल करनेका दोषी नही था, और मेरे वक्तव्योका आधार उनमे मेरा विश्वास होता था, तथा द्वेषकी भावना उनमे कभी नहीं होती थी।

१. यह वक्तव्य **बॉम्बे क्रॉनिकल** और **हिन्दू** में १० फरवरीको तथा १८ फरवरीके "नॉट गिल्टी" शीर्षकके अन्तर्गत **हरिजन** में भी छपा था।

आज भी ठीक वही बात है। मैं अपनी जिम्मेदारी भली-भाँति समझता हूँ। मैं जानता हूँ कि मेरे अनेक देशवासी मेरे वक्तव्योमे असन्दिग्ध श्रद्धा रखते है। मेरे वक्तव्योके समर्थनमे मुझसे प्रमाण माँगे गये है। मैंने प्रमाण पेश भी कर दिये है।

सरदार पटेलने राजकोटके बारेमे जो वक्तव्य[1] दिया है, उसमे रेजिडेटके उन शब्दोको भी उन्होने उद्धृत कर दिया है, जो उसने कांग्रेस और उनके बारेमें कहे थे। रेजिडेट, ठाकुर साहब और उनके सलाहकारोके बीच, जिनमे सर पैट्रिक कैडेल भी थे, जो बातचीत हुई थी, उसका विवरण मेरे पास है। वह इतना लम्बा है कि प्रकाशित नही किया जा सकता, लेकिन अगर जरूरत समझी गई तो उसे मौका आनेपर प्रकाशित कर दिया जायेगा।

सगठित गुण्डाशाहीके सम्बन्धमे तथ्य प्रकाशित कर दिये गये है।[2] मैं मानता हूँ कि इसमे रेजिडेटका हाथ है, क्योकि उसीने रियासतमे एजेसीकी पुलिसको भेजा है। अत उसके एजेन्टोकी कारगुजारियोकी जिम्मेदारी उसपर होनी ही चाहिए।

इसी तरह, जयपुरमे जो-कुछ हो रहा है, उसकी जिम्मेदारी जयपुरके ब्रिटिश प्रधानमन्त्री पर है। सेठ जमनालाल बजाज जब भी अपनी जन्मभूमिमें प्रवेश करनेके अपने अधिकारका प्रयोग करते है, तभी उन्हे फुटबालकी तरह ठोकर मारकर जयपुरसे बाहर निकाल दिया जाता है। यह निश्चय ही निहायत अनुचित कार्रवाई है।

अगर मै बुरे कामको बुरा बताऊँ तो मुझे हिंसक भाषा प्रयोग करनेका दोषी नही ठहराया जाना चाहिए। हिंसाका दोषी तो मै तब होऊँगा, जब मै काठियावाडके रेजिडेट या जयपुरके प्रधानमन्त्रीके खिलाफ अपने मनमे कोई द्वेषभावना रखूँ। मै नही जानता, लेकिन सम्भव है, कि वे बहुत ही आदरणीय व्यक्ति हो, पर उनका आदरणीय होना राजकोट या जयपुरकी प्रजाके लिए किस कामका? सत्य और अहिंसाका पुजारी होनेके नाते, मेरा काम तो यह है कि मै अन्यायकर्ताओके प्रति द्वेष रखे बिना वगैर किसी भयके जो नग्न सत्य हो, उसे जाहिर कर दूँ। मेरी अहिंसाको कटु सत्यपर मुलम्मा चढानेकी जरूरत नही। इसलिए मुझपर यह इल्जाम नही लगाया जाना चाहिए कि मै गोरोसे द्वेष करता हूँ।

नग्न सत्यको छिपाकर या उसपर मुलम्मा चढाकर मै लोगोको हिंसाके पथसे हटानेमे सफल नही हो सकता। हाँ, यह कहकर या इससे भी अधिक खुद अपने आचरणके द्वारा यह दिखाकर कि घोर-से-घोर अन्याय करनेवालोका भी भला चाहना न केवल उचित है, बल्कि लाभकारी भी है, मै प्रजाको हिंसा-पथसे हटानेकी जरूर आशा करता हूँ।

नरेशोकी रक्षा करना सर्वोच्च सत्ताका फर्ज है, मगर उनके अधीन रहनेवाली प्रजाकी रक्षा करना भी निश्चय ही उसका उतना ही आवश्यक फर्ज है। मुझे लगता है कि सर्वोच्च सत्ताका यह भी फर्ज है कि वह उस समय नरेशोकी सहायता करना

१. देखिए परिशिष्ट १।
२. देखिए पृ० ४०५।

छोड़ दे जब यह साबित हो जाये कि अमुक राजाने अपनी प्रजाके साथ विश्वासघात किया है, जैसाकि राजकोटमें हुआ है, या जब यह साबित हो जाये कि अमुक राजा अपनी प्रजाको साधारण नागरिक-अधिकार देनेके लिए भी तैयार नही है और उसके एक नागरिकको इधर-से-उधर भटकाया जा रहा है, और अदालतमे भी उसे पैर नही रखने दिया जाता, जैसाकि जयपुरमे हो रहा है।

हिन्दुस्तानमे रियासतोकी घटनाओंपर मै जितना ही अधिक विचार करता हूँ, मुझे तो ऐसा दिखाई देता है कि अगर सर्वोच्च सत्ता इन दुःखद घटनाओंको असहाय दृष्टिसे देखती रही, तो इस अभागे देशका भविष्य अन्धकारमय ही समझना चाहिए। कारण, राजकोट और जयपुरकी घटनाओसे हमे पता चल सकता है कि दूसरे राज्योमे भी क्या-क्या होनेवाला है। महाराजा बीकानेरने नरेशोको सलाह तो यह ठीक ही दी है कि उन्हे मिलकर काम करना चाहिए,[1] पर नेतृत्व उन्होने गलत दिशामे दिया।

लताडने और प्यार करनेकी नीतिसे नरेशोको कुछ हासिल नही होगा। इससे तो कटुता और सघर्ष ही पैदा हुआ है। सम्भव है रियासतोकी प्रजा, नरेशोकी तरह, मिलकर काम न कर सके, पर नरेश लोग अन्य रियासतोकी प्रजा या ब्रिटिश भारतके लोगोके साथ विदेशियोका-सा व्यवहार नही कर सकेगे। आज तमाम नरेश मिल भी जाये, तब भी प्रजामे इतनी जागृति पैदा हो चुकी है कि उनके द्वारा किये जानेवाले सयुक्त दबावका भी वह डटकर मुकाबला कर लेगी।

[अग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १०-२-१९३९

४५६. तार : जमनालाल बजाजको

[९ फरवरी, १९३९ या उसके पश्चात्][2]

जमनालालजी
सैनिक, आगरा

आपका तार मिला। मेरे बयानमे निश्चित सशोधन करके भेजिए। तब सशोधित रूप प्रकाशित करायेगे। मेरा स्पष्ट मत है कि आपको एक छोटे-से दलके साथ बिना सूचना दिये अगर सम्भव हो तो पैदल सरहद पार करनी चाहिए। जानकीदेवीको वर्धा नही छोड़ना चाहिए। वह शरीरसे कमजोर है और कमलाका प्रसूति-काल निकट है, इसलिए उनका वर्धा छोड़ना खतरनाक है। अगर वह

१. देखिए "लताड़ और प्यार", पृ० ३९०-४।

२. यह तार जमनालाल बजाजके ९ फरवरी, १९३९ के तारके उत्तरमें भेजा गया था। देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", १२-२-१९३९।

गई तो संघर्षमे जरूर भाग लेगी और [उसके] समाप्त होनेके पहले कभी वापस न लौट सकेगी। मेरा पक्का मत है कि अभी उनके लिए ऐसा करनेका समय नही आया है। वह यदि स्वस्थ होती और वर्धा स्वतन्त्रतासे छोड़ सकती तो भी मैं उनके वर्धा छोडनेको प्रोत्साहन न देता बल्कि उन्हे भविष्यके लिए रोककर रखता जबकि सघर्ष पूरे जोरपर होता।

[अग्रेजीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१४

४५७. पत्र : एफ० मेरी बारको

सेगाँव
११ फरवरी, १९३९

चि० मेरी,

तुम हमेशा दूसरोका ध्यान रखती हो। लेकिन यदि तुम आ जाती तो तुम्हारे आनेसे मुझे कोई परेशानी न होती। हाँ, यदि मै काग्रेसकी बैठकमे भाग लेनेके लिए गया तो तुम वहाँ मेरे साथ ही ठहरोगी।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०७५) से। सी० डब्ल्यू० ३४०५ से भी, सौजन्य: एफ० मेरी बार।

४५८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेगाँव, वर्धा
११ फरवरी, १९३९

तुम्हारा तार मिला और पत्र भी। सम्मेलन और कार्य-समितिके बारेमे तुम्हारी जो स्थिति है, वह मैं समझता हूँ। किसी ध्येयके लिए काम करनेवाले लोगोका विचार किये बिना मै उस ध्येयके बारेमे नही सोच सकता। मुल्तवी करनेकी बात, मैंने बलवन्तराय मेहतासे जो-कुछ सुना था, उसके आधारपर लिखी थी। वे काठियावाडके सघर्षमे फँसे है। अचिन्तराम उनके बिना कुछ कर नही सकते थे। इसीलिए मैंने तुम्हे तार दिया। लुधियानाकी स्थितिकी मुझे कोई जानकारी नही है।

सरूपके लिए अफसोस है। मै तो यह आशा कर रहा था कि वह कुछ दिन मेरे साथ बितायेगी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे . गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३९, सौजन्य · नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

४५९. पत्र : एल० एम० पाटिलको

सेगाँव, वर्धा
११ फरवरी, १९३९

प्रिय पाटिल,

तुम्हारा पत्र मिला। किसी कम्पनीके डाइरेक्टर भारतीय हैं और कम्पनीके प्रबन्धमे उनकी चलती है, और वह कम्पनी भी पूरी तरह भारतके हितमें है, तो उस कम्पनीको मैं स्वदेशी कहूँगा, भले ही उसकी सारी पूँजी विदेशी ही क्यो न हो। मसलन, यदि एक हाथ-कताई कम्पनीका पूरा नियन्त्रण मेरे हाथमें हो, लेकिन मैं अपने अधीन कुशल गोरे कर्मचारी रखूँ और व्याज या विना व्याजकी यूरोपीय पूँजी भी उसमे लगाऊँ तो मेरा दावा होगा कि वह कम्पनी पूरी तरह स्वदेशी है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य प्यारेलाल।

४६०. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव, वर्धा
११ फरवरी, १९३९

प्रिय सी० आर०,

मैं चाहूँगा कि विरोधी आलोचनाके वावजूद रोजगारके वारेमे आप जो-कुछ कर रहे हैं, करते रहे। हमे किसीकी नकल करनेकी जरूरत नही है।

हिन्दी-विरोधी प्रचारके पीछे यह महिला कौन है?

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०७३) से।

४६१. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
११ फरवरी, १९३९

चि० कान्ति,

कहा जा सकता है कि मैं सही अर्थमे वीमार हूँ। प्रभा तुझे लिखेगी। सरस्वती के पत्र अगर मैं रामचन्द्रनको नही दिखा सकता, तब तो उसे यहाँ बुलाना मुश्किल होगा। जो अपना दुख छिपाता है, उसे कैसे बचाया जा सकता है? मैंने यो तो सरस्वतीको भेजनेके लिए रामचन्द्रनको लिखा है। लेकिन यह बात और है, तथा उसे गाली-गलौज, मार-पीटसे बचानेके लिए बुलाना और है। इसलिए तुझे मुझे पूरी छूट देनी चाहिए। जो हो, तू अपने मनकी शान्ति मत खो देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७३५८) से, सौजन्य कान्तिलाल गाधी।

४६२. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
११ फरवरी, १९३९

बा,

तेरे स्थानान्तरणकी बात अखबारमे पढी। जहाँ भी रखे, निश्चिन्त होकर रहना। चिन्ता मत करना। भगवान तो, तू जहाँ होगी, वहाँ तेरे साथ है ही। डॉक्टर मेरी परीक्षा करने आये है। आराम करनेको कहते हैं। कर तो रहा हूँ। यहाँसे तुझे पत्र रोज भेजे गये है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३२

४६३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगांव, वर्धा
११ फरवरी, १९३९

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे भेजे हुए कागजात मुझे मिल गये।

मणिको बा से अलग रखनेकी बातपर विश्वास नही होता।

२२ तारीखको कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक यहाँ हो तो बारडोलीका क्या होगा? जमनालाल लिखते हैं कि २२ तारीखको बैठक यहाँ है। तुम अभी यही रहो तो कैसा रहे?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथका पत्र पहुँचा देना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३३

४६४. पत्र : कृष्णचन्द्रको

११ फरवरी, १९३९

चि० कृष्णचंद्र,

जबतक समभाव पैदा नही हुआ है तब तक मैंने कहा है वही मर्यादा उचित है। इसका यह अर्थ हरगीज नही है कि उसकी आवश्यक सेवा भी नही हो सकती है या कारणवशात बोला भी नही जा सकता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४३११) से। एस० जी० ७४ से भी।

४६५. हैदराबाद

हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके लोग बड़े बेचैन हो रहे हैं। चूँकि वे मेरी सलाहपर चल रहे हैं, इसलिए उनमें से कुछ मेरे पास आये और कहने लगे: "आपके और दूसरे नेताओंके कहनेपर हमने सत्याग्रह स्थगित किया है। आपने यह आशा बँधाई थी कि हम सत्याग्रह स्थगित कर देंगे, तो बहुत मुमकिन है कि कैदियोंको रिहा कर दिया जायेगा और राज्य-कांग्रेसको मान्यता दे दी जायेगी। लेकिन दोमें से कोई भी बात नहीं हुई। जबकि हमारे साथी रियासतकी जेलोंमें पड़े मुसीबतें उठा रहे हैं, हम कब तक चुपचाप बाहर बैठे रहें? आपकी रायमें हमें क्या करना चाहिए?"

चूँकि इन मित्रोंको अपने बहुत-से साथियोंको जवाब देना पड़ता है, इसलिए मैंने इन्हें जो जवाब दिया, उसका सार यहाँ दे देना ठीक होगा। मैंने कहा:

आपके साथ मेरी पूरी हमदर्दी है। मैं आपकी जगह होता तो मैं भी ऐसा ही महसूस करता। लेकिन सत्याग्रह कोई मामूली चीज नहीं है। वह तो जीवनका एक तरीका है। उसके लिए अनुशासनकी जरूरत है। वह अपार धीरज और ज्यादा-से-ज्यादा कष्ट सहनेकी क्षमता माँगता है। सविनय अवज्ञा तो सत्याग्रहका महज एक अंग है, जिसे स्थगित करना ही होगा, फिर चाहे साथियोंकी गिरफ्तारी, जेल-जीवनकी कठिनाइयाँ और इससे भी बदतर कष्ट क्यों न उठाने पड़ें। और यह सब उन्हें शालीनताके साथ, प्रसन्नतापूर्वक और जिनके कारण उन्हें कष्ट सहने पड़े, उनके प्रति कोई दुर्भाव रखे बिना बर्दाश्त करना चाहिए। यह भी याद रखिए कि जेल चले जानेवालोंकी बनिस्वत जेलके बाहर रहनेवाले सच्चे सत्याग्रहीको ज्यादा मानसिक कष्ट बर्दाश्त करना पड़ता है। कारण, जेल जानेवाले तो फिलहाल अपना काम पूरा कर चुकते हैं और उनकी फिक्र खत्म हो जाती है। उनका तात्कालिक उद्देश्य तो बस इतनेसे पूरा हो जाता है कि वे आदर्श कैदीकी तरह रहें और जो भी तकलीफें उठानी पड़ें उन्हें प्रसन्नताके साथ बर्दाश्त करें। इसके विरुद्ध बाहर रहनेवालोंको लड़ाईकी व्यवस्थाका बोझ उठाना पड़ता है, रोज-रोजकी योजनाएँ बनानी पड़ती हैं और ऊपरसे जो आदेश आयें, उनका पालन करना पड़ता है।

मुझे तो आपसे यही कहना है कि अपने आन्दोलनको अभी आप स्थगित ही रखें। इसकी वजह बिलकुल साफ और निश्चित है, क्योंकि दो और संस्थाएँ भी सत्याग्रह कर रही हैं, जिनके उद्देश्य चाहे कितने ही अच्छे हों फिर भी आपसे बिलकुल भिन्न हैं। आर्यसमाजका सत्याग्रह बिलकुल धार्मिक कोटिका है, क्योंकि वह सत्याग्रह अपने धर्मकी रक्षाके लिए किया जा रहा है। हिन्दू महासभा भी, मेरा खयाल है, आर्यसमाजका समर्थन कर रही है। इसलिए इस आन्दोलनने साम्प्रदायिक रूप अख्तियार कर लिया है। आप यदि सत्याग्रहको फिरसे शुरू करें तो आपके लिए

अपने राष्ट्रवादी रूपको बनाये रखना बड़ा मुश्किल होगा। आपको अनावश्यक सन्देहका शिकार बनना पड़ेगा, और फिर आपके तरीके भी शायद दूसरोंके जैसे न हों। ऐसी हालतमें अपने उद्देश्यपर आगे बढ़े बगैर उल्टे आप एक अटपटी हालत पैदा कर देंगे।

परिस्थितिको सावधानीसे सँभालनेकी जरूरत है। मेरा विश्वास है कि आपके आत्मसंयमसे आपके प्रति जो सन्देह है वह काफी हदतक मिट जायेगा और उस हद तक आप अपने ध्येयकी ओर निश्चित रूपसे आगे बढ़ेंगे। इस बीच मैं आपको यही आश्वासन दे सकता हूँ कि मित्रोंके द्वारा जो-कुछ हो सकता है, वह किया जा रहा है और बराबर किया जाता रहेगा। मेरी दलीलें सुननेके बाद, आपको जो ठीक लगे वह करें। मेरी सलाह अगर आपके दिल और दिमागको अच्छी न लगती हो तो आप उसे अवश्य अस्वीकार कर दें। लेकिन अगर आप उसे स्वीकार करें तो याद रखिए कि प्रत्येक सदस्यसे, जैसाकि मैंने आपको बताया है, पूरी तरह रचनात्मक कार्यक्रममें लगनेकी आशा की जायेगी।

सेगाँव, १२ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

४६६. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेगाँव, वर्धा, म० प्र०
१२ फरवरी, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

बारडोलीसे पुनर्प्रेषित किया गया इसी माहकी ५ तारीखका आपका पत्र मुझे मिल गया है।

आपने अपनी स्थिति विस्तारपूर्वक साफ-साफ और ईमानदारीके साथ स्पष्ट करनेका जो कष्ट किया, उसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। बड़े सोच-विचारके बाद मुझे लगा कि आपने जो लेख वापस भेजा है उसे प्रकाशित कर देना मेरा कर्तव्य है। श्री चुडगर सर बीकम सेंट जॉन के बारेमें जान-बूझकर या अनजानमें गलतबयानीके दोषी हों,[1] तब भी सत्यका निश्चय तो पत्र-व्यवहारको प्रकाशित कर देनेसे ही हो सकता है। चूँकि श्री चुडगरकी रिपोर्टके सही होनेका मुझे यकीन है इसीलिए मैंने सोचा कि उसको जनताके सामने प्रकट न करना गलत होगा। इस प्रसंगमें मैं यह भी कह दूँ कि मैंने जयपुरके दीवानसे कहा था कि यदि वे श्री चुडगरके विवरणको अस्वीकार करते हैं तो वे अपना विवरण दें, परन्तु उन्होंने वैसा नहीं किया।[2] लेकिन जयपुर, राजकोट और उड़ीसामें जो दुःखद घटनाएँ घट रही हैं, उनको

१. देखिए "जयपुर", पृ० ३८६-९१।
२. देखिए पृ० ३४९ और ३७०।

देखते हुए अब इस सवालका कोई महत्व नहीं रह गया है कि इस पत्र-व्यवहारको प्रकाशित करना बुद्धिमानी होगी अथवा नहीं।

यद्यपि आपने अपने पत्रमें इसके गलत होनेकी सम्भावना व्यक्त की है, तो भी इन स्थानोंपर जो-कुछ हो रहा है उससे मेरा वह विश्वास दृढ़ हुआ है जो मैंने आपको लिखे अपने गत मासकी २६ तारीखके पत्रमें अभिव्यक्त किया है।

यदि आप समझते हैं कि आपसे मिलनेपर आप मेरे मनकी इस अशान्तिको दूर कर सकेंगे और दिखा सकेंगे कि मेरा विश्वास गलत है तो मैं खुशीसे दिल्ली दौड़ा आऊँगा। हालाँकि मेरे डॉक्टर मित्रोंने मुझे हिदायत दी है कि अपने शरीरको बिलकुल जवाब देनेसे बचानेके लिए मुझे कुछ समयतक पूर्ण विश्राम करना चाहिए। किन्तु यदि मुझे मेरी गलती बताई जा सके या मैं आपको विश्वास दिला सकूँ कि आपकी ओरसे कार्रवाईमें देरी करना खतरनाक हो सकता है तो मैं सहर्ष अपना स्वास्थ्य संकटमें डालनेके लिए तैयार हूँ।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० १०३८८) से; सौजन्य: प्यारेलाल।

४६७. पत्र: कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
१२ फरवरी, १९३९

बा,

तेरा पत्र मिला। तुझे सारे समाचार तो दिये ही जाते हैं। चिन्ता बिलकुल मत करना। एनीमा तुझे मिल गया है, यह मालूम हुआ। दवा यहाँसे कौन-सी भेजी जाये? अब तो वहाँ डॉक्टर आता है। कोई जरूरत मालूम पड़े, तो उसकी दवा ले लेना। यहाँसे पत्र तो तुझे रोज लिखा ही जायेगा। खूब हिम्मतसे काम लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३२

४६८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

मेगाँव, वर्धा
१२ फरवरी, १९३९

भाई वल्लभभाई,

चुडगर मेरे लिए जो लेख लिखनेवाले थे उसका क्या हुआ? वह मुझे जल्दी चाहिए। वाइसरायका लम्बा पत्र आया है। उसका मैंने जो जवाब[1] दिया है, उसकी नकल मैं तुम्हारे पास भेजूंगा।

साथकी अधिसूचनामें उल्लिखित 'प्रिंसेज प्रोटेक्शन ऐक्ट' की एक प्रति मुझे भेज देना।

मणिको पहले ले क्यों गये और फिर बाके पास वापस क्यों ले आये, यह बात कुछ समझमें नहीं आई। डॉक्टर कौन है? नर्स कौन है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३४

४६९. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[2]

वर्धा
१२ फरवरी, १९३९

सेठ जमनालालने जयपुर रियासतसे उनके दुबारा निकाल दिये जानेपर समाचारपत्रोंको दिये गये मेरे वक्तव्यको पढकर मुझे निम्नलिखित तार भेजा है:

> इसी माहकी ९ तारीखको मैंने देखा कि श्री यंगके बारेमें मैंने जो विवरण दिया है, उसके बारेमें आपका वक्तव्य टेलीफोन द्वारा भेजे गये सन्देशमें कुछ गड़बड़ होनेके कारण गलत हो गया है। सही विवरण ८ और ९ तारीखके 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में निकला था।[3] आशा है कि आप आवश्यक कार्रवाई करेंगे।

१. देखिए पृ० ४५१-२।

२. यह वक्तव्य १८-२-१९३९ के *हरिजन* में "माई अपॉलॉजी" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था; यही वक्तव्य १३-२-१९३९ के *बॉम्बे क्रॉनिकल* में तथा दूसरे समाचारपत्रों में भी प्रकाशित हुआ था।

३. यह दामोदरदास द्वारा दिये वक्तव्यके रूपमें *ट्रिब्यून*, ८-२-१९३९ में भी प्रकाशित हुआ था और उससे यह स्पष्ट होता था कि यंगने जमनालाल बजाजको ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया था कि उन्हें जयपुर राज्यके बाहर नहीं ले जाया जायेगा।

तब तक मैंने सेठजी द्वारा उल्लिखित 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में प्रकाशित विवरण नही देखा था। अब मैंने इन दोनो तारीखोके अंक देखे है और मै पाता हूँ कि मैंने समाचारपत्रोको दिये गये अपने वक्तव्यमे श्री यंगके प्रति अन्याय किया है। मैंने उन पर यह आरोप लगाया था कि उन्होने सेठजीसे धोखा किया है। मैंने यह आरोप टेलीफोन द्वारा प्राप्त उस सन्देशके आधारपर लगाया था जो वर्धामे उनके पुत्रको मिला था। अपने वक्तव्यमे मैंने इस सन्देशका अक्षरश. अनुवाद दिया था। सेठजीके पुत्रको टेलीफोन द्वारा प्राप्त सन्देशके बारेमे रत्तीभर भी सन्देह नही था। परन्तु अनजान ही मे मुझसे जो गलती हो गई उसकी सफाई न तो यह कहकर दी जा सकती है कि उन्होने सन्देशका बिलकुल सही विवरण दिया था और न ही यह कहकर दी जा सकती है कि मैंने तो सन्देशका हूबहू अनुवाद किया था। इसलिए मैं श्री यंगसे बिना शर्त क्षमा-याचना करता हूँ और आगेसे मैं टेलीफोनके सन्देशोका उपयोग करनेमे बहुत अधिक सावधानी बरतूँगा।

अब मुझे पता चला है कि न केवल श्री यंगने कोई धोखेबाजी नही की, बल्कि उन्होने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि उच्च अधिकारियोंके आदेशका पालन करते हुए वे एक दु.खद कर्तव्य निभा रहे थे। और उस कर्तव्यका पालन करते हुए उन्होने उन परिस्थितियोंमे यथासम्भव सावधानी और सौजन्यसे काम लिया।

इस भूल-सुधारके बाद मैं यह कहूँगा कि 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की रिपोर्टसे, जिसका सेठजीने समर्थन किया है, पता चलता है कि उनके प्रति किया गया दुर्व्यवहार टेलीफोनके सन्देशमे जो-कुछ कहा गया था, उससे भी बदतर था। राजपूतानेकी सर्दीमें रातकी वह सारी यात्रा अनावश्यक यन्त्रणा थी। जयपुरमे शान्ति बनाये रखनेके लिए उनका बाहर निकाला जाना यदि आवश्यक था, तो भी रातकी यात्रा और[1] ताकतका इस्तेमाल टाला जा सकता था।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-२-१९३९

४७०. अखबारोंमें असत्य

देशी रियासतके एक अधिकारी लिखते है:

> कांग्रेसकी सामान्य गतिविधियोंके बारेमें और विशेषकर वह रियासतोमें जो-कुछ कर रही है, उसके बारेमें 'हरिजन' में लिखे आपके कई लेख मैंने पढ़े। इनमें से एक लेख[1] कांग्रेसियोंमें फैले भ्रष्टाचार और कम-से-कम भावार्थकी दृष्टिसे उन अवांछनीय प्रवृत्तियोंके बारेमें है जो उस भावनाके विपरीत है जिसे आपने कांग्रेस-कार्यकर्ताओमें सामूहिक स्तरपर भरनेकी कोशिश की है।
>
> उसे पढ़कर मुझे ऐसा लगा कि इस बातकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करूँ कि कुछ अखबार ऐसे है जो सत्यकी हत्या करके आपके दिलमें जो

१. देखिए पृ० ३५५-७।

उद्देश्य है, उसको चोट पहुँचा रहे हैं। गाली-गलौजपर ही ये जिन्दा रहते है और जो निरा झूठ उनमें प्रकाशित होता है, उसके लिए वे तथाकथित 'कांग्रेस कार्यकर्ताओपर' ही निर्भर करते है।

जहाँ तक रियासतोकी टीकाका सवाल है, असंदिग्ध प्रमाणोपर आधार रखनेवाली वाजिब आलोचना अच्छी हो सकती है और वह सहायक भी होगी। बहरहाल इस बातको आप मानेंगे कि केवल सचाई ही प्रकाशित होनी चाहिए।

लेकिन, दरअसल, हो क्या रहा है कि कुछ लोग, जो ऐसा मानते हैं कि उनके साथ उस रियासतने जिसमें वे किसी समय रहते थे, सद्-व्यवहार नहीं किया, उस रियासतमें जाते है और जब उनकी आपतिजनक प्रवृत्तियोंके कारण वहाँकी सरकार उन्हे रियासतसे बाहर जानेके लिए बाध्य करती है तो उससे बदला लेनेकी कोशिश करते है और इसके लिए कांग्रेसमें शामिल होकर वे समझते है कि अब उनकी स्थिति बहुत मजबूत हो गई है। जिन अखबारोंमें वे रियासतोंके खिलाफ लिखते है वे अखबार इन निन्दात्मक लेखोंपर पनपते है और स्वयं इन लोगोको अपने अन्दर इकट्ठा हुआ जहर उगलनेका एक वांछित साधन मिल जाता है। इसका दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम यह होता है कि देशी भाषाओके ये पत्र अज्ञानी जनताको भड़कानेमें कितने ही कामयाब क्यों न हो जायें मगर जिम्मेदार लोगोंपर इनकी निन्दाओका कोई असर नहीं पड़ता।

यह दुःखका विषय है कि कुछ ऐसी बातें जिन्हें रियासतोंके शासनमें अपने कर्तव्योंके प्रति जागरूकता पैदा करनेकी शुद्ध भावनासे प्रकाशमें लाया जा सकता है, वे जानकारीके अभावमें कभी प्रकाशित ही नहीं होतीं। जो-कुछ प्रकाशित होता है वह या तो व्यर्थकी बातोको खूब बढ़ा-चढ़ाकर लिखा हुआ होता है, या जैसाकि अकसर होता है, निरी कल्पनासे काम लेकर बिलकुल झूठी बातें लिखी जाती है।

आपकी मौजूदा नीति यह मालूम पड़ती है कि जहाँ लोगोंमें अपनी व्यवस्था स्वयं करनेकी इच्छा हो वहाँ उस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उनकी मदद करना कांग्रेसका फर्ज है। मै यह सोचनेकी हिम्मत करता हूँ कि हिन्दुस्तान-भरमें उत्तरदायी शासनके आदर्शकी प्राप्तिके लिए लोगोके सन्तोषको असन्तोषमें बदल देनेकी आपकी नीति नहीं है।

विशेषतः मेरे खयालमें आपकी नीति सत्यके प्रचार और प्रसार तथा असत्यके विरुद्ध सतत युद्धकी है। इसी विश्वासके आधारपर, मै आपको यह सुझानेकी हिम्मत करता हूँ कि आप अगर 'हरिजन' में एक-दो लेख कांग्रेस-कार्यकर्ताओके ऊपर ही निर्भर रहनेवाले अखबारों और उन कार्यकर्ताओकी जिम्मेदारीके बारेमें लिखेंगे, तो उससे कांग्रेस-आन्दोलनको कुछ विनाशक

कीटाणुओंसे मुक्त कर सकेंगे तथा इस प्रकार उसे दलित-पीड़ित जनताके उद्धार तथा देशके सर्वोच्च ध्येयकी सेवा, इन दोनों कामोंके लिए अधिक प्रभावशाली भी बना सकेंगे।

पत्र-लेखककी इस बातसे सहमत होनेमें तो मुझे कोई कठिनाई नही है कि जो अखबार झूठी या अतिरंजित बाते लिखते है, वे जिस उद्देश्यके समर्थनका दावा करते है, उसको नुकसान ही पहुँचाते है। यह भी मैं मानता हूँ कि कितने ही अखबारोमे इतना असत्य मिलता है कि इस सम्बन्धमे कुछ करना जरूरी मालूम होता है। लेकिन मेरा अनुभव यह है कि जो अखबार ऐसी नीतिसे ही अपना गुजारा करते है उनकी कितनी ही सार्वजनिक टीका क्यों न की जाये, उनकी नीतिपर कोई असर नही पडेगा।

मगर पत्र-लेखकको तथा रियासतोसे सम्बन्ध रखनेवाले इन जैसे दूसरे लोगोको मैं बतलाना चाहता हूँ कि अपनेको सुरक्षित समझनेके भ्रममे पडकर अगर राज्याधिकारी असत्यका निराकरण या वस्तुस्थितिका स्पष्टीकरण करना मुनासिब न समझेगे, तो झूठी बातोपर विश्वास करनेके लिए जनताको हरगिज दोष नही दिया जा सकता। फिर कभी-कभी जब वे सफाई देनेका कष्ट करते है, तो उनकी सफाई अखबारोके झूठसे भी ज्यादा झूठी होती है। इस सम्बन्धमें तालचेरका उदाहरण ताजा है। वहाँसे भागे हुए शरणार्थियोका जो अत्यन्त प्रभावोत्पादक चित्र 'स्टेट्समैन' मे निकला था उस तकको वहाँके शासकने झूठा बतलाया। इस बातपर 'स्टेट्समैन' के सम्पादकने उनकी जो भर्त्सना की वह ठीक ही है। मेरे पास ठक्कर बापाका भेजा हुआ तालचेरका एक बुलेटिन है, जिसपर मुझे हँसी आती है और रोना भी। उसमे दी हुई बातोसे इनकार करना शर्मनाक झूठ है। मेवाड़के बारेमे इस अकमे मैं एक हैरतमे डालनेवाली खबर[1] प्रकाशित कर रहा हूँ।

मैं चाहूँगा कि या तो इस खबरका प्रामाणिक रूपसे प्रतिवाद किया जाये, या अगर पुलिसने उसे दी गई हिदायतोकी परवाह न कर मनमानी की हो, तो उसके खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाये। लेकिन अखबारोके झूठको किसी प्रकार दरगुजर करनेके लिए मैं यह नही लिख रहा हूँ। मेरी तो यह निश्चित धारणा है कि यदि अखबार अपने प्रत्येक शब्दको अच्छी तरह तोलकर ही छापें तो इससे रियासतोकी अथवा अन्य स्थानोकी बुराइयाँ जल्दी दूर की जा सकेगी।

सेगांव, १३ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

१. देखिए पृ० ४६०-१।

४७१. त्रावणकोर

त्रावणकोरके बारेमे यो ऊपरसे तो मै चुप मालूम होता हूँ, पर कार्यकर्ता यह विश्वास रखे कि मै उसके सम्बन्धमे लापरवाही नही वरतता रहा हूँ। मौन कभी-कभी वाणीसे अधिक प्रभावकारी होता है। मै इतना ही कह सकता हूँ कि मेरा मौन सोद्देश्य रहा है। मुझे इस बातका दुख है कि वहाँकी हालते अच्छी नही रही है। मुझे आशा थी कि राज्य-काग्रेसने दीवानके विरुद्ध जो आरोप लगाये थे, उनके वापस ले लिये जानेसे रास्ता साफ हो जायेगा, और उत्तरदायी शासनका आन्दोलन त्रावणकोरमे निर्विघ्न रीतिसे चलने दिया जायेगा।[1] लेकिन हम अन्यत्र जो बुलेटिन[2] छाप रहे है उससे पता चलता है कि त्रावणकोर-निवासियोकी शनिकी दशा अभी समाप्त नही हुई है। त्रावणकोर विधान-सभाके १९ प्रमुख सदस्योके सदस्यतासे वचित कर दिये जानेके पीछे द्वेषभाव दिखाई देता है।[3] सदस्योने क्या कोई अप्रतिष्ठापूर्ण काम किया है? जहाँ तक मै जानता हूँ, उन्होने ऐसा कोई काम नही किया।

मेरे पास एक पत्र है, जिसमे श्रीमती अक्कम्मा चेरियन नामक एक राजनीतिक वन्दिनीके साथ किये गये दुर्व्यवहारका वर्णन किया गया है। इन बहनने अदालतके सामने जो-कुछ कहा है, अगर वह सच है, तो उनके साथ किया गया बरताव सचमुच बहुत नीचतापूर्ण था। वे एक सुशिक्षित, सुसस्कृत महिला है। वे एक स्कूलकी प्रधान अध्यापिका थी। स्कूलसे इस्तीफा देकर वे आजादीकी लडाईमे शरीक हुई। त्रावणकोर राज्य तो इस बातका अभिमान करता है कि उसके महाराजा बडे प्रबुद्ध है और उतनी ही प्रबुद्ध महाराजाकी माता महारानी साहिबा है तथा वहाँके दीवान बहुत अनुभवी है। लेकिन ऐसे उन्नत राज्यमे भी असभ्य दमन-नीतिके द्वारा स्वतन्त्रताका गला घोटा जा रहा है, यह सोचकर हृदयको बडा आघात पहुँचता है।

लेकिन एक अन्य पत्रमे कहा गया है कि त्रावणकोरमे यह दमन हिन्दू-धर्मके नामपर और एक हिन्दू रियासतको बचानेके लिए किया जा रहा है। उस पत्रके अनुसार इरादा ईसाइयोको पूरी तरह दबा देनेका है, क्योकि वे ही इस स्वतन्त्रता-आन्दोलनमे प्रमुख हिस्सा ले रहे है।

१. देखिए "बातचीत: त्रावणकोर राज्य-काग्रेस शिष्टमण्डलके साथ", पृ० १४६-९ और "त्रावणकोर", पृ० ३१७-९।

२. जी० रामचन्द्रन द्वारा लिखा "त्रावणकोर बुलेटिन"।

३. ये सदस्य राज्य-काग्रेससे सम्बन्धित थे और इनकी सदस्यता इस आधार पर समाप्त कर दी गई थी कि उन्हें फौजदारी कानून संशोधन विनियमके अधीन सजा हुई थी।

आजके जमानेमें हिन्दू राज्य और मुसलमानी राज्यकी बात सचमुच बहुत पुरानी हो गई है। और इसके लिए कसौटी क्या है? क्या कश्मीर इसलिए हिन्दू राज्य है कि वहाँका नरेश एक हिन्दू है, यद्यपि अधिकांश आबादी मुसलमानोकी है? या हैदराबाद इसलिए मुसलमान राज्य हो गया कि यद्यपि वहाँ अधिकाश आबादी हिन्दुओकी है, लेकिन एक मुसलमान शासक उनका भाग्य-विधाता है? मै तो इस तरहकी बातोको हमारी राष्ट्रीय भावनाके लिए लाछन-रूप समझता हूँ। हिन्दुस्तान क्या इसलिए एक ईसाई राज्य है, कि उसका भाग्य-विधाता एक ईसाई सम्राट है? राज्य चाहे कोई भी कर रहा हो, फिर भी भारत तो भारतीय राज्य ही है। इसी तरह देशी राज्य भी केवल भारतीय ही है, फिर भले ही उनके शासक किसी भी कौमके हो। और वर्तमान नरेशगण और उनके उत्तराधिकारी जाग्रत प्रजाका सद्भाव प्राप्त करके ही राज्य कर सकेंगे। प्रजामे जो जागृति आई है वह स्थायी है। दिन-प्रति-दिन उसकी रफ्तार बढती ही जायेगी। नरेशगण और उनके सलाहकार चाहे थोडे दिनोके लिए अपनी प्रजाके मनोबलको दबा देनेमे सफल हो जाये, लेकिन वे उसको समाप्त करनेमे कदापि सफल नही होगे। इसमे उनके सफल होनेका अर्थ है भारतीय जनताके मनोबलको समाप्त कर देनेमे सफल होना। भारतमे क्या कोई इतना अदूरदर्शी है, जो स्वतन्त्रताका पदरव न सुन रहा हो? और क्या इस बातकी कल्पना भी की जा सकती है कि स्वतन्त्र भारत अपनी सीमाके अन्दर किसी भी जगह, चाहे वह जगह कितनी ही बड़ी हो या कितनी ही छोटी और मामूली हो, एक क्षणके लिए भी दमन-नीति सहन करेगा। मेरी कल्पनाके स्वतन्त्र भारतमे देशी राज्योके लिए गुजाइश है, लेकिन इस शर्तपर कि उनके राजाओकी स्थिति सवैधानिक न्यासियोकी-सी होगी, जैसीकि औधके राजाकी है।[1] अग्रेजोके लिए भी गुजाइश हो सकती है, लेकिन वे प्रजाके सेवकके बतौर रहेगे, बतौर मालिकके कदापि नही। इसलिए देशी राजाओके लिए स्वतन्त्र भारतमे बने रहनेका एकमात्र रास्ता यही है कि वे समयके स्वरको पहचाने, उसको सिर-माथे ले, और उसीके अनुसार आचरण करे। त्रावणकोरके हिन्दू राजा, हिन्दू राजमाता तथा हिन्दू दीवान ऐसा आचरण करे जिससे वे इस बातपर गर्व कर सके कि उनके मनमे कभी भी अपने ईसाई प्रजाजनोका कोई भय नही रहा। मान लीजिए कि त्रावणकोरमे उत्तरदायी शासन हो जाता है, तो ईसाई, हिन्दू या मुसलमान क्या करेगे? चाहे जो भी लोग विधायक हो, उन्हे मतदाताओकी हरएक बातका जवाब देना पडेगा। इसमे भयके लिए गुजाइश ही कहाँ है, कोई रुकावट कहाँ है? लेकिन मौजूदा दमन-नीति भय और आशंकाओसे भरी हुई है और उसमें बाधाएँ भी अनेक है।

सेगाँव, १३ फरवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-२-१९३९

१. देखिए पृ० १००।

४७२. शिष्टाचारका सवाल

एक मित्रका कहना है कि राजकोटके ठाकुरसाहब और सर पैट्रिक कैडेलके बीच हुए गुप्त पत्र-व्यवहार और सपरिषद् ठाकुरसाहबके साथ होनेवाली रेजिडेंटकी बातचीत के उद्धरण प्रकाशित[1] करके मैंने शायद मर्यादाका उल्लघन किया है। लेकिन मुझे ऐसा बिलकुल महसूस नही होता। मै दावा करता हूँ कि जहाँ मर्यादाकी कोई बात हो वहाँ मैं बडा भावुक हूँ। यहाँ तक कि मेरी सबसे अधिक बुराई करने-वालोने भी मुझे इस बातका श्रेय दिया है कि अपने प्रति लोगोके विश्वासको मैं सदा निबाहता हूँ और मुझे बताई गई गुप्त बातोको प्रकट न करनेकी मुझमे काफी क्षमता है। लेकिन इसे मैंने अपना फर्ज कभी नही समझा कि मै वादाखिलाफियोको जाहिर न करूँ, या जिन अपराधोका मुझे साधारण सूत्रोसे पता लगे उन्हे छिपा लूँ। हाँ, जो बाते मुझपर विश्वास रखकर कही जाये उनको मैं जरूर गुप्त रखता हूँ, जैसेकि रौलट ऐक्ट आन्दोलनके वक्त अहमदाबादमे हुए दुर्भाग्यपूर्ण दगेमे अदालतसे सजा की धमकी मिलनेपर भी मैंने अपराधियोके नाम नही बताये थे। लेकिन इस मामलेमें तो मर्यादाका कोई सवाल ही नही है। सत्यकी खातिर और लोकहितके लिए उस पत्र-व्यवहार और उन उद्धरणोको प्रकाशित करना पडा है। जो कागजात प्रकाशित किये गये, वे साधारण रूपमे सरदारको मिले थे और उन्हे उन लोगोने दिया था, जिनके कि पास कानूनन वे थे। इसलिए, जहाँ तक मैं समझ सकता हूँ, उनको प्राप्त करनेमे कोई बेईमानी नही हुई और, जैसाकि मैंने कहा है, उनको प्रकाशित करनेमे भी कोई गलती या बेईमानी नही हुई है। उसे प्रकाशित किये बगैर जनताका पक्ष सिद्ध नही किया जा सकता था।

सेगाँव, १३ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

१. देखिए परिशिष्ट १।

४७३. मेवाड़

एक पत्र-लेखकने केवल कामकी बातोंको बहुत ही व्यवस्थित ढंगसे पेश करते हुए मुझे निम्नलिखित विवरण भेजा है:[1]

पहली घटना: घटनाकी तिथि: १४ दिसम्बर, १९३८। घटना-स्थल: देवली कस्बेके ब्रिटिश इलाकेके रास्तेका एक पुल, जहाँसे मेवाड़का इलाका कोई १२ गजके फासलेपर है।

. . . प्रजामण्डलके एक कार्यकर्ता श्री मथुराप्रसाद वैद्य पर, जो . . . प्रजामण्डलकी ओरसे देवलीमें प्रचार-साहित्य बाँट रहे थे, . . . मेवाड़के ऊँचा थानेके दो सिपाहियोंने अचानक हमला किया। उनमें से एकने उनके पास जो साहित्य था उसे छीन लिया . . .। दूसरेने उन्हें जमीनपर पटक दिया और फिर दोनो उन्हें अर्धचेतनावस्थामें घसीटते हुए नजदीकके मेवाड़ी इलाकेमें, जो वहाँसे केवल लगभग १२ गज दूर है, ले गये . . .। वैद्य मथुराप्रसादको ऊँचा थाने ले जाते हुए उन सिपाहियोंने बुरी तरह पीटा। अब उन्हें नौ महीनेकी कैदकी सजा दे दी गई है।

दूसरी घटना: घटनाकी तारीख: २ फरवरी, १९३९। घटना-स्थल: ब्रिटिश इलाकेमें देवली कस्बेकी सीमापर।

. . . शामके साढ़े छः बजेके करीब कस्बेकी सीमापर मेवाड़-पुलिसके १५ आदमियोंने मेवाड़ प्रजामण्डलके सचिव श्री माणिकलाल वर्मा और उनके चार अन्य साथियोंपर एकाएक लाठियोंसे हमला किया। पाँचों आदमी बुरी तरह घायल हो गये। इसके बाद वे माणिकलालजी को काँटों और झाड़ियोंमें बड़ी निर्दयताके साथ घसीटते हुए मेवाड़के इलाकेमें ले गये, जो वहाँसे कम-से-कम कुछ सौ गज के फासलेपर तो था ही। इस खींचातानीके बीच देवलीकी पुलिस को खबर की गई, लेकिन उसपर कोई ध्यान नहीं दिया गया। और थानेका दीवान तो काफी तलाश करनेपर भी नहीं मिला, मानो सारी कार्रवाई पूर्व-योजनाके अनुसार की गई थी। इसके बाद माणिकलालजी को गिरफ्तार करके मेवाड़के ऊँचा थानेमें ले गये।

पत्र-लेखकने आगे लिखा है:

श्री माणिकलालजी बिजौलियाके है। पिछले बीस सालसे वे किसानोंकी सेवामें लगे हुए हैं। एक साल पहले प्रजामण्डलकी स्थापना उन्होंने ही की थी।

१. यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये हैं।

लेकिन कुछ ही दिनोके अन्दर उसे गैर-कानूनी करार दे दिया गया। इसलिए कुछ महीने पहले उन्होने सविनय अवज्ञा शुरू की। यह विवरण मैं आपको इसलिए भेज रहा हूँ कि रियासतोके मामलेमें आपने खुले आम लिखना शुरू कर दिया है। क्या आप हम कार्यकर्ताओको भी यह बतलायेंगे कि ऐसी परिस्थितियोमें हमें क्या करना चाहिए?

यह खबर यदि सच हो तो वड़ी अजीव है। यह समझमें नही आता कि पुलिसने इन कार्यकर्ताओको मेवाड़के इलाकेमे ही क्यो नही गिरफ्तार किया। या कि वात ऐसी थी कि ये कार्यकर्ता मेवाडके इलाकेमे अपना काम करनेसे वच रहे थे? जो भी हो, ये गिरफ्तारियाँ मुझे गैरकानूनी मालूम पडती है। घसीटना तो हमला ही हुआ। इस वारेमे मै सिर्फ यही सलाह दे सकता हूँ कि यह तो कानूनी कार्रवाई करनेके लायक मामला है। अत प्रजामण्डलको यह कार्रवाई करनी चाहिए।

लेकिन रियासतोके सत्याग्रहियोको यह याद रखना चाहिए कि असली लडाई तो अभी आनेवाली है। छोटी-वडी सभी रियासते एक ही नीतिपर चल रही मालूम पड़ती है। ब्रिटिश भारतमे सत्याग्रह-आन्दोलनके समय अग्रेज जो उपाय काममे लाये थे, उन्हीकी वे नकल कर रही है, और हो सकता है, त्रास फैलानेमें वे ब्रिटिश हुकूमतसे भी आगे निकल जाये। वे समझती है कि उनके लिए लोकमतसे डरनेकी तो कोई वात है ही नही, क्योकि रियासतोमे सामान्यत. कोई सगठित लोकमत होता ही नही। लेकिन सच्चे सत्याग्रहियोका मार्ग तो किसी भी तरहका त्रास नही रोक सकता।

सेगाँव, १३ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-२-१९३९

४७४. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
१३ फरवरी, १९३९

घनश्यामदासजी
लकी
कलकत्ता

गिल्डर [और] जीवराजने कल जाँच की। परन्तु डॉ० राय[1]को जब चाहे तब आनेका हक है।

वापू

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७८०५) से; सौजन्य : घनश्यामदास विड़ला।

१. डॉ० विधानचन्द्र राय।

४७५. पत्र : मीराबहनको

[१३ फरवरी, १९३९][1]

चि० मीरा,

तुम्हारे सब पत्र अच्छे और कलापूर्ण हैं। मुलाकातका तुम्हारा वर्णन चित्रवत् है। हमें आशा रखनी चाहिए कि इसका फल निकलेगा।

आशा है, रुपया तुम्हें समयपर मिल गया होगा।

मैं यथाशक्ति जल्दी आनेका प्रयत्न करूँगा।

बाकी सुशीला लिखेगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२८) से; सौजन्य मीराबहन। जी० एन० १००२३ से भी।

४७६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१३ फरवरी, १९३९

बा,

अब तो तुझे अकेले रहनेका भी खासा अनुभव हो गया। लेकिन मैं भूलता हूँ। तू अकेली थी ही कहाँ? रामजी तो हमेशा तेरे साथ हैं ही न? और जहाँ वे हों, वहाँ और दूसरे हों या न हों, क्या फर्क पड़ता है? लेकिन अब तो मृदु और मणि, दो हो गईं। खुश रहना। वे दोनों भी लिखें।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३२

1. डाककी मुहरसे।

४७७. पत्र: वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव, वर्धा
१३ फरवरी, १९३९

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे पत्र मिल गये। गरासिये ऐसे कहाँ हैं कि अपना माना हुआ 'गरास'[1] झट छोड़ देनेके लिए तैयार हो जाये? हम चुपचाप सहन कर लेंगे, तो सब ठीक हो जायेगा।

बा का मामला जल्दी निपट गया। मणि चतुर लड़की है। कब क्या करना है इसकी कला उसने हस्तगत कर ली है।[2] अपना नाम चरितार्थ कर रही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० २३४

४७८. पत्र: हीरालाल शर्माको

सेगाँव, वर्धा
१३ फरवरी, १९३९

चि० शर्मा,

तुमको तार भेजा था सो मिला था? यहाँ तो उत्तर मिला था "यहाँ अनेक शर्मा हैं। तार ठिकाने पहुँचाया नही जा सका।"[3]

एक ही बातका उत्तर देना है ना? नैसर्गिक उपचारका इतना गहेरा अर्थ न किया जाय। ऐसा अर्थ करनेका उसीको अधिकार है जो उसकी प्रसिद्ध अर्थको अमलमे ला सका हो। हम सब अहं ब्रह्मास्मि थोडे कह सकते है? जेल जानेका तुमारा समय आवेगा तब भगवान रास्ता खुल्ला कर देगा। यो भी मैं जो कल्पना कर रहा हूँ वह जेल जानेकी नही है। इसलिए अपने कर्ममें रत रहो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २७८-९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. राजवंशियोंको राज्यकी ओरसे दी जानेवाली जमीन।

२. कस्तूरबा से अलग कर दिये जानेके बाद मणिबहनने तब तक भोजन ग्रहण नहीं किया था जब तक उन्हें फिरसे कस्तूरबाके पास नहीं ले जाया गया।

३. मूलमें ये दो वाक्य अंग्रेजीमें हैं।

४७९. बातचीत: डॉ० चेस्टरमैनके साथ[1]

सेगाँव
१३ फरवरी, १९३९

. . . उन्होंने कहा कि भारतीय समस्याओंकी पेचीदगीको देखकर मेरा दिमाग चक्कर खाने लगता है। स्वभावतः चिकित्सा-सम्बन्धी समस्याएँ मेरे मनमें सबसे पहले आती हैं। जब मैंने सुना कि प्रतिवर्ष दो लाख स्त्रियाँ प्रसूता होनेपर मर जाती हैं, एक लाख लोग चेचकसे तथा ३६ लाख तरह-तरहके बुखारोसे मर जाते हैं, १० लाख कोढ़ी हैं और ६ लाख अन्धे हैं, तो निरोधक तथा उपचारात्मक, दोनो तरहके चिकित्सा-कार्यकी विशालताका अनुमान लगाकर मैं सचमुच डर गया। उन्होने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि पता नहीं आप यह जानते हैं या नहीं कि भारतमें मिशनके २६६ अस्पताल और ५०० औषधालय हैं, जिनमें २५४ यूरोपीय और ३६० भारतीय डॉक्टर तथा ३०० यूरोपीय और ४०० भारतीय नर्सें काम करती हैं। इन अस्पतालोमें प्रतिवर्ष २० लाख बीमार देखे जाते हैं और ५० लाखका इलाज होता है। सारे देशमें तपेदिककी चिकित्साका आधा और कोढ़ियोकी चिकित्साका सारा काम मिशनके हाथो होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि धर्म-परिवर्तनका काम भी होता है और इसके बारेमें मैं आपका मत जानता हूँ, तथापि मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि मिशनोंका तीन-चौथाई चिकित्सा-कार्य उन क्षेत्रोंमें होता है जहाँ धार्मिक शिक्षाका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। . . . इसलिए मैं इस बारेमें आपकी राय जानना चाहता हूँ कि यह काम सफलतापूर्वक आगे कैसे बढ़ाया जा सकता है और हम लोग आपकी सहायता और सहयोगपर कहाँ तक निर्भर रह सकते हैं।

उत्तरमें गांधीजीने कहा कि इसका उत्तर कठिन तो है लेकिन साथ ही सरल भी है।

चिकित्साका सही कार्य क्या है, इस विषयमें मेरे विचार कुछ विचित्र-से हैं। सालो पहले मैंने ये विचार सशक्त शब्दोमे व्यक्त किये थे। और तबसे लेकर अबतकके लम्बे अनुभवके दौरान मेरे उन विचारोके सारमें कोई परिवर्तन नही आया है। परन्तु इन विचारोकी आपके समक्ष व्याख्या करनेकी अब कोई आवश्यकता नही है। मैंने मिशनके

१. अमृत कौर द्वारा लिखित "ए गुड समेरिटन" से उद्धृत। डॉ० चेस्टरमैन इंग्लिश बैप्टिस्ट मिशनके चिकित्सकीय मन्त्री थे और ताम्बरम्में होनेवाली इन्टरनेशनल मिशनरी कान्फ्रेंसमें भाग लेने तथा मिशन द्वारा संचालित अनेक अस्पताल देखनेके लिए भारत आये थे।

बहुत-से अस्पताल देखे है। कोढियोंके बीच मिशनरियोका अद्‌भुत कार्य देखा है। इस काममें उनका एकाधिकार माना जा सकता है। कोढियोकी सेवा उनकी अपनी विशिष्टता है; कारण, इस कामको करनेके लिए और कोई सामने नही आया है। कटकका 'लेपर होम' (कोढी-सेवा भवन) मैंने देखा है। मैंने पुरुलियाके कोढियोके अस्पतालमे काफी वक्त गुजारा है और वहाँका काम देखकर प्रभावित हुआ हूँ। मैंने इलाहाबादमे श्रीमती हिगिनबॉटमका काम देखा है, कई दूसरी जगहोका भी देखा है, क्योंकि कोढियोके लिए बने आश्रमोमें जाना मुझे बहुत भाता है। लेकिन चिकित्साके क्षेत्रमें मिशनरियोके कामके लिए मेरे मनमे प्रशसाका जो भाव है, उसके बावजूद मै उनके काममे दोष भी देखता रहा हूँ और मेरे मनमें आलोचनाका भाव भी रहा है। मैंने यह महसूस किया है कि इन सज्जन और सद्‌भाव-सम्पन्न मिशनरियोने इस विशाल प्रश्नकी बाहरी परतको भी नही छुआ है। इसमें कोई सन्देह नही कि कोढियो, अन्धो, तपेदिकके रोगियो और दूसरे रोगियोके लिए काफी काम किया गया है, परन्तु यह सहायता इस विशाल देशके करोड़ो रोगपीड़ितो तक नही पहुँच पाई है। यह चिकित्सा-सहायता मुख्य रूपसे उन लोगोको पहुँची है जो शहरोमें या शहरोके पास रहते है जबकि भारतकी बहुसख्यक ग्रामीण जनताको अछूता छोड दिया गया है। ग्रामीणोकी चिकित्सा-सम्बन्धी जरूरतोको देखकर प्रान्तीय सरकारे, यहाँ तक कि काग्रेस सरकारे भी भयभीत हो उठी हैं। वे किंकर्तव्यविमूढ हो गई है और विभिन्न प्रयोगोके बावजूद अभी कुछ नही किया गया है। इसलिए यदि मुझे मिशनरियोको सलाह देनेके लिए कहा जाये तो मैं उनसे कहूँगा कि वे सारी पश्चिमी चिकित्सा-पद्धतिको भारतमें प्रतिरोपित न करे। हम इसके लिए साधन नही जुटा सकते। देशी जड़ी-बूटियो और औषधियोके अध्ययनसे बहुत लाभ उठाया जा सकता है परन्तु इस दिशामे लगभग कुछ भी कार्य नही किया गया है। हमारे मैदानो और वनोमे जाने और इन औषधियोंकी खोज करनेकी बात किसीको सूझी ही नही। परिणामस्वरूप बहुत-सारी देशी प्रतिभा, क्योंकि इसे मौलिक और वैज्ञानिक नही माना जाता, व्यर्थ जा रही है। मै आपको आज ही की एक घटना बताता हूँ। आपको शायद मालूम होगा कि कुछ दिनोंसे मेरे एक पैरमें थोडी सूजन है। डॉक्टर डर रहे हैं। उन्होने इसे इस बातका लक्षण समझा है कि दिल और गुर्दे क्षीण होने लगे है। मेरे सहयोगियोमें से एक — आप उन्हे लगभग निरक्षर ही कह सकते हैं — बहुत चिन्तित हो उठे जैसाकि मेरे बारेमे सभी हो जाते हैं। उन्होने मुझे बताया कि वह पिछली रात बिलकुल सो नही सके। आज सुबह वह एक हरा पत्ता लाये और उन्होंने मुझसे कहा कि उनके पिताजीको भी ऐसी ही तकलीफ थी और इससे वह ठीक हो गये थे। उन्होंने मुझसे प्रार्थना की कि मैं भी इसका प्रयोग करके देखूं। उनका प्रस्ताव माननेमे मुझे कोई सकोच नही हुआ। लेकिन यदि किसी उच्च-शिक्षा प्राप्त डॉक्टरने मुझे हैरानीमे डालनेवाला कोई लम्बा-चौड़ा नुस्खा बताया होता तो उसके प्रति मेरी प्रतिक्रिया ठीक वैसी ही न होती। इसलिए मैं ऐसा मानता हूँ कि ग्रामीणजनोको इन साधारण तरीकोंसे राहत

मिल सकती हैं। मेरा यह कहना नहीं है कि यह पत्ती इस तकलीफको दूर कर देगी। परन्तु ऐसी कोई संस्था होनी चाहिए जो निश्चयपूर्वक यह बता सके कि ये जड़ी-बूटियाँ क्या हैं और उनके गुण क्या हैं।

गांधीजी ने स्पष्ट किया कि उनके मनमें पश्चिमी चिकित्सा या डॉक्टरोंके खिलाफ कोई पूर्वग्रह नहीं है। उन्होंने कहा कि मैंने अपने एक दक्षिण आफ्रिकी मित्र, श्री कैलेनबैकके लिए, जो यहाँ मलेरियासे बीमार पड़े हुए हैं, आज ही ग्लूकोज मँगवाया है। वह कुनैन लेनेसे इनकार कर रहे हैं यद्यपि मेरा इस औषधिमें पूरा विश्वास है।

यहाँ डॉ० चेस्टरमैननें बीचमें कहा कि कुनैन तो देशी औषधि ही है। गांधीजी ने उत्तर दिया कि देशी औषधि होते हुए भी इसपर एकाधिकार है और इसलिए यह बहुत महँगी और ग्रामीणजनोंकी पहुँचसे बिलकुल बाहर है।

इसलिए मैं चाहूँगा कि मिशनरी गाँवमें दवाफरोशीका काम करें और जहाँ तक सम्भव हो वे अपने-आपको देशी दवाइयों तक सीमित रखें। यह महत्वपूर्ण अनुसन्धान-कार्य करनेके लिए उनको सरकारकी ओरसे सोनेके तमगे या खिताब नहीं मिलेंगे। परन्तु मेरी रायमें उन्हें ईसा मसीहकी ओरसे खिताब जरूर मिलेगा जो कहीं ज्यादा मूल्यवान होगा।

आगे बोलते हुए गांधीजी ने कहा कि बहुत समयसे वह महसूस करते रहे हैं कि भारतमें चिकित्सा-संकायको ग्रामीण कार्यकर्ताओंके लिए प्रशिक्षणका छोटा-सा कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, और कई साल पहले उन्होंने बम्बईके सर्जन-जनरल हूटनसे यह बात कही भी थी। गाँवोंके स्कूलोंके शिक्षकोंका इस उद्देश्यके लिए उपयोग किया जा सकता है। वे स्वास्थ्यके विषयमें सारे गाँवको अपने अधिकार-क्षेत्रमें मानें और वहाँके निवासियोंको स्वास्थ्य-विज्ञान और रोग-निवारणके सीधे-सादे नियम बतायें। साधारण रोगोंके लिए आम दवाइयाँ बाँटनेके लिए स्कूलोंका औषधालयोंके रूपमें उपयोग किया जा सकता है। इस सन्दर्भमें उन्होंने अपने ही जीवनसे एक उदाहरण दिया। दक्षिण आफ्रिकामें उन्होंने छः हफ्तोंका उपयोगी प्रथमोपचार-प्रशिक्षण प्राप्त किया था और उसके बाद ही उन्हें बोअर युद्धके दौरान घायलोंकी सेवाके लिए अपना एक दल बनाने और उसका नेतृत्व करनेकी अनुमति मिली थी।

. . . इसके बाद डॉक्टर चेस्टरमैननें गांधीजी से अस्पतालोंकी इमारतोंके ऊपर होनेवाले खर्च और उनके लम्बे-चौड़े साज-सामानके बारेमें उनकी राय पूछी। गांधीजीने उत्तर देते हुए कहा कि वह कभी इसके पक्षमें नहीं रहे हैं और उनकी प्रायः यह कोशिश रही है कि लोगोंको अनावश्यक चीजोंपर खर्च करनेसे रोका जाये। जब तात्कालिक जरूरतोंको पूरा करनेके लिए पैसेकी कमी है तब ऐसा करना अनुचित ही कहा जायेगा। बड़े-बड़े अस्पताल कुल मिलाकर गरीब आदमीकी मदद नहीं करते, क्योंकि वे उसे इस बातकी कोई शिक्षा नहीं देते कि अस्पताल छोड़नेके बाद उसे अपने स्वास्थ्यका ध्यान कैसे रखना है।

डॉ० चेस्टरमैन : चिकित्सा-क्षेत्रमें कार्य करनेवाले मिशनरी लोग चिकित्सा-व्यवसायका नैतिक स्तर ऊँचा उठानेमें क्या योगदान दे सकते हैं ?

गाधीजी . वे सहायता कर सकते है, परन्तु मुझे ऐसा नही लगता कि वे मेरे मानदण्डके अनुसार ज्यादा-कुछ कर सकते हैं। आप मुझे अनुदार मान सकते हैं परन्तु जब तक यह आगका मनमें है कि चिकित्सा-कार्य करनेवाले मिशनरी अपने सारे रोगियो और सारे सहयोगियोसे यह अपेक्षा करते हैं कि वे धर्म-परिवर्तन करके ईसाई बन जाये, तब तक सच्चा भाईचारा आनेमें अडचन बनी रहेगी। इसके अलावा एक और अडचन यह है कि वे शासक-वर्गके लोग हैं और इसी कारण वे अलग-थलग रहते हैं। मिशनरियोने "जैसा देश, वैसा भेष" वाली कहावत नही सीखी हैं। वे अपने दैनिक जीवनमे हर बातमे पश्चिमका ही अनुकरण करते हैं और यह भूल जाते है कि वस्त्र तथा भोजन और जीवन-चर्या जलवायु और आसपासके वातावरणके अनुरूप होनी चाहिए और इसलिए उनमें तदनुसार परिवर्तन करना जरूरी है। दिल जीतनेके लिए झुकना होता है, जो उन्होने नही किया है। फलतः पारस्परिक अविश्वासकी खाई बनी हुई है और चिकित्साके क्षेत्रमें काम करनेवाले मिशनरियो और यही कार्य करनेवाले भारतीयोमे सहज सम्पर्क नही है।

डॉ० चेस्टरमैनने इस बातका प्रतिवाद किया। उनका कहना था कि मिशनरियोंके प्रति पर्याप्त सद्‌भाव भी है। वह बम्बईमें एक हिन्दू मित्रसे मिले थे जिन्होने उन्हे निश्चित आश्वासन दिया था कि मिशनके अस्पतालोंकी जरूरत बनी हुई है, क्योकि सरकारी चिकित्सा-संस्थाओंकी अपेक्षा वहाँ लोगोंको ज्यादा ध्यानसे रखा जाता है और वहाँ उन्हे ज्यादा सहानुभूति मिलती है।

सरकारी अस्पतालोंमें यद्यपि फीस नहीं ली जाती, किन्तु वहाँके अधीनस्थ कर्मचारी मरीजोंसे प्रायः अवांछित तरीकोंसे पैसा ऐंठते है। इसके विपरीत मिशनके अस्पतालोंमें यदि उन लोगोसे फीस ली जाती है जो फीस दे सकते हैं तो यह उचित है अथवा नहीं, इस प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने कहा कि फीस न लेनेका कोई कारण उन्हें नजर नहीं आता।

डॉ० चेस्टरमैनने अन्तिम प्रश्न यह पूछा कि धर्म-परिवर्तनके बारेमें आपकी आपत्ति क्या कोंड हिल्स-जैसे क्षेत्रोके बारेमें भी लागू होती है जहाँकी आदिवासी जातियाँ पत्थरों और वृक्षों आदिकी पूजा करती हैं। गांधीजीने निस्संकोच भावसे उत्तर दिया :

अवश्य लागू होती है, क्योकि मैं जानता हूँ कि यद्यपि इन जातियोंको पत्थरों और वृक्षो आदिकी पूजा करनेवाली बताया जाता है, ये जातियाँ अविस्मरणीय कालसे हिन्दू-धर्ममें शामिल रही हैं। वे देशी औषधियोकी तरह इसी धरतीकी उपज है और उनकी जड़े यहाँ बड़ी गहरी हैं। परन्तु आप इसका समर्थन तभी कर सकते हैं जब आप यह महसूस करते हो कि हिन्दू-धर्म भी उतना ही सच्चा है जितना ईसाई धर्म। मेरा विश्वास है कि सभी धर्म सच्चे है परन्तु मनुष्य द्वारा

प्रतिपादित किये जानेके कारण अपूर्ण भी है और उनपर मानवीय अपूर्णताओ और कमजोरियोकी छाप है। मिशनरियोसे मेरा झगड़ा इस वातपर है कि वे समझते है ईसाई धर्मके अलावा और कोई धर्म सच्चा नही है।

गांधीजीसे विदा लेते हुए डॉ० चेस्टरमैनने गांधीजी का इस बातके लिए आभार माना कि उन्होंने उन्हें इतना समय दिया। उन्होंने आशा प्रकट की कि बातचीतसे उन्हे ज्यादा थकावट नहीं हुई होगी और प्रार्थना की कि वे उनकी [ईसाइयोंकी] उदात्त भावनाओको जगाते ही रहें। गांधीजी का उत्तर जिससे डॉ० चेस्टरमैन बहुत ज्यादा प्रभावित हुए, यह था :

मै तो यह अपील हृदयके अन्तरतमसे निरन्तर कर रहा हूँ। उसका महत्व लिखित शब्दोसे कही ज्यादा है यद्यपि मै लिखनेका काम भी करता रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-२-१९३९

४८०. पत्र : नारणदास गांधीको

सेगाँव
१४ फरवरी, १९३९

चि० नारणदास,

क्या तुम्हारा काम ठीक ढगसे चल रहा है? बीमार कैसे पड़ गये थे?

इस पत्रके साथ शेख चाँदभाईके लिए एक पत्र है।

मेरे जानने लायक कुछ हो, तो लिखना।

कह सकते है कि मेरा स्वास्थ्य आजकल ठीक नही है, वैसे फिलहाल तो चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

क्या तुम्हे या गोकीवहनको वा से मिलनेकी इजाजत मिल सकती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५५५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४८१. पत्र : गुलाम रसूल कुरेशीको

सेगाँव, वर्धा
१४ फरवरी, १९३९

चि० कुरेशी,

अमतुस्सलामने मुझसे बात की थी, किन्तु मैं तुम्हे लिखना भूल गया। सार्वजनिक सेवाके लिए पैसे लेनेमें सकोच करनेकी कोई जरूरत नही। मैंने तो बात कर ली है। जब इत्रका धन्धा छोड सको तबसे ही तुम बेशक पैसे लेना शुरू कर दो। याद रखना कि तुम्हे कर्ज नही चढ़ाना है।

बच्चोके बारेमे तो मैंने समझाया ही है न? घरमे उनको धार्मिक शिक्षा मिले, और बाकी सामान्य शिक्षण वे दूसरे बच्चोके साथ ग्रहण करे। सुलताना तो शायद दूसरी लड़कियोंकी ही तरह हरिजन आश्रममे पढ सकती है। मैं नरहरिसे पूछ नही पाया कि आश्रममें तुम्हारे लिए जगह हो सकेगी या नही, और बादमें बात रह गई। अब मैं उससे भी पुछवाऊँगा।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७६५) से; सौजन्य : गुलाम रसूल कुरेशी।

४८२. पत्र : सुरेशसिंहको

सेगाँव, वर्धा
१४ फरवरी, १९३९

भाई सुरेश,

मैंने कानून भंगका तो अब तक कुछ नही सोचा है न मैं ऐसी आबोहवा पाता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६९१) से। सी० डब्ल्यू० २८९३ से भी; सौजन्य : सुरेशसिंह।

४८३. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेगाँव, वर्धा
१५ फरवरी, १९३९

चि० बबुडी,

तेरा दूसरा पत्र मिला था। समय सब ठीक ही कर देगा। धीरज रखना चाहिए। सब नया-नया है, इसलिए अटपटा तो लगेगा ही। अन्तमे सब ठीक हो जायेगा। हिम्मतसे काम लेना। मेरा पत्र तुझे मिला होगा।

श्री कैलेनबैक काफी बीमार हो गये थे, लेकिन अब ठीक है। तेरी गैरहाजिरी यहाँ अकसर महसूस होती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००९) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

४८४. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

सेगाँव, वर्धा
१५ फरवरी, १९३९

चि० विजया,

तेरे बिना अभीसे ही सूना लगने लगा। प्रार्थनामे ही तेरी आवाज गायब थी। लेकिन ससार ऐसे ही चलता है। मिलना, जुदा होना, फिर मिलना, फिर जुदा होना। यह चक्र इसी प्रकार चलता रहेगा और यह जानकर हमे निश्चिन्त रहना चाहिए।

तू अपने धर्मको समझ ले। दाम्पत्य-धर्म सरल है, कठिन भी है। जो समझता है, उसके लिए सरल है। तुझे मनुभाईमे समा जाना है, मनुभाईको तुझमे। लेकिन इसमें लेन-देनको स्थान नही होता। धर्ममे लेन-देन नही होता। धर्मका पालन तो स्वय ही करना पडता है। अत मनुभाई तुझमें समाये या न समाये, तुझे उनमे समा ही जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि तुझे अपनी सारी आध्यात्मिक सम्पत्ति उन्हे सौप देनी चाहिए। अत तुम दोनो परस्पर एक-दूसरेको उत्तरोत्तर ऊँचे उठाओ, नीचे कभी न गिराओ। जैसे यहाँ तू अपने आनन्दसे घरको भर देती थी, वैसे ही वहाँ भी वातावरणको भर देना। यदि तूने 'गीता' के मर्मको समझ लिया है, तो तू जिस स्थितिमे भी होगी, उसीमे खुश रहेगी।

शालाके काममें ठीक जुट जाना। तुझे गये अभी दो घंटे भी नही हुए, इसलिए समाचार तो क्या दिये जा सकते है? लेकिन कल प्रभा आयेगी। यह पत्र भी कल ही भेजा जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५९९) से; सौजन्य: विजयाबहन म० पंचोली।

४८५. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

[१६ फरवरी, १९३९ के पूर्व][1]

बा,

तेरा और मणि का, दोनो पत्र मिले। सभी परीक्षाओंको पार करना। यहाँसे पत्र तो तुझे भेजे गये है। वहाँके अधिकारीसे पूछना। कैलेनबैक बीमार पड़ गये हैं, बीमारी कठिन है। लीलावती सोमवारको उपवास करती है। मणिको अलगसे नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३३

४८६. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

सेगाँव, वर्धा
१६ फरवरी, १९३९

प्रिय सी० आर०,

यदि तुम दे सकते हो तो मेरे द्वारा चिह्नित अशोके बारेमें उन्हे नोटिस दे दो और उनसे माफी माँगने तथा भविष्यमें फिर ऐसा न करनेका वचन देनेकी माँग करो। पर तुम्हारा उनपर सीधे मुकदमा चलाना भी ठीक होगा।

ताताचारके संलग्न पत्रको पढ़ना। केवल भावनाहीन तर्कसे तुम शासन नही कर सकते। पर मौकेपर तो तुम्ही हो। तुम्हे मेरी नही, अपनी समझसे काम करना चाहिए।

१. देखिए "पत्र: कस्तूरबा गांधीको", पृ० ४७२, जिसमें कहा गया है कि "कैलेनबैक अब अच्छे है।"

कताईकी कीमतकी क्षतिपूर्तिकी कृपया मुझसे माँग न करो। जो तुमसे अपनी सेहतका खयाल रखनेको कहते हैं उनकी बातपर ध्यान दो।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१७४) से।

४८७. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

१६ फरवरी, १९३९

चि० बबुड़ी,

मैं तुझे पत्र लिखूँ, फिर भी वह तुझे न मिले, तो यह भी क्या मेरा दोष है? अब तू शान्त हो गई होगी। विजया कल गई, रो रही थी। और दूसरे बहुत लोग अभी आये हैं। उनमें यशोदा भी है, सरूपबहन है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती -(सी० डब्ल्यू० १०००५) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

४८८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१६ फरवरी, १९३९

बा,

तुझे पत्र रोज लिखा जाता है, फिर भी अगर न मिले, तो उसका क्या उपाय है? जैसे तेरी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है, वैसे ही मेरी चिन्ता करनेकी जरूरत तो कभी थी ही नहीं। सुभाष बाबू आ गये। और भी लोग आ-जा रहे हैं। श्री कैलेनबैक अब अच्छे हैं। कानम मजेमें है। वह मेरे साथ खाता है और दोपहरको सोता भी मेरे साथ ही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३३

४८९. पत्र : मणिबहन पटेलको

सेगांव, वर्धा
१६ फरवरी, १९३९

चि० मणि,

तेरा लम्बा पत्र और दूसरे पत्र मिल गये। तूने जो-जो कदम उठाये उनसे मैं तो मुग्ध हो गया हूँ। कही दोप निकालने-जैसी वात नही। मैं देखता हूँ कि तू सत्याग्रहका शास्त्र अच्छी तरह समझ गई है। इसलिए मैं विल्कुल निश्चिन्त हूँ।

मुझे राज्यकी ओरसे रोज तार नही मिलता। दो-तीन आये थे। यहाँसे रोज पत्र गये हैं। तूने जो पता दिया था पहले तो मैंने उसपर लिखे थे। फिर मैंने राज्यसे शिकायत की कि मेरे पत्र क्यो नही मिलते, तव मुझे तार दिया गया कि पत्र प्रथम सदस्यकी मारफत भेजे जाये। अब मैं वैसा ही करता हूँ।

तुम्हारी तरफसे तो रोज पत्र मिलते ही है। इसलिए सन्तुष्ट हूँ।

मृदुको अलग पत्र नही लिखता। वह चिन्ता न करे। क्या वहाँका भार कम है जो वह कांग्रेसका उठायेगी?

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
राज्य बन्दी
मार्फत परिषद्के प्रथम सदस्य
राजकोट (काठियावाड़)

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने, पृ० १२४

४९०. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेगाँव, वर्धा
१७ फरवरी, १९३९

चि० बबुड़ी,

तू बम्बईका पता दे, वहाँ तुझे पत्र लिखूं और वह न मिले, तो इसमें दोष तेरा है या मेरा? मेरे पास तो तारीखें दर्ज हैं। अब तू यहाँ आ जाये, तो ज्यादा अच्छा हो। बीमार पडना ठीक नही। मेरा बारडोली जाना अभी रद हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तेरे पत्र मैं ही खोलता हू।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००६) से, सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

४९१. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
१८ फरवरी, १९३९

घनश्यामदास बिडला
लकी
कलकत्ता

विधानको बताना बारडोली कार्यक्रम रद हो गया है। चिन्ता न करे।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७८०८) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला।

४९२. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेगांव
१८ फरवरी, १९३९

चि० बबुडी,

तेरा पत्र मिला। तुझे मैंने प्राय. रोज पत्र लिखे हैं या लिखाये हैं। तू भुलाई नही जाती। तेरे सोनेकी जगहपर रोज नजर पड़ती है, लेकिन किस काम की? तुझे जीर्ण ज्वर रहता है, यह ठीक नही। यदि यह चलता रहे, तो तुझे समय रहते मेरे पास आ जाना चाहिए। अगर तू मच्छरदानी न लगाती हो, तो अब बराबर उसका उपयोग करना। मैं तो बिलकुल मजेमे हूँ, लेकिन तू कही मुझे अपने बारेमे चिन्तामे न डाल देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००७) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

४९३. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
१८ फरवरी, १९३९

बा,

तुझे यहाँसे रोज डाक गई है। अब वहाँ पत्र न मिले, तो उनका क्या किया जाये? मेरी चिन्ता करनेकी जरूरत नही है। लेकिन मेरी हालत चिन्ताजनक हो जाये, तब भी मैं तो तुझसे इस प्रकारके उत्तरकी आशा करता हूँ. "हम दोनोंके वियोगमे ही उनकी मृत्यु बदी होगी तो वैसा ही होगा, लेकिन मैं तो वहाँ पडी हूँ जहाँ मेरे बच्चोपर अत्याचार हो रहा है। मुझे जेल भेजो, तो मैं इससे भी अधिक प्रसन्न होऊँगी। ठाकुर साहब अपने वचनका पालन करें, इसमे तुम सब मेरी मदद करो। यदि तुम मेरा उपयोग नही करोगे तो मेरी इच्छा है कि मैं राजकोटकी सीमाके भीतर ही मर जाऊँ।" चूँकि तू स्वयं अपनी विशेष इच्छाके कारण वहाँ गई है, तो यदि तेरे हृदयमें इस प्रकारके उद्‌गार उत्पन्न हो, तो उन्हे प्रगट करना। अपने मनमें भी ऐसी ही धारणा रखना।

तू रोज लिखती है कि 'लड़कियोसे सेवा लो'। लेकिन फिलहाल तो वह बन्द ही है। सुशीला मालिश करती है, लेकिन आखिर वह भी तो बन्द करना है न?

हाँ, अभी मेरी तबीयत खराब है, इसलिए अभी तक नही बन्द कर पाया। मेरी चिन्ता इस सम्बन्धमे भी मत करना। मेरा निबाह करनेवाले तो अन्तमें भगवान ही है न?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३३

४९४. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

सेगाँव, वर्धा
१८ फरवरी, १९३९

चि० विजया,

अब तेरा मन बिलकुल शान्त हो गया होगा और तू आनन्द कर रही होगी। अगर तू वहाँ जरा भी दुखी रही, तो मुझे अच्छा नही लगेगा और मेरे शिक्षणपर भी कलंक लगेगा। तुम दोनोको एक-दूसरेके अनुकूल होनेमें जरा भी अडचन नही आनी चाहिए। मुझे ब्योरेवार पत्र लिखना। किस प्रकार रहती हो? रहने और घूमने-फिरनेकी व्यवस्था कैसी है?

आज अमृतलालको थोडा ज्वर आ गया है। जरा भी कुछ रद्दोबदल हो, तो उसपर उसका प्रभाव पड़े बिना नही रहता। फिर भी चिन्ता करने-जैसा तो कुछ नही है[1]। श्री कैलेनबैक वैसे ठीक कहे जा सकते है, यद्यपि बुखार पूरी तरह उतरा नही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बा को पत्र लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०८) से; सी० डब्ल्यू० ४६०० से भी; सौजन्य : विजयाबहन म० पचोली।

४९५. पत्र : मणिबहन पटेल और मृदुला साराभाईको

सेगाँव
१८ फरवरी, १९३९

चि० मणि और मृदुला,

तुम दोनो वहाँ हो, यह ईश्वरका अनुग्रह है। तुम तीनो सबके साथ रहो, यह मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु ईश्वर जैसे रखे वैसे रहना।

सुभाषबाबू वगैरहके बारेमें तुम्हे कुछ नही सोचना है। जहाँ तक इसका सवाल है, तुम तो जेलमें हो। ईश्वर मुझे जैसी बुद्धि देगा वैसा करता रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १२५

४९६. टिप्पणियाँ

जयपुर

आखिरकार जयपुर दरबारको जमनालालजी को गिरफ्तार करना ही पड़ा। कहते है कि उनके रहनेका इतजाम अच्छा है पर उन्हे एक अलग-थलग जगहमें रखा गया है और उनपर कड़ा पहरा है। हर बातको रहस्य बनाकर रखा जा रहा है। मेरा निवेदन यह है कि अधिकारियोको उनका पता-ठिकाना, उन्हे दी जानेवाली सुविधाएँ तथा उनके साथ पत्र-व्यवहार और मुलाकात करने-सम्बन्धी पाबदियाँ प्रकाशित कर देनी चाहिए। क्या उन्हे डॉक्टरी सहायता सुलभ है?

मगर शेखावटीके बारेमे जो खबरें सुनाई पडती है, वे अगर सत्य है तो उनके आगे जमनालालजी की नजरबन्दी और उनके साथ किया जानेवाला बरताव मामूली चीज है। राज्यकी ओरसे तफसीलवार खबरे प्रकाशित न होनेसे जनता अखबारोमें आनेवाली तरह-तरहकी खबरोको ही सत्य मानेगी।

सेगाँव, २० फरवरी, १९३९

सच्चा स्वदेशी

अगर मैं स्वदेशीके पहले 'सच्चा' विशेषणका प्रयोग करूँ, तो आलोचक मुझसे पूछ सकते हैं कि 'क्या झूठा स्वदेशी भी होता है?' दुर्भाग्यवश मुझे यह

जवाब देना पडेगा कि 'हाँ, होता है।' चूँकि खादी की प्रवृत्तिके आरम्भसे ही स्वदेशीके सम्बन्धमें मेरा मत प्रामाणिक माना जाता है, इसलिए पत्र-लेखकोने मेरे सामने इसके बारेमें अनगिनत गुत्थियाँ रखी है। फलतः मुझे स्वदेशीके दोनो प्रकारोंका परिचय देनेके लिए मजबूर होना पडा है। अगर विदेशी पूँजीको स्वदेशीके साथ मिला दिया जाये, या विदेशी हुनरको स्वदेशीके साथ, तो उसके फलस्वरूप तैयार होनेवाली चीज क्या स्वदेशी रहेगी? और भी प्रश्न है। लेकिन हाल ही मे एक मन्त्रीको मैंने जो परिभाषा बताई थी उसको उद्धृत कर देना मैं बेहतर समझता हूँ। वह परिभाषा इस प्रकार थी "ऐसी कोई भी चीज स्वदेशी है जिससे करोडों देशवासियोका हित-साधन होता हो। यदि वह चीज विदेशी हुनर और विदेशी पूँजीसे बनी हो तो भी वह स्वदेशी ही है, बशर्ते कि उस पूँजी और हुनरपर भारतीयोंका प्रभावकारी नियन्त्रण हो।" इस प्रकार चरखा संघकी परिभाषापर खरी उतरनेवाली खादी सच्ची स्वदेशी है, भले ही सारी पूँजी विदेशी हो और भारतीय बोर्ड द्वारा नियुक्त खादी-विशेषज्ञ भी पाश्चात्य हों। इसके विपरीत, बाटाके रबडके या दूसरे जूते विदेशी माने जायेंगे, भले ही उसमें सब कारीगर हिन्दुस्तानी हो और पूँजी भी हिन्दुस्तानने ही जुटाई हो। वे जूते दोहरे विदेशी होगे, क्योकि एक तो उन्हे बनानेकी पूरी व्यवस्थाका नियन्त्रण विदेशियोके हाथोमें होगा, और दूसरे, वे चाहे जितने सस्ते हो, लेकिन वे गाँवोके चमड़ा कमानेवालोमें से अधिकाशको और मोचियोमें से तो सबको बेरोजगार बना देंगे। बिहारके मोची तो इस घातक प्रति-स्पर्धाको महसूस भी करने लग गये है। बाटाके जूते भले ही यूरोपके लिए निजात हो, पर हमारे गाँवके मोचियो और चमड़ा कमानेवालोके लिए तो उनका अर्थ विनाश ही होगा। मैंने ये दो स्पष्ट उदाहरण दिये है, और ये दोनो आशिक रूपसे कल्पित है। कारण, चरखा सघमें सारी पूँजी स्वदेशी ही है और कारीगर भी सब देशी हैं। हालाँकि मेरे हृदयके किसी कोनेमे यह विश्वास जमा हुआ है कि हमारे देशके कारीगरोने अपने कौशलसे जो सुधार किये है, वे किसी भी तरह नगण्य समझे जाने लायक नही है, मगर मैं यह पसन्द करूँगा कि हमे पाश्चात्य इजीनियरीका हुनर ऐसा ग्रामोपयोगी चरखा बनानेके लिए मिल सके जो तमाम मौजूदा चरखोंसे बाजी मार ले जाये। पर यह तो मै विषयान्तर कर गया। मुझे पूरी आशा है कि मन्त्री या दूसरे लोग, जो जनताको मार्ग दिखाते है या उसकी सेवा करते है, सच्चे और झूठे स्वदेशीके अन्तरको पहचाननेकी आदत डालेंगे।

सेगाँव, २० फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-२-१९३९

४९७. फिर त्रावणकोर

श्री रामचन्द्रनने राजकुमारी[1] को जो पत्र लिखा है, उसका निम्नलिखित अंश मैं यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ :

मैं यह जानता हूँ कि अपने ध्येयके लिए जब तक हम शान्ति और सचाईके साथ अपनेको कुर्बान न कर दें, तब तक हम किसी सुफलकी आशा नहीं कर सकते। आपने देखा होगा राज्य-कांग्रेसकी कार्य-समितिकी पिछली बैठकमें हमने सविनय प्रतिरोध कार्यक्रमको शुरू करनेके लिए छः सप्ताहकी मियाद नियत की। हम शान्तिके लिए उत्सुक हैं, इस बातका ईश्वर साक्षी है। लेकिन नौ जगहोंपर होनेवाले गोली-काण्डोंकी कोई जाँच नहीं हुई है। पिछले आन्दोलनमें भाग लेनेवाले अनेक वकीलोंको दो सालके लिए वकालत करनेसे रोक दिया गया है। राज्य-कांग्रेसके १९ विधायकोंको विधान-सभाका वर्तमान अधिवेशन शुरू होनेके ठीक पहले उसमें भाग लेनेके अयोग्य करार दे दिया गया है। सरकारके पास इस बातके लिए काफी वक्त था कि वह पहले ही उन्हें अयोग्य करार देकर नये चुनावकी घोषणा कर देती। अब १९ निर्वाचनक्षेत्र बिना प्रतिनिधित्वके रहेंगे। जुर्मानोंकी रकमें वापस नहीं मिली हैं। जब्त की हुई सम्पत्ति लौटाई नहीं गई है। अखबारों पर लगी हुई पाबन्दियाँ भी बदस्तूर कायम हैं। स्वभावतः लोग ऐसा सोचते थे कि महाराजाके जन्म-दिनके अवसरपर क्षमादानकी घोषणामें ये सब बातें शामिल होंगी। इसके बजाय, एक दूसरे शरारत-भरे विनियमके जरिये राज्य-कांग्रेसके स्वयंसेवक-संगठनको नष्ट करनेका सुनियोजित ढंगसे प्रयत्न किया जा रहा है। यह विनियम खास तौरपर इसी उद्देश्यसे लागू किया गया है। इस समय यहाँ २०० से अधिक राजनीतिक कैदी हैं। गुण्डोंके खिलाफ मुकदमा चलानेकी व्यवस्था करनेवाली ९०वीं धाराके मातहत अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति गिरफ्तार किये गये हैं। सदर-जेलमें कैदियोंको रखनेकी गुंजाइश बढ़ाई गई है। विशेष पुलिस-दलमें १००० से अधिक लोग भरती किये गये हैं। इसमें बदमाश किस्मके लोगोंको रखा गया है और उनकी तनख्वाह देखकर तो चकित रह जाना पड़ता है — प्रति व्यक्ति सिर्फ ५ रुपये माहवार! क्या इससे बड़ा अजूबा हो सकता है? और मानो त्रावणकोरकी पुलिसपर यह भरोसा नहीं किया जा सकता कि वह ऐसा गन्दा काम करेगी, इसलिए पुलिसके बहुत-से सिपाही त्रावणकोरके बाहरसे भरती किये गये हैं। सरकारकी दमन-नीति

१. राजकुमारी अमृतकौर।

बराबर जारी है। अलबत्ता इसमें कोई शोर-शराबा नहीं होने दिया जा रहा है और आमने-सामने खुले संघर्षकी स्थिति नहीं आने दी जा रही है। यही कारण है कि हम छः सप्ताहकी मियाद नियत करनेके लिए मजबूर हो रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि मैंने बापूको जो कागजात भेजे हैं उनका आप सावधानीके साथ अध्ययन करें — खासकर उन दो प्रस्तावोंका जिन्हें कार्य-समितिकी पिछली बैठक में हमने पास किया है। मुझे इस बातपर बड़ा दुःख है कि सर सी० पी० रामस्वामी अय्यरकी नीति शासक और प्रजाके बीच गहरी खाई बना देगी।

इस पत्रमें जिन प्रस्तावों और भूमिकाका जिक्र किया गया है उन्हे मैंने यहाँ नही दिया है। राज्य-काग्रेस क्या कर रही है, यह जाननेके लिए पाठक उन्हे सामने रखें तो ठीक होगा। उन्हे हम अन्यत्र दे रहे हैं।

इन कागजातोको पढकर बड़ा दुख होता है। महाराजा साहबके जन्म-दिनपर दिये गये इस क्षमादानको उदारतापूर्ण क्षमादानकी सज्ञा दी गई थी लेकिन उसके बादसे जो-कुछ हुआ है उसने वह सारी शोभा नष्ट कर दी है जो ऐसे क्षमादानके साथ अवश्य ही जुड़ी होनी चाहिए। यह सदाशयताका एक स्वत-स्फूर्त संकेत था, लेकिन बादकी घटनाओसे लगता है कि उसमें कोई उदारता नही थी, बल्कि वह एक चाल थी, जिसे अधिकारियोने त्रावणकोर दरबारके खिलाफ उठ रहे आन्दोलनको शान्त करने और त्रावणकोरकी जनताके बीच विभेद डालनेके लिए अपनाया था। यदि श्री रामचन्द्रन द्वारा दी गई जानकारी सही हो तो दूसरा उद्देश्य तो बिलकुल नही पूरा हुआ, लेकिन पहला अशतः सधा। कारण, कैदियोंकी रिहाईके बाद भारतीय अखबारोको ऐसा लग रहा था कि सघर्ष समाप्त हो चुका है।

वैसे यह सोचकर मेरे मनको सुख मिलेगा कि उस आशिक क्षमादानके पीछे कोई दुराशयता नही थी। यदि बात ऐसी हो तो मुझे लगता हैं कि राज्य-काग्रेसको आसानीसे सन्तुष्ट किया जा सकता है। हाँ, अगर अधिकारियोंका उद्देश्य मेलजोल और शान्ति स्थापित करना नही, बल्कि काग्रेसको कुचलना हो तो बात और है। यदि क्षमादानका कार्य और सुधार-समितिकी नियुक्ति राज्य-काग्रेसकी सलाहसे सम्पन्न की जाये तो राजा और प्रजाके बीच शान्ति-सुलह कायम होनेमें कोई सन्देह ही नही है।

लेकिन शायद राजा या प्रजा किसीका भी ऐसा सद्भाग्य नहीं हो। उस हालतमें, राज्य-काग्रेसवालोको यह याद रखना चाहिए कि सत्याग्रह अगर ससारकी सबसे बडी ताकत है, तो इसके लिए दिलमें क्रोध और दुर्भाव रखे बगैर अधिक-से-अधिक कष्ट-सहनकी क्षमता भी आवश्यक है। अत्याचारीकी करतूतोंकी खबरें प्रकाशित करना तो ठीक है, लेकिन सत्याग्रहियोके लिए यह भी आवश्यक है कि उनमे अपार कष्टसहनकी असीम क्षमता हो और साथ ही अन्ततः सत्यके विजयी होनेकी ज्वलन्त श्रद्धा भी।

काग्रेसने छ हफ्तेकी मियाद रखकर बहुत अच्छा किया है। लेकिन अगर उसे लगे कि मनुष्यके लिए जहाँ तक सम्भव है वहाँ तक अहिंसाका पालन हो सके और

रचनात्मक कार्य जारी रह सके, इस दृष्टिसे लोगोको तैयार करनेके लिए इतना समय पर्याप्त नही है तो उसे इस अवधिको और बढा देना चाहिए। यह उसके लिए लज्जा नही, बल्कि और भी श्रेयकी बात होगी। यदि विवेकहीन लोग और अनुदार आलोचक अवधि बढ़ानेको कमजोरीकी निशानी माने तो सत्याग्रहियोको ऐसे दोषारोपणकी परवाह नही करनी चाहिए। आखिर यह बात तो सिपाही ही जानता है कि उसे कब अपने हाथ रोक रखने है और कब आगे बढना है। वह जानता है कि अकसर तथाकथित निष्क्रियतामे भी सक्रियता हुआ करती है और विवेकशून्य सक्रियता सच्ची निष्क्रियतासे भी बदतर है। और कमजोर वह नही है, जिसे कमजोर कहा जाता है, बल्कि वह है जो ऐसा महसूस करता है कि मै कमजोर हूँ। कार्य-समितिके सदस्य इस बातको समझ ले कि अहिंसात्मक सघर्पके लिए यह जरूरी है कि हिंसात्मक प्रवृत्तिपर — फिर चाहे वह प्रवृत्ति किसी प्रकार और किसीके भी द्वारा उभारी जाये — आम और प्रभावकारी नियन्त्रण कायम किया जाये। यदि सघर्प फिर कभी आरम्भ किया जाता है, तो मै आशा करता हूँ कि मेरे तारोके उत्तरमे मुझे यह नही सुननेको मिलेगा कि इस हिंसाके लिए — यदि हिंसा भड़क उठे तो — काग्रेस जिम्मेदार नही है। क्या उत्तरदायी शासनका मतलब यह नही है कि जनताके समस्त कार्योके लिए सर्वोच्च सत्ता द्वारा नियुक्त तानाशाह नही, बल्कि स्वय जनता ही जिम्मेदार है? उन्हे यह समझ लेना चाहिए कि यदि हिंसा जरा भी बड़े पैमानेपर भडकी तो वह शायद सत्याग्रहको पुन स्थगित करनेका सकेत हो सकती है, बल्कि कदाचित् होगी ही। ऐसी परिस्थितिमे बारडोलीमे सत्याग्रह स्थगित करना पड़ा था, हालाँकि जो हिंसा हुई थी वह बारडोलीसे बहुत दूर चौरीचौरामे हुई थी।[१]

सेगाँव, २० फरवरी, १९३९

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २५-२-१९३९

४९८. लीम्बड़ीमे अंधेरगर्दी

लीम्बड़ी काठियावाड़की एक रियासत है। उसकी इस बातके लिए शोहरत थी कि वह एक प्रगतिशील राज्य है। वहाँके बहुत-से कार्यकर्ताओको मै जानता हूँ। वे बुद्धिमान, त्यागी और परिश्रमी है। अन्य अनेक राज्योकी तरह लीम्बडीकी प्रजामे भी काफी जागृति आई। वहाँके कार्यकर्ता अक्सर इस बातका गर्व किया करते थे कि उनके युवराज प्रगतिशील है। लेकिन अब उन्हे पता लगा है कि उन्होने पश्चिमके तानाशाहियोके कुछ अजीव रवैये अख्तियार कर रखे है। वे छोटे-से लीम्बड़ी नगरमें तो सुधारकोको चाहे जो करने देते है, लेकिन गाँवोमे उनका जाना उन्हे बिलकुल मजूर नही है। गाँवोमे वे बीचमे किसीको आने दिये बगैर खुद अपने

१. देखिए खण्ड २२, पृ० ३९९-४०० ।

ही प्रयोग करनेवाले थे। लीम्बड़ीके सुधारकोंने सोचा कि गाँववालोंके बीच काम करनेका उन्हे भी उतना ही हक है जितना कि युवराजको है — खासकर उस हालतमे जबकि वे उनके साथ पहले ही अपना सम्बन्ध कायम कर चुके है। इसलिए उन्होने गाँवोमे जानेकी हिम्मत की। इसका जो नतीजा हुआ, वह नीचे दिये हुए तारसे मालूम होगा :

> ५ तारीखकी आधी रातको लाठियों, धारियों, देशी बन्दूकों, तलवारों और फरसोंसे लैस कम-से-कम अस्सी आदमियोंने पंसीना गाँवपर धावा बोल दिया। गाँवमें घुसनेके रास्तोंपर तीनसे लेकर पाँच आदमियों तकके जत्थोंका पहरा बिठा दिया गया। बीस आदमियोके दो जत्थे गाँवमें गये और प्रजा-मण्डलके कार्यकर्ताओं तथा उनसे सहानुभूति रखनेवालोंके मकान उन्होंने डकैतीके लिए चुन लिये। सबसे पहले वे प्रजामण्डलके दफ्तरमें गये और बाहरसे उसकी साँकल चढ़ा दी, ताकि स्वयंसेवक बाहर न जा सकें। इसके बाद एक जत्था एक प्रमुख व्यापारी और प्रजामण्डलके कार्यकर्ता छोटालालके मकानपर पहुँचा और उन्हें तथा उनकी पत्नीको बुरी तरह मारा-पीटा। इस मार-पीटमें उनकी पत्नीको बुरी तरह चोट आई, यहाँ तक कि उसके गुप्तांगोमें भी चोट आई। प्रजामण्डलकी स्थानीय शाखाके प्रमुखपर तलवारसे हमला किया गया, जिससे उनके फेफड़ेमें जख्म हो गया। कोई तीस आदमी बुरी तरह घायल हुए। प्रजामण्डलके सक्रिय सदस्योके दस-बारह घरोसे लगभग साठ हजार रुपये कीमतके जेवर, नकदी तथा माल लूटा गया। डाकू कोई दो घंटे तक हवामें तथा मकानोंपर बराबर गोलियाँ चलाते रहे। इसके बाद वे रालोल नामके दूसरे गाँवमें गये, जो पंसीनासे दो मील दूर है। वहाँ भी उन्होंने ऐसा ही किया। वहाँ जन-आन्दोलनसे सहानुभूति रखनेवाले तीन सुनार और एक बनिया बुरी तरह घायल हुए और दस हजार रुपये कीमतका माल डाकू लूटकर ले गये। जयचन्द वालजी नामक एक बनियेपर आज सियानीमें चाकूसे हमला हुआ। चार जगह चाकू भोंककर उसे लूट लिया; उसकी बहनको भी मारा-पीटा। लोगोके सामने ऐसा शक करनेके ठोस कारण मौजूद हैं कि डकैतीमें सरकारी अधिकारियोंका हाथ है। कुछ डाकू तो राज्यके पागी तथा पासायत ही बताये जाते हैं। सच तो यह है कि प्रजामण्डलके कार्यकर्ताओं और उनसे सहानुभूति रखनेवालोंको पिछले सप्ताहसे राज्यके पागी-पासायत इस बातकी धमकी भी दे रहे थे कि तुम्हें लूटा और मारा-पीटा जायेगा। लूटका माल कोई आठ मोटरों तथा दो बसोंमें रखकर ले जाया गया, जो खानगी जगहोंसे नहीं मिल सकती थीं। डाकू दो घंटे तक बराबर हवामें गोलियाँ चलाते रहे। इतने सारे कारतूस खानगी लोगोंसे नहीं मिल सकते थे। राज्यकी पुलिसने अभी तक कोई तहकीकात शुरू नहीं की है। यहाँ तक कि पंचनामे भी नहीं बनाये

गये हैं। राज्यने राजधानीसे कोई डॉक्टरी सहायता भी नहीं भेजी है। ठाकुर-साहबसे शिकायत करनेपर भी उन्होंने कोई सख्त कार्रवाई नहीं की। राज्यके पासायत दूसरे गाँवोंमें भी ऐसे ही डाके डालनेकी धमकियाँ दे रहे हैं। पहलेकी गुण्डागर्दीकी घटनाओंसे इस सन्देहकी और पुष्टि होती है। जाम्बूमें मुलीके आदमियों द्वारा भक्तिबाकी मोटरगाड़ीपर किया गया हमला, सियानीमें प्रजामण्डलकी मोटरगाड़ीका तोड़ा जाना और ड्राइवर तथा कार्यकर्त्ताका पीटा जाना, रसका गाँवमें प्रजामण्डलके सदस्योंका पीटा जाना, सियानीमें स्वयंसेवकोंके प्रमुखको पासायतों द्वारा मार देनेकी धमकी देना, सियानीमें लगभग तीस गुण्डोंका लाठियों, धारियों और चाकुओंसे लैस हो खुले आम घूमना और ऐसी ही अन्य कई घटनाओंके कारण यहाँके लोगोंके मनमें कोई सन्देह नहीं रह गया है कि यह संगठित गुण्डागर्दी राज्यने हालमें छिड़े जन-आन्दोलनको दबानेके लिए शुरू कराई है। इन घटनाओंकी ओर ठाकुरसाहबका ध्यान बार-बार आकर्षित किया गया है, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। पिछली डकैतीके विरोध स्वरूप नगरसेठ लालचन्दभाई और दुर्लभजी उमेदचन्द और अमूलख अमीचन्द जैसे प्रमुख नागरिकों सहित कोई ४००-५०० लोगोंने भूख-हड़ताल शुरू कर दी है और वे दिन-रात महलके बाहर धरना दिये बैठे हैं। कोई तीन हजार और लोग भी आज सवेरे उनमें शामिल हो गये हैं। राज्यके खिलाफ लोगोंमें भारी क्षोभ है। लोग पूरी तरह अहिंसात्मक बने हुए हैं और हरएक मुसीबतका सामना करनेके लिए तैयार हैं।

उन्होंने अपनी परिषद्की एक सभा करनेकी घोषणा करनेका भी साहस किया तो उसका जो परिणाम हुआ है, वह मुझे भेजे निम्नलिखित सन्देशसे स्पष्ट हो जायेगा :

प्रजा-परिषद्की बैठक कल करनेकी व्यवस्था की गई है। प्रजा-परिषद्को भंग करनेके लिए लीम्बड़ीमें बहुत-से गुण्डे लाये गये हैं। लोगोंको शक है कि इसमें सरकारी अधिकारियोंका हाथ है। ऐसा शक करनेके सबल कारण हैं। लाठियों, नंगी तलवारों, बन्दूकों, धारियोंसे लैस गुण्डोंका जलूस सारे दिन कस्बेमें घूमता रहा। उनमें से कुछने कुछ स्त्रियोंको मारने-पीटनेकी भी कोशिश की। बम्बईके एक प्रमुख व्यापारी सेठ अमूलख अमीचन्दने बीचमें पड़कर कहा कि स्त्रियोंके बजाय तो मुझे मार लो तो ठीक होगा। सेठ दुर्लभजी उमेदचन्द और भगवानलाल हरखचन्द छः पुरुष स्वयंसेवकोंके साथ तुरन्त घटनास्थलपर पहुँचे। पुरुष स्वयंसेवकोंको निर्दयताके साथ लाठियोंसे पीटा गया। एक दूसरी जगह गुण्डोंने भावनगरके वकील प्रह्लादराय मोदीको पकड़ लिया और तभी छोड़ा, जब उन्हें यह मालूम हो गया कि वे प्रजा-मण्डलके कार्यकर्ता नहीं हैं। भोगीलाल गांधीको नंगी तलवार लिए एक गुण्डेने मार डालनेकी धमकी दी। मनुभाई ठाकरपर लाठीकी मार पड़ी। गुण्डे

प्रजामण्डलके दफ्तरके बाहर शोर मचा रहे हैं। सियानीके तपुभा नामक व्यक्ति, जो एक सरकारी मुलाजिम है और जिसने दो दिन पहले सियानीमें प्रजामण्डलके स्वयंसेवकोंको पीटा था, के नेतृत्वमें गुण्डोंका एक जत्था स्थानकवासी भोजन-शालाके बाहर, जहाँ गाँवोंसे आये हुए किसान सो रहे हैं, आ डटा है। जो भी आदमी बाहर निकलता है उसे वे मार डालनेकी धमकी देते हैं। सड़कोंपर गुण्डोंके अनेक जत्थे घूम रहे हैं। लगभग फौजी नाकेबन्दीकी-सी स्थिति है, जो एक तरहसे राज्य द्वारा फौजी कानून लागू कर दिये जानेके समान है। लोगोंका खयाल है कि इस सबमें राज्यका हाथ है। गण्यमान्य लोगोंने पुलिस-अधीक्षक नरुभाको इनमें से कुछके साथ बातें करते देखा है। बहुत-से किसानोंको जबर-दस्ती गाँवोंसे लाकर इन गुण्डोंके नेतृत्वमें जलूस बनाकर गली-सड़कोंपर घूमनेके लिए विवश किया जा रहा है। लोग पूरी तरह अहिंसात्मक रुख अपनाये हुए हैं और उन्होंने तय किया है कि परिषद्की बैठक करनेके अपने हकके लिए जो भी मुसीबत सहनी पड़ेगी, उसे वे सहेंगे।

अब मुझे मालूम हुआ है कि जिन लोगोंका इस सन्देशमे वर्णन किया गया है उन्होने बादमे दरबार गोपालदास देसाई और उनकी पत्नी भक्तिबाको घेर लिया। दोनोके ही हलकी चोटे आईं। गुण्डोको भी थोड़ी देरके लिए यह सन्तोष मिला कि उन्होने परिषद्की बैठक नही होने दी।

इन सन्देशोमे घटनाओका वर्णन इतने ब्योरेवार ढंगसे किया गया है कि वे सहज ही विश्वसनीय लगती है और इन सन्देशोमे अविश्वास करनेका मुझे कोई कारण नही दिखाई देता। इससे भी बडी बात यह है कि सन्देश ऐसे लोगोने भेजे है जिनके बारेमे मेरी मान्यता है कि वे न तो कोई बात बढा-चढाकर कह सकते है और न झूठमूठ गढकर ही।

सुधारकोमें अगर मर-मिटनेकी हिम्मत है और वे सचमुच प्रजाकी इच्छाओका ही प्रतिनिधित्व करते है, तो इस सब अन्धेरगर्दीके बावजूद उनकी जीत जरूर होगी। बाहरके लोग भी उनकी मदद करेगे। सर्वोच्च सत्ता भी सधिकी शर्तोके अनुसार उनकी मदद करनेके लिए बँधी हुई है। प्यारेलालने ली वार्नरकी पुस्तकसे उद्धरण देकर यह बात भलीभाँति सिद्ध कर दी है। लेकिन सत्याग्रहियोंको यह जान लेना चाहिए कि मुक्ति किसी बाहरी सहायता से नही, बल्कि खुद अपने अन्दरकी शक्तिसे ही मिलती है। अगर वे अपनी आत्माकी रक्षा करना और स्वतन्त्रता जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है, प्राप्त करना चाहते है तो उन्हे अपना सब-कुछ न्योछावर कर देना पड़ेगा।

सेगाँव, २० फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-२-१९३९

४९९. पत्र : शारदाबहन गो० चोखावालाको

सेगाँव, वर्धा
२० फरवरी, १९३९

चि० बबुडी,

तेरा पत्र मिला। लगता है, तू होशियार होती जा रही है। धीरजसे सब ठीक हो जायेगा। बुखारसे पिंड छुड़ाया, यह अच्छा किया। अब काममें भी जुट जाना। खाने-पीनेमें जो माफिक आये, सो खाना।

मेरा सीमा-प्रान्त जाना, हो सकता है, १२ के बाद हो। मेरी तबीयत अच्छी है। बहुत करके तो मैं कांग्रेसके अधिवेशनमें नहीं जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०००८) से; सौजन्य : शारदाबहन गो० चोखावाला।

५००. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
२० फरवरी, १९३९

बा,

सावधान रहना और अपनी तबीयत का ध्यान रखना। सब आ गये हैं, इसलिए अब अधिक नहीं लिखता। आज नानावटी काकाके पास रहने चले गये।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३४

५०१. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

सेगाँव, वर्धा
२० फरवरी, १९३९

चि० विजया,

मेरे पत्र मिले होगे। तू कितनी खराब है! इस तरह चक्कर क्यो आने चाहिए? अपने घर जानेमे इतना दुख क्यो? सावधान हो जा और उल्लासपूर्वक अपने कर्तव्यका पालन कर। [इस तरह] तेरा बार-बार बीमार पडते रहना चलेगा नही। बा को पत्र लिखना। पतेकी जगह मार्फत प्रथम सदस्य लिखना। औरोको भी लिखना।

आज अमृतलाल काकासाहबके पास रहने चले गये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७११०) से। सी० डब्ल्यू० ४६०२ से भी; सौजन्य: विजयाबहन म० पचोली।

५०२. पत्र : बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को

सेगाँव, वर्धा
२० फरवरी, १९३९

भाई बाल कृष्ण शर्मा,

कानपुरमे कया किया? कयों इतनी अशाति[1]? कोई गणेश शकर विद्यार्थी[2] ने बलीदान दिया?

बापुके आशोर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५१६) से। सी० डब्ल्यू० ४९९३ से भी; सौजन्य . परशुराम मेहरोत्रा।

१. ११ फरवरी से १३ फरवरी, १९३९ तक कानपुरमें साम्प्रदायिक दंगे हुए थे।
२. प्रताप के सम्पादक; वे मार्च १९३१ में कानपुरके हिन्दू-मुस्लिम दगेके दौरान मारे गये थे।

५०३. तार: अकबर हैदरीको[1]

सेगांव, वर्धा
२१ फरवरी, १९३९

सर अकबर हैदरी
हैदराबाद दकन

जवावमे आपका तार शोलापुरसे मिला। अनुमति मिल जानेके वाद हमारे प्रतिनिधि सुन्दरप्रसादने सत्रहको गुलवर्गा जेलमे नारायणस्वामीसे भेट की[2] . . . कैदियोकी वर्दी और पैरमे वेडी पहने हुए थे।

गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००९७) से; सौजन्य: आन्ध्रप्रदेश सरकार।

५०४. पत्र: अकबर हैदरीको[3]

सेगांव, वर्धा
२१ फरवरी, १९३९

प्रिय सर अकबर,

आर्य समाज सत्याग्रहके वारेमे एक पत्र इसके साथ है। उनकी मांग मुझे युक्ति-युक्त लगती है। पर आपकी वात सुननेसे पहले मै सार्वजनिक रूपसे कुछ कहना नही चाहता।

राज्य-काग्रेसके वारेमें अपने पत्र[4] के उत्तरकी मै अभी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००९६) से; सौजन्य: आन्ध्रप्रदेश सरकार।

१. इस तारकी फोटो-नकल नई दिल्लीमें आयोजित १९६९-७० की गांधी दर्शन प्रदर्शनीमें दिखाई गई थी।

२. साधन-सूत्रमें यहाँ शब्द अस्पष्ट है।

३. इस पत्रकी फोटो-नकल नई दिल्लीमें आयोजित १९६९-७० की गांधी दर्शन प्रदर्शनीमें दिखाई गई थी।

४. देखिए पृ० ३४१-३।

५०५. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेगाँव, वर्धा
२१ फरवरी, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपके सौहार्दपूर्ण और स्पष्ट पत्रके लिए मैं आपका बहुत ही आभारी हूँ।[1] इन परिस्थितियोंमें मैं उस समयकी प्रतीक्षा करूँगा जो आपके विचारमें हमारी भेंटके लिए उपयुक्त होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। सी० डब्ल्यू० ७८१० से भी।

५०६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
२१ फरवरी, १९३९

बा,

तेरे पत्र बराबर मिलते हैं। मेरी डाक यहाँसे तो ठीक जाती है, लेकिन वहाँ समयपर क्यों नहीं मिलती, इसकी जाँच करूँगा। अपनी तबीयतका अच्छी तरह

१. लॉर्ड लिनलिथगोने १९ फरवरीके अपने पत्रमें अपने नाम गांधीजीके १२ फरवरीके पत्रका उल्लेख किया था और कहा था कि "जिस लेखको आपने मुझे दिखा देनेकी कृपा की थी उसे प्रकाशित करनेके आपके फैसलेके बारेमें मुझे जरा भी गलतफहमी नहीं है। (यह सम्भवतः ३०-१-१९३९ का "जयपुर" शीर्षक लेख था, जिसके बारेमें गांधीजीने लॉर्ड लिनलिथगोको ३१-१-१९३९ के अपने पत्रमें यह लिखा था कि मैं इसे प्रकाशित नहीं कर रहा हूँ, और जिसे, जाहिर है, बादमें उन्होंने प्रकाशित करनेका फैसला कर लिया।) गांधीजीके उनसे भेंटके सुझावके विषयमें उन्होंने कहा कि मैं समझता हूँ कि यह समय उसके लिए उपयुक्त नहीं है। फिर भी यदि आप समझते हैं कि हमारी भेंट होनी चाहिए तो मुझे आपसे मिलकर बड़ी खुशी होगी। पर मैं चाहूँगा कि वह मेरी राजपूतानाकी यात्राके बाद हो।

ध्यान रखना। मुझे ब्योरेवार समाचार मिलने ही चाहिए। बाकी प्रभा लिखेगी। सुशीलाकी खुराककी देखभाल मैं आजकल नहीं कर पाता। तूने ठीक जताया।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३४

५०७. बातचीत : हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके प्रतिनिधियोंके साथ[1]

सेगाँव
२१ फरवरी, १९३९

सत्याग्रही, सेनापतिकी तरह, लड़ाईके लिए समय और स्थानका चुनाव सदा स्वयं करता है। अपने ध्येयको आगे बढ़ानेके अन्य सभी साधन जब तक चुक न जायें, सत्याग्रहको प्रयोगमें नहीं लाना चाहिए। सशस्त्र युद्ध तक में लड़ाई स्थगित कर देना और पीछे हटना सामरिक दाँव-पेचोंके अंतर्गत माने जाते हैं।

[सत्याग्रह] स्थगित करनेका अर्थ यह नहीं है कि यदि लोगोंको न्यायोचित, शान्तिपूर्ण और रचनात्मक गतिविधियोंमें भाग लेते हुए गिरफ्तार किया जाये, तो भी गिरफ्तारीका सामना न करो। ये गतिविधियाँ सविनय अवज्ञा नहीं होंगी। [सत्याग्रह] स्थगित करनेका आपका फैसला बुद्धिमत्तापूर्ण है। इससे आपने कुछ भी खोया नहीं है। परिस्थितिकी फिर माँग होनेपर और ऐसे पर्याप्त कारण उपस्थित होनेपर जो सत्याग्रह फिर शुरू करनेको बाध्य करते हों, आप सत्याग्रह फिर आरम्भ कर सकते हैं। इसमें ऐसा कुछ नहीं है जो उस हालतमें आपको उससे रोक सके।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-२-१९३९

१. हैदराबाद राज्य-कांग्रेसका एक प्रतिनिधि-मण्डल २१-२-१९३९ को गांधीजीसे मिलने आया था और उसने उन्हें अपने इस फैसलेकी सूचना दी थी कि सत्याग्रह कुछ और समय तक स्थगित रहेगा। सत्याग्रह २६-१२-१९३८ को या उसके आसपास स्थगित किया गया था। देखिए "पत्र : अकबर हैदरीको", पृ० २७४ और "हैदराबाद राज्य-कांग्रेसके लिए वक्तव्यका मसविदा", पृ० २६८-९।

५०८. शरारतपूर्ण सुझाव

एक पत्र-लेखकने मुझे 'बॉम्बे क्रॉनिकल' की एक कतरन भेजी है, जो निम्न प्रकार है:

> 'मैनचेस्टर गार्जियन' को लिखे एक पत्रमें श्री रशब्रुक विलियम्सने कहा है कि पिछले वर्षके कुछ अन्तिम महीनोंके दौरान कांग्रेस हाई कमानके दक्षिण-पंथी लोग निश्चित रूपसे ऐसा रुख अपनाते जा रहे थे जिसपर से महात्मा गांधी चाहते तो केन्द्रीय सरकारके सम्बन्धमें अधिकारियोंसे कुछ वैसी ही बातचीत चला सकते थे जैसी बातचीत उन्होंने प्रान्तीय सरकारोंके सम्बन्धमें सफलतापूर्वक चलाई थी। तब जो चीज कांग्रेसको संघ-व्यवस्थाकी स्थापना जैसी जान पड़ी उसके, कारण उसे अपनी शक्तिका हिसाब-किताब लगाना आवश्यक हो गया। उसे मुसलमानोंका बहुत कम समर्थन प्राप्त था और उनके समर्थनसे वंचित रहकर — जिसका कारण मुस्लिम लीग थी — वह केन्द्रमें तब तक सरकार नहीं बना सकती जब तक कि उसे नये मित्र न मिल जाते। इसलिए देशी राज्योंपर ध्यान केन्द्रित करना जरूरी था, ताकि राज्योंके प्रतिनिधियोंके रूपमें केन्द्रीय विधान-सभामें ऐसे लोग आ सकें जो कांग्रेस-कार्यक्रमके प्रति सहानुभूतिका रुख रखते हैं।
>
> वे आगे कहते हैं: "यह बात कुछ कम महत्वकी नहीं है कि डॉ० पट्टाभि सीतारामय्याका देशी राज्य प्रजा परिषद्से निकटका सम्बन्ध है, लेकिन श्री बोसके [कांग्रेस-अध्यक्ष] चुने जानेसे दक्षिण पक्षको भारी धक्का लगा है और इसके कारण, हाई कमानके मनमें अधिकारियोंसे जो और जैसा भी मेल-मिलाप कायम करनेकी बात थी, वह भविष्यके लिए टल गया है। श्री बोसको देशी राज्य पसन्द नहीं है, लेकिन साथ ही उन्हें संघ-व्यवस्था भी अच्छी नहीं लगती। इसलिए नई केन्द्रीय संस्थाओंपर कांग्रेस-प्रभुत्व कायम करनेकी तैयारीके सिलसिलेमें राज्योंको मित्र बनानेकी कोशिशके प्रति उनकी कोई सहानुभूति नहीं हो सकती। बात यह है कि ब्रिटिश भारतके भाग्यका निबटारा ब्रिटिश भारत ही करे, इस दृष्टिसे वे देशी राज्योंको अभी पास नहीं फटकने देना चाहते। वैसे उनके मनमें यह मनसूबा तो है ही कि अन्ततः देशी नरेशोंको स्थान-च्युत करके देशी राज्योंको अपनी कल्पनाके स्वशासित भारतमें शामिल कर लें।"

श्री विलियम्स एक पुराने 'शत्रु' हैं। असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें उन्होंने एक सरकारी अब्द-कोश (इयर-बुक) का सम्पादन किया था। उसमें उन्होंने अपनी

कल्पनाकी खीचतानके वलपर बहुत-सी वाते लिखी, और जिन तथ्योंके उल्लेखसे वे किसी तरह वच नही सकते थे, उन्हे उन्होने विल्कुल अपने ही रगमे रँगकर पेश किया। और अगर यह मान ले कि उपर्युक्त पत्रमे उनकी वाते सही-सही उद्धृत की गई है तो कहना होगा कि 'मैनचेस्टर गार्जियन' को लिखे अपने पत्रमें उन्होंने फिर वही भूमिका दोहराई हैं। यह कहना विलकुल गलत है कि काग्रेस हाई कमानके दक्षिणपथी लोग निश्चित रूपसे या किसी रूपमे वैसा रुख अपनाते जा रहे थे जिसकी कल्पना श्री विलियम्सने की है। मुसलमानोके समर्थनके सम्वन्धमे कही गई वात दुष्टतापूर्ण है। मेरे मनमें क्या है, मै जानता हूँ, और जहाँ तक काग्रेसके मनकी वात मै जानता हूँ वहाँ तक कह सकता हूँ कि न तो काग्रेसने और न मैंने ही कभी भी इस वातकी कल्पना की है कि मुसलमानोके समर्थनके विना भी सघ-व्यवस्था कायम हो सकती है। सच तो यह है कि जब तक मुसलमान संघ-व्यवस्थाका विरोध कर रहे हैं तव तक काग्रेसको उस व्यवस्थाके आनेकी कोई फिक्र करनेकी जरूरत ही नही है। इसलिए जब तक पूर्ण साम्प्रदायिक एकता स्थापित नही हो जाती तब तक कोई भी काग्रेसी सघ-व्यवस्थाकी — चाहे वह सरकारी टकसालमें तैयार की गई हो या विशुद्ध स्वदेशी साँचेमें — वात न सोच सकता है, न कर सकता है।

डॉ० पट्टाभिके वारेमे तो सारा हिन्दुस्तान जानता है कि जब मौलाना साहबने अपनी उम्मीदवारी वापस ले ली तब अन्तिम क्षणमें उनकी उम्मीदवारीका खयाल आया और सो भी इसलिए कि तब सुभाष वावूके अलावा केवल वही एक उम्मीदवार रह गये थे। राज्य प्रजा परिषद्से उनके सम्वन्धके कारण श्री विलियम्सको एक ऐसा तथ्य जरूर मिल गया जिसके सहारे वे अपनी काल्पनिक दलीलका महल खड़ा कर पाये।

रही सुभाष बाबूके सम्वन्धमे श्री विलियम्स द्वारा कही गई व्यंग्योक्तियाँ, सो सुभाष वावू अपना वचाव स्वय कर सकनेमे समर्थ हैं। लेकिन उनके साथ एक सालसे मेरा जो गहरा सम्पर्क रहा है उसके दौरान मैंने उन्हें कभी भी देशी राज्योके वारेमे वैसा विचार व्यक्त करते नही सुना जैसा विचार रखनेका आरोप उनपर श्री विलियम्स लगाते हैं। मुझे पूरा यकीन है कि यदि देशी राज्य अपनी-अपनी प्रजाके साथ उचित बरताव करनेके बारेमें काग्रेसके साथ किसी समाधानपर पहुँच जाये तो सुभाष वावू किसी भी अन्य काग्रेसी-जैसी उत्सुकतासे उनके साथ सौदा पटानेको तैयार हो जायेगें। लेकिन वे सघ-व्यवस्थाकी स्थापनाका खयाल करके ऐसा नही करेगे।

देशी राज्योके आन्दोलनसे मेरा सम्बन्ध प्रसगवश ही जुड गया है। देशी राज्योमें उत्तरदायी शासनकी स्थापना अपने-आपमे एक लक्ष्य है और सघ-व्यवस्थासे — जिसकी स्थापना शायद कभी हो ही नही — उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। जब तक काग्रेस और मुसलमान दोनो उस व्यवस्थाके लिए तैयार नही हो जाते तब तक तो वह स्थापित होगी ही नहीं। लेकिन देशी राज्योकी प्रजाको स्वतन्त्रता

तो हर हालतमें मिलनी है। ऐसा नही हो सकता कि जिसे ब्रिटिश भारत कहा जाता है, वह तो स्वतन्त्र हो जाये और देशी राज्योकी प्रजा जजीरोमे जकड़ी रहे।

सेगाँव, २३ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-३-१९३९

५०९. तार: वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको[1]

[२३ फरवरी, १९३९][2]

राइट ऑनरेबिल शास्त्री
मद्रास

मुझे कतई खबर नही थी कि आपके विश्वविद्यालयमे कोई गम्भीर सकट था। कल मिलनेवाले विस्तृत पत्रसे धक्का लगा और मेरा मन आपके पास दौड गया। मुझे उन छात्रोपर तरस आता है जो आपके नेतृत्वके इतने अयोग्य सिद्ध हुए है।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स; सौजन्य: प्यारेलाल।

५१०. पत्र: कस्तूरबा गांधीको

सेगाँव
२३ फरवरी, १९३९

बा,

तेरी शिकायत है कि मैं तुझे पत्र नही लिखता, लेकिन आज तेरा पत्र नही आया; क्या बात है? यहाँ सब ठीक ही चल रहा है। चिन्ता करनेकी कोई बात नही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३४

१. श्रीनिवास शास्त्री इस समय अण्णामलै विश्वविद्यालयके उप-कुलपति थे।
२. देखिए "वक्तव्य: समाचारपत्रोंको", पृ० ४९४।

५११. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

२३ फरवरी, १९३९

राजकोटमे कैदियोके और गाँवोके अन्यान्य लोगोके प्रति अमानुषिक व्यवहार किया जा रहा है और इसके खिलाफ कैदी भूख-हडताल कर रहे हैं, इस आशयके तार मेरे पास रोज आ रहे है। राजा साहबके वचन-भगके फलस्वरूप जबसे सघर्ष दुबारा शुरू हुआ है तबसे राजकोटका मामला प्रतिदिन अधिकाधिक गम्भीर होता जा रहा है। पूछताछ करनेवाले, जो इस बातपर बहुत उद्विग्न है, यह जान ले कि मै रियासतके अधिकारियोसे तारोके आदान-प्रदान द्वारा बातचीत चला रहा हूँ। ऐसी आशा करता हूँ कि शीघ्र ही मै सब लोगोको वस्तुस्थितिसे अवगत करा सकूंगा। इस दौरान सत्याग्रहियोको यह समझ लेना चाहिए कि उन्हे सबसे पहले जो गुण प्रकट करना है वह है — प्रसन्नतापूर्वक और किसीके भी प्रति राग और द्वेष रखे बिना कष्ट सहनेकी अपरिमित क्षमता।

[अग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-२-१९३९

५१२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

२३ फरवरी, १९३९

लॉर्ड ब्रैबोर्नकी मृत्युके समाचारसे मुझे गहरा शोक हुआ है।[2] मुझे उनसे घनिष्ठ मित्रताका सौभाग्य प्राप्त था।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-२-१९३९

१. यह हरिजन, ४-३-१९३९ में भी "गांधीजीज स्टेटमेंट ऑन राजकोट" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. लॉर्ड ब्रैबोर्नका, जो बम्बई तथा बगालके गवर्नर रह चुके थे, २३ फरवरीको कलकत्तामें निधन हो गया था।

५१३. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको[1]

२३ फरवरी, १९३९

अण्णामलै विश्वविद्यालयसे अपने एक साथीके नाम भेजा हुआ एक पत्र[2] मैंने कल देखा। इसमे विद्यार्थियोकी हड़तालका सविस्तार विवरण है। पत्रके अनुसार हडताली छात्र हड़तालमे शामिल न होनेवाले छात्रोको कक्षाओमे जानेसे रोकनेके लिए प्रवेशद्वारोके सामने जमीनपर लेट जाते हैं और जब कक्षाएँ लगती हैं तो वे कक्षाओके कमरोमे दाखिल हो जाते है, चिल्लाते है और दूसरे तरीकोसे कक्षाओका चलना असम्भव बना देते है। पत्रके अन्तमे कहा गया है कि यदि हडतालियोको यह पता चल जाये कि उनके द्वारा अपनाये गये तरीके मेरी रायमें अहिंसाके सिद्धान्तके विपरीत है तो वे शायद हडताल बन्द कर दें।

मैंने जो विवरण उद्धृत किया है यदि वह सही है तो मुझे यह कहनेमें कोई सकोच नही है कि हडतालियो द्वारा अपनाये गये तरीके अहिंसात्मक तो है ही नही अपितु वे निश्चित रूपसे हिंसात्मक है। मै हड़तालियोसे प्रार्थना करूँगा कि वे जो तरीके अपना रहे है उनसे बाज आ जाये और जो छात्र कक्षाओमें जाना चाहते है उन्हे बिना किसी रुकावटके जाने दे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-२-१९३९

५१४. तार : वाइसरायके निजी सचिवको

२४ फरवरी, १९३९

वाइसरायके निजी सचिव
नई दिल्ली।

राजकोटके प्रथम सदस्यको निम्नांकित तार भेजा है:[3]
कृपया इसे वाइसराय महोदयके आगे प्रस्तुत कीजिए।

गांधी

अंग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७८११) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिडला।

१. यह हरिजन, ४-३-१९३९ में "स्टुडेन्ट्स स्ट्राइक ऐट अण्णामलै" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए "क्या यह अहिंसा है?", पृ० ५०७-१०।

३. तारके पाठके लिए देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ४९८-५०२।

५१५. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

सेगांव
२४ फरवरी, १९३९

बा,

अब तो तुझे पत्र मिलते रहते होंगे। लडकियोसे जितनी सेवा ली जा सकती है, उतनी तो लेता हूँ। धीरज और हिम्मतसे काम लेना। सभी ठीक होकर रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ३४

५१६. बातचीत : एक आश्रमवासीके साथ[1]

सेगांव
२४ फरवरी, १९३९

कौन जानता है? परन्तु लगता है, वैसा नही होगा। मुझे आशा है कि यह यात्रा बहुत थोडे समयकी होगी। राजकोटके राज-परिवारसे मेरे सम्बन्ध ऐसे है कि मै उनसे साफ-साफ बातचीत कर सकता हूँ। या तो ठाकुर साहब इकरारनामेको बहाल करेंगे या मुझसे रेजिडेंटसे बात करनेको कहेंगे और उनके साथ यह मामला निबटानेमे मुझे देर नही लगेगी। मामला इतना स्पष्ट है कि मुझे किसी गम्भीर प्रतिरोधकी आशका नही है। इसमे मेरी अहिंसाकी कसौटी भी होगी। लोग सोच सकते है कि बुढापेमे मुझपर यह क्या सनक सवार हो गई है कि मै राजकोट-जैसी छोटी-सी रियासतको इतना महत्व देता हूँ। परन्तु मेरे मनकी रचना ऐसी ही है। जब मेरी नैतिक भावनापर आघात होता है तब मै चुप नही बैठा रह सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

१. प्यारेलालके "द राजकोट फास्ट" से उद्धृत। राजकोट जानेका गांधीजीका निर्णय सुननेपर एक आश्रमवासीने उनसे पूछा था कि उनके कबतक वापस आनेकी आशा है और क्या राजकोटमें कस्तूरबाकी तरह उनके भी "राज्यका मेहमान" बनाये जानेकी सम्भावना है।

५१७. पत्र : विजयाबहन म० पंचोलीको

[२५ फरवरी, १९३९ के पूर्व][1]

चि० विजया,

अब तो मैं तेरे नजदीक आ रहा हूँ। इसका मतलब यह नही कि तुम दोनो को राजकोट आना चाहिए। अपना स्वास्थ्य ठीक करना। बीमार मत पड़ना। अब तो आनन्दमें होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१०५) से।

५१८. दानकी जगह काम[2]

जो भूखे और बेकार हैं उन्हें भगवान केवल एक ही विभूतिके रूपमें दर्शन देनेकी हिम्मत कर सकते हैं; वह विभूति है काम और अन्नके रूपमें वेतनका आश्वासन।

नंगोंको जिनकी जरूरत नहीं है ऐसे कपड़े देकर मैं उनका अपमान नहीं करना चाहता। मैं उसके बदले उन्हे काम दूंगा क्योंकि उसीकी उन्हें सख्त जरूरत है। मैं उनका आश्रयदाता बननेका पाप कभी नहीं करूँगा। लेकिन यह महसूस करनेपर कि उनको तबाह करनेमें मेरा भी हाथ रहा है, मैं उन्हें समाजमें सम्मानका स्थान दूंगा। उन्हे जूठन या उतरन तो हरगिज नहीं दूंगा। मैं उन्हे अपने अच्छेसे-अच्छे खाने और कपड़ेमें हिस्सेदार बनाऊँगा और उनके परिश्रममें खुद योग दूंगा। बिना प्रामाणिक परिश्रमके किसी भी चंगे मनुष्यको मुफ्तमें खाना देना मेरी अहिंसा बरदाश्त ही नहीं कर सकती। अगर मेरा वश चले तो जहाँ मुफ्त खाना मिलता है ऐसा प्रत्येक 'सदावर्त' या 'अन्नछत्र' मैं बन्द करा दूं। उनकी बदौलत राष्ट्रका पतन हुआ है, और आलस्य, सुस्ती, दंभ तथा गुनहगारीको बढावा मिला है।

हरिजन-सेवक, २५-२-१९३९

१. २५ फरवरीको गांधीजी राजकोटके लिए रवाना हो गये थे।

२. मूल रूपमें यह लेख गांधी सेवा संघकी मासिक पत्रिका *सर्वोदय* में प्रकाशित हुआ था।

५१९. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेगाँव, वर्धा
२५ फरवरी, १९३९

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

राजकोट रियासतके नाम मेरे तारका पाठ आपको कल रात तारसे भेजा गया था।[1] तथापि, मैं उसकी एक प्रति, साथ ही राजकोट का उत्तर और उसपर मेरे जवाबकी प्रतियाँ भी सलग्न कर रहा हूँ।

मेरे लिए राजकोटका प्रश्न एक अत्यन्त महत्वपूर्ण नैतिक प्रश्न बन गया है। मैं आशा करता हूँ कि आप इसे समझते है और हर प्रकारसे आप मेरी सहायता करेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे : लॉर्ड लिनलिथगो पेपर्स; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

५२०. पत्र : अकबर हैदरीको[2]

सेगाँव, वर्धा
२५ फरवरी, १९३९

प्रिय सर अकबर,

आपके इसी माहके पत्रोके लिए, जिनमें से दो १६ तारीखके और एक २१ तारीखका है, आभारी हूँ।

राज्य-काग्रेसके बारेमे अभी फिलहाल तो हमे मान लेना चाहिए कि इस विषयमे हमारा मतभेद है। राज्य-काग्रेसको दी गई मेरी सलाह आपने देखी ही होगी।[3] लेकिन इस बातको और ज्यादा सुनिश्चित करनेके लिए मै सम्बन्धित कतरन

१. देखिए "तार. वाइसरायके निजी सचिवको", पृ० ४९४ और "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ४९८-५०२।

२. पत्रकी फोटो-नकल १९६९-७० में नई दिल्लीमें आयोजित गांधी-दर्शन प्रदर्शनी, आन्ध्र प्रदेशके मण्डपमें प्रदर्शित की गई थी।

३. देखिए पृ० २६८-९।

इसके साथ सलग्न कर रहा हूँ। आपने राज्य-काग्रेसका वह घोषणापत्र भी देखा होगा जिसमे मेरी सलाह मानी गई है। आप शायद यह कहेगे कि सलाह मानना भी काफी नही है। तथापि, मैं आशा रखता हूँ कि किसी दिन आप मुझसे सहमत हो जायेंगे और राज्य-कांग्रेसके कैदियोको रिहा कर देंगे और उसे सामान्य रूपसे कार्य करने देंगे।

जहाँ तक महात्मा नारायणस्वामीका सम्बन्ध है, आपने जो-कुछ कहा है वह मैं समझता हूँ। मुझे खुशी है कि मैंने इस मामलेका जिक्र आपसे किया।[1] अब मैं अपने सूचना देनेवालोको इस बातपर राजी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ कि वे उस गलतीको सुधार ले जो मैं समझता हूँ उनसे बिलकुल अनजानेमें हो गई है।

कैदियोके बारेमें आपके पत्रोके सन्दर्भमे मैं आपकी इस बातसे सहमत नही हो सकता कि घी भी विलासकी वस्तु है। परन्तु मैं आपका सुझाव ध्यानमें रखूँगा और किसी ऐसे व्यक्तिका नाम अवश्य सोच निकालूँगा, जिससे मैं जाकर आपकी जेलोको देखनेके लिए कह सकूँ।

मुझे खुशी है कि आप स्वस्थ हो गये है और प्रस्तावित सुधारोंपर काम कर रहे है। वे प्रस्ताव, मुझे आशा है, समयकी भावनाके अनुकूल होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००९८) से; सौजन्य: आन्ध्रप्रदेश सरकार।

५२१. वक्तव्य: समाचारपत्रोंको[2]

२५ फरवरी, १९३९

मेरे और राजकोटकी राज्य परिषद्के प्रथम सदस्य[3] के बीच निम्नलिखित तारोंका व्यवहार[4] हुआ है:

> सुना है कि सरधारमे बन्दियोके साथ अमानुषिक बर्तावके कारण राजकोटकी जेलमे सत्याग्रही राजबन्दी अनशन कर रहे। क्या आप इसपर कुछ प्रकाश डाल सकते है? — गाधी (दिनांक २०-२-१९३९)
>
> आपका तार मिला। मैं कल खुद सरधार गया था। कैदियोंके साथ दुर्व्यवहार किये जानेकी बात बिलकुल असत्य है। — परिषद्का प्रथम सदस्य (दिनांक २२-२-१९३९)

१. देखिए पृ० ४८७।

२. यह वक्तव्य हरिजन, ४-३-१९३९ में "गांधीजीज स्टेटमेंट ऑन राजकोट" शीर्षकके अन्तर्गत भी छपा था।

३. खान बहादुर फतेह मोहम्मद खान।

४. यहाँ उद्धृत तार किसी अन्य सूत्रसे प्राप्त नही हो सके।

तारके लिए धन्यवाद। अनशनके बारेमें आपके तारमें कुछ नहीं लिखा है। ज्यादतियोंके बारेमें एक और लम्बा तार आया है, जिसपर विश्वास न करना मेरे लिए मुश्किल है। दिनों-दिन यह इच्छा प्रबल होती जा रही है कि मैं खुद कूद पड़ूँ। ठाकुर साहबके वचन-भंगका कष्ट अब आतंकपूर्ण कार्योंकी अधिकाधिक खबरें मिलनेके कारण असह्य हो गया है। ठाकुर साहब या परिषद् को झमेलेमें डालनेकी मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है। मैं चाहता हूँ कि आप इस बूढ़ेकी बात सुन लें, जो राजकोटका मित्र होनेका दावा करता है।
—गांधी (दिनांक २१-२-१९३९)

सरवारके बन्दियोंके साथ दुर्व्यवहार किये जानेके आरोपोंमें जरा भी सचाई नहीं है। सारी कहानी कपोल-कल्पित है। राजकोटके जैसी ही दैनिक खाने-पीने और सोनेकी व्यवस्था वहाँ भी है। इसी आशयकी सूचना मैंने स्थानीय जेलके उन बन्दियोंको, जो अनशनपर हैं, लिखकर दे दी है। इसपर भी वे अविचारपूर्वक अनशन करनेपर तुले हुए हैं। आपको मैं विश्वास दिलाता हूँ कि [कैदियोंके साथ] उचित बर्ताव हो, इसके लिए जो-कुछ सम्भव है वह सब किया जा रहा है। कृपाकर फिक्र न कीजिए। —प्रथम सदस्य (दिनांक २३-२-१९३९)

अगर सब समाचार कपोल-कल्पित ही हैं, तो मेरे और मेरे सहकर्मियोंके लिए यह बड़ी गम्भीर बात है। अगर इनमें सच्चाई है, तो यह राज्यके अधिकारियोंके लिए बुरी बात है। इधर, अनशन भी जारी है। मेरी चिन्ता असह्य है। इसलिए, मैं तो कल रातको राजकोट रवाना होनेका विचार कर रहा हूँ। मेरे साथ एक चिकित्सा सहायक, सचिव और टाइपिस्ट रहेंगे। मैं सत्यकी खोजमें और शान्ति स्थापित करनेवालेके रूपमें राजकोट आ रहा हूँ।

मेरी गिरफ्तार होनेकी इच्छा नहीं है। मैं खुद सारी बातें जानना चाहता हूँ। अगर सहकर्मियोंपर बातें गढ़नेका दोष साबित हो जायेगा, तो मैं उसका पर्याप्त प्रायश्चित्त करूँगा। ठाकुर साहबसे भी प्रार्थना करूँगा कि उन्होंने प्रजाके साथ जो वचन-भंग किया उसका वे परिमार्जन कर दें। मैं प्रजासे कहूँगा कि वह कोई प्रदर्शन न करे और सरदारसे कह रहा हूँ कि मेरे शान्ति-प्रयत्नोंके दौरान राजकोटमें स्थानीय या बाहरी लोगों द्वारा जो सत्याग्रह चल रहा है, उसे मुल्तवी रखा जाये।[1] अगर सद्भाग्यसे ठाकुर साहब और परिषद् समझौतेको इस शर्तके साथ ही सही फिरसे ज्यों-का-त्यों मान लें कि सुधार-कमेटीके सदस्योंमें [दोनों पक्षोंकी सहमतिसे] कुछ हेरफेर किया जा सकेगा, और राजबन्दी फौरन छोड़ दिये जायें तथा जुर्माने वापस कर दिये जायें, तो मैं अपनी प्रस्तावित यात्रा रद कर दूँगा। सुधार-कमेटीके सदस्योंके बारेमें समझौता करनेके लिए पूरे अधिकार देकर बातचीत की खातिर आप किसी अधिकारीको यहाँ भेज सकते हैं। सरदार पटेल द्वारा नामजद किये गये

१. २५ फरवरी, १९३९ को वल्लभभाई पटेलने एक वक्तव्य द्वारा सत्याग्रह मुल्तवी कर दिया था।

सदस्योका बहुमत रहनेकी शर्त है। ईश्वर ठाकुर साहब और उनकी परिषद्के सदस्योका मार्ग-दर्शन करे। क्या मैं एक्सप्रेस तारसे जवाबकी आशा करूँ? ——गाधी (दिनाक २४-२-१९३९)

अपने तारके बाद आपको मालूम हुआ होगा कि कल रातको अनशन भंग कर दिया गया। श्री नानालाल जसाणी और श्री मोहनलाल गढ़ादावालाके तारसे आपको विश्वास हो गया होगा कि अनशनका कोई औचित्य नहीं था। ठाकुर साहब ऐसा नहीं समझते कि उनकी तरफसे वचन-भंग किया गया है और इस बातके लिए वे बहुत उत्सुक हैं कि उनके द्वारा नियुक्त की गई प्रतिनिधि-कमेटी शान्त परिस्थितिमें अपना कार्य शुरू करे, ताकि जहाँ तक हो सके जल्दी-से-जल्दी वे कमेटीकी सिफारिशोंपर विचार करके जिन सुधारोंको ठीक समझें, लागू कर दें। ठाकुर साहबका विचार है कि ऐसी हालतमें आप भी मानेंगे कि आपके अभी आनेसे कोई फायदा नहीं हो सकता। वे एक बार फिर आपको आश्वासन देते हैं कि न तो कोई ज्यादती या आतंकपूर्ण कार्रवाई करने दी गई है, और न करने दी जायेगी। ——प्रथम सदस्य (दिनांक २४-२-१९३९)

आपका तार मेरी हार्दिक प्रार्थनाका कोई जवाब नही है। मैं अपने शान्तिके मिशनपर आज राजकोटके लिए रवाना हो जाऊँगा। ——गाधी (दिनांक २५-२-१९३९)

ये तार अपनी कहानी खुद कहते हैं। मुझे खुशी है कि अनशन तोड दिया गया है। इससे चिन्ताका एक कारण दूर हो गया है। लेकिन दुर्व्यवहारके समाचार बनावटी होनेका उनका आरोप कायम है। राजकोटके कई कार्यकर्ताओको मैं खुद जानता हूँ। अगर उन्होंने अधिकारियोके खिलाफ ज्यादतियोके आरोप गढनेके लिए झूठका सहारा लिया है, तो मुझे और उन साथियोको इसका पूरा परिमार्जन करना पड़ेगा। दूसरी रियासतोके सघर्षोकी तरह राजकोटका सघर्ष भी भारतकी स्वतन्त्रताके सघर्षका ही एक हिस्सा है। एक-दूसरेपर कीचड़ उछालनेसे कभी काम नही बनता। सत्यका जरूर पता लगाना चाहिए।

राजकोट राज्य-परिषद्के प्रथम सदस्यका तार इस बातसे इनकार करता है कि कोई वचन-भग किया गया है। इससे मैं चकरा गया हूँ और मेरी समझमे नही आता कि इस खण्डनके क्या मानी है। समझौतेकी सूचना और उसके बाद सरदार पटेलसे मतभेद होनेकी सूचना, इन दोनोको पढा जाये तो उनमें साफ विरोध देखा जा सकता है।

मैंने यह कहा है कि इस वचन-भंगके लिए राजकोटका रेजिडेंट जिम्मेदार है।[1] मुझसे यह कहा गया है कि मैंने आरोप लगानेमे जल्दी की है और इसका दूसरा पक्ष भी है। अगर ऐसा है, तो मेरा यह फर्ज है कि मैं उसे जानूँ। मै उनसे मुलाकात करनेकी कोशिश करूँगा और अगर मुझे यह मालूम हुआ कि मैंने उनके साथ

१. देखिए पृ० ३८१-६ और ४०३-६।

गैर-इन्साफी की है, तो मै सार्वजनिक रूपसे माफी मांगूंगा। मै समझता हूँ कि एक-दूसरेपर दोषारोपण होते रहनेकी हालतमे तकलीफे जारी रहने देना अनुचित है। इस बारेमे मै जो कम-से-कम कर सकता हूँ, वह यह है कि मै राजकोट जाऊँ और सत्यका पता लगाकर ठाकुर साहबको इस बातके लिए आमन्त्रित करूँ कि जो प्रत्यक्ष ही वचन-भंग है उसे वे दुरुस्त करे। अलबत्ता, यदि मुझे यह मालूम हो जाये कि इस आरोपका खण्डन किसी प्रकार उचित ठहराया जा सकता है तो और बात है।

अगर कार्यकर्ताओ द्वारा लगाये गये आरोप सच है, तो इस बातका प्रयत्न किया जायेगा कि कोई ऐसा रास्ता निकाला जाये, जिससे कि मनुष्यके सबसे निकृष्ट भावोका ऐसा प्रदर्शन न हो सके। उसको उसकी निकृष्ट भावनाओसे बचाया जाना चाहिए। स्वातन्त्र्य युद्ध अगर अहिंसक है तो उसका यह भी काम है कि चाहे अधिकारियोमें गुण्डे हो या प्रजामे, उनको सुधारा जाना चाहिए। राजकोट आकर मुझे अपना पूरा जोर लगाकर समाजके गुण्डोसे निपटनेका रास्ता खोजना है। इस मामलेमें राजकोटका मामला एक आजमाइश है। मै इसलिए राजकोट जा रहा हूँ कि मै, जैसाकि मै हमेशा कहता रहा हूँ, अब भी रियासतोका वही पुराना मित्र हूँ।

इस बातसे मुझे बहुत तकलीफ होती है कि किन्ही परिस्थितियोसे — जिन्हे मै शायद सर्वांशमे नही जानता — लाचार हो जानेके कारण राजकोटके ठाकुर साहबको प्रजाको दिये गये वचनका उल्लंघन करना पड़ा। मेरी रायमे अगर हिन्दुस्तान-भरके नही तो कम-से-कम काठियावाड़के राजाओ और उनके सलाहकारोका यह कर्तव्य है कि वे इस गलतीको, अगर यह गलती ही हो तो, दुरुस्त कराये। यदि विश्वासकी कोई कीमत ही न रहे, तो फिर कोई सम्मानपूर्ण आपसी समझौता असम्भव हो जाता है। जब मै विश्वास-भग होते देखता हूँ, जैसाकि इस मामलेमे हुआ है, तो मुझे जीवन भार-सा मालूम होने लगता है। यह बताना अनुचित न होगा कि समझौतेका मसविदा[1] मैने ही बनाया था, जिसपर मामूली हेरफेरके बाद ठाकुर साहबने दस्तखत किया था। मै यह जानता हूँ कि सरदार वल्लभभाई पटेलने इस बातमे कोई कोशिश उठा न रखी थी कि अच्छी तरह सोच-समझकर ही उसपर दस्तखत किये जाये।

चूँकि मै शान्तिके सन्देशवाहकके रूपमे ही राजकोट जा रहा हूँ, अतः मैने सरदार पटेलसे कहा है कि जब तक मै प्रभुके मार्गदर्शनमे कष्ट दूर करनेके लिए अपना विनम्र प्रयत्न कर रहा होऊँ तब तकके लिए राजकोटमे सत्याग्रह-आन्दोलन स्थगित रखे। शरीर इन दिनो अस्वस्थ है इसलिए जनताको चाहिए कि वह स्टेशनो पर कोई प्रदर्शन न करे। आन्दोलन स्थगित रखनेकी अवधिमे राजकोटवासियोको अधिकारियोकी बात माननी चाहिए। समझौतेकी बातचीतके दौरान मुझे कोलाहलसे बचे रहनेकी जरूरत है। जिनका प्रार्थनामे विश्वास है, मै उनकी मूक प्रार्थना-भर चाहता हूँ। हालाँकि हिन्दुस्तानके मानचित्रमे राजकोट एक बिन्दुके समान है, तो भी

१. देखिए "राजकोटके ठाकुर साहबके लिए वक्तव्यका मसविदा", पृ० १५०-१।

जिस सिद्धान्तकी प्रतिष्ठाके लिए मैं राजकोट जा रहा हूँ, वह ऐसा है जिसके बगैर समाज छिन्न-भिन्न होनेसे बच नही सकता।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २५-२-१९३९

५२२. पत्र: मणिलाल गांधीको

सेगाँव, वर्धा
२५/२६ फरवरी, १९३९

चि० मणिलाल,

तेरा पत्र कल मिला। तू बांचनेवाला कमालका है, श्लेसिन भी कमाल की है। 'मा' पढनेके बदले 'एम० ए०' क्यो नही पढ़ा? किसी स्त्रीको भेजनेकी बात ही कहाँ थी? मैंने तो श्लेसिनके सुझावके अनुसार काम किया। जिस आदमीको भेजना है, वह महादेवकी बहन निर्मलाके पतिका भाई है। तुझे तार करके पूछना चाहिए था।

२६ फरवरी, १९३९

लेकिन मैं आशा करता हूँ कि महादेवने तुझे सारा विवरण लिख दिया होगा। न लिखा हो तो भी अब तो तू समझ गया होगा। इसका वेतन अगर तू वहाँसे न दे सके, तो यहाँसे देनेकी व्यवस्था है। गुजराती, अंग्रेजी वगैरहका काम सँभाल सकता है। तुझपरसे बडा बोझ उतर जायेगा। अब तुझे जैसा करना हो, वैसा तार करना। यदि तुझे इसे बुलानेकी अनुमति न मिले, तो वैसा तार करना।

मि० कैलेनबैक अच्छे हो गये है। यो अभी सावधानीकी जरूरत तो है ही। मैं राजकोट जा रहा हूँ। इसकी चिन्ता मत करना। आशा करता हूँ कि काम निबटा कर ही वापस लौटूंगा। भगवानकी प्रेरणासे जा रहा हूँ। जो वे करायेंगे सो करूँगा। बा भी मजेमे है। कांग्रेसके बारेमे भी चिन्ता मत करना। तू अपने काममे डूबा रहे, इतना ही काफी है।

मेरे साथ प्यारेलाल, सुशीला और कन्हैया हैं। रामी, मनु वगैरह आकर मिल गये। राजकुमारी सेगाँवमे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८९५) से।

५२३. वचनकी रक्षाका प्रश्न

बम्बईके रास्ते राजकोट जाते हुए मुझे सारा दिन काठियावाड मेलके लिए इन्तजार करना पड़ रहा है। यह वक्त मैं 'हरिजन'के लिए लिखनेमें लगा रहा हूँ और मैंने निम्नांकित टिप्पणी पढ़ी:

> बम्बई-कर्नाटक प्रदेशकी छोटी-सी रियासत रामदुर्गको, जिसका क्षेत्रफल १६९ वर्गमील, आबादी ३३,९९७ और राजस्व २,६९,००० रुपये है, दुर्भिक्ष तथा पिछले कुछ-एक सालोंमें कीमतोंमें गिरावटके फलस्वरूप मंदी आ जानेके कारण बड़ी कठिन स्थितिका सामना करना पड़ा। २० मार्च, १९३८को कुछ किसान गाँवोंसे निकलकर महलके सामने इकट्ठे हुए और उन्होंने राजा साहबसे प्रार्थना की कि वे भू-राजस्वके बारेमें उन्हें कुछ छूट दें। महलके सामने इकट्ठे हुए लोगोंकी ओरसे यह आरोप लगाया गया कि उन लोगोंको रामदुर्गकी पुलिस ने लाठीचार्ज करके तितर-बितर किया। दूसरी ओर, रियासतके अधिकारियोंने इन आरोपोंका खण्डन किया। ऐसा लगता है कि लोगोंकी ओरसे कोई निश्चित माँगें नहीं रखी गई थीं, न ही उनकी ओरसे बातचीत करनेवाली कोई संस्था ही थी। कुछ समय बाद रियासतके कुछ लोग श्री यालगीके पास, जो कांग्रेसी हैं और कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सचिवोंमें से एक हैं, गये और उनसे प्रार्थना की कि वे स्वयं रामदुर्ग जाकर वहाँकी स्थितिका निरीक्षण करें। इसके मुताबिक श्री यालगी अप्रैलमें रामदुर्ग गये और उन्होंने वहाँके लोगोंको सलाह दी कि वे अपनी माँगें अधिकारियोंके समक्ष प्रस्तुत करनेके लिए एक समिति संगठित करें। उनकी सलाहके मुताबिक रामदुर्ग संस्थान प्रजा संघकी स्थापना हुई और इस संघकी ओरसे माँगें तैयार करके राजा साहबके आगे प्रस्तुत की गई।
>
> दकनकी रियासतोंकी जनताका एक सम्मेलन सांगलीमें २२ मई, १९३८को सरदार वल्लभभाई पटेलकी अध्यक्षतामें हुआ। २२को वह सांगलीसे रवाना हो गये। परन्तु सम्मेलन श्री गंगाधरराव देशपाण्डेकी अध्यक्षतामें चलता रहा।
>
> २३ ता० को रामदुर्गका सवाल विचारार्थ लिया गया और यह निश्चय किया गया कि रामदुर्गके मामलेकी जाँच-पड़ताल करके रिपोर्ट देनेके लिए निम्न-लिखित सदस्योंकी एक समिति बनाई जाये: (१) कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके अध्यक्ष श्री गंगाधरराव देशपाण्डे, (२) कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्य श्री शंकरराव देव, (३) रामदुर्ग प्रजा संघके अध्यक्ष श्री मुनोली, (४) दक्षिणी

राज्य प्रजा परिषद् के सचिव श्री कानावूर, (५) श्री अदानेप्पा डोड्डामेटी, सदस्य विधानसभा, (६) श्री के० एस० पाटिल, सदस्य विधानसभा, और (७) रामदुर्ग राज्यके एक नागरिक और हुबलीके वकील श्री आरी। इस दौरान रामदुर्ग दरवारने स्वयं अपनी ओरसे एक सरकारी विज्ञप्ति जारी करके कुछ छूट देनेकी घोषणा कर दी। परन्तु इससे लोगोको सन्तोष नहीं हुआ और आन्दोलन गम्भीर रुख अख्तियार करने लगा। . . .

इसके वाद सांगलीमें वनाई गई समितिके सदस्य ५ जून, १९३८ को रामदुर्ग गये और उन्होंने जाँच शुरू की। समिति और रामदुर्ग प्रजा संघ दोनोंने महसूस किया कि मात्र जाँच करने और रिपोर्ट दे देनेसे काम पूरा नहीं होगा। इसलिए संघने समितिसे प्रार्थना की कि रामदुर्ग दरवारको प्रस्तुत की गई माँगोंके वारेमें समझौता करनेकी व्यवस्था की जाये।

मामलेपर दो घंटे वहस होती रही और ६ जूनको श्री देवको पूरा अधिकार दे दिया गया कि वे मतभेदोंको तय कर ले। उत्तरदायित्व स्वीकार करते हुए श्री देवने लोगोंके सामने यह स्पष्ट कर दिया कि वे लोग जो-कुछ कर रहे है, उसके क्या-क्या फलितार्थ होंगे। समितिकी ओरसे श्री देवने माँगें तैयार कीं और राजासाहवके आगे रखीं। कुछ विचार-विनिमयके वाद राजासाहवकी इच्छासे यह मामला मुल्तवी कर दिया गया। तथापि, अधिकांश सुझाव थोड़े-वहुत संशोधनो सहित राजा साहवने मान लिये। श्री देशपाण्डेने जो-कुछ भी हुआ था, उसके वारेमें सरदारको लिखा। उन्होने सरदारको वताया कि प्रजा संघकी माँगें क्या थीं और राजा साहवने उनमें से कितना-कुछ स्वीकार किया है। उत्तरमें सरदारने ११ जूनको श्री देशपाण्डेको लिखा कि राजासाहवने समझौतेकी जो शर्तें अपनी ओरसे करनी है, वे वहुत अच्छी है और लोगोको सलाह दी जाये कि वे उसे मान लें।

यद्यपि श्री देवको शर्तें तय करनेके लिए पूरा अधिकार दिया गया था तो भी उन्होने २१ जूनको श्री मुनोली और प्रजा संघकी प्रवन्ध समितिके सभी सदस्योको करार की शर्तोसे अवगत कराया और लम्बी वातचीतके वाद राजा साहव और अपने वीच तय की गई शर्तोंके वारेमें उनकी सहमति प्राप्त की। श्री शास्त्रीको, जो अनुपस्थित थे, छोड़कर सांगली-सम्मेलन द्वारा नियुक्त समितिके वाकी सभी सदस्य भी इससे सहमत थे। शर्तोकी स्वीकृतिकी सूचना राजा साहवको दे दी गई। उसी शामको महलमें दरवार लगा जिसमें प्रजा संघके अध्यक्ष और प्रतिनिधि तथा रामदुर्गके प्रमुख व्यक्ति आमन्त्रित किये गये। राजा साहवने अपने प्रारम्भिक भाषणमें अपने शासनके इतिहासका विहंगावलोकन करते हुए समझौतेकी शर्तोंकी रूपरेखा वताई। तव राज्यके दीवान राव वहादुर प्रधानने घोषणापत्र पढ़कर सुनाया जिसमें समझौतेकी शर्तें स्पष्ट की गई थीं। उसके वाद संघकी

ओरसे, प्रजा संघके अध्यक्षने राजा साहबका यथोचित धन्यवाद किया। दरबार समाप्त होनेपर श्री देव और दूसरे लोग सार्वजनिक सभामें गये। सभामें १२,००० से ज्यादा लोग उपस्थित थे। प्रजा संघके अध्यक्षने सभा की अध्यक्षता की। जब श्री गंगाधरराव देशपाण्डे समझौतेकी शर्तोंका स्पष्टीकरण कर रहे थे तब सभाके एक कोनेमें थोड़ी-सी गड़बड़ नजर आई। यह पता लगा कि वे लोग सुरेबनके जुलाहे थे। श्री अंदानप्पा दोड्डामेति उस कोनेमें गये और शान्ति स्थापित करनेमें सफल हुए। श्री देशपाण्डेके बाद श्री अंदानप्पा एक घंटेसे ज्यादा देर तक बोले और उन्होंने शर्तोंको विस्तारसे समझाया और उनका जोरदार समर्थन किया। उनके भाषणसे श्रोताओंको शर्तोंके औचित्यका पूरा विश्वास हो गया और उनका भाषण तुमुल हर्षध्वनिके साथ समाप्त हुआ। श्री देवने भी छोटा-सा भाषण दिया और उन्होंने लोगोंसे कहा कि वे स्वीकृत सुधारोंको कार्यान्वित कर अपनी स्थितिको मजबूत बनायें। अध्यक्ष श्री मुनोलीने अपने अत्यन्त मार्मिक समापन भाषणमें समझौतेकी सभी शर्तोंका समर्थन किया और वहाँ उपस्थित लोगोंसे उन्होंने पूछा कि आपका मुझपर विश्वास है या नहीं। श्रोताओंने एक स्वरमें 'हाँ' कहा। तब उन्होंने उनसे शर्तें मान लेनेके लिए कहा और वे सहमत हो गये। सभाकी समाप्तिपर रियासतका एक अधिकारी अध्यक्षके हस्ताक्षर करवानेके लिए उनके पास एक कागज लाया, जिसमें समझौतेकी शर्तें लिखी हुई थीं। अध्यक्ष मुनोलीने उपस्थित लोगोंसे फिर पूछा कि वे उसपर हस्ताक्षर कर दें या नहीं। उन्होंने न केवल उपस्थित जनसमुदायकी ही अपितु प्रजा संघके प्रतिनिधियोंकी भी सहमतिसे उस दस्तावेजपर दस्तखत कर दिये।

कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेसकी प्रबन्धक समितिने निम्नांकित प्रस्ताव पारित किया :

"समिति रामदुर्ग, जामखण्डी, मीरज (बड़ा), मीरज (छोटा) और मुधोलके लोगोंको इस बातकी बधाई देती है कि उन्हें अपनी शिकायतें दूर करवानेके लिए किये गये संघर्षमें सफलता मिली है। समितिको विश्वास है कि वे निकट भविष्यमें पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी स्थापनाके लिए अहिंसात्मक और शान्तिपूर्ण उपायोंसे अपने संगठनोंको मजबूत बनायेंगे।

"यह समिति प्रजाकी माँगोंको तत्काल मान लेनेके लिए उपर्युक्त रियासतोंके शासकोंके प्रति प्रशंसाका भाव अभिव्यक्त करती है और विश्वास करती है कि दोनों पक्ष जल्दी ही समझौतेकी शर्तोंको कार्यान्वित कर देंगे। यह समिति कर्नाटककी सभी रियासतोंसे प्रार्थना करती है कि वे उपर्युक्त रियासतों द्वारा अपनाई गई उदार नीतिका अनुसरण करें।

"किन्तु, इस समितिको यह देखकर बड़ा दुःख होता है कि कुछ लोग, विशेषकर कुछ कांग्रेस-जन यह तर्क देकर विरोधी प्रचार कर रहे हैं कि जनता और रामदुर्गके राजाके बीच यह समझौता कतिपय प्रसिद्ध कांग्रेसी नेताओंके प्रयत्नोंसे हुआ है। यह समिति उनसे विरोधी प्रचार न करनेकी प्रार्थना करती है और उसका यह निश्चित मत है कि केवल समझौतेका पालन करनेसे ही लोगोंकी भलाई हो सकती है।"

मैंने इसमे से कुछ अंश, जिसका मेरे उद्देश्यसे सम्बन्ध नही था, निकाल दिया है। ऐसा लगता है कि रामदुर्ग प्रजा सघकी ओरसे ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है कि राजाको आतंकित करके उन्हे और ज्यादा छूट[1] देनेके लिए विवश किया जाये। राजा साहब कांग्रेसकी सहानुभूति खोनेके डरसे शरारत करनेवालोके खिलाफ कार्रवाई नही कर रहे है। मुझसे यह सवाल पूछा जा रहा है कि समझौतेसे सम्बन्धित कांग्रेसजनोको क्या करना चाहिए। यह मानते हुए कि मुझे जो सूचना मिली वह सही है, मेरा बिलकुल साफ उत्तर यह है कि उन्हे प्रान्तीय समिति द्वारा किये गये समझौतेका पालन तो हर हालतमे करना ही है। मै राजकोटके ठाकुर साहबसे यह प्रार्थना करने राजकोट जा रहा हूँ कि वे अपने वचनका पालन करे। उन्होने जो-कुछ किया है उसे मै वचन-भंग मानता हूँ और उससे बहुत विक्षुब्ध हूँ। कांग्रेसके बारेमे भी मेरा यही जवाब है। राजकोट देशी राजाओका प्रतिनिधित्व करता है। उसका यश या अपयश सभी राजाओका यश या अपयश है। यदि कोई प्रतिनिधि कांग्रेसजन अपना वचन तोडता है तो सारी कांग्रेसकी प्रतिष्ठापर आँच आती है। यदि प्रान्तीय कांग्रेस समिति अपने वचनका पालन नही कर सकती तो प्रतिष्ठाकी कितनी बडी हानि होगी? कांग्रेस सारे राष्ट्रका प्रतिनिधित्व करनेका दावा करती है। इसका आचरण अनिन्दनीय होना चाहिए।

जागृतिके इन दिनोमे सब तरहकी शक्तियाँ उठेंगी ही। कांग्रेसमे नये-नये लोगोके प्रवेशसे कई प्रकारकी माँगे पेश की जायेंगी और उनमे से कुछ तो अनुचित तक होगी। यदि कांग्रेसको अपनी साख बढानी है तो ये माँगे, अगर वे कांग्रेस द्वारा किये गये वायदेसे ज्यादा हो तो, रोकी जानी चाहिए। मुझे नही मालूम कि रामदुर्ग प्रजा सघ क्या चाहता है? यह हो सकता है कि उसकी माँग अपने-आपमे ठीक हो। परन्तु समझौतेके कागजकी स्याही सूखनेसे भी पहले वे अपनी माँगको हुल्लडबाजी मचाकर और डरा-धमकाकर नही लाद सकते। कर्नाटकके प्रतिनिधि कांग्रेसजनोको चाहिए कि रामदुर्गके राजाका साथ दे और उनका प्रयत्न होना चाहिए कि वहाँके लोग समझौतेका पालन करे, भले ही इस कोशिशमे लोगोके साथ उनका सघर्ष हो और उसमे उनकी जान ही क्यो न चली जाये।

बम्बई, २६ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-३-१९३९

१. देखिए खण्ड ६९, "रामदुर्गमें सामूहिक हिंसा", २४-४-१९३९।

५२४. अकालसे राहतके लिए खादी

इस पत्र[1] से स्पष्ट है कि अकाल-पीडित क्षेत्रोमे खादीसे कितनी राहत मिल सकती है। इसलिए जिस खादीसे अकाल-पीड़ितोको राहत मिलती है, उसे खरीदनेवाले अकाल-पीड़ितोकी और साथ ही अपनी भी सहायता करते है। इसके अलावा, वे भीख नही अपितु मजदूरी देते है। और यह मजदूरी खादी-उत्पादनमे कताईके लिए निश्चित दरसे दी जाती है जो किसी भी अन्य राहत-कार्यकी दरसे अधिक है। इसलिए मुझे आशा है कि इस अपीलका लोग उदारतापूर्वक स्वागत करेगे।

बम्बई, २६ फरवरी, १९३९

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-३-१९३९

५२५. क्या यह अहिंसा है?

नीचे अण्णामलै विश्वविद्यालयके एक शिक्षकके भेजे पत्रका एक अश दे रहा हूँ:[2]

> गत नवम्बरकी बात है, पाँच-छः विद्यार्थियोंने मिलकर योजनापूर्वक विश्वविद्यालय संघके मन्त्री पर, जो उनका एक साथी विद्यार्थी है, हमला किया। विश्वविद्यालयके उपकुलपति श्री श्रीनिवास शास्त्रीने सख्तीसे काम लिया और उस मण्डलीके नेताको विश्वविद्यालयसे निकाल दिया तथा बाकीको इस अध्ययन-सत्रके अन्त तक पढ़ाईमें शामिल न करनेकी सजा दी।
>
> इसपर सजा पानेवाले विद्यार्थियोसे सहानुभूति रखनेवाले उनके कुछ मित्रोने कक्षाओंसे गैरहाजिर रहकर हड़ताल करनी चाही। . . .
>
> दूसरे दिन कोई २० प्रतिशत विद्यार्थी पढ़ने नहीं आये, लेकिन बाकी ८० प्रतिशत बदस्तूर हाजिर रहे। यहाँ यह बता देना ठीक होगा कि इस विश्वविद्यालयमें कुल ८०० के करीब विद्यार्थी हैं।

१. यह पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने कहा था कि कोयम्बटूर जिलेके कुछ तालुकोंमें सूखा पड़ने और खेती खराब हो जानेके कारण वहाँके किसानोंने कताईका काम शुरू कर दिया है और इसलिए तमिलनाडुमें खादीका अतिरिक्त भंडार हो गया है। उसने गांधीजीसे प्रार्थना की थी कि वह *हरिजन* के पाठकोंसे यह अपील करें कि वे सूखाग्रस्त इलाकोंमें तैयार की गई खादी खरीदें।

२. यहाँ पत्रके कुछ अंश ही दिये गये हैं।

अगले दिन वह निष्कासित विद्यार्थी हड़तालका संचालन करनेके लिए छात्रावास आया। हड़तालको नाकामयाब होते देख उसने शामको दूसरे साधनोंका सहारा लिया। उदाहरणके लिए, कुछ लोग छात्रावाससे निकलनेके चार मुख्य रास्तोंपर लेट गये, कुछने दरवाजोंको बन्द कर दिया, कुछ छोटे लड़कोंको उनके कमरोंमें बन्द कर दिया। . . . इस प्रकार तीसरे पहर कोई पचास-साठ लोगोंने बाकी विद्यार्थियोको छात्रावाससे बाहर आनेसे रोक दिया।

अधिकारियोंने इस तरह दरवाजे बन्द देखकर बाड़में से रास्ता खोलना चाहा। जब विश्वविद्यालयके नौकरोंकी मददसे वे बाड़को तोड़ने लगे, तो हड़तालियोंने उन रास्तोंपर भी पहुँच कर दूसरोंको उधरसे निकल कर कॉलेज जानेसे रोक दिया। . . . परिस्थितिको अपने काबूसे बाहर पाकर अधिकारियोंने पुलिससे उस निष्कासित विद्यार्थीको छात्रावासकी हदसे हटानेकी प्रार्थना की . . . जिसपर पुलिसने उसे वहाँसे हटा दिया। इसपर स्वभावतः कुछ और विद्यार्थी भी खीज उठे और हड़तालियोंके प्रति सहानुभूति दिखाने लगे। . . . इसपर श्री श्रीनिवास शास्त्रीने २९ नवम्बरसे १६ जनवरी तक, डेढ़ महीनेकी लम्बी अवधिके लिए विश्वविद्यालय बन्द कर लिया। अखबारोंमें एक वक्तव्य देकर उन्होंने विद्यार्थियोंसे अपील की कि वे छुट्टीके बाद घरसे शान्त और प्रसन्न मनसे पढ़नेके लिए आयें।

लेकिन कॉलेजके फिरसे खुलनेपर इन विद्यार्थियोंकी हलचल और भी तेज हो गई, क्योंकि छुट्टियोमें इन्हें . . .[1] से और सलाह मिल गई थी। मालूम पड़ता है कि वे राजाजीके पास भी गये थे, लेकिन उन्होंने हस्तक्षेप करनेसे इनकार कर दिया और उनसे उप-कुलपतिका हुक्म माननेके लिए कहा। . . .

धरना देना अभी भी जारी है। . . . हड़तालियोंकी तादाद ३५-४५ के करीब है। और लगभग पचास विद्यार्थी ऐसे हैं जो इनसे सहानुभूति रखते हैं, किन्तु सामने आकर हड़ताल करनेका साहस नहीं रखते। वे अन्दर-ही-अन्दर गड़बड़ मचाते रहते हैं। वे रोज इकट्ठे आते हैं और कक्षाओंके दरवाजोंपर तथा पहली मंजिलकी कक्षाओंको जानेवाले जीनेपर लेट जाते हैं और इस तरह विद्यार्थियोंको कक्षाओंमें जानेसे रोकते हैं। लेकिन शिक्षक जगह बदल-बदल कर ऐसी जगहोंमें जाकर कक्षाएँ लगाते हैं जहाँ वे धरना देनेवालोंसे पहले पहुँच जाते हैं। . . .

कल एक नई बात हुई। हड़ताली कक्षाओंके अन्दर घुस आये, फर्शपर लेट गये और चिल्लाने लगे। और कुछ हड़तालियोंने तो, मैंने सुना, शिक्षकके आनेसे पहले ही ब्लैक बोर्डोंपर लिखना भी शुरू कर दिया। जिन शिक्षकोंके

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

बारेमें ऐसा माना जाता है कि वे दब्बू किस्मके हैं, उन्हें कुछ हड़ताली डराते-धमकाते भी हैं। सच तो यह है कि उन्होंने उप-कुलपतिको भी यह धमकी दी कि अगर उन्होंने उनकी माँगें मंजूर नहीं कीं, तो 'हिंसा और रक्तपात' का सहारा लिया जायेगा।

एक और भी महत्वपूर्ण बात है जो मुझे आपको बता देनी चाहिए। वह यह है कि हड़ताली बाहरी लोगोंकी भी मदद लेते हैं, और विश्वविद्यालयके हाते और इमारतोंमें प्रवेश करके वहाँ काम-काजमें बाधा डालनेके लिए गुण्डोंकी भी सहायता लेते हैं। . . .

अब जो बात मैं कहना चाहता हूँ, वह यह है कि हम सब, यानी बहुत-से शिक्षक और काफी बड़ी तादादमें विद्यार्थी भी महसूस करते हैं कि ये प्रवृत्तियाँ सत्यपूर्ण और अहिंसात्मक नहीं हैं और इसलिए सत्याग्रहकी भावनाके विरुद्ध हैं।

मुझे विश्वस्त रूपसे मालूम हुआ है कि कुछ हड़ताली विद्यार्थी इसे अहिंसक कार्रवाई ही कहते हैं। उनका कहना है कि अगर महात्माजी यह घोषणा कर दें कि यह हिंसात्मक कार्रवाई है, तो वे इन प्रवृत्तियोंको बन्द कर देंगे।

यह पत्र १७ फरवरीका है और काका कालेलकरको लिखा गया है, जिन्हें पत्र लिखनेवाले शिक्षक अच्छी तरह जानते हैं। इसके जिस अशको मैंने नही छापा उसमे इस बारेमे काका साहबकी राय पूछी गई है कि विद्यार्थियोके इस आचरणको क्या अहिंसात्मक कहा जा सकता है। इसके अलावा उसमे भारतके कितने ही विद्यार्थियोमे अवज्ञाकी जो भावना आ गई है, उसपर अफसोस जाहिर किया गया है।

पत्रमे उन लोगोके नाम भी दिये गये हैं, जो हडतालियोको अपनी जिद पर अड़े रहनेके लिए उत्तेजित कर रहे है। हडतालके बारेमे मेरी राय[1] प्रकाशित होनेपर किसी ने, जो अनुमानत. कोई विद्यार्थी ही था, मुझे एक गुस्सेसे भरा हुआ तार भेजा, जिसमें लिखा था कि हड़तालियोका व्यवहार पूर्णत अहिंसात्मक है। लेकिन ऊपर जो विवरण मैंने उद्धृत किया है वह अगर सच है तो मुझे यह कहनेमे कोई सकोच नही है कि विद्यार्थियोका व्यवहार सचमुच हिंसात्मक है। अगर कोई मेरे घरका रास्ता रोक दे, तो निश्चय ही उसकी वह कार्रवाई उतनी ही हिंसात्मक होगी, जितनी कि यदि वह मुझे धक्का देकर दरवाजेसे हटा दे, तब होगी।

विद्यार्थियोको अगर अपने शिक्षकोके खिलाफ सचमुच कोई शिकायत है, तो उन्हें हडताल करनेका, बल्कि अपने स्कूल या कॉलेजपर धरना देनेका भी हक हो सकता है, लेकिन धरना इसी हद तक दिया जा सकता है कि जो विद्यार्थी वस्तुस्थिति से अनभिज्ञ है, उन्हे वे विनम्रताके साथ समझा कर उनसे कक्षाओमे न जानेकी प्रार्थना करे। बोलकर या परचे बाँटकर वे ऐसा कर सकते है। लेकिन उन्हें रास्ता नहीं

१. देखिए "वक्तव्य : समाचारपत्रोंको", पृ० ४९४।

रोकना चाहिए, और न उन छात्रोपर अनुचित दबाव ही डालना चाहिए जो हड़ताल नही करना चाहते। और हड़ताल विद्यार्थियोने की किसके खिलाफ है? श्री श्रीनिवास शास्त्री भारतके श्रेष्ठतम विद्वानोमे से है। शिक्षकके रूपमे उनकी तभीसे ख्याति रही है जब इनमे से बहुतेरे विद्यार्थी या तो पैदा ही नही हुए थे या बच्चे थे। उनकी महान विद्वत्ता और उनके चरित्रकी श्रेष्ठता दोनों ऐसी चीजें है जिनके कारण संसारका कोई भी विश्वविद्यालय उन्हे अपना उप-कुलपति बनानेमे गौरवका अनुभव करेगा।

काकासाहबको पत्र लिखनेवालेने अगर अण्णामलै विश्वविद्यालयकी घटनाओका सही विवरण दिया है, तो मुझे लगता है कि शास्त्रीजीने जिस तरह परिस्थितिका मुकाबला किया है, वह बिलकुल ठीक है। मेरी रायमे विद्यार्थी अपने आचरणसे खुद अपनी ही हानि कर रहे है। मै तो उन पुराने विचारके लोगोमे से हूँ जो शिक्षकोके प्रति श्रद्धा रखनेमे विश्वास करते है। यह तो मै समझ सकता हूँ कि जिस स्कूलके शिक्षको के प्रति मेरे मनमे सम्मानका भाव न हो उसमे न जाऊँ, लेकिन अपने शिक्षकोंकी बेइज्जती या उनकी अवज्ञाकी बात मै नही समझ सकता। ऐसा आचरण तो असज्जनता है और असज्जनता-मात्र हिंसा है।

बम्बई, २६ फरवरी, १९३९
[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-३-१९३९

५२६. तार: राधाकृष्ण बजाजको

राजकोट
२६ फरवरी, १९३९

राधाकृष्ण बजाज
जयप्रजा
आगरा

जयपुर शहरमे हड़ताल न हो।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१४

५२७. पत्र : महादेव देसाईको[1]

२६ फरवरी, १९३९

तुम्हें उद्विग्न नही होना चाहिए। इस यात्रामें तुम्हारा अभाव मुझे खटक रहा है। मै वहाँ जा रहा हूँ क्योकि ईश्वर मुझे वहाँ ले जा रहा है। अपने अन्तरमे आनन्द और आशाका अनुभव कर रहा हूँ। कौन जाने यह आशा कही मृगतृष्णा ही न हो। मुझे मालूम है कि मै राजकोटसे निराश नही लौटूंगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-३-१९३९

५२८. पत्र : सतीश द० कालेलकरको[2]

२६ फरवरी, १९३९

चि० शंकर,[3]

तेरे पत्रका उत्तर देनेकी फुर्सत ही नही थी। तेरा पत्र मुझे अच्छा लगा। चन्दन शान्त है, मजेमे है। वह निर्दोष सिद्ध हुई। यानी सच्ची सिद्ध हुई; इतना काफी होना चाहिए। हमे किसीको अपराधी सिद्ध करनेमे रस नही लेना चाहिए। . . .[4] जब तक स्वयं स्वीकार न करें, तब तक उनके बारेमें अन्तिम निर्णय कर लेना उचित नही मालूम पड़ता। अब वे निन्यान्वे प्रतिशत निर्दोष नही रहे। मै समझता हूँ कि अब वे तुम्हारी निन्दा नही करेगे। अब उनके बारेमें और कुछ करना मरेको मारने-जैसा होगा। तू इस किस्सेको भूल जाये, यह तो ठीक है, लेकिन अगर तू यह मान ले कि मेरी राय ठीक है, तो मुझे ज्यादा अच्छा लगे।

अपना स्वास्थ्य सँभालना।

चन्दन बेचारी राजकोट जानेको आई थी। लेकिन अब ऐसा हो गया कि कौन जाने कही उसके बदले ही तो मै नही जा रहा हूँ। यह पत्र मै ट्रेनमे लिख रहा

१. महादेव देसाईके "ए गॉड-गिवन फास्ट" से उद्धृत। यह पत्र जो अनुमानतः गुजरातीमें था, किसी दूसरे साधन-सूत्रसे उपलब्ध नहीं है।

२. यह पत्र उस पत्रके नीचे लिखा गया था, जो चन्दनबहनने सतीश कालेलकरको, जिनसे बादमें उनका विवाह हुआ, लिखा था।

३. दत्तात्रेय बा० कालेलकरके पुत्र, जिन्होंने आगे चलकर अपना नाम बदलकर 'सतीश' रख लिया था।

४. नाम छोड़ दिया गया है।

हूँ। चन्दन साथमें ही है। यह बीरमगामसे भावनगर जायेगी। क्या होता है, वहाँ इसकी राह देखेगी।

ऊपर जो चन्दनने लिखा है, वह, सच पूछो तो, उसकी परीक्षा थी। वह मेरे कहे अनुसार आचरण कर सकी है या नहीं, यह देखना था। परीक्षामें उसे ३३⅓ अंक मिले, ऐसा कहा जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४९) से, सौजन्य : सतीश द० कालेलकर।

५२९. पत्र : अमृत कौरको

२७ फरवरी, १९३९

प्रिय पगली,

यात्रा अभी तक काफी सुखद रही है और विशिष्ट कुछ नहीं घटा। यह पत्र मैं वीरमगाँव पहुँचनेपर लिख रहा हूँ। तूने जुदा होते समय काफी साहस दिखाया। वैसा ही साहस बराबर रहना चाहिए। यह आश्चर्यकी बात है कि सचिव-कार्यकी जिम्मेदारी इस तरह अचानक अकेली तुझपर ही आ जाये। तूने तो इसकी आशा नहीं की थी। आज या कल तुझे राजकोटसे तार मिलेगा।

शरीर और मन दोनोंसे तुझे स्वस्थ रहना है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०३) से; सौजन्य : अमृत कौर। जी० एन० ७२१२ से भी।

५३०. पत्र : मीराबहनको

वीरमगाँव

२७ फरवरी, १९३९

चि० मीरा,

हम दिनके लगभग २ बजकर ५० मिनटपर राजकोट पहुँचेंगे। गाडी जा रही है, इसलिए विदा।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४२९) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० १००२४ से भी।

५३१. पत्र : महादेव देसाईको[1]

२७ फरवरी, १९३९

ईश्वरका विधान कितना विचित्र है! राजकोटकी यह यात्रा स्वयं मुझे भी आश्चर्यमे डालनेवाली है। मै क्यो जा रहा हूँ? कहाँ और किसलिए जा रहा हूँ? इन वातोके वारेमे मैंने कुछ नही सोचा है। यदि ईश्वर मेरा मार्गदर्शन करता है तो मै क्या सोचूं और क्यो सोचूं? उसके पथ-प्रदर्शनमे यह चिन्तन भी वाधा वन सकता है।[2]

तथ्य यह है कि चिन्तन-प्रवाहको रोकनेके लिए कोई प्रयत्न नही करना पड़ता। विचार आते ही नही है। मेरा मन शून्य हो गया है, ऐसी वात नहीं है; परन्तु मेरा अभिप्राय इतना ही है कि अपने इस मिशनके वारेमे मेरे मनमे कोई विचार नही है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-३-१९३९

५३२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

२७ फरवरी, १९३९

राजकोट पहुँचनेसे कुछ मिनट पहले महात्मा गांधीने अपने साथ ही यात्रा कर रहे एसोसिएटेड प्रेसके विशेष प्रतिनिधिको बताया कि "राजकोटमें शान्ति-स्थापनाके मिशन" के बारेमें उनके पास कोई सुनिश्चित योजना नहीं है।

यह पूछनेपर, कि राजकोटमें वे कब तक ठहरेंगे, महात्मा गांधीने कहा :

मुझे सचमुच पता नही कि मै यहाँ कव तक ठहरूँगा। जव तक मेरा कार्य समाप्त नही हो जाता, मुझे यहाँ रुकना ही होगा।

प्रश्न : क्या इसका यह मतलब है कि आप त्रिपुरी-कांग्रेस नहीं जा सकेंगे?

उत्तर . देखिए, अगर राजकोटके अपने कामकी वजहसे मुझे रुकना पड़ा तो मुझे डर है कि शायद मै त्रिपुरी न जा पाऊँ।

१. महादेव देसाईके "द गॉड-गिवन फौस्ट" से उद्धृत। यह पत्र, जो अनुमानतः गुजरातीमें था, किसी भी अन्य साधन-सूत्रसे उपलब्ध नहीं है।

२. इस पर रमण महर्षिकी टिप्पणीके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

यह बतानेपर कि राजकोट रियासतमें सत्याग्रह स्थगित हो जानेके बाद भी अधिकारीगण बराबर गिरफ्तारियाँ कर रहे हैं और जुर्माना वसूल करनेके लिए मकान नीलाम कर रहे हैं, महात्मा गांधीने कहा:

मैंने खुद ट्रेनमें अभी-अभी इस प्रकारकी खबरें सुनी हैं। अगर यह सच है तो यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण बात है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २८-२-१९३९

५३३. तार: अमृत कौरको

राजकोट
२७ फरवरी, १९३९

राजकुमारी
मगनवाड़ी
वर्धागंज

यात्रा अच्छी तरह तय हुई। बातचीत शुरू हो गई है। तुम्हें प्यार। प्रथम सदस्यको भेजा गया आखिरी तार यहाँ नहीं पहुँचा। पूछताछ करना।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३९०२) से; सौजन्य: अमृत कौर। जी० एन० ७२११ से भी।

५३४. तार: मीराबहनको

राजकोट
२७ फरवरी, १९३९

मीराबहन
मार्फत बादशाहखान
चारसद्दा,

यात्रा अच्छी तरह तय हुई। बातचीत शुरू हो गई है।
सप्रेम।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४३०) से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० १००२५ से भी।

५३५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

२७ फरवरी, १९३९

मै तो जन्मजात आशावादी हूँ। मुझे उम्मीद है कि राजकोटकी मेरी यात्रामे कोई सम्मानजनक समझौता हो जायेगा।

खान साहब फतह मुहम्मद और दरबार वीरावालासे मेरी मैत्रीपूर्ण वातचीत हुई है। उन्होने मुझे जेलोमे जाने, कैदियोसे मिलने और गाँवोंमें जानेकी सारी सुविधाएँ देनेका वचन दिया है। मै कल तीसरे पहर कैदियोसे मिलने जाऊँगा। मुसलमानों और गिरासियो (जमीनके मालिको)ने मुझसे भेंटके लिए समय माँगा है और मुझे आशा है कि मै कल उनसे मिल सकूँगा।

समझौता-वार्तामे कुछ दिन लग सकते है। त्रिपुरी-कांग्रेसमे सम्मिलित होनेकी यद्यपि मेरी बड़ी इच्छा है, पर मुझे डर है कि राजकोटके काममे कुछ समय लग जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २८-२-१९३९

५३६. भेंट : 'हिन्दू'के प्रतिनिधिको

२७ फरवरी, १९३९

. . . मै नही जानता कि मुझे यहाँ कब तक रुकना पडेगा। मेरी कोई सुनिश्चित योजना नही है। परिस्थितिको मै समझना चाहता हूँ और शासक और श्री गिब्सनसे भेंट करके प्रशासन और प्रजा परिषद्के बीच हुए समझौतेको कायम रखनेकी भरसक कोशिश करना चाहता हूँ। त्रिपुरीकी मेरी यात्रा सदिग्ध ही है। अगर मै अपना कार्य समयपर पूरा कर सका तो त्रिपुरी जाऊँगा। अन्यथा, सम्भव है मुझे विचार छोड़ना पड़े।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-२-१९३९

५३७. तार: राधाकृष्ण बजाजको[1]

[२७ फरवरी, १९३९ या उसके पश्चात्]

वाइसरायके आनेपर हड़ताल बन्द कर दी जानी चाहिए। पर इसका आखिरी फैसला तुम लोगोको ही करना चाहिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २१५

५३८. बातचीत: मुसलमान प्रतिनिधियोंके साथ[2]

२८ फरवरी, १९३९

लेकिन, निश्चय ही, आप सुरक्षित स्थानोंके बिना तो पृथक् निर्वाचक मण्डल चाहते नही है। उनके बिना पृथक् निर्वाचक मण्डलका कोई अर्थ ही नही रहता। इसलिए वे भी आपको मिलने ही चाहिए। इस एकतरफा पेशकशके बाद मैं आपसे यह कहनेकी इजाजत चाहूँगा कि यदि आप परिषद्को आपके हितोका प्रतिनिधित्व करने दें, तो परिषद् आपके धर्म और आपकी संस्कृतिकी अवश्य रक्षा करेगी और मुसलमानोके हर न्यायोचित हितको सरक्षण देगी। लेकिन मैं इस बातसे सहमत हूँ कि जब तक वातावरण परस्पर अविश्वास एवं सन्देहसे दूषित है, आपको पृथक् निर्वाचक मण्डलकी माँग करनेका अधिकार है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

१. यह राधाकृष्ण बजाजके २७ फरवरीके उस तारके उत्तरमें भेजा गया था जिसमें उन्होंने यह सूचित किया था कि वाइसरायके आगमनके विरुद्ध जयपुरमें स्वतः ही हड़ताल हो गई और वह जारी है। हम हड़तालके पक्षमें हैं। आप उसके खिलाफ हों तो तार देकर सूचित करें।

२. प्यारेलाल द्वारा लिखित "द राजकोट फास्ट" से उद्धृत। प्यारेलालने लिखा है: "मुस्लिम कौंसिल ऑफ ऐक्शन" के प्रतिनिधि गांधीजीसे प्रात: ७ बजे मिले। उन्होंने कहा कि राजकोटके पिछले सत्याग्रह-आन्दोलनमें मुसलमानोने अपना निष्क्रिय सहयोग दिया था। गांधीजीने बातचीतके आरम्भमें ही उन्हें यह कहकर निश्चिन्त कर दिया कि समितिमें उनके दो प्रतिनिधि हों, यह बात मुझे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार होगी। उन्होंने पृथक् निर्वाचक मण्डलकी माँग पर भी जोर दिया। गांधीजीने वह बात भी मान ली।"

५३९. बातचीत : गिरासियोंके शिष्टमण्डलके साथ

२८ फरवरी, १९३९

मुस्लिम शिष्टमण्डलकी तरह, गांधीजीने उन्हें भी आरम्भमें ही यह कहकर निश्चिन्त कर दिया कि समितिमें उनके एक प्रतिनिधिको सम्मिलित किया जायेगा। उनके अन्य प्रश्नोंके उत्तरमें उन्होंने कहा कि अबतक आप जिन विशेषाधिकारोंका उपभोग करते आये हैं, यदि उन सबके बारेमें हमेशाके लिए आश्वासन चाहते हैं, तब तो आपको निराशा ही हाथ लगेगी। यह न तो उचित है और न सम्भव ही है। भारतके असंख्य दीन-हीन जनोंकी दशा यदि सुधारनी है, तो विशेषाधिकार-युक्त वर्गको दरिद्रनारायणकी भलाईके लिए अपने कुछ विशेषाधिकारोंका त्याग करना ही होगा। अगर गिरासिया लोग समयकी पुकारको ठीकसे समझ लें, श्रमजीवी जनताके साथ घुल-मिल जायें और उसके भलेमें अपना भला मानें, तो उनके न्यायोचित हितोंपर तनिक भी आँच नहीं आयेगी। इसलिए, मैं आपको वही परामर्श दूँगा जो मैंने नरेशोंको दिया है, अर्थात् आप जनताके सच्चे सेवक बनें और उसपर अत्याचार करना छोड़ दें। आपको अपनी सम्पत्तिको ऐसा न्यास मानना चाहिए जिसे जनताकी भलाईके लिए समझ-बूझकर इस्तेमाल करना है। आपको उचित आयका अधिकार है, किन्तु केवल अपनी सेवाओंके बदलेमें।

"कांग्रेसियोंके एक वर्ग द्वारा हमारी कटु आलोचना की गई है, हमें गालियाँ तक दी गई हैं। क्या आप हमारी रक्षा नहीं करेंगे?"

आपको यह मालूम होना चाहिए कि कांग्रेसमें आज एक काफी बड़ा और दिन-प्रतिदिन बढ़ता ऐसा वर्ग है जो सभी निहित स्वार्थके तत्त्वोंको बिलकुल नष्ट कर देना चाहता है, क्योंकि उनके सुधारकी उन्हें कोई आशा नहीं है। इसलिए, न्यासीका जो आदर्श मैंने आपके सम्मुख रखा है, यदि आप उसे अपनायें और उसके अनुरूप बनें, तभी मैं आपको सुरक्षा देनेमें समर्थ हो सकूँगा। जब तक आप मेरे साथ सहयोग नहीं करेंगे, मैं आपकी सहायता नहीं कर सकूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-३-१९३९

१. प्यारेलाल द्वारा लिखित "द राजकोट फार्स" से उद्धृत।

५४०. भेंट: 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

राजकोट
२८ फरवरी, १९३९

गांधीजीने भेंटके दौरान बताया कि दिनकी शुरुआत मुस्लिम प्रतिनिधियोंके साथ सौहार्दपूर्ण विचार-विनिमयसे हुई।[1]

मुस्लिम प्रतिनिधियोसे मुलाकातके बाद मै रेजिडेंटके बँगलेपर गया और वहाँ हम दोनोमे अत्यन्त मैत्रीपूर्ण बातचीत हुई। दिनमे २ बजे मै गिरासिया सघके प्रतिनिधियोसे मिला[2] और उनके साथ भी मेरी बातचीत सौहार्दपूर्ण रही। तत्पश्चात् मै कर्नल डेली, लेफ्टिनेट कर्नल एस्पिनल और खान साहब फतह अहमद मुहम्मदके साथ रियासतकी जेलोको देखने गया। वहाँ कैदियोके साथ मुलाकातके समय ये सब भी उपस्थित थे। राजकोट-जेलमे मैंने लगभग एक घटा सत्याग्रही पुरुषो और महिलाओसे मिलनेमे बिताया और उसके बाद मै सरधार-जेल गया और वहाँ डेढ घटे रहा।

इन दो जेलोंमें कैदियोंसे हुई बातचीतके बारेमें जब उनकी राय पूछी गई तो गांधीजीने खान साहब फतह मुहम्मदके साथ विचार-विमर्शसे पहले अपना कोई निश्चित अभिमत प्रकट करनेसे इनकार कर दिया। अपनी बात जारी रखते हुए गांधीजीने कहा:

सरधार-जेलसे मै त्रौम्बा गया और वहाँ कस्तूरबा, मृदुलाबहन और मणिबहनसे मिला। वही मैंने खाना खाया। राजधानी वापस आनेपर मै ठाकुर साहबसे मिलने गया और लगभग डेढ घंटा मैंने उनके साथ बिताया।

उनके त्रिपुरी जानेकी सम्भावनाके बारेमें पूछनेपर गांधीजीने कहा:

मुझे अब भी उम्मीद है कि कोई सम्मानजनक समझौता हो जायेगा और मै जल्दी-से-जल्दी त्रिपुरी जानेकी भरसक कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु मेरे लिए यह कहना कठिन है कि सप्ताहान्तसे पूर्व मै यहाँसे जा सकूँगा या नही।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-३-१९३९

१. देखिए पृ० ५१६।
२. देखिए पिछला शीर्षक।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

एक पवित्र समझौतेकी निर्मम अवहेलना

सरदार वल्लभभाई पटेलने २५ जनवरीको निम्न वक्तव्य जारी किया :

अत्यन्त खेदके साथ मुझे घोषणा करनी पड़ रही है कि राजकोटका संघर्ष, जो सुखद ढंगसे समाप्त हो गया लगता था, अब पुनः आरम्भ करना होगा। राज्यकी इज्जत और राजकोटकी जनताके आत्मसम्मानकी रक्षाकी खातिर यह पुनरारम्भ हमारा कर्तव्य हो गया है।

जनताको याद होगा कि राजकोट-राज्यके २६ दिसम्बरके राजपत्रमें जिस समझौतेकी घोषणा[1] की गई थी, वह ठाकुर साहब तथा उनकी परिषद्—जिसके सदस्य सर पैट्रिक कैडेल, राव साहब माणेकलाल पटेल और श्री जे० जीवनपुत्रा थे—के बीच हुए विचार-विमर्शका परिणाम था। यह विचार-विमर्श २५ दिसम्बरकी शामको शुरू होकर लगभग आठ घंटे चलता रहा और रातके १-४२ पर समाप्त हुआ। समझौतेके दिन ठाकुर साहबने मुझे निम्नलिखित पत्र दिया :

अमरसिंहजी सचिवालय, राजकोट राज्य
२६ दिसम्बर, १९३८

यह तय किया गया है कि आजकी राजकीय घोषणाकी धारा २ में उल्लिखित सात सदस्योंके नामकी सिफारिश सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा होगी और हम उन्हें नामजद करेंगे।

(ह०) धर्मेन्द्रसिंह
ठाकुर साहब, राजकोट

यहाँ याद रखा जाये कि मैं ठाकुर साहबके आमन्त्रणपर राजकोट गया था। समझौतेके बाद ही सर पैट्रिक कैडेलने अवकाश ग्रहण कर लिया। . . .

मुझे बहुत अनिच्छापूर्वक कहना पड़ रहा है कि ठाकुर साहबका नमक खानेवालोंने उनकी कुसेवा की है। दरबार वीरावाला उनके सबसे बुरे सलाहकारोंमें से एक रहे हैं। उन्होंने राज्यका सत्यानाश कर डाला है और अपनी घोर कुव्यवस्थाके फलस्वरूप खजानेको खाली कर दिया है। उन्होंने ठाकुर साहब पर ऐसा जादू फेर रखा है

१. देखिए पृ० ३८१।

कि वे चाहे तब भी उस पाशसे छूट नही सकते। सर पैट्रिक कैडेलको राजकोट लानेवाले वही थे। किन्तु जब उन्होने [पैट्रिक कैडेलने] समझ लिया कि दरबार वीरावाला ही राज्यके अनिष्टकारी राहु है तो उन्होने लगभग सबसे पहला काम यह किया कि एजेन्सी की मदद लेकर उन्हे राजकोटसे निर्वासित कर दिया। यदि सर पैट्रिक कैडेलने शासक-जातिके सदस्यके रूपमे अपनी प्रतिष्ठाका अनुचित लाभ न उठाया होता तो उनके राजकोटसे जानेकी नौबत न आती। जिस दीवानने उनको निर्वासित करा दिया था, उसकी मौजूदगीको दरबार वीरावाला बर्दाश्त नही कर सकते थे।

निर्वासित होनेके बावजूद वह बागसरासे ही गुप्त रूपसे दाँवपेच चलाते रहे। उनका पुत्र भोजवाला और भतीजा वालेरवाला अभी भी ठाकुर साहबके पास है। दरबार वीरावाला समझ गये कि प्रस्तावित समझौतेके विरुद्ध तो वह सफल हो नही सकते, अत. उन्होने एक मित्र जैसी भूमिका अपनाई और समझौतेमें सहायक प्रतीत हुए। समझौतेके शीघ्र बाद जब सर पैट्रिक कैडेल जानेवाले थे, दरबार वीरावाला राजकोट पहुँच गये और उन्होने अपनी कार्रवाइयाँ शुरू कर दी जो अभी तक जारी है। रेजिडेटका पत्र और पोलिटिकल एजेटका पत्र पढनेमे दिलचस्प है।

मुझे कुछ दिनोका समय आवश्यक था जिससे कि मै आन्दोलनके सचालकोसे परामर्श करके समझौतेकी शर्तोके अनुसार बनाई जानेवाली समितिके लिए सात नाम चुन सकूँ। ४ जनवरीको मैंने निम्नाकित सात नाम भेज दिये :

१. श्री पोपटलाल धनजीभाई मालवीय
२. श्री पोपटलाल पुरुषोत्तम अनडा
३. श्री मुल्लाँ वलीजी अब्दुलअली
४. डॉ० डी० जे० गज्जर
५. श्री जमनादास खुशालचन्द गांधी
६. श्री ब्रजलाल मायाशकर शुक्ल
७. श्री उच्छृगराय नवलशंकर ढेबर

तदुपरान्त फौरन ही समितिकी नियुक्तिकी विज्ञप्ति निकल जानी चाहिए थी, किन्तु कई दिनो तक कुछ भी नही हुआ।

२८ दिसम्बरको सपरिषद् ठाकुर साहबका रेजिडेट महोदय से विचार-विमर्श हुआ। इस मौके पर उपस्थित एक व्यक्ति द्वारा तैयार वार्ताका एक प्रामाणिक सक्षिप्त विवरण मेरे पास है। रेजिडेट द्वारा कांग्रेस तथा मेरे विषयमे कही गई बाते पढ़नेमे दिलचस्प है। समझौते, कांग्रेस या मेरे प्रति अपनी नापसन्दकीको वह छिपा नही पाये।

ऐसा मालूम होता है कि ठाकुर साहब द्वारा अपनी प्रजाको गम्भीरतापूर्वक दिये गये वचनके भगके लिए रेजिडेट महोदय तथा दरबार वीरावाला जिम्मेदार है। ठाकुर साहब पर दरबार वीरावालाका कितना अधिक प्रभाव है, उसका सबूत मेरे नाम ठाकुर साहबका पत्र है जो पढ़नेमे रोचक है।

हालमे निकाली गई एकतरफा विज्ञप्तिकी तुलना समझौतेकी शर्तोंके अनुसार निकाली गई विज्ञप्तिसे करना आवश्यक है। दूसरी विज्ञप्तिमे मेरे दिये गये चार नाम रद हो गये हैं। इसके अलावा, समिति जिन विषयो पर विचार करनेवाली थी, दूसरी विज्ञप्तिमे उन्हे भी निकाल दिया गया है। इस विज्ञप्तिकी भाषा भी गोलमोल है, जबकि पहली विज्ञप्तिकी भाषा बिलकुल स्पष्ट और असन्दिग्ध थी। पहली विज्ञप्तिमे कहा गया था कि इसी ३१ तारीखसे पहले ही समितिकी रिपोर्ट प्रकाशित हो जायेगी, और ठाकुर साहब उसपर अमल भी करेंगे। परन्तु इस दूसरी विज्ञप्तिमे रिपोर्टके लिए कोई मियाद नही रखी गई है।

पिछली घोषणासे पूर्व मुझे राव साहब माणेकलाल पटेलसे एक पत्र प्राप्त हुआ था। ध्यान देने योग्य है कि जहाँ उस पत्रमे मेरे मनोनीत किये हुए नामोमे से चार नामोको स्वीकार किया गया था, वहाँ नई विज्ञप्तिमे केवल तीन नाम स्वीकार किये गये है। इस सम्बन्धमे मैंने गुजरातीमे एक उत्तर भेजा है जिसका अनुवाद भी उपलब्ध किया गया है।

ठाकुर साहब पर दरबार वीरावालाके प्रभाव और उनकी दखलन्दाजीके बारेमें मैंने इतना-कुछ सुन रखा था कि मुझे अपने इस पत्रमे कहना ही पडा कि दरबार वीरावाला किसी भी हालतमे समितिमे शामिल नही किये जा सकते। मै किसी भी बहानेके लिए गुंजाइश नही रहने देना चाहता था।

एक पवित्र समझौतेके इस घोर भगसे राजकोटकी जनताके सामने एक ही रास्ता रह गया है। अब मेरा काम है कि मै राजकोटकी जनताका आह्वान करूँ कि वह स्वतन्त्रताकी रक्षाकी खातिर और राजकोट तथा ठाकुर साहबको सर्वनाशसे बचानेके निमित्त स्वेच्छापूर्वक स्वीकृत कष्ट-सहनका मार्ग फिरसे अपनाये। बुरे-से-बुरे परिणामकी पूर्व-कल्पना कर लेना और उसके लिए प्रबन्ध कर लेना सर्वोत्तम है। बुरे-से-बुरा तो यह हो सकता है कि घोरतम आतक फैलाया जाये, लोगोंको कठोर यन्त्रणाएँ दी जाये जो काठियावाड़मे कोई अपरिचित बात नही है, और लोगोमें आन्तरिक झगड़े पैदा किये जाये। पिछली बातका प्रमाण है हमारे मुसलमान भाइयोका भड़काये जाने पर आन्दोलन करना। हमे अपने आचरण द्वारा उन्हे दिखा देना होगा कि प्रजा द्वारा सुशासित प्रशासनके अन्तर्गत जितना फायदा दूसरोको मिलेगा, कम-से-कम उतना ही उन्हे भी मिलेगा। आत्यन्तिक कुव्यवस्था और रिश्वतखोरीने राजकोटको दिवालिया बना दिया है। यदि अधिकतर लोग एकता रखे, कितना ही कष्ट हो या कितने ही दिन तक उसे सहना पड़े, उसको सहनेकी क्षमता दिखायें, और आर्थिक हानिके बावजूद अहिंसापूर्ण असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमपर अमल करनेकी योग्यताका प्रदर्शन करे तो छोटे-मोटे झगड़े इस आन्दोलनको लम्बा तो कर सकते है, किन्तु हमारे लक्ष्यसे हमे वचित नही कर सकते। लेकिन छात्रोको किसी भी हालतमें सविनय अवज्ञा या हड़तालोमें भाग नही लेना है। यदि उन्हे रचनात्मक-कार्यमे विश्वास हो तो उसे कर सकते है, और करना भी चाहिए। छात्रगण घर-घर जाकर लोगोके कष्टोका परिहार कर सकते है, क्योकि जैसे-जैसे आन्दोलन बढ़ेगा, लोगोको अनिवार्यत. कष्ट होने ही है।

मन, वचन तथा कर्मसे अहिंसाका पालन करना होगा। विपक्षियो तथा तटस्थ लोगोके साथ तथा अपने सहयोगियोके साथ भी अहिंसाका पालन होना चाहिए, जेलके भीतर भी और बाहर भी। जिस हद तक हम अहिंसाका पालन करेंगे उसी हद तक हम सफल होगे। हमे इस सम्भावनापर आस्था रखनी होगी कि हमारी अहिंसाके परिणामस्वरूप ठाकुर साहबका मन अपनी प्रजाके लिए पसीज जायेगा। आज तो वह केवल नाममात्रके ही शासक है। उनकी प्रजामे से हरएक व्यक्तिको यह बात चुभ रही होगी कि इस नौजवान शासकने अपनी प्रजाके साथ किया गया पवित्र समझौता जान-बूझकर भंग कर दिया है।

मैंने दरबार वीरावालाके बारेमे कटु प्रतीत होनेवाले वचन कहे है। किन्तु सत्य कई बार कटु और कठोर हो जाता है। मैंने उनके सम्बन्धमे ऐसी कोई बात नही कही है जिसमे मेरा विश्वास न हो। परन्तु उनके साफ खटकनेवाले दोपोके बावजूद हमे उनसे प्रेम करना चाहिए और हम यह आशा रखे कि हमारा प्रेम उनका तथा उनके प्रभावमे तथा उनके निर्देशानुसार काम करनेवालोका हृदय-परिवर्तन कर देगा।

मुझे दुख है कि राजकोटकी जनताकी नीति तथा कार्यक्रम बनानेमें मेरा हस्तक्षेप और कांग्रेसका प्रभाव रेजिडेंट महोदयको नापसन्द है। देशी राज्योकी जनताने हमेशासे ही कांग्रेसका मार्गदर्शन ग्रहण किया है। उसके प्रति उनकी निष्ठा है। यहाँ तक कि आरम्भिक कालमे तो राजा लोग भी कांग्रेसका समर्थन पानेकी कामना रखते थे। राजाओं और उनकी जनताके बीच उठनेवाले विवादोमें प्रत्यक्ष भाग न लेनेके रूपमें कांग्रेसने देशी राज्योमें हस्तक्षेप न करनेकी नीति अपनाई थी। यह सब केवल अपनी मर्यादाको पहचान लेना मात्र था। किन्तु जब जनता अपनी शक्तिको जान गई है और कष्ट-सहनके लिए तैयार है तब भी यदि कांग्रेस अपनी ओरसे यथासाध्य मदद न दे तो वह उद्देश्यके प्रति झूठी सिद्ध होगी। जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं काठियावाड राजकीय परिषद्का अध्यक्ष रह चुका हूँ और इस नाते काठियावाडकी जनताके प्रति मेरा एक कर्तव्य है और राजाओके प्रति भी है, और जब मेरी सहायताकी जरूरत पड़े तब मैं भला कैसे इनकार कर सकता हूँ। राजकोटमे पहले तो प्रजाने और फिर स्वय राजाने मेरी सहायता माँगी और मेरा दावा है कि मैंने उदारतापूर्वक मदद दी है। इसमें मुझे रेजिडेंट महोदय या साम्राज्य-सत्ताके एतराज करने योग्य कोई बुराई नही दीखती। यह तो एक ऐसा सवाल है जिसका निर्णय करानेमे प्रसगवश निमित्त बन जाना राजकोटके लिए अत्यन्त गौरवकी बात होगी।

फिलहाल यह सत्याग्रह केवल काठियावाड़ियो तक ही सीमित रहेगा। काठिया-वाड़के लोगोमे इतने आपसी सम्बन्ध निकल आते है कि नैतिक आधार लें तो किसी भी काठियावाड़ी को व्यवहार रूपमें इस सत्याग्रहसे दूर नही रखा जा सकता।

सरदार वल्लभभाई पटेलको ठाकुर साहबका पत्र

अमरसिंहजी सचिवालय
राजकोट राज्य
दिसम्बर, १९३८

प्रिय सरदार वल्लभभाई,

अभी-अभी प्राप्त आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

यदि आप आज शाम पाँच बजे मेरे साथ चाय पिये तो मुझे खुशी होगी। उस समय मेरी परिषद्के सदस्योकी उपस्थितिमे हम लोग इस मौजूदा प्रश्नपर चर्चा कर लेगे।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

सर पैट्रिक कैडेलका ठाकुर साहबको पत्र

अमरसिहजी सचिवालय
राजकोट
१ अक्टूबर, १९३८

श्रीमान,

कल मैने आपसे शाम आठ बजेसे पूर्व मुलाकात करनेकी अनुमति माँगी थी। मै अत्यन्त महत्वके मामलोपर बातचीत करना चाहता था। मैने शामका यह समय स्वयको असुविधाजनक होते हुए भी आपकी सुविधाकी खातिर माँगा था। आपने निजी सचिवके हाथ मुझे सन्देश भेजा कि मै साढे आठ बजे आपसे मिलूँ। मै ठीक वक्तपर उपस्थित हुआ किन्तु मुझे बताया गया कि आप स्नान कर रहे है। मै नौ बजे तक प्रतीक्षा करता रहा और पता चला कि आपको अभी भी १५ मिनट या आधा घटा और लगेगा। इसपर मै चला गया।

आपको यह बतानेके लिए अब मै यह पत्र लिख रहा हूँ कि अपने साथ इस प्रकारका घोर अशिष्टतापूर्ण बर्ताव होने देनेका मेरा कोई इरादा नही है। आपकी मददके लिए इग्लडसे रवाना होते समय मुझे बिलकुल भान नही था कि आप ऐसा आचरण कर सकते है। इसको मै चलने नही दे सकता।

कल रात मेरा इरादा आपको यह बतानेका था कि किसी भी हालतमे मौजूदा परिस्थिति जारी नही रह सकती। राज्यमें हालत बहुत गम्भीर है। राज्यके विरुद्ध बहुत-सी शिकायते तो आपके आचरणको लेकर ही है। ऐसा माना जाता है कि आप राजस्वमे से बहुत बड़ा अश खर्च कर देते है और आपके खर्चका अधिकाश भाग

गलत मुद्दोमे जाता है और यह कि आप राज्यके प्रशासनमे कोई भाग नही लेते। इस समय आपके खर्चोकी रकम या खर्चके तरीकोकी मै चर्चा नही करना चाहता। किन्तु यह तो नि सन्देह सच है कि आप शासन-व्यवस्थामे कोई भाग नही लेते और अपनी प्रजाके कल्याणमे आपकी कोई रुचि प्रकट नही होती। यह बात इसलिए और भी ध्यानमे आती है, क्योकि आपके पिताने जो ढग अपनाया था, आपका ढंग उससे नितान्त भिन्न है। अपने अधिकारियोसे आप यह अपेक्षा रखे कि वे दमनकारी कार्योका भार उठाये और आप स्वय कुछ न करे, यह न्यायोचित नही है। आपको भी इसमें कुछ हिस्सा लेना चाहिए। अतएव मेरा प्रस्ताव है कि आप निम्नाकित कार्य करे।

१ मेरा खयाल है कि आज शामको ७-३० बजे आप एक या शायद दो मन्दिरोमे होनेवाले यज्ञ-अनुष्ठानमे शामिल होनेवाले है। मेरा अनुरोध है कि यदि आपके पास समय हो तो उसके बाद शहरमे आपकी सवारी निकले और मुझे भी अनुमति दे कि उस समय मै आपके साथ रहूँ।

२. आज तो छुट्टीके कारण हुजूर दफ्तर बन्द है परन्तु सोमेवारको वह खुला रहेगा। मै सुझाव दूँगा कि आप मुझे वचन दे कि आप सोमवारको वहाँ कम-से-कम एक घटेके लिए फरियादियोकी फरियाद सुनने आयेगे और शामके छ बजेसे पहले ही आयेगे।

मुझे पक्का विश्वास है कि इन दो कार्योका शहर पर सुन्दर प्रभाव पड़ेगा। मुझे एक तीसरा अनुरोध करना है।

३. आप वचन दे कि मुझे जिस किसी दिन भी आपसे मिलना हो, आप ७-३० से पहले ही मुझसे मिल लेगे और वचन दीजिए कि आप निर्धारित समयके बाद १५ मिनटसे अधिक देर नही करेगे।

यदि आप मेरे इन सुझावोको स्वीकार करनेमे असमर्थ है तो मै रेजिडेंट महोदयको यह सूचित करनेको बाध्य हो जाऊँगा कि मै अब यहाँ काम नही कर सकता और मेरा इरादा शीघ्रातिशीघ्र इग्लैंड लौट जानेका है।

मुझे आशका है कि यदि मुझे ऐसा करना ही पडा तो इसके फलस्वरूप आपके राज्य और स्वयं आपके लिए इसके दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम निकल सकते है। आपको मै विश्वास दिला सकता हूँ कि इस बातकी सम्भावना कम ही है कि भारत सरकार आपके आचरणको अनुकूल दृष्टिसे देखेगी। आपको हानि पहुँचेगी तो मुझे दु ख होगा, लेकिन यदि आपने ऐसा ही बर्ताव रखा तो मै यहाँ और नही रह सकता।

यदि आज शाम ५-३० बजेसे पहले ही आप मुझे सूचित कर दें कि क्या आप आज शाम शहरमे सवारी के लिए जानेको सहमत है और मुझे साथ रहनेकी अनुमति देंगे तो मै अनुगृहीत होऊँगा।

हृदयसे आपका,
पैट्रिक कैडेल

सर पैट्रिक कैंडेलको ठाकुर साहबका पत्र

गोपनीय

रणजीत विलास महल
राजकोट
२ अक्टूबर, १९३८

प्रिय सर पैट्रिक,

आपका कलका पत्र पाकर मुझे अत्यन्त क्षोभ हुआ, और मुझे कहना पड़ रहा है कि मुझे आपके पत्रका स्वर पसन्द नही आया। मैं यह नही मान सकता कि मेरे खिलाफ की गई शिकायते तथ्योपर आधारित है। वर्तमान आन्दोलन राज्योमे उत्तरदायी शासन-व्यवस्था आरम्भ करानेके लिए कांग्रेस द्वारा फैलाई हुई एक लहर ही है। और मेरी धारणा है कि मैसूर, त्रावणकोर इत्यादि 'अन्य रियासतोकी तरह ही, जहाँ की जनताको पहलेसे ही अधिक नागरिक स्वतन्त्रताका सुख प्राप्त है, काठियावाड़मे राजकोटको कांग्रेसने इसी कारण चुना है।

इस स्थितिसे निपटनेके उद्देश्यसे ही मैंने आपकी सेवाएँ प्राप्त की थी। आपका कार्य यथासम्भव सुगम करनेकी अब भी मेरी कामना है और दशहरेके उपरान्त अपनी सुविधानुसार मैं किसी दिन दफ्तर आऊँगा।

आपकी इस बातपर मुझे कड़ी आपत्ति है कि आपके चले जानेके फलस्वरूप राज्य और मेरे लिए दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम निकल सकते है और भारत सरकार मेरे आचरणको अनुकूल दृष्टिसे नही देखेगी। इस सिलसिलेमे मैं आपको स्पष्ट रूपसे समझा दूं कि मैंने स्वयं ही आपको अपना दीवान नियुक्त किया है और यदि किसी मतभेदके परिणामस्वरूप मुझे आपसे सेवानिवृत्त हो जानेके लिए कहना पडा तो रेजिडेंट महोदय अथवा वाइसराय महोदयको मुझसे अप्रसन्न होनेका कोई कारण नही होगा। मेरे राज्य और मेरे विषयमे जो-कुछ भी सूचनाएँ आप एकत्र कर पाये है, वे आपको इसी कारण उपलब्ध हो सकी है, क्योकि आप मेरे विश्वासभाजन है और यह कहना शायद ही आवश्यक होगा कि आप मेरी अनुमतिके बिना मेरे राज्यके अभिलेखोका उपयोग नही कर सकते और खासकर व्यक्तिश: मेरे विरुद्ध तो बिलकुल नही कर सकते। रेजिडेट महोदयको राज्यसे सम्बन्धित कोई भी सूचना प्राप्त करनेकी आवश्यकता महसूस हुई है तो वह मेरे दीवानके जरिये माँग की गई है, और तभी माँगी गई है जब मैं इसके लिए सहमत होऊँ। आपको मैं यह भी बतला दूं कि रेजिडेंट महोदय और वाइसराय महोदय, दोनोका मुझे भरपूर विश्वास प्राप्त है और इसे खोने लायक कोई काम मैंने नही किया है। अतएव मेरी कामना है कि आप अपने निश्चयपर पुनर्विचार करे और मेरी प्रतिष्ठा और नीतिके अनुरूप कार्य करनेकी अपनी सहमति अभिव्यक्त करें।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

सर पैट्रिक कैडेलको ठाकुर साहबका पत्र

राजकोट
१६ अक्टूबर, १९३८

प्रिय सर पैट्रिक,

मुझे विश्वास है कि वर्तमान परिस्थितिसे आप पूर्णतः अवगत होगे। स्थितिमें किसी भी प्रकारका सुधार नही आया है और जहाँ तक मै देख पाता हूँ, यह दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है और अब पराकाष्ठापर पहुँच गई है। अभी कुछ ही दिन हुए हमने एक बैठक बुलाई थी और उसमें जनताको कुछ रियायते देना स्वीकार किया था। किन्तु उससे स्थितिमे कोई सुधार नही आया और वाछित परिणाम नही निकला। मै स्वय कायल होता जा रहा हूँ कि हमने उचित समयपर ऐसे उचित कदम नही उठाये जिससे कि मेरी चिन्ता दूर हो जाती। सक्षेपमें स्थिति निश्चय ही काबूसे बाहर होती जा रही है, और इससे मेरी कठिनाइयाँ बहुत बढ गई है। आन्दोलन अधिकाधिक तेज होता जा रहा है और निकट भविष्यमे उसको काबूमे लानेकी कम ही आशा दीख पडती है। प्रजाको लगता है और उसे सिखाया जा रहा है कि आपको सरकारने यहाँ भेजा है और अब तक जो प्रतिष्ठा मुझे प्राप्त थी, वह अब नही रही। आपके आनेसे पूर्व मेरे प्रति प्रजाका जितना प्रेम और जितकी वफादारी थी, उसे अब वह देनेसे इन्कार करती है। इतना ही नही, बल्कि प्रजाकी राय और धारणा तो यह मालूम पड़ती है कि शासनकर्ता मैं नही बल्कि आप है।

मुझे कहना चाहिए कि अवश्य ही यह भावना आपने पैदा नही की है, फिर भी यह भावना मौजूद है और प्रकट है कि प्रजाकी उसे त्यागनेकी मनोवृत्ति नही दीख पडती। दीवालीकी छुट्टियाँ पास आती जा रही है और हमेशाके समान इजारे दिये जाने चाहिए किन्तु जनताने उसका बहिष्कार कर रखा है। अनाजकी बिक्रीका बहिष्कार करनेकी उसने ठान ली है और सम्भव है कि उसके असहयोगके कारण इस साल अनाजका कोई क्रय-विक्रय न हो। इसका अर्थ होगा राज्यका आर्थिक सर्वनाश और एक ऐसी सकटकी स्थिति जिसका वर्णन करनेके बजाय उसकी कल्पना कर लेना ही बेहतर है। और मैं समझता हूँ कि शासक होनेके नाते राज्य और उसकी प्रजाके हितमे मुझे कोई भी कीमत देकर या कोई भी त्याग करके ऐसी स्थितिको टालना ही पड़ेगा।

आप जानते ही है कि अब प्रजाने विद्रोहका रुख अपना लिया है और दु ख भी भोग रही है। अतएव मुझे देखना ही होगा कि इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिका पूरी तरह समाधान हो जाये और यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र प्रजा और मेरे बीच किसी प्रकारका एक पक्का सुस्पष्ट समझौता हो जाये। मुझे लगता है कि जब तक मेरी प्रजा मुझे अपना वास्तविक शासक न समझ ले तब तक मै इस दिशामें कुछ भी करनेमें असमर्थ रहूँगा। राज्यका एक हितचिन्तक होनेके नाते आप भी यही चाहेगे

और सहमत होंगे कि ऐसी परिस्थिति अब जारी रहने देना उचित नहीं। अत. अब मेरा अनिवार्य कर्तव्य हो जाता है कि जनताकी आँखोंमें मैं पुन. उनके वास्तविक और दयालु शासकके रूपमें प्रतिष्ठित हो जाऊँ, क्योंकि तभी उसके मनमें अपने प्रति विश्वास जमाकर मैं उससे समझौता कर पाऊँगा और पुनः उसका प्रेम और विश्वास प्राप्त करूँगा।

मैंने दरबार साहब वीरावालासे इस मामलेमें आपके विचार जान लेनेको कहा था। उन्होंने मुझे बताया है कि वह आपसे १३ तारीखको मिले थे और आपने उनसे कहा कि आपके मतमें जब तक राज्यकी वित्तीय स्थिति इजाजत देती है तब तक संघर्ष जारी रखना चाहिए और हमें देखना चाहिए कि अन्तत. विजय उनकी [प्रजाकी] होती है या हमारी।

इसके अतिरिक्त आपके १ अक्टूबर, १९३८ के पत्रसे मैं समझा हूँ कि जहाँ तक आपका सम्बन्ध है, आपका पक्का मत है कि कमोबेश रूपमें मैं ही स्वयं इन सब सकटोंके लिए जिम्मेदार हूँ। मैंने उत्तरमें इन आरोपोंसे इनकार किया। इस विनाशकारी स्थितिको मुझसे बढ़कर कोई नहीं समझता, और आपके पत्रमें लगाये गये आरोपों और आपके रुखको देखते हुए मुझे लगभग पूरा विश्वास हो गया है कि मेरे राज्य और उसकी प्रजाके हितकी रक्षाके लिए, और मेरे अधिकारों, प्रतिष्ठा और शासकपदको भी देखते हुए आप और मैं अब साथ-साथ कार्य करनेमें असमर्थ हैं।

मेरी दृढ़ इच्छा है कि शीघ्रातिशीघ्र और दीवालीकी छुट्टियोंसे पहले ही मैं स्वयं अपने राज्य और उसकी प्रजाके इस घरेलू झगड़ेका समाधान कर दूँ। और मेरे मतमें यह तब तक सम्भव नहीं होगा जब तक आप और मैं शीघ्रातिशीघ्र सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कर लेते। यह एक अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति होगी और किसीको इसपर मुझसे ज्यादा खेद नहीं हो सकता। परन्तु यह चूँकि मेरे और मेरे राज्यके हितोंका सवाल है, अत इसके अलावा और कोई चारा भी नहीं है। आपको यह विश्वास दिलाना मेरे लिए अनावश्यक है कि मैं किसी प्रकारसे आपकी स्थिति को अटपटी बनाना नहीं चाहता, अत. मैं यह निर्णय आप पर ही छोड़ देता हूँ कि आप किस प्रकार सेवानिवृत्त होकर चले जायें। मैं अत्यन्त इच्छुक हूँ कि आप जिस प्रकार मित्रके रूपमें आये उसी प्रकार मित्रके रूपमें ही विदा हों। मैंने निश्चित रूपसे छ. मासके लिए आपकी सेवाएँ प्राप्त की थीं, अतः मैं राज्यके कोषाध्यक्षको निर्देश दे रहा हूँ कि तदनुसार आपके वेतनकी अदायगी कर दें। मैं राजस्व सचिव श्री भट्टको भी निर्देश दे रहा हूँ कि आपकी सुविधानुसार वे आपको सेवानिवृत्त कर दें।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

ठाकुर साहबको श्री ई० सी० गिब्सनका पत्र

द रेजिडेंसी
राजकोट
२६ अक्टूबर, १९३८

गोपनीय

डी० ओ० न० सी०/१३४-३८

प्रिय ठाकुर साहब,

आपको याद होगा कि आपने १६ अक्टूबरकी शामको मुझे एक पत्र द्वारा सूचित किया था कि आप सर पैट्रिक कैंडेलको हटाना चाहते हैं और आपने उनके नाम लिखे अपने पत्रकी प्रति, जिसे आप पहले ही भेज चुके थे, सलग्न करके मुझे भेजी थी। दूसरे दिन सुबह हम लोगोमे विचार-विमर्श हुआ। उस समय मैंने आपको पुरजोर सलाह दी थी कि आप इस मामले पर पुर्नविचार करे और एक ऐसा कदम न उठाये जो प्रत्येक दृष्टिकोणसे अनिवार्यत: आपके राज्य और स्वयं आपके हितमें अत्यन्त हानिकर सिद्ध होगा। मैंने आपको ध्यान दिलाया कि जब आपने २५ अगस्तको मुझे पत्र लिखा था कि मैं सर पैट्रिक कैंडेलकी नियुक्तिके लिए आवश्यक स्वीकृति प्राप्त करूँ, तब आपने बिलकुल निश्चित रूपसे कहा था कि इस नियुक्तिकी अवधि फिलहाल कमसे-कम छ' महीनेकी होगी। यही समझ कर मैंने सम्राटके प्रतिनिधि वाइसराय महोदयकी स्वीकृतिके लिए आपके अनुरोधका प्रस्ताव उनके पोलिटिकल सेक्रेटरीके पास भेज दिया था।

आपके साथ १७ अक्टूबरको और फिर २२ अक्टूबरको इस विषय पर चर्चा करते हुए मैंने जो सब बाते विस्तारसे समझाई थी, उनको यहाँ दोहराना अनावश्यक होगा। १७ अक्टूबरको आपसे बातचीत करनेके बाद, यह देखकर कि आप मेरी दी हुई सलाह माननेको अनिच्छुक है, मैंने आपके १६ अक्टूबरके पत्रकी एक प्रति पोलिटिकल सेक्रेटरीको भेज दी थी।

२२ अक्टूबरकी अपनी मुलाकातमे मैंने आपको बताया था कि आपको यह सूचित कर देनेका मुझे निर्देश मिला है कि वाइसराय महोदय विश्वास रखते है कि राज्य और अपने हितकी खातिर आप अपने उठाये हुए कदम वापस लेनेमे कोई देरी नही करेगे। तबसे इस खबरकी आशामें हूँ कि आपने इस सलाहको मानकर उसपर अमल किया है। चूंकि मुझे अभी तक आपसे ऐसी कोई सूचना प्राप्त नही हुई है अत. मै आपको पत्र लिख रहा हूँ कि हमारी २२ अक्टूबरकी मुलाकातके बाद आपने जो-कुछ कार्रवाई की है, उसकी कृपया मुझे यथाशी सूचना दे।

हृदयसे आपका,
ई० सी० गिब्सन

ई० सी० गिब्सनको ठाकुर साहबका पत्र

गोपनीय

२९ अक्टूबर, १९३८

प्रिय श्री गिब्सन,

आपके २६ ता० के गोपनीय पत्र डी० ओ० सी०/१३४-३८ के लिए मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

सम्राटके प्रतिनिधि वाइसराय महोदयकी इच्छा और आपकी महत्वपूर्ण सलाह और सिफारिशको ध्यानमें रखकर मैंने सर पैट्रिक कैडेलको अपनी सेवामें रखे रहनेका निश्चय किया है, हालाँकि अब भी मेरा दावा है कि इस प्रश्नका सवैधानिक पक्ष मेरे अनुकूल ही है।

मैं उत्सुक हूँ कि यथाशीघ्र उचित कार्रवाईकी जाये। राज्यमें सुलह, शान्ति तथा कानूनके प्रति आदर समुचित रूपसे कायम रहे, इस उद्देश्यसे राजकाज चलानेके लिए सर पैट्रिक कैडेल और अपने दो अफसरोंकी एक सशक्त परिषद् बनानेका मैंने निर्णय किया है।

१७ तारीखको आपके साथ मुलाकातके समय आपने परिषद् स्थापित करनेके मेरे सुझाव पर सहमति दी थी। इस कारण मैंने निम्नलिखित सदस्योंको उनके नामके साथ लिखे विभाग सौंपनेका निश्चय किया है:

प्रथम सदस्य तथा उपाध्यक्ष. सर पैट्रिक कैडेल १ कानून और न्याय, २. राजकीय, ३. वित्त, ४. पुलिस और ५. प्रजा प्रतिनिधि सभा तथा म्युनिसिपैलिटी।

द्वितीय सदस्य. राव साहब माणेकलाल सी० पटेल: १. वित्त, २. उद्योग, ३. राजस्व, ४. लोकनिर्माण विभाग और ५. बरदाशी।

तृतीय सदस्य श्री जयन्तीलाल एल० जोवनपुत्र: १. स्वास्थ्य-चिकित्सा, २. जेल, ३ शिक्षा और ४. घुड़साल तथा दूसरे अनुल्लिखित विभाग।

वर्तमान परिस्थितिको काबूमें लानेके लिए जो भी कदम उठाये जाये, उनका निश्चय यह परिषद् करेगी और उसपर मेरी मंजूरी होगी तथा अन्य दूसरे सब महत्वपूर्ण विषयोंके सम्बन्धमें यही उपर्लिखित कार्य-पद्धति चलेगी।

इसके बाद मैं विस्तृत निर्देश जारी करूँगा। मेरा विचार है कि ऐसी सशक्त परिषद्की स्थापनासे दिन-प्रतिदिन विकट होती जा रही मौजूदा स्थितिके सम्बन्धमें मेरी चिन्ता दूर हो जायेगी।

आपका उत्तर पानेके बाद मैं सर पैट्रिक कैडेलको तदनुसार सूचना दूंगा।

इस मामलेमें मैंने आपको जो कष्ट दिया है, उसका मुझे अत्यन्त दुख है।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह

दरबार वीरावालाको ई० सी० गिब्सनका पत्र

द रेजिडेंसी, राजकोट
२५ नवम्बर, १९३८

प्रिय वीरावाला,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद। आज सुबह यहाँ राजकोट लौटनेपर मुझे पता चला कि आप यहाँ थे और यह सुनकर मुझे सचमुच बहुत आश्चर्य हुआ। मेरा विचार है कि यदि श्री अनन्तराय पट्टणी आपसे मिलना चाहते थे तो वह आपको भावनगर आनेको कह सकते थे, या वह स्वय नटवरनगर जा सकते थे जो भावनगरसे राजकोटकी अपेक्षा ज्यादा निकट है। मै समझ नही पाया कि उन्हे ऐसा विचित्र अनुरोध करना क्यो अनिवार्य लगा। और मेरे विचारमे यह अवश्य ही खेदकी बात है कि आपको मैंने जो सलाह दी थी, उसके बाद भी आपने उनके इस अनुरोधका पालन किया। मै समझ सकता हूँ कि आप यहाँ आनेको अनिच्छुक थे। अपनी लम्बी बीमारीके बाद, जब आपको स्वास्थ्य-लाभके लिए आराम और शान्तिकी आवश्यकता है, ऐसी लम्बी यात्रा करना आपके स्वास्थ्यके लिए बहुत हानिकर है। मुझे खुशी है कि आज आपकी तबीयत कुछ बेहतर है और मै आपको जोरदार सलाह देता हूँ कि आप भविष्यमें अपने स्वास्थ्यकी ओर ज्यादा देखभाल रखे।

सौहार्दपूर्वक,

हृदयसे आपका,
ई० सी० गिब्सन

वाला श्री वीरा मुलु,
नटवरनगरके ताल्लुकेदार, राजकोट

दरबार वीरावालाको पोलिटिकल एजेंटका पत्र

व्यक्तिगत

राजकोट
२९ नवम्बर, १९३८

प्रिय वाला श्री,

आपका कलका व्यक्तिगत पत्र मिला। मुझे दुख है कि कर्नल ऐस्पिनालके विचारमें आपको यात्राके फलस्वरूप कष्ट पहुँचा है, विशेषकर जबकि आपने मुझे बताया है कि उसके बादसे आपको अपनी तबीयत काफी खराब लग रही है।

आपने मुझे वचन दिया था कि मैंने रेजिडेंट महोदयसे जो पूछताछ की है, उसका उत्तर आनेसे पूर्व आप राजकोटमें किसीसे भी नही मिलेगे। परन्तु इसके बावजूद आप राजमहल गये, यह जानकर मुझे स्वभावत. अत्यन्त आश्चर्य हुआ।

मैं केवल यही मान सकता हूँ कि आप अपने ही हितमें यह समझ जायेंगे कि ऐसा करना बुद्धिमानी नहीं था और यह कि नटवरनगर लौट जाने तक आप वही रुख अपनाये रहेंगे जिसका कि आपने स्वयं ही सुझाव रखा था, अर्थात् आपको यहाँके मामलोंसे पूर्णतः अलग रहना है और किसीसे भी नहीं मिलना है।

आशा करता हूँ कि अब आपने पूरा आराम ले लिया होगा और कल नटवर-नगरके लिए वापसी-यात्रासे आपको कोई कष्ट नहीं पहुँचेगा।

हृदयसे आपका,
सी० के० डेली

वल्लभभाई पटेलको ठाकुर साहबका पत्र

अमरसिंहजी सचिवालय
राजकोट राज्य
२७ दिसम्बर, १९३८

प्रिय वल्लभभाई पटेल,

राजकोट आनेके लिए मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँ।

आपने गतिरोधका अन्त करनेमें मेरी जो सहायता की है, उसकी मैं बहुत कद्र करता हूँ।

मैं समझता हूँ, आप अब तक भली प्रकार जान गये होंगे कि दीवान साहब वीराभाई मेरे और राज्यके प्रति अत्यन्त वफादार रहे हैं। उन्होंने अपने कार्य-कालमें हमेशा ही मेरी प्रजाकी भलाईके लिए अपनी ओरसे यथाशक्य कार्य किया है।

मेरे और राज्यके हितोंकी रक्षा करते हुए उन्हें हानि भी उठानी पड़ी है।

अब आपसे मेरा अनुरोध है कि मेरी प्रजाके मनमें उनके प्रति जो गलतफहमी है, उसे दूर करनेका आप यथासम्भव यत्न करें।

इसके लिए मैं अत्यन्त अनुगृहीत होऊँगा।

हृदयसे आपका,
धर्मेन्द्रसिंह
ठाकुर साहब, राजकोट

रेजिडेंसीमें हुई वार्ताके विवरणमे से उद्धृत अंश

२८ दिसम्बर, १९३८

उपस्थित: माननीय श्री गिब्सन
ठाकुर साहब

सर पैट्रिक कैडेल
राव साहब एम० सी० पटेल — राज्य परिषद्के
श्री जयन्तीलाल एल० जोवनपुत्र — सदस्य

माननीय श्री गिब्सनने बातचीत शुरू करते हुए ठाकुर साहबसे कहा कि उनके समझौतेके कारण सब राजाओमे खलबली मच गई है। श्री गिब्सनने पूछा कि वल्लभभाई पटेल राजकोट किस प्रकार आये और क्या उनको आमन्त्रित किया गया था।

ठाकुर साहब : वह स्वेच्छासे आये थे और मुझसे मुलाकात करना चाहते थे, सो मैंने उन्हे चायके लिए आमन्त्रित किया।

श्री गिब्सन : वह बिलकुल भी भरोसेके आदमी नही है। आप जानते ही है कि भारत सरकारकी इच्छा थी कि कोई बाहरी हस्तक्षेप न होने दिया जाये। उनके साथ समझौता करके आप अपने राजा-बन्धुओकी और सरकारकी सहानुभूति गँवा बैठे है। हालाँकि आप जो-कुछ करे, भारत सरकार उसका बुरा नही मानती, परन्तु पटेल के माध्यमसे समझौता करनेमे आपने गलती की है। काग्रेसी कार्यकर्ताओमे से भी श्री पटेल सबसे अधिक अविश्वसनीय व्यक्ति है। जो-कुछ भी हो, विज्ञप्तिसे प्रतीत होता है कि समझौतेकी भाषामे ऐसी कोई बुरी बात नही, सिवाय इन शब्दोके : "व्यापकतम अधिकार"। इन शब्दोका चाहे जो भी अर्थ लगाया जा सकता है। इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि आप नाममात्रके राजा रह जायेंगे। इन शब्दोके बल पर वे लोग बिलकुल आरम्भसे ही पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी माँग करेंगे और आप स्वयको बड़ी विकट स्थितिमे पायेंगे।

ठाकुर साहब : नही, मैंने केवल एक समितिकी नियुक्ति की है।

श्री गिब्सन : हाँ, लेकिन समितिके सदस्योकी नियुक्ति कौन करेगा? और जैसी भी रिपोर्ट प्राप्त हो, उसको कार्यान्वित भी तो करना होगा।

ठाकुर साहब : हाँ, श्री वल्लभभाई पटेल नामोका सुझाव पेश करेंगे।

श्री गिब्सन : ठीक यही बात तो है। उसका मतलब होगा समिति मे काग्रेसी कार्यकर्ता आयेंगे और जो "व्यापकतम अधिकार", इन शब्दोको लेकर पूर्ण उत्तरदायी सरकारकी माँग करेंगे।

सर पैट्रिक : श्री पटेल किस प्रकार नामोको पेश करेंगे? क्या हमें उनको लिखना होगा?

ठाकुर साहब . नही, वह स्वयं नाम भेजेंगे।

श्री गिब्सन ' एक धारामे आपने स्वीकार कर लिया है कि आप रिपोर्टपर पूरा अमल करेगे। यह बहुत बुरा हुआ। आपने तो अपने हाथ ही कटा लिये।

श्री गिब्सनने सुधार-समितिके अध्यक्षकी नियुक्तिके विषयमे ठाकुर साहबसे पूछा कि समितिका अध्यक्ष कौन होगा।

ठाकुर साहब : दरबार वीरावाला।

श्री गिब्सन . नही, वह नही आ सकते।

ठाकुर साहब ' क्यो ? वह अपनी अवकाश-अवधिके बाद आ जायेंगे।

श्री गिब्सन नही, वह एक ताल्लुकेदार है। वह नही आ सकते। उनको मैं इस समय आने नही दूंगा।

ठाकुर साहब . नही, वह सर पैट्रिकके चले आनेके बाद आ सकते है।

श्री गिब्सन : यह तो सर पैट्रिकके जानेके बाद देखा जायेगा।

राजकोट राजपत्र विज्ञप्ति

राजकोट दरबारी राजपत्र असाधारण
शनिवार, २१ जनवरी, १९३९

विज्ञप्ति

नं. ६१, १९३८-३९ का

जैसाकि विज्ञप्ति नं० ५०, २६ दिसम्बर, १९३८ में कहा गया था, हम सहर्ष निम्नलिखित सात सज्जनोकी नियुक्ति कर रहे है जो राज्य के सभी महत्वपूर्ण हितो-का प्रतिनिधित्व करते है। ये लोग एक समितिके रूपमे राज्यके तीन अफसरोके साथ कार्य करेगे जिनके नाम बादमे घोषित किये जायेगे। यह समिति समुचित जाँच-पड़तालके बाद हमारे लिए एक रिपोर्ट तैयार करेगी जिसमे सुधारोकी एक ऐसी योजनाका सुझाव होगा जिसके अनुसार जनता राज्यके प्रशासनमे अधिक भाग ले सके :

१ श्री पोपटलाल पुरुषोत्तम अनडा, अध्यक्ष, प्र० प्र० सभा,
२ जाडेजा जीवनसिहजी धीरुभा,
३. शेठ दादा हाजी वलीमुहम्मद,
४ श्री पोपटलाल धनजीभाई मालवीय,
५ श्री मोहनलाल म० टाक, अध्यक्ष, नगरनिगम
६ डॉ० डी० जे० गज्जर, और
७ सेठ हेपतुभाई अब्दुल अली।

समितिको पूरी और बारीकीसे जाँच-पड़ताल करनेके बाद अपनी रिपोर्ट पेश करनी है।

धर्मेन्द्रसिंह
ठाकुर साहब, राजकोट राज्य

-सरदार वल्लभभाई पटेलको माणेकलाल पटेलका पत्र

गोपनीय

रणजीत विलास
राजकोट
१२ जनवरी, १९३९

प्रिय सरदार साहब,

ठाकुर साहबकी इच्छानुसार मैं आपके ४ तारीखके पत्रकी पहुँच स्वीकार करता हूँ जिसमें आपने प्रस्तावित सुधार-समितिके लिए उनके द्वारा मनोनीत किये जानेवाले सात नामोकी सिफारिश की है।

आपने अखबारोसे जान लिया होगा कि ठाकुर साहबके पास आपका पत्र पहुँचनेसे पहले ही आपके प्रस्तावित नाम प्रकट हो चुके है। उनको खेद है कि ऐसा हुआ है, क्योकि ऐसे प्रकटीकरणसे आपकी और ठाकुर साहबकी स्थिति कुछ विचित्र हो गई है।

'ठाकुर साहब आपके प्रस्तावित सभी नाम चुन लेनेको अत्यन्त इच्छुक है लेकिन आप भी इस बातको समझेंगे कि अपनी प्रजाके महत्वपूर्ण वर्गोंके अनुरोधको भी वे ठुकरा नही सकते और उन्हे देखना होगा कि समितिमे ऐसे लोग हो जिनपर उनकी जनताके सभी महत्वपूर्ण समुदायोका विश्वास हो। तथ्य तो यह है कि ठाकुर साहबके सामने भायात और मुस्लिम कौसिलके निवेदन आये है और दलित वर्गकी भी एक याचिका है। अतएव उन्होने मुझसे कहा है कि आपको इस प्रकार पत्र लिखूँ।

आपने यहाँ पर ठाकुर साहबसे कहा था, जो बिलकुल सही था, कि आप नही जानते हैं कि यहाँके असली नेता कौन-कौन है और इस कारण आपने नाम पेश करना स्थगित कर दिया था ताकि आप दूसरोसे सलाह कर ले।

१, २, ४, तथा ५ सख्यावाले सज्जनोके लिए ठाकुर साहबकी मजूरी है।

तीसरे नम्बरवाले सज्जन यहाँ अचल सम्पत्तिके स्वामी हैं, ४० वर्षसे यहाँ उनका वास है तथा वह एक प्रतिष्ठित नागरिक हैं। परन्तु उनसे यह आशा नही रखी जा सकती कि वह इस प्रकारकी समितिके कार्यके लिए स्वतन्त्र मत द्वारा कुछ उपयोगी सिद्ध होगे।

आप सहमत होगे कि यहाँ मुसलमान एक महत्त्वपूर्ण इकाई है और वे अब इतने सुसगठित हो चुके है कि आसानीसे उनकी अवगणना करना सम्भव नही है। मुस्लिम कौसिलने अपने सर्वसम्मत प्रस्तावके अन्तर्गत एक निवेदन पेश किया है जिसमे उन्होने सातमें से तीन मुसलमान सदस्य रखे जानेका अनुरोध किया है। उनकी माँग अवश्य बेजा है परन्तु बोहरा लोगोके समेत उन्हे दो स्थान दिये जाने चाहिए और उनकी कौसिलका अध्यक्ष उन दोमें से एक होना चाहिए। ब्रिटिश भारतके अपने सुदीर्घ अनुभवके कारण आप समझ जायेंगे कि यदि उनके उचित अनुरोधको मान न लिया गया तो वे उपद्रव मचाकर ऐसा दूषित वातावरण पैदा कर सकते

है जिससे हम सभी बचना चाहते है। इसमे कोई सन्देह नही कि हम एक ऐसी समिति चाहते हैं जिसमें जनताके सभी अगोका प्रतिनिधित्व हो और यह निष्पक्ष हो और जिसके सदस्य आपसी सामजस्य और बुद्धिमत्ताके साथ कार्य करें।

छठवे तथा सातवे सदस्यके बारेमें, प्रतीत होता है, वे विज्ञप्तिमे दिये गये 'नागरिक' शब्दकी परिभाषाके अन्तर्गत पूरी तरह नही आते।

श्री वी० एम० शुक्लका न तो राज्यमे जन्म हुआ है और न ही वे जन्मसे लेकर ४० वर्षोतक राज्यके अधिकारक्षेत्रके अन्तर्गत रहे है। राजकोट राज्यके नागरिक की जो परिभाषाकी गई है, उसके अनुसार अपने पूर्वजोकी सरधार पाटीमें जायदाद होनेके कारण मात्रसे वे नागरिक नही माने जा सकते। वे न तो राज्यमें पैदा हुए हैं, न यहाँ अधिवासी बने हैं और न ही उन्होने यहाँकी नागरिकता प्राप्त की है।

ठाकुर साहबका विचार है कि उ० न० ढेवरके मामलेमे भी यही कठिनाई आड़े आती है। जैसाकि समझा गया है, वह मूल रूपसे जामनगर राज्यके है और उनके पिताने अपने जीवनका अधिकांश बम्बईमे बिताया। कहा जाता है कि उनकी स्वय की शिक्षा-दीक्षा राजकोटमे हुई है और जब उन्होने वकालत शुरू की उस समय वे सिविल स्टेशनमे रहते थे। राज्यकी सीमाके अन्तर्गत वह पिछले दो वर्षोसे रह रहे है। उन्होने गत वर्ष राज्यमे जमीन भी खरीदी है। ठाकुर साहबको लगता है कि दिवगत ठाकुर साहबके समयसे राज्यने हमेशा जिन अन्य अग्रगण्य व्यक्तियोको प्रजाके नेताओके रूपमे मान्यता दी है, उनके बीच कुछ असन्तोष उत्पन्न न होने देनेके लिए उन्हे चाहिए कि वे 'प्रजा' की परिभाषाके अन्तर्गत आनेवालोमें से ही नामजदगी करे।

यह बात भी आपके ध्यानमे लानी होगी कि भायात लोगोने भी ठाकुर साहबसे मिलकर एक विनती की है, जो अत्यन्त उचित भी है, कि उनमे से कम-से-कम एक व्यक्ति समितिमे हो, क्योकि वे राज्यके अत्यन्त महत्वपूर्ण और बडे जाति-वर्गका प्रतिनिधित्व करते है। अतः ठाकुर साहब उनमे से एक व्यक्तिको समितिमे रखना अनिवार्य मानते है।

जैसाकि आप सहज ही समझ जायेंगे, ठाकुर साहबकी यही इच्छा है कि समितिमे सबसे बुद्धिमान लोग होने चाहिए और वे ऐसे भी हो जो उनकी प्रजाके सभी महत्वपूर्ण वर्गोका प्रतिनिधित्व करते हो।

यदि उपर्लिखित बातोको ध्यानमे रखकर आप कुछ सुझाव देना चाहे तो दें। तदुपरान्त ठाकुर साहब समितिके सदस्यों की घोषणा करेंगे जिनमें से समितिके अध्यक्षके अलावा राज्यके तीन सरकारी अधिकारी होगे।

हृदयसे आपका,
एम० सी० पटेल

माणेकलाल पटेलको सरदार वल्लभभाई पटेलका पत्र

कैम्प, बारडोली
१५ जनवरी, १९३९

प्रिय श्री माणेकलाल पटेल,

आपका १२ तारीखका पत्र मिला। उससे मुझे दुख पहुँचा है। यह वास्तवमे खेदजनक है कि मेरे प्रस्तावित नाम प्रकाशित हो गये, परन्तु जहाँ बहुत सारे लोगोकी बात हो वहाँ सब-कुछ गुप्त रखना हमेशा सम्भव नही होता। और प्रकाशनके बावजूद भी यदि उचित कारण हो तो अवश्य ही उसमे फेरबदल किया जा सकता है।

मुझे दुख है कि भायातो और मुसलमानोके सम्बन्धमे आपने जिन नामोकी सिफारिश की है, उन्हें मैं स्वीकार नही कर सकता। समझौतेके अनुसार मुझे नामोके सुझावका अधिकार दिये जानेका एक निश्चित और समझमे आनेवाला उद्देश्य था। और आपके सुझाव मान लेनेसे वही उद्देश्य विफल हो जाता है। विशिष्ट विचार रखनेवाले कुछ सच्चे ईमानदार व्यक्तियोंको समितिमे रखनेसे उस उद्देश्यकी पूर्ति होगी, इसी कारण वे नाम पेश किये गये थे। जिन सात नामोका मेरा सुझाव है, वे लोग अवश्य ही भायातो तथा अन्य लोगोके हितोंको ध्यानमे रखेगे। इससे अधिककी आशा नही की जा सकती।

मुझे खेद है कि आपने इस आधारपर कुछ नामोपर एतराज करना उचित समझा कि वे लोग इस राज्यकी प्रजा नही है। किन्तु यह करनेका आपको अधिकार है। यदि और सोच-विचारके बाद भी आपका यही मत रहे कि श्री ढेबरभाई 'प्रजा' की परिभाषाके अन्तर्गत नही आते तो आपसे तर्क-वितर्क करनेके बजाय मैं उनका नाम वापस लेनेको तैयार हूँ और उनके बदले श्री गजानन जोशी वकीलका नाम पेश करूँगा। मेरा अब भी यही मत है कि श्री वजुभाई शुक्ल प्रजाकी परिभाषाके अन्तर्गत आते है।

ठाकुर साहबकी विज्ञप्तिका अर्थ केवल यही होगा कि समितिका अध्यक्ष दस व्यक्तियोकी समितिमे से ही होगा और मुझे कहना पडेगा कि वीरावाला अध्यक्ष पदपर नियुक्त न किये जाये। उन्होने [वीरावालाने] मुझे सन्देश भेजा है कि वह कोई पद ग्रहण करना नही चाहते, किन्तु फिर भी सयोगवश कही ऐसा न हो जाये, यही सोचकर इसका उल्लेख करना मैंने समीचीन समझा।

मै कहे बिना नही रह सकता कि समितिकी नियुक्तिमे अत्यधिक विलम्ब हो गया है। समितिकी रिपोर्ट ३१ जनवरी तक प्रकाशित हो जानी चाहिए थी। अतएव मै आशा करता हूँ कि यह पत्र पहुँचनेके बाद फौरन ही समिति नियुक्त हो जायेगी। यदि दुर्भाग्यवश नियुक्तिमे विलम्ब होता रहा तो इस बातकी बहुत आशका है कि जनता पुन सघर्ष जारी कर देगी। मुझे यह भी कहना है कि ठाकुर साहब और सर पैट्रिक कैडेलके बीच हुए पत्र-व्यवहारकी प्रतिलिपि तथा रेजिडेंट

महोदयके साथ हुई भेंट-वार्ताका संक्षिप्त विवरण मेरे पास मौजूद है। मुझे भय है कि समझौता टूट जानेकी स्थितिमें सार्वजनिक हितकी खातिर मेरा कर्तव्य हो जायेगा कि मैं इन तथा मेरे पास मौजूद अन्य कागजातोको प्रकाशित कर दूँ। किन्तु आशा करता हूँ कि मुझे ऐसा कुछ भी नही करना पड़ेगा, तथा समितिकी नियुक्ति हो जायेगी जो फौरन ही अपना काम आरम्भ कर देगी।

क्या मैं आपसे तार द्वारा उत्तरकी अपेक्षा रखूं?

हृदयसे आपका,
वल्लभभाई पटेल

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-२-१९३९

परिशिष्ट २

भारत सरकारका वक्तव्य: राजकोटके बारेमें[1]

नई दिल्ली
१ फरवरी, १९३९

१. राजकोट और जयपुर रियासतोंके बारेमें श्री गांधी द्वारा समाचारपत्रोंमें दिये गये वक्तव्यकी ओर [सरकारका] ध्यान आकृष्ट किया गया है।

२. राजकोटके बारेमे श्री गांधी कहते है कि "सपरिषद् ठाकुर साहब और प्रजाका प्रतिनिधित्व करनेवाले सरदार पटेलके बीच [जो] एक सम्मानजनक समझौता हुआ था . . . ब्रिटिश रेजिडेंटने . . . [उसे] चौपट कर दिया।" वह यह भी राय जाहिर करते है कि "वाइसरायका कर्तव्य है कि वे राजकोटके रेजिडेंटसे कहे कि वह उस समझौतेको बहाल करे।"

३. तथ्य यह है कि सपरिषद् ठाकुर साहब और सरदार पटेलके बीच इस आशयका एक समझौता हुआ कि एक समिति नियुक्त की जाये जो संवैधानिक सुधारोके लिए जाँच-पड़ताल करे और सिफारिशे दें। इस समझौतेकी शर्तें २६ दिसम्बरको रियासतके राजपत्रमें प्रकाशित की गई। इस घोषणामें समितिके सरकारी और गैर-सरकारी सदस्योंकी संख्या सूचित की गई थी। इसके सिवा और कोई सूचना नही दी गई थी जिससे पता चले कि समितिमे कौन-कौन व्यक्ति होगे अथवा किस आधारपर उन्हें चुना जायेगा। ऐसा लगता है कि इसके साथ ही व्यक्तिश ठाकुर साहब और सरदार पटेलके बीच खानगी तौरपर पत्रोका आदान-प्रदान भी हुआ जिसकी कोई सार्वजनिक सूचना नही दी गई। इस पत्र-व्यवहारमे ठाकुर साहबने सरदार पटेलको निम्नलिखित पत्र लिखा:

१. देखिए पृ० ३९६-७।

अमरसिंहजी सचिवालय
राजकोट राज्य
२६-१२-१९३८

यह तय किया जाता है कि आजकी तारीखकी राजकीय घोषणाकी धारा २ में उल्लिखित समितिके सात सदस्योके नामोकी सिफारिश सरदार पटेल करेंगे और उन्हे हम नामजद करेंगे।

(ह०) धर्मेन्द्रसिंह
ठाकुर साहब, राजकोट

ठाकुर साहबका कहना है कि इस पत्रका अभिप्राय उन्हे इस बातकी स्वतन्त्रता प्रदान करनेका था कि वे सरदार पटेलके सुझाये नामोको स्वीकार करे अथवा न करे। सरदार पटेलका कहना है कि इस पत्रका अभिप्राय ठाकुर साहब पर यह बन्दिश लगानेका था कि वह [सरदार पटेल] जो भी नाम सुझाये उन्हे वह स्वीकार करेंगे।

सुधार-समितिके सदस्य

सरदार पटेलने जो नाम सुझाये, उनमें से तीन नाम ठाकुर साहबने स्वीकार कर लिये। राज्यमे रहनेवाले मुसलमानो और भायातोको समुचित प्रतिनिधित्व प्रदान करनेके उद्देश्यसे — इन दोनो जातियोने प्रतिनिधित्वके लिए अपने दावे पेश किये थे — वह [ठाकुर साहब] शेष चार नाम स्वीकार नही कर सके। उनके निर्देशपर उनके दीवानने सरदार पटेलको तदनुसार सूचित कर दिया। तथापि सरदार पटेलने अपने उत्तरमे प्रश्नके गुणावगुणोपर विचार नही किया और उपरोक्त जातियोको प्रतिनिधित्व प्रदान करनेके ठाकुर साहबके प्रस्तावको स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया। उन्होने केवल यह कहा कि जो नाम उन्होने सुझाये है, उनसे कमपर उन्हे सन्तोष नही होगा, और ठाकुर साहबने जो कारण बताये है, उससे उन्हे कोई मतलब नही है, और ठाकुर साहबने जो-कुछ किया है, अपनी अकेलेकी मर्जीसे किया है। जो पत्र-व्यवहार हुआ था, रेजिडेंटको उसकी कोई जानकारी नही है, और न उस पत्र-व्यवहारमे उसका कोई हाथ है।

श्री गाधीका सुझाव है कि ठाकुर साहबके पत्रका जो अर्थ था, उससे भिन्न सरदार पटेलने जो अर्थ लगाया है, वही अर्थ ठाकुर साहबसे स्वीकार करनेको कहा जाये। ठाकुर साहबपर अपने पत्रका एक ऐसा मतलब स्वीकार करनेके लिए दबाव डालना स्पष्टत· अत्यन्त अनुचित होगा जो पत्र लिखते समय उनके मनमें स्पष्टत. नही था, और जिसे अब वह स्वीकार करनेको तैयार नही है।

श्री गांधी कहते है कि कहा जाता है कि रेजिडेट "संगठित गुण्डागर्दी" का सहारा ले रहा है। श्री गाधीने यह नही बताया है कि इस सूचनाका, जो वास्तवमें कतई निराधार है, सूत्र क्या है।

जहाँ तक जयपुरकी बात है, जयपुरकी सरकार निःसन्देह श्री गांधीके वक्तव्यके जवाबमें जैसा ठीक लगेगा, वैसा वक्तव्य जारी करेगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २-२-१९४०

परिशिष्ट ३

कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्योंका त्याग-पत्र[1]

[२२ फरवरी, १९३९][2]

प्रिय सुभाष,

आपकी बीमारीकी खबर सुनकर हम सबोको बहुत दुःख हुआ। यह तो सोचा भी नही जा सकता था कि आप अपने स्वास्थ्यको खतरेमे डालकर वर्धा आये। हम आशा करते है कि आप शीघ्र ही पूर्णतः स्वस्थ हो जायेंगे।

हालकी घटनाओपर हमने सावधानीपूर्वक विचार किया है और अध्यक्ष-पदके चुनावके बारेमे दिये गये आपके विभिन्न वक्तव्योको भी हमने पढ़ा है। आपकी दुःखद बीमारी, और उसके परिणामस्वरूप हमारी बैठकके स्थगनके कारण हम आपके वक्तव्योके बारेमे अपने विचार प्रकट नही कर रहे है।

इस समय तो हमारे लिए इतना ही कहना पर्याप्त है कि हम लोग, जिनके हस्ताक्षर नीचे दिये हुए है, अपना कर्तव्य समझते है कि कार्य-समितिकी सदस्यतासे अपना इस्तीफा दे दे, और इस पत्रके जरिये हम इस्तीफा दे रहे है। हमे लगता है कि आपको ऐसी कार्य-समिति चुननी चाहिए जो आपके विचारोका प्रतिनिधित्व करती हो।

हमे लगता है कि वह समय आ गया है जब देशके सामने एक स्पष्ट नीति होनी चाहिए, ऐसी नीति जो कांग्रेसके विभिन्न और परस्पर-विरोधी गुटोके बीच समझौतेपर आधारित न हो।

इसलिए यह उचित ही होगा कि आप एक समान विचारधारावाली कार्य-समिति चुने जो बहुमतके विचारोका प्रतिनिधित्व करती हो। आप विश्वास रखे कि आप देशके सामने जो नीतियाँ रखेंगे, उनमे जहाँ हम आपके दृष्टिकोणसे सहमत होंगे

१. देखिए पृ० ४२३।
२. ब्रजकृष्ण चाँदीवालाकी डायरी पर से।

वहाँ हम आपको अपना हर सम्भव सहयोग देंगे। सार्वजनिक दुविधाको दूर करनेके विचारसे हम यह पत्र अखबारोंमें भेज रहे हैं।

भवदीय,

(ह०) अबुल कलाम आजाद
सरोजिनी नायडू
वल्लभभाई पटेल
राजेन्द्र प्रसाद
भूलाभाई देसाई
पट्टाभि सीतारमय्या
शंकरराव देव
हरेकृष्ण मेहताब
कृपालानी
अब्दुल गफ्फार खाँ
जमनालाल बजाज
जयरामदास दौलतराम

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-२-१९३९

परिशिष्ट ४

सुभाषचन्द्र बोसका वक्तव्य[1]

हालके [कांग्रेसके] अध्यक्ष-पदके चुनावके बारेमें महात्मा गांधीने जो वक्तव्य दिया है, उसे मैंने अत्यन्त ध्यानपूर्वक पढ़ा है। मुझे यह देखकर दुःख होता है कि महात्मा गांधीने उसे अपनी निजी पराजय माना है। इस मुद्दे पर मैं विनम्रतापूर्वक उनसे अपनी असहमति प्रकट करना चाहूँगा। मतदाताओं, अर्थात् प्रतिनिधियोंसे महात्मा गांधीके पक्ष या विपक्षमें मत देनेको नहीं कहा गया था। परिणामतः चुनावका नतीजा, मेरी रायमें, और अधिकांश लोगोंकी रायमें, व्यक्तिशः उनको [गांधीजीको] प्रभावित नहीं करता।

पिछले कुछ दिनोंमें अखबारोंमें कांग्रेसके अन्दर दक्षिणपक्षी और वामपक्षी गुटोंके बारेमें काफी कुछ कहा गया है। कई लोगोंने चुनावके नतीजेको वामपक्षी गुटकी विजय माना है। तथ्य यह है कि मैंने जनताके सामने दो मुख्य प्रश्न रखे थे। एक

१. देखिए पृ० ४२३।

था संघीय योजनाके विरुद्ध संघर्ष, और दूसरा था प्रतिनिधियोको अपना अध्यक्ष चुननेके मामलेमें पूरी स्वतन्त्रता। इन दो प्रश्नोने अवश्य ही मतदानको काफी प्रभावित किया होगा, और इसके सिवा, उम्मीदवारोके व्यक्तित्वका भी कुछ हद तक प्रभाव पड़ा होगा। इन परिस्थितियोमे मुझे लगता है कि चुनाव-परिणामके महत्वका विश्लेषण करते समय हमे कल्पनाका सहारा नही लेना चाहिए और न ही हमें उसका कुछ विशेष अर्थ लगाना चाहिए।

बहसकी खातिर अगर यह मान भी ले कि चुनाव-परिणामका अर्थ वामपक्षी गुटकी विजय है, तो हमे जरा ठहर कर सोचना चाहिए कि वामपक्षियोका कार्यक्रम क्या है। निकट भविष्यके खयालसे वामपक्षी राष्ट्रीय एकता चाहते है और सघीय योजनाका अनवरत विरोध करना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त, वे लोकतान्त्रिक सिद्धान्तोके पक्ष-समर्थक हैं। वामपक्षी लोग काग्रेसमें दरार डालनेकी जिम्मेदारी नही लेगे। अगर काग्रेसमे दरार पड़ेगी भी तो वामपक्षियोके कारण नही पडेगी, वल्कि उनकी कोशिशोके वावजूद पडेगी।

निजी तौरपर मेरी यह निश्चित राय है कि काग्रेस मगठनमे दरार पडनेका न तो कोई कारण है और न कोई औचित्य ही है। इसलिए मेरी यह हार्दिक आशा है कि इस समय या निकट भविष्यमे तथाकथित अल्पसख्यक दलके लिए तथाकथित बहुसख्यक दलके साथ असहयोग करनेका कोई प्रसग उत्पन्न नही होगा। मुझे यह कहनेकी जरूरत नही है कि ऐसी कोई भी सम्भावना उत्पन्न होनेपर मै अन्त तक कोशिश करूँगा कि कोई दरार न पडने पाये।

मेरे जैसे लोग भविष्यमे किस नीतिपर चलेगे, इस वातको लेकर वहुतोके मनमे आशंकाएँ पैदा हो गई हैं। मै स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि ससदीय और गैर-ससदीय क्षेत्रमे जो भी नीति अभी तक चलती आई है, उससे एकदम अलग कोई नीति नही अपनाई जायेगी। जहाँ तक ससदीय कार्यक्रमका सवाल है, हम चुनावके समय किये गये अपने वादोको और अपने ससदीय कार्यक्रमोको पहलेकी अपेक्षा ज्यादा तेजीसे कार्यान्वित करनेका प्रयत्न करेगे। गैर-ससदीय क्षेत्रमे हम सघीय योजनाका विरोध करनेके लिए और पूर्ण स्वराज्यकी दिशामें आगे वढनेके लिए अपनी सारी शक्ति और सारे साधन संगठित करेगे। और हम भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके सिद्धान्तो और नीतियोके अनुसार ही कार्य करेगे।

इस सम्बन्धमे मै यह कहना चाहूँगा कि कुछ अवसरोपर सार्वजनिक प्रश्नोपर मुझे दुःखके साथ महात्मा गाधीसे असहमत होना पडा है, लेकिन उनके व्यक्तित्वके प्रति मेरा आदरभाव किसीसे भी कम नही है। अगर मैंने उन्हे ठीक-ठीक समझा है, तो स्वय वे भी यही चाहेगे कि लोग स्वतन्त्र रूपसे विचार करे, हालांकि हो सकता है कि वे उनके [महात्मा गाधीके] साथ सदैव सहमत न भी हो? मुझे पता नही कि महात्मा गाधी मेरे बारेमे किस तरहकी राय रखते हैं। लेकिन उनके विचार कुछ भी हो, मेरी हमेशा यही कोशिश रहेगी कि उनका विश्वास प्राप्त करूँ — और यह कोशिश मै सिर्फ इसलिए करूँगा कि मेरे लिए यह दुःखकी वात होगी कि मैं

अन्य लोगोका विश्वास तो जीत सकूँ लेकिन भारतके सबसे महान व्यक्तिका विश्वास न जीत सकूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ५-२-१९३९

परिशिष्ट ५

गांधीजीकी मनःस्थितिके बारेमें श्री रमण महर्षिकी टिप्पणी[1]

महर्षि ने इसी ११ तारीखके 'हरिजन' मे प्रकाशित गाधीजीके निम्नलिखित उद्‌गारका उल्लेख किया :

"ईश्वरका विधान कितना विचित्र है! राजकोटकी यह यात्रा स्वयं मुझे भी आश्चर्यमे डालनेवाली है। मै क्यो जा रहा हूँ, कहाँ और किसलिए जा रहा हूँ? इन बातोके बारेमें मैंने कुछ नही सोचा है। यदि ईश्वर मेरा मार्गदर्शन करता है तो मै क्यो सोचूँ? उसके पथ-प्रदर्शनमे यह चिन्तन भी बाधा बन सकता है।

"तथ्य यह है कि चिन्तन-प्रवाहको रोकनेके लिए कोई प्रयत्न नही करना पड़ता। विचार आते ही नही है। मेरा मन शून्य हो गया है, ऐसी बात नही है —परन्तु मेरा अभिप्राय इतना ही है कि अपने इस मिशनके बारेमे मनमें कोई विचार नही है।"

महर्षिने कहा कि ये शब्द कितने सच है। उन्होने उक्त उद्धरणकी एक-एक बात पर जोर दिया। इसके बाद उन्होंने विचार-शून्य स्थितिके समर्थनमे [तमिल-नाडुके प्रसिद्ध कवि और चिन्तक] तायुमानवरका हवाला दिया.

"यदि मनुष्य शान्त रहे तो आनन्दकी अनुभूति होगी। तब तक यह भ्रामक योग-क्रिया क्यो है? क्या बुद्धिको किसी एक विशेष दिशामें सचालित करनेसे आनन्द की प्राप्ति हो सकती है?"

प्रश्न : गाधीजीने जिस स्थितिका वर्णन किया है, क्या वह ऐसी स्थिति नही जिसमें विचार भी एक अनजानी चीज बन जाते है?

महर्षि : हाँ। 'मै'का विचार उत्पन्न होनेके बाद ही अन्य सारे विचार उत्पन्न होते है। जब आप "मै हूँ" का अनुभव करते है, उसके बाद ही ससार दिखाई पड़ता है। उनके [गाधीजीके] लिए 'मै'का विचार और अन्य सभी विचारोका लोप हो गया है।

प्रश्न. तब उस स्थितिमे शरीरका भान भी नही रहता होगा।

महर्षि : शरीरका भान भी एक विचार है, जबकि वह उस स्थितिका वर्णन कर रहे है जिसमें "विचार आते ही नही।"

१. देखिए पृ० ५१३।

प्रश्न : वह यह भी कहते हैं कि "चिन्तन-प्रवाहको रोकनेके लिए कोई प्रयत्न नही करना पड़ता।"

महर्षि : वेशक, चिन्तन-प्रवाहको रोकनेके लिए कोई प्रयत्न करना आवश्यक नही हैं, जवकि विचार पैदा करनेके लिए प्रयत्नकी आवश्यकता है।

प्रश्न : गांधीजीने इतने लम्बे समय तक सत्यका पालन किया और आत्म-बोध प्राप्त कर लिया।

महर्षि · सत्य ही अह है। सत्य 'सत्' से बना है। सत् भी और कुछ नही, अहं ही है। इसलिए गाधीजीका सत्य केवल अहं है। . . .

उपनिषदोकी वात ही शाश्वत सत्य है, और आत्म-ज्ञान प्राप्त करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति अपने उस अनुभवके लिए उनका ऋणी है। अह ही ब्रह्म है, यह सुननेके वाद ही मनुष्य अहका सही अर्थ जान पाता है और उसकी ओरसे विमुख हो जानेपर वह पुन उसीकी ओर लौट आता है। यही आत्मज्ञानकी पूरी प्रक्रिया है।

[अंग्रेजीसे]

टॉक्स विद श्री रमण महर्षि, पृ० ७३४-९

सामग्रीके साधन-सूत्र

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली: गांधीजीसे सम्बन्धित साहित्य तथा कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: गांधीजीसे सम्बन्धित पुस्तकों और कागजातका पुस्तकालय तथा अभिलेखागार।

'टाइम्स ऑफ इंडिया': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्वोदय': गांधी सेवा संघके तत्वावधानमें प्रकाशित और काका कालेलकर तथा दादा धर्माधिकारी द्वारा सम्पादित हिन्दी मासिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधान और गांधीजी की देखरेखमें प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६): हरिजन सेवक संघ के तत्त्वावधान और गांधीजी की देखरेखमें प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

प्यारेलाल पेपर्स: नईदिल्लीमें श्री प्यारेलालके पास उपलब्ध कागजात।

'इंडियन नेशनल कांग्रेस', फरवरी १९३८ से जनवरी, १९३९ (अंग्रेजी): प्रकाशक: जे० बी० कृपालानी, स्वराज भवन, इलाहाबाद।

'इंसिडेंट्स ऑफ गांधीजीज लाइफ' (अंग्रेजी): सम्पादक: चन्द्रशंकर शुक्ल, वोरा ऐण्ड कम्पनी पब्लिशर्स लिमिटेड, बम्बई, १९४९।

'टॉक्स विद श्री रमण महर्षि' (अंग्रेजी): रमण आश्रमम् तिरुवन्नामलै द्वारा प्रकाशित।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': सम्पादक: काका कालेलकर, जमनालाल सेवा ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'(ए) पिल्ग्रिमेज फॉर पीस' (अंग्रेजी): प्यारेलाल, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५०।

'(ए) बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी): सम्पादक: जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'बापुना पत्रो – ४: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती). सम्पादक मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो – २. सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती). सम्पादक मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना बाने पत्रो' (गुजराती) इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स, नेटाल, १९८८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' हीरालाल शर्मा, ईश्वर शरण आश्रम, इलाहाबाद, १९६७।

'(द) ब्रदरहुड ऑफ रिलिजन्स' (अंग्रेजी). सोफिया वाडिया, इंटरनेशनल बुक हाउस लिमिटेड, बम्बई, १९३९।

'मध्यप्रदेश और गांधीजी' सूचना तथा प्रकाशन निदेशालय, मध्यप्रदेश, १९६९।

'महात्मा – लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड–४ (अंग्रेजी) डी० डी० तेन्दुलकर, प्रकाशन विभाग, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१५ अक्टूबर, १९३८ से २८ फरवरी, १९३९ तक)

१५ अक्टूबर, १९३८: गांधीजी उटमंजईमें। पेशावर लौटे।

१६ अक्टूबर: नौशेरा और होती मरदानमें खुदाई खिदमतगारोंकी सभामें भाषण दिया।

१७ अक्टूबर: मरदानमें। समाचारपत्रोंको एक वक्तव्य जारी किया जिसमें त्रावणकोरमें छात्रों द्वारा किये गये उपद्रव की भर्त्सना की।
स्वावी गये और वहाँ खुदाई खिदमतगारोंकी सभामें भाषण दिया।

१८ अक्टूबर: उटमजई लौटे।

१९/२० अक्टूबर: खान अब्दुल गफ्फार खाँके साथ बातचीत की।

२१ अक्टूबर: पेशावर लौटे। कोहाट पहुँचे।

२२ अक्टूबर: कोहाटमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२३ अक्टूबर: हुंगूमें। खुदाई खिदमतगारोंके साथ बातचीतकी।

२४ अक्टूबर: बन्नूमें।

२५ अक्टूबर: बन्नूमें। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

२६ अक्टूबर: बन्नूमें। समाचारपत्रोंको एक वक्तव्य जारी किया जिसमें त्रावणकोरके महाराजा और दीवानको राज्यके सत्याग्रही कैदियोंको आम माफी देनेपर बधाई दी।
लक्की गये और वहाँ सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत की।

२७ अक्टूबर: डेरा इस्माइल खाँ पहुँचे।

२८ अक्टूबर: डेरा इस्माइल खाँमें। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

३० अक्टूबर: कुलाची गये। डेरा इस्माइल खाँ लौट आये।

३१ अक्टूबर: टाँकमें। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत की। डेरा इस्माइल खाँ लौट आये।

१ नवम्बर: पनियालामें खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत की।
मीराखेल पहुँचे।

२ नवम्बर: मीराखेलमें। अहमदबाँध गये। शामको पेशावर पहुँचे।

३ नवम्बर: पेशावरमें। खादी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

४ नवम्बर: पेशावरमें।

५ नवम्बर: पेशावरमें। वकील मण्डलके समक्ष भाषण दिया।

६ नवम्बर: पेशावरमें। विभूति, पजा साहब और हरिपुर गये।

७ नवम्बर: हरिपुर और ऐबटाबादमें। खुदाई खिदमतगारोंसे बातचीत की।

८ नवम्बर : ऐबटाबादमें।

मानसेरा पहुँचे। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। वापस ऐबटाबाद पहुँचे।

अल्पसंख्यकोंका शिष्टमण्डल गांधीजीसे मिला।

सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

९ नवम्बर ऐबटाबादमें। तक्षशिला गये। दिल्लीके लिए रवाना हुए।

१० नवम्बर दिल्ली पहुँचे। बेगम अन्सारीसे मिलने गये। सेगाँवके लिए रवाना हुए।

११ नवम्बर सेगाँव पहुँचे।

१४ नवम्बर वल्लभभाई पटेलके साथ राजकोट सत्याग्रहके विषयमें बातचीत की।

१५ नवम्बर त्रावणकोर राज्य-कांग्रेस शिष्टमण्डलके साथ बातचीत की।

१६ नवम्बर बातचीत जारी रही।

२१ नवम्बर जवाहरलाल नेहरूने गांधीजीसे मुलाकात की।

२७ नवम्बर औंध-राज्यके नेताओंसे बातचीत की।

२९ नवम्बर औंधके संविधानके सम्बन्धमें अप्पा साहब पन्तसे बातचीत की।

३० नवम्बर औंध-राज्यके लिए संविधानका मसविदा बनाना आरम्भ किया।

१ दिसम्बर अप्पा साहब पन्तसे विचार-विनिमय किया।

३ दिसम्बर राजनन्दगाँवमें मिल-मजदूरोंकी हड़ताल तथा राज्यकी तत्सम्बन्धी नीतिपर रुइकरके साथ बातचीत की।

१५ दिसम्बर कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्योंके साथ विचार-विमर्श किया।

२२ दिसम्बर स्काउटोंकी रैलीमें भाषण दिया।

२३ दिसम्बर डॉ० राधाकृष्णन गांधीजीसे मिलने आये और गांधीजीसे अनुरोध किया कि वे राजाजीको मनायें कि मद्रास प्रान्तमें हिन्दीको अनिवार्य न बनायें।

२४ दिसम्बर गांधीजी वर्धा आयें।

मगन संग्रहालय और उद्योग भवनका उद्घाटन किया।

नागपुरमें हुए अर्थशास्त्र सम्मेलनमें शामिल होनेवाले अर्थशास्त्रियोंके साथ विचार-विनिमय किया।

फ्रीडमैनके साथ बातचीत की। सेगाँव लौटे।

३१ दिसम्बर. ताम्बरम्के मिशनरी सम्मेलनमें भाग लेनेवाले चीनी प्रतिनिधि-मण्डलके सदस्य टिमोथी टिंगफाग ल्यूको भेंट दी।

१ जनवरी, १९३९ ताम्बरम्के मिशनरी-सम्मेलनमें भाग लेनेवाले चीनी प्रतिनिधि मण्डलके सदस्य टिंगफाग ल्यू और पी० सी० शूको भेंट दी।

जोहानिसबर्गके डी० आर० मिशनके रेवरेण्ड एस० एस० तेमाको भेंट दी।

बारडोलीके लिए रवाना हो गये।

२ जनवरी. बारडोली पहुँचे।

३ जनवरी. उ० न० ढेबरके साथ राजकोट-सत्याग्रहपर बातचीत की।

४ जनवरी. जयपुर-सत्याग्रहके सम्बन्धमें जमनालाल बजाजके साथ बातचीत की।

११-१४ जनवरी. कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

१५ जनवरी तोयोहिको कागावाके साथ बातचीत की। आगा खाँसे अल्पसंख्यक सम्प्रदाय और साम्प्रदायिक एकतापर बातचीत की।

१७ जनवरी : वी० जी० खेरने गाधीजीसे मुलाकात की।

२३ जनवरी गाधीजीसे राजकोटके मामलोपर विचार-विमर्शके लिए वल्लभभाई पटेल बारडोली आये।

२४ जनवरी . गाधीजीने पट्टाभि सीतारमय्यासे बातचीत की।

२६ जनवरी . उद्धार-दिवस पर आयोजित किसानोकी सभामे भाषण दिया।

२८ जनवरी नगरपालिकाओ और स्थानीय मण्डलोके प्रतिनिधियोसे बातचीत की।

२९ जनवरी . जब्त हुई जमीने वापस मिलनेके अवसरपर किसानोकी सभामे भाषण दिया।

३१ जनवरी . काग्रेस-अध्यक्षके रूपमे सुभाषचन्द्र बोसके निर्वाचन और राजकोट तथा जयपुर-सत्याग्रहके सम्बन्धमे समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी किया।

१ फरवरी . सेगाँवके लिए रवाना हुए।

२ फरवरी . सेगाँव पहुँचे।

३-४ फरवरी . वर्धामे। वर्धा शिक्षा योजनाके अन्तर्गत प्रशिक्षण ले रहे अध्यापकोसे बातचीत की।

५ फरवरी : सेगाँवमे।

८ फरवरी : जमनालाल बजाजकी गिरफ्तारीपर समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी किया।

९ फरवरी राजकोट तथा जयपुर-सत्याग्रहके सम्बन्धमें समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी किया।

१३ फरवरी इंग्लिश बैप्टिस्ट मिशनके डॉ० चेस्टरमैनसे बातचीत की।

१४ फरवरी . गाधीजीसे विचार-विमर्शके लिए सुभाषचन्द्र बोस सेगाँव आये।

१५ फरवरी : बातचीत जारी रही।

२१ फरवरी . गाधीजीने हैदराबाद राज्य-काग्रेसके प्रतिनिधियोसे बातचीत की।

२३ फरवरी : अण्णामलै विश्वविद्यालयमे हड़ताल और राजकोट-सत्याग्रहके सम्बन्धमे समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी किया।

२४ फरवरी . राजकोट जानेके अपने निश्चयपर एक आश्रमवासीके साथ बातचीत की।

२५ फरवरी राजकोट-सत्याग्रहके सम्बन्धमे समाचारपत्रोको वक्तव्य जारी किया। राजकोट पहुँचनेके उद्देश्यसे बम्बईके लिए रवाना हुए।

२६ फरवरी : बम्बई पहुँचे।

२७ फरवरी . राजकोट पहुँचे।

एसोसिएटेड प्रेस और 'हिन्दू' के प्रतिनिधियोको भेंट दी।

२८ फरवरी . मुस्लिम कौंसिल ऑफ ऐक्शनके प्रतिनिधियो और गिरासिया मण्डलके शिष्टमण्डलके साथ अलग-अलग बातचीत की।

'हिन्दू' के प्रतिनिधिको भेंट दी।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

ख

ग

घ

च

छ

ज

झ

ट

ठ

ड

ढ

ध

न

भ

म

ल

व

श

स

ह